भूमिका

इस खण्डमें १४ अप्रैल, १९२१ से १५ अगस्त, १९२१ तक अर्थात् चार महीनो-की सामग्री संगृहीत है। गाधीजीने इसी वर्षमे "एक ही सालके भीतर स्वराज्य" प्राप्त करनेका नारा दिया था। इस अवधिमे उन्होने जो-कुछ कहा या किया उसका उद्देश्य था, उनकी अपनी कल्पनाके स्वराज्यको स्पष्ट करना, लोगोको उसके योग्य बनाना और उसे यथासम्भव शीघ्र प्राप्त करनेके लिए उन्हे मानसिक रूपसे तैयार करना। उन्होंने पहले 'यग इडिया' और 'नवजीवन' मे लिखकर और स्थान-स्थानपर भाषण देकर बेजवाड़ा कार्यक्रमपर जोर दिया। तदनुसार मार्च १९२१में तिलक स्वराज्य कोष और काग्रेसकी सदस्यता तथा चरखेके प्रचारके विषयमें ३० जून तक कितना-कुछ कर डालना चाहिए, इसके आँकड़े निर्धारित कर दिये गये थे।

गांधीजीने जब "एक वर्षमें स्वराज्य" पानेकी बात कही, तब उनके मनमे यह बिलकुल साफ़ था कि स्वराज्यकी प्राप्तिकी कुछ शर्तें है और उन्हे पूरा किये बिना स्वराज्य नही मिल सकता। देश स्वराज्यके योग्य हुआ है या नही, वे इसकी कसौटी बेजवाड़ामें किये गये निर्णय, स्वदेशी कार्यक्रमपर अमल तथा अहिंसा और हिन्दू-मुस्लिम एकताकी पूरी-पूरी साधनाको ही मानते थे।

गांधीजीका विरोध सरकारके तन्त्रसे था। उन्होने भारतमे जो अंग्रेज थे उनके नाम एक अपील निकाली और कहा कि उन्हे चाहिए कि वे इस देशके लोगोकी माँगको अपनी माँग बनायें। उन्होने लिखा: "अपने ही द्वारा प्रस्तुत प्रणालीकी अपेक्षा आदमी स्वय अच्छा होता है। . . . यहाँ भारतमे आप जिस प्रणालीसे सम्बन्धित है वह इतनी निकृष्ट है कि उसका वर्णन ही नही हो सकता। अत मेरे लिए यह सम्भव है कि आपको बुरा समझे बिना तथा प्रत्येक अग्रेजपर बुरे उद्देश्यका दोष मढ़े बिना कठोरसे-कठोर शब्दोमें उक्त प्रणालीकी निन्दा कर सकूँ। राजविधि द्वारा गठित हमारा जीवन पारस्परिक अविश्वास और भयपर आधारित है। आप स्वीकार करेंगे कि यह इन्सानियत नही है। . . . इस प्रणालीने . . . हमे और आपको नीचे गिरा दिया है।" (पृष्ठ ३८०–८१) गांधीजीका उद्देश्य साम्राज्यको परिष्कृत करके एक ऐसे राष्ट्रमण्डलका रूप देना था "जिसमें सभी राष्ट्र यदि चाहे तो ससारकी उन्नतिमे अपना सर्वोत्तम योगदान करनेके लिए और निरे भौतिक बलके बदले वास्तवमे कष्ट-सहन द्वारा संसारके कमजोर राष्ट्रो या जातियोको अभय देनेके लिए सम्मिलित और सक्रिय हो सकते है।" (पृष्ठ ३०५)

स्वराज्यकी स्थापना कैसे हो? गांधीजीने इतिहासके अपने ज्ञानके आधारपर यह जाना था कि शुद्ध न्यायकी बिलकुल सीधी-सादी बातका उन [अग्रेजो] पर कोई असर नही होता। उनको वह कोई हवाई-खयाल जैसी लगती है। लेकिन जब उसी न्यायकी बातके पीछे शक्ति भी होती है, तब उनकी दूरदर्शिता काम करने लगती है। शक्ति

होनी चाहिए, फिर वह निरी भौतिक शक्ति है या आत्मिक शक्ति, इसमे वे कोई अन्तर नही करते।

किन्तु जहाँतक गाधीजीका सवाल है, निश्चित था कि वे अहिंसात्मक असहयोगकी शक्तिसे ही काम लेगे। हिंसा, गोपनीयता या छल-कपट आदिका सहारा लेना वे सदा निन्दनीय मानते थे। उन्होने पहली जूनको गुजरात राजनीतिक परिषद्में असहयोगके पक्षमे एक प्रस्ताव रखा। उनके अनुरोधपर अली बन्धुओने इस आशयका वक्तव्य जारी किया कि विदेशी शत्रुओसे साँठ-गाँठ करने अथवा हिंसाका आश्रय लेनेका उनका कोई इरादा नही था, तब उनकी कड़ी आलोचना हुई। किन्तु वे नीतिको राजनीतिसे बढकर मानते थे और इसीलिए उन्होने अली बन्धुओ द्वारा माफी माँगे जानेका समर्थन किया और कहा . "यह कदम एक ध्रुवतारा है जो असहयोगकी राहसे भटकनेवाले लोगोको हमेशा रास्ता दिखाता रहेगा। विरोधियोकी उपस्थितिमे और इस बातका खतरा उठाकर भी कि उनके आचरणको कमजोरीका लक्षण समझा जा सकता है, असहयोगियोको निरन्तर अपनी शुद्धि करते चलना है। अपनेको सुधारनेकी प्रक्रियामे उनको इस बातका खयाल नही करना चाहिए कि उसकी उनको क्या कीमत चुकानी पड़ती है। सत्यके लिए सत्यके पालनका यही अर्थ होता है।" (पृष्ठ २५४)

१९२०का असहयोग आन्दोलन "निश्चय ही पदवियो, कानूनी अदालतो, स्कूलो, और परिषदोके साथ जुड़ी हुई प्रतिष्ठाके भ्रमको दूर करनेके लिए आवश्यक था।" (पृष्ठ १४) उद्देश्यकी प्राप्ति हुए बिना उसे बन्द कर देना सम्भव नही था और फिर भी सुविधा यह थी कि लोग अपनी मरजीसे उसे जब चाहें तब अख्तियार कर सकते थे। गाधीजी कहते थे कि इस आन्दोलनका उद्देश्य अग्रेजोके मनको भारतीयोके साथ सम्मानपूर्ण शर्तोपर सहयोगके लिए तैयार करना था। साथ ही वे यह भी कहते थे कि यदि उन्हे ऐसा सहयोग स्वीकृत न हो तो "वे हमारा देश छोडकर चले जाये। यह आन्दोलन हम दोनोके सम्बन्धोको शुद्ध आधारपर स्थापित करनेके लिए है, अपने आत्मसम्मान और अपनी प्रतिष्ठाके अनुकूल उन्हे सुनिश्चित करनेके लिए है।" (पृष्ठ १६)

आन्दोलनका मुख्य उद्देश्य आत्मशुद्धि अर्थात् क्षात्र-धर्मका पुनरुत्थान था। हम प्रार्थना भी "स्वराज्यके लिए नही बल्कि स्वराज्यके लिए शक्ति प्राप्त करनेके लिए करते है।" (पृष्ठ ९८) "हम अग्रेज-जनताको बदलनेका प्रयास भी नही करते। हम तो स्वय अपने-आपको बदलनेका प्रयास कर रहे हैं।" (पृष्ठ १२१) "हिमालय जितनी बडी" अपनी भूलके मूलमे उन्होने "देशकी तैयारीके" (पृष्ठ ६१) विषयमे अपने गलत अनुमानको स्वीकार किया और जब 'टाइम्स ऑफ इडिया' ने "गाधी — तब और अब" शीर्षकसे उनकी आलोचना की तो गाधीजीने उसका जवाब देते हुए कहा कि पुराने और नये गाधीमे कोई अन्तर नही है। अगर अन्तर है तो इतना ही कि "आज गाधीकी दृष्टि सत्याग्रहके बारेमे अधिक स्पष्ट है और वह अहिंसाके सिद्धान्तको पहलेसे कही ज्यादा महत्त्वपूर्ण मानने लगा है।" (पृष्ठ ६१–६२)

गाधीजी आलोचकोकी उपेक्षा कभी नही करते थे। यो तो वे यथासम्भव सबको समयसे उत्तर देनेका प्रयत्न करते थे, किन्तु जब कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरने उनकी

आलोचना की तो उसे उन्होने चुनौतीकी तरह लिया और विनम्रताके साथ उसका बहुत ही स्पष्ट और दृढ उत्तर दिया। उन्होने आन्दोलन और उसकी विकृतिके भेदको समझनेकी प्रार्थना की और लिखा: "हो सकता है कि असहयोग आन्दोलन अपने उचित समयके पहले ही शुरू हो गया हो। तब हिन्दुस्तान और ससार दोनोको उचित समयकी प्रतीक्षा करनी पडेगी। पर हिन्दुस्तानके सामने हिंसा और असहयोग इन दोमें से किसी एकको चुननेके अलावा कोई मार्ग नही रह गया था।" उन्होने कहा कि कविको ऐसा नही मानना चाहिए कि "असहयोग आन्दोलन भारतवर्ष तथा यूरोपके बीच एक बडी दीवार खडी करना चाहता है। इसके विरुद्ध असहयोग आन्दोलनका मंशा यह है कि पारस्परिक सम्मान और विश्वासकी बुनियादपर बिना किसी दबावके सच्चे, स्वैच्छिक तथा सम्मानपूर्ण सहयोगके लिए जमीन तैयार की जाये। . . . असहयोग आन्दोलन इस बातके विरोधमे किया गया है कि बिना हमारी इच्छा और जानकारीके हमसे बुराईमे सहयोग कराया जा रहा है।" (पृष्ठ १६२)

अग्रेजीके तथाकथित महत्त्वपर टिप्पणी करते हुए गाधीजीने कहा कि राष्ट्रीय सामर्थ्य ही वह चीज है जो विदेशके प्रभावको ठीकसे पचा सकती है। "मै अपने-आपको खुली हवाका उतना ही बड़ा उपासक मानता हूँ जितना कि कवि स्वय अपने-को मानते है। मै अपने घरको चारो ओरसे दीवारोसे घेर नही लेना चाहता और न खिडकियोको बन्द कर रखना चाहता हूँ। मै तो चाहता हूँ कि सब देशोकी सस्कृतियाँ मेरे घरके चारों ओर अधिकसे-अधिक निर्बाध रूपमे प्रवाहित हो सके। अलबत्ता मै यह कभी नही चाहूँगा कि उनके तेज झोके मेरे पाँव ही उखाड दे। मै किसी दूसरेके घरमे एक अवाछनीय मेहमान, भिखारी या गुलामके रूपमे रहना भी बरदाश्त नही करूँगा। . . . मेरा धर्म जेलकी तग कोठरी-जैसा सकुचित और अनुदार नही है। इसमे तो भगवान्की सारी सृष्टिके लिए स्थान है। लेकिन अविनय, जाति, धर्म अथवा वर्णगत अहकारके लिए यहाँ कोई स्थान नही है।" (पृष्ठ १५८)

इस तरह असहयोग भावनाकी नई अभिव्यक्तिका आधार तैयार किया जा रहा था। गांधीजीने वाइसरायका भाषण आन्दोलनको समझनेकी दिशामे एक प्रारम्भिक प्रयत्न माना। किन्तु फिर उन्होने लिखा. "पहलेकी बहुत-सी असफलताओको वाइस-रायने अपने भाषणमे कही भी खुले दिलसे स्वीकार नही किया है। इसीलिए उसमे नया अध्याय आरम्भ करनेकी, नये सिरेसे काम करनेकी सहज आकाक्षाका अभाव दिखाई देता है।" (पृष्ठ १८८-९) इसके बाद अली बन्धुओके माफीनामेको लेकर वाइस-रायने जो विज्ञप्ति निकाली और उसके विषयमे जो भाषण दिया, उसपर गाधीजीको "बहुत ही दु ख" हुआ, क्योकि वे दोनो ही तथ्योकी दृष्टिसे गलत थे। २८ जूनको उन्होने यह इच्छा व्यक्त की कि जिन परिस्थितियो और कारणोसे वे वाइसरायसे मिले, उनका एक ऐसा विवरण प्रकाशित किया जाये जिसे दोनोकी मजूरी प्राप्त हो। क्योकि उनकी समझमे वाइसराय नौकरशाहीके हाथोमे खेल गये थे और नौकरशाही तो "बहुत चालाक, सगठित और पूर्णतया सिद्धान्तहीन" होती है।

इसके बाद तय हो गया कि तत्कालीन शासन-पद्धतिके विरुद्ध प्रचार करना असह-योगीका कर्त्तव्य है। गाधीजीने इन्ही दिनो असहयोग और सविनय अवज्ञाके अन्तर

और सम्बन्धको भी स्पष्ट किया। "अवज्ञा असहयोगका उग्रतम रूप है . . . इसकी इजाजत तभी दी जा सकती है जब सरकार इतनी भ्रष्ट हो जाये कि उसे किसी भी तरह सुधारा न जा सके।" (पृष्ठ २३१–३२)

१७ जुलाईको असहयोग समितिने बेजवाड़ामे स्वीकृत कार्यक्रम और असहयोगको सफल बनानेके लिए अधिक प्रयत्न करनेकी अपील करते हुए प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। गाधीजी, शौकत अली, डा० किचलू और खत्री इस समितिके सदस्य थे। गाधीजीको इस बातकी प्रतीति थी कि आन्दोलनोमे सर्वाधिक धार्मिक यह आन्दोलन बड़े बलिदान और कष्ट-सहनकी अपेक्षा रखता है। "तपस्वियोके रक्तदानके बिना स्वतन्त्रताके मन्दिरका निर्माण नही हो सकता।" (पृष्ठ ४६०) कारावास, बार-बार गिरफ्तारियाँ और बार-बार सजाएँ — इन सबके लिए तो जनताको तैयार रहना ही था।

गाधीजी यह बात अवश्य मानते थे कि सविनय अवज्ञा खतरनाक हो सकती है। वे मानते थे कि यदि सविनय अवज्ञा करनेवाले व्यक्ति आत्यन्तिक कष्टोको सहन करनेके लिए तैयार हो तो ऐसी कोई चीज नही है जो उन्हे दबा सके। किन्तु वे यह भी मानते थे कि यह एक कठिन प्रयोग है: "हजारो मुसलमानोको, और यो हिन्दुओको भी, अहिंसा अपनाने और सर्वथा अहिंसक आचरण करनेके लिए तैयार करना सचमुच एक बड़ा खतरनाक प्रयोग है, क्योंकि उनकी धार्मिक आस्था उनको परिस्थिति विशेषमें हिंसात्मक आचरण करनेकी अनुमति देती है।" (पृष्ठ ५१२) गांधीजी उन दिनो तत्काल या निकट भविष्यमें सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनेकी कोई सम्भावना नही देख पा रहे थे, क्योकि उनकी रायमें देश बड़े पैमानेपर तदनुसार आचरण करनेके योग्य नही बना था।

तिलक स्वराज्य-कोषके लिए जूनके अन्ततक एक करोड़ रुपयेकी निधि एकत्रित करनेका निश्चय हुआ था — यह काम देशने कर दिखाया। अब स्वदेशीके अगीकार और विदेशी कपड़ेके बहिष्कारपर अधिक जोर दिया जाने लगा और इसका उद्देश्य था ऐसा वातावरण तैयार करना "जिसमें हम इतने बड़े पैमानेपर सविनय अवज्ञा शुरू करनेमें समर्थ हो सकेंगे जिसका विरोध कोई सरकार नही कर सकती।" (पृष्ठ ४८७)

१ जुलाईको गाधीजीने देशको आह्वान दिया कि १ अगस्त तक विदेशी कपड़ेका पूरा-पूरा बहिष्कार कर दिया जाना चाहिए क्योकि "हमें स्वराज्य-मन्दिरमें प्रवेश करनेके लिए स्वदेशीकी ही जरूरत है। स्वदेशी अर्थात् विदेशी कपड़ेका बहिष्कार।" (पृष्ठ ३५४)

जुलाईके लगभग मध्य तक गाधीजीने हाथकते स्वदेशी कपड़ोको काममें लेनेकी प्रतिज्ञा तैयार की और तदनुसार स्वदेशी व्रत लेनेके लिए जनताको प्रेरित किया। यह वही जमाना है जब विदेशी कपडोंकी होली उन दिनोका ज्वलन्त प्रदर्शन था। गांधीजीने सारे देशसे कहा कि पहली अगस्तको विदेशी कपड़ेको त्याग देनेका व्रत लिया जाये और हजारोकी सख्यामे लोगोने स्वदेशी व्रत लिया। विदेशी वस्त्रोंकी सबसे जबरदस्त होली जलाई गई परेलकी सार्वजनिक सभामें। ३१ जुलाईके इस दिनको गांधीजीने "बम्बईके लिए पवित्र दिन" की संज्ञा दी। यह सभा दक्षिण आफ्रिकामे प्रिटोरियाकी उस सभाका स्मरण दिलाती है जिसमें भारतीयोंने "पंजीयन प्रमाणपत्रो"

की होली जलाई थी। उन्होंने इस बातके महत्त्वको इन शब्दोंमे व्यक्त किया : "मैं होली जलानेकी इस रस्मको एक पुनीत यज्ञ मानता हूँ।" (पृष्ठ ४७४) "बाहरी अग्नि मेरे लिए अन्त स्थित अग्निका प्रतीक है। वह . . . सारी दुर्बलताओंको भस्मीभूत कर दे। इस प्रकार परिष्कृत विवेक हमें स्वदेशीकी सच्ची आर्थिक उपयोगिता बताये।" (पृष्ठ ४७९) "सभीके चेहरोपर स्वतन्त्रताकी आभा दमक उठी। यह शानदार काम बडे शानदार ढगसे सम्पन्न हुआ।" (पृष्ठ ५०५) श्री एन्ड्र्यूजको लिखे गये एक पत्रमे उन्होने इसका औचित्य समझाते हुए लिखा : "मैं इस समय इस प्रयत्नमे हूँ कि शल्य-क्रिया हाथको दृढ रखकर की जाये जिससे वह सुचारु रूपसे हो सके। . . . मैं जीवनमें अनुशासन और संयम चाहता हूँ। . . . लोग जो पापीसे घृणा करते थे किस प्रकार चुपचाप अनजाने ही पापीके बजाय पापसे घृणा करने लगे है।" (पृष्ठ ५१९)

जिस स्वराज्यकी प्राप्तिके लिए गाधीजी लोगोको तैयार कर रहे थे, उस स्वराज्य-के स्वरूपको गांधीजीने बहुत स्पष्ट करके कह रखा था : "स्वराज्य व्यक्ति और राष्ट्रके अस्तित्वका परिचायक है।" (पृष्ठ ९८) स्वराज्य "मृत्युके भयका त्याग" है। (पृष्ठ ५२४) कामके पीछे पड़नेकी योग्यता ही स्वराज्य है। (पृष्ठ ५४९) "राम-राज्यका अर्थ स्वराज्य, धर्मराज्य, लोकराज्य करते है। वैसा राज्य तो तभी सम्भव है जब जनता धर्मनिष्ठ और वीर्यवान् बनेगी।" (पृष्ठ १२०) "भगवान् भी हमें स्वराज्य नहीं दे सकता। उसे तो हमें खुद ही हासिल करना होगा।" (पृष्ठ १३२)

किन्तु गांधीजी स्वराज्यका कोई परिपूर्ण नकशा बनाकर देना अनावश्यक समझते थे। इसीलिए जब विपिनचन्द्र पालने इस सम्बन्धमे प्रश्न उठाया तो गांधीजीने इसे असामयिक माना और कहा, इसका प्रयत्न तो "उस कारीगरकी तरहका था जो इमारतकी पक्की नीव तैयार करनेसे पहले ही सबसे ऊपरकी मजिल बनाना शुरू कर दे।" (पृष्ठ २३५)

ऐसे स्वराज्य अथवा धर्मराज्यको पानेका साधन अहिंसक असहयोग ही हो सकता है। गांधीजीने कहा . "मै यदि कुछ चाहता हूँ तो केवल सत्यकी विजय चाहता हूँ। मैंने कभी भी इसपर विश्वास नही किया और आज भी नही करता कि लक्ष्य ही सब-कुछ है। आप भले लक्ष्यको बुरे साधनोके जरिए प्राप्त नही कर सकते। . . . (पृष्ठ ५१२) वे चाहते थे कि भारत सिर उठाकर खड़ा हो सके। स्वतन्त्र भारतमें कोई वर्ग विशेष राज्य कर सकता है इसकी गुजाइश भी वे नही मानते थे। राज्य तो जनताका ही हो सकता है और वह उसके प्रति जाग उठी है। "भारतवासी . . . इस बातको बहुत अच्छी तरह समझ गये है कि कोई भी अच्छीसे-अच्छी सरकार अपनी सरकारका, स्वराज्यका स्थान नही ले सकती।" (पृष्ठ १८९) कुछ लोगोका यह कथन कि "भारतका भावी लक्ष्य भले ही स्वतन्त्रता हो, आज तो उसे किसीके आश्रयमें ही रहना चाहिए" (पृष्ठ १८९) गाधीजीकी समझमे ही नहीं आता था। उनका कहना था कि जबतक जलियाँवाला बागमे किये गये रक्तपात और इस्लामके प्रति विश्वासघातका कलंक बना हुआ है, तबतक भारत शान्त नही रह सकता। अशान्तिके कारणोका परिमार्जन किया जाना चाहिए। यदि इंग्लैंड अपने इस कलकको धो डाले तो भारत "साम्राज्यके अन्तर्गत रहकर" भी स्वराज्य स्वीकार कर सकता

है। इसीलिए "काग्रेसका सिद्धान्त जान-बूझकर ऐसा लचीला बनाया गया है कि स्वराज्यकी माँगके लिए उसमे जगह रहे।" (पृष्ठ ३६८)

स्पष्ट ही स्वराज्यकी पालकी काग्रेसके कन्धोपर चढकर आनी थी। २२ जुलाईको अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी बैठकमे काग्रेसके विधानके विषयमे बोलते हुए उन्होने कहा कि वह बनाया ही इस दृष्टिसे गया है कि देश उसके मुताबिक चलते हुए स्वशासनकी अपनी शक्तिको बढाये और शुद्ध करे। उन्होने दावा किया कि जैसे-जैसे काग्रेसकी शक्ति बढती जायेगी, सरकारकी शक्ति कम होती चली जायेगी और "जिस दिन लोग काग्रेसमे पूरी तरह विश्वास करने लगेगे और उसके निर्देशोका स्वेच्छया पालन करने लगेगे, उसी दिन पूर्ण स्वराज्य स्थापित हो जायेगा।" (पृष्ठ ३०२) नरसिंह चिन्तामण केलकरको अपने ४ जुलाईके पत्रमे उन्होने लिखा "हमे कार्य-समितिको ऐसी सस्था बना देना चाहिए जो तेजीसे कार्य कर सके, जो शक्ति-शालिनी हो और जिसमे मतैक्य हो। . . मेरा तो विश्वास है कि हम काग्रेसके सविधानको दक्षतापूर्वक कार्यान्वित करके जो-कुछ चाहते है वह सब पा सकते है।" (पृष्ठ ३३४)

राजनीतिक क्षेत्रमे इस तरह व्यस्त रहनेपर भी गाधीजी सामाजिक क्षेत्रोमे अस्पृश्यता-निवारण जैसे सुधारोपर बराबर ध्यान दिये रहे। वे इस प्रथाके विरोधमे लिखने-बोलनेका एक भी अवसर हाथसे नही जाने देते थे, क्योकि वे मानते थे कि इससे मुक्ति पाना हिन्दू समाजका धर्म है। वे इस प्रथाको तर्क-सम्मत नही मानते थे और कहते थे कि यह सत्य और अहिंसाके भी विरोधमे है और धर्मसे तो इसका कोई वास्ता हो ही नही सकता। वे जानते थे कि अपनी निर्मम आलोचनाके कारण बहुतसे लोगोने उनका साथ छोड दिया है और अनेक उनके विरोधमे हो गये है, किन्तु अस्पृश्यताके साथ समझौता करना उनके लिए असम्भव था। साम्प्रदायिक एकतापर भी वे इसी तरह जोर देते रहे। ये बाते उनके लिए कोरे शब्द नही थे, वे इन्हे जीवन-मरणका प्रश्न मानते थे। उन्होने इस बातकी सचाईको समझ लिया था. "आपसी फूटसे तो हमारी बर्बादी ही है।" (पृष्ठ ८८) मजदूरो और मालिकोमे भी वे अधिक मेल-जोल चाहते थे और यह भी कानूनन नही बल्कि वास्तविक हृदय-परिवर्तनके द्वारा। उनकी रायमे जो कानून लोकमत तैयार होनेके पहले ही बना दिया जाता है वह किसी कामका सिद्ध नही होता। मद्य-निषेधको भी वे एक अनिवार्यता मानते थे। उन्होने कहा "पूर्ण मद्य-निषेध किसी प्रकारके प्रशासनके अन्तर्गत तो राष्ट्रके आग्रहपर ही किया जा सकता है।" (पृष्ठ ३८२)

इस खण्डकी सर्वाधिक मूल्यवान् मणि कदाचित् "श्रद्धाका स्वरूप" है। (पृष्ठ ३८२–८६) यहाँ गाधीजीने गोखलेके प्रति अपनी भावभीनी श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए गुरु-शिष्य सम्बन्धोकी पवित्रतापर जोर दिया है। उन्होने अपने गुरुकी जो विशेषताएँ वर्णित की है, सारा ससार स्वीकार करेगा कि वे शिष्यपर भी भली-भाँति लागू होती है: "स्फटिकके समान शुद्ध, मेमनेकी भाँति विनम्र, और सिंहके समान शूर थे। उनमें उदारता तो इतनी थी कि वह एक दोष बन गई थी। वे राजनीतिक क्षेत्रमे सबसे दोषरहित व्यक्ति थे और है।"

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐंड मेमोरियल ट्रस्ट) और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट, गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि व संग्रहालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया), नई दिल्ली; गृह-विभाग, बम्बई सरकार; श्री छगनलाल गांधी, अहमदाबाद; श्री नारणदास गांधी, राजकोट, श्री नारायण देसाई, बारडोली; श्रीमती राधाबहन चौधरी, कलकत्ता; 'नरसिंहरावनी रोजनिशी', 'बापुना पत्रो: मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो: सरदार वल्लभभाईने', 'बापुनी प्रसादी' पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा निम्नलिखित समाचारपत्रों और पत्रिकाओंके आभारी हैं: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'आज', 'गुजराती', 'नवजीवन', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'यंग इंडिया', 'लीडर', 'सर्चलाइट' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, नई दिल्ली; साबरमती संग्रहालय और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमे गाधीजीके स्वाक्षरोंमे मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोकी स्पष्ट भूले सुधार दी गई है।

अग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय उसे यथासम्भव मूलके निकट रखने का पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमे 'हिन्दी नवजीवन' अथवा नवजीवन प्रकाशन मन्दिरकी पुस्तकोमे प्राप्त हुए है हमने उनका उपयोग मूलसे मिलाने और संशोधन करनेके बाद किया है। नामोको सामान्यत. जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणोमे सशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गाधीजीने अपने गुजराती लेखोमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोमे दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गाधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अश मूल रूपमे उद्धृत किया है वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमे छापा गया है। भाषणोकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गाधीजीके कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोडे गहरी स्याहीमे छापे गये है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दाये कोनेमे ऊपर दे दी गई है; जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोमें की गई है और आवश्यक होने पर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन हिन्दी और गुजरातीके व्यक्तिगत पत्रोमें गुजराती सवत्के अनुसार तिथि दी गई थी उनमे ईसवी सन्के अनुरूप तिथि भी दे दी गई है। कुछ पत्रोकी लेखन-तिथिका निर्णय बाह्य या आन्तरिक साक्ष्यके आधारपर किया गया है। जिन पत्रोमे केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हे आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है।

साधन-सूत्रोमे 'एस० एन०' सकेत साबरमती सग्रहालय, अहमदाबादमे उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गाधी स्मारक निधि और सग्रहालय, नई दिल्लीमे उपलब्ध कागज-पत्रोंका और 'सी० डब्ल्यू०' कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी (सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय) द्वारा सगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये है। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई है।

विषय-सूची

चित्र-सूची

१. भाषण : रासकी सभामें[1]

१५ अप्रैल, १९२१

एक समय मैंने जनताको सलाह दी थी कि वह सरकारको उसकी मुश्किलके वक्त मदद करे। साम्राज्यके अन्तर्गत अगर हम हक प्राप्त करना चाहते हों तो पहले हमें अपना फर्ज अदा करना चाहिए, ऐसा मैंने कहा था और इसी कारण खेड़ा जिले-का संघर्ष पूरा होनेके तुरन्त बाद मैं लोगोको फौजमे भरती होनेके लिए समझाने आया था।[2] मै सिपहगरीके लिए तैयार हो गया था। उसके लिए मुझे अब भी कोई पश्चा-त्ताप नही होता। इससे तो मुझे कौमको फायदा हुआ ही दिखाई देता है। सिपहगरी अपनानेके अपने प्रस्तावसे हमने अपनी भलमनसाहत दिखाई। उसके लिए मुझे दु:ख नही है। दु:ख सिर्फ इतना ही होता है कि जब मैं खेड़ा जिलेके साहसी और दृढ़ पाटीदारो तथा 'ठाकोरो' के पास गया, उस समय बहुत कम लोग सिपाही बननेके लिए तैयार थे। उसका कारण सरकारके प्रति उनकी नाराजगी अथवा अविश्वास न था बल्कि उसका कारण यह था कि उनमे हिम्मतकी कमी थी। वे मरनेके लिए तैयार न थे। उनको किसीके लिए अथवा सरकारके लिए मरनेकी बात पसन्द न थी। लेकिन अब तो युग ही बदल गया है। मै अब सरकारके विरुद्ध हूँ, इस सरकारके लिए लड़ना मै अधर्म समझता हूँ, उसके प्रति मेरे मनमे पूर्णत: अविश्वासकी भावना घर कर गई है। उस समय मै इस सरकारको राक्षसी नही कहता था, लेकिन आज मैं इस राज्यको राक्षसी राज्य अथवा रावण-राज्य कहता हूँ। जिस अनन्य भक्तिभावसे मैं खेडा जिलेमे पैदल घूम रहा था और सरकारके लिए अपनी ताकत खर्च कर रहा था, अपनी उसी ताकतको — विरासतमे मिली अपनी ताकतको — अब मैं सरकारके विरुद्ध इस्तेमाल कर रहा हूँ; कारण, जो सत्य हो उसे करनेका नाम ही सत्याग्रह है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–५–१९२१

१. नवजीवनमें प्रकाशित गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

२. देखिए खण्ड १४।

२. भाषण : बोरसदकी सभामे[1]

१५ अप्रैल, १९२१

जब मैं पहले-पहल बोरसद आया था[2] तब मुझे सफलता नही मिली थी। लेकिन अब बोरसदमे जागृति आ गई है। जागृतिकी पहली निशानी यह है कि हममें सभाएँ आयोजित करनेकी, आयोजनोमे व्यवस्था रखनेकी शक्ति आनी चाहिए। उसके लिए अनुशासन चाहिए। अग्नि अथवा जल-प्रपातको कुशलतापूर्वक नियन्त्रित किये बिना जैसे उपयोगमे नही लाया जा सकता उसी तरह अनुशासनके बिना जागृति भी व्यर्थ है। जागृतिकी पहली शर्त यह है कि हम जिस समय जहाँ हो उस स्थल और समयके धर्मको समझ ले।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १-५-१९२१

३. भाषण : ताल्लुका परिषद्, हालोलमे[3]

१६ अप्रैल, १९२१

मेरे लिए तो खादीका ही शृगार, खादीका ही उपहार और खादीके ही तमगे होने चाहिए। मुझे जो वस्तु दी गई है उसमे स्वराज्यकी निशानी नही है। हमे आज ही स्वराज्य क्यो नही मिल जाता, इसका कारण इसमे देखा जा सकता है। अपने-आपको एक किसानके रूपमे, एक बुनकरके रूपमे और अब एक भगीके रूपमे पहचानने-वाले व्यक्तिको आपने अध्यक्ष नियुक्त किया है और उसे दी है ऐसी थैली! यह न तो कागजो [नोटो] से भरी हुई है और न चाँदी अथवा सोनेसे ही भरी हुई है। आपने तो मुझे खाली थैली दी है और तिसपर दूसरा गुनाह यह है कि उसकी तमाम चीजे विदेशी है।[4] वह विदेशी रगमे रँगी हुई है, उसका सूत विदेशी है, रेशमका तागा विदेशी है, तो फिर इसमे स्वदेशी क्या है? मैं स्वदेशीका नायक होनेका दावा करता हूँ इसलिए उसकी परीक्षा करनेका गुण मुझमे होना चाहिए। मेरी स्वदेशीकी व्याख्या तो इतनी सुन्दर है कि अगर हम उसका पालन करे तो

१. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

२. १९१८ में खेड़ा जिलेके सत्याग्रहके दौरान। देखिए खण्ड १४।

३. गाधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत। हालोल, गुजरातके पचमहाल जिलेमें है। गाधीजीने परिषद्की अध्यक्षता की थी।

४. इसपर श्रोताओंमें से किसीने बात काटते हुए कहा कि यह थैली स्वदेशी है। इसीके उत्तरमें गाधीजीने आगेके वाक्य कहे थे।

हमे कोई पछाड़ नही सकता। हालोलकी स्वदेशी अर्थात् हालोलमें ही बनी हुई। हिन्दुस्तानके बाकी भागोमे बनी चीजे हालोलके लिए हराम होनी चाहिए। हम सबको स्वावलम्बी बनना है, सबको सर्वोपरि बननेका प्रयत्न करना है। बस, इस सम्बन्धमे जब हम परस्पर एक-दूसरेके साथ होड़ करेगे तभी हमे स्वराज्य मिलेगा। यही स्वराज्यकी चावी है।

इस शहरकी सजावट मुझसे सहन नही होती। सजावटमें एक इंच-भर विदेशी कपड़ा नही होना चाहिए। उसके बदले यहाँ तो स्थान-स्थानपर विदेशी कपड़े लटके हुए है। सब ध्वजा-पताकाएँ विदेशी है। उन सबका रग विदेशी है। इसलिए इस सजावटको चिथड़ोका प्रदर्शन-भर समझना चाहिए। हम सजावट तो मेहमानकी खातिर करते है, तो फिर मेरे विवेककी खातिर, मेरी मर्यादाकी खातिर भी मुझे जो अच्छा लगता हो वही आपको करना चाहिए था। यदि हम सोच-समझकर हर चीज करेगे तभी हमे आगे जाकर स्वराज्य मिलेगा। यहाँ जो स्वयसेवक घूमते-फिरते दिखाई देते है वे जीनके बने अग्रेजी ढंगके कोट-पतलून पहने है। स्वराज्यके स्वयसेवकोके पास जीन कैसे? आप नई खादीके लिए अगर पैसे खर्च नही कर सकते तो मै आपको इस जीनके बदले खादी देनेको तैयार हूँ। अगर आपको ऐसा लगता हो कि आप खादीके पैसे मुझसे कैसे ले सकते है तो मै आपसे लंगोट पहनकर स्वयसेवकी करनेके लिए कहूँगा। अंग्रेजों-जैसे वस्त्र पहनकर ही सेवा हो सकती हो, सो बात नही। लोगोपर आपके प्रेमका, आपके सद्व्यवहारका असर पड़ेगा। यदि आप विलायती पतलून पहनकर लोगोपर प्रभाव डालना चाहे तो [बेहतर होगा कि] आप उसका त्याग करे। स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए निकले हुए भारतीयोके रूपमे अपने सम्मानकी खातिर भी इस पोशाकका त्याग कर देना चाहिए। मै तो स्वयसेवकोको प्रतिदिन दो घंटे चरखा चलानेकी सलाह दूंगा। जब आप अपने हाथसे कते सूतके कपड़े बुनवाकर पहनेंगे तभी आप सच्चे स्वयसेवक बनेंगे।

हमारी स्वराज्यकी सेनामे जितना काम लड़के-लड़कियाँ करेगे उतना पुरुष नही कर सकेगे। उनमे धूर्तता, पाखण्ड और मद भरा हुआ है। वह चला जाये तो आज ही स्वराज्य है। उम्रमे ज्यादा होनेपर भी हममें निर्दोषता होनी चाहिए, मौलाना शौकत अली[1]-जैसी! इस मनुष्यका मन बालक-जैसा स्वच्छ और कोमल है। वे किसीका बुरा नही चाहते। उन्हे डर सिर्फ खुदाका है, ईश्वरका है। उनसे आप निर्दोषता सीखें। मैंने अभ्यासपूर्वक निर्दोषताका विकास किया है। मैंने कंकर-कंकर करके बाँध बाँधा है। मेरा सरोवर बूंद-बूंद करके भरा गया है तथापि वह अधूरा है। मौलाना शौकत-अलीने तो अनेक प्रकारके ऐशो-आरामका उपभोग किया है। लेकिन फिर भी उनमे इतनी ताकत है कि वे सूलीपर चढ सकते हैं। मेरा तो भोग-विलास खादी है। मेरे शरीरसे रेशम छुआना मुझपर अत्याचार करनेके समान है। जब कि मलमल और रेशम

१. १८७३–१९३८; राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता। मौलाना मुहम्मद अलीके बड़े भाई। उन्होंने खिलाफत आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया था।

शौकत अलीको बहुत पसन्द है तथापि वे खादी पहनते हैं। इसे एक चमत्कार समझना चाहिए। उन्होंने इस्लामकी खातिर फकीरीको धारण किया है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–५–१९२१

४. भाषण: हालोलकी किसान सभामें[1]

१६ अप्रैल, १९२१

आपको तो खाद लेकर धान उगाना होता है। तो फिर आप भंगियोंका कैसे तिरस्कार कर सकते हैं? हमें दुनियामें सतयुग लाना है। वह कोई आकाशसे गिरनेवाला नहीं है। उसे हमें अपने सत्कर्मोंसे प्राप्त करना है। उसके लिए सब व्यसन छोड़ने चाहिए। दारू, ताड़ी, गाँजा और अफीम-जैसी वस्तुओंका सेवन करके जो व्यक्ति होश-हवास खो बैठता है वह खेत-जैसी अमूल्य वस्तुको कैसे सँभालकर रख सकता है? आप तो जमीनकी रक्षा करनेवाले हैं, दुनियाको अन्न प्रदान करनेवाले हैं। आजकल मैं सरकारके लिए लुटेरी और राक्षसी-जैसे विशेषणोंका प्रयोग करता हूँ लेकिन आप किसान लोग ही अगर जनताको लूटेंगे तो आप क्या कहलायेंगे? आप अपनी कुलीनता छोड़ दें, वीरता छोड़ दें, सत्य छोड दें और जगत्का तात कहलाते हुए भी आप जनताको दुःख दें, यह तो दरियामें आग लगनेके समान हुआ। वकालतके प्रति अरुचि होनेके बाद अपनेको किसान, बुनकर और भंगी माननेवाले मेरे-जैसे लोग फिर कहाँ जायें? लेकिन मेरा विश्वास है कि आप अच्छे हैं और इसीसे मैं किसान बना हूँ। किसानका तकिया मौत है। किसान मौतको तकियेके नीचे रखकर सोता है। उसे कौन डरा सकता है? आप तो बादशाह हैं और बादशाह ही रहें, यही मेरी माँग है। जो बादशाह प्रजाको लूटता है वह पापी है। इसलिए आप सदाचारी बनें।

आप अन्य किसानोंको जाकर इस किसान गांधीका सन्देश देना कि उसने चोरी करनेको मना किया है, जुआ न खेलनेके लिए कहा है। आपको तो फसल पकाकर उसे सही दामोंपर बेचना है। आप कम दाममें न दें लेकिन कजूस बनियेकी तरह बहुत ज्यादा दाम लेकर अनाज बेचना भी किसानका धर्म नहीं है। आप इससे बचेंगे तो आपको बरकत दिखाई देगी।

आपको बेगार करनेकी जरूरत नहीं है। आप खेतकी बेगार करेंगे कि सरकार और उसके बदमाश अधिकारियोंकी बेगार करेंगे? उनसे कहना कि हम कमीन नहीं हैं, हम तो किसान हैं।

१. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत। चूँकि परिषद्में भाग लेनेके लिए आये किसान गांधीजीका भाषण नहीं सुन सके थे इसलिए शामको उनके लिए एक अलग सभाकी व्यवस्था की गई थी।

आप निर्व्यसनी बने, सयमी बने। सवेरे उठकर प्रभुका नाम लेनेके बाद काम करना शुरू करे। साँझको हल छोडनेके बाद गालियाँ देना अथवा गालियोसे भरे हुए गीत गाना उचित नही है। रातको भजन गाओ, हरिकीर्तन करो। अब बरसात नही होती, कारण राजा पापी बन गया है, प्रजा पापी बन गई है। ईश्वर हमारा समूल नाश नही करता कारण उसे हमारी पूरी परीक्षा करनी है। इसलिए सदाचारी बनो, व्यसन छोडो, भजन-कीर्तन करो, फिर आप देखेगे कि आपको मुँह माँगा मेह मिलेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–५–१९२१

५. टिप्पणियाँ

भाषा और विचार

भाषा विचारोको पूरी तरहसे अभिव्यक्त करनेका कदाचित् ही एक सफल वाहन बन पाती है। अनेक बार भाषा विचारोको आच्छादित कर देती है। भाषा सदैव विचारोको परिसीमित करती है। उसपर भी जब एककी भाषाका दूसरा व्यक्ति अनुवाद करता है तब जो मुश्किले और अनर्थ उपस्थित होते है उसे अनुवादक और पत्रकार ही समझते है। हमे तो ऐसी अनेक विडम्बनाओका सामना करना पड़ा है। हमने मुखपृष्ठपर बड़े-बड़े अक्षरोमे श्री वामनराव जोशीका[1] सन्देश[2] प्रकाशित किया था। प्रकाशित अनुवादको जब हमने पढा तब हमे स्वयं ही शरम आई। हमें लगा कि हमने इस वीर पुरुषके साथ अथवा पाठक-वर्गके साथ अन्याय किया है। जिन विचारोको, जिस पद्धतिको हम महत्त्व प्रदान करना चाहते थे, उसकी शायद इस सन्देशमे हत्या हो गई है। हमने जो अनुवाद प्रकाशित किया है वह अग्रेजीसे किया गया है। श्री वामनरावका मूल सन्देश तो मराठीमे है। हम अपने अनुवादमे जो दोष देखते है वह वस्तुतः मूलमे है ही नही। "अपनी कमजोरियोको प्रकट करनेका काम हमारा नही है" यह वाक्य हमने श्री वामनरावके मुखसे कहलवाया है।[3] हमारी वीरता तो सदैव अपनी कमजोरियोको प्रकट करनेमें है। श्री वामनराव स्वय वीर बनकर लोगोंकी कमजोरियोको ढकना चाहते है, छिपाना नहीं चाहते। कमजोरियोको

१. वीर वामन गोपाल जोशी, निर्भीक पत्रकार और राष्ट्रीय नेता।

२. १४–४–१९२१ के नवजीवनमें। श्री जोशीको राजद्रोहके अपराधमें गिरफ्तार किया गया था और उन्होंने कहा था कि वे अपना बचाव नहीं करना चाहते।

३. श्री जोशीने कहा था कि इस समय उनका कर्त्तव्य विदेशियोंके कुकृत्योंका पर्दाफाश करना है, अपने लोगोंकी कमजोरियोंको प्रकट करना नहीं। अगर वे अपना बचाव करेंगे तो यह अपने लोगोंकी कमजोरियोंको प्रकट करना ही होगा। उन्होंने कहा कि मेरे विचारसे इससे बढ़कर शर्मकी और कोई बात नहीं हो सकती कि एक भारतीय दूसरे भारतीय द्वारा गिरफ्तार किया जाये और तीसरा उसे जेल भेजे।

छिपानेसे तो जनताकी कमजोरी ठीक उसी तरह बढ जाती है जिस तरह रोगको छिपानेसे रोग बढता है। एक भारतीय दूसरे भारतीयको पकड़े और तीसरा उसे सजा दे, इसमे तो शर्मकी कोई बात नही है। हाँ, अगर ऐसा कोई अवसर उपस्थित हो जाये तो यह अवश्य ही हमारे लिए शर्मकी बात है। इसके अलावा जब स्वराज्यकी स्थापना हो जायेगी तब अपराधी भारतीयको एक भारतीय सिपाही ही पकड़ेगा और भारतीय न्यायाधीश सजा देगा। वह शोचनीय नही जान पडेगा, इतना ही नही वरन् वह मान्य होगा और उचित भी जान पडेगा। श्री वामनरावने जो उद्गार प्रकट किये हैं वे वर्तमान परिस्थितियोको देखकर प्रकट किये हैं। पापी पेटकी खातिर नौकरी करनेवाला सिपाही एक निर्दोष भारतीयको पकड़े और उसे वैसा ही भारतीय न्यायाधीश सजा दे — श्री वामनरावने हमारी इसी शर्मका जिक्र किया है और उसे उघाडकर रख दिया है। लेकिन हम अपने अनुवादमे इस अर्थको अभिव्यक्त नही कर पाये है, यह बात हमे दु ख देती है। तथापि ऐसे दोषोको अनिवार्य मानकर हमें सन्तुष्ट रहना है। भाषा और उसमे भी अनुवाद मनुष्यके विचारोको अभिव्यक्त करनेके लिए कितना अपर्याप्त साधन है, यह हम देख रहे है। सच बोलनेकी अपेक्षा सच्चा काम करना ही सच्चा भाषण है। कृत्योमे विचारोका जो प्रतिबिम्ब पडता है वह भाषणोमे कहाँसे हो सकता है? आइये, हम सब श्री वामनरावके कृत्योका अनुकरण करे और उनके आत्मत्यागमे, उनकी वीरतामे, उनकी निर्भयतामे, उनकी सादगी और निरभिमानतामें उनके सन्देशको पढे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७–४–१९२१

६. पत्र : नरसिंहराव दिवेटियाको

गोधरा

सोमवार, १८ अप्रैल, १९२१

सुज्ञ भाईश्री,[1]

मुझे महादेवने खबर दी है कि आपके खुले पत्रका मैंने जो उत्तर दिया है, उसमे मैंने श्री दयाराम गीदुमलजीके सम्बन्धमे जो-कुछ लिखा है, उससे आपको दु ख हुआ है[2] — बहुत ज्यादा दु ख हुआ है। वह वाक्य आपको दु ख देनेके उद्देश्यसे नही लिखा गया। वह तो आपके और दयारामजीके प्रति मेरे मनमे जो आदरभाव है उसे व्यक्त करनेके लिए लिखा गया है। दुनिया चाहे जो कहे लेकिन आप दोनो पवित्र है, यह बतानेके लिए मैंने उक्त वाक्य लिखा है तथापि अगर आपको बुरा

१. १८५९-१९३७; गुजराती कवि और साहित्यकार; एलफिन्स्टन कालेज, बम्बईमें गुजरातीके प्रोफेसर।

२. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ १८१-८५।

लगा हो तो उसके लिए आप मुझे जो प्रायश्चित्त करनेके लिए कहेंगे सो मैं करूँगा। मैं आपको दु:ख कैसे दे सकता हूँ?

आपके यहाँ अभीतक नहीं पहुँचा और पटेलसे[1] मिलने आया — मैंने सुना कि आपको इस बातका भी दु:ख हुआ है। इसका मैं क्या जवाब दे सकता हूँ? आपके यहाँ तो मुझे आना ही है। पटेलके यहाँ तो मैं कार्यवश गया था। वहाँसे आपके पास शान्तिपूर्वक आ बैठनेका मुझे समय मिल सकता था? मेरे कितने ही मधुरसे-मधुर मनोरथ बिना सफल हुए रह जाते हैं। मैंने जान-बूझकर अपराध नहीं किया, ऐसा मानकर क्या आप मुझे माफ नहीं करेंगे?

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

नरसिंहरावनी रोजनिशी

७. भाषण : गोधराकी सभामें[2]

१८ अप्रैल, १९२१

हम इस सल्तनतके, साम्राज्यके, सरकारके भंगी बने हुए हैं उसका मुख्य कारण यह है कि हमारे वैष्णव, शैव अपनेको कट्टर सनातनी हिन्दू कहनेवाले भंगियोंके प्रति पशुओं-जैसा बरताव करते हैं, उनपर सितम ढाते हैं। भंगी हमारे सहोदर हैं, सगे भाई हैं। उनसे हम अपनी सेवा करवाते हैं और पेट भरनेके लिए पूरा वेतन भी नहीं देते; फलस्वरूप उन्हें जूठनसे अपना निर्वाह करना पड़ता है, सड़ा हुआ मांस खाना पड़ता है। सेवाका विचार करते हुए मुझे लगता है कि वकील, डाक्टर अथवा कलक्टर भंगीकी अपेक्षा समाजकी तनिक भी ज्यादा सेवा नहीं करते। उनसे तो भंगीकी सेवा कहीं बढ़ी-चढ़ी है। भंगी सेवा करना छोड़ दें तो समाजकी क्या दशा हो? हमपर जो दु:ख टूट पड़ा है वह हमारे द्वारा अन्त्यजोंके प्रति किये गये पापका फल है। मुसलमानोंको भी हमारे साथ रहनेके कारण हमारे पापका दु:ख भोगना पड़ रहा है। अनेक हिन्दू भंगियोंका स्पर्श न करनेके औचित्यके सम्बन्धमें शास्त्रोंका उद्धरण देते हैं। लेकिन मैं कहता हूँ कि अगर कोई शास्त्र यह कहता है कि भंगीको छूना पाप है तो वह शास्त्र नहीं, अशास्त्र है। जो बुद्धिगम्य न हो, जो सत्य न हो उसे शास्त्र कदापि नहीं कहा जा सकता। इनके अलावा, शास्त्रके भी कितने ही अर्थ किये जा सकते हैं। हम शास्त्रके नामपर क्या नहीं करते? शास्त्रके नामपर साधु बाबा भाँग पीते हैं, गाँजा फूँकते हैं, शास्त्रके नामपर देवीके भक्त मांस-मदिराका सेवन करते हैं, शास्त्रके नामपर अनेक व्यक्ति व्यभिचार करते हैं। शास्त्रके नामपर मद्रासमें कोमल बालाओंको वेश्या बनाया जाता है। इससे ज्यादा शास्त्रका अनर्थ और क्या हो सकता है? मैं अपनेको कट्टर वैष्णव मानता हूँ, मैं वर्णाश्रम धर्मको माननेवाला हूँ। लेकिन मैं कहता

१. सम्भवतः विट्ठलभाई पटेल।

२. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

हूँ कि यदि भगीको स्पर्श करनेसे हम अस्पृश्य हो जाते है तो यह वर्णाश्रम धर्मकी ज्यादती है, उसपर चढा हुआ मैल है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १-५-१९२१

८. भाषण : मानपत्रके उत्तरमें[1]

१९ अप्रैल, १९२१

मुझे यह कह देना जरूरी जान पडता है कि जिस तरह प्रत्येक व्यक्ति पौष्टिक पदार्थ खा अथवा हजम नही कर सकता उसी तरह मेरे लिए जिन पौष्टिक विशेषणो-का प्रयोग किया गया है मेरी समझमे मैं उन्हे हजम नही कर सकूंगा। हाँ, इस दिशामे मैं प्रयत्न अवश्य कर रहा हूँ कि किसी दिन उनके योग्य अवश्य बन जाऊँ। मैं प्रयत्न कर रहा हूँ कि क्रोधको अक्रोध और असत्यको सत्यसे पराजित करूँ और ऐसा करते-करते मर जाऊँ। लेकिन फिलहाल तो आपने मेरे लिए जिन विशेषणोका प्रयोग किया है उनका कोई उपयोग नही हो सकता। इन विशेषणोको सुनकर अगर मैं लापरवाह हो जाऊँ अथवा उद्धत बन जाऊँ और ऐसा मान लूं कि प्रजाने मुझे ऐसा कहा है इसलिए मैं लायक बन गया हूँ तो उसी दिनसे मेरा अध पतन आरम्भ हो जायेगा। मेरा पुरुषार्थ मेरी नम्रतामे है, मर्यादाका उल्लघन न करनेमे है। मेरा और हिन्दुस्तानका मगल इसीमें है कि मैं इतना जाग्रत रहकर अपना कार्य करूँ।

आप मुझे मानपत्र देते हैं, यह देशमे हुई अद्भुत जागृतिका सूचक है। इसका अर्थ यही है कि नगरपालिकाने अपने अधिकारको पहचान लिया है। मैंने नगरपालिकाओं-की मार्फत देशका बहुत ज्यादा कार्य करनेकी आशा रखी है। यही कारण है कि काग्रेसके अन्तिम दो अधिवेशनोमें[2] जो प्रस्ताव पास किये गये उनमें नगरपालिकाओसे असहयोगमे शामिल होनेके लिए नही कहा गया है। उनमे सहकारकी गन्ध है, स्पर्श है; लेकिन इस समय हमारे पास तो एक भी ऐसी वस्तु नही है कि जिसमे सहकारका स्पर्श न हो। गेहूँका एक दाना खानेमें भी सहकार है। अभी हम जो असहयोग कर रहे है उसमे तो एक बालक भी हाथ बँटा सकता है। यदि हम तीव्र असहयोग कर सके तो असहयोग एक इतनी चमत्कारपूर्ण वस्तु है कि हम एक ही दिनमे स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन मैंने तो देशके सम्मुख असहयोगका बहुत ही आसान रूप प्रस्तुत किया है, उसे वह सरलतासे सहन कर सकता है। इसमे प्रत्येक नगरपालिका शामिल हो सकती है। यदि देशकी हर नगरपालिका इस बातको समझ जाये और अपनी शक्तिके अनुरूप कार्यक्रम बना ले तो उनकी मार्फत स्वराज्य सहज ही प्राप्त किया जा सकता है।

१. यह मानपत्र सूरत नगरपालिकाकी ओरसे दिया गया था।

२. कलकत्ता और नागपुर अधिवेशन जो क्रमशः सितम्बर और दिसम्बर १९२० में हुए थे।

नगरपालिका क्या करे, इस बारेमें मुझे इतना ही कहना है कि आपने कांग्रेसकी सलाहके मुताबिक चलनेका जो वचन दिया है उसका पालन करो और अस्पृश्यताको दूर करनेके लिए कमर कसकर तैयार हो जाओ। चरखेको एक ओर छोड़कर मैंने पहले इस बातका उल्लेख किया है। चरखा हमारे पुरुषार्थका सूचक है लेकिन अस्पृश्यता-की गन्धतक न रहने देना तो हिन्दुओंके लिए पुरुषार्थकी चरमसीमा है। चरखेकी प्रवृत्तिमें कार्य करना पड़ता है जब कि इसमें तो भावनाको बदलना-भर है।

मैं कल रात गोधराके भंगीवाड़ेमें गया था। वहाँकी स्थिति देखकर मेरा हृदय बड़ा दु:खी हुआ। मुझे आश्चर्य होता है कि जो चीज मोटे तौरपर दिखाई पड़ जाती है उसे इतनी सूक्ष्म दृष्टि रखनेवाला हिन्दू-समाज क्यों नहीं देख पाता। उनकी पीठपर अदीठ हो गया है, इसका उन्हें पता क्यों नहीं चलता।

आप शहरका कूड़ा-करकट साफ करनेके लिए, लोगोंका स्वास्थ्य सँभालनेके लिए, बालकोंको शिक्षा देनेके लिए, रोगोंके प्रसारको रोकनेके लिए नियुक्त किये गये हैं। यह कार्य आपसे तभी हो सकेगा जब आप भंगियोंका उद्धार करेंगे। इंग्लैंडने जिस तरह बेल्जियम-जैसे छोटे-छोटे राज्योंके लिए लड़ाई लड़नेका बहाना बनाकर अपना स्वार्थ साधा उसी तरह यदि हम भी अपनी जेबें भरनेका विचार करेंगे तो हमारे स्वराज्य का कोई अर्थ नहीं है।

इस सरकारको मैं राक्षसी क्यों कहता हूँ? क्योंकि उसने निर्बलकी रक्षा करने-के लिए नहीं वरन् उनका भक्षण करनेके लिए तलवार खींची थी। हमारे स्वराज्य अथवा धर्मराज्यमें तो निर्बलकी सेवा करनेकी भावना ही रहेगी। हम जब शान्तिमय स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए तपश्चर्या करेंगे तभी सच्चे स्वराज्यवादी कहलायेंगे।

इसलिए भंगियोंका उद्धार करना आपका सर्वप्रथम कर्त्तव्य है। उनका निवास-स्थान स्वच्छ होना चाहिए, उनके घर साफ होने चाहिए, उनके लिए पानीकी व्यवस्था होनी चाहिए। मैं अब अपने आपको भंगी कहता हूँ। मुझे तो भंगीवाड़ेमें रहनेमें आनन्द आता है। यह मेरा सच्चा विलास है। उनके बालकोंको खिलानेमें मुझे आनन्द मिलता है। इसलिए मेरे जैसा व्यक्ति भंगीवाड़ेमें रह सकता है। जबतक उनकी स्थिति ऐसी नहीं हो जाती कि वे स्वास्थ्यके नियमोंका पालन कर सकें तबतक यह नहीं कहा जायेगा कि नगरपालिकाने अपना कर्त्तव्य निभाया है।

हमें इस समय राष्ट्रीय स्कूलका मतलब चरखा स्कूल ही समझना चाहिए। कारण शिक्षा तो ऐसी होनी चाहिए जो हमें पुष्ट करे, जिससे हम स्वतन्त्र हों और तेजस्वी बनें। शिक्षा सम्बन्धी अपनी भूलको मैं अब सुधारनेकी कोशिश कर रहा हूँ। सरकार जैसी शिक्षा देती है वैसी ही शिक्षा देनेका हम प्रयत्न करेंगे तो हम पिछड़ जायेंगे। हम यदि अपनी जनतामें शक्तिका सचार करना चाहते हैं तो चरखा ही हमारे लिए रामबाण है। चरखा इस शिक्षाके लिए सुनहरी योजना है। यदि आप स्कूलोंमें चरखेको स्थान देंगे तो इसका अर्थ होगा कि आपको स्कूलोंके लिए भिक्षा नहीं माँगनी पड़ेगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-५-१९२१

९. टिप्पणियाँ

आँकड़े और उनके अर्थ

कार्यकर्ताओके मार्गदर्शनके लिए मैं नीचे एक सारणी दे रहा हूँ, जिसमें प्रत्येक कांग्रेस-प्रान्तकी जन-संख्या लाखमें तथा तिलक स्मारक-कोषके लिए उनके द्वारा एकत्र किये जानेवाले धनका अनुपात हजारमें दर्शाया गया है।[1]

क्रम-संख्या	प्रान्त	जन-संख्या (लाखमें)	चन्देका अनुपात (हजारमें)
१.	मद्रास	२००	६५०
२.	आन्ध्र	२१०	६८२
३.	कर्नाटक	१२०	३९०
४.	केरल	७०	२२७
५.	बम्बई	१०	३२५
६.	महाराष्ट्र	१२०	३९०
७.	गुजरात	११०	३५७
८.	सिन्ध	४०	१३०
९	संयुक्त प्रान्त	४९०	१,५९२
१०.	पंजाब	२७०	८७७
११.	पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त	३०	९७५
१२	दिल्ली	१०	३२५
१३.	अजमेर-मारवाड़	१९०	६१७
१४.	मध्य प्रदेश (हिन्दी)	९०	२९२
१५.	मध्य प्रदेश (मराठी)	३०	९७५
१६.	बरार	३०	९७५
१७	बिहार	२९०	९४२
१८.	उत्कल	२५०	४८७
१९.	बंगाल	४७०	१,५२७
२०	असम	४०	१३०
२१.	बर्मा	१२०	३९०

१. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसने २६ दिसम्बर, १९२० को नागपुरके अपने वार्षिक अधिवेशनमें अखिल भारतीय तिलक स्मारक स्वराज्य-कोष शुरू करनेका प्रस्ताव पास किया था। ३१ मार्च, १९२१ को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने बेजवाड़ाकी अपनी बैठकमें कोषमें एक करोड़ रुपयेकी राशि जमा करनेका लक्ष्य निर्धारित किया था। देखिए खण्ड १९।

यद्यपि समूचे भारतका विस्तार और जिनकी स्मृतिको चिरस्थायी बनाने तथा जिस प्रयोजनको पूरा करनेके लिए यह कोष इकट्ठा किया जा रहा है उन्हे देखते हुए यह रकम बहुत कम है, तथापि वह एक बड़े पैमानेपर अथक प्रयत्न किये बिना एकत्र नही की जा सकेगी। इस रकमको एकत्र न करनेका सबसे अचूक उपाय यह है कि प्रत्येक प्रान्त केवल अपने निर्धारित अंशकी बात सोचता रहे और उसीसे सन्तुष्ट बना रहे। और इसे एकत्र कर लेनेका सबसे अचूक और क्षिप्र उपाय है कि प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक प्रान्त पूरी राशिकी बात सोचे या अपनी शक्तिभर जितना कर सकता है, एकत्र करे। उदाहरणके लिए बम्बईके कुछ ही लखपती, यदि चाहे तो, एक दिनमे एक करोड़ रुपयेकी निर्धारित राशि चन्देमें दे सकते है। बम्बईके लिए यह हास्यास्पद होगा कि वह देशके आगे केवल अपना हिस्सा फेंककर सन्तुष्ट हो जाये। अकेला बम्बई ही यह पूरा भार उठा सकता है। बम्बईने अपने बारेमें देशका यह खयाल बना दिया है कि वह जन-आन्दोलनका खर्च जुटा सकता है। जलियाँवाला बाग-कोषके लिए बम्बईने सबसे अधिक धन दिया था। काग्रेसकी पजाब उप-समितिके लिए बम्बईने ही सबसे मोटी रकम दी थी। बम्बईने आर्थिक सहायतामें और सभी प्रान्तोको हमेशा पछाड़ा है। गुजरातका भी साढे तीन लाखसे कुछ ऊपरका अपना हिस्सा देकर अलग बैठ रहना इतना ही हास्यास्पद होगा। वह आसानीसे और अधिक इकट्ठा कर सकता है; जब कि यदि अतीतके आधारपर भविष्यके बारेमें अनुमान किया जाये तो सयुक्त प्रान्तसे किसी बडी रकमकी आशा नही की जा सकती। वहाँ कोई समृद्ध सार्वजनिक कार्यकर्त्ता नही है। पण्डित नेहरू[1] सदा खुले हाथों दिया करते थे किन्तु अब उनकी लाखो रुपये प्रतिवर्षकी कमाई बन्द हो गई है। भारतके सबसे बड़े भिखारी, पण्डित मालवीयजीकी[2] सेवायें अभी आन्दोलनको सुलभ नही हैं। इसलिए सयुक्त प्रान्तसे यह आशा करना व्यर्थ होगा कि वह लगभग १६ लाख रुपयेका अपना हिस्सा पूरा कर देगा। फिर भी, यदि उस प्रान्तके चार करोड़ नब्बे लाख लोगोंके हृदयको छुआ जा सके, यदि बड़े-बड़े जमीदारोका ध्यान आकर्षित किया जा सके तो सोलह लाख क्या बड़ी रकम है? शराबके खर्चकी बचतसे ही उसका हिस्सा पूरा किया जा सकता है। और फिर उसमे हरिद्वार और बनारस भी तो हैं। इन प्रख्यात देवस्थानोमें दर्शनार्थ जो धनवान तीर्थयात्री आते है, उनसे कार्यकर्त्ता तिलक स्मारक-कोषके लिए आसानी-से चन्दा ले सकते है। उनमे आस्था और आस्थासे उत्पन्न होनेवाला साहस होना चाहिए। यही हाल बंगालका है। बंगालमे अनेक धनवान व्यक्ति हैं, किन्तु वह अभी तक कभी देशभक्तिपूर्ण कार्योंके लिए दान देनेके लिए प्रसिद्ध नही रहा। श्री दासको[3] इस कामको हाथमे लेना चाहिए। कलकत्तामें बसे हुए मारवाड़ियों और

१. मोतीलाल नेहरू (१८६१–१९३१); सुप्रसिद्ध वकील व राजनीतिज्ञ।

२. मदनमोहन मालवीय (१८६१–१९४६); बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके सस्थापक; शाही परिषद्के सदस्य; दो बार काग्रेसके अध्यक्ष निर्वाचित।

३. देशबन्धु चित्तरजन दास (१८७०–१९२५); प्रसिद्ध वकील व कांग्रेसी नेता, वक्ता और लेखक; १९२१ में काग्रेसके अध्यक्ष निर्वाचित।

गुजरातियोकी सहायता मिले तो बगालको अपने हिस्सेकी रकम इकट्ठी करनेमे कोई कठिनाई नही होनी चाहिए। अजमेर-मारवाड़को ६ लाखसे ऊपरका अपना हिस्सा इकट्ठा करनेमे कठिनाई होगी। उसे विभिन्न रियासतोमें जाना पड़ेगा। उसकी हालत शायद सबसे ज्यादा नाजुक है। मुसलमानोके लिए अजमेरके नाममे ही जादू है। अजमेर शरीफ जानेवाले हजारो मुसलमान तिलक स्वराज्य-कोषके लिए खासी रकम दे सकते हैं। प्रत्येक कार्यकर्त्ताको समझना चाहिए कि हमे एक क्षण भी नही खोना है। प्रत्येक प्रान्तके प्रमुख नेताओसे मेरा अनुरोध है कि वे जमा की गई रकमोका साप्ताहिक ब्यौरा प्रकाशनके लिए भेजे। चन्देकी उगाहीका काम व्यवस्थित ढगसे घर-घर जाकर किया जाना चाहिए। गुजरातने पजाबका अनुकरण किया है। उसकी रसीदें रगीन आर्ट पेपरपर छपी है और एक कोनेमे दिवगत देशभक्तका सुन्दर चित्र है। भारतका मानचित्र रसीदके शेष भागकी शोभा बढाता है। उसकी पुश्तपर स्वराज्यकी दस शर्तें दी गई हैं। प्राप्ति-स्वीकृति गुजराती, देवनागरी और उर्दू लिपियोमे दी गई है। रसीदे एक रुपये, पाँच रुपये और दस रुपयोकी है। पजाबने पिछली १२ तारीख तक १ लाख, ८५ हजार रुपये एकत्र भी कर लिये थे। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीने देशके सामने जो कार्यक्रम[1] रखा है, वह कर्मठ लोगोके लिए सरल है। खाली सपने देखनेवालो या लम्बे-चौडे भाषण झाड़नेवालो के लिए यह असाध्य कार्य है। जबतक स्वराज्यी कार्यकर्त्ता कामकाजी लोगो जैसी आदते नही बनायेंगे तबतक भारत स्वराज्यकी स्थापना नही कर सकता।

जख्मी आँख

इन स्तम्भोमे अहमदाबादके मद्य-निषेध कार्य तथा उसके कार्यकर्त्ताओके अपार आत्मसंयमकी ओर ध्यान आकर्षित किया जा चुका है। किसी अज्ञात व्यक्ति द्वारा फेंके पत्थरसे डा० कानुगाकी आँखमे इतनी गहरी चोट आ गई थी कि उनको आँखसे हाथ भी धोना पड सकता था। अन्तत उन्हे कुछ दिन खटिया पकडनी पड़ी। चोट खाकर भी, वे तबतक अपनी जगहपर डटे रहे जबतक कि उनकी जगह लेने कोई दूसरा नही आ गया। धरना देनेवाले अन्य लोग अपनी जगहपर जमे रहे। कोई भगदड नही मची। कोई शिकायत दायर नही की गई, यह तो ठीक ही है। इसका असर बिजलीका-सा हुआ। पियक्कडोके हाथोके तोते उड़ गये। धरना देनेवालोको अविचलित देखकर पथराव भी बेमतलब लगने लगा। और मुझे मालूम हुआ है कि उस घटनाके बाद फिर किसी तरहका पथराव हुआ ही नही। शराबकी दुकानोपर जानेवालोपर भी इतना ही जबरदस्त प्रभाव पड़ा है। मै इसे असहयोग तथा उसके तात्कालिक परिणामोका एक सर्वोत्तम उदाहरण मानता हूँ। यदि डा० कानुगाने पुलिसमे शिकायत की होती, और यदि उनके साथियोने हमलेका जवाब दिया होता तो मामला गडबडीमे पड जाता। अनेक प्रकारके अन्य महत्त्वहीन प्रश्न उठने लगते और हमेशाकी तरह दोनो

१. चन्दा एकत्र करनेके अतिरिक्त बेजवाड़ा कार्यक्रममें ये बातें भी शामिल थीं: काग्रेसके एक करोड़ सदस्य बनाना और बीस लाख चरखे चालू करवाना। इस कार्यक्रमको ३० जून, १९२१ तक पूरा करना था।

पक्षोंमें उत्तेजना फैलती और अधिक बुरा तो यह होता कि मद्य-निषधके कार्यको धक्का पहुँचता। किन्तु आज तो डा० कानुगाके शौर्य, त्याग तथा आत्मसंयमने उस आदर्शको आगे बढ़ाया है, जिसके लिए उन्होंने अपना खून बहाया है। उसने शराबके दुकानदारों और उनके पास जानेवालोकी ओर अधिक गुस्सा दिखानेकी प्रवृत्तिको रोका है और मद्य-निषेधके धर्म-युद्धका स्तर बहुत ऊँचा उठा दिया है।

एक मजिस्ट्रेटकी सनक

देहरादून छावनीके मजिस्ट्रेटने सत्याग्रह दिवसपर यह हुक्म निकाला कि उस दिन उनकी छावनीमे दुकाने अवश्य खोली जाये और यदि दुकानदारोने उनकी आज्ञाका उल्लंघन किया तो वे छावनीसे निर्वासित कर दिये जायेंगे। इस आज्ञाने यह दर्शा दिया है कि भारतमे ओ'डायरशाही[1] अभीतक मरी नही है। ज्यादातर लोगोको इस बातकी जानकारी नही है कि छावनियोमे मजिस्ट्रेटोको वे अधिकार प्राप्त रहते हैं, जिनका अन्य स्थानोमे केवल 'मार्शल लॉ' के अधीन ही प्रयोग किया जा सकता है। छावनियोके निवासी मजिस्ट्रेटोकी दयापर निर्भर रहते है। आश्चर्यकी बात तो यह है कि लोगोने एक ऐसी शासन-पद्धतिको इतनी लम्बी अवधितक और इतने धैर्यके साथ बरदाश्त कर लिया, जिसका निर्माण ही इस दृष्टिसे किया गया था कि उनकी स्वतन्त्रताको इतना नियन्त्रित किया जाये जिससे वे गुलामो-जैसे बन जायें।

सम्पादकीय परिवर्तन

मैं पाठकोको खेदके साथ सूचित करता हूँ कि श्री लालचन्द अडवानी, जो सहायक सम्पादक थे, अपने कार्य-भारसे मुक्त कर दिये गये है और अब उनका 'यग इडिया'से किसी भी हैसियतसे कोई सम्बन्ध नही है। अत. अब 'यग इडिया' को भेजे जानेवाले पत्र केवल सम्पादक, 'यग इडिया', के पतेपर भेजे जाये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०–४–१९२१

१०. कुहरा

जब-जब मैं देखता हूँ कि मेरे मित्र आन्दोलनको गलत समझ रहे है तब-तब मैं अपने मनमे एक प्रसिद्ध भजनके ये शब्द दुहरा लेता हूँ: "वी शैल नो ईच अदर बैटर व्हेन दि मिस्ट्स हैव रोल्ड अवे"—जब भ्रांतिका कुहरा छँट जायेगा तब हम परस्पर एक-दूसरेको अधिक अच्छी तरह जानेंगे। एक मित्रने अभी-अभी मुझे दिनाक १४ के 'सर्वेंट आफ इंडिया' से लिये हुए असहयोगसे सम्बन्धित कुछ अनुच्छेद भेजे है। प्रस्तावो तथा प्रयोजनोकी कैफियत देना एक अत्यन्त निरर्थक कार्य है। यह वर्ष शीघ्र ही बीत जायेगा और शब्दोकी अपेक्षा हमारे कार्य ही असहयोगके अर्थको अधिक व्यक्त करेंगे।

१. सर माइकेल ओ'डायर, पंजाबके लेफ्टिनेंट गवर्नर (१९१३–१९१९); जिनका शासन १९१९ में किये गये अत्याचारोंके कारण भारतीय इतिहासमें 'डायरशाही'के नामसे प्रसिद्ध हुआ।

मै तो असहयोगको स्थगित हुआ नही मानता और वह तबतक स्थगित होगा भी नही जबतक कि सरकार भारत, मुसलमानो और पजावियोके प्रति अपने अपराधोका निराकरण नही कर लेती और जबतक यह व्यवस्था इस प्रकार नही बदल दी जाती कि वह राष्ट्रकी इच्छाके प्रति उत्तरदायी हो जाये। निश्चय ही पदवियो, कानूनी अदालतो, स्कूलो और परिषदोके साथ जुडी हुई प्रतिष्ठाके भ्रमको दूर करना आवश्यक था। मै तो समझता हूँ कि सब मिलाकर 'नेशनलिस्टो' (राष्ट्रवादियो) ने इस सिलसिलेमे अत्यन्त ही उत्तम आचरण किया है। उनमे अब कोई पदवीधारी व्यक्ति नही रह गया है, किसी भी ऐसे राष्ट्रवादी वकीलकी असहयोगियोमे कोई प्रतिष्ठा नही रह गई है जिसने अपनी वकालत स्थगित नही कर दी है। राष्ट्रीय शालाओ और महाविद्यालयोने ऐसे लड़के और लडकियोको तैयार किया है जो आज अपनी योग्यताका अच्छा परिचय दे रहे है और मै कह सकता हूँ कि परीक्षाका समय आनेपर वे अपने त्यागसे लोगोको चकित कर देगे। यह तो कोई भी देख सकता है कि परिषदोसे दूर रहनेवाले लोग आज जो सेवा कर रहे है वह परिषद्मे जाकर नही कर सकते थे। अपनी पदवियाँ त्यागनेवाले चन्द व्यक्तियोने दूसरोको मार्ग दिखाया है। ये सब चीजे समाजको बदल रही है। अब इन विशेष वर्गोमे मौखिक प्रचारकी आवश्यकता नही है। जिन्होने पदवियो, स्कूलो, अदालतो अथवा परिषदोका परित्याग किया है, उनके आचरण और उनके चरित्रसे भाषणोकी अपेक्षा कही अधिक सफल और कारगर प्रचार हुआ है। राष्ट्रीय स्कूलोकी सख्या बढ रही है। लड़के अभीतक स्कूलो और कालेजोको छोड रहे है। सरकारी आँकड़े बिलकुल गलत है। मुझे याद है, मैने परिषद्के एक सदस्यको यह कहते सुना है कि कमसे-कम ३,००० छात्रोने शिक्षण-सस्थाएँ छोड दी है। इसमे उन हजारोकी गणना नही की गई है जो राष्ट्रीय स्कूलोमे पढ रहे है। वकालत स्थगित करनेवालोकी सख्या बराबर बढ रही है— अन्य स्तम्भमे धारवाड और गुटूरके वकालत स्थगित करनेवालोकी सख्या देखिए। पदवियोका परित्याग भी अभीतक चल रहा है। और जब भीरु अथवा सतर्क व्यक्ति समझ लेगे कि यह आन्दोलन एक गम्भीर और धार्मिक प्रयत्न है तथा लोगोपर इसका प्रभाव स्थायी है तो वे भी अपनी पदवियाँ त्याग देगे।

यदि भारतमे दक्षिण आफ्रिकाके आन्दोलनके इतिहासकी पुनरावृत्ति हो तो मुझे आश्चर्य नही होगा। मुझे आश्चर्य तो तब होगा जब ऐसा न हो। दक्षिण आफ्रिकामे आन्दोलन सर्वसम्मत प्रस्तावसे[1] प्रारम्भ हुआ था। जब उसके प्रथम चरणके प्रारम्भमें अधिकाश लोग ढीले पडने लगे थे, केवल १५० [व्यक्ति] जेल जानेके लिए आगे आये, फिर एक समझौता हुआ और जब वह फिर भग हुआ तो आन्दोलनकी पुनरावृत्ति की गई, हम कुछ लोगोको छोडकर अन्य किसीको विश्वासतक नही होता था कि जनता ठीक समयपर आगे आ जायेगी। सत्याग्रहके अन्तिम चरणके प्रारम्भमे केवल सोलह स्त्री-पुरुष जेल जानेके लिए सामने आये थे। इसके बाद तो जैसे तूफान ही आ गया। सारी जनता मानो एक ज्वारके समान उठी। बिना किसी सगठनके, बिना

१. प्रस्तावके लिए देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४३४।

किसी प्रचारके लगभग ४०,००० व्यक्ति जेल जानेके लिए निकल पड़े। लगभग दस हजार तो कैद ही किये गये। उसके बाद क्या हुआ सो सबको मालूम है। उस समय जनता जिन चीजोके लिए लडी थी, वे सब उसे प्राप्त[1] हो गईं। स्वेच्छापूर्वक कष्ट-सहनके कठोर अनुशासनमे तपकर वह रक्तहीन क्रान्ति सम्पन्न हुई।

मैं यह विश्वास नही कर सकता कि भारत उतना सब नही कर पायेगा। लॉर्ड कैनिंगके शब्दोको दोहराये तो, हो सकता है कि भारतके शान्त नीलाकाशमे भले ही मनुष्यके अँगूठेके बराबर एक मेघ-खण्ड क्षितिजपर दिखाई दे रहा हो, किन्तु वह किसी भी क्षण कल्पनातीत आकार धारण करके कब फट पड़ेगा, यह कोई नही कह सकता। मैं नही कह सकता कि समूचे भारतकी जनता कब मैदानमे कूद पड़ेगी। किन्तु इतना मैं अवश्य कहता हूँ कि शिक्षित-वर्ग, जिससे काग्रेसने अपील की है, एक दिन अवश्य — कदाचित् इस वर्षके भीतर ही — राष्ट्रोचित ढगसे मैदानमे उतरेगा।

किन्तु वे ऐसा करे या न करे, राष्ट्रकी प्रगतिको कोई भी व्यक्ति अथवा वर्ग रोक नही सकता। अशिक्षित कारीगर, स्त्रियाँ, साधारण जन — सभी आन्दोलनमें अपना हिस्सा बँटा रहे हैं। शिक्षित-वर्गके प्रति की गई अपीलने उनके लिए मार्ग प्रशस्त कर दिया है। भेंडोसे बकरियोको पृथक करना आवश्यक था। शिक्षित-वर्गको कसौटीपर कसना ही था। उनके द्वारा और उनके माध्यमसे ही आन्दोलन प्रारम्भ करना जरूरी था। भगवान्‌की दयासे असहयोग आन्दोलनने अबतक अपने सहज मार्गका ही अनुसरण किया है।

स्वदेशीके प्रचारको एक तीव्र एवम् अनन्य रूपमे सामने आना ही था और वह उचित समयपर सामने आ गया है। वह असहयोग आन्दोलनके कार्यक्रमका ही एक भाग था और है। मेरा दावा है कि वही भाग सबसे बड़ा, सबसे निरापद और सर्वाधिक सफल है। वह अपने वर्तमान रूपमे इससे पहले प्रारम्भ नही किया जा सकता था। आवश्यक था कि देश अपने लिए चरखेका महत्त्व स्पष्ट रूपसे समझे। पुराने अन्धविश्वासो तथा पूर्वग्रहोसे देशको मुक्त करना था। देशको ठीक-ठीक समझना था कि केवल ब्रिटिश वस्तुओका बहिष्कार व्यर्थ है, और उसी प्रकार समस्त विदेशी वस्तुओका बहिष्कार भी व्यर्थ है। उसे समझना था कि वस्त्रोमे स्वदेशीका परित्याग करके ही उसने अपनी स्वतन्त्रता खोई थी, और अब वह हाथके कते और बुने कपड़े-को अपनाकर ही उस स्वतन्त्रताको फिरसे प्राप्त कर सकता है। उसे समझना था कि उसने अपनी नादानीमे हाथसे कातना-बुनना छोडकर अपनी कलात्मक रुचि और अपना कौशल खो दिया है। उसे समझना था कि भारतकी जीवन-शक्तिमे घुन लगने और भारतीय जीवनमे बार-बार अकाल आनेका इतना बड़ा कारण सेनापर होनेवाले धनका अपार व्यय नही है, जितना कि इस अनुपूरक उद्योगका नष्ट होना है। प्रत्येक प्रान्तमें चरखेके प्रति आस्थावान् लोगोका उद्भव होना था और लोगोको खद्दरके सौन्दर्य तथा उसकी उपयोगिताको ठीक-ठीक हृदयगम करना था।

१. दक्षिण आफ्रिकी संघर्षके सिंहावलोकनके लिए देखिए खण्ड १२, परिशिष्ट २८।

अब ये सब बातें हो चुकी है। अब इस राष्ट्रीय धर्मके पुनरुद्धारके लिए एक करोड़ स्त्री-पुरुषो और एक करोड रुपयोकी आवश्यकता है। सवाल चन्द चरखोका नही, ६ करोड घरोमे से प्रत्येकमे चरखेका प्रवेश करानेका है। सवाल भारतके लिए आवश्यक सारे कपडेका उत्पादन एवम् वितरण करनेका है। यह काम एक करोड़ रुपयोसे नही हो सकता। यह तो तभी हो सकता है जब भारत १ करोड रुपया तथा १ करोड़ स्त्री-पुरुष जुटाये और साथ ही ३० जूनसे पहले-पहल २० लाख चालू चरखो-का २० लाख घरोमे प्रवेश करा दे। और तब समझिये कि वह स्वराज्यके लिए लगभग तैयार है। क्योकि इस प्रयाससे समूचे राष्ट्रमें उन सभी गुणोका उद्भव हो जायेगा जो राष्ट्रको उत्तम, महान्, आत्मनिर्भर और अपने आपमे पूर्ण बनाते है। जब हमारा राष्ट्र अपने स्वत स्फूर्त प्रयत्नसे विदेशी कपड़ेका बहिष्कार पूर्ण कर लेगा तब वह स्वराज्यके योग्य बन जायेगा। मै वचन देता हूँ कि उस स्थितिमे भारतीय नगरो-मे खडे ये बडे-बड़े किले भारतकी स्वतन्त्रताके लिए खतरा नही रह जायेगे बल्कि भारतीय बच्चोके खेलकूदके स्थान बन जायेंगे। तब हमारे और अंग्रेजोके बीचके सम्बन्ध शुद्ध हो जायेंगे। तब लंकाशायरके मतदाता हमे हानि नही पहुँचायेंगे और तब यदि अंग्रेज चाहे तो भारतमे भारतको लाभ पहुँचाने और सच्चे दिलसे उसकी मदद करने-के एकमात्र ध्येयको लेकर मित्रो और बराबरीवालोकी तरह रह सकते है। असहयोग एक ऐसा आन्दोलन है जिसका उद्देश्य अंग्रेजोसे यह अनुरोध करना है कि वे या तो हमारे साथ सम्मानपूर्ण शर्तोपर सहयोग करे या फिर हमारा देश छोडकर चले जाये। यह आन्दोलन हम दोनोके सम्बन्धोको शुद्ध आधारपर स्थापित करनेके लिए है, अपने आत्मसम्मान और अपनी प्रतिष्ठाके अनुकूल उन्हे सुनिश्चित करनेके लिए है।

आन्दोलनका आप जो भी चाहे नाम रख लीजिये। आप उसे 'स्वदेशी और मद्य-निषेध' कह सकते है। मान लीजिये कि पिछले इन सारे महीनोका प्रयत्न व्यर्थ गया है। मै सरकार तथा नरम (माडरेट) दलके मित्रोसे अनुरोध करता हूँ कि वे हाथकी कताईको देशव्यापी बनाने तथा मद्यपानको अपराध करार देनेमे राष्ट्रके साथ सहयोग करे। दोमे से किसी भी पक्षको इन दो आन्दोलनोके परिणामोके सम्बन्धमें अटकल लगानेकी कोई आवश्यकता नही। पेडकी पहचान उसके फलसे हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०–४–१९२१

११. फूटके बलपर शासन

विधान सभामे दिया गया सर विलियम विन्सेटका[१] भाषण पढकर दु ख होता है। मै समझता हूँ कि जानकारी जुटानेवाले लोगोने उनको बिलकुल ही अँधेरेमे रखा है। उनके भाषणसे सिद्धान्तहीनता तो नही, अज्ञान टपकता है।

उन्होने जो सफाई दी है वह ऊपरसे देखनेमे तर्क-सम्मत लगती है। पर उसमे तथ्योको कभी तोड-मरोड़कर और कभी गढकर पेश किया गया है। उसके द्वारा हम लोगोमे लोभकी प्रवृत्तिको जगानेकी कोशिश की गई है और उसमे असहयोगियोके इरादोको गलत ढगसे पेश किया गया है।

वे कहते है कि असहयोगियोका जाना-माना उद्देश्य सरकारको ठप्प कर देना है और "वे अपना यह उद्देश्य पूरा करनेके लिए असन्तोष फैला सकनेवाले किसी भी साधनका प्रयोग करनेसे बाज नही आये है।" उनके ये दोनो ही कथन अर्ध-सत्य है। असहयोगका प्राथमिक उद्देश्य कही भी सरकारको ठप्प करना नही बतलाया गया है। उसका प्राथमिक उद्देश्य आत्म-शुद्धि है। अलबत्ता इसका प्रत्यक्ष परिणाम होना यही चाहिए कि हमारी बुराइयो और कमजोरियोपर पनपनेवाली सरकार ठप्प हो जाये। इसी प्रकार इस कथनमे भी पूरी सचाई नही है कि हमने लोगोके असन्तोषके सभी उद्गमोका उपयोग अपने पक्षमे किया है। अवश्य ही जहाँ लोग ठीक कारणोसे असन्तुष्ट थे हमे उनका उपयोग करनेके लिए बाध्य होना पडा है। किन्तु यदि कही लोगोका असन्तोष बेजा है तो हमने उसका समर्थन नही किया है और उसका बेजा फायदा तो कभी नही उठाया। भले ही इसमे भावना यह रही हो कि अगर हम वैसा करेंगे तो उससे हमारे उद्देश्यको हानि पहुँचेगी। आगे जो वाक्य दिया जा रहा है सर विलि-यमने वह अपने मतके समर्थनमे कहा था। वह गलत है और इससे साफ हो जाता है कि मेरे कथनका क्या तात्पर्य है। उन्होने कहा था: "जहाँ भी मालिको और कर्मचारियोके बीच कोई झगडा दिखता है, असहयोग दलका कोई-न-कोई नुमाइन्दा या कार्यकर्त्ता वहाँ असन्तोष और वैमनस्य फैलाने तुरन्त पहुँच जाता है।" यह सिर्फ गलत ही नही है बल्कि ऐसा कहनेमे उनका इरादा दोनो ही पक्षोको असहयोगियोके विरुद्ध भडकाना है। मजदूरो और पूँजीपतियोके बीच विवादोसे कोई राजनीतिक लाभ न उठाना तो असहयोगियोका घोषित उद्देश्य है। असहयोगियोने दोनोके प्रति निष्पक्ष रहनेकी कोशिश की है। मजदूरोको पूँजीपतियोके विरुद्ध खडा करनेकी बात सोचना हमारे लिए मूर्खतापूर्ण होगा। वह तो बिलकुल सरकारके हाथोमे खेलना होगा, क्योकि सरकार पूँजीपतियोको मजदूरोके और मजदूरोको पूँजीपतियोके विरुद्ध खड़ा करके अपनी स्थिति काफी सुदृढ बना लेगी। उदाहरणके तौरपर झरियामे एक असहयोगीने ही हड़तालको बढ़नेसे रोका था। कलकत्तामे असहयोगियोने ही स्थितिको ज्यादा नही

१. वाइसरायकी कार्यकारिणी परिषद्में गृह-मन्त्री।

बिगड़ने दिया था। किन्तु जहाँ-कही हड़तालियोकी शिकायते वाजिब होगी वहाँ असहयोगी उनके पक्षमे खड़े होनेमे तनिक भी आगा-पीछा नही करेगे। वे हमेशा गैर-वाजिब हडतालोमे मदद देनेसे तो इनकार करते ही रहे है। सर विलियम विन्सेट कहते है: "जहाँ भी जातिगत दुर्भावना दिखाई पडती है यह शैतान चौकडी तुरन्त वही आग भड़काने पहुँच जाती है।" वे स्वय जानते होगे कि यह एक झूठ बात है। अग्रेजो और भारतीयोके बीच जातिगत दुर्भावना मौजूद है। जलियाँवाला बागकी याद तो सदा ताजा रहेगी। फिर भी यह शैतान चौकड़ी सचमुच शान्ति-दूत बनकर काम करती रही है। हर मौकेपर अविवेकपूर्ण क्रोधको भड़कनेसे रोकती रही है। और मै तो इतना तक कहनेका साहस कर सकता हूँ कि यदि हमारे अन्दर अहिंसाकी भावना न होती तो डायरशाही और ओ'डायरशाहीकी धमकियोके बावजूद कही अधिक सख्यामे निर्दोष व्यक्तियोका लहू बहता। हमारा कसूर सिर्फ इतना था कि हमने ठोकर मारनेवाले बूटको चाटनेसे इनकार कर दिया था और सरकार द्वारा सार्वजनिक रूपमे पश्चात्ताप प्रकट करने तक उससे सहयोग बन्द कर दिया था। असहयोगियोको इसका श्रेय मिलना चाहिए कि उन्होने अन्यायके कारण उत्तेजित जनताके क्रोधका रुख अग्रेजोके बजाय अग्रेजो द्वारा चलाई जानेवाली शासन-व्यवस्थाकी ओर मोड़ दिया है।

परन्तु फूट डालकर शासन करनेके प्रयासमे यदि कोई कसर रह जाये तो फिर सर विलियम, सर विलियम ही नही रह जायेगे। वे पूरे आवेशके साथ कहते है: "जमीदारो और किसानोके बीच जहाँ कोई झगडा हुआ कि यह शैतान चौकडी वही अशान्ति फैलाने और अव्यवस्थाको उभारने पहुँच जाती है।" सर विलियमको मालूम होना चाहिए कि किसान आन्दोलनकी बागडोर पडित जवाहरलाल नेहरूके हाथमे है और उनका प्रमुख ध्येय ही यह है कि किसानोको शान्त और धैर्यशील रहना सिखाया जाये। सीधी-सी बात है कि सर विलियम जमीदारोको असहयोग आन्दोलनके खिलाफ भड़काना चाहते है। गनीमत यह है कि जमीदार और किसान दोनो ही भली प्रकार जानते है कि उनका पक्ष जबतक न्यायपूर्ण रहेगा तबतक उनको असहयोगियोसे कोई भय नही है।

सर विलियमका कहना है कि "आन्दोलन सर्वथा ध्वसात्मक है और जहाँतक मै समझ पाया हूँ उसमे रचनात्मक क्षमताका लेश भी नही है।" असहयोग आन्दोलनको ध्वसात्मक कहना रोग-ग्रस्त अगपर नश्तर लगानेवाले शल्य-चिकित्सकके कामको ध्वसात्मक कहना है। इस ध्वसात्मक आन्दोलनमे निर्माण या रचनाके बीज उसी तरह समाहित है जैसे शल्य-चिकित्सकके नश्तरमे स्वास्थ्यके बीज। क्या शराब-बन्दी ध्वसात्मक है? क्या जगह-जगह खुल रहे राष्ट्रीय स्कूल ध्वसात्मक है? क्या हजारो नये चरखे राष्ट्रकी समृद्धिकी जडे खोदते है? वे विदेशी आधिपत्यको जरूर ध्वस्त करते है, फिर वह लकाशायरका हो या जापानका।

सर विलियम समाजके विशिष्ट वर्गोको आम जनताके खिलाफ भडकाकर ही दम नही लेते, इसके बाद वे ऊँचे तबको और सामान्य जनता दोनो ही में अन्दरूनी झगडो तथा बाहरी हमलोके भयकी भावना पैदा करके उनको असहाय और अपग बना देना चाहते है। क्या हिन्दू-मुस्लिम एकता एक ऐसी तुच्छ और ऊपरी चीज है कि जैसे

ही हमारे देशसे अंग्रेजोंकी बन्दूके, उनका शस्त्र-बल हटेगा वैसे ही हम आपसमें लड़ना शुरू कर देंगे? क्या आजसे साठ वर्ष पहले हम अपनी रक्षा करनेमें आजकी अपेक्षा कम समर्थ थे? या क्या यह सच नही है कि पाश्चात्य मानदण्डोसे देखा जाये तो हम इतने असहाय कभी थे ही नही जितने कि आज है? जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ स्वराज्यका अर्थ यही है कि उसमे आत्म-रक्षाकी शक्ति होनी चाहिए; जो देश स्वय अपनी रक्षा नही कर सकता उसे तत्काल तो पूर्ण स्वराज्यके योग्य नही माना जा सकता। सर विलियमने अपने एक इसी वाक्यके जरिये अनजाने ही ब्रिटिश शासनकी भर्त्सना कर दी है और उससे यह सिद्ध कर दिया है कि इसे सुधारना या उसका बिलकुल ही अन्त कर देना अब एक फौरी आवश्यकता बन गई है। मेरा तरीका तो कष्ट-सहन और आत्मिक बलका है और देश आज इस तरीकेसे अपनी आत्म-रक्षा करनेके लिए तैयार है। पर सर विलियमके मानदण्डके अनुसार तो इन सुधारोमे ऐसी कोई चीज नही है जो आगामी सौ वर्षोमे भी भारतको विश्वकी सम्मिलित शक्तियोसे आत्म-रक्षा करने योग्य बना सके। उस मान दण्डके अनुसार तो ये सुधार भारतको जकडनेवाली शृंखलाओको और मजबूत बनाते है और उसमे असमर्थताकी भावना पैदा करते है। वक्ताने बड़ी शानके साथ कहा है कि हर तरहके निहित स्वार्थोका खात्मा हो जायेगा। यहाँ उनको इस बातकी याद दिलाना जरूरी है कि भारतके सबसे महत्त्वपूर्ण हितको, उसकी स्वावलम्बिताको इसी विदेशी शासनने नष्ट किया है और वक्ताकी जो योजना है वह तो भारतकी गरीबीको और भी बढा देगी।

सर विलियमने असहयोगियोके इरादोंको जितने गलत रूपमे पेश किया है उतने ही गलत ढगसे उन्होने उनके तरीकोको समझा है। शिक्षित-वर्गोका सहयोग प्राप्त करनेमे हमे असफलता नही मिली है। मैं मानता हूँ कि हमे उनका और अधिक सहयोग मिल सकता था। लेकिन मै कह सकता हूँ कि उनका एक भारी बहुमत मनसे हमारे साथ है; अलबत्ता अपनी दैनिक दुर्बलताओके कारण वे जिसे त्याग समझते है, वह कर नही पाते। हम शुरूसे ही अपने विचारोसे जनताको प्रभावित करनेका प्रयोग कर रहे है। हम जनताको ही अपना मुख्य आधार समझते है, क्योकि स्वराज्य तो आखिर उसीको पाना है। स्वराज्यकी इतनी अधिक आवश्यकता न तो धनी लोगोको है और न शिक्षित-वर्गोको। स्वराज्य किसी भी किस्मका हो, इन दोनो वर्गोको अपने हितको स्वराज्यके लिए उपयोगी बनाना पडेगा। जैसे ही जनता अपने अन्दर आत्मनियन्त्रणकी सामर्थ्य पैदा कर लेगी और सार्वजनिक अनुशासनमे दीक्षित हो जायेगी, हम उसे आवश्यकता पडनेपर यह सलाह देनेसे नही चूकेगे कि वह ऐसी सरकारको करोकी अदायगी बन्द कर दे जिसने सचमुच कभी उसके कल्याणका खयाल नही रखा; जिसने उसका शोषण किया है और शोषणके विरुद्ध खडे होनेका जरा भी रुख अख्तियार करते ही उसका दमन किया है।

सर विलियमने असहयोग आन्दोलनके प्रति अपनाये गये सरकारके तरीकोका वर्णन करनेमे बडी चालाकी दिखाई है। वे कहते है कि भारत सुरक्षा कानून उन लोगोके खिलाफ इस्तेमाल नही किया जायेगा जो किसीको हानि नही पहुँचाते और जो लोगोको हिंसा करनेसे रोकते है। लेकिन वे असहयोगियोके खिलाफ साधारण

कानूनोको विलकुल मनमाने ढगसे प्रयुक्त कर रहे है, और इनसे फायदा उठाया जा रहा है असहयोगियोके इस निश्चयका कि वे न्यायालयोमे सरकारी आदेशोपर कोई आपत्ति नही उठायेगे। सर विलियमका कहना है कि स्वराज्य देना उपद्रवी लोगोके आगे झुकना है और इस प्रकार अराजकताको प्रश्रय देना है। वे उन दो बातोके बारेमे अपना सिर खपानेकी कोई जरूरत नही समझते जो इस तमाम अशान्तिका कारण है और जो तीव्र विष बनकर देशके शरीरमे ,भिद गया है। खिलाफत[1] और पजावके साथ हुआ अन्याय[2] — ये दो विष है। वे हमको यह क्यो नही बतलाते कि यदि खिलाफतके सिलसिलेमे किये गये वायदे पूरे कर दिये जाये और पजावके जख्मको भर दिया जाये तो भारतपर कौनसी विपत्ति आ जायेगी।

सर विलियमने अली भाइयोपर असज्जनतापूर्ण आक्षेप करके अपने इस विचित्रसे भाषणको और भी विचित्र बना डाला है — वे अली भाई जो इस्लाम और भारतकी खातिर एक उच्च आदर्शपूर्ण सघर्ष चला रहे है। साथ ही उन्होने याकूब हसन नामक सज्जनपर तो और भी असज्जनतापूर्ण आक्षेप किया तथा उसमे उनकी तुर्क पत्नीका अशोभनीय ढगसे उल्लेख भी किया।

मै पहले भी बतला चुका हूँ कि इस भाषणको पढकर मुझे बडा दु ख पहुँचा था और उसकी आलोचना करनेका अपना कर्त्तव्य निभाना मुझे और भी पीडाजनक लगा है। मै पाठकोको आश्वस्त कर देना चाहता हूँ कि भाषाके प्रयोगमे सयमसे काम लेनेका आदी होनेपर भी मुझे इस भाषणकी आलोचनाके दौरान भाषाको सयत रखनेके लिए अपनी पूरी शक्ति लगा देनी पडी है, मुझे अपने-आपको रोके रखनेका बहुत अधिक प्रयत्न करना पडा है। मै ऐसे अनेक विशेषणोका उपयोग करनेमे सफल हो सका हूँ जो मेरी समझमे सर विलियमके कारनामेका ठीक-ठीक परिचय देते है और मुझे इसका दु ख है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०-४-१९२१

१. यह आन्दोलन प्रथम विश्व-युद्धकी समाप्तिपर टर्कीको एकाधिक खण्डोंमें बाँटनेकी ब्रिटिश सरकारकी नीतिको बदलवानेके लिए शुरू किया गया था, जिससे खलीफाकी धार्मिक प्रतिष्ठापर भी बुरा प्रभाव पडता था। देशके मुसलमान इस मसलेपर बहुत ही उत्तेजित थे और कांग्रेसने इसे अपने कार्यक्रममें शामिल कर लिया था।

२. अप्रैल १९१९ में पजावमें मार्शल लॉके अन्तर्गत सरकार द्वारा किया गया दमन और हिंसापूर्ण कार्रवाइयाँ — जिनकी चरम परिणति जलियाँवाला बागके कत्लेआममें हुई, जिससे देशभरमें क्षोभकी लहर दौड़ गई थी। गाधीजीका मत था कि सरकार खिलाफत और पजावके बारेमें किये गये अन्यायोंको बरकरार रखनेके लिए असत्य और दम्भका सहारा ले रही है। ये ही बादमें असहयोग आन्दोलनके अहम मसले बने थे।

१२. प्रतिवादके सम्बन्धमें टिप्पणी[1]

श्री वर्माने जोरसे प्रतिवाद किया, इसकी मुझे खुशी है। मैं मान लेता हूँ कि जबलपुरके वकील ही वहाँके असहयोग आन्दोलनका नेतृत्व कर रहे हैं। लेकिन मैं अपने इस कथनपर अटल हूँ कि जिस दिन मैं जबलपुर गया उस दिन वहाँ वकील-मण्डलीका एक भी सदस्य उपस्थित नही था। जिन दो युवकोका मैंने हवाला दिया है, सारा इन्तजाम उन्हीके हाथमे था। वे जमीदारोके बेटे हैं, यह बात बिलकुल सही है। आज वे मजबूरीके कारण सरकारसे सहयोग भी कर रहे हैं। जमीदार अपनी जमीनें सरकारको लौटा दें, ऐसा नारा अभीतक कांग्रेसने नही दिया है और शायद कभी देगी भी नही। ये युवक दूसरी जगहोके जमीदारोके चन्द बेटोकी ही तरह राष्ट्रीय उत्थानमे शानदार हिस्सा ले रहे है और वकीलोसे हर तरहका बढावा पानेके हकदार हैं। जहाँतक धनके मुकाबले बुद्धि द्वारा नेतृत्व करनेकी बात है, उसमे तो कोई दो रायें हो ही नही सकती। तथा यह तो मानना ही पड़ेगा कि अन्तमे मस्तिष्क नही हृदय ही राह सुझायेगा। सकटकी घडीमे तो बुद्धि नही चारित्रिक बल ही काम देता है और मेरा खयाल है कि उन नौजवानोने चारित्रिक दृढता दिखाई है। यदि कुछ विपरीत सामने आया तो मुझे अफसोस होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०-४-१९२१

१३. भाषण : सूरतकी सभामें

२० अप्रैल, १९२१

महात्माजीने शामको तिलक मैदानमें आयोजित एक विशाल सभामें भाषण दिया। सभामें १५ से २० हजारतक लोग उपस्थित थे। उन्होंने उस दिनकी सभाके अत्यन्त व्यवस्थित और सुचारु प्रबन्ध के लिए सूरतके नागरिकोंको बधाई देते हुए कहा कि मुझे इस बातकी बहुत खुशी है कि प्रबन्धकी त्रुटियोंके बारेमें अपनी पिछली बातें दोहरानी नहीं पड़ीं। मुझे सूरत नगर व जिले द्वारा किये गये शानदार कामका ब्यौरा सुनकर भी प्रसन्नता हुई है।

१. गांधीजीने जबलपुरसे कटक जाते हुए एक भेंट दी थी जिसमें कहा गया था कि जबलपुरमें दो धनी व्यापारियोंके लड़के आन्दोलनको बड़ी कामयाबीके साथ चला रहे है और वहाँके वकील उसमें काफी दिलचस्पी नही ले रहे हैं। जबलपुरके वकील श्री ज्ञानचन्द वर्माने इस कथनका विरोध करते हुए जो पत्र लिखा था यह टिप्पणी उसके उत्तरमें है।

उन्होंने कहा :

जो जिला, नगर या गाँव अपना कर्त्तव्य पूरी तरह निभाता है उसके बारेमें कहा जा सकता है कि उसने स्वराज्य प्राप्त कर लिया है। हम ऐसा स्वराज्य चाहते हैं जिसमें सभी व्यक्तियोंको, भंगियों तकको, समान अधिकार प्राप्त हों। जिस दिन आपको कमजोर, दुःखी और जरूरतमन्द लोगोंकी मददके लिए अपने कटिबद्ध हो जानेकी प्रतीति हो जायेगी उसी दिन आपको लगेगा स्वराज्य करीब आ रहा है। स्वराज्य हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच स्थापित एकताके कारण ही सम्भव हो गया है। हमारी कमजोरीकी वजहसे ही मुट्ठीभर यूरोपीय हमपर शासन कर रहे हैं। हमारे विचारोंमें एक बड़ी तब्दीली आनी चाहिए और हमें यह महसूस करने लगना चाहिए कि अपना राज खुद चलाना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। यह तो अंग्रेज भी मानते हैं कि भारतमें उनका साम्राज्य हमारी कमजोरीपर टिका है। सर आर० क्रेडॉकने एक बार कहा था कि अंग्रेज भारतपर तभीतक राज्य कर सकेंगे जबतक कि भारतकी जनता उनको राज्य करने देगी।

गांधीजीने आगे बोलते हुए कहा कि जिन वकीलोंने अपनी वकालत बन्द कर दी है, जिन विद्यार्थियोंने सरकारी स्कूल छोड़ दिये हैं उनको अब दूसरोंके सामने एक अच्छी मिसाल पेश करनी चाहिए। उनका चरित्र ऐसा होना चाहिए कि दूसरे उनकी ओर खिंच जायें। पंडित मोतीलाल नेहरू और श्री चित्तरंजन दासने बड़ी शानदार मिसालें हमारे सामने रखी हैं। भारतको स्वाधीनताके लिए अन्ततक लड़नेवाले दस हजार सच्चे सिपाही चाहिए।

नगरकी सजावटका उल्लेख करते हुए गांधीजीने कहा कि इससे मुझे खुशी तो हुई लेकिन इस बातसे बड़ा दुःख हुआ कि सजावटके लिए विदेशी कपड़ेका इस्तेमाल किया गया है। इसकी जगह खद्दरका इस्तेमाल किया जाना चाहिए था।

कांग्रेस कमेटीकी सिफारिशोंका जिक्र करते हुए उन्होंने श्रोताओंसे पूछा : जब हर साल दारूपर सत्रह करोड़ रुपये बर्बाद किये जाते हैं तब क्या कांग्रेसके लिए एक करोड़ रुपये इकट्ठे करना बहुत मुश्किल है?

चरखेके बारेमें उन्होंने कहा कि चरखा स्वराज्यका प्रतीक है। आर्थिक दृष्टिसे वही सर्वोत्तम साधन है। कताई-बुनाईके जरिये हर आदमी ईमानदारीके साथ काम करके दो रुपये रोज कमा सकता है। इसीलिए चरखेका चलन हर परिवारको अपने यहाँ शुरू करना चाहिए। आगे बोलते हुए उन्होंने कहा कि स्वयंसेवकोंको दारूबन्दीका अपना आन्दोलन जारी रखना चाहिए और इस तरह देशको दारूकी बुरी लतसे छुटकारा दिलाना चाहिए। अन्तमें उन्होंने श्रोताओंसे अनुरोध किया कि वे तिलक स्वराज्य-कोषमें भरसक ज्यादासे-ज्यादा चन्दा दें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-४-१९२१

१४. भाषण : बलसाड़की सभामें[1]

२० अप्रैल, १९२१

इन पारसी भाईने[2] मधुर गुजरातीमें जो शब्द कहे वे याद रखने योग्य हैं। हिन्दू-मुस्लिम एकताका अर्थ ही यह है कि हिन्दुस्तानकी छोटी-बड़ी कौमें स्वधर्मका पालन करते हुए भी स्वतन्त्रतापूर्वक रह सकें। हिन्दू-मुस्लिम एकतामें मानवजातिके तीस करोड़ व्यक्तियोंका बल समाहित है। लेकिन जिस तरह यूरोपके बड़े राष्ट्र, छोटे राष्ट्रोंको बचानेके बहाने उन्हें निगल गये अगर इस एकताका भी यही अर्थ होता तो ५२ वर्षकी आयुमें मैं इस तरह जगह-जगह न भटकता। मुझे न तो राज्य चाहिए और न मुझे धन-वैभवकी ही कोई अभिलाषा है। इनसे मेरा जी भर चुका है। मेरी आत्मा तो कहती है कि मेरी प्रवृत्ति ऐसी है जिसमें हिन्दुस्तानकी छोटीसे-छोटी कौम भी निर्भयतापूर्वक रह सकती है। पारसी, सिख, यहूदी और ईसाईको कोई दुःख न दे सके, एक अबलापर कोई कुदृष्टि न डाल सके — यह स्वराज्यका अर्थ है। यह स्वराज्य कोई हमें देनेवाला नहीं है। यह न तो ऊपरसे गिरनेवाला है और न जमीनसे फूट निकलनेवाला है। उसकी तो हमें अब स्थापना करनी है। पारसी भाइयोंको [निश्चय करनेमें] समय लेनेका अधिकार है। वे अवश्य देखें कि ये दो कौमें क्या करती हैं; लेकिन मुझे इस बातका पक्का विश्वास है कि वे निरापद हैं। इसीलिए मैंने उन्हें स्वराज्य-यज्ञमें बलिदान देनेके लिए आमन्त्रित किया है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–५–१९२१

१५. भाषण : सीसोदरामें[3]

२१ अप्रैल, १९२१

आज आप अपने सहोदर भाइयोंको अपने बीचमें जगह देकर पवित्र हो गये हैं, लेकिन इस पवित्रताको हमेशा बनाये रखना है। दुधारू गायकी लात क्यों मारी जाये यह सोचकर मेरी सेवा प्राप्त करनेके लिए, मुझे खुश करनेके लिए आप इसे न करें बल्कि अपना धर्म समझकर करें। मैं जो-कुछ सेवा करता हूँ सो धर्म समझकर ही

१. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

२. पारसी कौमकी ओरसे बोलते हुए इन्होंने कहा था : "स्वतन्त्रताके इस संग्राममें पारसी हिन्दुओं और मुसलमानोंके साथ हैं लेकिन वे यह सोचकर इसमें शामिल होनेमें थोड़ा हिचकिचाते हैं कि क्या स्वराज्यमें उनके हितोंकी रक्षा की जायेगी।"

३. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

करता हूँ। मुझे आपसे इस सेवाका बदला नही चाहिए। धर्मका बदलेके साथ सम्बन्ध नही है; इसका तो ईश्वरके साथ सम्बन्ध है। मुझे जनतासे वेतन नही चाहिए। वेतन और बदला मुझे ईश्वर देगा। हिन्दू धर्म तो सिखाता है कि व्यक्ति जो-कुछ भी करे उसे कृष्णार्पण करे तभी उसकी सेवा फलीभूत होती है। इसलिए आज आपने अन्त्यजोको स्पर्श कर जो पुण्य कार्य किया है वह अगर मेरी सेवाका बदला चुकानेके रूपमे किया हो तो उससे मेरा और आपका भला नही होगा; वह शोभान्वित तभी होगा जब कि उसे आपने विवेकपूर्वक किया हो।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-५-१९२१

१६. भाषण: नवसारीमे

२१ अप्रैल, १९२१

बहनो और भाइयो,

नवसारी मैं पहली बार नही आया हूँ। सन् १९१५ मे जब मैं भारत-भ्रमण कर रहा था उस समय एक दिनके लिए मैं यहाँ आया था। लेकिन वह समय जुदा था और आजका समय जुदा है। दोनोमें बहुत भेद है। आज तो नया युग है। इस युगमे हम जो कर रहे है उसका क्या परिणाम निकलेगा तथा ससार हमारी क्या परीक्षा लेगा सो तो ईश्वर जाने। हम चाहे जो सोचे लेकिन वह सोचा हुआ विचार सफल होगा या नही सो तो ईश्वरके हाथ है। इसीसे कहा जाता है कि मनुष्य चाहे जो सोचे, करनेवाला तो खुदा है।

मेरे जैसा व्यक्ति प्रजामे दिखाई देनेवाले उत्साहसे, प्रजाकी प्रतिज्ञासे भ्रमित होकर यह विश्वास रखता है कि एक वर्षके भीतर धर्मराज्यकी स्थापना होगी, स्वराज्यकी स्थापना होगी, लेकिन किसे खबर कि हम जो राज्य स्थापित करेगे वह धर्मराज्य होगा या अधर्मराज्य? हमारा स्वराज्य राक्षसी राज्य होगा या रामराज्य इसकी अभी किसे खबर है। लेकिन मेरी आत्मा तो गवाही देती है कि हमारी गति धर्मकी ओर है। हिसाब करते-करते ऐसा जवाब आता है कि पिछले पाँच अथवा छ महीनोमे जिस रफ्तारसे हमने काम किया है अगर उसी रफ्तारसे बाकीके छः महीनोमे काम करेगे तो अवश्यमेव धर्मराज्यकी स्थापना कर सकेगे।

मुझे इस बातका अहसास है कि इस समय मै ब्रिटिश राज्यकी सीमामे नही हूँ। मै महाराजा गायकवाड़की सीमामे बैठकर भाषण दे रहा हूँ। लेकिन मै जो कहने जा रहा हूँ वह यहाँ भी लागू है। मेरा कार्य ब्रिटिश और देशी दोनो राज्योके लिए समान है। दोनो जगहोंपर धार्मिक भावना जाग्रत करना, दोनो जगहोमें जो मैल हो उसे निकाल बाहर करना तो अभीष्ट है ही।

लेकिन ब्रिटिश सीमामे रहकर मुझे जो टीका करनी पडती है, जिन बातोके कारण कितने ही कार्य करनेकी सलाह देनी पडती है, मै जानता हूँ कि वे बाते यहाँ नही है। इसलिए मुझे जो कहना है सो सामान्य रूपसे कहूँगा।

नवसारी आनेका मेरा खास उद्देश्य यह है कि मै पारसियोके इस गढमे आकर पारसी बहनो और भाइयोके दर्शन करूँ और उनसे दो शब्द कहूँ। नवसारी पारसियोका बडा भारी गढ है। बम्बई पारसियोका गढ है, लेकिन बम्बईको अकेले पारसियोका ही नही कहा जा सकता। बम्बई तो अग्रेजीमे जिसे "कॉस्मोपोलिटन सिटी" कहते है, वैसा शहर है। बम्बई जगन्नाथपुरी-जैसा है, यद्यपि जगन्नाथपुरी उसे तभी कहा जा सकता है जब वह जगन्नाथपुरीके समान पवित्र हो और मै बम्बईको पवित्र माननेके लिए तैयार नही हूँ। पारसियोका सच्चा धाम नवसारी ही है।

स्वर्गीय दादाभाई नौरोजीकी[1] यह जन्मभूमि है। मै उनके घर होकर आया हूँ। मेरे लिए तो यह तीर्थस्थान है। लेकिन इसके अलावा पारसी बहनो और भाइयोके साथ मेरे कितने निकटके सम्बन्ध है, उसकी मैने पारसियोके प्रति अपने खुले पत्रमें[2] चर्चा की है। उसमे मैने अपने समस्त सुन्दर सस्मरणोका जिक्र नही किया है। उनके लिए उसमे जगह ही न थी। मेरे वे सस्मरण सुन्दर है और उनके साथ मेरे सम्बन्ध निकटके है। मै उनके कर्जसे दबा हूँ—उनका ऋणी हूँ। मैने अपने इस कर्जको चुकानेके लिए यह पत्र लिखा था। पारसियोने हिन्दुस्तानमे, विलायतमे, दक्षिण आफ्रिकामे, जजीबार और अदनमे मेरे प्रति जो प्रेम-भाव दिखाया है उसे मै भुला नही सकता। स्वय अपने बारेमे इतना तो मै विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि मै एहसान-फरामोश नही हूँ। मुझपर उन्होने जो उपकार किया है उसकी मै कीमत आँक सकता हूँ और इसी कारण आज जो सघर्ष चालू है उससे पारसियोका अलग अथवा तटस्थ रहना मुझे दुख देता है।

मुझे पारसियोके प्रति प्रेम है, उनकी शक्तिके प्रति मेरे मनमे सम्मान है, उनकी बुद्धिका मुझे अनुभव है, उनकी कार्यदक्षताका मुझे ज्ञान है। इसलिए मै मानता हूँ कि इस आन्दोलनसे वे अलग नही रह सकते। पारसी इससे अलग रहे अथवा असहयोगी न बने तो मुझे दुख जरूर होगा।

पारसियोमें वणिक-वृत्ति है। वे सारी दुनियाके व्यापारियोसे व्यापारमे कम नही उतरते। पारसी कौम बहुत साहसी है। अस्सी हजार अथवा एक लाख व्यक्तियोकी आपकी कौमकी कीर्ति आपके साहसके कारण ही सारी दुनियामे फैली हुई है। आप जहाँ-जहाँ गये है वहाँ-वहाँ आपने अपनी बुद्धि और शक्तिका चमत्कार दिखाया है। उदारतामे पारसी कौमका कोई मुकाबला नही कर सकता। पारसी कौमने जगत्की भलाईके लिए जितना धन दानमे दिया है उतना किसी दूसरी कौमने नही दिया। श्री एन्ड्रचू लैंगने समस्त संसारकी कौमोकी दानशीलताके आँकडे पेश करके बता दिया है कि आबादीके

१. १८२५–१९१७; ब्रिटिश संसदमें निर्वाचित होनेवाले प्रथम भारतीय सदस्य; १८८६, १८९३ और १९०६ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष।

२. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ४७५-७७।

हिसाबसे पारसियोकी दानशीलता सबसे बढकर है। हिन्दू कौमने बहुत दिया है, लेकिन हिन्दू कौम तो महासागर है और उसकी दानशीलता अपनी सामर्थ्यके अनुपातमे एक बिन्दुके समान है। मुसलमानोने भी बहुत दान दिया है, ईसाइयोकी दानशीलता भी प्रसिद्ध है तथापि पारसियोकी दानशीलताकी थोड़ी-बहुत तुलना यहूदियोकी उदारताके साथ ही की जा सकती है किन्तु उसमें भी पारसी आगे बढ जाते है। इसके अलावा पारसियोकी दानशीलता सबके लिए है। ऐसी कौम अगर अपनी शक्तिका सदुपयोग करे तो दुनियाका अवश्य भला कर सकती है

लेकिन हिन्दुस्तानके साथ तो उनका खास सम्बन्ध है। हिन्दुस्ताननें पारसियोको उनके नाजुक समयमे प्रश्रय दिया था, इससे हिन्दने कुछ खोया नही है। उन्हे स्थान देकर हिन्दू कौम और हिन्दुस्ताननें लाभ ही उठाया है। पारसियोने भी लाभ उठाया है। भारतमे अपनेको भारतीय कहकर वे गर्वका अनुभव कर सकते है। पारसियोने यहाँ आकर लिया और दिया है। मुझे उनसे बडी-बडी आशाएँ है। मुझे दृढ विश्वास है कि वे नवयुगकी इस प्रवृत्तिमे अपनी उदारताके अनुपातमे ही चन्दा देंगे। मै आपसे पैसेका अथवा बुद्धिका दान नही माँगता, मै तो धार्मिक भावनाओका दान माँगता हूँ। आप जिस पैगम्बरको मानते है उनके फरमानको याद करे। गुजराती और अंग्रेजीमें आपके जितने धर्मग्रन्थ मिलते है, उन सबको मैने पढा है। और मुझे ऐसा लगा है मानो मै वेद, उपनिषद् अथवा 'गीता' पढ रहा हूँ। कुछ-एक पारसियोने जरतुश्तके कथनोकी उपनिषदोके साथ तुलना की है। इसलिए मुझे पक्का विश्वास है कि आप लोग धार्मिक चन्दा देगें।

जगत् कोई बुद्धिसे नही चलता बल्कि हृदयसे चलता है। इस जगत्‌मे बुद्धि नही बल्कि आत्मा राज्य करेगी। आत्मा राज्य करेगी अर्थात् सदाचारका राज्य होगा। अभी सदाचार नही है, सो मै नही कहता लेकिन यहाँ मै सदाचारका विशेष अर्थोमे प्रयोग कर रहा हूँ। सदाचार अर्थात् धर्माचार।

ईरान पूर्वका देश है। आजकल पूर्व और पश्चिमके बीच द्वन्द्व चल रहा है। पश्चिमकी ओरसे हमपर एक भारी तूफान चढ आया है। या तो हम उसमें बह जाये अथवा दृढतासे उसका सामना करके उसे वापस ठेल दें। इस तूफानका नाम है जड-वाद अथवा पैसेको परमेश्वर माननेका वाद। अगर हम इसका विरोध नही करेगे और इसकी नकल करनेमें फँस जायेंगे तो हम जड़वादी बन जायेंगे। पैसेको परमेश्वर मानेंगे तो नाशको प्राप्त होगें।

आपकी इतनी स्तुति करनेके बाद मुझे लगता है कि आपसे चेतावनीके दो शब्द कहना मेरा फर्ज है। यह सम्भव है कि आपकी कौम पश्चिमी शिक्षासे लुब्ध होकर पश्चिमकी हवामें बह जाये। पारसियोकी मातृभाषा गुजराती है। मुख्यतया उनकी आबादी गुजरातमे है इसलिए वे गुजराती ही है। तथापि एक गुजराती बहनने थोडे दिन पूर्व मुझे एक पत्र लिखा था जिसमे उन्होंने बताया कि हमारे पारसी भाई 'हमे गुजराती नही आती', यह कहनेमे बड़प्पन मानते है। हम गुजराती भूल गये है, ऐसा कहनेमे गर्वका अनुभव करते है। इतना ही नही बल्कि अंग्रेजी तौर-तरीकोके प्रति खास ध्यान रखनेमे अपना बहुत सारा समय खराब करते है। कुछ-एक पारसी बहनें

इस काममे मेरी बहुत मदद करती है। उनसे मै गुजरातीमें लिखनेके लिए कहता हूँ तो वे शर्मिन्दा हो जाती है और कहती हैं कि हम गुजरातीमे नही लिख सकती। यह बात कौमकी दीन दशाको सूचित करती है।

अंग्रेजी भाषा आजकल फैशनमे आ गई है। मेरे मनमे उसके प्रति तिरस्कार-भाव नही है। लेकिन इस भाषाको सीखना जुदा बात है और इसे अपनी मातृभाषा मान बैठना जुदा बात है। राजनीतिक भाषा और व्यापारिक भाषाके अलावा अंग्रेजीका कोई दूसरा स्थान नही है। लेकिन पारसी अगर उसे मातृभाषा मान बैठें तो यह उनका और हिन्दुस्तानका दुर्भाग्य है। यदि आप उसे अपनायेंगे तो आप पश्चिमके गुलाम बन जायेंगे, आप अपने प्राचीन पैगम्बरकी चमत्कारपूर्ण शिक्षाको भूल जायेंगे।

यूरोपकी जनता ईसाई कहलाती है लेकिन वह ईसाके आदेशको भूल गई है। भले ही वह 'बाइबिल' पढे, भले ही वह हिब्रूका अभ्यास करे लेकिन ईसाके आदेशा-नुसार वह आचरण नही करती। पश्चिमकी हवा ईसाके आदेशोके विरुद्ध है। पश्चिम-की जनता ईसाको भूल गई है।

पारसी भाइयोको मेरा यह सन्देश है, अगर यहाँ ज्यादा पारसी नही आये हैं तो जो लोग आये है उनसे मेरी प्रार्थना है, कि वे कल ही उन लोगोके घरोमे मेरे इस सन्देशको पहुँचाये। आप मुट्ठी-भर है, इसके लिए आपको दु.खी होनेकी जरूरत नही है। सख्या महत्त्वपूर्ण वस्तु नही है। गुण सख्यामे नही बल्कि मनुष्यतामें है, बहादुरीमें है, हिम्मतमे है। अगर पचास हजार खोटे सिक्के हो तो उनकी कोई कीमत नही है। एक खरे सिक्केकी कीमत असंख्य खोटे सिक्कोसे ज्यादा है। इसलिए पारसी अगर खरे हों तो वे दुनियाको अपना हिसाब दे सकते है। उनसे मै आशा रखता हूँ कि वे खरे उतरेंगे।

यदि आप पश्चिमी हवामे बह निकले, भोग-विलासके पीछे पागल बन जाये, ऐश-आराममे निरत हो जाये, पैसेके पुजारी बन जाये तो इस तरह ईश्वरको भूल जायेंगे। यदि आप जरतुश्तके उपदेशको भूल जायेंगे तो जिस बातके लिए आप लोग प्रसिद्ध है उसे खो देंगे, मणिको खोकर पत्थर ले लेंगे।

पारसियोमें अनेक अरबपति हो गये हैं। इतना धन सचित करनेके बाद भी उन्होने सादेपनको नही छोड़ा था, उन्होने अपने दिलोको साफ रखा था, वे ईश्वरको नही भूले थे। लेकिन आधुनिक युगके पारसी बहनों और भाइयोके सम्बन्धमे मुझे कुछ शका होती है। मुझे भय बना रहता है कि सम्भवत. वे यूरोपकी मोहिनी छविसे लुब्ध होकर अपनी प्राचीन विरासतको खो बैठेंगे।

मैंने बहुत-कुछ कह दिया है। अभी अगर आप असहयोगके पूरे कार्यक्रममें शामिल नही होते तो कोई बात नही लेकिन एक बातके सम्बन्धमे मैं आपसे खास मदद चाहता हूँ। अगर आप शराबखानेसे पैसा कमानेका विचार छोड़ दे तो आपका बड़ा उपकार होगा। अकेले पारसी ही शराबखाने चलाते हों सो बात नही। हिन्दू भी चलाते है, अनाविल ब्राह्मण भी चलाते है। मुसलमान भी इसमे पड़े हुए है। पजाबमे बहादुर गुरु गोविन्दसिंहके अनुयायी सिख लोगोके हाथमे भी शराबकी भट्टियाँ हैं। उन सबसे मैं प्रार्थना कर रहा हूँ। लेकिन पारसी लोग एक छोटी कौम होनेके कारण इस कामको

आसानीसे कर सकते है। हिन्दुस्तानमें हर जगह पारसी भाइयोंके हाथमे शरावखाने है। स्वराज्यका पहला काम यह है कि देशमे शरावखाना न हो, शराब बनानेकी बड़ी-बड़ी भट्टियाँ न हो। किसी-किसी स्थानपर दवाके लिए शरावकी छोटी-छोटी भट्टियाँ भले ही हो। लेकिन इस शरावका अफीम अथवा विषकी तरह उपयोग किया जाना चाहिए। विषकी दुकानें स्थान-स्थानपर नही होती। उसे प्राप्त करना मुश्किल है लेकिन फिर भी दवाइयोंकी दुकानपर तो वह मिल सकता है। उसी तरह शराब मिलनी भी मुश्किल होनी चाहिए।

मैं स्वदेशीके जबरदस्त आन्दोलनमे पारसियोंकी मदद माँगता हूँ। आप यह जानकर खुश होंगे कि एक पारसी बहनने शुद्ध स्वदेशी चालीस साड़ियोंका आर्डर दिया है। मद्रासमे हाथके कते सूतकी महीन साड़ियाँ बुनी जा सकती है। अगर पारसी बहनोंको सुरुचिपूर्ण साड़ियोंकी जरूरत हो और जो उन्हे पुसाये भी तो वैसी साड़ियाँ बेजवाड़ामे तैयार हो सकती है।

अनेक पारसी बहनोंने स्वदेशीको अपनाया है। लेकिन मैं तो लोभी ठहरा, कजूस ठहरा। इसलिए जबतक इतनी छोटी कौमके सब लोगोंमे उज्ज्वलताके दर्शन न हो तबतक मुझे खुशी न होगी। आप रेशमी वस्त्रमे शोभा मानते है लेकिन आप खादी पहनकर ही सच्चे अर्थोमें अपनेको तथा हिन्दुस्तानको शोभान्वित कर सकेंगे। अनेक हिन्दू अभी खादी नही पहनते, मुसलमान भी नही पहनते। लेकिन आप दूसरोंके उदाहरण-को न ले। दूसरे बुरे बने तो आपको बुरा बननेकी जरूरत नही है। आपकी कौम करोड़ों हिन्दू-मुसलमानोंके सामने उदाहरण पेश कर सकती है। जब मैं सूरतमे हाथ-बुनाई-की एक फैक्टरी देखने गया तब मुझे यह देखकर आनन्द हुआ कि एक पारसी भाई स्वदेशीके काममे कुछ मदद कर रहे है। लेकिन मैं उतने ही से खुश होनेवाला नही हूँ। आप अपने-अपने घरोमे चरखेको स्थान दे। आप पारसी बहने बहुत बारीक सूत कात सकती हैं। आप अपनी कस्ती [यज्ञोपवीत]के लिए बहुत बारीक ऊन कातती है। अपनी इस शक्तिको आप हिन्दुस्तानको अर्पित करे।'

आपके लिए तो यही एक देश है। इस देशको छोड़कर संसारमें ऐसा कोई भी देश नही जिसकी इचभर भूमिको भी आप अपना कह सकें। हमारे शास्त्रोंमे तो कहा गया है कि मोक्ष प्राप्त करनेके लिए ससार-भरमें भारतवर्षको छोडकर और कोई स्थान नहीं है। आपके लिए तो सद्गुणोंका विकास करने और उनका प्रदर्शन करनेके लिए यही एक स्थान है। आप हिन्दुस्तानको उज्ज्वल बनाये, उसे वीर पुरुषों-की भूमि बनाये।

हिन्दुओंने ससारके इतिहासमे अपना क्या योगदान दिया है, उसके बारेमे मैं क्या कहूँ? हमारा इतिहास गौरवमय है। लेकिन यदि हम अपनी प्राचीन विरासतके आधार-पर लड़ेंगे तो हार जायेंगे। हमे अपने पूर्वजोंके समान बनकर दिखा देना चाहिए। हमारे ऋषि-मुनियोंने हमारे धर्मको बचानेके लिए अपना अंग-अग कट जाने दिया।

१. इसके बाद गांधीजीने सभामें उपस्थित हिन्दुओंको सम्बोधित करते हुए कुछ शब्द कहे। इसकी रिपोर्ट भी नवजीवनके इसी अंकमें गांधीजीके यात्रा-विवरणके साथ छपी थी।

टॉड[1] हमे बताते है कि "यूरोपमे तो एक ही थर्मापोली है लेकिन भारतमे तो हर एक मुहल्लेमे थर्मापोली दिखाई देती है।" हिन्दुस्तानमे कितने वीर पुरुष हो गये है इसके लिए मै आपके सामने इतिहासके पन्ने क्यो खोलूं? मै तो आपसे इतना ही कहता हूँ कि आप अपने हृदयको टटोले और देखे कि आज हममे ऐसी वीरता है या नही।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-५-१९२१

१७. भाषण: सूरत जिलेमें[2]

२२ अप्रैल, १९२१

उन्होंने विभिन्न स्थानोंपर जो संदेश दिया उसमें चार बातें मुख्य थीं — ३० जून तक एक करोड़ रुपये इकट्ठा करना, कांग्रेसके सिद्धान्तोंसे सहमति रखनेवाले एक करोड़ व्यक्तियोके हस्ताक्षर जमा करना, बीस लाख चरखे चालू कराना और जितनी जल्दी हो सके छुआछूतके अभिशापसे छुटकारा पाना। भारतकी स्वराज्य पानेकी योग्यता कितनी है इसकी कसौटी इन उद्देश्योकी सफलताका परिमाण ही होगा। यदि हम इनमें आज सफलता प्राप्त कर लें तो स्वराज्य कल आया ही समझिए।....

महात्माजीने आगे सलाह देते हुए कहा: अब वकालत न छोड़नेवाले वकीलों और सरकारी स्कूल न छोड़नेवाले विद्यार्थियोंकी बात करना जरूरी नहीं रहा। सरकारकी तरह इन वकीलों और विद्यार्थियोंकी प्रतिष्ठा भी घट चुकी है। अब असहयोगियोंको चाहिए कि वे इस कार्यक्रमको पूरा करके दिखायें और इस प्रकार आन्दोलनके विरोधियों और उसमें भाग लेनेसे झिझकनेवालों को अपने पक्षमें करें। उन्होने कहा कि यदि सूरत जिला और यहाँतक कि एक गाँव भी स्वराज्य हासिल करनेके एकमात्र उद्देश्यको सामने रखकर अपनी सारी शक्ति अन्य किसीकी राह देखे बिना इसी उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए लगा दे तो संसारकी कोई ताकत उसे स्वराज्य प्राप्त करनेसे नहीं रोक सकती। यह कार्यक्रम इसी भावनाके साथ कार्यान्वित किया जाना चाहिए। यदि कोई एक जिला या प्रान्त स्वराज्य हासिल कर ले तो शेष भारत भी दूसरे ही दिन स्वराज्य हासिल कर लेगा। उन्होंने आगे कहा कि स्वराज्य एक स्वाभाविक चीज है; वह कोई ऐसी कृत्रिम चीज नहीं है जिसे तैयार मालकी तरह इंग्लैंडसे मँगाया जा सके या कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे कोई आदमी किसी दूसरेको दे सके, चाहे वह आदमी मैं होऊँ या मुहम्मद अली या शौकत अली हों। उन्होंने अली भाइयोके

१. कर्नल जेम्स टॉड (१७८२-१८३५); प्रसिद्ध इतिहासकार। अनल्स ऐंड एंटिक्विटीज ऑफ राजस्थानके लेखक।

२. गांधीजीने १९ से २२ अप्रैल तक सूरत जिलेके मुख्य-मुख्य ताल्लुकों, नगरों और खास-खास गाँवोका दौरा किया और वहाँ कई सभाओंमें भाषण दिये। यह उन्ही भाषणोंका सारांश है।

बारेमें कहा कि उन्होंने तो अपने लिए स्वराज्य हासिल कर ही लिया है। जरूरत गांधी-राज या मुहम्मद अली-[1]राज या शौकत अली-राजकी नहीं, स्वराज्यकी है; राम-राज्यकी है, जिसमें दलित-वर्गके अदनासे-अदना आदमीको और देशकी कमजोरसे-कमजोर औरतको समान स्वाधीनता और संरक्षण प्राप्त हो।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २६–४–१९२१

१८. कुछ शंकाएँ

पारसियोके प्रति मैंने जो पत्र लिखा था, वह बहुत चर्चाका विषय बन गया है। भाई जी० के० नरिमनने खुला पत्र लिखा है जो अन्य समाचारपत्रोमे प्रकाशित हो चुका है। उम्मीद है कि इस चर्चामे दिलचस्पी लेनेवाले पाठकोने उसे अवश्य पढा होगा, इसीसे मै उसे 'नवजीवन' मे प्रकाशित नही कर रहा हूँ। भाई नरिमनने जो विचार व्यक्त किये है उनपर अच्छी तरहसे गौर किया जाना चाहिए और उस पत्रमे जो शकाएँ उठाई गई है वे अन्य पारसी भाई-बहनोके मनमे भी अवश्य उठती होगी। इसलिए मै उनका उत्तर देनेका प्रयत्न करूँगा।

पारसियोके असहयोग आन्दोलनमें शामिल न होनेके भाई नरिमनने जो कारण दिये है वे निम्नलिखित है :

१ अभी कुछ-एक वर्षोतक हमारा अग्रेजोके बिना गुजारा नही हो सकता।

२ असहयोग आन्दोलनमे पारसियोके शामिल होनेसे पहले मुझे अधिकाश हिन्दुओ-को शामिल करनेका प्रयत्न करना चाहिए।

३ चरखा स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए मृगतृष्णाके समान है।

४. जहाँ पण्डित मदनमोहन मालवीयजी, शास्त्रियर[2], सर दिनशा वाछा[3] आदि असहयोगका विरोध करते है वहाँ सामान्य पारसी क्या कर सकते है?

५. मै खिलाफतको नही समझता अथवा हिन्दू और मुस्लिम धर्मके बीच जो अनिवार्य विरोध-भाव है उसे छिपाना चाहता हूँ।

६ पजाब सम्बन्धी मेरे विचार अतिशयोक्तिपूर्ण है। उदाहरणके तौरपर लाला हरकिशनलालका मामला लिया जा सकता है।

१. मौलाना मुहम्मद अली (१८७८–१९३१), वक्ता, पत्रकार और राजनीतिज्ञ; साप्ताहिक कामरेडके सम्पादक; शौकत अलीके छोटे भाई; १९२० में इग्लैंड भेजे गये खिलाफत शिष्टमण्डलके नेता; १९२३ में कांग्रेस अध्यक्ष।

२. वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री (१८६९–१९४६), विद्वान्, राजनीतिज्ञ और वक्ता; भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इडिया सोसाइटी) के अध्यक्ष, १९१५-२७, वाइसरायकी विधान परिषद् और राज्य परिषद्के सदस्य, दक्षिण आफ्रिकामें भारत सरकारके एजेंट जनरल।

३. दिनशा ईदुलजी वाछा (१८४४–१९३६), प्रमुख भारतीय राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष, १९०१।

७ अहिंसाका मेरा उपदेश हास्यास्पद है, वह सिर्फ जैन लोगोको ही मान्य है और उसके अनुकूल आचरण करनेवाले को तो आत्महत्या ही कर लेनी चाहिए। इसके अतिरिक्त मेरे आन्दोलन, हड़ताल आदिसे हिंसा हो रही है।

८. मद्यपान-निषेध ठीक है लेकिन सबसे पहले अफीम आदि छुड़वानेका प्रयत्न करना चाहिए। इसके अलावा सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु तो गोवध-निषेध है। उसमे मैंने कितना योग दिया है?

पहली शंकाका उत्तर

कुछ समयतक अंग्रेजोके बिना हमारा गुजारा सम्भव नही है, ऐसे विचार ही हमारी दुर्दशाके परिचायक है और इन विचारोसे मुक्ति पाना ही स्वराज्य है। अंग्रेजों-के आनेसे पहले क्या हमारी हालत खराब थी? उनके जानेके बाद तुरन्त हम झगड़ने लगेगे—ऐसा मानना हमारे लिए अपमानजनक है। एक बार अगर हम यह समझ भी ले कि यह भय सच्चा है तब भी हमे, आपसी झगड़ेका जोखिम उठाकर भी, अंग्रेजोके प्रभुत्वसे मुक्ति प्राप्त कर लेनी चाहिए।

दूसरी शंकाका उत्तर

असहयोग आन्दोलनमे पारसियोके शामिल होनेसे पहले मुझे अधिकाश हिन्दुओको शामिल करनेका प्रयत्न करना चाहिए, यह कथन भी हमारी दुर्बलताका परिचायक है। पारसी और हिन्दू दोनो भारतीय है। दोनोमें से जो समझदार है उनका हिन्दुस्तानके प्रति एक ही धर्म है। और फिर हिन्दू तो बहुत शामिल हो चुके है और जो शेष बचे है उन्हे शामिल करनेके प्रयत्न चालू है। असहयोगमे यदि एक भी हिन्दू शामिल न हो और पारसी उसके मर्मको हिन्दुओसे पहले समझ ले तो हिन्दुओकी राह देखे बिना उन्हे असहयोगमें शामिल हो जाना चाहिए। जो समझ गये है वे दूसरोकी राह न देखे।

तीसरी शंकाका उत्तर

चरखेसे स्वराज्य प्राप्त करनेकी बात जिसे मृगतृष्णा जान पड़े तो मुझे यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि उसे असहयोग कतई रुचिकर प्रतीत नही होगा। हिन्दुस्तान-के लोग धीरे-धीरे इस बातको समझते जा रहे है और मुझे विश्वास है कि वे आगे और अच्छी तरह समझ जायेगे। जिस धर्मको छोड़नेसे हम भिखारी बन गये उस धर्मको स्वीकार करनेसे ही हम मालदार बन सकते है, यह बात कमसे-कम मुझे तो मृगतृष्णा नही लगती। चरखा सहज धर्म है, यह बात अब दिन-ब-दिन अनुभवसे स्पष्ट होती जा रही है। दो हजार अथवा बारह सौ वर्ष पहलेकी स्थितिमे पहुँचनेकी बातको मैं पाप नही मानता। हमने भूलसे, जोर-जबरदस्तीसे अथवा कालके अधीन होकर अमुक अच्छी आदतोको छोड़ दिया हो और उन्हे अगर हम पुनः ग्रहण करते है तो इसमे हम अपनी विवेकबुद्धिका उपयोग करते है।

चौथी शंकाका उत्तर

पण्डितजी और अन्य महान् नेता इस युद्धमे शामिल नही है यह सचमुच खेद-जनक बात है। लेकिन जब नेताओके बीच मतभेद हो तब जनताको अपने विवेकसे

रास्ता चुन लेना चाहिए। अगर जनता ऐसा निश्चय करे कि सब नेताओके एकमत होने तक कोई कार्य नही किया जाना चाहिए तो राष्ट्र कभी प्रगति नही कर सकता। स्वराज्यमे सबको अपनी-अपनी राह चुन लेनी होगी।

पाँचवी शंकाका उत्तर

सम्भव है कि खिलाफतको मै न समझता होऊँ तथापि मैंने उसका यथाशक्ति अध्ययन तो किया ही है। मुस्लिम और हिन्दू धर्मके बीच अनिवार्य विरोध है, यह मै नही मानता। यदि यह बात है तो उसका अर्थ हुआ कि हिन्दू-मुसलमान हमेशा ही परस्पर एक-दूसरेके शत्रु रहेगे। मनुष्य जातिको सदा-सर्वदा परस्पर एक-दूसरेका शत्रु ही बने रहना चाहिए ऐसा मै नही मानता। खलीफाको धर्मकी खातिर दस वर्षमे एक बार अवश्य युद्ध करना चाहिए ऐसा नियम मै नही जानता। क्रूसेडेसके[1] बाद धर्मकी खातिर कोई युद्ध हुआ, इस बातसे मै परिचित नही हूँ। आफ्रिकामे मुझे ऐसी कोई बात दिखाई नही दी जिससे मुझे यह लगे कि जजीरत-उल-अरबपर मुसलमानो-का अधिकार नही होना चाहिए।

छठी शंकाका उत्तर

मै जानता हूँ कि पजाब सम्बन्धी मेरे विचार अतिशयोक्तिपूर्ण नही है। लाला हरकिशनलाल अगर स्वय सरकारके साथ मिल गये है तो मेरे लिए यह अब और भी जरूरी हो जाता है कि मै असहयोग करूँ। लाला हरकिशन-जैसे व्यक्तियोको भी पजाब-के अपमानका इतना कम दर्द हो तो उसकी पूर्ति करनेके लिए भी असहयोग करना उचित जान पड़ता है।

सातवी शंकाका उत्तर

अहिसाका मेरा उपदेश हास्यास्पद लगता है। लेकिन उसीमे हिन्दू धर्म निहित है। उसका कम-ज्यादा पालन करना ही सब धर्मोका मूल है। जिस धर्ममे जितना दया-भाव है उतना ही उसमे धर्म है। दयाकी कोई सीमा नही होती। सीमा बाँधना मेरा काम नही है। सब कोई अपनी-अपनी सीमा निर्धारित कर लेते है। वैष्णव धर्ममे अहिसा प्रधान है। जैन-ग्रन्थोमे उसपर विशेष रूपसे विचार किया गया है और वह मुझे मान्य भी है। लेकिन अहिसापर जैन अथवा अन्य किसी धर्मका एकाधिकार नही है। अहिसा सर्वव्यापक और अविचलित नियम है। जैन-दर्शनमे उपवास आदिके जो नियम दिये गये है उन्हे आत्मघातका पोषण करनेवाला कहना मेरे खयालसे जैन-पद्धतिको न समझना है। लेकिन अहिसाके अन्तिम लक्षणकी चर्चा करनेकी यहाँ कोई जरूरत नही है। अगर वह मान्य न हो तो भी इस समय हमारा कर्त्तव्य शान्तिपूर्वक कष्टसहन करके ही युद्ध करना है, यह बात सबको स्वीकार करनी ही होगी — इसे स्वीकार किये बिना काम नही चलेगा।

भाई नरिमनने एक ओर अहिसाके अन्तिम लक्षणकी हँसी उडाई है तथा दूसरी ओर इस आन्दोलनको हिंसात्मक माना है जिससे यह सूचित होता है कि उन्होने

१. जेरुसलेमपर पुन अधिकार करनेके लिए ईसाई-राष्ट्रों द्वारा किये गये धर्म-युद्ध।

अहिंसाके तत्त्वको पहचाना ही नही है। श्री नरिमन तो यह सुझाव देते जान पड़ते हैं कि असहयोगके उपदेशसे वैर बढता है। हड़तालसे लोगोको नुकसान पहुँचता है। ये सब हिंसाके ही रूप हैं। अहिंसाका मुद्दा यह है कि क्रूर व्यक्तिकी क्रूरताको जानते हुए भी उसके प्रति द्वेष न किया जाये। पजाबके अत्याचार अथवा खिलाफतके सम्बन्धमे किये गये विश्वासघातको जनतासे छिपाकर जनताको द्वेषरहित नही बनाया जा सकता। लोगोको हत्याकाण्डसे भिन्न रखते हुए भी उन्हे शान्त रखना मेरा फर्ज है। हडताल आदिसे कुछ-एक लोगोको दु ख पहुँचे तो उसमे हिंसा नही है। अपना कर्त्तव्य करनेसे अगर दूसरोको दु ख हो तो उसके लिए कर्त्तव्य करनेवाला उत्तरदायी नही है। अफीम-की दुकानपर न जानेसे अफीम विक्रेताको जो नुकसान होता है उसका दोष मुझे नही लगता। उससे होनेवाला दु ख तो अफीम विक्रेताके लिए भी कल्याणकारक है। असहयोगका अर्थ यह है कि पापीको पाप-कर्ममे मदद न दे। और जबतक वह पश्चात्ताप न करे तबतक उसकी मदद और दान ग्रहण न करे।

आठवीं शंकाका उत्तर

भाई नरिमन ऐसा मानते जान पडते है कि अफीम आदिका बहिष्कार सफल नही हो रहा है। सब व्यसनोको छुड़वानेकी कोशिश हो रही है। चूँकि लोग शराब-की दुकानोपर जानेके लिए ललचाते है इसलिए वहाँपर धरना दिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त कितने ही पारसी भाई शराबका व्यापार करते है, इसलिए मै उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे इस व्यापारको छोड़ दे। अफीमके व्यापारियोसे भी मैं प्रार्थना कर रहा हूँ। लेकिन मेरा तर्क यह है कि अगर अफीमका व्यसन नही छूटता तो भी शराबके व्यसनको छोड़ा जा सकता है।

भाई नरिमनने बहुतसे मुद्दे उठाये हैं। मेरी यह प्रार्थना है कि भले वे खिलाफत, पंजाब आदिके सम्बन्धमे मेरा विरोध करे लेकिन अगर स्वतन्त्र रूपसे मद्यनिषेधके बारेमें विचार करने पर उन्हे निषेध करना उचित लगे तो इस कार्यमें मदद करनेके लिए उन्हे पारसियोको प्रेरित करना चाहिए। आत्मशुद्धिकी इस लड़ाईमे जो जिस रूपमे भाग लेना चाहे उस रूपमे भाग लेकर भी अगर वे हमारी मदद करे तो उससे राष्ट्रको उतना लाभ अवश्य होगा।

मै मद्यनिषेध कर रहा हूँ। गोवध-निषेधके लिए मै क्या कर रहा हूँ और उसमें मैंने कितना समय दिया है—भाई नरिमनका यह अन्तिम तीर है। और यह मर्म-स्थलपर जाकर लगा है। गोवधसे मेरे-जैसे कट्टर हिन्दूको कितना दर्द पहुँचता है, उसका भाई नरिमन भला क्या अन्दाज लगा सकते हैं? जबतक गोवध होता रहता है तबतक मुझे ऐसा लगता रहता है मानो मेरा ही वध किया जा रहा है। गायको छुडवानेका मै निरन्तर प्रयत्न करता रहता हूँ। यद्यपि मैंने इस समय इस्लामकी रक्षा करनेकी खातिर अपने प्राणोको उत्सर्ग कर दिया है सो गायको बचानेके विचारसे ही किया है। मै मुसलमानोके साथ व्यापार नही करना चाहता। इससे मै गोवधकी बात नही करता। मेरी प्रार्थना तो ईश्वरके प्रति है। मेरे हृदयकी बात तो वही जानता है। सज्जनताका बदला ईश्वर सज्जनतासे ही देता है। इस्लामकी रक्षा करते हुए

मै गायकी रक्षा अवश्यमेव कर लूँगा, ऐसी मान्यतासे मै खिलाफतके लिए प्राण उत्सर्ग करूँ तो मेरा विश्वास है कि उसमे गोरक्षाकी बात आ ही जाती है। जबतक मै मुसलमानोका प्रेम प्राप्त नही कर लेता तबतक अग्रेजोके हाथोसे गायको नही बचा सकता। मै भाई नरिमनसे यह अनुरोध करता हूँ कि वे इस बातको अच्छी तरह समझ ले कि मेरे सब प्रयत्न गायको बचानेके लिए ही है। जो गायको बचानेके लिए प्राणोकी बलि देनेके लिए तैयार नही है, वह सच्चे अर्थोमे हिन्दू नही है। जबतक हिन्दू, मुसलमान और ईसाइयोकी ओरसे शुद्ध रूपसे हिन्दुस्तानकी रक्षा नही की जाती तबतक हिन्दू नाममात्रके हिन्दू है। मेरा अहिंसा धर्म मुझे यही सिखाता है कि मै गायको बचानेकी खातिर मुसलमान अथवा ईसाईकी हत्या न करूँ बल्कि उसकी रक्षाके लिए मै स्वय अपनी बलि दे दूँ। ईश्वरके दरबारमे शुद्ध बलिदान ही काम आता है। मै शुद्ध बननेका प्रयत्न कर रहा हूँ। अन्य हिन्दुओ और हिन्दुस्तानकी सब सन्तानोको मै इस शुद्धिमे शामिल होनेके लिए कह रहा हूँ। भाई नरिमनको भी गोवधसे दु ख होता है। उन्हे मै इस आत्मशुद्धिमे शामिल होनेके लिए निमन्त्रित करता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-४-१९२१

१९. गुजरातके अनुभव

मुझे इतने ज्यादा अनुभव होते रहते है कि उन सबको लिपिबद्ध करनेका समय ही नही मिल पाता। इससे मुझे अनेक अनुभवोको छोड देना पड़ता है। कार्य करनेवालोका यह लोभ कि थोडे ही समयमे मेरा जितना लाभ उठाया जा सकता है, उतना उठा ले, मुझे शान्तिसे रहने नही देता और न ही मै एकान्तमे कुछ लिख पाता हूँ। उनके लोभकी कोई हद नही है और मुझे भी सेवाका लोभ बना रहता है। जितना बन सके उतना कर लिया जाये, जितना समझाया जा सके उतना समझा दूँ; इसी कारण मै अपने समस्त अनुभवोको पाठकोके सामने प्रस्तुत नही कर पाता।

आनन्द, रास, बोरसद, हालोल, कालोल, वेजलपुर, गोधरा, सूरत, ओरपाड और रादेर — अबतक मै इतने स्थानोपर हो आया हूँ। प्रत्येक स्थानपर लोगोके उत्साहकी सीमा नही थी। सभी स्थानोपर स्त्री-पुरुष बड़ी सख्यामे उपस्थित हुए। सभी जगह मैने चरखेकी प्रवृत्तिको जोरोपर पाया और लगभग प्रत्येक स्थानपर लोगोने तिलक स्वराज्य-कोषमे चन्दा दिया।

एक विधवाका दान

आनन्दमे एक विधवा बहनके पास पच्चीस-एक तोले सोनेकी छड थी, 'उसने वही दानमे दे दी। यह दान एक विधवा बहनके लिए बहुत ज्यादा है। मैने उस महिलाका नाम पूछा। उसने नाम बतानेसे इनकार किया। धर्मके लिए पैसा देनेमे नाम-धाम कैसा? ज्यादा पूछनेकी मेरी हिम्मत न हुई।

सशर्त दान

गोधरामें श्रीमती कोठावाला अपने स्वभावके अनुसार सभामें आईं। उन्होंने मुझसे कहा "आपका सब काम मुझे पसन्द आता है लेकिन आपका असहयोग मुझे पसन्द नहीं। आप लॉर्ड रीडिंगको कमसे-कम एक अवसर अवश्य दें।"

मैंने कहा: "मैं निस्सन्देह सबको अवसर देना चाहता हूँ। अगर वे न्याय करते हैं तो इसका अर्थ [हमारी ओरसे] सहयोग ही होगा। आप ही उन्हें समझायें कि वे पश्चात्ताप करें, अपने किये हुए गुनाहोंकी भारतसे माफी माँगें और न्याय करें। तब कोई झगड़ा ही न रहेगा।"

"आप मुझसे कहें कि आप उन्हें अवसर देंगे। आप उन्हें लिखेंगे कि यदि आप न्याय प्रदान करेंगे तो हम असहयोगको छोड़ देंगे?"

मैंने कहा: "समय मिलने पर मैं अवश्य लिखूँगा। लेकिन लॉर्ड रीडिंग इतना तो जानते ही हैं।"

इस भली बहनने ऐसी शर्तके साथ पचास रुपये दिये। अगर सब बहनें ऐसी ही शर्तके साथ रुपया दें तो भी मेरा खयाल है कि जल्दी ही एक करोड़ रुपया इकट्ठा हो जायेगा।

व्यवस्था

मुझे सब स्थानोंपर व्यवस्थामें सुधार दिखाई दिया, लेकिन सबसे ज्यादा व्यवस्था तो मुझे सूरतमें दिखाई पड़ी। मैं जहाँ-जहाँ जाता था वहाँ-वहाँ लोगोंको पहलेसे ही अच्छी तरहसे समझा दिया जाता था और इसी कारण कम शोरगुल और कम हड़-बड़ीमें काम हो जाता था। लोगोंसे पहलेसे कह रखनेके कारण पैसे भी आसानीसे इकट्ठे हो जाते थे। सूरतकी बहनोंने हीरेकी अँगूठियाँ भी दानमें दीं।

रांदेरका अनुभव

सूरतमें नगरपालिकाने मुझे मानपत्र भेंट किया जबकि मुझे मालूम हुआ कि रांदेर-की नगरपालिकाने मानपत्र देनेसे इनकार कर दिया। तिसपर भी वहाँके हिन्दू और मुस्लिम नवयुवक मुझे मानपत्र देनेके लिए आगे आये। एक मानपत्र नागरिकोंकी ओरसे तथा दूसरा खिलाफत [समिति] की ओरसे दिया गया। रास्ते भी सजाये हुए थे। तथापि मैंने देखा कि वहाँके नेता इन सबसे दूर ही रहे। उन्होंने सिर्फ उतना ही उत्साह दिखाया जितना कि बच्चे दिखाते हैं। मैंने बहुत प्रयत्न किया लेकिन रांदेरमें इस स्थितिमें मैं बहुत कम पैसे इकट्ठे कर सका। एक मुसलमान भाईने हमारे हाथमें पाँच रुपयेका नोट दिया, एक बहनने पाँच रुपये दिये और हर रोज दो घंटे चरखा चलाने तथा विदेशी वस्त्र न पहननेकी प्रतिज्ञा की। रांदेर जैसा रूखा अनुभव तो मुझे अपनी सारी यात्राके दौरान कहीं नहीं हुआ।

युवकोंको मेरी सलाह है कि वे इससे हतोत्साहित न हों। उन्हें मानपत्र देनेका प्रयत्न छोड़ देना चाहिए और चन्दा इकट्ठा करनेके लिए अवश्य जुट जाना चाहिए। अच्छे, मेहनती और नम्र नवयुवक बहुत-कुछ कर सकेंगे। मध्यम-वर्ग उन्हें पैसा देगा।

श्रद्धालुके मनमे श्रद्धा उपजेगी। नवयुवक समुदायके मुसलमान और हिन्दू एकमत होकर और एक दिलसे बहुत ज्यादा काम कर रहे है, हमारे लिए आशाकी यह बहुत बड़ी निशानी है।

दो दोष

मै देखता हूँ कि अभी लोगोमे स्वदेशीके बारेमे पूरी समझ अथवा जागृति नही है। अभी साज-सज्जामे विदेशी वस्त्र और विदेशी कागजोका इस्तेमाल जारी है। हमे यदि विदेशी वस्त्रका बहिष्कार इसी वर्ष करना है तो हमें प्रत्येक विषयपर विचार कर लेना होगा। सूक्ष्मसे-सूक्ष्म बातोपर भी हमे ध्यान देना होगा। धर्म समझकर ही जब विदेशी वस्त्रको तिलाजलि दी जायेगी तभी बडा होनेपर भी इस कार्यको हम आसानीसे कर सकेंगे। इसमे थोडी भी गुजाइश नही माननी चाहिए। समझदार लोगोके लिए तो हमारी मिलका कपडा भी विदेशी ही है। हमेशा देशी मिल और विदेशी मिलके मालको नही पहचाना जा सकता। स्वदेशीका सन्देश जिनतक पहुँचा ही नही है मिलका माल उन गरीबोके लिए आवश्यक ही है। सच्ची स्वदेशी वही है जिसकी सूईसे लेकर समस्त प्रक्रियाएँ उसी गाँव अथवा शहरमे हुई हो। जिस शहरमें यह चीज होगी उस शहरकी आबादी बढेगी और वह शहर अपनी स्वतन्त्रताको खुद प्राप्त कर लेगा। इस स्थितिको लानेके लिए इस बातकी जरूरत है कि लोग खूब सोच-समझकर विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करे।

दूसरा दोष है लोगोका फूलोके हार भेट करनेका शौक। यह अभी तक नही गया है। फूलोके हार देनेमे मै कोई लाभ नही देखता। असख्य फूल व्यर्थ चले जाते है। अभी हमारे पास इस तरह फेकनेके लिए पैसे नही है। हार तो सिर्फ सूतके ही होते है। सूतके अनेक तरहके कला कौशलयुक्त हार बनाये जा सकते है। सूतको अनेक तरहसे गूँथा जा सकता है। सूतकी पतली-पतली लडियाँ बनाई जा सकती है। सिर्फ इसी तरह महीन सूत कातकर उसकी लडीका हार बनाकर देनेमें विचार और प्रेमका भाव निहित है। जिसे सूतका हार मिले वह उसका उपयोग कर सकता है। ऐसा समय आ रहा है कि जब सूतके हार गरीबोको दिये जायेंगे और वे उसका उपयोग करेंगे। पुष्प-मालाका कोई उपयोग नही कर सकता और फूलोको व्यर्थ बखेरना तो बिलकुल ही नाहक कहा जायेगा।

काम, काम और काम

यदि हम इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हो तो हमे काममें ही लगे रहना चाहिए। सभाएँ, जलूस और इस तरहकी अन्य चीजे, जिस हदतक लोगोमे जागृति लानेकी बात है उस हदतक तो ठीक है लेकिन जहाँ लोगोमे जागृति आ गई है वहाँ तो चुपचाप काम ही करना है। हमेशा चन्दा इकट्ठा करना, हमेशा सूत कत-वाना, नये चरखे तैयार करवाना, जिस घरमे चरखा न हो वहाँ चरखा दाखिल करना, खादी इकट्ठी करना, जिन्होने खादीको इस्तेमाल करना शुरू न किया हो उनसे उसे इस्तेमाल करनेके लिए अनुरोध करना तथा मद्यनिषेधके कार्यमे उत्साही व्यक्तियोको

लगाना — सभीको स्वराज्यके ये सब कार्य करने चाहिए तथा जनताको भी इन्हें करनेके लिए प्रेरित करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-४-१९२१

२०. टिप्पणियाँ

'नवजीवन' की भाषा

एक पारसी बहन, एक पारसी भाई और अन्य लोगोने 'नवजीवन' की भाषाकी आलोचना की है। हम 'नवजीवन' की भाषाको सरल रखनेकी बराबर कोशिश करते रहते है। मेरी मान्यता है कि 'नवजीवन' का कार्यक्षेत्र भाषा सुधारने अथवा उसमे कठिन शब्द दाखिल करनेका नही वरन् सरलसे-सरल और जिसे ज्यादासे-ज्यादा लोग समझ सके ऐसी भाषामे विचारोंका प्रचार करनेका है। ऐसा होनेके बावजूद लेखक इस उद्देश्यको ध्यानमे रखकर नही लिखते। सबको अपने-अपने शब्दोको प्रयुक्त करनेकी आदत पडी हुई है। फलत. 'नवजीवन' की भाषा हमेशा ही सरल नही रह पाती, यह भी मै देखता हूँ। मै पाठकोको इतना विश्वास अवश्य दिलाना चाहता हूँ कि जान-बूझकर भापाको जटिल बनानेका प्रयत्न नही किया जाता है। हमारा उद्देश्य तो हमेशा भापाको सरल बनाये रखनेका ही रहेगा। आलोचकोने आलोचना लिख भेजी — इसके लिए मै उन्हें धन्यवाद देता हूँ। सस्कृत शब्दोका कम इस्तेमाल किया जाये, ऐसा प्रयत्न मै अवश्य करूँगा। मुझे मालूम है कि अनेक मुसलमान और पारसी भाई 'नवजीवन' पढ़ते है। ऐसी अनेक बहनें भी 'नवजीवन' पढती है जो कठिन शब्द नही समझ सकती। उनके लिए 'नवजीवन' की भाषाको सरल बनाना मै अपना धर्म समझता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-४-१९२१

२१. गुजरातियोंसे

[२५ अप्रैल, १९२१][१]

मैं महान् सिन्धु नदीके तटपर, सुबह-सुबह एक वृक्षके तले एकान्तमें बैठा हुआ हूँ। वृक्षोंपर पक्षी गुंजन कर रहे हैं। दो-तीन स्वयंसेवकोंके अतिरिक्त और कोई नजर नहीं आता। एक ओर दूरसे कोटरीका पुल दिखाई देता है तो दूसरी ओर पानीके अलावा और कुछ दिखाई नहीं पड़ता। सामनेके तटपर मैं वृक्ष और कुछ-एक घर देख पा रहा हूँ। नदीमें दो-चार छोटी-छोटी नावें बिना किसी कामके खड़ी हुई हैं। मन्द समीर बह रहा है और समीर बहनेके कारण नदीका जल अठखेलियाँ करता हुआ मन्द मधुर स्वरमें गा रहा है। जल और रेत सूर्यकी किरणोंसे मिलकर स्वर्ण समान दीप्त हो रहे हैं। सिन्धी भाइयोंने मुझे अपने प्रेमपाशमें बाँध रखा है।

आज सोमवारका दिन है इसलिए मेरे लिए एकान्त और शीतल स्थान ढूंढ़कर उन्होंने मुझे यहाँ ला बैठाया है। जब कोई मुझसे यह कहता है कि मैंने बहुत त्याग किया है तब मुझे हँसी आती है। जिस सुख, शान्ति और आनन्दका मैं अनुभव कर रहा हूँ वे सब कदाचित् ही किसी चक्रवर्तीको मिलते हों। मेरी मान्यता है कि चक्रवर्तीको ऐसी शान्ति मिलनी असम्भव है। उसे तो राजपाटका बोझ ही कुचल डालता है। मुझे इस बातका पूरा-पूरा अनुभव हो रहा है कि मन ही बन्धन और मोक्षका कारण है।

गुजरातमें मैंने अभी-अभी जिस प्रेमका अनुभव किया है, इस प्रेमके साथ उसकी तुलना करता हूँ तो मुझे दोनों एक जैसे लगते हैं। जहाँ जाता हूँ वहाँ लगता है जैसे गुजरातका प्रेम ही यहाँ भी उमड़ रहा है। चूँकि मैं सिन्धको भी अपना ही देश मान सकता हूँ, सिन्धियोंके सुख-दुःखमें भी उतना ही भाग ले सकता हूँ। सिन्धकी बलि देकर मैं स्वप्नमें भी गुजरातका लाभ नहीं चाहता। लेकिन गुजरातके दोषोंको सिन्ध ग्रहण न करे, मेरा देशप्रेम और मेरा धर्म इसके लिए मुझे सजग रहनेके लिए कहता है। जिस तरह मैं यह बात कतई पसन्द नहीं कर सकता कि गुजरातके कारण सिन्धको नुकसान पहुँचे उसी तरह विदेशके बारेमें भी मेरे मनमें वही भाव रहता है। विदेशको नुकसान पहुँचाकर मैं हिन्दुस्तानको लाभ पहुँचानेकी भूल कदापि न करूँ, इसी भावनाको मैं सच्चा स्वदेशाभिमान मानता हूँ।

लेकिन मेरा स्वदेशाभिमान जितना विशाल है उतना ही संकुचित भी है। सारी दुनियाका कल्याण करनेमें मुझे कोई रस नहीं आता। मुझे तो अपने देशका कल्याण करनेमें ही रस आता है। देशके कल्याणमें मैं जगत्‌का कल्याण देखता हूँ। मेरा वर्णाश्रम धर्म मुझे सिखाता है कि यदि मैं यूरोपमें उत्पन्न न होकर भारतमें उत्पन्न हुआ

१. गांधीजीने २४ अप्रैलसे ३० अप्रैल तक सिन्धका दौरा किया था। ऐसा प्रतीत होता है कि यह लेख सोमवार २५ अप्रैलको ही लिखा गया होगा।

हूँ तो उसका कुछ अभिप्राय होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति कर्जदारके रूपमे जन्म लेता है। उसे अगर किसीसे कुछ लेना होता है तो इसका उसे भानतक नही होता, होना भी नही चाहिए। जो व्यापारी अपने उधार खातेकी जाँच कर लेता है उसे अपने जमा खातेकी फिक्र ही नही करनी पडती। जो अपने कर्त्तव्यको निभाना सीख लेता है उसे उसके अधिकार स्वयमेव मिल जाते है।

मेरा स्वदेशाभिमान, देशके प्रति मेरा क्या कर्त्तव्य है, उसी ओर मेरा ध्यान खीचता है। मेरा गुजराती होनेका अभिमान मुझे बताता है कि भारतके प्रति एक गुजरातीका क्या कर्त्तव्य है। यदि यह विचार सच्चा हो, यदि गुजराती भाई-बहन इसे स्वीकार करते हो तो गुजराती निस्सन्देह अपने कर्त्तव्यसे अच्छी तरह परिचित है।

गुजरात अकेला ही इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त कर सकता है। प्रत्येक व्यक्ति अपना-अपना स्वराज्य प्राप्त कर सकता है। गुजरातका प्रत्येक गाँव अपना स्वराज्य प्राप्त कर सकता है। और सभी अपना-अपना स्वराज्य प्राप्त करके हिन्द स्वराज्य प्राप्त करनेमे अपना-अपना योग दे सकते है।

जो अपने हिस्से-भरका योग देकर चुपचाप बैठा रहेगा वह कंजूस माना जायेगा। स्वराज्यकी शर्त यह है कि सब कोई अपने हिस्सेका योग दे, इतना ही पर्याप्त नही बल्कि सब लोग उनसे जितना बन पड़े उतना योग दें। जब सब लोग सबका बोझ उठानेके लिए तैयार हो जायेगे तभी सबका बोझ समान रूपसे बँटाया जा सकेगा, क्योकि सबकी शक्ति एक समान नही होती। ऐसी स्थितिमें अगर सभी अपने-अपने हिस्से-भरका कार्य करनेके बाद बैठ जाये तो गरीब कुचल जायेगे; अमीर उन्हे रौद डालेगे।

हिन्दुस्तानकी आबादी बत्तीस करोडकी है। एक करोड़ रुपया देने—इकट्ठा करने—का मतलब प्रति व्यक्तिके हिसाबसे दो पैसे इकट्ठा करना हुआ। यदि करोड़पति दो पैसे देकर ही बैठ रहें तो कगालकी ओरसे, बालकोकी ओरसे, लूले-लँगड़ोकी ओरसे तथा भिखमगोकी ओरसे कौन देगा? सीधा हिसाब ही यह है कि करोड़पतिको ज्यादा बोझ उठानेकी वृत्ति रखनी चाहिए। जिसे भगवान्ने बहुत दिया है वह बहुत दे।

इस तरहसे हिसाब किये जानेपर गुजरातको अपना हिसाब लगाना चाहिए। गुजरात अगर दस लाख रुपया इकट्ठा करे तो वह कोई ज्यादा नही कहा जायेगा। बाहर रहनेवाले गुजरातियोको मै इनमें नही गिनता। बगालमें रहनेवाले गुजराती भले ही गुजरातको धन भेजें, लेकिन उन्हे बंगालमें अपना हिस्सा देना ही चाहिए। मद्रासमें बसनेवाले गुजरातियोको मद्रासकी सेवा करनी ही चाहिए। जहाँसे गुजराती धन प्राप्त करे वहाँ वे अपनी कमाईका एक अच्छा भाग खर्च करे, यह उनको और हिन्दुस्तानकी सभ्यताको शोभान्वित करनेवाली बात है। इस तरह विचार करके ही मैं गुजरातके लिए दस लाख रुपयेकी रकम निर्धारित करता हूँ।

इस गिनतीमे मैने बम्बईको भी अलग रखा है। बम्बईमें रहनेवाले गुजराती बम्बईमें भारी दान दे ही रहे है। बम्बईसे मुझे कितनी आशाएँ है इसके बारेमे मै बादमे लिखनेकी सोचता हूँ। अभी तो गुजरातमे बसनेवाले गुजरातियोंसे ही दस लाख रुपये मिलनेकी आशा रखता हूँ।

इतनी अथवा इससे अधिक अथवा कम रकम इकट्ठी करनेका व्यावहारिक कदम यह है कि प्रत्येक जिले और प्रत्येक देशी राज्यके कार्यकर्त्ता यथाशक्ति चन्दा इकट्ठा करनेका काम उठा ले।

यही बात कांग्रेसकी सदस्यताके बारेमें लागू होती है। जहाँ लोगोंमें अधिक जागृति है वहाँ अधिक सदस्य बननेकी उम्मीद होनी चाहिए। सूरत और नडियाद-जैसे शहर, जहाँ बहुत ज्यादा जागृति आ गई है, अगर अपने हिस्से-भरके सदस्य देकर सन्तुष्ट रहेंगे तो हम हाथ आई हुई बाजीको खो बैठेंगे। जिन गाँवोंमें भारी जागृति आ गई है वहाँके लिए तो मैं जरूर यह उम्मीद करता हूँ कि वहाँके २१ वर्षसे ऊपरके हर स्त्री, पुरुष, ढेढ, भंगी, हिन्दू और मुसलमानको कांग्रेसका सदस्य बनना चाहिए। यदि किसी गरीब व्यक्तिके पास चार आने न हो तो उसके पड़ोसीको चाहिए कि वह उसे उतने पैसे देकर उसका नाम दर्ज करवाये।

जो बात सदस्यता और चन्देपर लागू होती है वही बात चरखेपर भी लागू होती है। जहाँके लोग अधिक कार्यदक्ष हैं वहाँ अधिक चरखोंको अवश्य दाखिल किया जाना चाहिए। इस तरह परस्पर एक-दूसरेकी सहायता करके ही हम जून मास तक अपनी छोटी, सरल और जो सबकी समझमें आ जाये, ऐसी योजनाको अमलमें ला सकेंगे।

यद्यपि योजना आसान है तथापि अगर हम आलस्यमें पड़े रहेंगे तो उसे कदापि पूरा नहीं कर सकेंगे। जब सब कार्यकर्त्ता ईमानदारीसे निरन्तर यथाशक्ति काम करेंगे तभी हमारी योजना सफल होगी। यह योजना हमारी परीक्षा है, कसौटी है। स्वराज्य-की योग्यता प्राप्त करनेकी दिशामें यह प्राथमिक शिक्षा है। लेकिन यह शिक्षा हमें इतनी दूर तक पहुँचा देगी कि अगर हम इस परीक्षामें उत्तीर्ण हो जायें तो बाकीकी शिक्षाके लिए तीन महीनोंकी भी कदाचित् ही जरूरत होगी, क्योंकि यह परीक्षा हमें आत्मविश्वास, हिम्मत और बल देनेवाली है।

मुझे उम्मीद है कि गुजरात अपने धर्मका पूरा-पूरा पालन करेगा।

गुजरातकी बहनोंमें जो जागृति आ गई है उससे मैं चकित हो उठा हूँ। उनके हाथमें बहुत शक्ति है। स्वराज्य प्राप्त करनेकी योजनामें बहनोंका भाग पुरुषों जितना ही है बल्कि उनसे ज्यादा ही है। मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि बहनें अपना योगदान देकर अपनी, गुजरातकी और भारतकी कीर्ति और धर्मको गौरवान्वित करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १-५-१९२१

२२. पत्र : सी० एफ० एण्ड्रचूजको

हैदराबाद (सिन्ध)
२५ अप्रैल, [१९२१]

प्रिय चार्ली,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे प्रश्नका उत्तर मैंने 'यग इडिया' मे दिया है। यदि उसमे कोई कसर रह गई होगी तो तुम लिखोगे ही। इस प्रश्नके बारेमे मेरे कुछ अपने निश्चित विचार है। हालके अनुभवोसे मै अपने इन विचारो पर और भी दृढ हो गया हूँ।

पति और पत्नीके बीच वासनारहित सम्बन्धकी आवश्यकताके बारेमे मै प्रचार नही करता। इसलिए कि वह सम्बन्ध इतना पवित्र है कि उसे उपदेशोका विपय नही बनाया जा सकता। परन्तु मेरे अपने लिए वह एक पवित्र कामना-भर नही है। भारतकी आज जो दुरवस्था है, उसमे यदि मुझे शिष्ट और स्वैच्छिक ढगसे प्रजनन रोकनेका कोई तरीका मिल जाये तो मै उसे तत्काल अपना लूँ। लेकिन मै जानता हूँ कि ऐसा कोई तरीका सम्भव ही नही है। मै तुमको बताना चाहता हूँ कि उस लेखका काफी प्रभाव पडा है। मै ऐसे कई युवकोको जानता हूँ जो सयमका पालन कर रहे है और इससे उनको और उनकी पत्नियो दोनो ही को लाभ हो रहा है। मुझे आश्चर्य इस बातपर है कि तुम इतनी सीधी-सी चीज क्यो नही देख पा रहे हो। परन्तु यह बहसका विषय नही है। यह एक मूलभूत सत्य है जिसे तुम यथा-समय स्वय पा लोगे।

आशा है तुम्हारा स्वास्थ्य अब पहलेसे अच्छा है।

तुम्हारा,
मोहन

[पुनश्च :]

मैंने तुमको बतलाया है या नही कि लालचन्द बेईमान ही नही निकला, वह सिद्धान्तहीन और निर्लज्ज भी साबित हुआ है। साफ दिखता है कि उसने गबन किया है। इसपर पर्दा डालनेके लिए उसने और अधिक झूठका सहारा लिया है।

गांधीजीके स्वाक्षरोमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ९६५) की फोटो-नकलसे।

१. चार्ल्स फ्रेयर एण्ड्रयूज (१८७१-१९४०); अंग्रेज मिशनरी, लेखक व शिक्षा-शास्त्री; जिन्होंने विश्वभारती विश्वविद्यालयके कार्यमें बहुत दिलचस्पी ली। कई वर्षोंतक भारतीयोंके साथ काम किया।

२३. सन्देश : 'बॉम्बे क्रॉनिकल' को[1]

मै श्री हॉर्निमैनके बारेमे कह सकता हूँ कि मैने उन्हे जितना अधिक जाना, उनके प्रति मेरा प्रेम उतना ही अधिक बढता गया। श्री हॉर्निमैनने जितनी निर्भयता और दृढ विश्वासके साथ पत्रकारिता की और अपनी प्रतिभाके जरिये भारतकी सेवा की उतनी इने-गिने अग्रेजोने ही की है। और यह मै बावजूद इस बातके कह सकता हूँ कि मैने प्राय उनकी सख्त भाषा और खरी-खोटी सुनानेकी आदतके बारेमे, जिसमे उन्हे महारत हासिल थी, नापसन्दगी जाहिर की है।

मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २६–४–१९२१

२४. टिप्पणियाँ

मूलशीमें सत्याग्रह

मेरी सहानुभूति मूलशीके[2] गरीब लोगोके साथ है। मै चाहता हूँ टाटा-जैसे बडे घरानेके लोग अपने कानूनी अधिकारोपर अडनेकी बजाय खुद इन लोगोके साथ बात-चीत करे और इनसे सलाह-मशविरा करके इनके लिए जो-कुछ कर सकते हो करे। भू-अधिग्रहण अधिनियमोका मुझे भी थोडा अनुभव है। मै इस तरहके लगभग ८० मुकदमोकी पैरवी कर चुका हूँ। किन्तु वहाँ भूमिके अधिग्रहणका कारण औद्योगिक विकास नही बल्कि गन्दगी था। मै जानता हूँ कि जिन लोगोकी जमीने ली गईं उनको जितना चाहिए था ठीक उतना ही, समुचित मुआवजा नही मिला है। यदि एक भी गरीब आदमीको कुछ भी नुकसान उठाना पडे तो फिर उस टाटा-योजनाका क्या मूल्य रह जायेगा जो भारतके लिए इतनी कल्याणकारी बतलाई जाती है? कहने-को तो यह भी कहा जा सकता है कि अगर अध-पेट रहनेवाले तीन करोड स्त्री-पुरुषो और लाखो भूखे-नगे इन्सानोको गोली मार दी जाये और उनकी लाशोको खादके काममे लिया जाये या उनकी हड्डियोसे चाकुओके बेंट बना डाले जायें तो रोग और निर्धनताकी समस्या आसानीसे हल की जा सकती है और बाकी बचे हुए लोग बडे

१. यह सन्देश **बॉम्बे क्रॉनिकल** के सम्पादक बेंजामिन गाइ हॉर्निमैनके देश-निकालेकी दूसरी वार्षिकीके अवसरपर प्रकाशित किया गया था। श्री हॉर्निमैनको २६ अप्रैल, १९१९ को बिना मुकदमा चलाये निर्वासित किया गया था। देखिए खण्ड १५, पृष्ठ २६३-६४।

२. मूलशी गावके किसानोने अपनी शिकायतें दूर न होनेपर सत्याग्रह करनेकी धमकी दी थी। देखिए "भाषण: महाराष्ट्र प्रान्तीय सम्मेलन, बसईमें", ७–५–१९२१।

ऐश-आरामसे जिन्दगी बसर कर सकते है। इससे समस्या हल हो सकती है, फिर भी कोई सिरफिरा ही होगा जो ऐसा सुझाव पेश करेगा। लोगोको गोली मार देनेके बजाय उनकी जमीनोसे उनको जबरन बेदखल कर देना भी लगभग वैसा ही काम है, क्योकि इन बेशकीमत जमीनोके साथ उनकी भावनाये, उनके कोमलतम उद्गार और उनकी कल्पना अर्थात् वे सभी बाते जो जीवनको जीने योग्य बनाती है, जुडी हुई है। एक बड़े घरानेकी विरासत पानेवाले टाटाओसे मुझे यही कहना है कि वे अपने कमजोर और असहाय देशवासियोकी इच्छाओको सिर-माथे लेकर ही भारतके वास्तविक कल्याणमे अभिवृद्धि कर सकते है। सत्याग्रहियोका कर्त्तव्य तो सोनेके अक्षरोमे लिखा हुआ होता है। सत्याग्रह किसी भी अन्यायपूर्ण उद्देश्यके लिए नही किया जा सकता। न्यायपूर्ण उद्देश्यके लिए किया जानेवाला सत्याग्रह भी, यदि उसे लेकर चलनेवाले लोग कृत-संकल्प न हो और कष्टसहन करते हुए आखिरी दमतक लड़नेके लिए तैयार न हो, तो एक दम्भ ही है। हिंसाका किंचित् प्रयोग भी न्यायपूर्ण उद्देश्यको विफल बना देता है। मन, वचन या कर्म — किसी भी रूपमे हिंसाका प्रयोग सत्याग्रहसे मेल नही खाता। यदि उद्देश्य न्यायपूर्ण हो, कष्टसहनकी अपरिमित क्षमता हो और हिंसासे बचा जाये तो विजय निश्चित है।

अस्पृश्यताका क्रमशः लोप

गुजरातके दौरेमें मुझे जो-जो सुखद अनुभव हुए उनमें सबसे ज्यादा सुखद था हिन्दुओं द्वारा दलित-वर्गके लोगोका स्वागत। सभी स्थानोपर श्रोताओने इस विषयसे सम्बन्धित मेरी उक्तियोको बिना किसी नाराजगीके सुना। कलोल मे मुझे 'अछूतो' की एक सभामे भाषण देना था। मैंने महाजनोसे अनुरोध किया कि आम सभाके लिए बनाये गये पण्डालमें ही उनके सामने भाषण करने दिया जाये। वे थोड़ी-बहुत हिचकिचाहटके साथ सहमत हो गये। मुझे उन 'बहिष्कृत' लोगोंको उनके मकानोसे लेने जाना था। उनके मकान पण्डालसे इतनी दूरीपर थे कि वे आ नही सकते थे। इसीलिए मैंने अस्पतालके निकट ही उनके समक्ष भाषण किया। मुझे यह देखकर बडी खुशी हुई कि मेरे साथ जानेवाले कई सनातनी हिन्दू मेरे चारों ओर जमा होनेवाले अछूत स्त्री-पुरुषोके साथ बिना-किसी हिचकके मिलजुल रहे थे। पर मुझे सबसे ज्यादा सन्तोष तो नवसारीके पासके एक बड़े गाँव सीसोदरामें हुआ। वहाँ मेरे भाषणके दौरान सभा-स्थलपर बडी दूरपर खड़े कई ढेढ़ोंको गाँवके बड़े-बड़े लोगोके लिए सुरक्षित स्थानपर जान-बूझकर बैठा दिया गया था। और उनको वहाँ बैठानेपर किसी भी स्त्री-पुरुषने कोई आपत्ति नही की। गाँवके लगभग सभी लोग सभामे मौजूद थे। आसपासके गाँवोके लोग भी वहाँ आ गये थे। इस प्रकार अछूत-वर्गके कई सौ लोगोको सोच-समझकर, एक पवित्र भावनाके साथ विशाल सभाके बीचो-बीच इतने महत्त्वपूर्ण स्थानपर बैठाना निश्चय ही इस आन्दोलनकी धार्मिकताका लक्षण है। श्री वल्लभभाई पटेलने[1] इस बातको भी पक्का बनानेके लिए श्रोताओसे कहा कि जो लोग उन कार्यो-

१. (१८७५-१९५०); उस समय गुजरातके एक प्रमुख कांग्रेसी नेता। बादमें स्वतन्त्र भारतके प्रथम उप-प्रधान मंत्री।

का समर्थन करते हो वे अपने हाथ उठा दे और इसपर अनगिनत हाथ ऊपर उठ गये। बारडोलीमें भी ऐसी ही एक विशाल सभामे ऐसा ही परीक्षण दुबारा किया गया और उसका इतना ही सन्तोषप्रद परिणाम निकला। अस्पृश्यताका क्रमश. लोप होता जा रहा है और इसके लोपके साथ-साथ स्वराज्यका मार्ग सरल और निरापद होता जा रहा है।

सूतके गोलोंका अम्बार

सीसोदरामें अभी सालभर पहलेतक हाथकी कताईका चलन नही था। वहाँ हाथके कते सूतके पचास मन वजनी बोरोको बडे अच्छे ढगसे एक कमरेमे सजाकर मुझे दिखाया गया। अब इस गाँवमें और आसपासके गाँवोमे सैकडो चरखे चल रहे हैं। पंजाबकी भाँति अब गुजरातमे भी बच्चे और महिलाये अकसर ही मुझे आकर सूत भेंट करते है। गुजरातके विद्यार्थी हाथकी कताईमे सचमुच पंजाबके कार्यकर्त्ताओको भी कुछ नई चीजें बता सकते है। इन विद्यार्थियोने बहुत ही थोडे समयमे कताईका काम सीख लिया है और अब गाँव-गाँवमें इसका आयोजन कर रहे है। इसलिए पंजाबियोको होशियार हो जाना चाहिए। अगर इन लोगोने इस होड़मे उनको पछाड दिया तो मुझे सचमुच अच्छा नही लगेगा। आन्ध्र, कर्नाटक और गुजरातसे बाजी मारना पंजाबके लिए आसान नही होगा। शंकालु व्यक्तियोको चाहिए कि वे जाकर इन कताई-केन्द्रोको देखें जहाँ संगठित ढगसे कार्य चल रहा है। उनको वहाँ जाकर कई ऐसे आर्थिक नियमोका पता चलेगा जो किताबी अर्थशास्त्रके सिद्धान्तोको गलत सिद्ध कर देते है।

विधवाका दान

स्त्री-पुरुषोने खुले हाथो आभूषणो और धनका दान दिया है। पर आनन्द ग्रामकी एक विधवाने तो सात सौ रुपयेके मूल्यकी सोनेकी एक सिल्ली दानमें देकर हम सभीको चकित कर दिया। मैंने उससे नाम पूछा तो उसने बतलानेसे इनकार कर दिया और कहा कि वह सोना भगवान्‌के कामके लिए है।

अंग्रेजी-शिक्षा

एक मित्रने मुझसे अंग्रेजी शिक्षाके बारेमे अपनी निश्चित राय देनेके लिए कहा है और कटकके तटपर दिये गये मेरे भाषणका[1] स्पष्टीकरण चाहा है। मैंने इस भाषण-का प्रकाशित विवरण नही देखा। पर मै अपने मित्रकी इच्छाका पालन बड़ी खुशीसे कर रहा हूँ। मेरी यह सोची-समझी राय है कि अंग्रेजी शिक्षा जिस ढगसे दी गई है उसने अंग्रेजी पढे-लिखे भारतीयोको नामर्द बना दिया है, उसने भारतीय विद्यार्थियोके दिमागोपर एक भारी बोझ डाल दिया है और हम लोगोको नकलची बना दिया है। देशी भाषाओको उचित स्थान दिलानेका काम बिलकुल नही किया गया और यह ब्रिटिश शासनके इतिहासका सबसे दु.खद अध्याय है। राममोहन रायको[2] यदि अंग्रेजी-

१, देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ४८२-८५।
२. राजा राममोहन राय (१७७४–१८३३); अध्येता, समाज-सुधारक और ब्राह्मसमाजके संस्थापक।

में सोचने और अपने विचार व्यक्त करनेका झझट न होता तो वे और भी बड़े सुधारक बन सकते थे, यही बाधा यदि लोकमान्य तिलकके[1] आड़े न आती तो वे और भी बड़े विचारक सिद्ध होते। इन दोनो महान् व्यक्तियोका अपने देशकी जनता-पर जबरदस्त प्रभाव पडा है। यह प्रभाव कही अधिक व्यापक होता यदि उनका पालन-पोषण एक अधिक स्वाभाविक पद्धतिमे हुआ होता। इसमे शक नही कि अग्रेजी साहित्यके समृद्ध कोषकी जानकारीसे दोनोको काफी लाभ हुआ था। लेकिन ऐसा ज्ञान तो उनको अपनी देशी भाषाओके जरिये भी मिल सकता था। कोई भी देश कोरे अनुवादोकी भरमार करके राष्ट्र नही बन सकता। जरा सोचिये कि अगर अग्रेजीमे 'बाइबिल'का प्रामाणिक सकलन उपलब्ध न होता तो अग्रेज जातिका क्या होता? मैं तो मानता हूँ कि चैतन्य, कबीर, नानक, गुरु गोविन्दसिह, शिवाजी और प्रताप हमारे राममोहन राय और तिलकसे कही बडे थे। वैसे मैं समझता हूँ कि इस प्रकारसे तुलना करना ठीक नही है। ये सभी विभूतियाँ अपने-अपने ढगसे महान् थी। परन्तु यदि उनके कामके फलसे उनको जाँचा जाये तो स्पष्ट है कि जनतापर राममोहन और तिलकका प्रभाव इतना स्थायी या व्यापक नही है जितना कि इन अन्य भाग्य-शालियोका है। पर यदि इन दोनोके सामने आनेवाली बाधाओको देखकर इनकी महानताको आँका जाये तो स्पष्ट है कि ये लोग प्रतिभाके बडे धनी थे और अगर इन दोनोका लालन-पालन एक स्वाभाविक पद्धतिमे हुआ होता तो ये और भी बडे-बडे काम करके दिखाते। मैं यह माननेको तैयार नही कि राजा राममोहन और लोक-मान्यने जो विचार व्यक्त किये वे उनके दिमागमे अग्रेजीकी शिक्षाके बिना आ ही नही सकते थे। भारत देश जितने भी अन्धविश्वासोसे पीडित है उनमे सबसे बडा यही है कि स्वातन्त्र्य-परक विचारोको प्रेरित करने और वैचारिक सुस्पष्टता पैदा करनेके लिए अग्रेजी भाषाका ज्ञान आवश्यक है। हमे याद रखना चाहिए कि पिछले पचास वर्षोके दौरान देशके सामने शिक्षाकी केवल एक पद्धति रही है और अभिव्यक्ति-का केवल एक माध्यम देशपर जबरदस्ती लाद दिया गया है। इसलिए हमारे पास यह बतलानेका कोई साधन ही नही रह गया है कि यदि मौजूदा स्कूल-कालेजोकी शिक्षा-पद्धति हमारे यहाँ प्रचलित न होती तो हम क्या बनते। लेकिन हम इतना तो जानते ही हैं कि आज भारत पचास वर्ष पहलेकी अपेक्षा ज्यादा निर्धन है, उसमे अपनी प्रतिरक्षाकी सामर्थ्य पहलेसे कम है, और देशके बच्चोकी जीवन-शक्ति पहलेसे कम हो गई है। मुझे यह मत समझाओ कि इसका कारण त्रुटिपूर्ण सरकारी पद्धति है। सरकारी तन्त्रका सबसे अधिक दोषपूर्ण अग उसकी शिक्षा-पद्धति है। मैं मानता हूँ कि अग्रेजोने गलत धारणाके आधारपर पूरी ईमानदारीके साथ इसका ढाँचा खड़ा किया था; क्योकि अग्रेज शासक पूरी ईमानदारीसे हमारी देशी पद्धतिको बिलकुल रद्दी समझते थे। इस शिक्षा-पद्धतिकी प्रवृत्ति भारतीयोको शरीर, मस्तिष्क और आत्मासे हीनतर बना देनेकी रही है और इसीलिए यह पद्धति पापमय वातावरणमे ही पनपी है।

१. बाल गंगाधर तिलक (१८५६–१९२०); देशभक्त व राजनीतिज्ञ।

एक और गुप्त सन्धि

"खून छिपा नही रहता।" पता नही पिछली नापाक जगके दौरान गुप्त सन्धियाँ करनेवालो ने यह समझ लिया था या नही कि आखिरकार एक दिन उनका भेद खुलकर रहेगा। ज्यादा सम्भावना तो इसी बातकी है कि वे शायद जानते होगे कि भेद खुल ही जायेगा और सन्धियाँ करनेवालो को एक दिन आलोचनाका शिकार बनना पडेगा। ज्यादा सम्भावना यही है कि चोरी-छिपे साजिश करनेवालो को जो सन्तोष मिलता है वह उनको इस बातसे भी मिला होगा कि जिस समय ये सन्धियाँ की गई थी उस समय वे उनको गुप्त रख सके और ये जिस मकसदसे की गई थी वह पूरा हो गया। 'बॉम्बे क्रॉनिकल' ने जिस सन्धिका पता चलाया है वह एक ऐसी ही सन्धि मालूम पडती है। कहा जाता है कि यह सन्धि ब्रिटिश सरकार और मक्का शरीफके बीच हुई थी। अगर बात सही है तो इससे पता चलता है कि ब्रिटिश मन्त्रिगण अपना उल्लू सीधा करनेके लिए कितने गिर सकते है। और अब जब उनका काम बन गया है तो वे अपने ही लिखे दस्तावेजको रद्दीकी टोकरीके लायक समझने लगे है। ऐसी अवस्थामे यदि करोड़ो भारतीयोका विश्वास ब्रिटेनपर से उठ गया है तो इसमे आश्चर्यकी क्या बात है। और अगर वे ब्रिटिश सरकारके साथ तबतक कोई सहयोग करनेको तैयार नही होते जबतक कि वह अपनी गलतियाँ नही सुधारती और अपनी आत्माको खोखला बनानेवाले भ्रष्टाचारसे मुक्त होकर अपनी शुद्धि नही करती तो इसमे भी ताज्जुब क्यो होना चाहिए?

बहुत देरसे

बम्बईके एक पारसी मित्रने 'तिलक स्वराज्य-कोष' के लिए दस रुपये भेजते हुए लिखा है:

> **आपने पारसियोंके नाम अपील करनेमें बहुत देर कर दी। आपके आन्दोलनके भयसे बम्बई सरकारने इस बार लगभग २३ लाख रुपयेकी पेशगी वसूली कर ली है। यदि पारसियोंको यकीन दिला दिया जाये कि उनके छोड़नेपर कोई दूसरी जाति उनका धन्धा अपने हाथमें नहीं लेगी और आप इस बुराईको हमेशाके लिए खत्म कर सकते हैं, तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि सभी प्रबुद्ध पारसी आपके आन्दोलनका हार्दिक समर्थन करेंगे।**

यदि सरकार साल भरका शुल्क पेशगी ले चुकी है तो दारूबन्दी आन्दोलनके समर्थनमे अपनी दूकाने बन्द करनेवालो को समय आनेपर पेशगीकी रकम वापस मिल जायेगी। जाहिर है कि दारू-विक्रेता तो असहयोगी नही हैं। इसलिए कोई कारण नही कि वे अपनी रकमकी वापसीके लिए सरकारको प्रार्थना-पत्र न भेजें। और मेरे मित्रने जो आश्वासन माँगा है उसके बारेमें मै इतना ही कह सकता हूँ कि उन्होंने जैसी शर्तें रखी है वैसी शर्तोपर आजतक कोई सुधार आन्दोलन नही चला। उनकी दलीलका मतलब तो यह निकलता है कि जबतक सभी भले नही बन जाते तबतक किसी भी आदमीको भला बननेकी जरूरत नही। लेकिन सुधारक लोग तो अकेले

ही खड़े होकर दूसरोके लिए मिसाल बनते है। पारसियोसे मेरा यही अनुरोध है कि वे इस दारूबन्दी आन्दोलनमे शामिल हो, दूसरे लोगोका मुँह न ताके। सच तो यह है कि कई गैर-पारसियोने दारूका विक्रय बन्द कर दिया है।

मेसोपोटामियाकी चीख-पुकार

मुझे मेसोपोटामियामे होनेवाले दुर्व्यवहारकी शिकायते अक्सर मिलतीरहती है। सभी पत्र-लेखकोने, उनके साथ जो अमानवीय बरताव किया जाता है, उसकी बात लिखी है। मुझे मौलाना शौकत अलीने एक पत्रकी नकल भेजी है। और भी लोगोको ऐसे पत्र मिले है। इनका प्रकाशन अब अधिक दिनोतक नही रोका जा सकता। इन शिकायतोका प्रचार होनेसे शिकायत करनेवालो को जितनी राहत मिल सकती है, कमसे-कम उतनी राहत तो उन्हे मिलनी ही चाहिए। भारत अपनी इस असहाय अवस्थामे अपने प्रवासियोके लिए अभी इस समय अधिक कुछ नही कर सकता। पत्र-पर तीन व्यक्तियोके हस्ताक्षर है। चूँकि उनके अधिकारी उनको नुकसान पहुँचा सकते है इसलिए मै बचावकी दृष्टिसे उनके नाम प्रकाशित नही कर रहा हूँ। ध्यान देनेकी बात यह है कि पत्र-लेखकोने उन्ही लोगोके नाम पत्र लिखे है जिनके नाम उन्होने समाचारपत्रोमे पढे थे। पत्र-लेखकोने अरबो द्वारा किये जानेवाले दुर्व्यवहारकी शिकायते की है। मुझे इससे कोई आश्चर्य नही हुआ। मै समझता हूँ कि अरब लोग चूँकि खुद असहाय है, इसीलिए वे भारतीय सैनिको और क्लर्कोपर अपना गुस्सा उतारते है। वे सोचते है कि शायद इस तरह वे भारतीयोको मेसोपोटामियाके सिलसिलेमे भरती होनेसे रोक सकेगे। मुझे उम्मीद है कि मेरे इस पत्रको प्रकाशित करनेसे दूसरे लोग भरतीके प्रलोभनोमे पड़ते हुए हिचकिचाएँगे। बहादुर अरब लोगोपर आज जो विपत्ति आ पडी है उसे किसी भी आत्म-सम्मानी भारतीयको अपनी जीविकाका साधन नही बनाना चाहिए। इस पत्रको[1] मै ज्योका-त्यो छाप रहा हूँ, मैने केवल उन अंशोको छोड़ दिया है जिनमे दुर्व्यवहारका शिकार बननेवाले लोगोके नामोके साथ जुडी हुई सैनिक टुकडियोका हवाला दिया गया था।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७-४-१९२१

१. यहाँ उद्धृत नही किया गया।

२५. बाजी लगानेकी लत

अगर आप घोड़ोंपर बाजी लगाना बन्द करवा सकें तो हजारों भारतीय और यूरोपीय गृहणियाँ आपको दुआ देंगी। जबतक मेरे पति 'रेस' (घुड़दौड़) के मैदानमें बाजी लगाने नहीं जाते थे तबतक वे एक आदर्श पति थे। उन्हे अच्छी तनख्वाह मिलती है और वे शराब नहीं पीते, फिर भी हम तंगदस्त हैं और गलेतक कर्जमें डूब गये हैं। और यही हाल, जहाँतक मुझे मालूम है, मेरे-जैसी दूसरी बहुत-सी गृहणियोका है। मैंने उनके पांव पड़कर रेसमें जानेसे मना किया पर उन्होंने एक न सुनी। पति अपनेको घुड़दौड़में जानेसे न रोक पाये, वहाँ बाजीपर-बाजी हारे और बीबी-बच्चोंको तबाही भुगतनी पड़े, क्या यह बहुत ज्यादती नहीं है?

यह सच है कि शराबसे हजारों तबाह हो रहे हैं; मगर घोड़ोंपर बाजी लगानेसे तो लाखोंके घर चौपट हो रहे हैं।

यह वेस्टर्न इंडिया टर्फ क्लब अपने गोरे कर्मचारियोको जो मोटी-मोटी तनख्वाहे देता है उसका सारा पैसा, सच पूछा जाये तो 'रेस' में जनतासे ही खसोटा जाता है। अगर आप यह जानते होते कि 'टर्फ क्लब' किस चतुराई और धूर्ततासे लोगोंका पैसा लूटता है तो आप मुझसे सहमत होते। भगवान्के लिए जैसे भी हो, इस हालतको सुधारिये। जब पेशेवर शर्तबाज और क्लबके सदस्य [ही] बाजी लगा सकते थे तब हालत आजसे कहीं अच्छी थी।

श्रीमान्जी, नई कौंसिलोंके अनेक सदस्योंसे अवश्य ही आपकी जान-पहचान होगी। मुझे पूरी उम्मीद है कि उनकी मददसे रेसोंमें बाजी लगाना बन्द कराया जा सकता है। बाजी लगानेवालोसे पैसा लेने और जीतनेवालों को पैसा देनेका इन्तजाम अगर सरकार अपने हाथमें ले, ले तो मुझे विश्वास है कि बहुत हद-तक हालत सुधर जायेगी। आज तो लाजिमी तौरपर हार आम लोगोकी होती है और जीत होती है घोड़ोंके मालिको, घोड़ोको सिखानेवालो और घुड़सवारोंकी। महज इसलिए कि उसके कुछ बड़े अफसरोंकी घुड़दौड़में गहरी दिलचस्पी हैं, क्या यह निहायत शर्मकी बात नहीं कि सरकार इस ओरसे आँखें मूंदे रहे?

मेरे पति सरकारी कर्मचारी हैं, इसलिए यह पत्र बिना दस्तखतके भेजना ही ज्यादा अच्छा रहेगा; लेकिन मैं प्रार्थना करती हूँ कि मैंने जो-कुछ लिखा है उसपर आप ध्यान दें और घोड़ोंपर बाजी लगाना बन्द करवा दें।

यह पत्र कुछ अर्सेसे सफरमें मेरे साथ है। मेरे साथ पाठक भी यह महसूस करेंगे कि पत्र करुणाजनक है। गुमनाम पत्र कभी-कभी ही कामके निकलते हैं। यह है कामका, भले ही लेखिकाने अपना नाम न देना ठीक समझा हो।

घुड़दौड़के बारेमे मैं कुछ भी नही जानता। आमतौरपर इसके साथ जिस तरहकी चीजे जुडी रहती हैं मैं उनकी छायासे भी डरता हूँ। इतना मैं जरूर जानता हूँ कि घुडदौडके मैदानमे जानेवाले बहुत-से लोग तबाह हो गये हैं।

लेकिन मैं स्वीकार करता हूँ कि इसके खिलाफ कलम उठानेकी हिम्मत मैं अभीतक नहीं कर पाया था। यह देखकर कि आगाखाँ-जैसे धर्मगुरु, अनेक महन्त और महाधिपति, वाइसराय और देशके सर्वश्रेष्ठ माने जानेवाले लोग घुड़दौड़की सरपरस्ती कर रहे हैं, उसपर हजारो रुपये बहाते हैं, अत. मैं सोचा करता था कि उसके खिलाफ लिखना बेकार होगा। लेकिन एक पत्रकार और सुधारकके नाते, जिन बुराइयोके खिलाफ जनमत तैयार किया जा सके, उनकी ओर लोगोका ध्यान खीचना मेरा कर्त्तव्य है। [चेचकका] टीका लगवाना मैं बुरा समझता हूँ, फिर भी इस बुराईकी ओर लोगोका ध्यान खीचना मैं अपनी शक्तिका अपव्यय ही मानता हूँ। यह भी स्वीकार करना मेरा कर्त्तव्य है कि शुद्धीकरणके इस आन्दोलनमे शराबबन्दीको शरीक करनेकी भी मेरी हिम्मत नही हुई थी। वह बात तो अपने आप ही आन्दोलनमें आ जुड़ी। लोगोने खुद-ब-खुद उसे आन्दोलनमे शामिल कर लिया है।

बिना उपदेश या मार्गदर्शनके ही लोग अपने आप बहुतसे व्यसनोको छोड़ रहे हैं, यह इस बातका पक्का लक्षण है कि असहयोग आन्दोलन शुद्धीकरणका आन्दोलन है। घुड़दौड़मे बाजी लगानेके बारेमे भी इसी आशासे मैंने उपर्युक्त पत्र प्रकाशित किया है।

मैं जानता हूँ कि अगर घुड़दौड़के मौजूदा तरीकेमे कुछ रद्दो-बदल कर दी जाये तो उससे लेखिकाको सन्तोष हो जायेगा; लेकिन असली इलाज तो इस बीमारी-को जडसे मिटाकर ही हो सकेगा, और जरूरत भी इसी बातकी है। घोड़ोपर बाजी लगाना भी जुआ ही है। अगर लोग असहयोग करे तो यह व्यसन, यह बुराई आप ही मर जायेगी। घुड़दौड़के मैदानमें जानेवाले हजारो आदमी वहाँ सिर्फ मजेके लिए जाते हैं। लोग वहाँ घोड़ोको बेदम दौड़ते हुए देखनेके लिए जाते है या फिर इसलिए कि वहाँ जाना फैशनमे शुमार है, लेकिन जो भी हो; वे बाजी लगानेवालो की तबाहीको बढ़ावा देते है और उसमें मदद तो करते ही है।

शराबखोरीके मुकाबले घोड़ोंपर बाजी लगानेके व्यसनसे पेश पाना जरा टेढी खीर है। जब कोई व्यसन फैशन ही नही बन जाता बल्कि बडप्पन भी समझा जाने लगता है तो उससे निपटनेमे काफी लम्बा समय लगता है। रेसमे बाजी लगाना फैशनमें शुमार तो होता ही है, पर उसे किसी तरहका दुर्गुण या बुरा काम भी नही माना जाता। सौभाग्यसे शराबखोरीके साथ यह बात नही है। शराब पीनेको निश्चित बुराई न सही, आदमीकी कमजोरी तो माना ही जाता है। हर धर्मने शराब पीनेकी कमोबश सख्तीके साथ बुराई की है। लेकिन घोडोपर बाजी लगानेकी बातका कही ऐसा उल्लेख नही है। ऐसी सूरतमे हम आशा करते है कि जागरूक लोग घुड़दौड़के मैदानमे जानेके बदले अपने लिए कोई दूसरा अधिक निर्दोष मनोविनोद ढूंढ निकालेगे, और इस तरह रेसके मैदानमे होनेवाली जुआखोरीके बारेमें अपनी नापसन्दगी जाहिर करेगे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २७–४–१९२१

२६. एक अब्राह्मणकी शिकायत[1]

मुझे इसी तरहके और भी कई पत्र मिले है। सभी पत्रलेखकोने स्पष्ट ही मेरी बात समझनेमे भूल की है। मद्रासवाले अपने भाषणकी रिपोर्ट मेरे देखनेमे नही आई। मै नही जानता कि कही उसीमे तो अर्थका अनर्थ नही कर दिया गया है। लेकिन फिर भी मै यह दावा करता हूँ कि ब्राह्मणोने हिन्दू धर्म या मानवताकी जो सेवा की है उसमे द्रविड़ सभ्यताकी उन सिद्धियोकी वजहसे, जिनसे कोई इनकार नही करता, न तो कोई फर्क पड़ता है और न उन सेवाओका महत्त्व ही कम होता है। पत्रलेखकोका ऐसा सोचना वाजिब नही है कि दक्षिणके द्रविड और उत्तरके आर्य परस्पर सर्वथा पृथक और भिन्न है। उन्हे इस प्रवृत्तिसे सचेत रहना चाहिए। आजका भारत केवल द्रविड़ और आर्य सभ्यताका नही, और भी कई सभ्यताओका घुला-मिला रूप है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७–४–१९२१

२७. टिप्पणियाँ

हड़तालको हलका न बनायें

हडतालोका तो ताँता ही बँध गया जान पड़ता है। इसमे कराचीने तो हद ही कर दी है। एक महीनेमे पाँच हड़ताल। कोई जेल जाये तो हड़ताल, कोई जेलसे छूटे तो हडताल, गवर्नरके आनेपर भी हडताल! इस तरह हड़ताल करनेसे हडतालकी कीमत एकदम जाती रहती है। मेरे खयालसे तो हड़ताल एक पवित्र और बलवान् साधन है। किसी गम्भीर धर्मके प्रसगपर हड़ताल होती है अथवा जब जनताकी भावनाएँ अत्यन्त उग्र होती है तब उन्हे प्रदर्शित करनेके लिए हड़ताल की जाती है। प्रत्येक प्रसगको धार्मिक समझकर अथवा हर समय भावनाओको उग्र बनाकर हम हडताल करते है तो इससे हम धार्मिकता और भावोद्वेगकी तीव्रताको कम ही करते है। अगर मुझे यह बात महसूस न हुई होती कि सत्याग्रह सप्ताहमे हडतालके बिना काम नही चल सकता तो मै इन सस्ती हड़तालोके मौसममे उस हडतालके मूल्यको सस्ता करनेका

१. ८ अप्रैल, १९२१ को मद्रास बीचपर दिये गये गाधीजीके भाषणके विवरणको पढकर उसके विरोधमें अनेक पत्र आये थे। सी० कडास्वामीका ११ अप्रैलको मद्राससे लिखा गया यह पत्र उनमें से एक है। इसमें उन्होने कहा था कि गाधीजीको द्रविड सभ्यता और ब्राह्मण विरोधी आन्दोलनके रहस्यकी कोई जानकारी नहीं है और इसलिए उन्होने अब्राह्मणोको लाछित किया है। प्रस्तुत टिप्पणी उसका उत्तर है। गाधीजीके भाषणके लिए देखिए खण्ड १९।

साधन कभी न बनता। मुझे उम्मीद है कि लोग अब हिन्दुस्तानमे सभी जगह बात-बातपर हड़ताल नही करेगे। सबसे अच्छा उपाय तो यह है कि जबतक कांग्रेस और खिलाफत समिति सलाह-मशविरा करके सार्वजनिक विज्ञप्ति न निकाले तबतक लोग हड़ताल बिलकुल न करे।

जेल-महल

और फिर यदि किसीके जेल जानेपर हम हड़ताल करें तो यह हमारी दुर्बलताकी निशानी है। जेलोको तो हमे भर देना है। हजारो व्यक्तियोके जेल जानेपर ही छुटकारा पाना सम्भव है। सामान्यतया अत्याचारी राज्यके अन्तर्गत अच्छे व्यक्तियोके लिए जेल ही एक पवित्र स्थल है। जेल हमारी स्वतन्त्रताका स्थान है। नितान्त निर्दोष व्यक्ति भी जब बहुत बड़ी संख्यामे जेल जाने लगे तब आप समझ ले कि स्वराज्य समीप ही है। इस राज्यमे हम अगर जेलको ही अपना स्वाभाविक घर बनाना चाहते हो तो जेल भेजे जानेपर हड़ताले करनेका कोई अर्थ ही नही रह जाता। जब हम सचमुच जेलका भय छोड़ देंगे तब सरकार हमें जेल भेजना भूल जायेगी। जिस दिन हम घोर अत्याचारोको भी हँसते-हँसते सहन करेगे, लेकिन पेटके बल नही रेंगेंगे, 'यूनियन-जैक' के आगे सलामी नही देंगे, नाक नही रगड़ेंगे और डायरशाहीके विरुद्ध खड़े डटकर गोलियोकी बौछारको पीठपर नही बल्कि सीनेपर झेलेगें[1] उसी दिन स्वराज्य मिल जायेगा; क्योकि इसीमे सच्ची वीरता है, इसी को क्षत्रियत्व कहते है। क्षत्रियत्वका विकास करनेके लिए पुष्ट शरीरकी आवश्यकता नही है बल्कि उसके लिए तो मजबूत और निडर हृदयकी जरूरत है। क्रूरता और कठोरता क्षत्रियत्वके गुण नही बल्कि सहनशीलता, क्षमा, दया, उदारता, अपलायन (युद्धक्षेत्रसे न भागना) और गोलियोकी बौछारमे भी अडिग, निर्भयतापूर्वक खड़े रहनेकी शक्तिमें ही क्षत्रियत्व है। सच्चा क्षत्रिय प्रहार नही करता बल्कि प्रहारको अपने ऊपर झेल लेता है। ननकानाके महन्तको क्षत्रिय नही कहा जा सकता, वह तो खूनी कहलायेगा। लछमनसिंह और दलीपसिंह शुद्ध क्षत्रिय थे।[2] और ऐसा क्षत्रियत्व तो एक दुर्बल अपग बालकमें भी हो सकता है। शान्तिमय असहयोग क्षत्रियत्वके इस गुणका विकास करनेका साधन है। इमाम हुसैन और हसन क्षत्रिय थे। उनपर जुल्म करनेवाला अत्याचारी था। बालक प्रह्लाद क्षत्रिय था। हिरण्यकशिपु राक्षस था। वर्णाश्रमका यह अर्थ नही कि क्षत्रियत्व अन्य वर्णोमे होता ही नही। चारो वर्णोंमे वह गुण होना चाहिए लेकिन क्षत्रिय जातिमे यह गुण प्रधान होना चाहिए और इसका विकास करना ही उनका प्रमुख ध्येय होना चाहिए। लेकिन जो क्षत्रिय कुलमें जन्म लेकर अपने पशुबलका दुर्बल व्यक्तिपर प्रयोग करता है वह क्षत्रिय नही बल्कि अक्षत्रिय, राक्षस है। भारतसे क्षत्रियत्वका लगभग लोप हो गया है। इस शान्तिमय असहयोगका हेतु उसका फिरसे विकास करना है।

१. अप्रैल १९१९ में पंजाबमें मार्शल लॉके दिनोंमें ये सब अत्याचार लोगोंपर किये गये थे। देखिए खण्ड १७, पृष्ठ १२८-३२२।

२. इस घटनाके लिए देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ४२८-३२।

असभ्यता

माननीय गवर्नर महोदयकी कराची यात्राके दौरान जो पत्रक प्रकाशित किया गया था उसकी एक प्रति मुझे मिली है। उसमे ये वाक्य है :

> **गवर्नर आज सबेरे यहाँ आनेवाले हैं, उनके जलूसमें शामिल न हो। पूजनीय कांग्रेसका आदेश है कि वर्तमान सरकारके साथ किसी भी भारतीयको सहयोग नहीं करना चाहिए। सोमवार २१ तारीखके दिन हड़ताल करके आप सरकारको बता दें कि हमें स्वराज्य चाहिए। सब काम-धन्धे बन्द करके प्रार्थना करें कि हमें एक वर्षके भीतर स्वराज्य मिल जाये।**

असहयोगीको असभ्य व्यवहार नही करना चाहिए। ओहदेको जो सम्मान हम बादमे भी देना चाहते है, सम्मानसूचक उन शब्दोका व्यवहार करना हमे नही छोडना चाहिए। बम्बईके गवर्नरके विरुद्ध एक व्यक्तिके रूपमे अथवा पदके विरुद्ध हमारा असहयोग नही है। हमारा असहयोग तो इस पूरी राजनीतिके विरुद्ध है। जब अमुक गवर्नर अपने सूबेके दौरेपर आये और जब उसके विरुद्ध हमे खास कुछ कहना न हो तब हमारा हडताल करना निरर्थक है। उनके सम्बन्धमे उद्धत भाषामे लिखना असभ्यता है। हम जलियाँवाला बागका हत्याकाण्ड करनेवाले व्यक्तिको पूरे नामसे पुकारते है, जनरल डायर कहते हुए हमे क्षोभ नही होता, होना भी नही चाहिए। जो असहयोगी भाषाके रूढ नियमोकी अवहेलना करता है वह शान्तिके नियमको भग करता है।

बताना किसे ?

काग्रेसका आदेश प्रत्येक अवसरपर हडताल करनेका नही है, तब भी उपर्युक्त सार्वजनिक विज्ञप्तिमे ऐसा आभास दिया गया है कि कांग्रेसका वैसा आदेश है। हडताल करके हमे सरकारको क्या बताना है? हमे तो स्वराज्य अपनी शक्तिके द्वारा प्राप्त करना है। हम हडताल करके अगर शक्ति प्राप्त कर सकते हो तो हमे ऐसा अवश्य करना चाहिए। इस अवसरपर तो विज्ञप्ति ही यह सूचित करती है कि हमारी हड-तालका उद्देश्य सरकारको कुछ बतानेका था। सरकारको कुछ भी बतानेकी हमें बहुत जरूरत नही है। अथवा कुछ बताना ही है तो वह ठोस कार्यके द्वारा बताये और ठोस कार्य क्या है, यह काग्रेसने बता ही दिया है।

मेरी प्रार्थना

अन्त्यज-परिषद्‌के[1] समय मैंने जो प्रार्थना की थी उसके सम्बन्धमे लिखते हुए एक सज्जन लिखते है कि वे मेरी बात समझ नही सके है। मेरा भाषण सही-सही प्रकाशित हुआ है या नही, सो मै नही जानता। मोक्ष मेरी प्रार्थना है, मुझे मोक्ष ही प्रिय है। मेरे सब प्रयत्न इसी जन्ममे मोक्ष प्राप्त करनेके है। मै असहयोगके महान् आन्दोलनमे भी इसी कारण पडा हूँ। तथापि यदि मै अपने मनोरथमें इस जन्ममे सफल नही होता तो मै ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह मुझे दूसरा जन्म अन्त्यजके

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५७६-८१।

घरमे दे ताकि मै उन लोगोके दु:खोका पूरा-पूरा अनुभव प्राप्त करूँ और उन्हे कम करनेके लिए भारी तपस्या करूँ। मै मानता हूँ कि वैष्णवके रूपमे मैंने जो दया-धर्म सीखा है, जिसका मैंने तुलसी 'रामायण' मे से पान किया है, वह दया-धर्म मुझे यही प्रार्थना सिखाता है। अन्त्यजोपर हिन्दू धर्मके नामपर होनेवाला अत्याचार मुझे असह्य है, प्रत्येक हिन्दूके लिए वह असह्य होना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–५–१९२१

२८. टिप्पणियाँ

एक व्याघात

यदि अखबारोमे छपी खबरे तत्त्वत सही हो तो मालेगाँवके असहयोगी अपने सिद्धान्त, अपने विश्वास और अपने देशके प्रति सच्चे नही उतरे।[1] उन्होने प्रगति रूपी घड़ीकी सुइयाँ पीछेकी ओर घुमा दी। अहिंसा वह आधारशिला है जिसपर असहयोगका पूरा ढाँचा खडा किया गया है। अहिंसाके अभावमें हर कुर्बानी बेकार जाती है; जैसे कि कागजके फूल देखने-भरके ही हुआ करते है। अगर अखबारोमे छपी खबर सच है तो जो लोग स्पष्ट ही अपना कर्त्तव्य पालन कर रहे थे, इरादतन उनकी हत्या की गई है। यह हमला कायरतापूर्ण था। कुछ लोगोनें जान-बूझकर कानून तोड़ा। परिणाम दण्डके सिवा होता ही क्या।

इस प्रकार जेलकी सजाके प्रति नाराजी प्रकट करना किसी भी तरह उचित नही ठहराया जा सकता। जो लोग मालेगाँवकी तरह हिंसात्मक कार्य करते है, वे सरकारके वास्तविक सहयोगी है। यदि सरकार इस प्रकार असहयोग आन्दोलनको कुचल सके तो वह वडी खुशीसे अपने कुछ अफसरोको बलि हो जाने देगी। यदि ऐसी ही कुछ-एक हत्याएँ और हुईं तो हम जन-साधारणकी सहानुभूति खो बैठेंगे। मुझे पूरा यकीन है कि जनता हमारी ओरसे की गई हिंसाको बरदाश्त नही करेगी। जनता स्वभावसे शान्तिप्रिय है और उसने असहयोगका स्वागत इसी कारण किया है कि इसे समझ-बूझकर अहिंसात्मक रखा गया है।

तब हमें क्या करना चाहिए? हमे सार्वजनिक रूपसे और आपसी बातचीतमे भी हिंसाका सतत विरोध करते रहना चाहिए। बुराई करनेवालोके प्रति हमें जरा भी हमदर्दी नही दिखानी चाहिए। जिन लोगोने इन हत्याओमे हिस्सा लिया है उनसे हमें यही कहना चाहिए कि यदि उनके मनमे जरा-सा भी पछतावा हुआ हो तो वे आत्म-समर्पण

१. अप्रैल १९२१ में खिलाफत आन्दोलनके कार्यकर्त्ताओंपर चलनेवाले मुकदमेसे उत्तेजित होकर जन-समुदायने हिंसापूर्ण कार्रवाई कर डाली थी। जिसके फलस्वरूप एक पुलिस सब-इन्स्पेक्टर और चार सिपाही मारे गये थे।

कर दे। कार्यकर्त्ताओको तो अपनी बातचीतमे दोहरी सावधानी बरतनी चाहिए। उन्हे सरकार और उसके अफसरोके दोषोकी चर्चा बन्द कर देनी चाहिए, फिर वे चाहे यूरोपीय हो या हिन्दुस्तानी। लम्बी-चौडी डीगे मारनेके स्थानपर हमे काग्रेस द्वारा देशके सामने प्रस्तुत रचनात्मक कार्यक्रमपर ध्यान देना चाहिए। यदि जनता आन्दोलनके लिए धन, जन और साधन जुटाने आगे न आये तो भी हमे रोष प्रकट नही करना चाहिए। पुलिसके सभी आदेशोको पूरी तरह मानना चाहिए। जाने-माने कार्यकर्त्ताओपर मुकदमे चलाये जाने अथवा उनके जेल भेजे जानेकी अवस्थामे जलूस नही निकालने चाहिए और न हड़ताले ही होनी चाहिए। यदि हम निर्दोष व्यक्तियोके जेल भेजे जानेका स्वागत करे, जो हमें अवश्य करना चाहिए, तो हमे अपना आचरण निर्दोष बनाये रखनेका अभ्यास करना होगा। और यदि हमें कुछ विचार रखने या ऐसे कामोके कारण सजा मिले, जिन्हे करना हमारा कर्त्तव्य हो जैसे सूत कातना, चन्दा इकट्ठा करना, काग्रेसके सदस्य बनाना आदि तो हम इसे अपना सौभाग्य माने। सविनय अवज्ञा बिलकुल न करे। हमने गम्भीरसे-गम्भीर उत्तेजनाके सम्मुख भी अहिंसक बने रहनेका व्रत लिया है। इसके लिए हमे बड़ा सावधान रहना होगा, कही ऐसा न हो कि हमारी मूर्खतासे ही हमारी विजयकी घडी हार और अपमानकी घडीमें न बदल जाये। 'टाइम्स ऑफ इडिया'ने जिस परीक्षाका सुझाव दिया है, मैं पूर्णत उसके पक्षमे हूँ। यह मानना पड़ेगा कि प्रत्यक्ष रूपसे आत्म-बलपर आधारित होनेके कारण इस आन्दोलनकी महत्ताकी एकमात्र कसौटी इसके अनुयायियोकी परम निष्ठा ही हो सकती है। यदि इस निष्ठापर उचित रूपसे सन्देह करनेका कोई मौका दिया गया तो उसमे ऐसी शक्तियोको प्रवेश करनेका अवसर मिल जायेगा जो उसके नैतिक रूपको नष्ट किये बिना नही रहेगी।

सिन्ध-चर्चा

सिन्धका कार्यक्रम बडा व्यस्त रहा। २४ तारीखसे ३० तारीखके बीच हैदराबाद, कराची, लरकाना, शिकारपुर, सक्खर, रोहडी, कोटडी और मीरपुर खासकी यात्रा नि.सन्देह एक काफी बड़ा काम था। और सक्खरके श्री मूलचन्दने[1] ठीक ही कहा . "काम आधा ही हो पाया।" दूसरा मित्र बोला, "खैर, कुछ नही से तो आधा ही भला।" नि सन्देह सिन्धको अन्य किसी भी प्रान्त जितने बढिया साधन उपलब्ध है। उसके पास कार्यकर्त्ता है, धन और योग्यता भी है। यदि वह चाहे तो नेतृत्व कर सकता है। लेकिन ऊपर बताई गई सुविधाओके रहते हुए भी आज वह ऐसा करनेमें असमर्थ है। २५ तारीखको 'यग सिन्ध'मे[2] प्रकाशित अपने पत्रमे मैं बादके अनुभवोके बावजूद कोई परिवर्तन करनेकी जरूरत नही समझता।

कराचीकी हालत सबसे खराब है। सिन्धमें जिलेवार दल हैं और उनको राह दिखानेवाला कोई केन्द्रीय सगठन नही है। लेकिन कराचीमें तो कोई दल भी नही है,

१. एक वकील जिन्होंने गाधीजीके दौरेके अर्सेमें वकालत छोड दी थी।

२. यह प्राप्त नहीं है।

गुट कई है। रुपये-पैसेका हिसाब-किताब रखनेके सम्बन्धमें जिस गडबड़ीकी शिकायतें मेरे कानमे पड़ी वे कराचीके बारेमें ही थी। मुझे बताया गया था कि वहाँके सार्वजनिक राष्ट्रीय स्कूल अपना हिसाब प्रकाशित नही करते। कराची किसी एक नेताको नही मानता। मैंने तो धनका गबनतक किये जानेके आरोप सुने है। मै कह नही सकता कि ये आरोप किस हदतक सही है। परन्तु इतनी अधिक बार इतने अधिक लोगोने इन आरोपोकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया है कि मैं समझता हूँ कि मुझे जनसाधारणकी निगाहमें यह बात अवश्य ला देनी चाहिए। जनता जो धन हमें देती है उसे हम पाई-पाईका हिसाब देनेके लिए बाध्य है। राष्ट्रीय स्कूलोके सचालकोसे मैं यह कहूँगा कि वे अपनी आमदनी और खर्चका न सिर्फ पूरा-पूरा हिसाब दे वरन् अपने स्कूलोको सार्वजनिक व्यवस्थाके अधीन कर दें। मेरे खयालसे कोष केवल दो ही होने चाहिए — एक तिलक स्वराज्य-कोष और दूसरा खिलाफत कोष। सभी प्रकारके कार्य इन दोनोमें से किसी एक सगठनके अधीन होने चाहिए। सभी स्कूलोका खर्चा इन दोनों कोषोसे ही चलाया जाना चाहिए। अलग-अलग कामोके लिए अलग-अलग धन जमा नही करना चाहिए। हमे अपनी शक्ति और साधनोको एकत्र करके उनको सुसगठित रूप देना है; अनेक सगठन खडे करके उनको छिन्न-भिन्न नही करना है। अपने आपको स्वराज्य पाने योग्य सिद्ध करनेके लिए हमे चाहिए कि हम अपने आपसी मतभेद समाप्त कर दे, ईर्ष्या-द्वेषसे दूर रहे, केन्द्रीय सगठनका नियन्त्रण माने; बड़ी-बड़ी रकमे इकट्ठा करने और उन्हे ईमानदारीसे खर्च करनेके योग्य बने, अपने बच्चोकी शिक्षाका प्रबन्ध स्वय करे, अपने झगड़ोंको स्वय निबटाये, भोजन और वस्त्रके सम्बन्धमें प्रत्येक गाँव आत्मनिर्भर बने और अस्पृश्यता तथा मद्यपान-जैसी देश-व्यापी बुराइयोको निकाल बाहर करें।

सिन्धमे हर जगह राष्ट्रीय स्कूल खुल रहे है। इनके प्रबन्धकोको मै आगाह कर देना चाहता हूँ कि उनको इनके लिए लम्बा-चौडा बजट नही बनाना चाहिए। मेरा खयाल है कि कमसे-कम इस सालके लिए प्रत्येक स्कूल और कालेजको मुख्यत: धुनाई और कताईकी संस्था बन जाना चाहिए। उसको अपने महीनेका खर्च अपने यहाँ पढ़नेवाले लड़के-लड़कियोके श्रमसे प्राप्त आयसे पूरा करना चाहिए। बड़ा खर्च तो सिर्फ मामूली फर्नीचर और चरखोकी खरीदपर होना चाहिए। अभी अंग्रेजीके अध्ययनके लिए थोड़ा भी समय रखकर हमें राष्ट्रका समय नष्ट नही करना चाहिए। यदि स्वराज्य एक सालके अन्दर हासिल करना हो और यदि असहयोग कार्यक्रम तथा अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सकल्पोमें हमारी आस्था हो तो ईमानदारीका यही तकाजा है कि हम अवश्य ही कुछ आधार-भूत सिद्धान्तोंको मानकर चले।

खैर, आलोचना तो काफी हो चुकी है। वहाँ ऐसी भी बहुत-सी बातें थी जिनसे आशा बँधती है। जनताका अदम्य और विभोर कर देनेवाला उत्साह देखकर मन पुलकित हो उठता था। सिन्धकी महिलाओने उदारतापूर्वक तिलक स्मारक-कोषमें दान दिया है। २५,००० रु०की थैली भेट करके कराची सबसे आगे रहा। यह थैली मुझे सौपी गई है और कहा गया है कि उसे मै जैसे चाहूँ खर्च करूँ। मैं तो इसे तिलक स्मारक-कोषमे देनेका ही निश्चय कर सकता हूँ।

जमा किये गये धनका ब्यौरा मोटे तौरपर कुछ इस प्रकार है:

कराची	३०,०००
लरकाना	१,०००
शिकारपुर	१५,०००
सक्खर	१०,०००
रोहड़ी	१,०००
नवाबशाह	५,०००
हैदराबाद	१५,०००
मीरपुर खास	१,०००
फुटकर	१,०००

कई असहयोगी छात्र सिन्धमे बड़ा ही अच्छा कार्य कर रहे हैं। मुझे जो घटना सबसे ज्यादा उत्साहवर्द्धक लगी वह यह थी कि शिकारपुरमे आपसमे बडे जोरका झगड़ा हो गया था जिसके फलस्वरूप अनेक जाने-माने लोगोंको कैद भी हो गई थी, लेकिन साधु वासवाणीकी[1] कोशिशोके फलस्वरूप अब वे अपने मतभेदोको दूर करनेमे कामयाब हो गये है। इसका स्वाभाविक परिणाम यह निकला कि गिरफ्तार किये गये सभी व्यक्ति रिहा कर दिये गये हैं। अगर हममे कभी झगडा हो ही नही तो हम मनुष्यता-से ऊपर उठे हुए कहलायेंगे। लेकिन जब हम उदारता दिखाकर मैत्रीपूर्ण ढगसे अपने मतभेदोको दूर कर ले तब हम अपने मनुष्य होनेका परिचय देते है।

हड़तालका दुरुपयोग

कराचीके एक सज्जनने मुझे पत्र लिखकर इस बातपर बड़ा खेद प्रकट किया है कि उस शहरमे बड़ी जल्दी-जल्दी हड़तालें होती हैं।

इसी विषयपर मैंने 'इडियन सोशल रिफॉर्मर' की भी एक कतरन देखी है। मैं 'इडियन सोशल रिफॉर्मर' की इस आलोचनासे सहमत हूँ कि इधर कुछ दिनोसे बात-बातपर हड़तालें होने लगी है और उनकी गम्भीरता तेजीसे घटती जा रही है। ६ और १३ अप्रैलकी तिथियाँ[2] यदि इतनी पुनीत न होती तो मैं तो इन दो अवसरो-पर भी हडताल करनेकी सलाह न देता। हड़ताल या तो किसी असाधारण बातके प्रति विरोध प्रकट करनेके लिए की जानी चाहिए या किसी धार्मिक प्रदर्शनके रूपमे। परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयकी कराची-यात्राके अवसरपर हड़तालकी घोषणा करनेका कोई अर्थ नही था। यदि वह उनकी जातके खिलाफ विरोध प्रकट करनेके लिए की गई थी तो वह एक बड़ी कुरुचिपूर्ण बात थी; क्योकि मेरे खयालसे वे एक बहुत ही समझदार अधिकारी है, और यदि कुटिलतापूर्ण शासन व्यवस्थाके प्रशासनके अन्तर्गत

१. टी० एल० वासवाणी; गीता मेडीटेशन्स, द फेस ऑफ बुद्धा आदि पुस्तकोंके लेखक; पूनामें मीरा शैक्षणिक संस्थाओंके संस्थापक।

२. अप्रैल १९१९ में जलियाँवाला बागकी घटनाके बादसे देशमें ६ अप्रैलसे आरम्भ होनेवाला सप्ताह 'राष्ट्रीय सप्ताह' के रूपमें मनाया जाता था। देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ४७३-७५।

रहकर उन्हे काम न करना पडता तो वे एक लोकप्रिय गवर्नर होते। लोगोंके जेल भेजे जानेपर अथवा उनको रिहा करानेकी दृष्टिसे हडताले करना भी इतना ही कुरुचिपूर्ण है। किसीके जेल भेजे जानेपर हमारे मनमे भयका सचार नही होना चाहिए। अन्यायी शासनके अधीन निर्दोष व्यक्तियोका जेल जाना उसी प्रकार स्वाभाविक माना जाना चाहिए जैसे अस्वास्थ्यकर स्थान व परिस्थितियोमे रहनेवाले लोगोका बीमार पड़ जाना। जैसे ही जेलोका डर हमारे दिलोसे निकल जायेगा वैसे ही सरकार हमें जेल भेजना बन्द कर देगी। जब सरकारकी अधिकसे-अधिक भयावह सजाओ, यहाँतक कि डायरशाहीसे भी हमारे मनोमे भयका संचार न हो सकेगा तब सरकारका अस्तित्व अपने आप मिट जायेगा या वह अपने-आपको सुधार लेगी। इसीलिए जेल भेजे जानेके सम्बन्धमे हड़ताल करना घबराहट और भयका द्योतक है, इस कारण उसको वर्जित मानना चाहिए। मैं 'इडियन सोशल रिफॉर्मर' की इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि स्थानीय नेताओको प्रधान कार्यालयकी अनुमति लिये बिना हड़तालकी घोषणा नही करनी चाहिए। मैं तो यही कहूँगा कि सामान्यतः ६ और १३ अप्रैलको छोड़कर अन्य सभी अवसरोपर हड़तालकी घोषणा अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और केन्द्रीय खिलाफत कमेटीकी सम्मिलित रायसे की जाये। जल्दी-जल्दी हडताले करके उन्हें महत्त्वहीन बना देना अनिष्टकर है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४–५–१९२१

२९. सवालोंका सिलसिला[1]

पहले सवालका जवाब मैं एक अलग लेखमे दे रहा हूँ।[2] दूसरे सवालके बारेमें मेरा खयाल ऐसा है कि ईश्वरका भय माननेवाले लोग ही सच्चे असहयोगी बन सकते है। लेकिन असहयोगका कार्यक्रम अपनानेके लिए किसीको अपने धर्म या विश्वासका उल्लेख करना जरूरी नही है। जिसे अहिंसामे विश्वास हो और जो असहयोगके कार्यक्रमको मंजूर करे ऐसा हर आदमी अवश्य ही असहयोगी बन सकता है। तीसरे सवालके बारेमे मैं ऐसा समझता हूँ कि पत्र-लेखकने परिस्थितिकी वास्तविकताको समझनेमे भूल की है। देशने पूर्ण असहयोग शुरू नही किया इसका कारण विश्वास या इच्छाकी कमी न होकर योग्यता अथवा तैयारीका न होना है। इसीलिए तो अभीतक सरकारी कर्मचारियोसे नौकरियाँ छोड़नेकी बात नही कही गई है। सरकारी कर्मचारी जब भी चाहे नौकरी छोड़नेके लिए स्वतन्त्र है। लेकिन उनसे सरकारी नौकरी छोड़नेकी बात तभी कही जा सकती है जब हिंसाके न भड़क सकनेकी पूरी और समुचित व्यवस्था कर ली गई हो। अतएव जबतक देश नौकरी छोड़नेवाले प्रत्येक व्यक्तिको कोई दूसरा काम

१ बरेलीके अहमद हुसैनने १५ अप्रैलको गांधीजीसे चार प्रश्न लिखकर पूछे थे। देखिए परिशिष्ट १।
२ देखिए अगला शीर्षक।

मुहैया कर देनेकी स्थितिमे नही हो जाता तवतक नौकरी छोडनेकी बात नही उठाई जा सकती। अवतक हमारा ऐसा न करना किसी मसलहतके अन्तर्गत न माना जाये जैसा कि आमतौरपर माना जा रहा है। शुद्धतम धर्मशीलतासे बढकर कोई मसलहत हो ही नही सकती। ऐसी वहुत-सी बाते है जो विधि-सम्मत तो है किन्तु उपयुक्त विलकुल नही होती। असहयोगका आदर्श ही हमारी विधि है और वह देशके सामने है।

चौथा सवाल स्वराज्यके अर्थके बारेमे है। स्वराज्यकी मेरी सीधी-सादी व्याख्या यह है कि भारत अपना कामकाज बिना किसी बाहरी दखलके कर सके। उसे अपने सेना सम्बन्धी व्यय और राजस्व-प्राप्तिका तरीका अपने ढगसे इस्तेमाल करनेकी आजादी होनी चाहिए। उसमे अपने सारे सैनिकोको, वे कही भी क्यो न हो, वापस बुलानेकी क्षमता होनी चाहिए। यह काम कैसे होगा या कैसे किया जा सकता है, यह सब देशपर, देशकी जनतापर निर्भर है। जनता द्वारा स्वतन्त्रतापूर्वक चुने हुए भारतके प्रतिनिधियोको ही इसके अमलका तरीका तय करना चाहिए। अगर एक सालके अन्दर स्वराज्य कायम नही किया जा सका और मेरा बस चला तो स्कूल छोडनेवाला एक भी लडका लौटकर मदरसे वापस नही जायेगा और न वकालत छोड़नेवाला कोई भी वकील फिरसे अदालतमे लौटेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-५-१९२१

३०. अफगानी हमलेका हौआ

एक पत्र-लेखकने कई सवाल पूछे है, जिन्हे पाठकोके लिए इसी अकमे दूसरी जगह दिया जा रहा है।[1] उनका सबसे अहम सवाल मौलाना मुहम्मद अलीके भाषणके सम्बन्धमे है जो उन्होने अफगान हमलेकी आशकाके सम्बन्धमें दिया था। उन्होने मौलाना मुहम्मद अलीके जिस भाषणका हवाला दिया है उसे मैने पढा नही है। लेकिन अगर अफगानिस्तानका अमीर ब्रिटिश सरकारसे लड़ाई छेड़ दे तो मौलाना मुहम्मद अली कुछ करे या न करे मै खुद जो-कुछ करूँगा वह एक तरहसे अमीरकी मदद ही कहलायेगी अर्थात् मैं अपने देशवासियोसे खुल्लमखुल्ला यह कहूँगा कि जो सरकार देशका विश्वास खो चुकी है उसे सत्तारूढ बने रहनेमे मदद देना गुनाह है। दूसरी ओर मै देशवासियोसे यह भी नही कहूँगा कि वे अमीरकी मददके लिए धन इकट्ठा करे। ऐसा करना अहिंसाकी उस भावनाके विपरीत होगा जिसे हिन्दू और मुसलमान दोनोने खिलाफत, पजाब और स्वराज्यकी खातिर सिद्धान्तके रूपमे अपनाया है और मेरा खयाल है कि जो-कुछ मैने कहा है मौलाना मुहम्मद अलीके भाषणका अभिप्राय उससे अधिक नही होगा। जबतक हिन्दू-मुस्लिम समझौता बरकरार है तबतक वे इसके सिवा अन्य कोई बात कह भी नही सकते। मुसलमान चाहे तो समझौता तोडनेके

१. देखिए पिछला शीर्षक।

लिए आजाद है। लेकिन गौरसे देखनेपर पता चलेगा कि समझौता टूट नही सकता। समझौतेको तोड़नेका अर्थ भारतके ध्येयको मिट्टीमे मिला देना होगा। हिन्दू और मुसलमान मिलकर सयुक्त रूपसे सशस्त्र विद्रोह करे, ऐसी कोई सम्भावना भी मुझे आज दिखाई नही देती। और अकेले मुसलमान सशस्त्र विद्रोहकी किसी भी योजनामे सफलता पानेकी उम्मीद नही कर सकते।

फिर भी मै पाठकोसे यही कहूँगा कि वे अफगानी हमलेके हौएमे जरा भी विश्वास न करे। सैनिक मामलोके अग्रेज विशेषज्ञोकी जुबानी हमे अकसर इस रहस्यका पता चलता रहा है कि इस तरहके दंड-अभियान सैनिकोको फौजी प्रशिक्षण देनेकी गरजसे अथवा निठल्ले बैठे हुए सिपाहियोको काम-धन्धेमे लगाये रखनेके लिए ही जान-बूझकर रचाये गये थे। कमजोर, निहत्थे, असहाय और भोले-भाले भारतीयोकी समझमें [आजतक] यह बात नही आ पाई है कि ब्रिटिश सरकार किस जादूके जोरसे उन्हे दासताके बन्धनमें जकड़े हुए है। यहाँतक कि आज हममे से कई आला दिमाग लोग सचमुच इस बातपर यकीन करते है कि विदेशी हमलोसे भारतकी रक्षा करनेके लिए ही फौजपर इतना जबरदस्त खर्च किया जाता है। मेरी रायमे तो सिखो, गोरखो, पठानो और राजपूतोके प्रति अर्थात् हम लोगोके प्रति विश्वास न होनेकी वजहसे और हमें जबरदस्ती अपना गुलाम बनाये रखनेकी गरजसे ही फौजपर इतना अनाप-शनाप खर्च किया जाता है। मेरा विश्वास है (अगर यह गलत सिद्ध हो तो गलती जरूर सुधार लूँगा) कि सरकारको अमीरके साथ सन्धिकी इतनी फिक्र रखनेका कारण रूसी हमलेका डर उतना नही है जितना कि यह अदेशा है कि भारतीय सैनिकोका उसपर विश्वास नही रहा है। आजकी हालतमे निश्चय ही रूसी हमलेका कोई भी डर नही है। बोल्शेविक खतरेपर तो मैंने कभी विश्वास ही नही किया। बंगालके कल तकके लाडलेके प्रिय शब्दोंमे "जनताके व्यापक प्रेमपर आधारित" सरकारको रूसी, बोल्शेविक या किसी भी अन्य खतरेसे डरनेकी जरूरत ही क्या है? भारत सन्तुष्ट और शक्तिशाली रहनेके साथ-साथ यदि इंग्लैंडसे मित्रता भी बनाये रखे तो वह अपने ऊपर किये जानेवाले किसी भी हमलेका कभी भी मुँहतोड जवाब दे सकता है। लेकिन इस सरकारने हमें जान-बूझकर पुसत्वहीन बना दिया है, हमें हमेशा अपने पड़ोसियो और ससार-भरसे डराकर रखा है और हमारे सम्पन्न साधन-स्रोतोका इस कदर दोहन किया है कि हमारा आत्म-विश्वास इस हदतक डिग गया है कि हम न तो अपने-आपको आत्म-रक्षाके लिए और न निरन्तर बढती हुई गरीबी-जैसी सीधी-सी समस्याका हल करनेके लिए समर्थ मानते है। इसलिए मुझे तो पूरी आशा है कि अफगानिस्तानके अमीर इस सरकारसे कभी किसी तरहकी सन्धि नही करेगे। ऐसी कोई भी सन्धि भारत और इस्लामके खिलाफ एक नापाक सौदेबाजी ही होगी। यह सरकार 'आपत्कालीन' उपायके रूपमें ओ'डायरशाहीका पल्ला थामे रहनेके लिए, मुसलमानोके प्रति अविश्वासी बनी रहनेके लिए (इस मामलेमे मै भारत सरकार और इंग्लैंडकी शाही सरकारमें कोई भेद करनेको तैयार नही), और भारतको उसकी पूरी बुलन्दियोतक उठनेसे रोके रखनेके लिए अफगानिस्तानसे भारतके खिलाफ हमलावर सन्धि करना चाहती है। मेरे खयालमे तो इस मामलेमे असहयोगियोकी सिर्फ एक ही राय हो सकती

है : जब हम खुद सरकारसे सहयोग नही कर रहे है तो यह कैसे चाह सकते है कि दूसरे उसके साथ सहयोग करे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-५-१९२१

३१. गांधी — तब और अब

'टाइम्स ऑफ इण्डिया' ने फिर मुझपर कपट करनेका आरोप लगाया है। उसके पिछले लेखमें भी यही आरोप व्यजित होता था। मैंने पिछले दिनो उस लेखके बारेमे इन स्तम्भोमें[1] लिखा था। मेरा लेख काफी सयत था। उसपर किसीको आपत्ति नही हो सकती थी। निष्कपटताके बारेमें मेरी एक प्रतिष्ठा बन गई है और मैं निष्कपट होनेका दावा भी करता हूँ, इसलिए मै अवश्य ही चाहूँगा कि मेरी इस प्रतिष्ठापर कोई आँच न आने पाये। "कुहरा"[2] शीर्षक मेरा लेख आलोचकोको मेरा जवाब समझा जाना चाहिए। मुझे जितना-कुछ कहना था मैंने उसमे कह दिया है। किसी भी मनुष्यको उसकी मृत्युसे पहले न्यायपूर्ण, निष्कपट या भला करार नही दिया जा सकता। लेकिन मै 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' के लेखककी कुछ गलत बयानियोको सही रूपमे पेश कर देना चाहता हूँ। मैंने जब सत्याग्रह शुरू करनेका ऐलान किया था तब भी मुझपर आरोप लगाये गये थे। कहा गया था कि मैंने राजनीतिसे अलग रहनेकी, गैर-राजनीतिक बने रहनेकी अपनी आन छोड़ दी है। दक्षिण आफ्रिकामें भी मेरे आलोचकोंने मेरे पिछले कामोका हवाला देकर ही मेरी आलोचना की थी। अभीतक जितने भी आन्दोलनोसे मेरा सम्बन्ध रहा है, सभीकी आलोचना हुई है और आलोचकोने मेरे पिछले कामकी सराहना करते हुए ही मेरे हर नये आन्दोलनकी आलोचना की है। मै यह तथ्य यह दिखानेके लिए पेश नही कर रहा हूँ कि वर्तमान आलोचकका आरोप गलत है बल्कि मै अनजाने बरते गये कपटाचार और आत्म-प्रवचनाके आरोपपर विश्वास न करनेके लिए अपने को ही मजबूत बनाना चाहता हूँ। मैंने सत्याग्रह-को मुल्तवी कभी नही किया था और न कभी सार्वजनिक जीवनसे सन्यास ही लिया था। हाँ, मैंने सविनय अवज्ञा आन्दोलन मुल्तवी किया था, वह आज भी मुल्तवी ही है। वह मैंने इसलिए किया था कि तब मेरा विश्वास था, और आज भी है, कि देश उसके लिए अभी तैयार नही है। मेरी हिमालय-जितनी बडी भूल यह थी कि मैंने देशकी तैयारीका गलत अन्दाज लगाया था। जिस ढगका असहयोग शुरू किया गया है उसमे ऐसा कोई खतरा नही है, जैसा कि सविनय अवज्ञामे है। असहयोगकी भाँति, सविनय अवज्ञा सदा ही एक कर्त्तव्य नही होता। इसीलिए मैंने कहा है कि मुझे असह-योग करनेकी सलाह देते जाना चाहिए चाहे उससे अराजकता फैलनेका अदेशा ही

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५६६-६७।

२. देखिए "कुहरा", २०-४-१९२१।

क्यो न हो। अब मान लीजिए कि अराजकता फैलानेवाले जोर ही पकड ले, तो क्या उस सूरतमें मुझे अपने पदक फिरसे धारण करने चाहिए या अपने मित्रोसे फिर पदकधारी बननेके लिए कहना चाहिए या वकीलोको फिरसे वकालत शुरू करनेकी सलाह देनी चाहिए? क्या अराजकता फैलनेके भयसे मुझे डायरशाहीमें विश्वास करनेवाली एक बेईमान सरकारके साथ सहयोग करने लगना चाहिए? मैं जानता हूँ कि अराजकतामे निष्ठा एक आसुरी चीज है, लेकिन डायरशाही तो उससे भी बुरी है, क्योंकि वह सवैंधानिक सत्ताकी नकाब चढाये हुए अराजकता ही तो है। सत्ताके आदेशपर व्यवस्थित ढगसे की जानेवाली अराजकता उत्कट विश्वासके आधारपर पनपनेवाली अराजकतासे लाख गुना बुरी है। इस दूसरे प्रकारकी अराजकता भडकनेपर ही मुझे जन-समुदायकी अराजकतासे अपने-आपको उसी तरह अलग रखना चाहिए जैसे कि मैं सरकार द्वारा की जानेवाली अराजकतासे अपने-आपको अलग रखता आया हूँ। मेरे तईं तो दोनो ही बुरी हैं, उनसे अलग रहना चाहिए। मैंने तो जलियाँवाला हत्याकाण्ड करानेवाले के खिलाफ भी प्रतिहिंसाकी कोई बात नही की। मैंने इससे ज्यादा तो कुछ नही कहा कि उन अपराधियोमें से जो अभीतक पदासीन हो उनको नौकरीसे निकाल दिया जाये और जो पेन्शने पा रहे हैं उनकी पेन्शने बन्द कर दी जायें। महन्त नारायणदासको पेन्शन देने या उनको पदासीन बनाये रखनेकी सलाह मैंने सिखोको नही दी। हाँ, मैंने सिखोको यह सलाह जरूर दी है कि हत्याये करनेवालो को दण्ड न दे, ठीक उसी तरह जैसे कि मैंने हत्याकाड करनेवाले पंजाबके सरकारी अधिकारियोके अपराध क्षमा कर देनेकी सलाह देशको दी है। अमृतसर और ननकाना दोनोके बारेमे मेरा आचरण एक-सा रहा है। मैं बार-बार कह चुका हूँ कि सरकारके साथ मेरा बरताव उसी तरहका है जैसा कि अपने प्यारेसे-प्यारे रिश्तेदारके साथ होता है। राजनीतिक क्षेत्रमे असहयोग असलमे घरेलू क्षेत्रमें बरते जानेवाले असहयोगका ही सैद्धान्तिक विस्तार है। वकीलो इत्यादिके साथ मेरे सम्बन्धका हवाला देना शोभा नही देता। सच तो यह है कि काग्रेस सगठनमे चन्द ही ऐसे पदाधिकारी वकील रह गये है जो अभीतक वकालत करते हैं।

मैं अपनी इस रायपर कायम हूँ कि जहाँ-कही असहयोगियोंका बहुमत हो वहाँ किसी भी ऐसे व्यक्तिको पदाधिकारी नही बनाना चाहिए जो पूरा-पूरा असहयोगी न हो। काग्रेस समितिने इस प्रस्तावको ठुकराया नही है। मुझे पता नही कि सूरतमे वकालत करनेवाले वकीलोने मुझे कोई मानपत्र दिया था या नही। लेकिन यदि वे भी मुझे मानपत्र दें तो मैं उसे निस्सकोच स्वीकार कर लूँगा, अवश्य ही मुझे यह छूट रहे कि मैं उनको गलत रास्तेसे हटाकर सही रास्तेपर ला सकूँ। अली बन्धुओके साथ मेरा जो सम्बन्ध है, उसे मैं अपनी खुश-किस्मती समझता हूँ और मुझे उसपर नाज है। परन्तु दक्षिण आफ्रिकामें तो मुझे हत्यारो और चोरोके साथ काम करना पड़ा था, वे कमसे-कम ऐसे लोग तो थे ही जो हत्या और चोरीके जुर्ममे जेलकी हवा खा चुके थे। हाँ, इतनी बात है कि उन्होने अहिंसाका पालन उतने ही सम्मानप्रद ढगसे किया था जितना कि एक सत्याग्रही करता है। मुझे तो तब और अबके गाधीमें कोई अन्तर दिखाई नही पड़ता, सिवाय इसके कि आज गांधीकी दृष्टि सत्याग्रहके बारेमे अधिक

स्पष्ट है और वह अहिंसाके सिद्धान्तको पहलेसे कही ज्यादा महत्त्वपूर्ण मानने लगा है। और मैं 'टाइम्स ऑफ इंडिया'के लेखकको आश्वस्त करना चाहता हूँ कि मेरी इस उक्तिमें कोई आत्म-वंचना भी नही है। सही कौन है यह तो भविष्य ही बतला सकेगा। वैसे पिछला सारा रिकार्ड तो मेरे ही पक्षमें जाता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-५-१९२१

३२. भाषण: कपड़वंजकी सार्वजनिक सभामें[1]

४ मई, १९२१

बोहरा कौमको[2] भी स्वराज्यकी और हिन्दुस्तानकी सेवा करनी है। उसे खिलाफतके कार्यमें अपना योगदान देना है। स्वराज्यके काममें मैं धनिकोंकी पूरी-पूरी सहायता प्राप्त करना चाहता हूँ। वे बाहरसे बहुत सारा धन कमा कर लाते हैं। उनके लिए यह जरूरी है कि वे तिलक स्वराज्य-कोषमें अपना पूरा-पूरा हिस्सा दें। "दान" शब्दकी रूढ़ि पड़ गई है, इसलिए मैं दान शब्दका प्रयोग करता हूँ अन्यथा यह प्रयोग व्यर्थ है। कारण तिलक स्वराज्य-कोषमें देना तो व्यापार है, स्वराज्यका सौदा है, तिलक महाराजके प्रति अपना कर्त्तव्य है। सौदेमें धन देना अथवा अपना फर्ज अदा करनेके लिए दिए जानेवाले धनको दान नही कहा जा सकता।

× × ×

जिस तरह हमारी जनता गोरी चमड़ीसे डरती है उसी तरह भंगी हमसे डरते हैं। जबतक हम उनके लिए गोरी चमड़ेवाले बने रहेंगे तबतक स्वराज्य भी हमको दूरसे नमस्कार करेगा, ऐसा समझिए। हम उन्हें भंगी मानकर अपनेसे दूर रखते हैं इसीलिए सारी दुनिया हमें भंगी मानती है और पास नहीं फटकने देती। आफ्रिकासे आनेवाले किसी व्यक्तिसे आप पूछिए कि वहाँ शराब पीनेवाले, वेश्यागमन करनेवाले, जुआ खेलनेवाले गोरे भी उसे छूते हैं या नहीं? रेलमें, ट्राममें, फुटपाथपर हम गोरोंके साथ नहीं चल सकते, जिस स्थानपर गोरे व्यापार करते हैं उस स्थानपर हम व्यापार नहीं कर सकते, जहाँसे वे रोटी लेते हैं वहाँसे हम रोटी नहीं ले सकते। सब जगह ऐसा नहीं होता, यह मैं स्वीकार करता हूँ। मैं अंग्रेजोंके साथ अन्याय नहीं करता। मेरा उनके साथ कोई झगड़ा नहीं है। लेकिन मैंने अनेक स्थानोंपर देखा है कि जहाँ गोरे रहते, सोते, पीते अथवा खाते हैं वहाँ हमें रहने आदिकी अनुमति नहीं है। गोरे तो शरीर छू जानेमें बीमारीका भय बताकर आरोग्यके बहाने हमें अपनेसे दूर रखते हैं। आत्माको छूत लगेगी ऐसा वे नहीं समझते। लेकिन हम तो यह मानने लगे हैं कि अन्त्यजके छू जानेसे हमारी आत्मा कलुषित हो जायेगी और हमें ईश्वर सजा देगा।

१. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

२. कपड़वंजके बहुतसे निवासी मुस्लिम बोहरा थे लेकिन वे सभामें शामिल नहीं हुए थे।

ईश्वर तो हमे सजा अभी दे रहा है। अकाल, सकट, प्लेग, हैजा, राज्यके अत्याचार — इन सबसे बढकर और क्या क्लेश हो सकता है? इसीलिए मै हिन्दू-समाजसे अनुरोध करके कहता हूँ कि हिन्दुत्व अस्पृश्यताका पोषण करनेमे नही, उससे छुटकारा पानेमे है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८–५–१९२१

३३. भाषण : महिलाओंकी सभा, कठलालमें[1]

४ मई, १९२१

धर्मको बनाए रखना न तो ब्राह्मणोके हाथमे है और न पुरुषोके। वह तो स्त्रियो-के ही हाथमें है। समाजका आधार-स्तम्भ घर है और धर्मका विकास घरमे होता है। घरकी गन्ध समस्त समाजमे फैलेगी। किसी भी शहरमें व्यापार चाहे कितने ही जोरो-पर क्यो न हो, उस शहरकी चाहे कितनी ही आबादी क्यो न हो लेकिन अगर वहाँ घर अच्छे न हो तो मै तुरन्त कहूँगा कि यह नगर अच्छा नही है। स्त्रियाँ घरकी देवी है। वे यदि धर्मका पालन न करे तो जनताका सत्यानाश हो जाये। श्रीकृष्णने यादव-कुलका सहार किया था। और उसका कारण यही था कि यादवोकी स्त्रियाँ व्यभिचारिणी हो गई थी, वे अपने धर्मको भूल गई थी। इसलिए मै आपसे पवित्र होकर धर्मका पालन करनेके लिए कहता हूँ और पवित्र होनेपर आपसे यह आशीर्वाद माँगता हूँ कि मुझे तथा मौलाना शौकत अलीको अर्थात् हिन्दुओ और मुसलमानोको स्वराज्यकी, धर्मकी इस लड़ाईमे यश मिले।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८–५–१९२१

३४. पारसियोंके प्रति मैं क्यों आशावान हूँ?

पारसी जबसे हिन्दुस्तानमे आये है तभीसे उन्होने हिन्दुओके साथ की गई अपनी शर्तोका भलमनसाहतके साथ पालन किया है।

जब बम्बईमे सब लोगोके मुँहपर ताला लगा हुआ था तब पारसियोने ही मुँह खोला था।

पारसियोने गुजरातकी जो सेवा की है वह सदैव याद रहेगी।

खबरदार[2] और मलबारी[3]-जैसे पारसियोने गुजराती भाषाकी भी कम सेवा नही की है।

[1] गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

[2] आर्देशिर फ्रामजी खबरदार (१८८१–१९५४)।

[3] बेहरामजी मेरवानजी मलबारी (१८५४–१९१२); कवि, पत्रकार और समाज-सुधारक।

पारसियोने कभी धार्मिक झगड़ा नही किया और अपने धर्मका स्वतन्त्र रहकर पालन कर सकनेमे सन्तोष माना है।

जगत्मे पारसियोकी उदारताके समकक्ष कोई नही पहुँचता।

पारसियोमे दूसरोकी अच्छाईको परखने और उसे अपनानेकी भी पर्याप्त शक्ति है।

पारसियो-जितनी छोटी किन्तु विख्यात कौम दुनियामे दूसरी नही है। इससे मैं अनुमान करता हूँ कि उनके धर्मशास्त्र उच्च कोटिके है। वे सरल और ऐसे है जिन्हे बच्चा भी समझ सकता है।

लेकिन अगर पारसी कौम अपनी प्राचीन महत्ताकी पूंजीपर निर्भर रहकर ससार-से जूझना चाहे तो भारी भूल करेगी।

अन्य लोगोके समान ही पारसी भी इस समय पश्चिमकी विषैली हवासे ग्रसित है। उन्होने प्राचीन सादगीको त्यागना आरम्भ कर दिया है। उनमे भोग-विलास बढता जा रहा है। इस कौमके पास बहुत ज्यादा पैसा होनेके कारण कुछ लापरवाही आ गई जान पड़ती है। छोटी कौम नीतिके चरण-चिह्नोपर चलती हुई जिस तरह शीघ्र उन्नति कर सकती है उसी तरह अगर वह अनीतिका अनुसरण करे तो शीघ्र ही गिर भी सकती है और यदि वह गिरती है तो उसका नाश होनेमे देर नही लगती।

मेरे पिताके पास एक पारसी सज्जन आया करते थे। उनसे उनका सम्बन्ध बहुत निकटका था। मै उस समय बालक था। मै ईदुलजी सेठको कैसे भूल सकता हूँ? वे जब मेरे पितासे मिलने आया करते थे तब वे सरलताकी ही बात किया करते थे। वे स्वय बहुत सादे थे। वे राजकोटके ठाकोर साहबके सम्बन्धी भी थे। वे उनके सामने भी बेकार खर्च और आडम्बरके विरुद्ध बात करनेमे हिचकिचाते नही थे। वे जितने सादे थे उतने ही साहसी भी थे और उतने ही सज्जन भी। तभीसे मैं यह मानने लगा हूँ कि पारसी कौम चाहे तो बहुत-कुछ कर सकती है, बहुत-कुछ दे सकती है। मेरा विश्वास है कि पारसी कौम इस विषैली हवाके प्रभावसे बच जायेगी। उसका साहस, उसका धर्म उसे बचायेगा। और मुझे भरोसा है कि हिन्दुस्तानके बाशिन्दोकी भाँति पहलेके समान ही हिन्दुस्तानकी सेवा करेगी। ईश्वर उसे विवेक, सद्बुद्धि और हिम्मत दे। इस धर्म-युद्धमे पारसियोका भले ही जो भी योगदान हो लेकिन उनकी सज्जनताको हिन्दुस्तान कभी भुला नही सकता।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-५-१९२१

३५. एक पारसी बहनका पुरस्कार

जापानकी राजधानी याकोहामासे मेहरबाई भेसानिया नामक बहनने अत्यन्त प्रेमभरा पत्र लिखा है। वह कुछ दिनोसे मेरे पास ही पडा हुआ है। इसके लिए मै उस बहनसे क्षमा चाहता हूँ। इस पत्रको मैंने कुछ अर्सेके बाद पढा। बादमे, प्रकाशित करूँ अथवा न करूँ इस दुविधामे तथा अन्य कार्योमे व्यस्त रहनेके कारण कोई निश्चय न कर सका।

पुरस्कार घोषित करनेसे अच्छे राष्ट्रीय गीत मिल सकते है या नही, यह बात मुझे विचारणीय प्रतीत हुई। तथापि अन्तमे मै इस निष्कर्षपर पहुँचा कि अत्यन्त शुद्ध भावनासे एक बहनके पत्रको प्रकाशित न करना मेरे लिए उचित नही है। इसलिए वह पत्र मै नीचे दे रहा हूँ। मैंने उसमे से अपनेसे सम्बन्धित कुछ अश निकाल दिया है, कुछ-एक शब्दोको सुधारा है और अग्रेजी वाक्योका गुजरातीमे अनुवाद किया है। शेष पत्र मै जैसेका-तैसा प्रकाशित कर रहा हूँ। दूर बैठी एक बहन इस धर्म-युद्धमें इतनी दिलचस्पी लेती है, यह हर्षकी बात है।

पुरस्कारके प्रलोभनसे तो नही लेकिन एक बहनने इतनी दूर बैठे हुए जो इच्छा प्रकट की है उसे मान प्रदान करनेकी खातिर अगर किसीको देवी सरस्वती प्रेरणा प्रदान करे और गुजरातके कवि इस दिशामे प्रयत्न करेंगे तो मै उनका आभारी होऊँगा। सब कविताएँ तीस जूनके अन्ततक मिल जानी चाहिए। यदि एक ही विषयसे सम्बन्धित कोई बहुत अच्छी कविता हुई तो सारा पुरस्कार एक ही व्यक्तिको दे दिया जायेगा। लेकिन यदि एक भी कविता निश्चित स्तरकी न हुई तो पुरस्कार नही दिया जायेगा। परीक्षकका नाम मै फिर प्रकाशित करूँगा।[1]

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–५–१९२१

१. इसके बाद मेहरबाईका पत्र है जो यहाँ उद्धृत नही किया गया। इसमें उत्कृष्ट गीतोके लिए ७५ रुपयेके तीन पुरस्कारोकी घोषणा की गई थी: पहला गीत वह जिसमें भगवान्के वे सब नाम आ जाते हो जिनसे उसे विभिन्न धर्मोके लोग सम्बोधित करते हों; दूसरा गीत वह जिसमें लोकमान्य तिलकके जीवनसे पाठ ग्रहण करनेकी बात कही गई हो; और तीसरा वह गीत जिसमें असहयोगियोंकी अर्जुनसे तुलना करते हुए उसी तरह अपील की गई हो जिस तरह भगवान् श्रीकृष्णने भगवद्गीतामें की है।

३६. पत्र : देवचन्द पारेखको

सूरत
५ मई, १९२१

भाईश्री देवचन्दभाई,[1]

आपका तार मिल गया था। मेरा वहाँ आना असम्भव हो गया था। आप चाहे तो काठियावाडमे एक भी घर चरखेके बिना न रहे। लेकिन क्या खुद मरे बिना स्वर्ग जाया जा सकता है? क्या आप स्वय कातते है? बाहर, भीतर केवल खादीका ही प्रयोग करते है?

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० ५७२८) से।

३७. भाषण : महाराष्ट्र प्रान्तीय सम्मेलन, वसईमें

७ मई, १९२१

आपका प्रेम मुझे यहाँ खीच लाया है। मुझे दु ख है कि आपके बीच मै अधिक समयतक नही रह सकता। अध्यक्ष महोदयकी आज्ञासे मुझे जो-कुछ कहना है, सो मै सक्षेपमे कहूँगा।

पहले मुझे मूलशी पेटाके[2] सम्बन्धमे ही बोलना चाहिए। मुझे दु ख होता है कि मै अबतक वहाँ जाकर अपने भाइयोके कष्टोको खुद अनुभव नही कर सका हूँ। मुझे उसके बारेमे बहुत कम जानकारी है। मै समाचार-पत्र कदाचित् ही पढ पाता हूँ। जिसके बारेमे मै अधिक नही जानता उसके सम्बन्धमें कुछ भी बोलते अथवा लिखते समय हिचकिचाता हूँ; और यह स्वाभाविक भी है। तथापि इसकी गहराईमें उतरे बिना मैने 'यग इडिया' मे अपने विचारोको व्यक्त किया है। मूलशी पेटासे सत्याग्रहियोके जो प्रतिनिधि आये है उनके प्रति मै अपनी सहानुभूति प्रकट करता हूँ। अपने अधिकारोके लिए जो लोग लडते है उनके लिए मेरे मनमे हमेशा सहानुभूति रहती है। मै समझता हूँ कि मूलशी पेटाके लोग अपनी भूमिके स्वामित्वको कायम रखनेके लिए लड़ रहे है। मै उनके दावेमे उनके साथ हूँ। जो लोग देहका त्याग करके भी अपनी वस्तुकी रक्षा करते है, मै हमेशा उन लोगोके साथ हूँ। लेकिन सत्यकी खातिर जो मारनेके लिए तैयार होते है उनका मै कभी साथ नही

१. गाधीजीके सहपाठी और मित्र।

२. देखिए "टिप्पणियाँ", २७-४-१९२१।

दे सकता। वे सत्यकी खातिर लड़ते है या असत्यकी इतना निश्चय कर लेनेपर वे मेरी आवश्यक सहायता प्राप्त कर सकते है। मूलशी पेटाके लोग जब सत्याग्रह करनेके सम्बन्धमें मुझसे सलाह लेने आये थे तब मैंने कहा था कि अगर वहाँके लोगोमें इतनी ताकत है तो यह प्रयोग अवश्य आजमाने योग्य है। और उन्होंने सिद्ध कर दिया है कि वे यह ताकत रखते है। वे जितना प्राप्त कर सकते है उतना अच्छा है, लेकिन पूरी शान्ति तो उन्हें तभी मिल सकती है जब वे सदैवके लिए भयसे मुक्त हो जाये। जो व्यक्ति अपनी जमीन नही छोडना चाहता, उससे कानूनकी सहायतासे जबरदस्ती जमीन छुडवाना हमारे देशकी सभ्यता नही है। मेरे पास एक छोटा-सा मुकदमा था। उस व्यक्तिकी जमीन साधारण थी, लेकिन उसे बचानेकी खातिर वह मेरे पीछे पागलोकी तरह घूमता था। जैसे पिता अपने बालकको बेचनेको तैयार नही होता उसी तरह स्वाभाविक रूपसे व्यक्ति भी अपने पिताकी जमीनसे अलग नही होना चाहता। यह हमारा प्राचीन स्वभाव है। मुझे उम्मीद है कि हमारी टाटा कम्पनी मूलशी पेटामे सत्याग्रहियोके विरुद्ध कुछ भी नही करेगी। वह लोगोको खुश करके भले ही [जमीन] मुफ्त ले ले तो कोई बात नही है। किन्तु मुझे आशा है कि जबतक एक भी व्यक्ति नाराज हो तबतक वह जमीन लेनेके लिए कोई भी कदम नही उठाएगी। भूमि अधिग्रहण अधिनियमके द्वारा जमीन लेना भले ही पाश्चात्य सभ्यता हो, लेकिन जिस सभ्यताको मै राक्षसी मानता हूँ उससे मुझे कुछ लेना-देना नही। लेकिन जबतक मूलशी पेटाके लोग शान्तिपूर्वक अपना सघर्ष चलाते है तबतक सारे देशको उनका साथ देना चाहिए।

मै मूलशी पेटामे लछमनसिंह और दलीपसिंहके जैसी बहादुरी देखना चाहता हूँ। वे दोनो योद्धा एक अँगुली उठाए बिना ननकाना साहबमे महन्त नारायणदासके प्रहारोके विरुद्ध अडिग रहकर शहीद हो गये। लछमनसिंह और दलीपसिंहके मित्रोने उस दिन उन्हे मन्दिरमे जानेसे मना किया। [हालाँकि] महन्त नारायणदासने उन्हे मारनेकी तैयारियाँ कर रखी थी। लेकिन उन्होंने उत्तरमे कहा, "हम गुरु ग्रन्थसाहबके आगे शीश झुकायेंगे और इससे बढकर हमारा क्या सौभाग्य हो सकता है कि उस स्थितिमे हम मृत्युको प्राप्त हो।" उनके ये शब्द अक्षरश. सत्य निकले। लछमनसिंह गुरुद्वारेके अन्दर पहुँच गये थे। जब वे गुरु ग्रन्थसाहबके आगे शीश झुका रहे थे तब उनकी हत्या कर दी गई। दलीपसिंह बाहर रह गये थे। नारायणदास उनको कत्ल करनेके लिए बाहर आया। दलीपसिंहने उससे कहा, "तू पागल हो गया है।" दलीपसिंहके पास कृपाण थी, लेकिन उसे उन्होने म्यानमे ही रखा। उनका शरीर अन्य सिखोके समान ही कद्दावर था। वे चाहते तो दो-तीन व्यक्तियोको तो वही खत्म कर सकते थे। लेकिन यह उनके सिद्धान्तके विरुद्ध था। वे कांग्रेसकी 'अहिंसा' की आज्ञासे बँधे हुए थे। वे नारायणदासको समझाते हुए उसके ही हाथों मारे गये। तेतीस करोड़ लोगोंमे ऐसे दो व्यक्ति ही पर्याप्त नही है। सिखोमे ही नही वरन् हिन्दुओ और मुसलमानोमे भी ऐसे ही वीरोकी जरूरत है। लछमनसिंह और दलीपसिंहकी ताकत कम न थी। लेकिन उन्होंने तलवारसे किसीपर अत्याचार न करनेका निश्चय किया था। मूलशी पेटाके सम्बन्धमे मै इससे अधिक कुछ नही कहूँगा।

ननकाना साहबमे एक ओर जहाँ इन दो भाइयोने अत्यन्त सज्जनताका काम किया वहाँ मालेगाँवके निवासियोने उतनी ही हैवानियत दिखाई है। सब-इन्स्पेक्टरने चाहे जितनी गालियाँ क्यो न दी हो, चाहे जितना उत्तेजित क्यो न किया हो तो भी जो लोग काग्रेसको मानते है वे हत्या करनेका घोर कृत्य कर ही नही सकते। काग्रेसके अनुयायियोकी दृढ प्रतिज्ञा है कि भारतको आजाद करवानेके लिए हम किसीको भी नही मारेंगे, बल्कि स्वय मरेगे। वहाँ नारायणदासने क्या कम गालियाँ दी थी? मालेगाँवमें हमारे भाइयोने मनुष्यताका त्याग किया। इस तरह कोई स्वराज्य नही मिलता। मै एक वकीलके रूपमें नही वरन् भारतीयके रूपमे बोल रहा हूँ। ऐसे कृत्योको वन्द करके जब शान्तिका अपना दावा सिद्ध करेगे तभी और केवल तभी हम स्वराज्य प्राप्त करेगे, पजाबका न्याय प्राप्त करेंगे, खिलाफतका फैसला करायेंगे और आज न्यायके नामपर होनेवाले अत्याचारोको दूर करेगे। तब दुनिया देखेगी कि हमारी शान्तिकी ताकतके सामने बडे-बडे मन्त्रियोको अपना कथन रद्द करना पडा है, ओ'डायर तथा डायरकी पेन्शन बन्द करनी पडी है। तब वह समझेगी कि हमारे जैसी ताकत न तो आयरलैंडमे है, न रूसमे और न मिस्रमे। हमारा और उनका मुकाबिला ही नही हो सकता। हमारा आधार छल और गाली नही वरन् सचाई है। हम अभी कर देना बन्द क्यो नही करते? क्योकि मालेगाँवके पागलोके समान दूसरे पागल भी हिन्दुस्तानमे पडे हुए है। जो यह मानते हो कि इस 'शान्ति' से भी उच्च अस्त्र हमारे पास पडा हुआ है, उनसे मै दूर रहनेकी प्रार्थना करता हूँ। कमसे-कम वे इस आन्दोलनकी प्रगतिमें हस्तक्षेप तो न ही करे।

यह महाराष्ट्रकी सभा है। महाराष्ट्रके सम्बन्धमे मुझे क्या-क्या उम्मीदें है, यह मै पहले ही व्यक्त कर चुका हूँ। उसमे मेरी जो श्रद्धा थी वह अब भी कायम है। जब महाराष्ट्रके लोगोके दिलोमें इस आन्दोलनके प्रति पूरा विश्वास बैठ जायेगा तभी, मै जानता हूँ कि, मेरा काम पूरा होगा। जितना त्याग और ज्ञान महाराष्ट्रमे है उतना मैने कही और नही देखा। जहाँ ज्ञान और बलिदानका समागम होता है वहाँ यज्ञ सम्पूर्ण होता है। महाराष्ट्रमे जब यह आन्दोलन सच्चे उत्साहके साथ आरम्भ होगा तब इस देश और इस आन्दोलनको मेरे-जैसे साधारण मनुष्योकी अपेक्षा नही रहेगी। जबतक वह जाग्रत नही होता तभीतक मेरे लिए कुछ काम है। बहुतसे लोग कहते है कि महाराष्ट्र पीछे है। इस समय यह बात सच है। महाराष्ट्रमे जब थोडी अधिक श्रद्धा आ जायेगी तब उसकी शक्ति अपने-आप सिद्ध हो जायेगी। सूर्यके उदय होनेका जिस तरह ढिंढोरा नही पीटा जाता उसी तरह महाराष्ट्रकी जागृति भी खुद-ब-खुद सामने आ जायेगी। मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि वह महाराष्ट्रको शक्ति दे ताकि वह अपना पूर्ण योगदान दे। लोकमान्यकी आप-जितनी पूजा कोई नही करता। वे स्वराज्यके लिए ही जीवित थे, स्वराज्यके लिए ही जेल गये और स्वराज्यका ही कार्य करते हुए उन्होने देहत्याग किया। और अगर आप अपने-आपको उनका सच्चा वारिस सिद्ध कर दिखायेंगे तो हम इसी वर्ष स्वराज्य ले लेगे अथवा उसे लेते हुए मर जायेंगे। अगर आप उतना कर सकेगे तो मै कहूँगा कि तिलक महाराजने आपके बीच ठीक ही जन्म

लिया था। नही तो आप तिलक महाराजके अयोग्य ठहरेगे ऐसा कहनेकी मै आपसे अनुमति चाहता हूँ।

अगर आपको इस बातका विश्वास हो जाये कि इन पाँच-छ. महीनोमें हिंदुस्तानने जितनी प्रगति की है उतनी पहले कभी नही की थी तो आप इसी वर्ष स्वराज्य ले लेगे। तभी आप तिलक महाराजकी आत्माको शान्ति प्रदान करेगे। अभी तो उनकी आत्मा दु खसे आश्चर्य कर रही होगी कि महाराष्ट्रके लोगोमे अभीतक ऐसी श्रद्धा क्यो नही जागी जिससे वे अपनी तपस्यासे हिन्दुस्तानको उबारे।

मुझे उम्मीद है कि एक भी व्यक्ति इस तपश्चर्याका व्रत लिए बिना यहाँसे घर नही जायेगा। आपके हाथ उठा देनेसे मै मुग्ध नही हो जाऊँगा। मै तो मूर्तिपूजक हूँ। मुझे तो आपके कार्यकी प्रतिमा चाहिए, स्वर्गीय तिलक महाराजकी नही। हम स्वराज्यका सौदा करते है। मुझसे जब सिन्धी भाइयोने पूछा कि यदि हम एक करोड रुपया इकट्ठा नही कर सके तो? मैने जवाब दिया, "तो आप और मै साथ-साथ सिन्धु नदीमें डूब मरेगे।" मै जानता हूँ कि महाराष्ट्रमें पैसा कम है, लेकिन उसमे शक्ति अधिक है। उस शक्तिसे आप चाहे तो धनकी वर्षा कर सकते है। इस मण्डपमे, इसी क्षण आप क्या कर सकते है? यदि आपके दिलमें एक भी वस्तुके बारेमे आस्था न हो तो आप स्पष्ट कर दे कि "महाराष्ट्रके हम ज्ञानी लोग बेन्थम[1] और मिलके[2] दर्शनको घोटकर पी जानेके बाद इस निष्कर्षपर पहुँचे है कि गांधी जो कहता है वह निरा पागलपन है।" मुझे सिर्फ इतना ही दु ख होगा कि असहयोग ज्ञानातीत है; श्रद्धातीत नही। लेकिन अपना कर्त्तव्य निश्चित करना आपके हाथमे है। मै तो इतना ही कहूँगा कि आप जो-कुछ स्वीकार करे उसे हृदयसे स्वीकार करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२–५–१९२१

३८. मालेगाँवका अपराध

मालेगाँवके असहयोगियोने जो अपराध किया जान पड़ता है उससे प्रत्येक असहयोगीको शर्म आनी चाहिए।[3] मालेगाँवके लोगोने अपना धर्म छोडा, कर्म छोड़ा तथा देश और संघर्षको भारी नुकसान पहुँचाया है। हम सुसभ्य और सुसस्कृत होनेका दावा न करे यह और बात है। कालेमे काला नजर नही आता, लेकिन दूधमे काला तुरन्त दिखाई दे जाता है। उसी तरह जब हम साफ दिल होनेका दावा करके काली करतूते करते है तब सारा जगत् हमपर थूकता है। "हम तो धर्मयुद्धमे जुटे हुए है", "हमे खुद ही मरना है", "हमें किसीको मारना नही है"—ऐसी-ऐसी प्रतिज्ञाएँ करके हम हत्या

१. जैरमी बेन्थम (१७४८–१८३२); इंग्लैडके प्रसिद्ध अर्थशास्त्री व लेखक जिनके विचारोंका जॉन स्टुअर्ट मिलने विशद विवेचन किया।

२. जॉन स्टुअर्ट मिल (१८०६–१८७३)।

३. देखिए "टिप्पणियाँ", ४–५–१९२१।

करते है तो हम जगत्को, अपनेको और परमेश्वरको धोखा देते है। मालेगाँवके लोगोने ऐसा ही किया जान पड़ता है।

इस अकार्यसे हमारे सघर्षको जरूर धक्का पहुँचा है। और इससे अब स्वराज्य मिलनेमे अवश्य देर होगी। कौन जानता है कि हम महीने-पन्द्रह दिनमे ही स्वराज्य प्राप्त न कर ले? हमने जब आन्दोलन शुरू किया तब उसका जो वेग था उसकी अपेक्षा वह आज इतना बढ गया है कि अब हम अपना कदम कब वापस ले पायेगे, इसका कोई अन्दाज नही लगा सकता। लेकिन हम जितनी भूल करते है, स्वराज्य आनेमे उतनी देर तो होती ही है, इतना तो एक बालक भी कह सकता है। जिस तरह हिसाब करते हुए भूल करनेपर फिरसे हिसाब लगाना पड़ता है उसी तरह हमे भी करना होगा।

हमारी प्रतिज्ञा ऐसी है कि अधिकारी लोग हमें चाहे कितना ही उत्तेजित क्यो न करे तो भी हमे उनका विरोध नही करना है। हम मार खायेगे लेकिन हाथ नही उठायेंगे और झुकेंगे भी नही। ऐसा होनेपर भी लगता है मालेगाँवके असहयोगियोने एक सब-इन्स्पेक्टर तथा अन्य लोगोको मार डाला है।

कुछ-एक असहयोगियोने कानूनका सविनय भग किया, उन्हे सजा हुई — उन्होने उस सजाको झेल लिया, तिसपर भी लोगोने बलपूर्वक उन्हे छुडवाया। इस प्रकार खिलाफतका बचाव नही होता, स्वराज्य नही मिलता।

असहयोगका मुख्य और प्रधान स्वरूप शान्ति — अहिंसा — अमन है। जो शान्ति भग करते है वही सरकारके सच्चे सहयोगी है। उदार दलकी अपेक्षा अशान्ति पैदा करनेवालोसे सरकारको अधिक मदद मिलती है। दो-चार अधिकारियोको खोकर यदि सरकार असहयोगको तोड सकती है तो उतने नुकसानको वह सहज ही उठा सकती है।

मै अनेक बार लिख चुका हूँ कि शान्तिके बिना स्वराज्य अथवा खिलाफतके प्रश्नका निर्णय होना असम्भव है। वकील वकालत न छोडे, विद्यार्थी स्कूल न छोडे, अन्य लोग खुद अपनेसे सम्बद्ध असहयोग न करे तो काम चल सकता है, लेकिन कोई शान्तिको भग करे तो बिलकुल काम नही चल सकता। हिन्दू-मुस्लिम मित्रता, शान्ति और स्वदेशी अर्थात् चरखा, ये तीन तो अनिवार्य शर्तें है, लेकिन इनमे भी शान्ति मुख्य वस्तु है। इक्के-दुक्के लोगोको छोड़कर अधिकाश लोग खादी पहनने लगें तो हर्ज नही, थोडेसे हिन्दू और मुसलमान लड़े, यह भी सहन किया जा सकता है, लेकिन अगर एक भी व्यक्ति शान्ति भग करके खून-खराबी करता है तो यह असह्य है। इससे देशको भारी नुकसान होता है। शान्तिकी शर्त इतनी सख्त है।

लेकिन समस्त हिन्दुस्तानके लिए कौन उत्तरदायी हो सकता है? यह प्रश्न हमारी दुर्बलताका परिचायक है। लोगोके लूटपाट करनेपर जिस तरह सरकारमे उन्हे दबानेकी शक्ति है उसी तरह लोगोको अशान्ति फैलानेसे रोकनेकी शक्ति प्राप्त करनेमें ही स्वराज्य मिलनेकी सम्भावना है। हममे अगर इतनी शक्ति नही है कि हम लोगोको शान्ति बनाये रखनेके लिए प्रेरित कर सके तो हमें स्वराज्यका विचार छोड़ देना चाहिए। हम लोगोपर प्रभाव डाल सकते है, इसी विश्वासपर हमारे सघर्षकी इमारत

खडी है। यदि लोगोंको हम शान्ति बनाये रखनेकी बात न सिखा सकें तो हमें स्वीकार करना होगा कि हम स्वराज्य प्राप्त करनेके योग्य नही बने है। इसलिए सब स्वय-सेवकोको इस बातपर सबसे ज्यादा ध्यान देना चाहिए।

शराबी भले शराब न छोड़े, खिताबयाफ्ता भले खिताबसे चिपका रहे, अधिकारी भले बदतमीजीसे पेश आये, सिपाही भले हमे मारे, इतना होनेपर भी हम चुपचाप इसे सहन करे और शान्तिका त्याग न करे।

तब हम क्या करे? मालेगाँवके लिए हम क्या प्रायश्चित्त करे? पहले तो माले-गाँवके अपराधियोको ढूंढ निकालें और उन्हें समझाये कि जिन्होने अपराध किया है वे उसे स्वीकार करे तथा निश्चयपूर्वक फाँसीपर चढे। हम सब अपनी जुबानपर काबू रखे और दूसरोसे भी वैसा ही करनेके लिए कहे। हम तीखे भाषण देना छोड़ दे, प्रत्येक अवसरपर सभाएँ और हड़तालें करनेकी आदत छोड दे, सरकारके दोषोपर विचार करनेके बदले अपने दोषोको देखते हुए अपनी कमजोरीको पहचानना सीखे और उसे दूर करनेके उपाय ढूंढ़े। पण्डित अर्जुनलाल सेठी पकड़े गये। लोगोकी भीड इकट्ठी हो गई और उन्होनें खूब उपद्रव किया, इसे मैं कायरताका लक्षण मानता हूँ। वे जेल नही जाना चाहते, वे सेठीजीको भी जेल नही जाने देना चाहते। इसीसे जब-जब कोई पकडा जाता है तब लोग उपद्रव मचानेकी बातको ही महत्त्वपूर्ण मानते है। यदि सेठीजीके जेल जानेसे लोगोमे सचमुच शौर्य जाग पडा हो तो वे अपने कर्त्तव्यको और अधिक समझें। उन्हे जो असहयोग करना है उसे पूरा करे और स्वराज्य प्राप्त करके ही छोड़े। स्वय दुर्व्यसनोको छोडे, स्वय जो विदेशी कपड़े पहनते हो उन्हे फेक दे, चरखा न चलाते हो तो चरखा चलाना शुरू कर दें। सेठीजीके पकड़े जानेपर जिन्होनें धाँधली मचाई थी उनमे से कितने ही शराबी थे, कितने ही विदेशी वस्त्र पहननेवाले थे और बहुतसे तो चरखा चलानेवाले भी थे — यह बात ध्यान देने योग्य है। पिताके जीवित रहनेपर जो पुत्र उनके सद्गुणोका कम अनुकरण करता है लेकिन पिताके मरनेपर उनका सम्पूर्ण रूपसे अनुकरण करता है वह सपूत है, न कि वह जो खूब रोता-धोता और कुहराम मचाता है अथवा बिरादरीको भोज देता है। उपद्रव मचानेसे, उपद्रव करके सेठीजीको छुडवानेसे स्वराज्य मिल सकता हो सो बात नही है। इससे तो स्वराज्य मिलनेमें कुछ विलम्ब ही होगा। लेकिन अगर हम अपने कर्त्तव्यका ज्यादा अच्छी तरहसे पालन करेगे तो स्वराज्य तो जल्दी मिलेगा ही इसके अतिरिक्त अपने बीच हम सेठीजीका स्वागत करनेकी अधिक शक्ति भी प्राप्त करेगे। इसलिए मालेगाँवके लिए एकमात्र प्रायश्चित्त यह है कि हम स्वय अपने मनपर, अपने क्रोधपर अधिक काबू पायें, हम व्यसनोको छोड़ दे और चरखा चलायें तथा सिर्फ खादी पहनने लगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-५-१९२१

३९. टिप्पणियाँ

विचित्र आदेश

"शराबकी दुकानके आसपास तथा गाँवमे शराब पीनेके लिए जानेवाले लोगोको परेशान न करनेके सम्बन्धमे" बड़ौदा सरकारकी ओरसे एक विज्ञप्ति निकाली गई है जिसे देखकर बहुत दु:ख होता है। यह विज्ञप्ति निम्नलिखित है।[1]

शराव पीनेकी यह स्वतन्त्रता कैसी होगी? इसमें शक नही कि चोरी करनेवाले-को चोरी करनेका अधिकार है, लेकिन क्या साहूकारको उसे चोरी करनेसे रोकनेका भी अधिकार नही? कानून तो लोगोको चोरको मार भगानेका अधिकार भी देता है। तो फिर चोरकी स्वतन्त्रताकी रक्षा किस तरह हो सकती है? मद्य-निषेध करानेवाले लोग तो शरावीको समझा-बुझाकर रोकते है। इसमे स्वतन्त्रता कहाँ भग हुई? बड़ौदा सरकारकी विज्ञप्तिका स्पष्ट रूपसे यह अर्थ निकलता है कि कदाचित् शराब पीना एक सद्गुण है और शराबकी दुकानका अस्तित्व ही कदाचित् लोगोके लिए लाभदायक है। शरावीको अथवा मद्य-विक्रेताको कोई गाली दे, कोई उसे मारे अथवा उसपर अन्य प्रकारसे अत्याचार करे तो उसे बड़ौदा सरकार दण्ड दे, उसके विरुद्ध निषेधादेश जारी करे यह तो उचित है। लेकिन शराबकी दुकानोके आसपास खड़े होकर शराबीको अग्निमे न कूदनेके लिए कहने तथा उसे शर्मिन्दा करनेवाले व्यक्तिको अपराधी मानना, यह तो शराबीको प्रोत्साहित करनेके समान हुआ। मैंने बड़ौदाकी राजनीतिको कमसे-कम इतना लज्जाजनक तो नही माना था। मुझे तो अभीतक यही उम्मीद है कि ऐसी विज्ञप्ति विचारपूर्वक नही निकाली गई अपितु किसी निरकुश अधिकारीने अपनी ही जवाबदेहीपर इसे जारी किया है। यदि यह अनुमान सही है तो मैं बड़ौदा सरकारकी ओरसे इसे रद किये जानेका एक अन्य आदेश जारी किये जानेकी उम्मीद रखता हूँ।

शराबसे होनेवाली आय

जनताको यह बात ध्यानमे रखनी चाहिए कि आज शराब और अफीम आदिसे होनेवाली आयसे हमारे बच्चे शिक्षा पाते है। अगर नीति और धर्म सम्बन्धी हमारे विचार मन्द न पडे हो तो इस विषयकी ओर हम पूरा ध्यान दे तथा अपने बच्चोको पापकी कमाईसे शिक्षा न दे। चाहे जो हो, स्वराज्य मिलनेपर हमें इस बातसे जल्दसे-जल्द छुटकारा पाना है। शराब आदिका व्यापार हम कदापि न करे। हम जानते है कि प्रजा ऐसी स्थितिमें नही है कि वह नये करके बोझको सँभाल सके। बल्कि करोको तो हमें और भी कम करना होगा और तिसपर आज जितने बालकोको शिक्षा मिलती है उसकी अपेक्षा कही अधिक बालकोको हमे शिक्षा देनी होगी। मैंने जो

१. इसे यहाँ उद्धृत नही किया जा रहा है। विज्ञप्तिका आशय यह था कि शराब खरीदनेके लिए जो लोग दुकानमें जाना चाहते हैं उनकी स्वतन्त्रतामें लोग, विशेषत: विद्यार्थी बाधक न बनें।

सुझाव दिया है, यह कार्य उसीके द्वारा सम्भव है। फीस न ली जाये और उत्तम शिक्षा दी जाये, कर ज्यादा न लागू किये जायें। इस तरह चरखा-उद्योग आरम्भ करके हम "एक पन्थ दो काज" कर सकते है।

एक पारसी भाई द्वारा अपना बचाव

जलगाँवसे श्री फीरोजशाह तेमुलजी मिस्त्रीने बताया है कि उनकी शराबकी दुकान है। वे बचपनसे ही इस धन्धेमे लगे हुए है। उनका बहुत बड़ा परिवार है। उनकी आयु ५१ वर्षकी है। वे बताते है कि अगर आज वे दुकान छोड दे तो अन्य चार हिन्दू उसे लेनेके लिए तैयार बैठे है। ऐसी स्थितिमे अगर वे अपना धन्धा छोडकर अपना तथा अपने परिवारका निर्वाह करने के अयोग्य बन जाये तो इससे क्या हासिल होगा? इससे क्या शराबका धन्धा बन्द हो जायेगा? ऐसी है इन भाईकी दलीले, इनके प्रति मुझे पूरी सहानुभूति है। उनकी मुश्किले समझमें आ सकती है लेकिन ऐसे धर्म-सकटसे निकल जानेमे ही पुरुषार्थ है। यदि ये भाई शराब पीना अथवा बेचना पाप समझते है तो उपर्युक्त दलीलके लिए कोई अवकाश ही नही रह जाता। हजारो लोग पापकर्म करते है, किन्तु उससे हमे कोई पाप करनेका अधिकार नही मिल जाता। और पापकर्म करते हुए ही अगर हम अपने परिवारका पालन-पोषण करते हो तो उसकी अपेक्षा भीख माँगकर निर्वाह करना अधिक अच्छा है।

इन भाईने अपने पत्रमें और भी बहुत-सी बाते बताई है जो जानने योग्य और खेदजनक है। वे लिखते है कि वे देशी शराब बेचते है और स्वयसेवक उन्हे परेशान करते है लेकिन विलायती शराब पीनेवालोको तो रोकने अथवा कहनेकी भी हिम्मत नही होती। इसके अतिरिक्त वे लिखते है कि स्वयसेवक सिर्फ समझाते ही हो सो बात नही वे तो दुकानपर घेरा डालते है, गाली देते है तथा पुराने नौकरोको धमकी देते है। यदि धमकीसे काम नही चलता तो मारते भी है। दुकानदारोके हाथसे शराब छीन लेते है। जिसके पास शराब होनेका सन्देह हो, उसके घरकी तलाशी तक भी लेते है। कोई उसे अपनी दुकानसे चीजे नही खरीदने देता, और यदि कोई दुकानसे बाहर निकलता है तो उसका मुँह काला करके उसे गधेपर बिठाकर बाजारमे घुमाया जाता है।

पत्रसे लगता है कि ये सब शिकायते सच्ची है। यदि ऐसा है तो ये तथ्य स्वयं-सेवकोको शर्मिन्दा करनेवाले है। शराब पीनेवालोको समझाना हमारा जितना फर्ज है हमारा उतना ही फर्ज उनके शरीरकी रक्षा करना भी है। शराबियोसे शराब छुड-वानेके लिए यदि हम जोर-जबरदस्ती करेगे तो इससे वह नही छूटेगी; इतना ही नही वरन् इससे हमारे सघर्षको धक्का पहुँचेगा। प्रत्येक स्थानके स्वयसेवकोको जानना चाहिए कि उन्हे किसीपर जोर-जबरदस्ती करनेका कोई हक नही है। उन्हे ठीक तरीकेसे विनम्रता बरतते हुए जो उचित जान पड़े वही प्रयास करने चाहिए। उदाहरणस्वरूप दुकानोके समीप खडे होकर शराब पीनेवालेको विनयपूर्वक समझाना, उनके कुटुम्बियोंको सम-झाना, उनकी जात-बिरादरीको समझाना। इतना करनेके सिवा हमे कुछ भी करनेका कोई अधिकार नही है। लोगोको मार-पीटकर पुण्यवान् न बनाये। जो पापी बनना

चाहे उन्हे पाप करनेका पूरा अधिकार है। पाप करनेकी छूट होनेके बावजूद जो पाप नही करते, वही पुण्यवान् कहलाते है और उन्हीके द्वारा देशको लाभ होता है। यदि पापको मिटानेके लिए हम जोर-जबरदस्तीका सहारा लेते है तो जिस दोषके कारण हम सरकारको राक्षसी मानते है, वही दोष हममे भी आ जाता है और हम भी राक्षस बनते है।

राष्ट्रीयशाला – चरखाशाला

यदि हम यह मानते हो कि सूतके तागेमें ही स्वराज्य है, और यदि चरखेकी शक्तिके सम्बन्धमे हमें पूरा विश्वास हो, यदि हम मानते हो कि किसी भी अन्य तरीकेसे हिन्दुस्तानकी आर्थिक उन्नति होना असम्भव है, यदि हम समझते हो कि करोडो व्यक्ति अन्य धन्धेके अभावमे कम कमाई होनेके कारण हमेशा कर्जदारकी स्थितिमें रहते है तो हम तुरन्त समझ जायेंगे कि हमें अपने बच्चोको सबसे पहले कातनेकी ही शिक्षा देनी चाहिए। उसके दो परिणाम निकलेंगे। एक तो यह कि बालक स्वावलम्बी बनना सीख जायेंगे और जब बच्चोको स्कूलमे भी कातना सिखाया जायेगा तब कातनेकी प्रवृत्ति बहुत जल्दी व्यापक हो जायेगी। ऐसे व्यक्तियोको जो बिलकुल हताश हो गये है, जिन्हे भिक्षा माँगकर ही पेट भरनेकी आदत पड गई है उन्हे चरखा सिखाना जरा कठिन काम है। चरखा कातनेका काम यदि हम उन्हीके लिए ठीक माने और उसे कगालोका ही धन्धा बना देते है तो वह कभी व्यापक नही होगा, लेकिन जब श्रेष्ठ लोग उसे धर्म समझकर ग्रहण करेंगे तब जल्दी ही सामान्य जनता भी उसे स्वीकार कर लेगी। इसलिए अभी तो बच्चो और वयस्कोके लिए चरखेके अलावा और कोई महत्त्वपूर्ण शिक्षा नही हो सकती, यह सहज ही समझमे आ सकने योग्य बात है।

सीधा हिसाब

इसका हिसाब भी आसान है। जिस प्रवृत्तिसे हमें जल्दसे-जल्द स्वराज्य मिल सकता हो हम सबको उसीमें लगे रहना चाहिए। ऐसी प्रवृत्ति केवल चरखा ही है, क्योकि उसीके द्वारा हम इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त कर सकते है और विदेशी कपडेका बहिष्कार करनेका अर्थ ही स्वराज्य प्राप्त करना है। हम अंग्रेजी सम्बन्धी अपने ज्ञानको बढाकर इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त नही कर सकते, सो उसे प्राप्त करनेकी प्रवृत्तिको फिलहाल स्थगित रखना चाहिए। इसी तरह हम बहुत बडे गणितज्ञ बनकर अथवा बडे-बडे आविष्कार करके भी इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त नही कर सकते, इसलिए इन्हे भी फिलहाल स्थगित रखना चाहिए। इसी प्रकार हम पिन या कागज अथवा इस तरहके अन्य कारखानोकी स्थापना करके भी स्वराज्य प्राप्त नही कर सकते, अस्तु इस कामको भी फिलहाल स्थगित रखना चाहिए। इसी तरह अन्य कार्योंके बारेमें भी अगर हम स्वयसे प्रश्न करेंगे तो हमें यही उत्तर मिलेगा। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि हमारी सब शिक्षण सस्थाओ अर्थात् कालेजो, हाईस्कूलो, प्राइमरी स्कूलो तथा अध्यापकोके लिए ट्रेनिंग स्कूलोमे सिर्फ एक प्रवृत्तिकी गुंजाइश हो सकती है। आज जो अक्षर-ज्ञान हमे अनिवार्य लगता है सो वह ज्ञान विनोदके समय, हाथोको आराम देनेके

समय दिया जा सकता है। एक शिक्षित अंग्रेज प्रवृत्तियोंको बदल-बदलकर उनमे से आनन्द और आराम प्राप्त कर लेता था। यदि वह कॉमन्स सभासे थककर निकलता तो वह मक्खियो और चीटियोंकी हरकतोको देखने बैठ जाता था। इस कार्यसे ऊब जानेपर वह पुस्तके पढने लग जाता। इस तरह वह अपना आराम और निर्दोष आनन्द विविध प्रवृत्तियोसे प्राप्त कर सकता था। हम भी अपने विद्यार्थियोको ऐसी आदत क्यो न डाले? चरखेसे थकनेपर हिन्दी सीखे, इससे मन उचट जानेपर फिर चरखा ले बैठें, ऐसा करनेकी हिम्मत न हो तो सगीत सीखें, और सगीतसे उकतानेपर फिर चरखेका विचार करे, इन सबके बाद भी अगर चरखेमे मन न लगे तो कवायद सीखे। इसके बाद फिर चरखेका चिन्तन करे। ऐसा करनेसे उन्हे चरखेका व्यसन हो जायेगा। इस समय राष्ट्रको यदि किसी व्यसनकी जरूरत है तो वह चरखेके व्यसनकी है। शराब पीनेवाले को एक अक्सीर इलाजके रूपमे मैं चरखेका सुझाव देता हूँ। शराबके नशेसे चरखेका नशा कम नही होता। जिसको उसका चस्का लग गया वही उसके प्रभावको जानता है। अन्तर यही है कि एक मारता है, दूसरा जिलाता है।

कार्य-कौशल

कार्यकी निपुणताके अभावमे चरखा नही चल सकता। है तो यह एक छोटा-सा हथियार, चलानेमे हलका, कीमत भी अपेक्षाकृत बहुत-कम तथापि वह व्यक्तिके उद्यमकी, उसकी दृढताकी, उसकी ईमानदारीकी, उसकी शान्तिकी समुचित परीक्षा ले लेता है। कातनेका मतलब रुईको चाहे जैसे खीचना नही है। कातनेका मतलब तो उसकी अगली क्रियाओको जानना है। जिन्होने रामानुजका लेख पढा है वे इस बातको समझ सकेगे। आन्ध्र देशमे १२० न०का सूत कातनेवाली स्त्रियाँ कपासकी परीक्षाके विविध रूपोसे अवगत हैं—वे अपने हाथो कपास तोड़ती है, स्वय ही कपास ओटती है, स्वयं ही रुई पीजती है और समुद्रके फेनके समान चमचमाती हुई शुभ्र और मुलायम पूनियाँ भी ये स्त्रियाँ खुद अपने हाथो तैयार कर लेती है। मुख्य रूपसे इसीमे उनकी कलाका उपयोग होता है, बादमे १२० न०का सूत कातना उन्हे बच्चोका खेल जान पडता है। कातनेकी क्रिया समय लेती है। इससे पहलेकी क्रियाएँ आसान है और थोडा समय लेती है। सभीको उपर्युक्त आदर्श स्त्रियोके समकक्ष पहुँचनेकी जरूरत नही है, लेकिन सभीके लिए पीजने और पूनी बनानेकी क्रिया जान लेना तो जरूरी ही है। पूनी बनाना एक दिनमे सीखा जा सकता है। पीजना सीखनेके लिए समझ लीजिए कि एक हफ्ता लगता है। प्रत्येक कातनवाले को इतना समय लगाकर पीजना अवश्य जान लेना चाहिए। मिलकी पूनीका उपयोग करनेसे हमारा उद्देश्य पूर्ण नही होता और प्रत्येक स्थानपर मिलकी बनी पूनियाँ पहुँचाई भी नही जा सकती।

पाठकको यह भी जान लेना चाहिए कि पहले रुई पीजना एक धन्धा था, सामाजिक धर्म नही। अतएव पिजारो (धुनियो) को अन्य कारीगरोके माध्यमसे ही आजीविका प्राप्त होती थी। पिजारे महीनेमे आसानीसे ४५ रुपये अथवा कमसे-कम तीस रुपये कमा लेते है। बम्बईमे कितने ही लोग इससे प्रतिदिन ढाई रुपया कमाते है। कातनेवालेको अपने हाथों रुई पीजनेमे इतना कम समय लगता है कि वह यदि जीविका

कमानेके उद्देश्यसे भी इसे करे तो आध सेर सूतके पीछे [अपनी कमाईमें] दो आनेकी वृद्धि कर सकता है। प्रत्येक व्यक्तिको दिन-भरमें कातने लायक रुई पीज लेनेमें बहुत कम समय लगता है।

मेरी भूल

अनुभवके बाद देखता हूँ कि मैंने स्कूलके विद्यार्थीकी चार घंटेकी कमाई एक आना लगाकर भूल की थी। सौभाग्यसे मेरी यह भूल अधिक सावधानी बरतनेकी वजहसे हुई है। अपने अज्ञानके कारण मैंने अत्यन्त सावधानीसे काम लिया। आठ घंटे कातनेवाले की कमाई दो आने ही मानी थी। अब देखता हूँ कि आठ घंटे कातनेवाला व्यक्ति २० तोले नहीं वरन् ४० तोले आसानीसे कात सकता है। यदि हम ४० तोलेका औसत मूल्य चार आने मानें तो आठ घंटे काम करनेवाले को चार आने मिल सकते हैं। सत्याग्रहाश्रमके बालकोंने सत्याग्रह सप्ताहके दौरान केवल कातनेका ही काम किया। कुछ-एकने दस घंटेतक सूत काता। वे सवेरे कोई साढ़े चार बजेसे कातना आरम्भ करते। परिणामस्वरूप एक विद्यार्थीने दस घंटेमें ७० तोले काता। प्रति घंटा सात तोले हुआ। पाँच तोले प्रति घंटा तो बहुत सारे बच्चोंने काता। इन सबमें से किसी भी बच्चेको पाँच महीनेसे ज्यादा तालीम नहीं मिली है, और सो भी लगातार चार-चार घंटे तो किसीने नहीं काता था। इन बच्चोंकी शक्तिने मेरी आँखें खोल दी हैं और मैं देखता हूँ कि हिम्मत रखनेवाले बच्चे प्रति घंटा पाँच तोले सूत कातकर अवश्य दे सकते हैं। इस हिसाबसे चार घंटे काम करनेवाला बालक अपने स्कूलको प्रति घंटा दो पैसे दे सकता है तथा चार घंटेके हिसाबसे पच्चीस दिनके ३ रुपये २ आने दे सकता है। इसे मैं अधिकसे-अधिक आय मानता हूँ। लेकिन यदि स्कूलको हर महीने औसतन दो रुपये पड़ें तो भी २० बच्चोंके महीनें[1]-भरमें ४० रुपये हुए। उत्साही बालक एक अच्छे शिक्षकको ६० रुपया मासिक दे सकते हैं। लेकिन यह तो पहली ही भूल हुई।

विशेष अनुभवसे पता चलता है कि रुई पीजने और पूनी बनानेका काम भी बालकोंको ही करना चाहिए। ऐसा होनेसे आधा सेर रुईके पीछे एक आना अतिरिक्त आय होगी। एक सेर रुई पीजने और पूनी बनानेके, मेरे खयालसे, दो आने होने चाहिए। इसमें थोड़ा समय लगेगा इसलिए अगर हम चार घंटेकी अतिरिक्त आयको चार पैसे न मानकर दो पैसे ही मानें तो २५ दिनके ५० पैसे अतिरिक्त होंगे। इसका मतलब यह हुआ कि एक अच्छा बालक ३–२–० रुपये + ०–१२–६ रुपये = ३–१४–६ रुपये देगा। पहले मेरा अनुमान केवल १–९–० रुपये था। मैंने माना था कि रुईकी धुनाई अलगसे करवानी पड़ेगी और यह काम पेशेवर धुनिये ही करेंगे। यह मेरी दूसरी भूल थी।

इसके अतिरिक्त जब स्कूलोंमें कातने-बुननेका आन्दोलन शुरू हो तब कपास आदिका पहलेसे ही प्रबन्ध होना चाहिए और सूतके बाजार भावको देखते हुए कुछ और भी जोड़ा जाना चाहिए। एक सेर सूतके पीछे २ पैसे बढ़ाना मैं कोई ज्यादा

१. मूलमें यहाँ "साल" शब्द है जो स्पष्टतया छपाईकी भूल है।

नही मानता। इन सब पैसोका पूरा-पूरा हिसाब लगानेके बाद राष्ट्रको हर दृष्टिसे कितना लाभ हुआ है, यह तो जो कारखाने चलाते है उनसे पूछनेपर ही मालूम होगा। स्कूलोमे पढनेवाले लाखो विद्यार्थियोको अगर यह धन्धा सिखाया जाये, उनकी मेहनतका मूल्याकन किया जाये और सूतके बाजारपर जनताका अकुश रहे तो उससे राष्ट्रको कितना लाभ होगा जब मै यह विचार करने बैठता हूँ तो मुझे ऐसा लगता है कि यदि लोग इस सीधी-सादी बातको समझ जायें तो थोडे समयमे ही देशसे भुखमरी दूर हो जाये।

अभी एक चीज बाकी है। जब हम स्कूलोमे बुननेका काम भी शुरू कर देंगे तो स्कूलोकी आयके साधन और भी अधिक हो जायेगे। जब हम एक घटेकी कताईके दो पैसे मानते है तो एक घटेकी बुनाईका हम बड़ी आसानीसे एक आना मान सकते है। लेकिन फिलहाल यदि हम बुनाईके कामको इसमे शामिल न करें तो भी जिस स्कूलका प्रत्येक विद्यार्थी लगभग चार रुपये कमाकर स्कूलको दे अर्थात् प्रति मास चार रुपये फीस दे तो उस स्कूलको सरकारी अनुदान अथवा किसी तरहके दानकी जरूरत नही है। वह आत्मनिर्भर बन जायेगा, विद्यार्थियोको फीस भी नही देनी पड़ेगी।

मैंने सूरत नगरपालिकाको इस तरह शिक्षा देनेकी सलाह दी है। सूरत नगर-पालिका एक लाख दस हजार रुपयेका अनुदान लेनेसे इनकार कर देनेकी बात सोच रही है। अगर ऐसा करना सम्भव हो तो ज्यादा कर भी नही देने पड़ेगे, विद्यार्थियोको शिक्षा भी मुफ्त दी जा सकेगी और इससे स्वराज्य आन्दोलनको भी अधिक सहायता मिलेगी — यह इतना अकसीर इलाज है।

इस काममे जो मुश्किले सामने आयेगी, वे मेरी नजरसे ओझल नही है। सबसे बडी मुश्किल तो इमारतकी है। लेकिन जहाँ नागरिकोकी सहायता प्राप्त हो वहाँ ऐसी मुश्किलोको दूर करना आसान बात होनी चाहिए। चरखोको इकट्ठा रखनेके लिए महाजनोके घरो, मन्दिरो और मस्जिदोका उपयोग किया जाना चाहिए। इस समय स्कूलोकी इमारतोमे जितने विद्यार्थियोके बैठनेकी व्यवस्था है उतने विद्यार्थियोको उनमें चरखेकी शिक्षा नही दी जा सकती। सौभाग्यकी बात है कि चरखा थोडी-बहुत जगह अवश्य घेरता है और उसे श्वासोच्छ्वास नही लेना पडता, इसलिए जगह घेरनेके बावजूद वह हवाको बिगाडनेके बदले उसे सुधारेगा और इस तरह अपेक्षाकृत कम गन्दी हवा मिलनेसे बालककी मानसिक स्थितिके अलावा शारीरिक स्थितिमे भी सुधार होगा।

चरखेमें स्वराज्य

एक सज्जनने अत्यन्त विनयपूर्वक दलीले पेश करते हुए चरखेकी स्वराज्य दिलाने-की शक्तिके सम्बन्धमें शका उठाई है। यद्यपि यह पूराका-पूरा पत्र प्रकाशित करने योग्य है तथापि जगहकी तगी होनेकी वजहसे मै उनकी दलीलको ही यहाँ सक्षेपमे उद्धृत करता हूँ। वे कहते है: "चरखा हमे स्वावलम्बी बना सकता है, उससे आरामसे पेट भी भरा जा सकता है लेकिन उसके द्वारा हमारे हाथमे राज्यसत्ता किस तरह आयेगी, यह बात मेरी समझमे नही आती। क्लाइवके समय भी चरखा मौजूद था

तथापि हम स्वतन्त्रतासे हाथ धो बैठे। इसलिए केवल लंकाशायरके स्वार्थकी समाप्तिसे पूरे इंग्लैंडका स्वार्थ खतम नही हो जाता। तात्पर्य यह कि अगर विदेशी कपडा बन्द हो जाये तो भी इंग्लैंडका स्वार्थ कायम रहेगा।" उनकी यह शका सारहीन नही है लेकिन 'नवजीवन'के पाठकके लिए इसका उत्तर देना सहल होना चाहिए। तथापि उपर्युक्त मित्रके मनमे, हालाँकि वे 'नवजीवन'के पाठक जान पडते है, ऐसी शका उठी मै इसमे पाठकोको समझानेकी अपनी शक्तिकी अपूर्णता देखता हूँ। किन्तु मै आशा करता हूँ कि अगर मै पाठकोको यही वस्तु धैर्यपूर्वक अलग-अलग ढगसे समझाऊँ तो वह पाठकोके गले अवश्य उतरेगी। क्योकि मुझे पक्का विश्वास है कि मेरे समझनेमे कोई त्रुटि नही है। वस्तुत. मेरी समझानेकी शक्ति ही दोषपूर्ण है। उपर्युक्त पत्रलेखक कमसे-कम यह बात तो मानते जान पड़ते है कि चरखेके द्वारा हम विदेशी कपडेका बहिष्कार कर सकते है। अगर यह सच है तो मेरा कहना है कि जिस शक्तिके द्वारा हम अनेक प्रकारकी विडम्बनाओ तथा सरकार द्वारा पहुँचाई जानेवाली परेशानियोके बावजूद विदेशी कपडेका बहिष्कार कर सकते है तो हमारे लिए वही शक्ति सम्पूर्ण राज्यसत्ता प्राप्त करनेके लिए पर्याप्त होनी चाहिए।

आइये, अब हम आँकड़ोकी जाँच करे। हम विदेशी कपडेपर ६० करोड रुपया खर्च करते है। दूसरे नम्बरपर चीनी आती है, उसमे २३ करोड रुपये जाते है। तीसरे नम्बरपर लोहा आता है, उसपर १६ करोड़ रुपये खर्च होते है और इन सबके बाद उल्लेखनीय वस्तु मशीनरी है जिसपर लगभग साढे ९ करोड रुपये खर्च होते है। और लगभग इतने ही रुपये खनिज तेलमे जाते है। अन्य वस्तुएँ अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण है। यदि हम ६० करोड रुपये बचानेके महत् कार्यमे सफल हो जायें तो अन्य रकमे बचानेका काम बच्चोका खेल जान पड़ेगा। तात्पर्य यह कि अगर हम इंग्लैंडकी स्वार्थनीतिके अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भागको रद कर सकते है तो अन्य भागोको बिलकुल खत्म करना कोई असम्भव बात नही होगी। और जब ऐसी आदर्श स्थिति उत्पन्न हो जायेगी तब इंग्लैंडका कोई भौतिक स्वार्थ नही रह जायेगा, अत वह सेना आदिकी सहायतासे बलपूर्वक सत्ताको बनाये रखनेकी कोशिश न करेगा, ऐसा मेरा निश्चित मत है।

आइये, अब इसी वस्तुकी दूसरे तरीकेसे जाँच करे। स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए ईमानदारी, एकता, दृढता, सगठन-शक्ति, राष्ट्रीय व्यापार-शक्ति, सर्वव्यापक राष्ट्रीयता, वीरता और त्यागकी जरूरत है। जब हम इन सब गुणोका परिचय देगे तभी हिन्दुस्तानमें फिरसे चरखेका व्यापक रूपसे प्रचार हो सकेगा। जिस राष्ट्रकी प्रजामे इतने गुण हो उसे कोई भी सत्ता गुलाम बनाकर नही रख सकती।

जिस समय हिन्दुस्तान धर्म मानकर विदेशी कपडेका त्याग करेगा उस समय हम सरकारको अल्टीमेटम देनेमें समर्थ होगे, उस समयतक हम इतने तैयार हो चुके होगे कि अगर सरकार हमारे अल्टीमेटमको स्वीकार नही करेगी, हमारी इच्छाका सम्मान नही करेगी तो हम लगानबन्दीके लिए तत्पर हो जायेंगे।

यह बात सच है कि क्लाइवके समय भी हम चरखा चलाया करते थे। उस समयतक हम पराधीन नही हो गये थे, लेकिन उसकी शुरुआत जरूर हो गई थी और

जैसे-जैसे हम लोग चरखेको छोड़ते गये वैसे-वैसे हम पराधीन होते गये अथवा हमे अपग बनानेके कार्यमे ईस्ट इडिया कम्पनीकी दिलचस्पी बढ़ती गई।

आभूषणों आदिका क्या होगा?

यही सज्जन एक अन्य पत्रमे लिखते है कि मै प्रत्येक स्थानसे आभूषण और चन्दा इकट्ठा किया करता हूँ। लोगोको मुझपर विश्वास है। लेकिन यदि सब लोगोपर मै नियन्त्रण न रख सकूँ अथवा इस आन्दोलनके साथ मेरा सम्बन्ध न रहे तो इतने पैसो और आभूषणो आदिका क्या होगा? यह प्रश्न भी उपर्युक्त प्रश्नके समान ही महत्त्वपूर्ण है। मै जहाँ-जहाँसे पैसे और आभूषण इकट्ठे करता हूँ उन्हे यदि वहाँकी प्रान्तीय समिति स्थापित हो चुकी है तो उसे सौप आता हूँ। और मुझे विश्वास है कि वहाँ उसका पूरा हिसाब रखा जाता है। जैसे कि मैंने बगालमे चन्देकी रकमका पूरा-पूरा हिसाब श्री चित्तरजन दासको सौपा, बिहारमे वहाँके मन्त्री बाबू राजेन्द्रप्रसादको,[1] सयुक्त प्रान्तमे पण्डित जवाहरलाल नेहरूको, मध्य प्रान्तमे सेठ जमनालालको,[2] दिल्लीमे डाक्टर असारीको,[3] पजाबमे लाला लाजपतरायको,[4] उत्कलमें श्री गोपबन्धु दासको, आन्ध्र देशमें श्री वैंकटप्पैयाको, मद्रासमे श्री राजगोपालाचारीको,[5] कर्नाटकमे श्री गगाधरराव देशपाण्डेको,[6] महाराष्ट्रमे श्री नरसोपन्त केलकरको, बम्बईमे श्री शकरलाल बैंकरको[7] और गुजरातमे श्री वल्लभभाई पटेलको सौपा है। सिन्धमे सारे प्रान्तके लिए अभी नई समिति नही बनी है और प्रान्तके भिन्न-भिन्न भागोमे परस्पर मेल नही है, इसलिए मै वहाँके चन्देकी रकम अपने साथ ले आया हूँ और काग्रेस समितिके द्वारा मै इस रकमकी क्या व्यवस्था की जाये, इस बातपर विचार कर लेना चाहता हूँ। मैने जहाँ-जहाँ और जिन व्यक्तियोको आभूषणो और पैसेकी व्यवस्थाका भार सौपा है वहाँ-वहाँ वे लोग स्वय प्रतिष्ठित है। वे समितिके अध्यक्ष अथवा मन्त्री है और उनपर खद मुझे विश्वास है। चन्दा देनेवालो को मैं बता चुका हूँ कि दानकी रकमकी व्यवस्था किस तरह की जायेगी। प्रत्येक स्थानकी काग्रेस समिति इन सब पैसोका हिसाब रखने तथा उसे प्रकाशित करनेके लिए बाध्य है। सब समितियोपर अखिल भारतीय काग्रेसका अकुश है। इसलिए इस पैसेके सम्बन्धमे गड़बडी होनेकी सम्भावना बहुत कम है। इससे अधिक

१. १८८४–१९६३; भारतके प्रथम राष्ट्रपति।

२. जमनालाल बजाज (१८८९–१९४२); प्रसिद्ध गाधीवादी उद्योगपति; जिन्होंने गाधीजीकी योजनाओमें भरपूर सहयोग दिया। गाधीजीके निकटतम साथियो और सलाहकारोमें से एक।

३. मुख्तार अहमद अंसारी (१८८०–१९३६); राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता; इडियन मुस्लिम लीगके अध्यक्ष, १९२०; भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके अध्यक्ष, १९२७-२८।

४. १८६५–१९२८; समाज-सुधारक तथा पत्रकार। १९२० में भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके कलकत्ता अधिवेशनके अध्यक्ष, लोक सेवक समाज (सर्वेन्ट्स ऑफ पीपुल्स सोसाइटी) के सस्थापक।

५. चक्रवर्ती राजगोपालाचारी (जन्म १८७९); वकील, पत्रकार, लेखक और राजनीतिज्ञ; स्वतन्त्र भारतके प्रथम गवर्नर जनरल, १९४८-५०।

६. गगाधरराव बालकृष्ण देशपाण्डे; कर्नाटकके प्रसिद्ध राजनीतिक कार्यकर्त्ता जो 'कर्नाटक-केसरी' के नामसे प्रसिद्ध है।

७. शकरलाल बैंकर; सामाजिक कार्यकर्त्ता और अहमदाबादके मजदूर-नेता। यंग इंडियाके प्रकाशक।

क्या किया जा सकता है? मैं स्वीकार करता हूँ कि अधिकाश पैसा मेरे प्रति जनताके वर्तमान मोहके कारण मिलता है। किन्तु जो कार्य हम करनेवाले है उसके प्रति जनताका विश्वास और जिस महान् व्यक्तिकी स्मृतिको हम अमर बनाना चाहते हैं— हमारी वह इच्छा भी इसका कारण है। इस बातकी पूरी-पूरी सावधानी बरती गई है कि पैसेका व्यय ठीक ढगसे हो। गुजरातमे जो रकम इकट्ठी हुई है उसका हिसाब थोड़े समयमें प्रकाशित होगा और समय-समयपर प्रकाशित होता रहेगा। गुजराती भाई-बहनोको मेरी यह सलाह है और उनसे निवेदन है कि वे तमाम सस्थाओ-को जाग्रत रखे और स्वय भी जाग्रत रहे। एक करोड़ रुपया इकट्ठा करने और पूरी ईमानदारीके साथ उसे खर्च करनेकी शक्तिपर ही हमारे भविष्यका आधार निर्भर करता है।

एक अन्त्यजका 'खुला पत्र'

भाई जूठाभाई शिवजीने मुझे एक 'खुला पत्र' लिखा है। उसका सार मैं यहाँ प्रस्तुत करता हूँ। वे कहते है कि जो हिन्दू अन्त्यजोके सम्बन्धमे मेरे भाषण सुनते है वे सिर्फ मेरी हाँ-मे-हाँ मिलाते है। उनकी ऐसी धारणा है कि सभामे जिन लोगोके अनुपस्थित रहनेकी बातपर मैंने अप्रसन्नता व्यक्त की थी[1] वह अन्त्यजोके अनुपस्थित रहनेसे सम्बन्धित है और उसका कारण किसी झूठी अफवाहका भय न होकर अन्त्यज भाइयोका सवर्णोके प्रति अविश्वास है। भाई जूठाभाई-जैसे विचार रखनेवाले लोगोको मैं बताना चाहता हूँ कि मैंने जो खेद प्रकट किया था सो अपनेको कट्टर माननेवाले हिन्दुओकी अनुपस्थितिके कारण किया था। मेरे भाषणमे उनसे अपील की गई थी और इसीलिए मैंने उनकी उपस्थितिकी इच्छा व्यक्त की थी।

लेकिन अगर यह सच है कि अन्त्यज भाई अविश्वासके कारण सभामे कम सख्यामे उपस्थित हुए थे तो यह भी खेदजनक बात है। अन्त्यज परिषद् बुलानेका उद्देश्य समस्त हिन्दू समाजपर प्रभाव डालनेकी अपेक्षा अन्त्यजोपर प्रभाव डालना अधिक था। इसमे जो प्रस्ताव पास किये गये उनमे से अधिकाश तो आन्तरिक सुधारोसे सम्बन्धित थे। इसलिए मैं आशा रखता हूँ कि अबसे अन्त्यज भाई गलतफहमीके कारण परिषद्से दूर नही रहेगे।

भाई जूठाभाई आगे लिखते है कि स्वराज्य आन्दोलनसे पहले तो अस्पृश्यताके विरुद्ध आन्दोलन किया जाना चाहिए। हिन्दू समाज अन्त्यजोपर जो राक्षसी शासन चलाता है, सबसे पहले उसे दूर किया जाना चाहिए। इसके बाद ही अग्रेजी राज्यकी टीका करना उचित माना जायेगा। भाई जूठाभाईकी इस दलीलके प्रति मेरी सहानुभूति है। लेकिन उनकी इस दलीलमे एक बडी भारी भूल है। स्वराज्य प्राप्ति तो पापसे मुक्त होनेका आन्दोलन है। आत्मशुद्धि अर्थात् पापसे मुक्ति। जबतक अन्त्यजोकी अस्पृश्यता दूर नही होती तबतक हिन्दू समाजकी अस्पृश्यता दूर नही होगी। दोनोका परस्पर एक-दूसरेसे निकटका सम्बन्ध है। जबतक अन्त्यजोकी अस्पृश्यताका पाप दूर नही होता तबतक स्वराज्य मिल ही कैसे सकता है? फलत मैं समझता हूँ कि जूठाभाई-

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५७६-८१।

जैसे विचार रखनेवाले लोगोका धीरज धरकर स्वराज्य आन्दोलनमें भाग लेना अत्यन्त आवश्यक है। अन्त्यजोको अन्य हिन्दू स्वराज्य नही देंगे, उसे तो उन्हे खुद ही लेना होगा। जो स्वराज्यकी कल्पनाको समझते है वे असहयोगकी आवश्यकताको स्पष्ट रूपसे जाने बिना नही रह सकते।

कालोलके हिन्दू

गुजरातके अपने अनुभवोका वर्णन करते समय मैने कालोलके महाजनोके हृदयोमे अन्त्यजोके प्रति जो अच्छी भावनाएँ है, उसके सम्बन्धमे भी एक टिप्पणी लिखी थी। लेकिन बादमें मुझे पता चला कि मेरे अन्त्यजोकी बस्तीमें जानेसे वे इतने रुष्ट हुए कि मेरे वहाँसे चले आनेपर उन्होने कटु शब्दोका प्रयोग किया और बहुतसे महाजनोने प्रायश्चित्त स्वरूप स्नान भी किया। यह सुनकर मुझे दुःख हुआ। ऐसा कहा जाता है कि उनके क्रोधका कारण यह था कि कुछ लोगोने मेरे वहाँसे चले आनेके बाद अन्त्यजोको जबरदस्ती मडपमें घुसाया। यदि किसीने ऐसा प्रयत्न किया हो तो इसे भी मै दोष मानता हूँ। हम एक-दूसरेके अच्छे-बुरे विचारोको सहन करके ही आगे बढ सकेंगे। जिन्होने स्नान किया, जिन्होने मुझे भला-बुरा कहा उन्हे भी ऐसा करनेका अधिकार था। अन्त्यजोंको स्पर्श करनेको जो पाप मानते है उनके साथ जोर-जबरदस्ती करके उनकी भूल नही बतानी चाहिए, अपितु धैर्यपूर्वक उन्हे धर्मका रहस्य समझाकर ही अस्पृश्यताके मैलको धोया जा सकेगा। इस घटनासे मै तो इतना ही सार निकालना चाहता हूँ कि किसीको स्वराज्यके लालचसे अथवा मुझे अच्छा लगे इस लालचसे मौन धारण करने अथवा मनही-मन दुखी होकर अन्त्यजोका स्पर्श करनेकी जरूरत नही है। जो करना हो उसे विचारपूर्वक सोच-समझकर करनेपर ही हम लाभ उठा सकते है। झूठी शरम और भय आदि भी स्वराज्य मिलनेमे बाधा रूप है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ८-५-१९२१

४०. भाषण : मानपत्रके उत्तरमें[१]

१० मई, १९२१

आप लोगोने जिस उत्साहसे मेरा स्वागत किया हे उसके वास्ते आप लोगोको अनेक धन्यवाद। मै आजके पहले इतनी बार प्रयाग आया हूँ कि मुझे यह अपना घर ही-सा प्रतीत होता है। मेरी हालकी यात्राओमे मुझे कई नगरपालिकाओकी ओरसे अभिनन्दन-पत्र दिये गये है। अभिनन्दन-पत्र देनेका अर्थ यही होता है कि वे असहयोग आन्दोलनसे सहमत है और इस स्वराज्य-सग्राममे हमारे साथ है। आपकी नगरपालिकाके

१. यह मानपत्र इलाहाबाद जिला सम्मेलनमें नागरिकोंकी ओरसे भेंट किया गया था जिसे पण्डित मोतीलाल नेहरूने पढा था और मौलाना मुहम्मद अलीने सभाकी अध्यक्षता की थी। सम्मेलनमें प्रतिनिधियों और किसानोके अतिरिक्त कस्तूरबा, लाला लाजपतराय, मौलाना शौकत अली, पण्डित रामभजदत्त चौधरी, मौलाना हसरत मोहानी, डा० सैफुद्दीन किचलू, स्वामी श्रद्धानन्द, पुरुषोत्तमदास टण्डन, सरोजिनी नायडू और जवाहरलाल नेहरू भी उपस्थित थे।

सदस्योंकी रायमे मेरे राजनीतिज्ञ होनेके कारण नगरपालिका द्वारा मुझे अभिनन्दन-पत्र दिया जाना उचित न होगा। एक प्रकारसे वे ठीक कहते है, परन्तु उनके इन विचारोमे आमूल परिवर्तनकी आवश्यकता है। मेरी इच्छा है कि नगरपालिकाएँ अपनी शक्तिको समझे और केवल बँधे-बँधाये कामोको पूरा करनेकी मशीने न बनी रहे। परन्तु लोगोको यह बिलकुल नही सोचना चाहिए कि उन्होने मेरे प्रति किसी वैमनस्यके कारण अभिनन्दन-पत्र नही दिया। अभीतक जो अभिनन्दन-पत्र मुझे या मौलाना शौकत अलीको दिये गये है वे प्रयागकी अपेक्षा छोटी नगरपालिकाओ द्वारा दिये गये है। बड़ी नगरपालिकाओको एकाएक अपना ढग बदलना कठिन हो जाता है।

बहरहाल, हम लोगोको इस मामलेपर ध्यान नही देना चाहिए और काग्रेस द्वारा निर्धारित काममे जुटे रहना चाहिए। हम लोगोको इसी वर्ष स्वराज्य लेना और खिलाफत और पजाबके प्रति किये गये अन्यायका परिमार्जन कराना है। परन्तु यह केवल कान्फ्रेसो, वक्तृताओ, कविताओ और अभिनन्दन-पत्रोसे नही होगा। यदि इस प्रकार उद्देश्य प्राप्त करना सम्भव होता तो यह काम केवल काग्रेसके जरिये ही हो जाता। एक समय ऐसा भी था कि सालमे एक बार काग्रेस और कान्फ्रेसके द्वारा कुछ मांगे सरकारके सामने पेश कर दी जाती थी और हम लोग उतने ही से सन्तुष्ट हो जाते थे। यदि साल-भरमे सरकारने उनको पूरा न किया तो अगले सालके वार्षिक अधिवेशनमे फिर विरोधसूचक प्रस्ताव पास कर दिये जाते थे और मामला वही खत्म हो जाता था। परन्तु अब समय बदल गया है और लोगोको अपने ही प्रयत्नोसे अपने उद्देश्य पूरे करने है। काग्रेसने एक व्यावहारिक कार्यक्रम उनके सामने रख दिया है और अब जनताको अपने उद्देश्य पूरे करनेके लिए उसपर अमल करना है। यदि हम लोग कान्फ्रेसो, कविताओ और अभिनन्दन-पत्रो इत्यादिको छोड दे तो कोई हानि नही होगी, परन्तु यदि हम लोग काग्रेसके कहनेपर नही चलेगे तो कदापि स्वराज्य नही मिलेगा।

अपने अभिनन्दन-पत्रमे आप लोगोने यह भी कहा है कि इलाहाबादका एक नाम और है — फकीराबाद। मेरी हार्दिक इच्छा यही है कि यह नगर पूर्ण रूपसे उस नामके योग्य हो। इस आन्दोलनको सफलीभूत बनानेके वास्ते फकीरो यानी धार्मिक मनुष्योकी आवश्यकता है और मै आशा करता हूँ कि इसमे आपका नगर अगुआई करेगा।

काग्रेस चाहती है कि आप लोग तीन काम करे, अर्थात् काग्रेसके १ करोड सदस्य बनाना, तिलक स्वराज्य-कोषके वास्ते १ करोड रुपया इकट्ठा करना, और भारतके घरोमे २० लाख चरखे चलवाना। मै यह जानना चाहता हूँ कि आप लोगोने इनके लिए कितना काम किया है। पहले अशके सम्बन्धमे मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि जितने लोग यहाँ उपस्थित है वे सभी काग्रेसके सदस्य है, परन्तु मै चाहता हूँ कि आप लोग और अधिक कार्य करे और अपने नगरकी जनसख्याके अनुसार उचित अश चन्देमे इकट्ठा करके दे।[1]

१. पायनियरके १२-५-१९२१ के अंकमे प्रकाशित विवरणके अनुसार: "उन्होने जानना चाहा कि इलाहाबाद जिले और नगरके कितने लोग काग्रेसमें शामिल हो चुके हैं, और उन्होने अनुरोध किया कि श्रोताओंमें से ऐसे व्यक्ति सम्मेलनकी कार्रवाई समाप्त होनेसे पहले अपने नाम भेज दें।"

मुझे यह जानकर खेद हुआ है कि प्रयागसे तिलक स्वराज्य-कोषमें अभी काफी चन्दा जमा नही हुआ है। यदि प्रयाग गरीब है तो मैं यह नही चाहता कि सब लोग रुपये-ही-रुपये दें। यदि प्रान्तका हरएक आदमी दो-दो पैसे भी दे तो इलाहाबादका हिस्सा काफी हदतक पूरा हो जायेगा। प्रयाग तीर्थ-स्थान है जहाँ बहुतसे तीर्थ-यात्री आते हैं। आप लोग उनकी सहायतार्थ सेवा-समिति बनाइये और उनकी सहायता करनेके बाद उनसे तिलक स्वराज्य-कोषके वास्ते चन्दा माँगिये। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि इस प्रकार मेहनत की जाये तो आप लोग सुगमतासे यदि अधिक नही तो अपने हिस्सेकी रकम इकट्ठी कर ही लेगें।

फिर २० लाख चरखे चालू कराने हैं। मैं यह नही चाहता कि आप लोग चरखोको अपने घरोमे रखकर इनकी सिर्फ पूजा करे; आप लोगोको मौलाना मुहम्मद अलीके शब्दोमे उनसे वही काम लेना चाहिए जो अग्रेजी सरकार मशीनगनोसे लेती है। यदि २० लाख चरखे कमसे-कम ४ घटे रोज चले तो मुझे विश्वास है कि थोड़े ही समयमें किसी भी हिन्दुस्तानीको देशका बना कपडा पहननेमे लज्जा नही आयेगी।

अपने हालके दौरेमे मौलाना शौकत अली और मैंने हिन्दू-मुस्लिम एकताकी आवश्यकता देशको बतलाई है और यदि इतनेपर भी देशने इस आवश्यकताको न समझा हो तो चाहे कितना भी प्रचार किया जाये लोग इसको नही समझ सकेगे। हम लोगोने यह बात भी अच्छी तरह समझा दी है कि हमारा कार्यक्रम पूर्ण रूपसे अहिंसक है। मुझे यह देखकर खेद हुआ है कि कुछ किसान लोग इस बातको भूल जाते हैं और मैं इसकी निन्दा करता हूँ। आप लोगोको पूरी तरह समझ लेना चाहिए कि हमे अपने दुश्मनोके प्रति भी सख्त भाषाका प्रयोग नही करना चाहिए। हिंसाका सहारा लेनेके बदले आप लोगोको कष्ट-सहन और आत्मत्यागकी भावना पैदा करनेके लिए प्रस्तुत रहना चाहिए, और यदि आप लोगोमे से कुछको जेलखाने भी भेज दिया जाये तो क्रोधित होकर कोई जुलूस वगैरा नही निकालना चाहिए, क्योकि जब आप लोग जेलखाने जानेको तैयार हो जायेंगे तभी स्वराज्यका मार्ग सुगम होगा। मालेगाँवके निवासियोने बहुत ही बुरा किया है और आप लोगोको उससे सबक लेना चाहिए ताकि फिर कभी वैसा न होने पावे। यदि मैं या मौलाना शौकत अली या मुहम्मद अली या और कोई नेता गिरफ्तार किये और जेलखाने भेजे जाये तो भी आप लोगोको किसी थानेदारकी हत्या न करनी चाहिए चाहे वह हमारे कुछ आदमियोको जानसे भी मार दे। जब आप लोगोमे इस प्रकारकी भावना आ जायेगी और आपके हृदयसे जेलका, जो मेरे लेखे कार्यकर्त्ताका विश्रामस्थल है, भय निकल जायेगा तब स्वराज्य बहुत समीप आ जायेगा।

मुझे नही मालूम कि सरकार मौलाना मुहम्मद अलीको जेलमें बन्द करनेके लिए इतनी उत्सुक क्यो है। मैं भी तो अक्षरशः वही कहता हूँ जो मौलाना कहते हैं। मौलाना मुहम्मद अलीका अपराध यह बतलाया जाता है कि उन्होने यह कहा है कि यदि अफगान लोग भारतपर आक्रमण करेगे तो वे उनके पास यह सन्देशा भेजेंगे कि हिन्दुस्तानी लोग धन या जनसे ब्रिटिश सरकारकी सहायता नही करेगे। मैं उनके इस कथनका अक्षरशः समर्थन करता हूँ। मैं अपने हिन्दू भाइयोसे कहता हूँ कि

वे इस अफगानी हौएसे न डरे, क्योंकि कोई भी धर्म यह नही सिखाता कि उसके अनुयायी कायर हो। मैं जानता हूँ कि पठान लोग बड़े शक्तिशाली हैं, परन्तु कोई पठान मुझे गोमांस खाने या अपने धर्मके विरुद्ध काम करनेको बाध्य नही कर सकता। वर्तमान सरकारपर से हमारा विश्वास उठ गया है और जबतक कि खिलाफत और पजाबके विषयमे यह सरकार न्याय नहीं करेगी तबतक उसे हिन्दुस्तानियोंसे अफगानिस्तान या और किसी शक्तिके मुकाबले सहायताकी आशा नही करनी चाहिए। जिस सरकारके विरुद्ध हमने आन्दोलन उठाया है वह जबतक अपनेको सुधार न ले तबतक हम लोगोसे सहायताकी आशा किस प्रकार कर सकती है। और जिन लोगोने हम लोगोको पेटके बल रेंगाया है वे लोग कैसी ही कठिनाई क्यो न पड़े हमसे सहयोगकी आशा नही कर सकते। परन्तु हम लोगोको हर हालतमे अहिंसक और शान्तिप्रिय रहना चाहिए। हम लोगोको कितना भी भड़काया जाये, हमें किसीकी हत्या नही करनी चाहिए, क्योकि हत्या करनेसे हम स्वराज्य पानेका अपना हक खो देंगे।

अन्तमें, मुझे आपसे यह कहना है कि इस समय देशके हिन्दुओ और मुसलमानो दोनोका केवल एक धर्म है — पजाब और खिलाफतके मामलेमें न्याय हासिल करना और देशको गुलामीसे बचाना। यदि आपको अपने देशकी सेवा करनी है तो आपको कांग्रेसके नेतृत्वमे चलना चाहिए और उसके आदेशोका पालन करना चाहिए, चाहे वे हमारे महती उद्देश्यको देखते हुए कितने ही महत्त्वहीन क्यो न लगें।

अन्तमें, भगवान्से मेरी यही प्रार्थना है कि वह हम लोगोको कांग्रेसके नेतृत्वमें चलनेकी शक्ति दे।[1]

आज, १२–५–१९२१

४१. टिप्पणियाँ

स्वामी गोविन्दानन्द

तो, स्वामी गोविन्दानन्दको पाँच सालका निर्वासन मिल ही गया। मजबूत आदमी है वे! पहले भी सजा काट चुके हैं और वह भी बिना अदालती कार्रवाईके। विभिन्न जेलोमें जो तकलीफें दी गई थी उन सारे अनुभवोको उन्होने रिहाईके बाद कलमबन्द भी किया है। इस बार मुकदमेका नाटक हुआ और आखिर सजा ठोक दी गई। क्या इस तरह न्यायका नाटक करके निर्वासित करना कोई महत्त्व रखता है? क्या इससे अदालती कार्रवाईके आडम्बरका पर्दा ही फाश नही हुआ? तरीका बदल गया मगर भावना वही रही। असल बात है भावनाका बदलना। 'अच्छा वह है जो अच्छा करे।' मैंने स्वामीजीका पूरा भाषण पढा है। भाषा कुछ तीखी और चोट पहुँचानेवाली है, लेकिन असाधारण तो कुछ भी नही है। हिंसाको बढावा देनेवाली तो कोई भी बात

१. इस भाषणका मिलान अमृतबाजार पत्रिका, १३–५–१९२१ में प्रकाशित विवरणसे भी कर लिया गया है।

उसमें नही है। असन्तोष उसमें है। लेकिन अगर असन्तोष व्यक्त करनेके लिए भी सजा दी जानी है तब तो स्वामी गोविन्दानन्दकी तरह मै भी गुनहगार हूँ। मौजूदा शासन-तन्त्रसे जितना असन्तोष मुझे है उतना शायद ही किसी दूसरेको होगा, क्योकि हुकूमतके तौर-तरीकोसे मेरी तरह त्रस्त दूसरा शायद ही कोई मिलेगा। भारतमे राजनैतिक असन्तोष तो एक मानी हुई बात है और इसलिए [कहा गया था] कि अगर भाषणसे हिसाको उत्तेजन न मिले तो पुलिस भाषणकर्त्तासे नही बोलेगी। लेकिन इस सरकारकी सबसे बुरी बात तो यह है कि इसकी कोई निश्चित और स्थिर नीति नही है। स्वर्गीय चैम्बरलेन साहब[1] बड़े गर्वसे कहा करते थे कि अग्रेज अफसरके मुँहसे निकली हुई बात पत्थरकी लकीर होती है। लेकिन हम अपने दु खद अनुभवोके बाद इस नतीजेपर पहुँचे है कि आज अग्रेज सरकारकी बातका मोल फूटी कौडीके बराबर भी नही होता। सर विलियम विन्सेंटने कितनी शान और दिखावेके साथ यह आश्वासन दिया था कि जबतक असहयोगी हिंसाको नही भड़काते उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नही की जायेगी। अच्छा ही हुआ कि भारतवासियोने उनकी चिकनी-चुपड़ी बातोपर भरोसा नही किया। इस आश्वासनका सिर्फ यही मतलब था कि जबतक असहयोग आन्दोलन महज प्रचार रहेगा, जबतक उसका खास असर न होगा तबतक असहयोगियोके खिलाफ कोई कदम नही उठाया जायेगा। अब चूँकि हम खाली जलसे-जुलूस और प्रदर्शनकी स्थितिसे बहुत आगे निकल आये है, इसलिए गिरफ्तारियो और सजाओसे बचे रहनेकी कोई उम्मीद हमे नही करनी चाहिए; हमे तो बडेसे-बडे कष्टोके लिए तैयार रहना चाहिए। हमारा आन्दोलन ज्यो-ज्यो प्रभावशाली होता जायेगा त्यो-त्यो दमन भी उसी हिसाबसे बढता जायेगा। जाहिर है कि पाँच सालके निर्वासनका दण्ड लोगोके मनमें आतक पैदा करनेकी गरजसे ही दिया गया है। मै नही कह सकता कि भारतकी जिन्दगीमे वर्तमान पाँच सालोका अरसा कितने युगोके बराबर है। अगर भारतने जो कहा है उसे कर दिखाया तो अवधि पूरी होनेके पहले ही अनुचित रूपसे जेलोमे बन्द किये गए तमाम कैदियोको रिहा करनेकी ताकत स्वय देशके हाथमे आ जायेगी। लेकिन वह घडी दूर हो या करीब, हमारा कर्त्तव्य स्पष्ट है। किसी भी गिरफ्तारीका जवाब हमे गुस्सेसे नही देना है, जैसा कि मालेगाँवमे हुआ। हमे तो शान्त बने रहकर हिम्मत और पक्के इरादेके साथ अन्यायका मुकाबला करना है। अगर हम अपने धर्म और सिद्धान्तके प्रति सच्चे है तो हमे अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके रचनात्मक कार्यक्रमपर ज्यादा जोरोसे अमल करके उसे हर हालतमें पूरा करना चाहिए। हर गिरफ्तारीपर हमे थोथे या उत्तेजनात्मक प्रदर्शन नही करने चाहिए। शेखी बघारना हमारा काम नही। हमारा कर्त्तव्य है ठोस काम करते हुए जेल जाना।

मालेगाँवमें दुर्व्यवहार

मालेगाँवमे असहयोगियोने जो अपराध किया, हम लोग उसकी गम्भीरताको कम करके दिखानेकी कोशिश करते है। वहाँके सब-इन्स्पेक्टरने उत्तेजित होनेका कितना ही

१. जोजेफ चैम्बरलेन (१८३६–१९१४); १८९५ से १९०३ तक उपनिवेश-मन्त्री।

बडा कारण क्यो न दिया हो, उससे असहयोगियोकी प्रतिहिंसापूर्ण कार्रवाई उचित तो नही ठहराई जा सकती। मै इस मसलेपर कानूनी दृष्टिसे विचार नही करूँगा। मेरी दृष्टि तो असहयोगीकी दृष्टि है और मुझे केवल उसीसे मतलब है। कोई कितना ही क्यो न उकसाये, असहयोगी तो किसी भी सूरतमे बदला न लेने और जवाबी हमला न करनेके अपने प्रणसे बँधा होता है। सरदार लछमनसिह और सरदार दिलीपसिह और उनके साथियोकी शानदार मिसाल हमारे सामने है। अगर हम सच्चे असहयोगी है तो हमे अपने अन्दर उनकी तरह मरनेकी ताकत पैदा करनी होगी। अगर मालेगाँव-के असहयोगी जवाबी हमला किये बगैर बहादुरीसे मर जाते तो मुझे खुशी होती और मै उनके बलिदानकी तारीफ करता। उनके ऐसे वीरतापूर्ण कृत्यसे भारतकी स्वतन्त्रता-का दिन और नजदीक आ जाता। फिर असहयोगीकी दृष्टिसे हमे यह भी देखना होगा कि उत्तेजित होनेका मौका पहले किसने दिया? उन्होने पुलिसको डराया या नही? जैसा कि मै पहले भी कह चुका हूँ हममे से किसीकी गिरफ्तारीपर जिस तरहके पागलपन भरे प्रदर्शन किये जाते है वे गिरफ्तारीसे बचनेकी हमारी भद्दी कोशिशका ही इजहार करते है। अपने-आपको परखनेकी जो कसौटी हमने चुन ली है हमे उसीपर कायम रहना चाहिए। तथ्योकी अबतक की जानकारीके आधारपर मेरी तो अब भी यही राय है कि असहयोगियोने अहिंसात्मक असहयोगके नीति-नियमोका बुरी तरह उल्लघन किया। खिलाफत या स्वराज्यमे दिलचस्पी रखनेवालोसे मेरा यही कहना है कि चाहे उनका प्यारेसे-प्यारा नेता ही क्यो न गिरफ्तार कर लिया जाये वे किसी भी तरहका विरोध-प्रदर्शन न करे, इसे वे अपना धर्म ही बना ले। मेरी या मौलाना शौकत अलीकी गिरफ्तारीपर अगर जनताने हडताले या विरोध सभाएँ की तो मै इसे अपना सम्मान नही समझूँगा। हाँ, अगर हमारी गिरफ्तारीपर विदेशी कपड़ोका पूरा बहिष्कार करे, लोग ज्यादा उमग और उत्साहसे चरखा चलाने लगे, तिलक स्वराज्य-कोषके लिए खूब पैसा जमा करे और कांग्रेसके सदस्य बननेकी होड लग जाये तो मुझे जरूर खुशी होगी और मै उसकी तारीफ करूँगा। ऐसे समयमे मै यह उम्मीद करूँगा कि सारे सरकारी स्कूल और कालेज खाली हो जाये और ज्यादासे-ज्यादा वकील अपनी वकालत छोड दे। खिलाफत और पजाबके मामलेमे सरकारने जो अन्याय किया है उसे मिटानेका तरीका अफसरोकी हत्या और सरकारी इमारतोको जलाना नही है। इससे राष्ट्रका नैतिक अध पतन होता है और साथ ही बेहद पस्ती भी फैलेगी। इसलिए हमे हमेशा सतर्क रहना चाहिए और कभी एसा मौका नही आने देना चाहिए जिससे लोग उत्तेजित हो उठे और अवाछित या अपराधपूर्ण कृत्योकी ओर प्रेरित हो।

नुक्ताचीनी

अकसर नौजवान लोग नेताओके आचरणकी अकारण ही आलोचना करते है। इस तरहका जो ताजा उदाहरण मेरे देखनेमे आया है वह किसी हदतक उल्लेखनीय है। हालही मे जब मै सिन्धके दौरेपर गया था तो मुझे हैदराबादसे मीरपुर खासतक ले जानेके लिए एक स्पेशल रेलगाडीका इन्तजाम करना पडा था। एक सज्जनको यह बरदाश्त नही हुआ। उन्होने नतीजा निकाल लिया कि नेतागण राष्ट्रीय धनका दुरुपयोग कर

रहे हैं। मैंने यह पूछनेकी जरूरत नही समझी कि स्पेशल रेलगाड़ीका इन्तजाम क्यों करना पड़ा। पत्र-लेखकने सलाह दी है कि मुझे स्पेशल रेलगाडीका इस्तेमाल नही करना चाहिए था और सिन्धके लिए एक दिन और देकर पैसेकी बचत करनी चाहिए थी। अगर मेरे इस दोस्तने मामलेकी तहतक पहुँचनेकी कोशिश की होती तो उन्हे मालूम हो जाता कि स्पेशल गाड़ी किये बगैर मुझे मीरपुर खास ले जाना नामुमकिन था, दूसरे कार्यक्रमोमें व्यवधान डाले बिना मै सिन्धमे एक दिन और नही रुक सकता था, मेरा मीरपुर खास जाना जरूरी था और मुझे वहाँ ले जानेमे जो खर्च पड़ा वह तुलनात्मक दृष्टिसे बहुत ही कम था। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओकी आलोचना जन-जागृतिका शुभ सकेत है। इसके कारण कार्यकर्त्ता जागरूक और सावधान रहते हैं। कमखर्चीकी मॉग करना चन्दा देनेवालों का हक है। आम जलसोमे बेशक बहुत ज्यादा फिजूलखर्ची की जाती है, तड़क-भडक और कोरे दिखावेमे भी बहुत पैसा फूंका जाता है। अकसर बगैर सोचे-समझे ही खर्च किया जाता है। इसलिए सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओंके आचरण या सार्वजनिक कार्योंके लिए किये जानेवाले खर्चकी यदि निडरता-पूर्वक आलोचना की जाती है तो उससे हमारा फायदा ही है। लेकिन इस तरहकी आलोचना पूरी जानकारी हासिल करके और विचारपूर्ण ढगसे ही की जानी चाहिए। बेकारकी नुक्ताचीनीकी आदत छोड देनी चाहिए।

रेलकी यात्राके सवालपर यह तो मुझे कहना ही पड़ेगा कि नेताओमे तीसरे दर्जेकी यात्रासे कतरानेकी आदत अब भी दिखाई देती है। मुझे अफसोस है कि तन्दु-रुस्ती अच्छी न होनेके कारण अब मै तीसरे दर्जेमे यात्रा नही कर सकता, इसलिए तीसरे दर्जेकी रेल-यात्रासे होनेवाले अमूल्य अनुभवोसे मै वचित हो गया हूँ। इस दर्जेमे यात्रा करनेसे देशवासियोंके विचारोंको जाननेका जितना बढिया मौका मिलता है वैसा और किसी भी तरह नही मिल सकता। इस दर्जेमें यात्रा करके जो सेवा की जा सकती है वह दूसरी किसी भी तरह नही की जा सकती। इसलिए मै सभी कार्य-कर्त्ताओंसे अनुरोध करता हूँ कि वे दूसरे दर्जेमे बहुत आवश्यक होनेपर ही यात्रा करे। तीसरे दर्जेकी यात्रामें जो तकलीफ होती है उसे मुझसे ज्यादा शायद ही कोई जानता होगा। ये तकलीफे कुछ तो रेलवेकी बेरहमीकी सीमातक पहुँची हुई बद-इन्तजामीके कारण है और कुछ लोगोकी बुरी आदतोके कारण। हम दूसरेकी सुविधा-असुविधाका कतई खयाल नही करते। तीसरे दर्जेमे यात्रा करनेवाले चौकस कार्यकर्त्ता यात्रियोकी और इन्तजाम दोनोसे सम्बन्धित लापरवाहियोको अच्छी तरह दूर करा सकते हैं। इसमे तो शककी कोई गुजाइश ही नही कि दूसरे दर्जेकी यात्रा आम लोगोके बसके बाहरकी बात है और आम लोगोको जो सुविधा नही है उसका उपयोग राष्ट्रके सेवक भी नही कर सकते।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-५-१९२१

४२. हिन्दू-मुस्लिम एकता

एकतामे वल है, यह कोरा कितावी जुमला नही वल्कि जिन्दगीका जीता-जागता नियम है; और हिन्दू-मुस्लिम एकताकी समस्या इसकी सवसे अच्छी मिसाल है। आपसी फूटसे तो हमारी वर्वादी ही है। जवतक हम हिन्दू और मुसलमान आपसमें एक-दूसरेका गला काटनेके लिए तैयार रहेगे, तीसरी ताकत वडी आसानीसे भारतको गुलाम वनाये रखेगी। हिन्दू-मुस्लिम एकताका मतलव हिन्दुओ और मुसलमानोकी आपसी एकतासे ही नही, इसका मतलव है हिन्दको अपना वतन समझनेवाले सभी लोगोका आपसी मेल, फिर वे किसी भी धर्मको माननेवाले क्यो न हो।

मै अच्छी तरह जानता हूँ कि हममे अभीतक उस हदतक एकता नही हो पाई है जो शक्ति वन जाये। अभी तो यह एकता नन्हा-सा एक पौधा है, जो रोज वढ़ रहा है और जिसे खास तौरपर पूरी देखभालकी जरूरत है। नेलौरमे जव यह समस्या मेरे सामने स्पष्ट रूपमें आई तो यह वात विलकुल साफ हो गई।[1] वहाँ दोनो कौमोके आपसी सम्वन्ध वहुत अच्छे नही थे। दो ही साल पहले, मेरे खयालसे एक जरा-सी वातपर दोनो आपसमे झगड पडे। हमेशा वही वात लड़ाईकी जड वनती थी। मस्जिदके आगे वाजा वजाते हुए निकलनेके सवालको लेकर दगा हुआ था। मेरी रायमे हर छोटीसी वातको गहरा मजहवी रंग देना वाजिव नही। इससे हमारी शोभा नही वढती, वल्कि घटती है। इसलिए हिन्दुओको मस्जिदके आगेसे वाजा वजाते हुए निकलनेकी वातपर अड़ना नहीं चाहिए। हम मन्दिरके आगे या दूसरे धर्म-स्थानोके आगे भी वाजा वजाते है, ऐसे उदाहरण भी तर्कके रूपमे नही देने चाहिए। मस्जिदके आगेसे वाजा वजाते हुए निकलना हमारे लिए ऐसी कोई खास महत्त्वकी वात तो है नही। मस्जिद-के आसपास चौवीस घटे शान्ति वनाये रखनेकी मुसलमानोकी भावनाका आदर किया जाना चाहिए। हिन्दूके लिए जो चीज अहमियत नही रखती वही मुसलमानके लिए अहम हो सकती है। और जो चीज अहमियत नही रखती, उसे माँगनेपर मुसलमानोको दे देनेमें हिन्दुओको एतराज नही होना चाहिए। जरा-जरा सी वातोके लिए झगड़ना वेवकूफी है, यहाँ तक कि गुनाह है। जो एकता हम चाहते है वह तभी टिकेगी जव हम अपनी-अपनी जिदोको तरह देना और आपसमे एक-दूसरेके साथ उदारताका वरताव करना सीखेंगे। हिन्दूके लिए गाय प्राणोंसे भी प्यारी है, इसलिए मुसलमानको इस मामलेमे अपने हिन्दू भाईको राजी-खुशी निवाह लेना चाहिए। नमाजके वक्त शान्ति मुसलमानको प्यारी है। हर हिन्दूको अपने मुसलमान भाईकी इस भावनाका हमेशा खयाल रखना चाहिए। भलमनसीका तो यही तकाजा है। मगर हिन्दुओमे और मुसलमानोमें भी ऐसे वुरे लोग है जो विना वात झगडनेपर आमादा रहते है। इसके लिए हमें हिन्दू-मुसल-मानोंकी ऐसी मिली-जुली पंचायतें वना देनी चाहिए जिनकी ईमानदारीपर शककी

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५४५-५० ।

कोई गुंजाइश न हो, और उन पचायतोके फैसलोपर अमल करना दोनोके लिए लाजिमी वना देना चाहिए। साथ ही हमे ऐसी पचायतोके फैसलोके पक्षमे जनमत भी तैयार करना चाहिए ताकि उनको कोई चुनौती न दे सके।

मै जानता हूँ कि पारस्परिक विश्वासकी अव भी कमी है, वहुत ज्यादा कमी है। वहुतसे हिन्दू मुसलमानोकी ईमानदारीपर सन्देह करते है। स्वराज्यका मतलव वे मुसलमान राज समझते है और उन्हे अन्देशा है कि अग्रेजोके यहाँ न रहनेपर भारतके मुसलमान वाहरके मुस्लिम राज्योकी मददसे यहाँ मुस्लिम सल्तनत कायम कर लेगे। उधर मुसलमानोको यह डर है कि तादादमें वहुत ज्यादा होनेके कारण हिन्दू उनका सफाया कर देगे। इस तरहकी धारणाएँ दोनो ही कौमोकी निर्बलता और कायरताकी सूचक है। शराफतका न सही, दोनोके अमन-चैनके साथ रहनेकी अभिलाषाका तकाजा तो कमसे-कम है ही कि पारस्परिक विश्वास और सहिष्णुताकी नीतिको अपनाया जाये। दोनो धर्मोमे से किसी भी धर्ममे ऐसी कोई बात नही जो दोनोको मिलने न दे। जबरन धर्म-परिवर्तनके दिन अब लद चुके है। एक गायकी बात छोड़ दे तो हिन्दू मुसलमानोसे किस विनापर लड़ेगे? और मुसलमान गायकी कुर्वानी करे ही, ऐसा तो उनके मजहवमे कही लिखा नही है। हकीकत यह है कि आजसे पहले पास आने, आपसी मतभेदोको मिटाने और एक ही धरतीके बेटोकी तरह आपसमे दोस्त वनकर रहनेकी हमने कभी कोशिश ही नही की थी। अब पहली बार हमे अपनी जिन्दगीमे यह मौका मिला है। खिलाफतका मसला अगले सौ वरसोतक फिर कभी उठनेका नही। अगर हिन्दू मुसलमानोके साथ पायदार दोस्तीका रिश्ता कायम करना चाहते है तो उन्हे इस्लामकी इज्जत रखनेके लिए अपने मुसलमान भाइयोके साथ जानकी वाजी लगा देनी चाहिए।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ११–५–१९२१

४३. अकाल-सहायताके लिए कताई

अहमदावादके पास मीरीमे अकाल पीडितोके बीच कताईके सम्बन्धमे एक प्रयोग किया जा रहा है। उसके वारेमें श्रीमती जाईजी पेटिटने निम्नलिखित टिप्पणियाँ[1] भेजी है। मै उन्हे सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ। प्रयोग एक अग्रेज महिलाकी देख-रेखमे किया जा रहा है, वहाँ काम कितने सुव्यवस्थित ढंगसे किया जा रहा है, इसपर पाठकोकी दृष्टि अवश्य जायेगी। व्यवस्था सभी तरहकी कठिनाइयोको ध्यानमे रखकर की गई है। इस छोटेसे प्रयोगसे भी जाहिर होता है कि अकालमे राहत पहुँचानेके लिए चरखा कितना सशक्त उपकरण है। यदि कताईको ठीक तरहसे सुसगठित किया जाये तो उससे आश्चर्यजनक परिणाम निकल सकते है।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ११–५–१९२१

१. देखिए परिशिष्ट २।

४४. करघेका अधिक प्रयोग

सम्पादक
'यंग इंडिया'

महोदय,

जिन्हें देशकी भलाईका कुछ भी ध्यान है ऐसे सभी भारतीय एक स्वरसे यही कहते हैं कि भारतको अपने कपड़ेकी आवश्यकता खुद पूरी करनी चाहिए, अर्थात् भारतको न तो विदेशी कपड़ा खरीदना चाहिए और न विदेशी सूत। अब प्रश्न यह उठता है कि इस काममें शीघ्रसे-शीघ्र सफलता किस तरह प्राप्त की जा सकती है। कहा गया है कि यह काम चरखेसे सफल हो सकता है। पर हम लोगोंकी धारणा है कि इसके अतिरिक्त और भी तरीके हैं जिनके द्वारा यह काम और भी आसानी, शीघ्रता तथा ज्यादा अच्छी तरहसे सम्पन्न हो सकता है। लोग पूछ सकते हैं कि वे कौनसे तरीके हैं। हम लोग यहाँपर उन्हें ये तरीके बता देना उचित समझते हैं। (१) भारतमें करघोंकी संख्या बढ़ाना, (२) लोगोंमें इस बातका प्रचार करना कि भारतके बने सूतके मोटे और गाढ़े कपड़ोंपर ही सन्तोष करना चाहिए और भारतमें महीन विदेशी सूतसे बने कपड़ेका त्याग कर देना चाहिए। इसका थोड़ा स्पष्टीकरण कर देना जरूरी है। थोड़ी देरके लिए मान लीजिए कि देश सिर्फ मोटा कपड़ा पहननेके लिए तैयार है। ऐसी दशामें ध्यानमें रखनेकी सबसे बड़ी बात यह है कि यदि आज भारतमें चरखेके प्रयोगके बिना कुल जितना सूत और धागा तैयार किया जाता है, यदि उस सबसे वस्त्र तैयार कर दिये जायें तो भारत वस्त्रोंकी अपनी लगभग सारी आवश्यकता पूरी कर सकता है। सचाई तो यह है कि इस देशसे प्रतिवर्ष १४,३०,००,००० पौंड सूत और धागा विदेश जाता है। बस इस सूतके कपड़े बुननेका प्रबन्ध कर दिया जाये तथा देशको मोटा कपड़ा पहननेका थोड़ा बहुत त्याग करनेके लिए तैयार कर लिया जाये तो कपड़ेकी समस्या थोड़े ही अर्सेमें हल हो सकती है। प्रश्न यह उठता है कि क्या हमारे यहाँ जितने शक्ति चालित करघे और हथकरघे हैं वे इतने ज्यादा सूतका कपड़ा बुन सकेंगे? इसका उत्तर सिवा 'नहीं' के और कुछ नहीं हो सकता। ऐसी दशामें क्या करना चाहिए? स्पष्टतः यही उत्तर मिलेगा कि करघोंकी संख्या बढ़ाइये। इसमें भी हाथसे चलनेवाले करघे ही बढ़ाये जा सकते हैं, क्योंकि शक्तिसे चलनेवाले करघे इतनी आसानीसे एकदम नहीं बढ़ाये जा सकते। इसके लिए विदेशोंसे (बुनाईकी) मशीनें मँगानेकी आवश्यकता पड़ेगी। इसमें दो-तीन वर्ष

तो लग ही जायेंगे। और सो भी तब जब हम प्रतिकूल विनिमय दर और इस प्रकारकी मशीनोंपर हालमें लगाये गये ऊँचे आयात करसे उत्पन्न कठिनाइयोंको बिलकुल न देखें। हथकरघोंको बैठाना कठिन काम नहीं है। यहीं भारतमें स्थान-स्थानपर ये बड़ी आसानीसे तैयार किये जा सकते हैं और इनमें खर्च भी अधिक नहीं पड़ेगा। सांख्यकीय विभागके महा निदेशकने जो आँकड़े १९१९में प्रकाशित किये थे उनके आधारपर हिसाब लगानेसे स्पष्ट हो जाता है कि वर्त-मान करघोंकी संख्या दूनी कर देनेसे ही हमारा काम चल सकता है। मैं यहाँ उन आँकड़ोंको पेश करके आपके पाठकोंको उलझनमें नहीं डालना चाहता। मेरी सानुरोध प्रार्थना है कि इस पत्रके पाठक इस मामलेपर गौरसे विचार करें और इसके महत्त्वको महसूस करते हुए अपनी सारी शक्ति इसे कार्यरूपमें परिणत करनेकी दिशामें लगानेका प्रयत्न करें।

कलकत्ता, आपका विश्वस्त,
१९ अप्रैल एस० बी० मित्र

इस पत्रके लेखकने इस बातपर ध्यान नही दिया कि हाथकी कताईके साथ-साथ हाथकी बुनाईका भी प्रचार होगा। यदि हाथका कता सूत करघोपर नही बुना जायेगा तो कपडेकी समस्या हल नही हो सकेगी। पर केवल हथकरघोके प्रचारसे यह प्रश्न हल नही हो सकता। हाथसे कपड़ा बुननेकी कला अभीतक खतम नही हुई है। इस समय हथकरघोकी सख्या शक्ति-चालित करघोकी सख्यासे अधिक है। पर वे अधिकतर विदेशी सूतकी ही बुनाई करते है। मैं इस बातका हार्दिक समर्थन करता हूँ कि हमें मोटे कपडेसे ही सन्तोष करना चाहिए और जुलाहोको देशी सूतका प्रयोग करनेके लिए ही प्रेरित किया जाना चाहिए। साथ-ही-साथ इस पत्रके लेखकको "नेताओसे" भी कहना चाहिए कि वे मिल-मालिकोसे इस बातके लिए अनुरोध करे कि वे मिलके तैयार सूतको विदेशोमे भेजनेकी बिलकुल चेष्टा न करे। पर यही कठिन है, क्योकि जो लाभ उन्हे सूत भेजनेसे होता है उसको छोड देना उनके लिए कठिन है। विदेशी वस्त्रोके पूर्ण वहिष्कारको सफल वनाना केवल मिल-मालिको और पूंजी-पतियोके हाथमे है। यदि ये दोनो अपना कर्त्तव्य समझ ले और देशकी आवश्यकताकी बात इनके दिमागमे बैठ जाये तो वे इसको अवश्य ही सफल बना सकते है। फिर भी हाथकी कताईकी जरूरत तो बनी ही रहती है। विदेशी वस्त्रोका बहिष्कार कर देनेसे ही काम नही बन जायेगा। करोडो किसानोके लिए कोई सहायक पेशा जुटाना भी नितान्त आवश्यक है। पहलेकी भाँति इस समय भी उन्हे अपने अवकाशके समय कृषिके अतिरिक्त किसी सहायक पेशेकी नितान्त आवश्यकता है। उन करोड़ो लोगोके लिए जो बिना काम-धन्धेके भूखो मर रहे है, घर बैठे किसी ऐसे धन्धेकी आवश्यकता है, जिससे उनका निर्वाह हो सके। ऐसा धन्धा हाथकी कताई ही है। इस पत्रके लेखकने जो बात कही है वह काम तो चल ही रहा है। करघोकी संख्या दिन-दिन बढती जा रही है; जनताकी रुचि भी मोटे कपड़ेकी ओर बढ़ती जा रही है। पर दिन-दिन बढती वर्तमान

दरिद्रताकी समस्याका हल केवल एक है — स्थान-स्थानपर हाथकी कताई। मै अपन इस विश्वासको और भी जोरदार भाषामे इस प्रकार रखना चाहता हूँ कि भारतवर्ष विना चरखेके आत्मनिर्भर, निर्भीक तथा स्वावलम्बी नही हो सकता। मसूलीपट्टमके श्री कृष्णरावने इसीलिए हाथकताईके कर्त्तव्य (धर्म) को सहज ही धार्मिक कृत्यके रूपमे स्वीकार किया है। जनताने भी अपनी स्पष्ट सूझबूझके सहारे इसी रूपमें इसे स्वीकार किया है। डा० मित्रके विचारोसे सहमति रखनेवाले सभी लोगोसे मै यही अनुरोध करता हूँ कि वे जनताका ध्यान इस मूल तथ्यसे भटकने न दे। हाथकताईमे वे सभी बाते आ जाती है जिनका पत्र-लेखकने सुझाव दिया है, बल्कि उसमे कुछ और भी विशेषताएँ है। समुद्रमे नदीके लाये हुए तत्त्व तो मौजूद रहते ही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-५-१९२१

४५. अली भाइयोंकी क्षमा-याचनाका मसविदा[1]

[१४ मई, १९२१ अथवा उसके बाद]

मित्रोने हमारे कुछ भाषणोकी ओर हमारा ध्यान दिलाया है जिनके सम्बन्धमे उनकी राय है कि उनमे हिंसाको भडकानेकी प्रवृत्ति नजर आती है। हम यह कह देना चाहते है कि हमारा इरादा कभी हिंसा भडकानेका नही रहा। हमने कभी सोचा भी नही था कि हमारे भाषणोके उन अशोसे जो अर्थ निकाला गया है उनका वैसा अर्थ भी हो सकता है।[2] इसलिए हम हृदयसे अफसोस जाहिर करते है और इन भाषणोके कुछ अशोकी अनावश्यक उग्रताके लिए खेद व्यक्त करते है। हम सार्वजनिक रूपसे यह भी आश्वासन देते है और उन सबसे, जो ऐसा वायदा चाहते है, वायदा करते है कि जबतक असहयोग आन्दोलनसे हमारा सम्बन्ध है तबतक हम फिलहाल या भविष्यमे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे न तो हिंसाकी वकालत करेगे और न हिंसाके लिए तैयार रहनेका वातावरण ही बनायेगे। सचमुच हम इसे उस अहिंसात्मक असहयोगकी भावनाके प्रतिकूल मानते है जिसके लिए हम वचनबद्ध है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३०-५-१९२१

१. गाधीजी जब १४ मईको शिमलामें वाइसरायसे मिले थे उस अवसरपर वाइसरायने अली बन्धुओंके कुछ भाषणोका उल्लेख करके उन्हें हिंसाको उभारनेवाला बताया था। चूँकि उनका वैसा अर्थ निकल सकता था और चूँकि अली भाई असहयोगी होनेके नाते हिंसाका प्रचार करनेकी बात सोच भी नहीं सकते थे इसलिए गाधीजीने उन्हें एक वक्तव्य निकालकर तदर्थ क्षमा माँगनेकी सलाह दी थी। वक्तव्य २९ मई, १९२१ को प्रकाशित हुआ था। देखिए परिशिष्ट ३।

२. अली भाइयोंके वक्तव्यमे यह वाक्य भी जोड दिया गया था: "परन्तु हम मानते है कि हमारे मित्रोंके तर्क और विवेचनमें वजन है।"

४६. पेचीदा मामला

एक भाई "स्वदेशी" उपनामसे तथा सरल भावसे कुछ प्रश्न पूछते है। उन्होने मेरी जानकारीके लिए अपना नाम भी दिया है। वे सुशिक्षित व्यक्ति है। उनके प्रश्न समझने योग्य है। वे पूछते है.

प्र० काग्रेसमे सर्वसम्मतिसे असहयोगका जो प्रस्ताव पास हुआ है उसमें अपना योगदान देनेवाला प्रत्येक प्रतिनिधि क्या उस प्रस्तावके प्रत्येक मुद्देपर धीरे-धीरे नही बल्कि तुरन्त ही अमल करनेके लिए नही बँधा हुआ है?

उ० · निश्चय ही बँधा हुआ है।

प्र० यदि वह ऐसा करनेके लिए बँधा हुआ है और ऐसा नही करता तो क्या उक्त प्रतिनिधि असहयोगको एक खेल नही समझता? ऐसे लोग क्या अपने-आपको और दूसरोको धोखा नही देते?

उ० अवश्य धोखा देते है, इतना ही नही बल्कि वे असहयोगके सघर्षको धक्का पहुँचाते है। वे अपनी सिपहगरीकी शर्तका पालन नही करते। जहाँ सिर्फ पाँच फुट ऊँचे आदमी ही की भरती की जाती हो वहाँ चार फुटका आदमी काम नही आता, उसी तरह असहयोगकी सेनामे रहकर जो उसकी शर्तोका पालन नही करते वे असहयोगके कानूनका अविनय भग करते है और गुनहगार बनते है।

प्र० : यदि अधिकाश असहयोगी ऐसे ही हुए तो क्या इससे आपको निराशा नही होगी? इससे क्या आपका विचित्र आशावाद ढह नही जायेगा?

उ० : अभी तो जनताकी कसौटी हो रही है। लेकिन यदि अधिकाश असहयोगी तीस जूनके बाद भी वैसे ही बने रहे तो निस्सन्देह मुझे बहुत दु ख होगा। तथापि इससे मेरा आशावाद ढह नही जायेगा। जबतक मै स्वय अपने बारेमे आशावान हूँ तबतक मेरा आशावाद टूट नही सकता और सबको अपने समान समझनेवाला मै यही मानता हूँ कि जो मुझे सहज लगता है और जो करने योग्य है उसे सब लोग अवश्य करेगे। धोखा देनेवाले अपने-आप निकल जायेगे।

प्र० : क्या ऐसे प्रतिनिधियोका प्रगट रूपसे तिरस्कार करनेकी जरूरत नही है?

उ० : यदि मै जनरल डायरका तिरस्कार नही करता तो फिर मै दुर्बल प्रतिनिधियोका तिरस्कार कैसे कर सकता हूँ? यह लड़ाई आत्मशुद्धिकी है और इसमे किसीके तिरस्कारकी कोई गुजाइश नही है। लेकिन ऐसे व्यक्तियोका निस्सन्देह बहिष्कार किया जाना चाहिए अर्थात् उन्हें प्रतिनिधि न चुना जाये, वे स्वयसेवक और पदाधिकारी भी न बन सके। मै मानता हूँ कि हमारा वातावरण दिन-प्रतिदिन साफ होता जाता है। अब ऐसी समितियाँ बहुत कम रह गई है जहाँ वकालत न छोडनेवाले वकील अभीतक ओहदोपर है। सरकारी स्कूलोमे पढनेवाले विद्यार्थी कदाचित् ही स्वयसेवक बनते है। सभी अपनी-अपनी मर्यादाको समझ गये जान पड़ते है।

प्र० · जो न्याय प्रतिनिधियोपर लागू होता है क्या वही आपके अनुयायियो अथवा आपके सिद्धान्तोके प्रशसकोपर लागू नही होता ?

उ० मेरा तो कोई अनुयायी नही है, अथवा वही व्यक्ति मेरा अनुयायी है जो मेरे सिद्धान्तोको पसन्द करता और उनके अनुसार चलता है। इसलिए अनुयायी सिद्धान्तोका अनुकरण नही करेगा, यह कहना ही अर्थहीन है। मेरे 'अनुयायी' को प्रमाणपत्रकी जरूरत ही नही होती। सब उसे पहचान लेते है। जो सत्य नही बोलता, सत्य आचरण नही करता, जो मन, वचन और कर्मसे दयाका पालन करनेके लिए प्रयत्न नही करता, जो खादी नही पहनता और विदेशी कपडेका सर्वथा त्याग नही करता, जो भगीको अपने सगे भाईके समान नही मानता, जो परस्त्रीको अपनी माँ-बहन नही मानता, जो धर्मकी खातिर, देशकी खातिर, सत्यकी खातिर मरनेके लिए तैयार नही होता, जो अपनी तुच्छताको समझकर नम्रभावसे व्यवहार नही करता वह मेरा 'अनुयायी' नही है। सिद्धान्तोके प्रशसकपर भी मै तो यही कानून लागू करूँगा। कथनी और करनीमे भेद रखने और उसे सहन करनेकी हमे इतनी आदत पड गई है कि यह एक रोग बन गया है। जो जैसा बोलते है वैसा करनेको तैयार नही होते, अगर वे बोलना ही बन्द कर दे तो मै जानता हूँ कि ससार बहुतसे वितण्डावादसे, व्याख्यानोसे और फसादोसे बच जाये।

प्र० जो ऐसे 'परोपदेशे पाडित्यम्' मे कुशल प्रतिनिधियो और प्रशसकोके समर्थन-से स्वराज्य मिल जाये तो क्या आप उसे स्वीकार करेगे ? अगर स्वीकार करेगे तो ऐसा स्वराज्य कबतक टिक सकेगा ?

उ० . स्वराज्यको स्वीकार करना मेरे अधिकारकी बात नही है। उसे तो जनता स्वीकार करेगी। जनताके प्रतिनिधिके रूपमे मै जानता हूँ कि ऐसे मिथ्याचारसे स्वराज्य नही मिलता। और अगर मिल जाये तो टिकेगा अथवा नही, यह सवाल ही नही उठता।

हम सहज ही देख सकते है कि इस भाईने बहुत दुखी होकर ये सारे प्रश्न पूछे है। ऐसे ही प्रश्न अनेक सरल स्त्री-पुरुषोके दिलोमें उठा करते है। प्रत्येक असह-योगीको अपने व्यवहारसे इन प्रश्नोका समाधान करना चाहिए। स्वराज्य मिलनेमे जो देर लग रही है उसका कारण हम लोग ही है।

इस भाईने अपने पत्रकी प्रस्तावनामे कुछ और भी शकाएँ उठाई है। वे विचार करने योग्य है इसलिए उन्हे मै प्रश्नोत्तरके रूपमें प्रस्तुत कर रहा हूँ।

प्र० आपके कुछ-एक सिद्धान्तोमे क्या मनुष्य-स्वभावके विरुद्ध विचित्र त्याग करनेकी बात नही होती ?

उ० : असहयोगके एक भी सिद्धान्तमें ऐसे कठिन त्यागकी बात नही आती। असहयोगके अन्तर्गत त्याग सहल है और लोकस्वभावके विरुद्ध भी नही है, इसीसे जनताने उसे सहर्ष स्वीकार कर लिया है, ऐसी मेरी मान्यता है। मुख्य सिद्धान्त तो हिन्दू-मुस्लिम एकता, अशान्तिकी स्थितिमे भी शान्ति बनाये रखना, विदेशी वस्त्रका सर्वथा त्याग, नित्य एक निश्चित समयतक चरखा चलाना, यथाशक्ति दान देना, भगीको भाई मानना, दारू तथा व्यभिचारका त्याग करना आदि है। इनमें मै कही

भी संन्यास नही देखता। मैंने ऐसी कोई चीज नही माँगी है जो अन्य राष्ट्रोकी जनताने न की हो। शान्ति कदाचित् नई वस्तु जान पडेगी। लेकिन सिखोने उसकी मर्यादित साधना करके दिखा दी है। अधिक गहराईमें जानेपर दिखाई देगा कि अंग्रेजोने जब भी चाहा शान्तिका पालन किया है। मैंने तो यहाँतक कहा है कि अगर हम शान्तिका नीतिके रूपमे — एक खास अवसरपर इस्तेमाल किया जानेवाला हथियार समझकर — पालन करेगे तो भी हम विजय प्राप्त करेगे। मेरी कल्पनामे शान्ति सबलका — सच्चे क्षत्रियका — हथियार है। लेकिन हम उसे दुर्बलका हथियार मानें तो भी शस्त्र-बलको इस समय असम्भव मानकर हिन्दुस्तान यदि मरनेका ही मन्त्र साधे और मारना छोड दे तो आज ही स्वराज्य प्राप्त किया जा सकता है।

प्र० आप शासकके विरुद्ध असहयोग करवाते है तो फिर आप भगियोको विधान परिषदोमे जानेवाले सहकारियोकी सेवा करनेसे और उनसे असहयोग करनके लिए कहनेवाले लोगोको क्यो रोकते है?

उ० हम शासकके विरुद्ध असहयोग नही करते, हमारा असहयोग शासकोकी नीतिके विरुद्ध है। हमारा असहयोग व्यक्तिगत नही है। हमने भगी अथवा कुम्हारको किसी भी अधिकारीकी सेवा करनेसे नही रोका है। वैसा करना मै अभीष्ट भी नही मानता। तो फिर हमारे ही जो भाई मतभेदके कारण विधान परिषदो आदिमे जाते है भगियो आदिको उनका काम करनेसे हम कैसे रोक सकते है? हम तो सभीको प्रेमके द्वारा जीतनेकी उम्मीद रखते है। अगर प्रेमसे न हो तो हम किसीको जोर-जबरदस्तीसे अपनी ओर नही लाना चाहते बल्कि हम उसकी बुद्धिको जाग्रत करके, उसे समझा-बुझाकर अपने मतका प्रचार करना चाहते है। असहयोगका मूल तिरस्कार नही बल्कि प्रेम है; असहयोगका मूल दुर्बलता नही अपितु अतुल बल है, असहयोगका मूल असत्य नही बल्कि सत्य है, उसका मूल अन्ध-श्रद्धा न होकर ज्ञानमय श्रद्धा, विवेक और बुद्धि आदि है, उसका मूल अधर्म नही बल्कि धर्म है, आत्मविश्वास है।

प्र० : आप सिर्फ महात्मा है या महात्मा होनेके साथ-साथ राजनीतिज्ञ भी है?

उ० . मेरे विचारसे जो महात्मा है उसे राजनीतिज्ञ भी अवश्य होना चाहिए। राजनीतिज्ञ वह है जो राज्य — जनता — की रक्षा व सेवा कर सके। कोई आत्मा उसी हदतक 'महान्' है जिस हदतक वह जन-समाजकी दास बन चुकी है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-५-१९२१

४७. टिप्पणियाँ

देशी राज्योंमें क्या किया जा सकता है?

एक काठियावाडी भाई पूछते है कि देशी राज्योमे रहनेवाले भाइयोको क्या करना चाहिए। जबसे काठियावाडमे परिषद् हुई है तबसे यह सवाल बहुत ज्यादा पूछा जाता है।

देशी राज्योमे हमे ब्रिटिश साम्राज्यके सम्बन्धमे कुछ भी नही कहना चाहिए और उन्हे विषम स्थितिमे नही डालना चाहिए। यह बात कहनेकी देशी राज्योमे कोई जरूरत नही कि कैसी राक्षसी सरकार है। लेकिन देशी राज्योमें भी हम शराब छोडने और छुडवानेका आन्दोलन जरूर करे, वहाँ हम चरखेका प्रचार करे और सूत काते, विदेशी कपडेका बहिष्कार हम वहाँ भी करे, खादी जरूर पहने, व्यभिचार और जुए आदिका त्याग करे, काग्रेसकी बहीमें अपना नाम दर्ज करवाये, तिलक स्वराज्य-कोपमे खूब चन्दा दे। देशी राज्योमे रहनेवाले सब लोग यदि चाहे तो इतना योगदान दे सकते है, और यदि वे इतना करे तो यह स्वराज्यके लिए बहुत माना जायेगा। असहयोगको जिन्होने आत्मशुद्धिका यज्ञ माना है, उनके लिए तो कोई सवाल पूछनेको ही नही रह जाता। देशी राज्योमें रहनेवाले अगर भगीको भाई माने तो इसमे देशी राज्योके प्रति कोई द्रोह नही होता।

देशी राज्य कोई हिन्दुस्तानसे बाहर नही है। हिन्दुस्तानके सब लोगोके सामने एक ही प्रश्न है। धर्मयुद्ध सबके सामने उपस्थित है। सबको सत्य, निर्भयता और शान्तिका पाठ पढना है। ब्रिटिश राज्यकी हदमे, ब्रिटिश राज्यके विरुद्ध बोलना इष्ट हो सकता है, लेकिन देशी राज्योमे हमे ऐसा करनेकी तनिक भी आवश्यकता नही है।

टीका अनावश्यक है

लेकिन ब्रिटिश राज्यकी हदमे भी क्या अब ब्रिटिश राज्यकी टीका करनेकी जरूरत है? मुझे तो लगता है कि टीका-मात्र छोड देनेमे ही हमारी सभ्यता है। जितनी टीका करनी पडती है सो मै कर लेता हूँ। 'नवजीवन' के पाठकोको मै विश्वास दिलाता हूँ कि जहाँ टीका करनेकी जरूरत जान पडती है वहाँ मै टीका करनेसे नही चूकता। लेकिन इस साम्राज्यका नाश अथवा सुधार हम टीका करके नही कर सकते। यह तो हम अपने कर्त्तव्यका पालन करके, स्वय अपना सुधार करके ही कर सकेगे। हमे चरखा कातनेसे, काग्रेसमे नाम दर्ज करानेसे और तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा करनेके कामसे तनिक भी अवकाश नही है। जब हम मुट्ठी-भर काम करनेवाले लोग अपना प्रत्येक क्षण उपर्युक्त कार्योमे लगायेगे तभी हम जून मासतक किये जानेवाले कार्यको पूरा कर सकेगे। तो फिर हम सरकारकी टीका करनेमें क्यो अपना समय बरबाद करे?

मुझे तो स्टेशनोंपर होनेवाली भीड़ और नारोंकी आवाजे भी असह्य जान पड़ती है। नारो और भीडसे स्वराज्य मिलनेवाला नही है। इनका समय अब लद गया है। जबतक लोगोमे जागृति नही थी तबतक भले ही उसकी जरूरत महसूस होती रही हो। अब तो लोगोमे जितनी जागृति आनी चाहिए उतनी जागृति आ गई है। नायगराका जलप्रपात ही हमारे हाथ लग गया है। उसका उपयोग भी हम जान गये है। इसलिए हमारा कार्य तो चुपचाप उसका उपयोग करना है।

जैसे सरकारकी टीकाकी जरूरत नही है वैसे ही सरकारसे सहयोग करनेवालो की भी टीका करनेकी जरूरत नही। हमारी सारी टीका हमारे कार्योमे समाहित है। यह जगत्का निजी अनुभव है कि आधी छटॉक-भर आचरणका जितना फल होता है उतना मन-भर भाषणो अथवा लेखोका नही होता। भाषण अनेक बार हमारे आचरणकी खामियोका दर्पण होता है। बहुत अधिक बोलनेवाला कदाचित् ही अपने कहेका पालन करता है। वचनका पालन करनेवाला कजूसकी भाँति तोले-तोलकर अपने मुखसे शब्द निकालता है। और आज जब हम सरकारके सामने माँग पेश न करके स्वयं अपनेसे करने लगे है तब हमे जो भी टीका करनी हो, जो भी शिकायत हो वह अपने सम्बन्धमे ही होनी चाहिए।

अशान्त असहयोगी

भावनगरकी जैन कन्या-पाठशालाके सम्बन्धमे वहाँके एक सज्जन अपना नाम देते हुए कुछ दु खजनक बाते लिखते है। मेरे पास वह पत्र कुछ अर्सेसे पडा हुआ है लेकिन निरन्तर यात्रापर रहनेके कारण मै सब पत्रोका जितनी जल्दी चाहता हूँ उतनी जल्दी उत्तर नही दे पाता। यद्यपि इन सज्जनने अनुमति दी है तथापि मै उनका नाम प्रकाशित नही कर रहा हूँ क्योकि मै उन्हे भावनगरमे अनुचित टीकाका पात्र नही बनाना चाहता। मै जानता हूँ कि हममे अभी परस्पर एक-दूसरेकी टीका — चाहे वह शुद्ध हृदयसे ही क्यो न की गई हो — सहन करनेकी शक्ति नही आई है। स्वराज्यवादी व्यक्तिमे तो विषैली टीका भी सहन करनेकी शक्ति आनी चाहिए। ये भाई लिखते है कि छठी अप्रैलके पवित्र दिवसपर भी असहयोगियोकी टोली वहाँकी कन्या-पाठशालाको बन्द करवानेके लिए पहुँच गई। यदि एक भी व्यक्ति विनयपूर्वक समझानेके लिए गया होता तो कुछ भी कहनेको न रहता लेकिन पत्र-लेखकके कथनानुसार तो पूरी टोली वहाँ पहुँच गई। टोलीके मुखियाने बलपूर्वक उसे बन्द करनेके लिए कहा। प्रधान अध्यापकने कुछ दलीले पेश की, जिनके उत्तरमें पत्थरोकी वर्षा हुई। एक कन्याका सिर फूट गया, दूसरीको थोड़ी चोट आई। इतनेमे सौभाग्यसे शान्तिके अर्थको समझनेवाला एक असहयोगी आ गया। उसने पत्थरोकी वर्षा तथा अत्याचारको रोका। इस भाईको मै बधाई देता हूँ। दूसरोके सम्बन्धमे तो मै क्या लिखूँ? यदि उपर्युक्त हकीकत सही है तो उन्होने छठी तारीखको बदनाम किया, अपनी प्रतिज्ञा भग की और अपना होश-हवास खो बैठे। बलात् पुण्य करवानेकी अनीतिसे छुटकारा चाहनेवाले हम लोग दूसरोपर जोर-जबरदस्ती कैसे कर सकते है?

उपर्युक्त समाचार देनेवाले भाई लिखते है कि पाठशालाके व्यवस्थापकोंने इस उपद्रवके बावजूद पुलिसकी सहायता नही माँगी। इस खामोशीके लिए मै व्यवस्थापकोको

वधाई देता हूँ। जो शान्तिको भग करते है वे अन्य सव शर्तोका पालन करनेके बावजूद सहयोगी माने जायेगे और असहयोगीके तीरोको सहन करते हुए भी शान्तिका पालन करनेवाले सहयोगीको मै ऐसा असहयोगी मानता हूँ जो स्वय नही जानता कि वह असहयोगी है।

"ईश्वर भी स्वराज्य भेंटमें नहीं दे सकता"

सत्याग्रह सप्ताहके समय मैने जो सन्देश दिया था, यह वाक्य उस सन्देशमे से है। भाई रजबअली झीणाभाई लिखते है कि इस वाक्यमे निहित रहस्यको बहुत कम लोग समझेगे और इससे आभास होता है कि मैने ईश्वरकी शक्तिको भी सीमित कर दिया है तथा यह बात धार्मिक लोगोके दु खका कारण भी हो सकती है। मै स्वय अपनेको आस्तिक मानता हूँ, ईश्वर-तत्त्वको माननेवाला हूँ। मैने तो एक स्पष्ट बातको अत्यन्त स्पष्ट शब्दोमे लिखकर ईश्वरके कानूनको जनताके सम्मुख प्रस्तुत किया है। पापीको स्वर्ग देनेकी बात ईश्वरने अपने हाथमे रखी ही नही है। अगर यह कहे कि ईश्वरने कानून बनाकर मानो अपने हाथ ही धो लिए है तो अधिक उचित होगा। 'ईश्वर सर्वशक्तिमान् है, इसी कारण उसने अपवादरहित कानूनोकी रचना की है।' स्वराज्य व्यक्ति और राष्ट्रके अस्तित्वका परिचायक है। जिस तरह उसीकी भूख शान्त होगी जो व्यक्ति खाना खायेगा, उसी तरह वही व्यक्ति स्वतन्त्र होगा जो अपनी पराधीनताको उतार फेकेगा। हम शराब न छोड़े, विदेशी कपडेका त्याग न करे और हिन्दू और मुसलमान लड़ते रहे तो क्या भगवान् स्वराज्य देगा? क्या वह दे सकता है? लेकिन यदि हम लोकमतके द्वारा विदेशी कपड़े और शराबका परित्याग करे तो क्या हमे स्वराज्य नही मिलेगा? ईश्वरीय विधानको भग करनेके बावजूद कोई ईश्वरसे स्वर्ग-प्राप्तिकी आशा रख सकता है? कदापि नही रख सकता। इसीसे हम प्रार्थना करते है, सो भी स्वराज्यके लिए नही बल्कि स्वराज्यके लिए शक्ति प्राप्त करनेके लिए करते है। प्रार्थनाका अर्थ ही यह है कि अमुक वस्तु अथवा स्थितिको प्राप्त करनेकी अपनी तीव्र इच्छाको वाणी देना।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-५-१९२१

४८. भाषण : शिमलाकी सार्वजनिक सभामें[1]

१५ मई, १९२१

श्री गांधीने उत्तर[2] देते हुए कहा :

यहाँ आनेके सम्बन्धमे मुझे यह कहना है कि पण्डित मदनमोहन मालवीयने मेरे पास एक तार भेजा था जिसमे उन्होने लिखा था — 'आप शिमला आये। अगर आप न आयेगे तो स्वास्थ्य खराब होते हुए भी मुझे आपको लिवानेके लिए आपके पास आना पडेगा।' तार पहुँचनेके बाद ही मुझे पण्डितजीकी चिट्ठी मिली जिसमे उन्होने लिखा था कि अगर आप अपने असहयोगी दलकी सारी बात वाइसराय लॉर्ड रीडिंगके सामने रखनेके लिए उनसे मिलना चाहते हो तो आप उनसे मिल सकते है। मुझे अपनी बात किसी सरकारी अधिकारीके सम्मुख रखनेमे कोई बुराई नही दिखी।

इसलिए जब मै शिमला पहुँचा तब मैने वाइसरायको इस आशयकी एक चिट्ठी भेजी कि मै आपसे मुलाकात करना चाहता हूँ। वाइसरायने मुलाकात करना तुरन्त मजूर कर लिया और जब मै उनसे मिला तब उन्होने मेरी बातोको काफी देरतक धैर्य और सौजन्यके साथ सुना। किन्तु मै यह नही कह सकता कि मेरी यह भेट[3] कितनी सफल या असफल हुई। मैने वाइसरायको बतलाया कि हमारा दल क्या चाहता है और उन्होने भी शासनकी कठिनाइयाँ ब्यौरेवार बताई। हमारी यह भेट सफल भी कही जा सकती है और असफल भी।

. . [मुझे] कहना यह है कि सब-कुछ इसपर निर्भर करता है कि काग्रेस, सिख लीग और खिलाफत समितिके सम्मेलनमे गम्भीरतापूर्वक जो निश्चय किये गये है उनपर लोग किस हदतक अमल करते है।

इस समय तो मै सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि जबतक हमारा आन्दोलन शान्तिमय है और जबतक हममे आत्मत्यागका भाव मौजूद है और हम इन्हीके बलपर अपने देशके प्रति न्याय प्राप्त करना चाहते है, तबतक ससारमे कोई ऐसी शक्ति नही है जो हमें इसी बरसके भीतर-भीतर स्वराज्य लेनेसे रोक सके। हम लोग ससारको यह दिखला देना चाहते है कि हमारा उद्देश्य न्याय प्राप्त करना है। हमारी समस्या

१. गांधीजीने ईदगाहके मैदानमें आयोजित एक सभामें भाषण दिया जिसमें लगभग पन्द्रह हजार लोग उपस्थित थे। उनसे प्रार्थना की गई कि वे शिमला आनेका उद्देश्य और वाइसरायके साथ हुई बातचीतका परिणाम बतायें। गाधीजीका यह भाषण आजके १६ मईके अंकमें और बॉम्बे क्रॉनिकलके १७ और १९ मईके अंकोंमें तथा नवजीवनके २९-५-१९२१ के अंकमें प्रकाशित हुआ था। यहाँ आजका विवरण बॉम्बे क्रॉनिकल और नवजीवनके विवरणोंसे मिला लिया गया है।

२. इससे पूर्व दिये गये मानपत्रका उत्तर।

३. देखिए "शिमला-यात्रा", २५-५-१९२१।

केवल उसी हालतमे सुलझ सकती है जब भारतके प्रति न्याय किया जाये, किसी दूसरे उपायसे नही। मै चाहता हूँ कि सब लोग उन लोगोकी तरह बरताव करे जिन्होने कि ननकाना साहबमे अपने पवित्र उद्देश्यकी खातिर अपने प्राण न्यौछावर किये है, न कि महन्त नारायणदासकी तरह जो दूसरोकी जान लेनेपर तुला हुआ था। जब हममें अहिंसा और आत्मत्यागकी भावना आ जायेगी तब आधुनिक अस्त्र-शस्त्र भी हमारी स्वतन्त्रतामे बाधक नही हो सकेंगे।

हमको बार-बार यह सुनाकर डराया जाता है कि अग्रेजोके चले जानेपर हमारे देशपर अफगान लोग आक्रमण कर देंगे। किन्तु जबतक मै जीवित हूँ तबतक मै इस देशके किसी भी भागपर किसी विदेशीका प्रभुत्व नही होने दूंगा। मेरा विश्वास है कि प्रत्येक भारतीय मुसलमानका भी यही मत है। मेरा हिन्दुओसे अनुरोध है कि वे इस सम्बन्धमे मुसलमानोके भावोके बारेमे कोई सन्देह न करे। मै चाहता हूँ कि सब धर्मोके लोग मिलकर स्वतन्त्रताके सघर्षमे उनका साथ दे।

उन्होंने सफलताके लिए आवश्यक तीन बुनियादी बातोकी विस्तारसे चर्चा की और कहा:

पहली बात यह है कि हम अपने दिलोसे भय निकाल दे, हिन्दू, मुसलमानो और पठानोसे तथा मुसलमान हिन्दुओसे भय न करे और एक-दूसरेपर अविश्वास न करे। अफगानोका भय एक झूठा हौआ है। मै अफगानोके स्वभावको बहुत दिनोसे जानता हूँ। उनमे चाहे जितनी भी कमजोरियाँ हो किन्तु वे खुदासे डरनेवाले लोग है। मुझे विश्वास है कि वे भारतपर हमला करनेकी बात कभी न सोचेगे। दूसरी ओर मै स्वतन्त्रताकी लडाईमे मदद देनेके लिए अफगानोको कभी न बुलाऊँगा। इसके विपरीत यदि अफगानोने हमपर हमला किया तो मै उनके विरुद्ध भी दृढताके साथ असहयोग करूँगा और जीतेजी मातृभूमिकी एक अगुल-भर जमीनपर कब्जा न होने दूंगा।

मै आपसे फिर कहता हूँ कि हिन्दुओ और मुसलमानोके लिए अपने-अपने मनोमे से पारस्परिक अविश्वासको निकालना अत्यन्त आवश्यक है। अब मै दूसरी बुनियादी बातपर आता हूँ। वह है हिन्दू-मुस्लिम एकता। हमने आपसमे जो समझौता किया है वह कोई सौदेबाजीकी भावनासे प्रेरित होकर नही किया। हिन्दू मुसलमानोके मामलेमें इसलिए साथ देते है कि वे ऐसा करना अपना कर्त्तव्य समझते है और जानते है कि भलाईसे भलाई ही पैदा होती है। इसलिए उनका मुसलमानोको गोवध बन्द करनेके लिए विवश करना घातक होगा। इस सम्बन्धमे केवल वे ही दोषी नही है, फिर गोरक्षाका प्रश्न जोर-जबरदस्तीसे कभी तय होनेवाला नही है। मुसलमानोका मुक्त हृदयसे विश्वास करने और उनको जी खोलकर सहयोग देनेसे अन्तमे हर चीज मिल जायेगी। इस्लामका आधार भलमनसाहत है और यदि वह इसे छोड़ देगा तो वह टिक नही सकता।

तीसरी बुनियादी बात, जो सबसे महत्त्वपूर्ण भी है, अहिंसा है। इस सम्बन्धमें मै सिखोसे सविनय अनुरोध करता हूँ कि वे लक्ष्मणसिंह और दलीपसिंहका अनुकरण करे, जिन्होने महन्त नारायणदाससे लड़नेमे समर्थ होनेपर भी हिंसाका प्रयोग नही किया।

मेरी अन्तिम बात है स्वदेशी। यद्यपि वकीलो और छात्रोसे अदालतें और स्कूल छोडनेका अनुरोध करना मैं कभी बन्द न करूँगा, फिर भी वे इसपर अमल न करे तो उसका हमारे सघर्षपर कोई प्रभाव न पडेगा बशर्ते कि हम विदेशी मालका बहिष्कार पूरा कर दे। पूर्ण स्वदेशीका अर्थ ही स्वराज्य है।

अन्तमें गांधीजीने कहा कि स्वराज्यकी प्राप्ति निर्भयता, आत्मत्यागकी भावना, अहिंसा, हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य और चरखेके अपनानेपर निर्भर है।

आज, १६–५–१९२१

४९. तार: सिलहट कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीको

शिमला
१७ मई, १९२१

मन्त्री
काग्रेस कमेटी
सिलहट

दुख हुआ। मुख्य अधिकारी दास। उन्हे सूचित कर रहा हूँ। तफसील भेजे।

गांधी

अग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५२६) की फोटो-नकलसे।

५०. तार: चित्तरंजन दासको

शिमला
१७ मई, १९२१

चित्तरजन दास
रसा रोड
कलकत्ता

तार दें कितनी रकम किस लिए चाहिए।

गांधी

अग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५२५)की फोटो-नकलसे।

५१. टिप्पणियाँ

हॉर्निमैन और सावरकर बन्धु

दोस्तोंने मुझपर श्री हॉर्निमैनके मामलेमें उदासीनता बरतनेका दोष लगाया है और कुछ दोस्तोंको इसपर भी ताज्जुब है कि मैं सावरकर बन्धुओंके[1] बारेमें इतना कम क्यों लिखता हूँ। वकीलोंमें एक मसल मशहूर है, जो कानूनका पेशा करनेवालोंके लिए करीब-करीब नीतिवाक्य ही बन गई है — टेढ़े मुकदमे कानूनको लांछित कर देते हैं।[2] एक भुक्तभोगीकी हैसियतसे मैं जानता हूँ कि यह मसल कितनी ज्यादा सच है। बहुतसे न्यायाधीशोंको सर्वथा अन्यायपूर्ण फैसले देनेको मजबूर होना पड़ता है, हालाँकि कानूनी दृष्टिसे वे फैसले बिलकुल ठीक होते हैं। कुछ ऐसी ही बात असहयोगके बारेमें भी कही जा सकती है कि असहयोगके लिए पेचीदे मामले अच्छे नहीं होते। छोटेसे अखबारके सम्पादकके रूपमें, मैं केवल उन्हीं मामलोंपर लिख सकता हूँ जिनका सीधा सम्बन्ध देशके सामने उपस्थित मुख्य प्रश्नसे हो। श्री हॉर्निमैन या सावरकर बन्धुओंके बारेमें लिखनेका मेरा उद्देश्य सरकारी फैसलेको प्रभावित करना नहीं, जनताको असहयोगके लिए उत्साहित करना ही हो सकता है। श्री हॉर्निमैन बड़े काबिल और बहादुर दोस्त हैं और अगर वे देशमें लौट सकें तो मुझे खुशी ही होगी। मैं जानता हूँ कि उनका निर्वासन अन्यायपूर्ण है। सावरकर बन्धुओंकी प्रतिभाका उपयोग जन-कल्याणके लिए होना चाहिए। अगर भारत इसी तरह सोया पड़ा रहा तो मुझे डर है कि उसके ये दो निष्ठावान पुत्र सदाके लिए हाथसे चले जायेंगे। एक सावरकर भाईको मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। मुझे लन्दनमें[3] उनसे भेंटका सौभाग्य मिला था। वे बहादुर हैं, चतुर हैं, देशभक्त हैं। वे क्रान्तिकारी हैं और इसे छिपाते नहीं हैं। मौजूदा शासनप्रणालीकी बुराईका सबसे भीषण रूप उन्होंने बहुत पहले, मुझसे भी काफी पहले, देख लिया था। आज भारतको, अपने देशको, दिलोजानसे प्यार करनेके अपराधमें वे कालापानी भोग रहे हैं। अगर सच्ची और न्यायी सरकार होती तो वे किसी ऊँचे शासकीय पदको सुशोभित कर रहे होते। मुझे उनके और उनके भाईके लिए बड़ा दुःख है। अगर असहयोग आन्दोलन न होता तो श्री हॉर्निमैन लौट आते और दोनों सावरकर बन्धु भी कालेपानीसे बहुत पहले छूटकर आ जाते लेकिन अभी तो असहयोग बाधक है। सावरकर बन्धुओंकी और जेलकी सजा भोग रहे दूसरे लोगोंकी रिहाईमें जिनकी दिलचस्पी है और जो चाहते हैं कि श्री हॉर्निमैन

१. विनायक दामोदर सावरकर और गणेश दामोदर सावरकर प्रमुख क्रान्तिकारी जिन्हें आजन्म कारावासकी सजा दी गई थी पर बादमें १९३७ में रिहा कर दिया गया था।

२. हार्ड केसेज मेक बैड लॉ।

३. विनायक दामोदर सावरकरसे गांधीजीकी मुलाकात १९०९ में लन्दनमें विजयादशमीके उपलक्ष्यमें आयोजित एक भोजमें हुई थी।

लौट आये, उन सभीको स्वराज्यका दिन नजदीक लानेके लिए असहयोग-कार्यक्रमको जल्दीसे-जल्दी पूरा करनेमे जुट जाना चाहिए। और तबतक हमे इन सजाओको सहना ही नही होगा बल्कि सभी उचित, न्यायपूर्ण और शान्तिपूर्ण तरीकोसे सरकारका विरोध करके खुद भी जेल जाना होगा।

यह सब क्या है?

मै ये टिप्पणियाँ आनन्द भवनमे[1] बैठकर लिख रहा हूँ। मुझे अभी-अभी एक पर्चा दिखाया गया, जिसे किसानोके बीच बाँटनेके अपराधमे पाँच नौजवानोको सजा दी गई है। इस पर्चेमे कहा गया है कि मैंने एक सालके अन्दर स्वराज्य दिलानेका बिना शर्त वायदा किया है। इस बातको पढकर मुझे चोट लगी और थोडी झुँझलाहट भी हुई लेकिन यह तो ऐसी कोई आपत्तिजनक बात नही है। उलटे, पर्चेमे किसानोको उत्तेजित किये जानेपर भी शान्तिसे काम लेनेकी सलाह दी गई है। मजिस्ट्रेटने इन पर्चोको राजद्रोहात्मक करार देकर उन नौजवानोंसे इस बातके लिए जमानत तलब की कि वे इन पर्चोको नही बाँटेंगे। जमानत देनेके बदले उन्होने जेल जाना पसन्द किया। सरकारका विरोध करनेका यह एक अच्छा और सुथरा तरीका है।

इलाहाबाद जिलेके कलक्टर द्वारा जारी किया हुआ एक नोटिस भी मैंने देखा जिसमे सरकारी नौकरोंको गाधी टोपी पहननेसे मना किया गया है। मै हर एक सरकारी कर्मचारीको सलाह देता हूँ कि वह इन सुन्दर, हलकी-फुलकी और नाकाबिले एतराज टोपियोको पहने और बरखास्त हो जाये और जरूरत पडे तो जेल भी जाये। इलाहाबादमे मुझे यह बात भी बताई गई कि सरकारके कुछ बहुत ही खैरख्वाह कर्मचारी किसानोको धमकियाँ दे रहे है कि अगर उनके घरोमे चरखे पाये गये तो वे जेल भेज दिये जायेंगे। अगर चरखेको रखना राजद्रोहमे शुमार किया जाये, तो उसे घरमे रखना जेल जानेका बडा ही सम्माननीय ढग हो जायेगा।

जमींदार और रैयत

यह सच है कि सयुक्त प्रान्तकी सरकारने लोगोको आतकित करनेके मामलेमे औचित्यकी सभी सीमाएँ पार कर डाली है। लेकिन साथ ही यह भी निस्सन्देह सच है कि किसान अपनी नई मिली ताकतका इस्तेमाल कुछ बहुत समझदारीसे नही कर रहे है। कहा जाता है कि कई जमीदारियोमे उन्होने ज्यादतियाँ की है, कानूनको बालाए ताक रख दिया है, मनमानी करने लगे है और जो उनकी मर्जीके मुताबिक चलनेको तैयार नही उसे एक मिनट भी बरदाश्त नही कर सकते। वे सामाजिक बहिष्कारका गलत ढगसे इस्तेमाल कर रहे है और उन्होने उसे हिंसाका एक साधन बना लिया है। यह भी पता चलता है कि उन्होने कई जगह अपने जमीदारोका पानी, नाई और धोबी तक बन्द कर दिया है और किसी भी खिदमतगारको उनके यहाँ काम करनेके लिए नही जाने देते। कही-कही तो उन्होने लगान देना भी बन्द कर दिया है। असहयोगसे किसान आन्दोलनको प्रेरणा और गति तो जरूर मिली, लेकिन उनका यह आन्दोलन असहयोगके पहलेसे चल रहा है और उससे स्वतन्त्र है। समय आनेपर

१. इलाहाबादमें पं० मोतीलाल नेहरूका निवास-स्थान।

हमे किसानोसे यह कहनेमे जरा भी हिचकिचाहट न होगी कि वे सरकारको लगान देना मुल्तवी कर दे, लेकिन असहयोगके किसी भी दौरमे हम जमीदारोको उनके लगानसे वचित करनेकी तो कोई भी बात नही सोचते। इसलिए किसान आन्दोलन-को किसानोकी दशा सुधारने और किसान-जमीदार सम्बन्धोको बेहतर बनाने तक ही सीमित रखना चाहिए। किसानोको यह बात समझाई जानी चाहिए कि जमीदारोंके साथ किये गये अपने इकरारनामोकी शर्तोका वे ईमानदारीके साथ पूरा-पूरा पालन करे, चाहे वे इकरारनामे लिखित हो या रस्मी। अगर कोई रस्मी या लिखित इकरार-नामा भी बुरा हो और उसे भग करना जरूरी ही हो जाये तो पहले जमीदारको इत्तिला देकर केवल शान्तिपूर्ण तरीकेसे ही वैसा करना उचित है, हिंसाका सहारा तो कभी नही लेना चाहिए। हर हालतमे जमीदारोके साथ दोस्ताना ढगसे बातचीत करके समझौतेकी कोई सूरत निकालनी चाहिए। हमारा राष्ट्र दुनियाके सबसे बडे और प्राचीनतम राष्ट्रोमे से है, इसलिए इसके जीवनमे एक साथ कई जटिल समस्याओं-का उठ खडा होना स्वाभाविक ही है। उन सभी समस्याओको सरकारकी सहायता या उसके हस्तक्षेपके बिना हल करनेकी हमारी सामर्थ्यपर ही स्वराज्य प्राप्त करनेकी हमारी सामर्थ्य निर्भर करती है।

अनुशासन

अब वह समय आ गया है जब हमे अवश्य ही अनुशासनका पालन करना सीख लेना चाहिए। अब यह बात टाली नही जानी चाहिए। स्टेशनोपर जो प्रदर्शन किये जाते है, वे यात्रियोके लिए काफी तकलीफदेह बनते जा रहे है। मुझे बताया गया है कि जो रेल-यात्री स्टेशनपर प्रदर्शन होनेके कुछ समय पहले मेरी तारीफ कर रहे थे वे ही अगले कुछ स्टेशनोपर दो-एक प्रदर्शनोके बाद मुझे कोसने लगे। मुझे उनके साथ पूरी सहानुभूति है। इलाहाबाद जाते हुए मेरे एक सहयात्रीको भीडके कारण बड़ी तक-लीफ हुई। प्लेटफार्मपर भीड़ इस तरह टूट पडी कि उन्हे एक प्याली चाय भी न मिल सकी। वे जलपानके लिए बाहर तो जा ही नही सके। अगर उन्होंने मुझे एक बवाल समझ लिया तो कोई ताज्जुब नही। इलाहाबादसे लौटते हुए कानपुरके प्लेट-फार्मपर तो भीड बिलकुल काबूसे बाहर हो गई। हजारो आदमी शोर मचाते, राष्ट्रीय नारे लगाते हुए मेरे डिब्बेपर टूटे पड रहे थे। इससे सभीको खासी असुविधा हुई। नेताओने किसी तरह भीड़को बिठा तो दिया, पर शोर और नारे बन्द न किये जा सके। अन्ततक गुल-गपाडा मचता ही रहा। फिर मुझसे कहा गया कि मै दरवाजेपर आकर लोगोंको दर्शन दूं। लेकिन मैने साफ कह दिया कि जबतक शोर-गुल बिलकुल थम नही जाता मै अपनी जगहसे हिलूँगा नही। दर्शन देनेका आग्रह करनेवाले दोस्तोको इससे जरूर निराशा हुई होगी।

इस सारे शोर-गुल और धक्का-मुक्कीकी खास वजह यह है कि पहलेसे सारी बाते सोच-विचारकर ठीकसे इन्तजाम नही किया जाता और फिर सगठनकी कमजोरी भी है। अच्छा तो यही होगा कि स्टेशनोपर प्रदर्शन कतई न किये जाये। रेलके यात्रियों-की सुविधाका खयाल हमे करना ही होगा। अगर स्टेशनोपर स्वागत करना ही हो

तो राष्ट्रीय नारे कमसे-कम और समझ-बूझकर लगाये जाये और ऐसा इन्तजाम रहे जिससे मुसाफिरोको चढने-उतरने और प्लेटफार्मपर आने-जानेमे किसी तरहकी दिक्कत न हो। वक्त आ गया है कि जन-आन्दोलनको पूरी गम्भीरता और बाकायदा चलानेकी तमीज और अनुशासन हमारे राष्ट्रमे पैदा हो। इसका मतलब यह हुआ कि स्वय-सेवकोको पहलेसे इसकी तालीम दी जाये और जनताको भी अनुशासनका पालन करनेकी बात पहलेसे ही सिखा-समझा दी जाये। मोटी-मोटी बाते सिखलानेमे कुछ ज्यादा दिन भी नही लगते। जहाँ-जहाँ लोगोको पहले समझा दिया गया था, वहाँ उनका बरताव काफी अच्छा रहा। अनुशासनकी तालीमके बिना पता नही कब कैसी दुर्घटना हो जाये। अभीतक कोई अनर्थ नही हुआ, इसका कारण लोगोकी सहज भलमनसाहत ही है, नही तो ऐसे भीड़-भड़क्केमे उपद्रव होते क्या देर लगती है। अगर ठीक तरीकेसे तालीम दी जाये तो बडेसे-बडे प्रदर्शनोके बावजूद हम सर्वथा निश्चिन्त और सुरक्षित रह सकते है, उससे किसी खतरेका अन्देशा नही रह जाता। सभा और जुलूसोमे पागलोकी तरह धक्का-मुक्की और शोरगुल हमारे लिए नुकसानदेह है।

सिखोंका रंग

एक मित्रने मेरा ध्यान अभी-अभी सिख लीगके उस प्रस्तावकी ओर खीचा है जिसमे मुझसे अनुरोध किया गया है कि मै राष्ट्रीय झण्डेमे सिखोके काले रगको भी स्थान दूं। ये मित्र भूल जाते है कि सफेद पट्टीमे बाकीके सभी रग आ जाते है। हमे क्षेत्र, प्रान्त या फिरकोकी सकीर्ण विचारधाराको नही अपनाना चाहिए। झण्डेमे हिन्दू और मुसलमान रगोको इन दोनो सम्प्रदायोकी सख्याके कारण ही जगह नही दी गई है। बल्कि खास वजह यह है कि दोनो कौमे लम्बे अर्सेसे एक-दूसरेसे अलग रही है और इनका आपसी अविश्वास हमारी आजादीके रास्तेका रोड़ा बना हुआ है। इसलिए दोनोकी एकताके प्रतीकस्वरूप वे रग रखे गये है। सिखोकी तो हिन्दुओसे कभी कोई लड़ाई रही नही और अगर सिखोके रगको जगह दी जाये तो फिर पारसियो, ईसाइयो और यहूदियोने क्या कसूर किया है, उनके रगोको भी क्यो न जगह दी जाये? मुझे आशा है सिख लीगवालोके ध्यानमे भी यह बात आ जायेगी कि उनका सुझाव कितना अव्यावहारिक है।

प्रस्तावित राष्ट्रीय झण्डेमे तब्दीलियाँ सुझानेवाले पत्रोका मेरे पास ताँता ही लग गया है। उन सभी पत्रोको छापना नामुमकिन-सा है। फिर किसी भी पत्रमे कोई खास बात नही कही गई है। किसीको इस बातका अफसोस है कि झण्डेमे कलात्मक शोभा नही है, तो कुछ उसमें हिन्दू और मुसलमान प्रतीकोको रखनेकी बात करते है। ये सब आलोचक मूल मुद्देकी बात भूल गये है। हमारे राष्ट्रीय झण्डेमे धार्मिक प्रतीकोको जगह नही दी जा सकती, उसपर तो कोई ऐसा प्रतीक रहना चाहिए जो सबका हो और सब उसे अपनाकर एक हो सके। चरखा ऐसा ही निशान है। और ज्यादातर लोग मेरी इस रायसे सहमत है कि जबसे चरखा छूटा, हमारी आजादी लुट गई, और चरखेको अपनाकर तथा विदेशी कपड़ोका पूरा परित्याग करके ही हम अपनी खोई हुई आजादी फिरसे हासिल कर सकते है।

तार भेजनेवालों से

फौरी तार भेजनेवाले बहुतसे दोस्त अपने तारोके जवाब न पाकर मुझे जरूर अशिष्ट समझते होगे। लेकिन हकीकत यह है कि अहमदाबादके तार-विभागको शायद ऐसी हिदायत दे दी गई है कि मेरे तार देर करके भेजे जाये। सरकारी अधिकारी अगर चाहे तो मेरे काममे इस तरहके रोड़े अटका सकते है, उन्हे यह हक हासिल है। ऐसी सूरतमे जो सार्वजनिक महकमे सरकारके कब्जेमे है उनका इस्तेमाल किये वगैर स्वतन्त्र रूपसे अपना आन्दोलन चलानेकी सामर्थ्य हममे होनी चाहिए। मै अपने तार भेजनेवालो को यही सलाह दूंगा कि वे तार भेजनेमे पैसा बर्वाद न करे, जबतक सरकार मेरी डाकपर ऐसी कोई रोक नही लगाती और मेरे नामकी चिट्ठी-पत्री मुझे बराबर मिलती रहती है तबतक तो मेरे साथ सारा पत्र-व्यवहार डाकके जरिये ही किया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-५-१९२१

५२. हमारे पड़ोसी

एण्ड्रयूज साहबने पूछा है, "क्या 'अफगानी हमलेका हौआ'[1] शीर्षक मेरा लेख अफगानोको भारतीय सीमापर हमला करनेका न्यौता नही है और क्या मैं इस तरह हिंसामें प्रत्यक्ष भागीदार नही हो जाता?" उक्त लेख भारतीयो और भारत सरकारके लिए लिखा गया था। अफगान इतने बेवकूफ नही हैं, कमसे-कम मैं तो नही समझता, कि महज मेरा लेख पढकर वे भारतपर हमला कर देंगे। मगर मैं मजूर करता हूँ कि एण्ड्रयूज साहबने जिस अर्थकी ओर इशारा किया है उस तरहका अर्थ भी मेरे उस लेखसे निकाला जा सकता है। इसीलिए मै सभीको बता देना चाहता हूँ कि अफगान या दूसरे कोई भी हमारी मददके लिए आये, यह मै कतई नही चाहता, उलटे मै तो हृदयसे यही चाहता हूँ कि वे हमारी मददके लिए कदापि न आये। हिन्दुस्तान बगैर किसी बाहरी मददके अकेला ही सरकारसे निपट सकता है इसका मुझे पूरा-पूरा विश्वास है। मै तो यह दिखा देना चाहता हूँ कि सिर्फ अहिंसात्मक उपायोसे हम अपना ध्येय प्राप्त कर सकते है। और इसीलिए अफगानोको भारतीय सीमासे दूर रखनेमे मै अपनी पूरी ताकत लगा दूंगा। लेकिन साथ ही यह भी सच है कि अफगानोको भारतीय सीमासे दूर रखनेके इस काममे मै सिपाहियो या पैसोसे सरकारकी कोई मदद नही करूँगा।

मैंने अपने उस लेखमे अपनी स्थितिको यथासम्भव स्पष्ट कर दिया था। मौजूदा सरकारको मै बिलकुल ही नाकाबिले बरदाश्त और हिन्दुस्तानके पौरुषके लिए एक

१. देखिए पृष्ठ ५८-६०।

जबरदस्त खतरा मानता हूँ, और इसको सुधारनेके लिए कोई भी कीमत क्यो न चुकानी पडे, मैं उसके लिए हमेशा तैयार रहूँगा। इसमे अब मुझे कोई शका नही रही कि यह सरकार ईश्वरसे पराङ्मुख है। और चूँकि कुछ भले अग्रेज और हिन्दुस्तानी इसे सहयोग दे रहे हैं अतः यह भारतके लिए और भी ज्यादा खतरनाक हो गई है। इसके कारण इसकी जन्मजात बुराइयोपर भारतवासियोकी नजरे नही पड पाती। मेरी लड़ाई व्यक्तियोसे नही सरकार कही जानेवाली समूची प्रणालीसे है। अच्छेसे-अच्छे वाइसराय भी इस प्रणालीके अन्दरतक भिदे हुए जहरको निकालनेमे कामयाब नही हो सके और विवश होकर रह गये। क्योकि जहरकी नीवपर ही तो इसका सारा महल खड़ा किया गया है। इसलिए मौजूदा तन्त्रको बदलनेपर अगर भारतकी तबाही हो, अधिकसे-अधिक तबाही हो, तो मै उसमे भी समाधान मान लूँगा।

लेकिन मै क्या करना चाहूँगा और मै सचमुच क्या कर सकता हूँ, ये दोनो बाते एक-दूसरेसे बिलकुल ही जुदा-जुदा है। मुझे दु खके साथ इस बातको मजूर करना पडता है कि अभी हमारा आन्दोलन फौजी भाइयोपर इस हदतक असर नही डाल सका है कि वे जरूरतके समय सरकारकी मदद करनेसे इनकार करनेकी हिम्मत कर सके। जब सारे सैनिक इस बातको समझ जायेगे कि उनकी जिन्दगी भी राष्ट्रके लिए है और हुक्म पाकर खून बहाना सैनिकके पेशेका मखौल है, तो हिन्दुस्तानकी भौतिक स्वतन्त्रताकी लडाई बगैर किसी कोशिशके जीती जा चुकेगी। लेकिन आजकी हालतमे तो आम लोगोकी तरह ही हिन्दुस्तानी सैनिकके मनमे भी भय समाया हुआ है। वह फौजमे इसलिए भरती होता है क्योकि उसे गुजर-बसरका दूसरा कोई जरिया नजर ही नही आता। सरकारने एक तो तरह-तरहके इनाम-इकरामो द्वारा हत्याके इस पेशेको खासा लुभावना बना दिया है और फिर कुछ इस तरहकी सजाएँ तजवीज कर रखी है कि जो एक बार इसमे फँस गया वह बगैर मुसीबत उठाये निकल नही सकता। इसलिए मुझे ऐसा कोई भ्रम नही है कि अगर अफगान तुरन्त हमला कर बैठे तो सरकार हिन्दुस्तानियोकी मददसे महरूम हो जायेगी। लेकिन जब खास तौरपर चुनौती दी गई तो मैने असहयोग आन्दोलनका एक सुसगत दृष्टिकोण देशके सामने रख देना अपना कर्त्तव्य समझा। साथ ही देशको सावधान करना भी जरूरी हो गया था कि वह अफगानी हौएसे बिलकुल न डरे।

सवालका दूसरा हिस्सा, मेरी रायमे, अहिसाकी गलत धारणासे उत्पन्न हुआ है। जब दूसरी ताकतें सरकारसे लडाई छेड़े तो ऐसे समय सरकारकी मदद करना अहिसा-वादी असहयोगीका कर्त्तव्य नही है। अहिसावादी असहयोगी ऐसी किसी भी लड़ाईको प्रकट या गुप्त रूपसे न तो बढावा ही देता है और न उसमे किसी तरहकी मदद ही करता है, वह प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपमे ऐसी लडाईमे हिस्सा नही लेता। यह भी उसका काम नही है कि वह लडाईको खत्म करनेमे सरकारकी कोई मदद करे। वह तो इस सरकारको नष्ट करनेकी कोशिश कर रहा है; वह उसकी हारके लिए प्रार्थना करेगा, जो उसे करनी भी चाहिए। इसलिए जहाँतक मेरे अहिसा-धर्मका सवाल है मै जरा भी विचलित हुए विना पूरी शान्तिके साथ, अफगानी हमलेकी कल्पना कर सकता हूँ और भारतकी सुरक्षाके बारेमें भी मुझे कोई चिन्ता नही है। अफगानोकी भारतसे

कोई लडाई नही है। वे खुदासे खौफ खानेवाले लोग है। कलकत्ता और बम्बईके कुछ दुश पठानोको देखकर सारी अफगान जातिको वैसा ही समझनेकी भूल असहयोगियोको कदापि नही करनी चाहिए। यह सोचना भी एक तरहका अन्धविश्वास ही है कि अगर सीमापर अग्रेजी चौकी नही रही तो वे भारतमे घुस आयेगे। हमे यह बात नही भूलनी चाहिए कि अगर वे चाहे तो आज भी उन्हे भारतपर हमला करनेसे कोई रोक नही सकता। लेकिन उन्हे भी अपना देश उतना ही प्यारा है जितना हमे अपना देश। सीमापर रहनेवालो की कुछ कठिनाइयाँ जरूर है लेकिन उसके बारेमे तो मुझे अलगसे ही एक लेख लिखना चाहिए।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-५-१९२१

५३. हिन्दुओ सावधान

असहयोगके लिए बिहार कल्पतरुके समान है। बिहारकी हिन्दू-मुस्लिम एकता हमेशासे मशहूर रही है। इसीलिए मुझे यह देखकर बहुत दु ख हुआ कि वहाँ हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच तनाव पैदा हो गया है और तनाव भी इतना ज्यादा कि शायद उनकी एकता उसके सामने छोटी पड जाये। हिन्दुओ और मुसलमानो दोनो ही के जिम्मेदार नेताओने मुझसे कहा है कि दोनोमे कोई झगडा खडा न होने पाये इसके लिए उनको एडी चोटीका जोर लगाना पड रहा है। वे सभी नेता ऐसे है जो आसानी-से होश-हवास नही खो सकते। उन्होने मुझे बतलाया है कि गगाराम शर्मा, भूतनाथ और विद्यानन्द वगैरह कुछ हिन्दुओने लोगोसे कहा था कि मैने हिन्दुओ और मुसल-मानो दोनो ही के लिए मास-मछलीकी मनाही कर दी है और उन जरूरतसे ज्यादा जोशीले शाकाहारियोने लोगोसे मास-मछली छीन ली, और इसमे जोर-जबरदस्ती भी की गई थी। मै जानता हूँ कि कई जगह मेरे नामका इस्तेमाल गैरकानूनी हरकतोके लिए किया जा रहा है, लेकिन यह मिसाल उन सभीसे अनोखी है। आम तौरपर सभी जानते है कि मै पक्का शाकाहारी हूँ और खाने-पीनेकी आदतोमें सुधार करनेका हिमायती हूँ। लेकिन सभी लोग आम तौरपर यह नही जानते कि अहिंसा पशुओपर जितनी लागू होती है उतनी ही मनुष्योपर भी; और मै मास खानेवालो के साथ भी बिना किसी परहेजके उठता-बैठता हूँ।

मै एक गायकी जान बचानेके लिए किसी आदमीकी जान नही लूँगा, ठीक उसी तरह जिस तरह कि मै एक आदमीकी जान बचानेके लिए किसी गायकी जान नही लूँगा। फिर चाहे उस आदमीकी जान कितनी ही बेशकीमती क्यो न हो। इसलिए यह बतलानेकी जरूरत नही रह जाती कि मैने किसीको भी असहयोग आन्दोलनके कार्यक्रमके साथ शाकाहारका प्रचार करनेकी अनुमति नही दी है। ऊपर जिन लोगोके नाम गिनाये गये है मै उनको नही जानता। मै इतनी बात पक्की तौरपर जानता हूँ कि यदि किसी भी प्रचारके साथ हिंसा जुड़ गई तो हमारा उद्देश्य विफल हो जायेगा।

हिन्दू लोग मुसलमानोको मांस और यहाँतक कि गो-मांस छोड़नेके लिए भी विवश नही कर सकते। शाकाहारी हिन्दू दूसरे हिन्दुओको मास-मछली या बटेर न खानेके लिए मजबूर नही कर सकते। मै तलवारके जोरपर भारतवासियोको सयमी नही बनाऊँगा। हिंसाने देशमे जितनी पस्ती पैदा की है उतनी दूसरी किसीभी चीजने नही की। भय हमारे राष्ट्रीय चरित्रका एक हिस्सा बन गया है। यदि असहयोगी हिंसाके जोरसे लोगोको अपने मतका समर्थक बनाना चाहते है तो वह उनकी भयकर भूल होगी। यदि उन्होने अपने प्रचार-आन्दोलनके दौरान किसीके साथ जरा भी जोर-जबरदस्ती की तो वह तो सरकारके हाथोमे खेलना ही होगा।

गोरक्षाका प्रश्न एक बड़ा प्रश्न है। हिन्दुओके लिए तो वह सबसे बड़ा है। मै गायकी इज्जत किसीसे भी कम नही करता। हिन्दू लोग तबतक अपना धर्म नही निभा सकते जबतक वे गोरक्षा करनेकी सामर्थ्य अपनेमे पैदा नही करते। ऐसी सामर्थ्य या तो शारीरिक बलसे पैदा हो सकती है या आत्मिक बलसे। हिंसाके जोरपर गोरक्षा करना हिन्दू धर्मको आसुरी धर्म और गोरक्षाके माहात्म्यको एक घटिया काम बना देना होगा। एक मुसलमान मित्रने ठीक ही लिखा है कि इस मामलेमे अगर हिन्दुओने जोर-जबरदस्ती की तो गो-मास खाना मुसलमान अपना फर्ज समझने लगेगे, क्योकि सिर्फ इस्लाममे उसकी इजाजत है। हिन्दू लोग अपने अन्दर जान देनेकी ताकत, कष्टसहन करनेकी ताकत पैदा करके ही गायकी रक्षा कर सकते है। भारतमें कसाईकी छुरीसे गायकी रक्षा करनेका एक ही तरीका हिन्दूके सामने है और वह यह है कि आज इस समय इस्लामके ऊपर जो खतरा मँडरा रहा है उससे इस्लामको बचानेकी कोशिश करे और भरोसा करे कि उसके मुसलमान देशवासी सही रास्तेपर आ जायेगे, यानी वे अपने हिन्दू देशवासियोंका खयाल करके खुद ही गायकी रक्षा करने लगेगे। हिन्दुओको बड़ी सावधानी रखनी चाहिए कि मुसलमानोके खिलाफ कही कोई हिंसा न हो। कष्ट-सहन और पारस्परिक विश्वास—ये दोनो आत्मिक बलके ही गुण है। मैने सुना है कि बड़े-बड़े मेलोमे किसी मुसलमानके पास लोग यदि गाये या बकरियाँ भी पाते है तो कभी-कभी जबरन उनको छीन लेते है। जो लोग अपनेको हिन्दू बतलाकर ऐसी हिंसा करते है, वे गौ और हिन्दू धर्म दोनों ही के शत्रु है। गौको बचानेका सर्वोत्तम और एकमात्र मार्ग यही है कि खिलाफतको बचाया जाये। इसीलिए आशा है कि हरेक असहयोगी गोरक्षा या किसी भी अन्य पशुकी रक्षा करनेमे या दूसरे किसी भी कामके दौरान हिंसाकी किंचित् प्रवृत्तिको भी हर रूपमे रोकनेकी ज्यादासे-ज्यादा कोशिश करेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८–५–१९२१

५४. इश्तिहार[1]

[१९ मई, १९२१]

इश्तिहार स० १ : स्वराज्य प्राप्त करनेका अर्थ है हर घरमे चरखा लाकर सूत कातना। आज ही अपने घरोमे चरखे चालू कीजिए। चरखे और रुई प्रिंसेज स्ट्रीटके राष्ट्रीय विद्यालयसे प्राप्त किये जा सकते है।[2]

इश्तिहार स० २ सूतके जरिये स्वराज्य। यदि आप स्वराज्यके युद्धमे अपना भाग अदा करना चाहते है तो जितना सूत कात सके, काते . . .।

इश्तिहार स० ३ : सामान्य तौरपर सूत कातना धन्धा नही, कर्त्तव्य है। जबतक भारतमे सूत काता जाता था तबतक वह समृद्ध था। भारतको पुन समृद्ध बनानेके लिए फिरसे कताईका काम शुरू कीजिए . . ।

इश्तिहार स० ४. सूतकी कमी दूर करनेसे भारत जितनी प्रगति करेगा उतनी किसी अन्य उपायसे नही . . .।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

५५. एक परिपत्र

भुसावल जाते हुए,
२० मई, [१९२१]

प्रिय मित्र,

परमश्रेष्ठ वाइसरायके साथ मेरी छ. मुलाकाते हो चुकी है। बातचीतमे कोई भी नया मुद्दा नही उठाया गया। मैंने उनके सामने तीन बाते रखी और उनका हल निकालनेके लिए तीन समितियाँ बनानेका सुझाव रखा। फिलहाल तो वे शायद मेरे सुझावोपर अमल नही करेगे। लेकिन मै मानता हूँ कि परिस्थितिको समझनेमे हमे उनकी सहायता करनी चाहिए।

मैंने उनके सामने सुझाव रखा था कि जिस तरह उन्होने मेरे साथ मुलाकात की है उसी तरह उनको अन्य असहयोगी नेताओके साथ भी बातचीत करनी चाहिए। उनको यह विचार पसन्द आया और उन्होने कहा कि जो लोग भी उनसे मिलने की इच्छा प्रकट करेगे उनको वे बडी खुशीसे समय देंगे। लाला लाजपतराय परमश्रेष्ठसे

१. ये इश्तिहार 'महात्मा गाधीका सन्देश' शीर्षकसे देशी भाषाओमें जारी किये गये थे। यह पाठ बॉम्बे गवर्नमेंट रेकर्डसमें अधिकृत अनुवादसे उद्धृत किया गया है।

२. यह वाक्य प्रत्येक इश्तिहारके अन्तमें दुहराया गया था।

मुलाकात कर भी चुके है। लालाजीने आन्दोलनमें अपने शरीक होनेका कारण व्यक्त करते हुए मुख्यत: पंजाबकी समस्याके बारेमे ही बातचीत की। कृपया आप वाइसराय से मुलाकातका समय माँगे और अपने असहयोगी बननेके कारणोसे उन्हे अवगत कराये। यदि आपका इरादा मुलाकातके लिए लिखनेका हो और अगर आपको ठीक लगे तो आप कह सकते हैं कि मुलाकातकी बात मैंने आपको सुझाई थी और कहा था कि यदि आप मुलाकातकी अनुमतिके लिए लिखे तो वाइसराय बड़ी खुशीसे मुलाकात करेंगे।

मेरे सुझावका मतलब यह नही है कि आपको स्वय ही मुलाकातके लिए जाना चाहिए। आप किसी भी दूसरे व्यक्तिको चुन सकते हैं या अपने नामके साथ एक दूसरा नाम भी लिख सकते हैं। इस पत्रका यह अर्थ भी नही लगाया जाना चाहिए कि मैं खुद आपका ही जाना जरूरी मानता हूँ। इसका निर्णय तो आपको, सिर्फ आपको ही, करना है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद

५६. तार: जमनालाल बजाजको

[२० मई, १९२१][1]

जमनालालजी
वर्धा

सुन्दरलालजीको बधाई दीजिये।[2] शायद कल भुसावलके लिए रवाना हो रहा हूँ। फिर तार दूंगा।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ७५२३) से।

१. गांधीजी २१ मईको भुसावलमें थे; देखिए "भाषण: भुसावलमें", २१-५-१९२१। सम्भवतः यह तार एक दिन पहले दिया गया होगा।

२. पण्डित सुन्दरलाल भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १२४ ए के अधीन गिरफ्तार किये गये थे और बादमें उन्हें २३ मई, १९२१ को वर्धामें एक सालकी सख्त कैदकी सजा दी गई थी।

५७. भाषण : रेलवे स्टेशनपर[1]

[२१ मई, १९२१][2]

स्टेशनपर आनेवालो को पैसा लेकर ही आना चाहिए। इस वर्ष हमें तीन विपत्तियोसे मुक्त होना है। उसके लिए बेजवाडामे उपायोकी योजना की गई है।[3] ३० जून तक यदि एक करोड रुपया इकट्ठा नही हुआ तो नाक कट जायेगी और यदि ऐसी नौबत आ गई तो मै अवश्य कहूँगा कि हमें इस वर्ष स्वराज्य नही मिलेगा। स्वदेशीका चलन जारी है लेकिन तब भी देखता हूँ कि कुछ तो केवल स्वदेशी टोपी पहनकर ही स्वदेशी कहलवाना चाहते है। मै अब स्पष्ट रूपसे कहता हूँ कि जो विदेशी कपडोका त्याग नही करना चाहते उनसे मैं मिलना नही चाहता। जबतक खादीको प्रतिष्ठित पोशाकका दर्जा नही दिया जाता तबतक स्वराज्य नही मिलेगा। यदि यह बात सच्ची हो कि यह लडाई आत्मशुद्धिकी है तो खादी पहननेके बाद आप मद्य और व्यभिचारका त्याग करे, ईमानदार बने, मालेगाँवके लोगोकी भाँति पागल न बने, भगी-चमारको अस्पृश्य न माने, उनकी और ब्राह्मणकी समान सेवा करे। मेरे लिए फूल न लाये, स्वराज्यके लिए पैसा लाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९-६-१९२१

५८. भाषण : भुसावलमें

२१ मई, १९२१

महात्माजीने कहा कि मैं आपको आजके स्वागतके लिए धन्यवाद देता हूँ। उन्होंने फिर यह बतलाया कि वाइसरायसे उनकी भेंट किस प्रकार हुई। उन्होंने कहा :

मुलाकातमे दोनोने अपनी-अपनी बाते दिल खोलकर कही परन्तु हम लोगोको उनसे कोई विशेष आशा नही करनी चाहिए। मुझे इस भेटका कोई खेद नही है क्योकि मैंने कोई आशा नही की थी। जनता ही स्वराज्य लेगी। कोई व्यक्ति अथवा वाइसराय हमें स्वराज्य नही दे सकते। स्वराज्यका अर्थ धर्म-राज्य है और मैंने जो तरीके बतलाये है उनसे वह शीघ्र ही मिल जायेगा। आप लोगोको धार्मिक तथा शुद्ध हृदय होना चाहिए। शराब छोड देनी चाहिए और शुद्ध स्वदेशी कपडे पहननेकी

१. गाधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

२. गाधीजीने इस तारीखको खण्डवासे भुसावलकी यात्राकी और रास्तेमें पडनेवाले एक स्टेशनपर भाषण भी दिया था।

३. सकेत बेजवाड़ा काग्रेस प्रस्तावकी ओर है; देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५०४-५।

दृढ प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिए। तब आप लोगोको धर्म-राज्य मिल जायेगा। आप लोगो-को याद रखना चाहिए कि कोई अशुद्ध हृदयवाला पापात्मा, असहयोगके युद्धमे सफल नही हो सकता। लोकमान्यको देखिए।[1] आप लोगोको लोकमान्यकी पूजा करनी चाहिए। परन्तु केवल एक करोड़ रुपया इकट्ठा करके, जो एक मामूली बात है, आपको इस महान् देशभक्तकी पूजा नही करनी है। लोकमान्यने जिसे अपना जीवन सर्मापित कर दिया था, एक करोड रुपया इकट्ठा करके आप उस स्वराज्यको हासिल करे।[2]

लोकमान्य स्वराज्यकी आत्मा थे। स्वराज्य उनके जीवनका ध्येय था। उनकी आत्मा आपसे जानना चाहती है कि आप स्वराज्यके लिए क्या-कुछ करनेको तैयार है। क्या उनकी स्मृतिको अमर बनानेके लिए आप लोग एक करोड़ रुपया इकट्ठा नही कर सकते? आप लोग जबतक विदेशी कपडा नही छोड देते, स्वराज्य पास आनेका नाम नही लेगा। अगर कोई खादी न पहने, बिना महीन मलमलके अपना काम न चला पाये तो मैं उसके घरमे पाँव न रखूँ। अभीतक मै सरकारसे यह करो वह करो, कहता रहा। अब मैं लोगोको उनका कर्त्तव्य बताना चाहता हूँ। मै उनका दास हूँ, लेकिन कुछ शर्तोपर। उन [शर्तों] के पालनसे मेरी सेवा मिलेगी। पाँव छूनेमें तो केवल पतन ही है। आप लोगोको अहिंसात्मक असहयोगके सिद्धान्तोपर दृढ़ रहना चाहिए। हिंसात्मक कोई भी कार्य अपनी प्रतिज्ञाको तोड़ता है और मालेगाँवकी क्रूरताओ-के समान घृणित है। आप लोगोको हिन्दू-मुस्लिम एकताके महत्त्वको कभी नही भूलना चाहिए। और मेरे हिन्दू भाइयोको चाहिए कि वे इस समय गोरक्षाका प्रश्न अपने मुसलमान भाइयोकी भलमनसाहतपर छोड दे। मुझे आशा है कि वे इस प्रश्नका सन्तोषजनक निपटारा करेंगे। खासकर ऐसी हालतमे जब गोमास खाना उनके धर्मके अनुसार आवश्यक नही है।

बहनोको महीन कपड़े पहनना छोड़कर खद्दर आरम्भ करना चाहिए। आप लोगोको जगज्जननी सीताका अनुकरण करना चाहिए। जिन्होने रावण द्वारा अपने सन्मुख रखे हुए उत्तमोत्तम पदार्थोको त्याग कर, फलाहारपर जीवन-निर्वाह करना उचित समझा था।

अस्पृश्यताके विषयमे मुझे यह कहना है कि यह वेद विहित नही है और हिन्दू धर्मके सिद्धान्तोके बाहर है परन्तु इस प्रथाके सुधारका अर्थ आपसमे रोटी-बेटी व्यवहार आरम्भ करना नही है।

अन्तमे मुझे यह कहना है कि जूनके अन्तमे मेरा यह घूमकर व्याख्यान देना बन्द हो जायेगा। मैं इसी अवधिमे आवश्यक रकम इकट्ठी कर लेनेकी आशा करता हूँ।[3]

आज, २९–५–१९२१

१. सभा-स्थलपर लोकमान्यकी प्रतिमाकी ओर संकेत करते हुए।

२. आगेका अनुच्छेद **नवजीवन**में प्रकाशित गांधीजीके यात्रा-विवरणसे अनूदित है।

३. भाषण समाप्त होनेपर चन्दा एकत्रित किया गया और लगभग ४ हजार रुपया इकट्ठा हुआ। कुछ स्त्रियोंने अपने आभूषण भी दिये।

५९. भाषण : संगमनेरकी सभामें[1]

२२ मई, १९२१

आज हम सबसे बड़े साम्राज्यसे मुकाबला कर रहे हैं। हमें तीन महान् प्रश्नोको सुलझाना है। लेकिन हम जो स्वाँग करते हैं, लगता है हमसे उस दिशामें कुछ बननेवाला नही है। आजके दृश्यको देखकर मेरे मनमे विचार उठा है कि यदि समस्त हिन्दुस्तानमे इसी तरह काम हो रहा है तो फिर हिन्दुस्तान स्वराज्यके योग्य नही है। हिन्दुस्तानमे स्थान-स्थानपर मिलनेवाले प्रेमसागरमे मैं निमज्जित हो रहा हूँ। लेकिन जबतक इस सागरसे अग्नि-जैसी शक्ति प्रगट नही होती तबतक यह-सब निरर्थक है। मुझे अपनी पूजा नही भाती, मुझे चरण-स्पर्श अच्छा नही लगता, मुझे तो वह अत्यन्त अप्रिय है। इसमे हिन्दुस्तानका पतन निहित है। हिन्दुस्तान चरण-स्पर्शसे स्वराज्य प्राप्त करनेवाला नही है, हिन्दुस्तानको तो मैं सीधा तनकर खडा हुआ देखना चाहता हूँ। मुझे न तो गाधी-राज्य चाहिए और न व्यक्ति-राज्य; मुझे तो सिर्फ स्वराज्य चाहिए। इसलिए मुझे चरण-स्पर्श नही चाहिए।

× × ×

यूरोपीय सभ्यताके ऊपरी व्यवहारका अनुकरण करनेमे हमने अति कर दी है। इसकी अपेक्षा यदि हम उनमे निहित सुन्दरताका अनुकरण करते तो अधिक अच्छा होता। इस रिबनका उपयोग तो केवल स्त्रियाँ ही करती है। यदि आपको इस बातका खयाल नही है कि कहाँ किस वस्तुका उपयोग करना चाहिए तो आप उसका उपयोग करते ही क्यो हैं? आपके यह माननेसे कि पुष्पके साथ रिबनकी शोभा बढती है यह प्रगट होता है कि हिन्दुस्तानमे हमारे आचरणमे वर्णसकरता आ रही है। काग्रेस महासमिति इससे बचनेका उपाय बताती है। आप जो-कुछ करते हैं वह न तो विवेकपूर्ण है और न विचारपूर्ण ही। क्या आप तिलक महाराजकी पूजा करते हैं? तिलक महाराजने तो एक ही मन्त्र बताया है। इसी मन्त्रका जाप करते हुए उन्होने देहत्याग किया। तिलक महाराजकी यह विरासत तो समस्त हिन्दुस्तानके लिए है। लेकिन हिन्दुस्तानके अन्य भागोकी अपेक्षा आपका कर्त्तव्य अधिक है। १ अगस्तके दिन आप उनकी आत्माको क्या उत्तर देंगे? [यदि आप और कुछ नही कर सकते तो] कमसे-कम आप पूर्ण स्वदेशी तो बने। मन्दिरमे विदेशी चीजोका उपयोग छोड दें। पुजारियोंसे मैं कहता हूँ कि आप मुझे विदेशी कपड़ेसे सज्जित मन्दिरोमें ले जाते हैं, उससे मुझे दु:ख होता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९–६–१९२१

१. गाधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

६०. पाँच सौवीं मंजिल

मैने शिमलाका नाम सुना था, उसे देखा न था। देखनेकी इच्छा होती थी लेकिन जाते हुए भय होता था। मुझे ऐसा लगा करता था कि शिमलेमे मै खो जाऊँगा। शिमलेमे मै अकेला व्यक्ति ही जगलीके समान दिखाई दूँगा, मुझे ऐसा भी प्रतीत होता।

अब शिमला देखा। मै अभी भारतभूषण पण्डित मालवीयजीसे मिलकर आया हूँ; उनकी छत्रछायामे हूँ। मकानका नाम "शान्त कुटी" है और यहाँ आसपास मेरे अपने साथी है। जलवायु सुन्दर है। प्रकृतिने अपना सौन्दर्य बिखरा देनेमे कुछ उठा नही रखा है। ये पहाड हिमाचलके अग है। मुझे बाहरी वातावरणसे तनिक भी शान्ति नही मिलती, और अगर मेरी [मानसिक] शान्तिका आधार बाहरके वातावरणपर ही निर्भर करता हो तो मुझे यहाँसे भाग जाना पड़ेगा अथवा मै पागल हो जाऊँगा।

इस नगरका नाम शिमला माताके नामपर पड़ा है। ठीक उसी तरह जिस तरह बम्बईका मुम्बादेवी और कलकत्ताका कालीके नामपर पड़ा है। या तो ये तीनो देवियाँ पाषाण-हृदया है अथवा उनके उपासक उन्हे भूल गये है। कालीके मन्दिरका विचार करता हूँ तो भय लगता है। इसे मन्दिर ही कैसे कहा जा सकता है। वहाँ प्रतिदिन अक्षरश. रक्तकी नदी बहती है। वहाँ धर्मके नामपर जिन हजारो बकरोकी बलि दी जाती है वे ईश्वरके दरबारमे कैसी फरियाद करते होगे, इसकी किसे खबर है? कालीमातामे कितना धीरज है? क्या वही यह राक्षसी भोग माँगती है? भोग चढ़ानेवाले उसे बदनाम करते है।

बम्बईमे भी कम अत्याचार नही होते। लेकिन वहाँ धर्मके नामपर ऐसी हत्या नही होती। शेयर बाजारमें जानेवाले, घुड़दौड़मे पानीकी तरह रुपया बहानेवाले लोग पाखण्डको पाखण्डके नामसे ही पहचानते है, अपनी दुर्बलताको स्वीकार करते है। बम्बईके कसाईखानोमे जो कत्ल होता है वह पेटकी खातिर होता है, धर्मके नामपर नही। इस जानकारीके कारण बम्बईमे रहना असह्य नही जान पडता।

लेकिन शिमला? दिल्लीको हिन्दुस्तानकी गुलामीकी निशानी नही कहा जा सकता। असली राजधानी दिल्ली नही है; शासकोका असली गढ तो शिमला है। शिमलाकी नगरपालिकाने माननीय वाइसराय महोदयको बताया कि अधिकारी-वर्ग शिमला पहाड़की शान्ति और उसकी ठडकमे प्रतिवर्ष अपनी 'पॉलीसी' राज्यनीति गढ़ता है। यह राज्यनीति कैसी है इसका हमने १९१९ की गर्मियोमे जी-भरकर अनुभव किया। इस राजनीतिके तापका माप हिन्दुस्तानके गरमसे-गरम भागसे ज्यादा है।

शिमला देख लेनेके बाद भी मेरे इन विचारोमे कोई परिवर्तन नही हुआ है। शिमलापर राशि-राशि पैसा खर्च किया जाता है। मेरे-जैसे अभिमानी को भी यहाँ नीचा देखना पडा। शिमलामे घोडे अथवा रिक्शेकी सवारी मिलती है। दक्षिण आफ्रिकामे मै कभी रिक्शेपर नही बैठा लेकिन मेरी कमजोरीने यहाँ मुझे उसपर बैठनेके लिए विवश

कर दिया। छोटे-वड़े, स्त्री-पुरुष, सभी रिक्शेमे बैठते है। मोटर चलाना मना है, जो उचित भी है। घोड़ागाड़ीका सिर्फ वाइसराय महोदय और एक-दो अन्य अधिकारी ही इस्तेमाल कर सकते हैं, यह भी ठीक लगता है। यहाँकी सडके सँकरी है। ऊँचे पहाडो-पर बनाई गई सड़के सँकरी ही होती है। इन सड़कोपर गाडियोका आवागमन बहुत नही हो सकता।

लेकिन आश्चर्य तो यह है कि रिक्शा यहाँ इतनी आम सवारी हो गई है मानो गाडीमे जुतना हमारा सहज धर्म हो। रिक्शा ले जानेवाले भाइयोसे मैने पूछा, "तुम यह धन्धा क्यो करते हो?" जवाव मिला, "पेट तो भरना है न?" यह जवाव अपनेमे पूरा नही है सो मै जानता हूँ। और फिर वे शौककी वजहसे जानवर वनते है, ऐसा तो कदापि नही कहा जा सकता। मेरी शिकायत तो यह है कि हम खुद ही मनुष्यको जानवर बनाते है। फिर अगर हम साम्राज्यके वैल वने हुए है तो इसमे आश्चर्यकी क्या बात है?

रिक्शाका उपयोग सिर्फ अग्रेज ही करते हो सो नही बल्कि जितने मुक्त-भावसे वे उसका उपयोग करते है उतने ही मुक्त-भावसे हम भी करते है। दूसरोको वैल बनानेमे योग देकर हम स्वय भी वैल बन गये है।

एक रिक्शा पीछे चार व्यक्ति होते है। इनमे से तीन को प्रति मास १८ रुपये और चौथेको उनका अगुआ होनेके कारण बीस रुपये मिलते है। रास्तेमे इतना उतार-चढाव होता है कि चार व्यक्ति होनेके बावजूद वे हाँफ उठते है। यह भी सौभाग्यकी बात है कि रिक्शेकी बनावट कुछ ऐसी होती है कि उसमे एक ही व्यक्ति बैठ सकता है।

शिमला ७,५०० फुटकी ऊँचाईपर स्थित है। यदि लोग इतनी ऊँचाईपर से चलनेवाले राजकाजका अर्थ समझ ले तो यह साम्राज्य क्या है, इसका उन्हे पता चल जाये। बम्बईके सारे व्यापारी अगर सबसे ऊपरी मजिलपर वैठकर व्यापार करे तो ग्राहकोका क्या हाल होगा? चौथी मजिल लगभग ६० फुट ऊँची होगी। हिन्दुस्तानका व्यापार चलानेवाले इस सरकार रूपी व्यापारीके तीस करोड ग्राहकोको साठ फुटके बदले साढे सात हजार फुट ऊँचे जाना पडता है। वम्वईका व्यापार चौथी मजिलसे नही चल सकता, सो हम जानते है। "हिन्दुस्तानका व्यापार पाँच सौवी मजिलपर चलता है"। फिर अगर हिन्दुस्तान भूखा मरता है तो इसमे आश्चर्यकी क्या वात है? शिमला नगरकी तलहटीमे तीन करोड बच्चे भूखसे विलविलाते रहते है, हमे इसमे अव कुछ आश्चर्यकी वात नही जान पडनी चाहिए।

"जवतक साम्राज्य और हमारे बीच पाँच सौ मजिलका अतर है तबतक उस अन्तरको वनाये रखनेके लिए डायरशाहीको अवश्य चलना चाहिए।"

स्वराज्यका कारोबार भी अगर उसी मजिलसे चलाया जाये तो वह स्वराज्य नही हो सकता।

लेकिन कोई समझदार व्यक्ति कहेगा कि मैने ठीक-ठीक तुलना नही की है। भले ही सेठ ७,५०० फुटकी ऊँचाईपर रहे लेकिन वह अपने गुमाश्तेको, पटवारीको, पटेलको और मामलतदारको तो जमीनपर ही रखता है। यदि सेठ अपने खर्चसे पाँच

सौवी मजिलपर रहता हो तो इस दलीलमे कुछ सचाई हो सकती है लेकिन सेठ तो वहाँ ग्राहकके खर्चपर रहता है। सेठ वहाँ रहनेका खर्च लेता है और अपना लाभ भी लेता है। ऐसे व्यापारीके ग्राहकोका दिवाला निकल जाये, वे भिखारी बन जाये तो इसमे आश्चर्यकी क्या बात है?

यह तो बहँगीमे गगाजल ले जानेसे भी ज्यादा महँगा हुआ। गगाजलकी बहँगी रामेश्वरमतक जाती थी। एक लुटिया-भर गगाजलका दाम देनेवाला ही जानता है कि वह गगाजल महँगा था अथवा सस्ता।

शिमलेमे बहुत ज्यादा आबादी हो गई है। सारे घर भर गये है। महँगाई तो होगी ही। पानी भी दो-एक हजार फुट नीचेसे आता है। लोटा-भर पानी इस्तेमाल करते हुए भी शरम आती है। जहाँ हम रहते है वहाँ पानी तो मिल जाता है पर हमे दिन भर ही उसकी जरूरत पड़ती है इसलिए पानी भरनेवाले को बहुत श्रम उठाना पड़ता है। शिमलेके आसपास झरने नही है। स्वराज्य प्राप्त करनेका अर्थ यह हुआ कि सरकारको पाँच सौवी मजिलसे नीचे जमीनपर लाना और अपने तथा उसके बीच स्वाभाविकता पैदा करना — फिर भले ही वह ब्रिटिश सरकार हो अथवा देशी। भेद काले-गोरेका नही है, भेद ऊँच-नीचका है। ब्राह्मण वह है जो भगी-की सेवा करे, वह नही जो भगीके कन्धोपर सवारी करे। जो जनता और अपने बीच पाँच सौ मजिलोका अन्तर रखता है वह राजा नही है। कर्मोसे हम सुखी अथवा दु खी, राजा अथवा रक होकर जन्म लेते है। सुखी पुरुषार्थ करके दुखियोके दु खको टालता है, राजा पुरुषार्थ करके रकको अपने समान बनानेका प्रयत्न करता है अर्थात् स्वय राजा होते हुए भी जान-बूझकर रंक बनता है। ईश्वर दासानुदास बनकर ऐश्वर्य प्राप्त करता है, पतितको पावन करके स्वय पूजनीय बनता है। शिमलामे मुझे ठीक इसका उलटा दिखाई दिया और मेरा हृदय रो उठा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-५-१९२१

६१. टिप्पणियाँ

नये वाइसराय

मै पण्डितजीके अनुरोधपर शिमला गया। उनकी तबीयत ठीक न होनेकी वजहसे मै जहाँ हूँ वहाँ आनेकी बजाय उन्होने मुझे बुलाया। मै उन्हे अपने पास कैसे आने देता? मै शिमला गया। वहाँ पडितजीने मुझे बताया कि वाइसराय महोदय मुझसे मिलना चाहते है। मैने वाइसराय महोदयको लिखा कि यदि उनकी मुझसे मिलनेकी इच्छा है तो उनसे मिलने आने और मुझे जो-कुछ कहना है उसे कह सुनानेमे खुशी होगी। उन्होने मुझे समय लिख भेजा। हमारी मुलाकात लम्बी चली। वाइसराय महोदयने अत्यन्त धैर्यसे, अत्यन्त विनय और ध्यानसे मेरी पूरी बात सुनी। उन्हे जो कहना था सो मैने सम्मानपूर्वक सुना। हम दोनो परस्पर एक-दूसरेसे कुछ परिचित हो गये।

इस बातचीतके परिणामको मैं नही जानता, और जानता भी हूँ। हमे जो चाहिए वह देना उनके वशकी बात नही है। यदि वे अच्छे हो, सच्चे हो और हमारी बातको समझ ले तो वे हमारे एक मददगार मित्र साबित हो सकते हैं। बाकी हमें जो-कुछ लेना है सो तो हमारे ही हाथ मे है। हममे प्राप्त करनेकी शक्ति होनी चाहिए। यदि लेनेवाला हो तो देनेवाला मिल ही जाता है। सागरके पास प्याला लेकर जानेवाला अगर घडाभर पानी न मिलनेकी शिकायत करे तो उसका क्या अर्थ हो सकता है?

इसलिए स्वराज्य लेनेकी, खिलाफत और पजाबका न्याय प्राप्त करनेकी शक्ति हममे आनी चाहिए। वह अभी नही आई है; हाँ, आती जाती है। हमारे मार्गमे मालेगाँव-जैसे विघ्न पडे हुए हैं। अपने आलस्यके कारण हम निर्धारित वस्तुको प्राप्त नही कर पाते और खीज दूसरोपर उतारते हैं। सारी खीज अपने ऊपर ही उतारना असहयोगका एक लक्षण है।

साथियोसे

माननीय वाइसराय महोदयसे मुलाकात करनेके बाद मैं साथियोसे इतना तो कह सकता हूँ कि उन्हे आलस्य, कोरी बाते, तमाशा और भाषण आदिको छोडकर अपने-अपने कार्योमे लग जाना चाहिए।

हमारे सम्मुख पाँच कार्य हैं (१) अस्पृश्यता-निषेध, (२) मद्य-निषेध; (३) कांग्रेसके सदस्य बनाना, (४) तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा उगाहना, और (५) [घर-घरमे] चरखेका प्रचार करना।

इनमे से एक भी कार्यके लिए भाषणकी जरूरत नही है।

अस्पृश्यताको मिटानेके लिए हमे भगी आदिकी सेवा करनी चाहिए, उनके घर जाना और उनकी स्थितिमें सुधार करना चाहिए।

मद्य-निषेधके लिए शराबकी दुकानोके आगे खडे होकर जानेवालो को विनयपूर्वक सावधान करना चाहिए और अगर वे इतने पर भी जाना चाहे तो उन्हे जाने देना चाहिए। हर बिरादरीको मद्यपानके विरुद्ध प्रस्ताव पास करना चाहिए और उसको भंग करनेवाले व्यक्तिका बहिष्कार करना चाहिए।

बहिष्कार अर्थात् धोबी, नाई आदिको बन्द करना नही। बहिष्कारका अर्थ तो यह है कि उसके यहाँ पानी न पिये, उससे विवाह-सम्बन्ध न रखें, उसके यहाँ खाने-पीनेका व्यवहार न रखे। बहिष्कार दो तरहका है, एक सभ्य और दूसरा असभ्य। सभ्य बहिष्कारका मूल प्रेम है, असभ्यका मूल तिरस्कार है। शान्तिमय असहयोगमें असभ्य बहिष्कार हराम है, त्याज्य है। सभ्य बहिष्कारमे सेवा स्वीकार न करने, साथ न देनेका भाव है। असभ्य बहिष्कारमे दण्ड देनेका, दुःख देनेका भाव है। शराब पीनेवालेको हमे दण्ड न देकर उसका साथ त्यागकर अपना दुःख प्रदर्शित करना है। साथ त्याग करनेका अर्थ हुआ पानी और रोटी-बेटीका व्यवहार छोडना लेकिन किसीकी सेवा बन्द करना निर्दयता है। कुँआ और तालाब सबके लिए है। हज्जाम, धोबी और

परिवहन आदि सार्वजनिक सेवाएँ अच्छी-बुरी सबके लिए है। हज्जाम, धोबी और भिश्ती घर नही पूछते। खूनीको भी पानी पीनेका हक है। इस तरह अच्छे-बुरेमे जब हम विवेक करना सीखेंगे तभी स्वराज्य जल्दी मिलेगा। मद्य-निषेधमे मुझे बहिष्कारका इतना ही उपयोग करनेकी आवश्यकता जान पड़ती है। इसीसे बहिष्कारपर इतना विचार किया। अनेक स्थलोपर असभ्य बहिष्कारका कडवा फल मिला है। असभ्यता मात्रका त्याग करनेमे ही हमारा बल निहित है। शराबकी आदतसे व्यक्ति उसका इतना अधिक गुलाम हो जाता है कि वह दयाका पात्र बन जाता है। दयासे ही हम उसे सुधार सकते है।

शराबकी दुकानवालो का भी तिरस्कार न करे। उनके लिए अपने लम्बे समयसे चले आ रहे धन्धेको छोड़ना सहल बात नही है। उन्हे उसकी एवजमे दूसरा धन्धा सूझना चाहिए, उसकी जानकारी होनी चाहिए। यदि मै समझा सकूं तो सब मद्य-विक्रेताओको पीजनेवाला, कातनेवाला और बुननेवाला बना दूं। इसमे तनिक भी सन्देह नही कि उससे उन्हे पूरी आजीविका मिल जायेगी। शराबकी दुकानोको चलानेके काममे स्त्रियाँ और बच्चे काम नही कर सकते, कातने-बुननेमे सब मदद कर सकते है। इसलिए किसीको किसीका पेट भरनेकी जरूरत नही रहती। सभी थोडा-बहुत अपना-अपना योगदान दे सकते है।

काग्रेसके सदस्य बनाने, तिलक महाराजके स्मरणार्थ पैसा इकट्ठा करने और चरखेका प्रचार करनेके लिए सभाकी जरूरत नही है, बल्कि अनेक स्वयसेवकोको घर-घर जाना चाहिए। यदि इस तरह काम नही होता तो जून मास तककी योजना सफल नही होगी।

हमे बाते करनेका भी अवकाश नही है। मै तो अपने ही उदाहरणसे समझता हूँ कि अगर एक भी क्षण बातोमे, दर्शनमे अथवा आलस्यमे जाता है तो वह बादमें हाथ नही आता। हमारे पास अभी न तो हर्ष [प्रकट करने]का समय है और न शोकका ही। जिन्होने कार्य करनेका रस चखा है उनसे तो मै अवश्य कहना चाहता हूँ कि उन्हे एक क्षण भी खाली नही जाने देना चाहिए। कोई भी क्षण हमारा अपना नही है, उसे तो हम देशको अर्पित कर चुके है।

चरखेका अर्थ

चरखेके प्रचारका अर्थ यह नही है कि समस्त परिवारोमे चरखेको स्थान दिलानेके बाद हम अपने कर्त्तव्यसे मुक्त हो गये। इसका सच्चा अर्थ तो यह है कि चरखा बराबर चलता रहे और परिवारके लोग खादी पहनने लगे। प्रत्येक चरखा कमसे-कम चार घटे चलना चाहिए, एक घटेमे कमसे-कम तीन तोला काता जाना चाहिए। हर गाँवमे इसी प्रमाणमे प्रति चरखेके हिसाबसे सूत कतना चाहिए। तभी सच्चे अर्थोमे चरखा चलनेकी बात कही जायेगी। यह जनता द्वारा आलस्यको छोडनेकी, प्रत्येक कार्यकर्त्ता द्वारा इस कार्यमे योगदान देनेकी बात है। यह बात चरखा बना लेनेसे ही पूरी होनेवाली नही है।

इस तरह जब नियमपूर्वक काम चलेगा तभी स्वराज्य मिलेगा।

मै एक मित्रके साथ बातचीत कर रहा था। उन्होने चरखेको प्रधानपद दिया, मेरे द्वारा इसका कारण पूछनेपर उन्होने कहा कि चरखा हमे आर्थिक स्वतन्त्रता तो देगा ही, लोगोको स्वावलम्वी भी बनायेगा लेकिन सबसे अधिक सेवा तो उसकी यह होगी कि इससे स्त्री-पुरुष दोनोको चैनसे विचार करनेका अवसर मिलेगा और सब शान्त तथा पवित्र होगे। जो निरन्तर चरखा कातेगे उनपर उसकी इतनी गहरी छाप पड़ेगी जितनी गहरी छाप किसी और चीजकी नही पड सकती।

कौन शामिल हो सकते है?

एक मित्र पूछते है कि क्या काग्रेसमे सहकारवादी भी सदस्य बन सकते है? जो काग्रेसके सविधानको स्वीकार करते है वे सहकारवादी होनेके बावजूद सदस्य बन सकते है। तथापि मेरे विचारसे वे प्रतिनिधि नही हो सकते।

राष्ट्रीय झंडा

वही मित्र कहते है कि चरखेके प्रति सबको श्रद्धा नही है, अनेक लोगोको उसकी शक्तिके सम्बन्धमे शका है, तो फिर क्या भारतीय झडेपर कोई दूसरा चिह्न नही लगाया जा सकता? उन्होने ओकार सुझाया है। हकीकत यह है कि प्रत्येक निशानीका कोई-न-कोई तो अवश्य विरोध करेगा। लेकिन करोडो हिन्दू और मुसलमान जिसे स्वीकार करे वैसी शक्ति चरखेमे तो है ही। ओकारमे भले ही अर्धचन्द्र हो तथापि सब मुसलमान तो उसे स्वीकार नही कर सकते। मेरा दृढ विश्वास है कि राष्ट्रीय झडेमें किसी धर्म विशेषका प्रतीक नही आना चाहिए।

खिलाफत "नोट"

एक मित्रने मुझे उलाहना दिया है कि खिलाफतकी एक रुपयेकी रसीदका उपयोग नोटके रूपमे किया जाता है और उसके सम्बन्धमे मैने कुछ भी नही लिखा। मुझे पता था कि इस सम्बन्धमे खिलाफत समितिने कडे कदम उठाये थे, इसीलिए मैने कुछ भी नही लिखा। इस सम्बन्धमे मेरे पास यह पहली ही शिकायत आई है। हजारो रुपयेकी रसीदे बेच डाली गई है। लेकिन अब बहुत कम लोग इसका उपयोग नोटके रूपमे कर रहे होगे। शुरू-शुरूमे ऐसी गलत धारणा जरूर थी। इससे समितिको ही नुकसान होने लगा, फलत समितिने ही कडी कार्रवाई की थी।

रामराज्यका अनर्थ

यही मित्र रामराज्यका अक्षरार्थ करते हुए पूछते है कि जबतक राम और दशरथ जन्म नही लेते तबतक क्या रामराज्य मिल सकता है? हम तो रामराज्यका अर्थ स्वराज्य, धर्मराज्य, लोकराज्य करते है। वैसा राज्य तो तभी सम्भव है जब जनता धर्मनिष्ठ और वीर्यवान् बनेगी। काग्रेस तथा सभी असहयोगी प्रयत्नशील है कि जनता धार्मिक बने। यदि कोई राजा स्वय प्रजाके बन्धन काट दे तो भी प्रजा उसकी गुलाम बनी रहेगी, भले ही वह सद्गुणी हो। हम तो राज्यतन्त्र, राज्यनीतिको बदलनेके लिए प्रयत्न कर रहे है, बादमे हमारे सेवकके रूपमे अग्रेज रहेगे अथवा भारतीय

हमें इसकी चिन्ता नही करनी पडेगी। हम अग्रेज-जनताको वदलनेका प्रयास भी नही करते। हम तो स्वयं अपने-आपको वदलनेका प्रयास कर रहे है।

दक्षिण आफ्रिका

वही भाई दक्षिण आफ्रिकाका उदाहरण देकर लिखते है कि जैसी दशा वहाँ हुई क्या वैसी ही यहाँ नही हो जायेगी? हम वहाँ लडे और जीते, तथापि हम आज फिर वहीके-वही है, जहाँसे हम चले थे। यह गलतफहमी है। जिस कानूनको वदलवानेके लिए हम लडे थे वह तो वदल ही दिया गया। वहाँकी लड़ाई राज्य-पद्धतिको वदलनेकी नही थी, वह तो अमुक कानूनके विरुद्ध थी। रौलट अधिनियम रद हो गया होता और अन्य दु:ख जैसेके-तैसे रह जाते तो भी वह सत्याग्रहकी विजय ही होती। रौलट अधिनियमपर अमल किया जाना तो वन्द हो ही गया। रौलट अधिनियमको सविधान पुस्तिकासे नही हटाया गया इसलिए और इस वीच अन्य वातोको लेकर हमे लड़ना पड़ा। यदि हम खिलाफत और पजावके सम्वन्धमे न्याय प्राप्त कर लेगे तथा राज्यनीतिको वदल सकेगे तो कमसे-कम उतना मिला तो माना ही जायेगा। लेकिन सम्भव है कि उसके वाद अन्य दूसरे तथा नये विघ्न आ जाये, लेकिन उससे क्या? शूरोके सामने लड़ाई लड़नेके अवसर तो आते ही रहते हैं। जव विघ्न सामने आये तव सत्याग्रह रूपी शस्त्र-भण्डार तो तैयार ही है, उस भण्डारमे से जिस शस्त्रकी जरूरत होगी, वह सत्याग्रहीको मिल जायेगा।

सफेद टोपी

सफेद टोपीको गांधी टोपी कहकर सयुक्त प्रान्तके एक कलक्टरने सरकारी नौकरोंको उसे पहननेसे मना किया है। शिमलामे अनेक सरकारी नौकर मुझसे मिलने आये, उनसे मैंने कहा, "आप नौकरीमे रहते हुए भी तिलक स्वराज्य-कोषमें अवश्य चन्दा दे सकते है और खादीकी पोशाक पहन सकते है। आप विदेशी टोपियोके वदले खादीकी टोपियाँ पहन सकते है।" उन्होने कहा: "यदि हम खादीकी टोपी और कपडे पहनेगे तो हमें नौकरीसे निकाल दिया जायेगा।" इन दुर्वल वचनोको सुनकर मुझे दु:ख हुआ। यदि खादीकी टोपी पहनना अपराध माना जाता है तो वह अपराध करके नौकरी से मुक्त होना ही सर्वथा उचित माना जायेगा। और फिर यदि ज्यादा लोग खादीकी टोपी पहने तो कोई उन्हे नौकरीसे निकाल भी नही सकता और अगर निकाल भी दे तो उन्हे निश्चिन्त रहना चाहिए। क्या प्रजामे इतना भी वल नही आया कि वह अपनी इच्छानुसार कपड़े पहननेकी स्वतन्त्रताका परिचय दे सके? मुझे तो यह उम्मीद है कि जनता, सरकारी वर्ग और अन्य वर्गके लोग खादीकी टोपी आदिको सुसस्कृत पहरावा मानकर अवश्य ही उसका उपयोग करेंगे।

स्थायी अंग

असहयोगका एक अंग अस्थायी है और दूसरा स्थायी। स्थायी अंग तो सभीपर लागू होता है। वह यह कि हम स्वराज्य मिलनेके वाद खादीका त्याग करके विदेशी वस्त्र न पहनें, फिरसे शराव न पीने लगे और स्वराज्य मिलनेके वाद शिक्षा-पद्धतिमें

हम जो फेरफार कर रहे हैं उसे बन्द न करे। स्वराज्य मिलनेपर सरकारी अदालतों और स्कूलोंमें जाना अधर्म न समझे, सरकारकी ओरसे मान प्राप्त करनेमें अपमान न माने।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२–५–१९२१

६२. पत्र : न० चि० केलकरको

येवला
२३ मई, १९२१

प्रिय मित्र,[1]

बेजवाडाका कार्यक्रम पूरा करनेके लिए मैं अत्यधिक व्यग्र होता जा रहा हूँ। क्या आप कृपया तार या पत्र द्वारा यह सूचित करेंगे कि पत्र या तार भेजनेके दिन तक आपके प्रान्तने तिलक स्मारक [कोष] के लिए कितना धन जमा किया है और ३० जूनसे पहले आप निश्चित रूपसे कितना धन एकत्र होनेकी आशा रखते हैं? इन दोनोंके आँकडोंकी सूचना मुझे लैबर्नम रोडके पतेपर रविवार २९ तारीख तक मिल जानी चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि आपने अपना निर्धारित अंश अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको भेज दिया होगा।

मैं २९ को बम्बई पहुँच रहा हूँ, ३० की शामको वहाँसे भडौंचके लिए प्रस्थान करूँगा। चार दिन वहाँ रहूँगा, चार दिन अहमदाबादमें या उसीके आसपास बिताऊँगा और फिर बाकी जून बम्बईमें बिताऊँगा, ताकि अधिकसे-अधिक जितना चंदा मैं एकत्र कर सकता हूँ, करूँ। यदि मेरे कार्यक्रमके विषयमें आपको कोई सुझाव देना हो तो कृपया उसके बारेमें भी तार दें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ३११३) की फोटो-नकलसे।

१. नरसिंह चिन्तामण केलकर (१८७२–१९४७), राजनीतिज्ञ और साहित्यिक, तिलकके सहयोगी, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके मन्त्री रहे; १९२० में कांग्रेस संविधानके संशोधनमें गांधीजीकी सहायता की। स्वराज्यवादी दलके नेता।

६३. भाषण: बरसीमें[1]

२४ मई, १९२१

हमारे भाईने बड़े उल्लासपूर्वक कहा कि बरसी जिला[2] खुशीसे अपने हिस्सेका काम पूरा कर लेगा। मैं भाई सुलाखेको उनके हिसाब लगानेके ढगपर बधाई नही दे सकता। यदि हिन्दुस्तानके प्रत्येक जिले, ताल्लुके और फिरकेके लोग ऐसा उलटा हिसाब करने लगे तब तो हिन्दुस्तानका हर व्यक्ति दो पैसे देकर अपनी जिम्मेदारीसे मुक्त हो जायेगा। लेकिन इन तीस करोडमे से तीन करोड़ तो ऐसे है कि जिन्हे एक दिनका पूरा खाना भी नही मिलता। ऐसे तीन करोड़ लोगोसे कौन दो-दो पैसे लेगा? हिन्दुस्तानके अपाहिजोसे कौन पैसे उगाहेगा? बम्बईवाले कहते है कि हमारा हिस्सा पूरा हो गया ऐसा कहकर यदि वे चुपचाप बैठ जाये तो हम कभी अपना काम नही कर सकेंगे। ऐसे हिसाब-किताबको छोडनेपर ही काम चल सकता है। प्रत्येक स्त्री-पुरुपको विचार करना, समझना चाहिए कि हिन्दुस्तानमे एक करोड़ रुपया इकट्ठा करनेके लिए एक व्यक्तिको कितना देना उचित होगा? मैं तो पूछता हूँ कि आपके जिलेके लोगोकी कितनी शक्ति है? हम तिलक महाराजकी पूजा करते है, हमे उनके जीवनसे कुछ-न-कुछ सबक सीखना चाहिए। क्या उन्होने कभी ऐसा विचार किया था कि जितना प्रत्येक भारतीय देता है मैं भी देशको उतना ही देकर चुपचाप बैठ जाऊँ? उन्होने तो अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया। मैं आपसे पूछता हूँ कि इस तरह सर्वस्व समर्पित कर देनेवाले कितने लोग है? सर्वस्व देनेकी बात तो छोड़ दे, आप जितना दे सकते है क्या आप सचमुच उतना दे चुके? परमेश्वर किसीसे शक्तिके बाहर कुछ नही माँगता। यदि कोई अपनी सामर्थ्य-भर नही देता तो वह देशद्रोही है, अपने गाँवका द्रोही है। आप अपने द्रोही न बने। मैं यह चाहता हूँ कि आप अपने-आपको धोखा न दे। हमें एक बहुत बड़े साम्राज्यके विरुद्ध लड़ना है। इस साम्राज्यने हमे धोखा दिया है, दगा दिया है और पेटके बल चलाया है। इसे हम दगाबाजीसे अथवा शैतानियतसे नही मिटा सकते। दगाबाजीका उपाय कुलीनता है और शैतानियतका सामना ईश-भक्तिसे होगा। आप अपने-आपको धोखा न दे। आप तिलक महाराजकी स्मृतिको कायम रखना चाहते है तो मैंने आज आपको जो शस्त्र बताया है उस शस्त्रके द्वारा आप तिलक महाराजकी सवत्सरी आनेसे पहले उस चीजको प्राप्त करे जो आपका जन्मसिद्ध अधिकार है।

जब आपने मुझे यह बताया कि २५ चरखे है और उनसे तैयार की गई खादी बम्बई और पूना जाती है तो मेरा हृदय रोने लगा। यहाँसे खादी बाहर जाये इसका अर्थ तो यह है कि आपको महीन कपड़ा चाहिए इसलिए आप यहाँ खादीका उपयोग

१. गाधीजीके यात्रा-विवरणसे उद्धृत।

२. वस्तुतः महाराष्ट्रके शोलापुर जिलेका एक ताल्लुका।

नही कर सकते और बाहर भेजते है। आपका स्वदेशीपन तो यह है कि आप अपनी आवश्यकताओपर दृष्टिपात करे और बम्बईका विचारतक न करे। मेरा स्वदेशाभिमान कहता है कि मुझे पहले अपने घरको, फिर शहरको और फिर प्रान्तको स्वतन्त्र बनाना चाहिए। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि २५ चरखोसे आप एक बडे साम्राज्यका मुकाबला नही कर सकेगे। हम यदि काग्रेसको मानते हो तो हमे स्वदेशी-तत्त्वको अच्छी तरहसे समझ लेना चाहिए। वकीलोने वकालत नही छोड़ी इसका मुझे दु ख है, लेकिन केवल वकीलोके धार्मिक अथवा निर्भय बननेसे कोई सारा देश निर्भय अथवा धार्मिक नही बन जायेगा। और फिर अच्छे-अच्छे वकीलोने तो आत्मबलिदान किया है और अपनी कुलीनताका परिचय दिया है। अन्य वकील भी, जो इस समय अश्रद्धासे भरे हुए है, जिन्हे कुटुम्बके भरण-पोषणका भय सताता है वे भी भविष्यमे हमारे इस कार्यमे शामिल हो जायेगे। लेकिन स्वदेशी कपडेके लिए तो केवल यही बात है कि जबतक देश उसे ग्रहण नही करता तबतक विदेशी कपडेका आयात बन्द नही होगा। मै अपने मनको भुलावा नही दे सकता। अन्य किसी भी व्यक्तिकी अपेक्षा मै अधिक भारतीयोसे मिलता हूँ। लेकिन ३० करोड व्यक्तियोके पास अभीतक मेरी आवाज नही पहुँची है। मिलका कपडा तो गरीबोके लिए है जिनतक मेरी आवाज नही पहुँच सकती। यदि मिलका कपडा केवल गरीबोके लिए रहे तभी मिल-मालिक कुलीन बनेगे। जिनतक मेरी आवाज पहुँचती है, उनके लिए सिवाय इसके और कोई उपाय नही है कि वे यही कपडा तैयार करे और उसका उपयोग करे। इसमें द्रव्य-यज्ञ अथवा होशियारीकी जरूरत नही है, इसके लिए हृदयगत भावनाओकी आवश्यकता है।

मौलाना मुहम्मद अलीने कहा है कि चरखा बेचकर हमने गुलामीकी नीव रखी है। यदि गुलामीसे मुक्त होना चाहते है तो आप चरखा खरीदे। चरखेके बिना हिन्दुस्तानमें होनेवाले अत्याचार और दरिद्रताको मिटाना असम्भव है। इसीसे मै कहता हूँ कि आप यह मिथ्याभिमान न करे कि २५ चरखोसे हमारे अच्छे दिन आ गये है। मै तो यहाँ किसीको भी खादी पहने हुए नही देखता। सिर्फ खादीकी टोपी पहनकर ही हम ५० करोडके व्यापारको बन्द नही कर सकते। आपको खादीका भार वहन करना ही होगा।

आपको अगर महीन कपडेकी जरूरत हो तो आप अपनी स्त्रीको तथा लडकीको महीन कातना सिखाये। ३० वर्ष पहले तो हमारे बुजुर्ग लोग महीन कपडा पहनते हुए शरमाते थे। मुझे अभीतक अपनी माताकी पवित्र स्मृति है। वे अपनी बहूके लिए महीन लहँगा बनवा देती थी; किन्तु स्वय पहनते हुए शरमाती थी। आप अगर हिन्दकी प्राचीन सादगीको ग्रहण नही करते तो आप हिन्दुस्तानकी बारीक मलमलका उद्धार नही कर सकते। आप यदि ४,२०० सदस्य बनाकर सन्तोष मान लेगे तो बिहारके भूखोको कौन सदस्य बनायेगा? जब आप १,२०,०००की बस्तीमे से ५० हजार सदस्य भरती कर लेगे तब कुछ काम होनेकी आशा बँधेगी। आप उलटा हिसाब छोडकर सीधा हिसाब करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९-६-१९२१

६४. टिप्पणियाँ

मौलाना मुहम्मद अली

'इडियन सोशल रिफॉर्मर'ने मुझे इसलिए आडे हाथो लिया है कि मैंने मौलाना मुहम्मद अलीके मद्रासवाले भाषणके बारेमें कुछ नही कहा और न लाला लाजपतरायके बम्बईवाले भाषणकी आलोचना की। सम्बन्धित अनुच्छेदमे जिन युक्तियो और वक्रोक्तियोकी भरभार है, उनके बारेमे मै कुछ नही कहूँगा। आलोचक यह नही जानते कि किन-किन कठिनाइयोमे मै 'यग इडिया'का सम्पादन करता हूँ। अखबार तो मै बहुत ही कम पढ पाता हूँ। लगातार यात्रामे रहनेके कारण अखबार मुझे मिल तक नही पाते। फिर भी यह आलोचना पढनेके बाद मैंने शिमलामे खास तौरपर वह अखबार मँगवाया जिसमे मौलानाका भाषण छपा था। मैंने उसे अभी-अभी पढा है। भाषणके जिस अशकी आलोचना की गई है, उसे मैंने दो बार पढा और मै इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि उसमे ऐसा कुछ भी नही है जिसे आपत्तिजनक कहा जा सके। इलाहाबादमे पत्रकारोके साथ अपनी मुलाकातके अवसरपर उन्होंने जो कहा था उससे यह भाषण बेमेल भी नही है। मद्रासवाले भाषणमे उन्होंने सिर्फ मुसलमानोका दृष्टिकोण पेश किया है। मुसलमानोके आदर्श आचरणके बारेमे मेरे बताये हुए विधि-निषेधोको उन्होंने अपनी इलाहाबादवाली मुलाकातमे मान लिया था। इसमे तो कोई शक ही नही कि अगर मुसलमानोको हथियार उठाने पडे तो वे ऐसा इस्लामकी रक्षाके लिए ही करेगे। कब्जा करनेका इरादा किये बगैर अफगान महज अग्रेजोको हरानेकी गरजसे भारतपर हमला नही कर सकते, हमारे ऐसा मान लेनेके कारण ही मुश्किल पेश आती है। अगर बात ऐसी ही है और अगर मुसलमान भारतके प्रति सच्चे है तब तो मुमकिन होते हुए भी वे अफगानोसे हाथ नही मिलायेगे। मुसलमानोको अपना सच्चा दृष्टिकोण पेश करनेका धार्मिक और सैद्धान्तिक अधिकार है, इससे तो हम इनकार नही करेगे। उलटे इसके लिए हमे उनकी इज्जत करनी चाहिए। अली भाइयोका सबसे बडा गुण है उनकी दिलेरी और ईमानदारी। और मद्रासके भाषणमे इन दो गुणोके अलावा मुझे और कोई बात ढूँढे नही मिलती।

लाला लाजपतराय

सबसे पहले तो 'इडियन सोशल रिफॉर्मर'को यह बता देना उचित होगा कि काम करनेका मेरा तरीका क्या है। लालाजीके भाषणकी कटु आलोचनाका जिक्र करते हुए मेरे सहयोगीने पूछा कि क्या मै उसके बारेमे कुछ कहना चाहूँगा। मेरे पास न तो उनका भाषण था और न उसकी कोई आलोचना ही मुझे देखनेको मिली थी। तब मैंने जानकारीके लिए लालाजीको लिखा और साथ ही यह सुझाव दिया कि अगर जल्दबाजीमे वे कोई ऐसी-वैसी बात कह गये हो तो उन्हे फौरन माफी माँग लेनी चाहिए। मेरा उनका सम्बन्ध निकटका है, और इसीलिए मुझे यह सौभाग्य प्राप्त है कि मेरे साथ

वे उदारता, क्षमाशीलता और स्पष्टवादिता बरतते है। जवाबमे उन्होने लिखा कि बम्बईवाला भाषण तो खास तौरपर बहुत सोच-विचारकर दिया गया था और उसमे किसी व्यक्तिपर कोई आक्षेप नही किया गया था। नरम दलवालोके बारेमे अपनी राय उन्होने किसी व्यक्ति विशेषको लक्ष्य करके नही बल्कि दलके बारेमे ही प्रकट की थी। मेरी राय जाननेके लिए उन्होने अपने भाषणकी कतरन भी साथ भेज दी। यह उस समयकी बात है जब मै सिन्धके दौरेपर था। उस भाषणको पढनेका वक्त मुझे नही मिला और मै उसे भूल ही गया था, लेकिन 'रिफॉर्मर' की झिडकीने सारी बात याद दिला दी। अब जब मैंने लालाजीके भाषणको पढा तो मुझे उसमें कुछ भी आक्षेपपूर्ण या अविनयपूर्ण नही लगा। बेशक भाषण लालाजीकी लडाकू शैलीमें है, और फिर वह सार्वजनिक नही, दल विशेषके सामने दिया हुआ भाषण है। वर्षो विदेशमे रहनेके कारण उन्होने आलोचनाकी पाश्चात्य शैलीको अपना लिया है। उनका वह भाषण पाश्चात्य शैलीका बढिया नमूना है। उसमे अशिष्टता तो कही भी नही है। उन्होने जो आरोप लगाये है वे नरमदलीय मन्त्रियोके आचरणको देखते हुए अनुचित नही है। उनका खास आरोप यह है कि वे नौकरशाहीके साथ घुल-मिल गये हैं। बडा सगीन आरोप उन्होने लगाया, लेकिन साथ ही मिसाले देकर उसे साबित भी कर दिया है। नरम दलवाले चाहे तो जवाबमे कह सकते हैं कि बाहरी आदमी मन्त्रियोकी मुश्किलोका अन्दाज नही लगा सकता। लेकिन यह बात तो उल्टे सरकारसे दोस्ती करनेवाले बडे नेताओकी गलतीको ही साबित करती है। ऐसी ही गति होगी, यह बात उन्हे पहले ही मालूम हो जानी चाहिए थी, या अब उन्हे अनुभवसे सीख लेना चाहिए कि सरकारी नीतिपर कारगर नियन्त्रण हुए बिना, खाली मन्त्री बन जानेसे कोई फायदा नही। आज भी वैसा ही घोर दमन हो रहा है जैसा पहले होता था। मुकदमोका नाटक करनेसे उसमे कोई फर्क नही पडता। दण्ड सहिताकी राजनीतिसे सम्बन्धित धाराएँ ही कुछ इस तरहकी है कि असहयोग-विषयक हर भाषणको गुनाह करार दिया जा सकता है। अगर मुझपर ही राजद्रोहका आरोप लगाया जाये तो क्या मैं इनकार कर सकूँगा, कदापि नही। मुझे वह मानना ही होगा। वर्तमान सरकारके प्रति अश्रद्धाकी शिक्षा देना तो असहयोगीका कर्त्तव्य है। असहयोगी तो केवल जनताके रोष और उसकी अश्रद्धाको सयत ढगसे प्रकट करनेका ही काम कर रहे है। लालाजीने जो कडे आरोप लगाये हैं अगर कोई उनका सुविचारित उत्तर दे तो मुझे खुशी होगी। बाकी मेरी विनम्र रायमे लाला लाजपतरायने नाराजी या गुस्सा कही जाहिर नही किया है, बौखलाहट उसमे कही नही है। अपने भाषणके अन्तमे देशके नौजवानोको उन्होने जो सलाह दी है, उनका पूरा भाषण उससे मेल ही खाता है।

ईश्वरका सन्देश-वाहक

मुझे एक कतरन मिली है जिसमे कहा गया है कि मै ईश्वरका सन्देश-वाहक हूँ, और साथ ही यह भी पूछा गया है कि क्या मुझे कोई खास इलहाम हुआ है— क्या ईश्वरने मुझे अपना कोई दिव्य सन्देश दिया है। अपनेसे सम्बन्धित चमत्कारोके बारेमे मैं पहले भी लिख चुका हूँ। अब ईश्वरके दिव्य सन्देशकी जो बात मेरे बारेमें कही

गई है उससे भी मुझे इनकार करना पडेगा। मै हर भले हिन्दूकी तरह प्रार्थना करता हूँ। अगर हम आदमीसे डरना छोड़ दे और ईश्वरीय सत्यकी खोज करे तो मेरा विश्वास है कि हम सभी ईश्वरके सन्देश-वाहक बन सकते है। अपने बारेमे मेरा ऐसा विश्वास है कि मै ईश्वरीय सत्यकी खोजमे लगा हुआ हूँ और आदमीका डर मेरे मनसे पूरी तरह निकल चुका है। इसीलिए मैं अनुभव करता हूँ कि ईश्वर असहयोग आन्दोलनके साथ है। ईश्वरकी इच्छाका मुझे कोई खास इलहाम होता हो, सो बात नही है। मेरा ऐसा पक्का विश्वास है कि उसका इलहाम तो हर आदमीको रोज ही होता है, पर हम लोग स्वय ही अन्दरकी उस 'आवाज' की ओरसे अपने कान बन्द कर लेते है। हम अपने सामनेके ज्योति-पुजकी ओरसे अपनी आँखे मूँद लेते है। मुझे तो वह सभीमे समाया हुआ — सर्वव्यापक — दिखाई देता है। और चाहे तो लेखक भी उसे देख सकता है।

एक सिन्धी आलोचक

सिन्धवालोकी ओरसे की गई आलोचनासे मुझे हमेशा खुशी होती है। उनकी आलोचना हमेशा ही सूक्ष्म और शिष्ट होती है। सिन्ध पाश्चात्य शिक्षाके अतिरेकसे पीडित है, इसलिए सिन्धी युवकोसे मुझे सहज सहानुभूति है। वे पाश्चात्य शिक्षाके तर्कजालमे उलझकर रह गये, इसलिए मै श्री जेठमलके खुले पत्रका बहुत ही धीरजसे जवाब दूंगा, खास तौरपर इसलिए भी कि वे सत्याग्रहके मेरे शुरूके साथियोमे रहे है और मै उन्हे एक ऐसे नेताके रूपमे भी जानता हूँ जो उपेक्षित प्रश्नोको सामने रख देते हैं। मै आत्मनिर्णयमे विश्वास रखता हूँ। श्री जेठमलको यह नही मालूम कि मुसलमान फिलिस्तीनपर तुर्कोका ऐसा कब्जा नही चाहते जिसमे अरबोको कोई स्थान न हो। वे तो यही चाहते है कि जजीरत-उल-अरबपर मुसलमानोका कब्जा हो। फिलिस्तीन इस द्वीप समूहका सिर्फ एक हिस्सा है। अगर बिना किसी बाहरी हस्तक्षेपके उसे अरबोके हवाले कर दिया जाये तो उन्हे कोई एतराज न होगा। श्री जेठमलको यह बात मालूम होनी चाहिए कि इस समय फिलिस्तीनमे बहुत बडी आबादी मुसलमानोकी ही है। उन्हे यह बात भी मालूम होनी चाहिए कि अरबोके कड़े विरोधके बावजूद आज फिलिस्तीन और मेसोपोटामियापर ब्रिटिश सरक्षण थोपा जा रहा है।

श्री जेठमलका तो नही मगर मेरा विभिन्न धर्म-ग्रन्थोकी, उनकी अपनी-अपनी विशिष्टताओपर पूरा विश्वास है। जिन बातोमे तर्क-सगति और न्याय-भावनाकी दृष्टिसे परस्पर कोई विरोध न हो, मै उन बातोमें मुसलमानोकी धर्म-ग्रन्थ सम्बन्धी आस्थाके साथ व्यर्थकी खीचतान करनेके पक्षमे नही हूँ।

लेकिन दीनकी दुहाई देनेवाले कट्टर मौलवियो और काम बनानेकी गरजसे दिये जानेवाले उनके मौकापरस्त फतवोका डर श्री जेठमलकी तरह मुझे भी है। मगर मुसलमानोका दावा फतवोपर आधारित न होकर कुरानकी हिदायतोपर अवलम्बित है, जिसे एक बच्चा भी समझ सकता है। और अगर कुरानकी हिदायतोको छोड भी दे तो भी मुसलमानोका दावा न्यायपर आधारित है। लड़ाईसे पहले जजीरत-उल-अरब मुसलमानोके अधिकारमे था। आम तौरपर दुनियाके और खास तौरपर हिन्दके मुसल-

मानोके खिलाफ ईसाइयो और यहूदियोको उसपर कब्जा करनेका कोई अधिकार नही है। ब्रिटिश सरक्षण भारतीय मुसलमानोके साथ दगा और दुनियाके मुसलमानोके साथ लुटेरापन है।

हिंसाके मामलेमे श्रीकृष्णके विचारोसे मतभेदके साहसका जो श्रेय श्री जेठमलने मुझे दे दिया है उसे मैं स्वीकार नही कर सकता। मै तो सिर्फ यही कहनेका साहस करता हूँ कि भगवान् कृष्णने 'गीता' मे हिंसाका उपदेश कही नही दिया। गीताकी मेरी व्याख्या यही है कि उसमे एक ऐतिहासिक प्रसगको आधार बनाकर धर्मका उपदेश किया गया है; और महाभारतके जिस युद्धका उसमे उल्लेख है वह सासारिक युद्ध न होकर मनुष्यके कुरुक्षेत्ररूपी मनमे निरन्तर चल रहा आध्यात्मिक सघर्ष है। निर्द्वन्द्वताके उपदेशको मै और किसी रूपमे समझ ही नही सकता। जो व्यक्ति द्वन्द्वातीत हो जाता है वह 'बाइबिल' के पूर्ण पुरुषकी नाई पृथ्वीके किसी भी प्राणीको हानि नही पहुँचा सकता। वह अपने अहम्को इतनी पूर्णताके साथ नि शेष कर देता है कि फिर उसका पुनर्जन्म नही होता।

लेकिन किसी असहयोगीके लिए यह जरूरी नही कि वह मेरे इस निजी विश्वासको भी माने। उसे तो भारतके त्रिविध तापको ठीक करनेवाली सच्ची नीतिके रूपमे अहिंसापर विश्वास करना जरूरी है।

अहिंसा यानी अनघतामे सम्पूर्ण आस्था होते हुए भी मैने खेडा जिलेमे फौजी भरतीका काम[1] किया था। मेरी अहिंसा तो मुझे यही सिखाती हे कि हथियारोके जोरसे दुनियाको अपने साथ नही ले जाया जा सकता। इस डरसे कि कही वे दूसरोको चोट न पहुँचाएँ, मैं अपने बच्चोके हाथ तो नही काट डालूँगा। सचमुच पापरहित वही है जो किसीको हानि पहुँचा सकता हो किन्तु फिर भी वैसा न करे। जबतक उनका हिंसामे विश्वास है भारतीय सैनिकोको हथियारकी जरूरत भी है। जिनका हिंसामे विश्वास था, मैने सिर्फ उन्हीसे फौजमे भरती होनेके लिए कहा था। मैने उनसे कहा कि तुम्हे सरकारसे गिला है, और मै जानता था कि उन्हे है, तो लडाईमे भरती हो जाओ, इससे अलग मत रहो। मैं सरकारसे सौदा करनेके खिलाफ था, क्योकि सौदेबाजीके मै हमेशा ही खिलाफ रहा हूँ।[2]

मै ऐसा तो कभी नही सोचता कि भारत या दुनियामे कभी ऐसा भी समय आयेगा जब सभी अहिंसाके अनुयायी हो जायेंगे। पुलिस तो सतयुगमे भी रहेगी। लेकिन भारतमे ऐसे समयकी कल्पना तो मैं करता ही हूँ जब हम निरे शारीरिक बलपर कमसे-कम और आत्मिक बलपर ज्यादासे-ज्यादा निर्भर करने लगेंगे, जब हर वर्णके व्यक्तिके भीतर ब्राह्मणत्व सर्वोपरि होगा।

इतनी व्याख्याके बाद श्री जेठमलकी समझमे यह बात आ जायेगी कि अली बन्धुओसे मेरी दोस्ती क्यो है। मै यकीनन जानता हूँ कि वे अपनी बातके पक्के है

१. गांधीजीने २९ अप्रैल, १९१८ के युद्ध-सम्मेलनमें दिये गये अपने आश्वासनके अनुसार गुजरातके खेडा जिलेका दौरा किया था और प्रथम महायुद्धमें अंग्रेजोंकी सहायताके लिए लोगोंको फौजमें भरती कराया था, देखिए खण्ड १४।

२. देखिए खण्ड १४, पृष्ठ ३५९।

और उनके-जैसे बातके धनी मैंने बहुत थोड़े लोग देखे है। मुझे तो सिर्फ यही देखना है कि जबतक वे असहयोग आन्दोलनमे रहे, अहिंसाके प्रणका पालन करते रहे। श्री जेठमल अंग्रेजोके बदले अफगानोकी हुकूमत पसन्द नही करेगे, ठीक यही बात अली बन्धुओके साथ भी है, वे भी अफगानोकी हुकूमतको कभी बरदाश्त नही करेगे। मेरा विश्वास है कि समय पाकर वे यह समझ जायेगे कि भारत हिंसासे कमसे-कम एक पीढ़ीमें तो किसी भी तरह मुक्त नही हो सकता। लेकिन इसमें मुझे कोई सन्देह नही कि जिस मामूलीसे कार्यक्रमके बारेमे इन पृष्ठोंमे समय-समयपर लिखा जाता रहा है अगर देश उसपर अमल करे तो खिलाफत और भारतकी आजादी दोनो इसी एक बरसमे मिल सकते है।

संन्यास

एक वकील साहब, जिन्होने वकालत छोड दी है, पूछते है कि क्या हर असहयोगीको ससार त्याग करके सन्यासी बन जाना चाहिए? लोगोका खयाल है कि मै सन्यासीकी तरह रहता हूँ। यह सवाल भी शायद इसीलिए पूछा गया है। बोअर-युद्धमे हजारों स्त्री-बच्चोको और पिछले महायुद्ध [१९१४-१८] मे हजारो अंग्रेज, फ्रासीसी और जर्मन लोगोको जितना त्याग करना पड़ा, असहयोगका कार्यक्रम तो उसकी तुलनामें बहुत ही कम त्याग चाहता है। इतने थोड़ेसे त्यागके बलपर हमारी ऐसी महान् सफलता केवल इसीलिए सम्भव है कि हमारा कार्यक्रम अहिंसात्मक है, हमारा पक्ष न्यायपूर्ण है और हम सख्यामे इतने अधिक है।

प्रतिवादीकी दुर्गति

उन्होंने आगे पूछा है कि अगर किसीपर झूठा मुकदमा दायर किया जाये तो वह क्या करे। करना क्या है, सरकारने झूठे मुकदमे चलाये और कई लोग जेल चले गये। यदि किसीपर झूठा मुकदमा दायर किया जाये, और अगर वादी पच-फैसलेके लिए राजी न हो तो वकील किये बिना ही अदालतमे बयान दिया जा सकता है और गवाह पेश करके उनसे जिरह भी की जा सकती है। और फैसला भी उसके हकमे हो सकता है। ज्यादासे-ज्यादा यही होगा कि वह हार जाये और दुष्टोके हाथों तकलीफ भोगनी पड़े। लेकिन काबिलसे-काबिल वकीलो द्वारा मुकदमे लड़े जानेके बावजूद क्या गलत फैसले पहले भी नही होते रहे है?

देशकी सामर्थ्यपर सन्देह

तीसरा सवाल है: "क्या आप ऐसा मानते है कि असहयोग कार्यक्रमका रचनात्मक अंश राष्ट्रीय सरकार बने बिना पूरा हो सकता है?" यह सवाल बेबसीका सूचक है। अपने ध्येयतक पहुँचनेमे हमें जो देर हो रही है उसका एकमात्र कारण बेबसीकी हमारी यह भावना ही है। स्वराज्य तभी तो कायम होगा जब हमे अपने-आपपर भरोसा होगा। राष्ट्रीय सरकारको राष्ट्र ही तो बनाता है, न कि राष्ट्रको सरकार। सरकारकी मददके बिना हम शराब पीना क्यो नही छोड़ सकते? सरकारकी मददके बिना हम विदेशी कपड़ेका बहिष्कार क्यो नही कर सकते? असहयोग हमें

सिखाता है कि किसी भी महत्त्वपूर्ण बातको हम सरकारपर निर्भर रहे विना कर सकते हैं। सरकार जनता द्वारा बनाया हुआ एक साधन है। अगर साधन अविश्वसनीय हो जाये तो बनानेवाले को उससे काम न लेनेका पूरा अधिकार है। लेकिन अगर बनानेवाला ही असहाय हो गया तो साधन उसका मालिक बन बैठेगा और वह साधनका गुलाम हो जायेगा। आज हमारी यही हालत है और जैसे भी हो हमे इस हालतसे उबरना ही होगा।

स्थगनका इरादा

उनका आखिरी सवाल है "अगर देशकी ओरसे कांग्रेसकी पुकारको जैसा चाहिए वैसा जवाब नही मिला तो क्या तबतक के लिए स्वराज्यकी लडाई मुल्तवी कर दी जायेगी?" मुझे तो इस विचारसे ही डर लगता है। स्वराज्यके आन्दोलनको रोकनेका मतलब है देश और जनतामें अविश्वास। मुझे तो यही लगता है कि समय आनेपर देश आगे आयेगा, जरूर आगे आयेगा। लेकिन यह ऊपरके सवालका सही जवाब नही हुआ। सही जवाब तो बेशक यही होगा कि अगर देशने असहयोग कार्यक्रमको ठीकसे नही अपनाया तो स्वराज्य हासिल करनेमे उस हदतक देर हो जायेगी।

जुएका अभिशाप

काशी विद्यापीठके कुलपति बाबू भगवानदासजीने[1] जुएकी निन्दामे 'मनुस्मृति'से जो उद्धरण भेजे है उन्हे मै यहाँ दे रहा हूँ.

राजाको अपने राज्यसे द्यूत (जुआ) और समाह्वय (बाजी लगाने) को प्रयत्नपूर्वक दूर रखना चाहिए क्योंकि ये व्यसन राज्य और राजा दोनोको नष्ट कर डालते हैं। (२२१)

जुआ खेलना और बाजी लगाना निस्सन्देह दिन-दहाड़े डाका डालना है; इन्हें निर्मूल करनेके लिए राजाको सतत प्रयत्नशील रहना चाहिए। (२२२)

द्यूत निर्जीव वस्तुओंसे खेला जाता है और समाह्वयमें प्राणियोंपर बाजी लगाई जाती है। (२२३)

जो इन्हें प्रकट या गुप्त रूपसे स्वयं खेले अथवा दूसरोंको प्रेरित किंवा प्रवृत्त करे उसे राजा अपने विवेकके अनुसार अपने निर्धारित व्यवसायके बदले दूसरोको छलनेके लिए, छल-व्यवसाय अपनानेवाले धूर्तो और प्रवंचकोके समान प्राण-दण्डतक दे सकता है; अथवा द्यूतकारों एवं कितवो (बाजी लगानेवालो) को देशसे वैसे ही निष्कासित कर दे जिस प्रकार, संगीत,(नृत्य, गान एवं अभिनय) की ओटमें व्यभिचार (वेश्यावृत्ति) करनेवालों को; अथवा नशीले मद्य बनाने और बेचनेवालों को; निर्दय ठगोंको और दुराचरण फैलानेवालों और पापकर्म करनेवालों को। (२२४–२८)

१. (१८६९–१९५८), सुप्रसिद्ध दार्शनिक और लेखक; उत्तरप्रदेश कांग्रेसके एक प्रमुख नेता, सन् १९५५ में 'भारतरत्न'को उपाधिसे सम्मानित।

सिन्धके चन्देका सही ब्यौरा

मैंने सिन्धके असहयोगके सम्बन्धमें जो टिप्पणी लिखी थी उसमें, वहाँ मेरे दौरेके समय जितना चन्दा जमा किया गया उसकी अनुमित राशि भी दे दी गई थी। अब श्री जयरामदासनें[1] ब्यौरेवार हिसाब भेजा है, जो इस तरह है :

	रुपये
कराची (लगभग)	३०,०००
लरकाना	१,३८७
शिकारपुर	१७,२४५
जैकोबाबाद	१,००१
सक्खर	३,६००
रोहड़ी	१,००२
हैदराबाद	७,४३३
मीरपुर खास	४५२
तत्ता	५००
दादू	५००
टाडो अल्लाब्यार	६१५
शहदादपुर	७५
फुटकर	४६५
	६४,२७५

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-५-१९२१

६५. बाजी लगानेकी लत

आशा है कि एक महिलाकी यह भविष्यवाणी सच निकलेगी और जो लोग भी भारतकी अच्छाई और अपने घरोंकी पवित्रताको महत्त्व देते हैं वे सब घुड़दौड़में बाजी लगाना छोड़ देंगे।[2]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-५-१९२१

१. जयरामदास दौलतराम।

२. यह "एक महिला" के नामसे लिखे गये निम्नलिखित पत्रके उत्तरमें था :

डेक्कन हेराल्ड अखबारमें यह खबर छपी है कि अब बहिष्कार-आन्दोलनके तहत आगामी घुड़दौड़ोंका भी बहिष्कार किया जानेवाला है और रेसके दिनोंमें हिन्दुस्तानियोंको घुड़दौड़के मैदानमें नहीं जाने दिया जायेगा। अगर सचमुच आपका यही मंशा हो तो भगवान् आपका भला करे।

मेरे पति एक आदर्श पति थे। लेकिन एक बार उनके साहब उनको आग्रहपूर्वक रेसमें ले गये और किस्मत फूटनी थी कि वे चले भी गये। उस दिन दस रुपये लेकर गये और बाजी लगाई तो किस्मतसे

६६. शिमला-यात्रा[1]

बहुतसे लोग पूछ रहे है कि मै महामहिम वाइसरायसे क्यो मिला। कुछ पूछते है कि असहयोगके सूत्रधारको वाइसरायसे क्यो मिलना चाहिए और यह तो सभी जानना चाहते है कि मुलाकातका नतीजा क्या रहा। असहयोगियोके वारेमे यह कड़ी छानबीन मुझे पसन्द आई, दूसरोका हो या न हो पर असहयोगियोका चरित्र तो नि सन्देह सती सावित्रीकी तरह निष्कलक होना चाहिए। असहयोगका मतलब है आत्मनिर्भरता — अपने-आपपर भरोसा। हम स्वय स्वराज्य स्थापित करना चाहते है, दूसरोसे माँगकर नही लेना चाहते। फिर किसी भी वाइसरायके पास जानेकी क्या जरूरत है? यह बात अपने-आपमें बहुत अच्छी है। अगर मै किसीसे स्वराज्य माँगने जाऊँ तो बेशक अपने पक्षका अच्छा नुमाइन्दा नही माना जाऊँगा। फिर मैंने तो यहाँतक कहनेका दु साहस किया है कि भगवान् भी हमे स्वराज्य नही दे सकता। उसे तो हमे खुद ही हासिल करना होगा। स्वराज्य तो चीज ही ऐसी है जिसे कोई दे नही सकता।

लेकिन अपनी आजादीकी लडाईमें हमे तो सारी दुनियाको साथ रखना है, हम तो सभीकी सद्भावनाएँ चाहते है। हम दावा करते है कि हमारा पक्ष सोलहो आने न्यायपर आधारित है। कुछ चीजे है जिन्हे हम चाहते है कि अग्रेज हमारे सुपुर्द कर दे। इसके लिए आपसमें चर्चा करने और एक-दूसरेको समझनेकी जरूरत है। दुनिया-वालोकी रायको अपने पक्षमे करनेके लिए असहयोग ही सबसे कारगर तरीका है। जबतक हम विरोध और सहयोग करते रहे तबतक दुनियाकी समझमे नही आया कि हम क्या है और क्या चाहते है। किसी समय बगाल-केसरीके नामसे प्रसिद्ध सुरेन्द्रनाथ बनर्जी शुरूके दिनोमे उन अग्रेजोकी वात सुनाया करते थे, जो अकसर पूछा करते थे कि अगर हालत वाकई उतनी ही खराब है जितनी आप बताते है तो भारतमे कितनोके सिर फूटे है। पक्के अग्रेजके सोचने-समझनेका बस यही तरीका होता था। और अग्रेज ही क्यो दुनिया भी तो नि सदेह यही पूछ रही है कि अगर हालत वाकई इतनी खराब है तो तुम इस बुरी तरह अपना शोषण और अपमान करनेवाली सरकारसे सहयोग क्यो करते हो? हम भले ही पूरी ताकतसे अमल न कर पाये हो लेकिन अब दुनिया हमारी बात समझने लगी है। अब दुनिया जानना चाहती

दाँव सीधा पड़ा और तीन सौ रुपये लेकर घर लौटे। बस, उसके बाद दो बारको छोड़कर फिर कभी नहीं जीते। और अकसर नशेमें धुत घर लौटते हैं।

भगवान् करे आपको अपने प्रयत्नोंमें सफलता मिले।

मेरा विश्वास है कि अपनी बात कहनेका साहस रखनेवाली दूसरी बहुत-सी बहनें इस बातका समर्थन करेंगी।

१. गांधीजीने शिमलामें वाइसरायसे मुलाकात की थी; देखिए "भाषण: शिमलाकी सार्वजनिक सभामें", १५-५-१९२१।

है कि हमारी तकलीफ क्या है। वाइसराय महोदय एक वड़ी ताकतके नुमाइन्दे हैं। वे यह जानना चाहते थे कि मैं, जो सहयोगको अपना परम धर्म समझता था, असहयोगी क्यो हो गया हूँ। या तो सरकारकी समझमें कही कोई गलती होनी चाहिए या फिर मैंने ही कोई गलती की होगी।

इसलिए वाइसराय महोदयने मालवीयजी महाराजसे और एन्ड्रयूज साहवसे भी यह ख्वाहिश जाहिर की कि वे मुझसे मिलना और मेरे विचारोको समझना चाहते हैं। मैं मालवीयजीसे मिलने गया, क्योकि वे मुझसे मिलना चाहते थे। मैं उनकी इतनी इज्जत करता हूँ और कभी यह गवारा नही करूँगा कि वे खुद चलकर मुझसे मिलनेके लिए आयें, चाहे वे स्वस्थ ही हो। फिर इस वार तो वे इतने कमजोर थे कि यात्रा कर ही नही सकते थे। इसलिए उनसे मिलने जाना मैंने अपना कर्त्तव्य समझा। वाइस-रायसे उनकी जो वात हुई उसका सार जाननेके वाद मैं तुरन्त मुलाकातके लिए राजी हो गया। अगर वाइसराय मेरे विचारोको जानना चाहते हैं तो उनसे मुलाकातका समय माँगनेके लिए उनकी ओरसे पहल किये जानेकी मैंने कोई जरूरत नही समझी। वाइसरायसे मुलाकातका समय माँगनेके वारेमे इतने विस्तारसे लिखनेका उद्देश्य केवल इतना ही है कि असहयोगके अर्थ और उसकी मर्यादाओका मैं खुलासा कर देना चाहता हूँ।

असहयोग आदमियोके नही वल्कि तरीकोके खिलाफ है। वह गवर्नरोके नही वल्कि जिस तरीकेसे वे हुकूमत करते हैं उसके खिलाफ है। असहयोगकी नीव घृणापर नही रखी गई है; वह अगर प्रेमपर नही किन्तु न्यायपर तो आधारित है ही। ग्लैडस्टन[1] वुरे कामो और वुरे आदमियोके बीच वड़ा फर्क करते थे। एक वार उन्होने अपने विरोधियोके तरीकोके वारेमे काफी कड़े शब्दोका इस्तेमाल किया तो उनपर अविनयका आरोप लगाया गया। तव अपनी सफाईमे उन्होने कहा था कि जैसे उनके कारनामे हैं उनको अगर मैं वैसा ही न वताता तो अपने कर्त्तव्यसे च्युत हो जाता, मगर इसका यह मतलव नही कि जो कुछ मैंने उनके कारनामोके वारेमे कहा है वह उनपर व्यक्तिगत रूपसे भी लागू होता है। तरुणाईमे जव मैंने उनकी यह दलील सुनी तो वह मेरी समझमे नही आई थी। अव इतने वरसोके तजुर्वेके वाद और उसपर अमल करके मैंने जाना कि उन्होने कितना सच कहा था। मैं जानता हूँ कि मेरे कुछ वहुत ही सच्चे दोस्तोने ऐसे काम भी किये हैं जिनका विलकुल समर्थन नही किया जा सकता। श्री वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रियर-जैसे सच्चे आदमी वहुत ही थोड़े होंगे, मगर उनके काम मुझे हैरानीमे डालनेवाले होते हैं। उनका ऐसा विश्वास हो गया है कि मैं हिन्दुस्तानको रसातलकी ओर लिये जा रहा हूँ, लेकिन इससे मुझपर उनका स्नेह कम हो गया हो, ऐसा मैं नही मानता।

और मैं समझता हूँ कि असहयोगके इस महान् आन्दोलनने मेरी ही तरह हजारो लोगोको यह वात समझा दी है कि हम, लोगोके कामो और व्यवस्थाओपर आक्षेप करते हैं न कि व्यक्तियोपर। वैसा तो हमे कदापि नही करना चाहिए। हम खुद अपूर्ण

१. (१८०९-९८); इंग्लैंडके उदारदलीय प्रधान-मन्त्री १८६८-७४, १८८०-८५, १८८६ और १८९२-९४।

है, हममे खामियाँ है इसलिए दूसरोके साथ हमे नरमीसे पेश आना चाहिए और किसीके इरादोपर शुबहा करनेकी जल्दबाजी नही करनी चाहिए।

इसलिए वाइसराय महोदयसे मुलाकातका मौका आते ही मै तुरन्त उनसे मिलने चला गया और उन्हे बताया कि हमारा आन्दोलन धर्मपरक है जिसका उद्देश्य भारतीय राजनीतिमे व्याप्त भ्रष्टाचार, धोखाधडी, आतकवाद और गोरी जातिकी प्रभुताको मिटाना है।

पाठकोके लिए व्यर्थका कुतूहल अच्छा नही। अखबारोके तथाकथित समाचारोपर उन्हे विश्वास नही करना चाहिए। वाइसराय महोदय और मेरे बीच जो बाते हुई उनके ब्यौरेमे जानेकी जरूरत नही। अच्छा हो कि उसपर पर्दा पडा रहने दिया जाये। लेकिन मै पाठकोको इतना विश्वास जरूर दिलाता हूँ कि मैने अपनी सामर्थ्य-भर वाइसराय महोदयको हमारे तीनो दावो — खिलाफत, पजाब और स्वराज्यकी बात समझाई और उन्हे असहयोगका मूल कारण भी बताया। उन्होने मेरी बातको धैर्य, विनम्रता और ध्यानसे सुना। मैने उन्हे जो उचित है वह करनेके लिए उत्सुक पाया। हमने आजकी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समस्याओके बारेमें दिल खोलकर चर्चा की। हमने अहिंसाके बारेमे भी चर्चा की और यह हम दोनोकी समान रुचि और आस्थाका विषय निकला। इसके बारेमे मै फिर कभी विस्तारसे लिखूंगा।

हम दोनोने एक-दूसरेको समझा, इससे अधिक भी मुलाकातमे कुछ था, यह मै नही कह सकता। मगर एक-दूसरेको समझ लेना भी अपने-आपमे काफी बड़ा लाभ है, ऐसा मै मानता हूँ और कुछ लोग इसमे मुझसे जरूर सहमत होगे। और अगर इस तरह देखा जाये तो यह मुलाकात बहुत कामयाब रही।

लेकिन इतने लम्बे बहस-मुबाहसेके बाद इस बातमे मेरा विश्वास पहलेसे ज्यादा दृढ हुआ है कि हमारी मुक्ति खुद अपने ही प्रयत्नोपर निर्भर करती है। वाइसराय महोदय हमारी मदद कर सकते है और बाधा भी पहुँचा सकते है। यो मै उनसे मदद की ही उम्मीद करता हूँ।

मतलब यह कि हमे दूने जोशके साथ अपना कार्यक्रम पूरा करनेमे जुट जाना चाहिए। कार्यक्रम स्पष्ट ही यह है (१) अस्पृश्यताका निवारण, (२) शराबखोरीके अभिशापको मिटाना, (३) चरखेका अनवरत प्रचार और विदेशी कपडेके सम्पूर्ण बहिष्कारकी सीमातक खादीका निरन्तर उत्पादन, (४) काग्रेसमे सदस्योकी भरती और (५) तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा करना।

हिन्दू-मुस्लिम एकताको मजबूत करने तथा अहिंसाका और अधिक वातावरण तैयार करनेके लिए अब उतने जोरदार प्रचारकी आवश्यकता नही रही।

अस्पृश्यता-निवारणको मैने सबसे ऊपर रखा है, क्योकि इस मामलेमे मुझे कुछ ढिलाई दिखाई देती है। हिन्दू असहयोगियोको इस ओरसे उदासीन नही रहना चाहिए। खिलाफतके मामलेमे जो अन्याय हुआ है उसे हम मिटा सकते है, लेकिन राष्ट्र रूपी शरीरके हिन्दू अवयवोमे भिदे हुए अस्पृश्यताके जहरके रहते हम स्वराज्यकी अपनी मजिलतक कभी भी नही पहुँच सकते। अगर हम भारतकी आबादीके पाँचवे हिस्सेको निरन्तर दबाये रहे और राष्ट्रीय सस्कृतिके अमृत-फलसे उन्हे वचित किये रहे तो

स्वराज्यका कोई मतलव नही रह जाता। शुद्धीकरणके इस महान् आन्दोलनमे हम भगवान्‌का सहारा खोजते है, उसकी सहायताकी याचना करते है लेकिन उसीके जिन जनोको, मानवी अधिकारोकी सवसे अधिक जरूरत है, उन्हे उक्त अधिकार देनेसे इनकार करते है। स्वय क्रूर वने रहकर दूसरोकी क्रूरतासे अपने त्राणकी दुहाई हम प्रभुके आगे दे ही कैसे सकते है?

शराव-बन्दीको मैने दूसरे नम्बरपर रखा है, और मै ऐसा महसूस करता हूँ कि भगवान्‌ने विन माँगे ही हमारे लिए यह आन्दोलन तैयार कर दिया है। इसको लेकर काफी हगामा मच गया है और इस आन्दोलनके हिसक रूप धारण कर लेनेका अन्देशा भी कम नही है। लेकिन जवतक यह सरकार शरावकी दुकानोको खुला रखने-पर आमादा है तवतक हमे रात-दिन एक करके गलत रास्तेपर चलनेवाले अपने भाइयोको समझाना होगा कि वे शरावसे अपना मुँह गन्दा न करे।

चरखेको तीसरे नम्बरपर रखा गया है, हालाँकि मेरे तई तो वह अस्पृश्यता-निवारण और शराब-वन्दी जितना ही महत्त्वपूर्ण है। अगर हम इस वर्ष विदेशी कपडेका कारगर ढगसे वहिष्कार कर सके तो उसका मतलव यह होगा कि स्वराज्यकी स्थापना-के लिए आवश्यक लगन, अध्यवसाय, एकाग्रता, तत्परता और राष्ट्रीयताकी भावना हममे प्रचुर मात्रामे मौजूद है।

काग्रेसके सदस्य वनाना, देशमे घर-घर चरखेके प्रचार और खादीके उत्पादन एव वितरणके लिए अपेक्षित विशाल सगठनके लिए ही जरूरी नही, लोगोके मनमे पैठे हुए इस भयको निर्मूल करनेके लिए भी जरूरी है कि काग्रेसका सदस्य वनना सरकार-की निगाहमे गुनाह है।

पाँचवी चीज है तिलक स्वराज्य-कोप। इसके द्वारा हम स्वराज्यकी आत्मा तिलक महाराजकी स्मृतिको चिरस्थायी वनाते है और स्वतन्त्रताकी अपनी लड़ाईके लिए धन प्राप्त करते है।

३० जूनतक एक करोड रुपया इकट्ठा करने, काग्रेसके एक करोड़ सदस्य बनाने और वीस लाख घरोमे चरखा पहुँचानेकी हमने प्रतिज्ञा की है। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी विशाल सभामे पूरी तरहसे वहस-मुबाहसे और सोच-विचारके वाद जो कार्यक्रम निर्धारित किया गया है अगर उसे समयके अन्दर पूरा न कर सके तो हम स्वराज्यके अपने ध्येयतक कदापि न पहुँच सकेगे।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५–५–१९२१

६८. मध्य-प्रान्तमें दमन

हर एक सूबेमें दमन अलग-अलग शक्लें अख्तियार करता जा रहा है। संयुक्त-प्रान्त-में[1] आमतौरसे नेताओंको गिरफ्तार नहीं किया जा रहा है। किसानोंके नाम परिपत्रके लेखक पं० मोतीलाल नेहरू तो गिरफ्तार नहीं किये गये, मगर उस पर्चेको बाँटनेवाले नौजवानोंको पकड़कर जेल भेज दिया गया है। उधर मध्य-प्रान्तमें जाने-माने नेता पकड़े जा रहे हैं और सरकारकी मर्जीका खयाल करके चलनेवाले मजिस्ट्रेट उन्हें धड़ाधड़ सजाएँ दे रहे हैं। ताजा उदाहरण श्री सुन्दरलालकी गिरफ्तारी और सजा है। मध्य-प्रान्तके[2] छात्रोंपर जैसा असर उनका है वैसा शायद ही किसी औरका होगा। वहाँ हिंसाको रोके रखनेमें उनका बड़ा हाथ रहा है। लेकिन साथ ही वे बड़े दिलेर हैं और उनके बोलनेका लोगोंपर असर पड़ता है। इसलिए मध्य-प्रान्तकी सरकारने इस दृष्टिसे कि वे कोई नुकसान न पहुँचा पायें, उन्हें अपने रास्तेसे हटा देना ही ठीक समझा। श्री सुन्दरलालपर जो आरोप लगाये गये वे इस प्रकार हैं:

> १९२१ के मार्च महीनेकी दूसरी तारीखको या उसके आसपास खरगौनमें आपने जो भाषण (लगभग ५,००० लोगोंके सामने) दिया उसका सार यह था कि भारतका शोषण करके उसे पूरी तरह गरीब और लाचार कर देनेकी गरज-से ही यहाँ ब्रिटिश सरकार बेईमानीके साथ चलाई जा रही है; मुल्कको बाकायदा तबाहीकी ओर ले जानेवाली बीमारियों, अकाल, उद्योग-धन्धोंकी बरबादी और दूसरी सारी बुराइयोंके लिए अंग्रेज सरकार ही जिम्मेदार है; इस सरकारने मुसलमानोंसे किये वादोंको तोड़ा और पंजाबमें हद दर्जेका अत्याचार और दमन किया है, इससे लोगोंका इस सरकारपर से बिलकुल विश्वास उठ गया है। इन सारी बुराइयोंको मिटानेका एकमात्र उपाय है अहिंसात्मक असहयोगके हथियारसे भारतमें ब्रिटिश शासनको पूरी तरह खत्म कर देना। ऐसे भाषणसे आपने ब्रिटिश भारतमें कानूनन स्थापित सरकारके प्रति अश्रद्धा पैदा की या करनेकी कोशिश की या राजनैतिक असन्तोष भड़काया या भड़कानेकी कोशिश की और इस तरह भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १२४-ए के मातहत दण्डनीय अपराध किया, जो मेरे न्यायाधिकारमें है।

आरोप बिलकुल साफ है। आरोप यह नहीं है कि हिंसा की या हिंसा करनेका इरादा किया, आरोप सिर्फ अश्रद्धा फैलानेका है। इस आरोपमें ऐसा कुछ भी नहीं है जो पिछले बारह महीनोंमें हजारों सभाओंमें बार-बार न कहा गया हो। वास्तवमें असह-योगीका तो यह धर्म ही है कि वह सरकारके प्रति जनताकी अश्रद्धाको व्यक्त करे,

१. अब उत्तर प्रदेश।
२. अब मध्य प्रदेश।

अपनी रोजमर्राकी जिन्दगीमे हमने जान-बूझकर भगवान्पर भरोसा करना छोड दिया है। हम अपने व्यवहारमे पूरे नास्तिक हो गये है। अपनी सुरक्षाके लिए शारीरिक बलपर निर्भर करनेका विश्वास हममे उत्तरोत्तर दृढ होता जा रहा है। लेकिन प्राणोका भय सामने आते ही हम सारा ज्ञान भूल जाते है और हमारी सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती है। हमारा दैनिक जीवन ईश्वरसे पराङ्मुख हो गया है। अगर भगवान्मे, यानी कि अपने-आपमे, हमारा जरा-सा भी विश्वास होता तो कबाइलियोके मामलेमे हमे कोई भी परेशानी न होती। हमला होनेपर हमे अपना माल-मत्ता उन्हे सौपनेको तैयार रहना होगा और वाज मौकोपर तो अपनी इज्जतका सौदा करनेके वदले जान देनेपर ही उतारू हो जाना पडेगा। हमे इस वातपर विश्वास करनेसे कतई इन्कार कर देना चाहिए कि हमारे ये पडोसी इन्सानियतसे शून्य, निरे जगली है।

हमारे आत्म-सम्मानका तकाजा तो यही है कि हम दोमे से कोई एक मार्ग अपनाये, कमजोर होते हुए भी लूट-पाटसे अपनी रक्षा आप करनेके लिए तैयार हो जाये, या अपने पडोसियोकी इन्सानियतमे विश्वास करके उन्हे सुधारनेकी कोशिश करे। मेरा तो खयाल है कि दोनो ही काम हमे एक साथ करने होगे। तीसरे मार्ग, यानी कि अपनी रक्षाके लिए अग्रेजोके गोला-वारूदपर भरोसा करनेके मार्गके वारेमे तो हमे कभी सोचना भी नही चाहिए। यह तो खुद अपने हाथो अपने देशका और अपनी जातिका गला घोटना होगा।

अगर कवाइलियोतक मेरे लेख पहुँच सके तो मै उनसे अनुरोध करूँगा कि वे लुटेरेपनकी आदत छोड दे। जव भी वे किसी मर्द या औरतको लूटते है तो जिस पैगम्बरपर उन्हे इतना नाज़ है और जिसे वे रहमोकरम और इन्साफोअमनके वली अल्लाहतालाका दूत मानते है, उसीकी हिदायतोकी खिलाफवर्जी करते है। ऐसे हर मुसलमान और उलेमाका, जिसका थोडा-वहुत भी असर इन भोले-भाले लोगोपर है, उन्हे यह समझाना फर्ज हो जाता है कि जो खतरा सिरपर मँडरा रहा है, उससे इस्लामकी हिफाजत करनेमें अगर वे अपनी ओरसे हाथ वँटाना चाहते है, तो इन्हे सवसे पहले अपने पडोसियोको सताना वन्द कर देना चाहिए, क्योकि उनके पड़ोसी, चाहे हिन्दू हों या मुसलमान, न सिर्फ यह कि उन्हे कोई नुकसान नही पहुँचाते वल्कि इस्लामकी सम्मान-रक्षाके लिए भरपूर कोशिश भी कर रहे है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-५-१९२१

६८. मध्य-प्रान्तमें दमन

हर एक सूबेमे दमन अलग-अलग शक्लें अख्तियार करता जा रहा है। सयुक्त-प्रान्त-में[1] आमतौरसे नेताओको गिरफ्तार नही किया जा रहा है। किमानोके नाम परिपत्रके लेखक प० मोतीलाल नेहरू तो गिरफ्तार नही किये गये, मगर उस पर्चेको बाँटनेवाले नौजवानोको पकडकर जेल भेज दिया गया है। उधर मध्य-प्रान्तमे जाने-माने नेता पकडे जा रहे है और सरकारकी मर्जीका खयाल करके चलनेवाले मजिस्ट्रेट उन्हे धडाधड सजाएँ दे रहे है। ताजा उदाहरण श्री सुन्दरलालकी गिरफ्तारी और सजा है। मध्य-प्रान्तके[2] छात्रोंपर जैसा असर उनका है वैसा शायद ही किसी औरका होगा। वहाँ हिंसाको रोके रखनेमे उनका बड़ा हाथ रहा है। लेकिन साथ ही वे बड़े दिलेर है और उनके बोलनेका लोगोपर असर पड़ता है। इसलिए मध्य-प्रान्तकी सरकारने इस दृष्टिसे कि वे कोई नुकसान न पहुँचा पाये, उन्हे अपने रास्तेसे हटा देना ही ठीक समझा। श्री सुन्दरलालपर जो आरोप लगाये गये वे इस प्रकार है:

> १९२१ के मार्च महीनेकी दूसरी तारीखको या उसके आसपास खरगोनमें आपने जो भाषण (लगभग ५,००० लोगोके सामने) दिया उसका सार यह था कि भारतका शोषण करके उसे पूरी तरह गरीब और लाचार कर देनेकी गरज-से ही यहाँ ब्रिटिश सरकार बेईमानीके साथ चलाई जा रही है; मुल्कको बाकायदा तबाहीकी ओर ले जानेवाली बीमारियों, अकाल, उद्योग-धन्धोंकी बरबादी और दूसरी सारी बुराइयोके लिए अंग्रेज सरकार ही जिम्मेदार है; इस सरकारने मुसलमानोसे किये वादोंको तोड़ा और पंजाबमें हद दर्जेका अत्याचार और दमन किया है, इससे लोगोंका इस सरकारपर से बिलकुल विश्वास उठ गया है। इन सारी बुराइयोको मिटानेका एकमात्र उपाय है अहिंसात्मक असहयोगके हथियारसे भारतमें ब्रिटिश शासनको पूरी तरह खत्म कर देना। ऐसे भाषणसे आपने ब्रिटिश भारतमें कानूनन स्थापित सरकारके प्रति अश्रद्धा पैदा की या करनेकी कोशिश की या राजनैतिक असन्तोष भड़काया या भड़कानेकी कोशिश की और इस तरह भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १२४–ए के मातहत दण्डनीय अपराध किया, जो मेरे न्यायाधिकारमें है।

आरोप बिलकुल साफ है। आरोप यह नही है कि हिंसा की या हिंसा करनेका इरादा किया, आरोप सिर्फ अश्रद्धा फैलानेका है। इस आरोपमे ऐसा कुछ भी नहीं है जो पिछले बारह महीनोंमे हजारों सभाओमे बार-बार न कहा गया हो। वास्तवमें असह-योगीका तो यह धर्म ही है कि वह सरकारके प्रति जनताकी अश्रद्धाको व्यक्त करे.

१. अब उत्तर प्रदेश।

२. अब मध्य प्रदेश।

उसे फैलाये और बढ़ावा दे। अश्रद्धा तो असहयोगका मूल तत्त्व है। हर असहयोगीका विश्वास है कि सरकार यानी शासन-प्रणाली बुरी है, वह भारतके साधन-स्रोतोका शोषण करती है, और उसने भारतको इतना कगाल बना दिया है कि अकाल और बीमारियाँ देशपर हावी हो गई है। भारतकी असहायावस्थाके लिए यह शासन-प्रणाली ही जिम्मेदार है। ब्रिटिश मन्त्रियोंने मुसलमानोसे किये हुए वादोको तोड़ा है, इसमें कोई शक नही। प्रत्येक असहयोगी इन और ऐसी दूसरी बहुत-सी बातोमे विश्वास करता है और इसलिए असहयोग द्वारा इस बुराईको मिटाना चाहता है। मैं श्री सुन्दरलालको उनकी गिरफ्तारीपर बधाई देता हूँ। सच पूछा जाये तो मुझे उनसे ईर्ष्या होती है। मध्य-प्रदेश सरकार चाहे तो दूसरे सभी नेताओको जेलमे बन्द कर दे, लेकिन इस तरहके पागलपन और अविचारपूर्ण दमनसे जिस अश्रद्धाको वह कुचलना चाहती है वह और भी गहरी और व्यापक ही होगी। जनताका कर्त्तव्य स्पष्ट है। वह अपने रचनात्मक कार्यक्रममे लगी रहे और इस तरह अन्तिम विजयकी तैयारियाँ करती रहे। हमे सरकारकी बौखलाहटके बावजूद अपना आपा नही खोना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-५-१९२१

६९. कराचीसे प्रतिवाद

सम्पादक,

'यंग इंडिया'

महोदय,

चार तारीखके[1] 'यंग इंडिया'में आपकी कराचीकी आलोचना पढ़कर कई कराचीवालोंको बड़ा दुःख हुआ। महोदय, हम समझते है कि आपने अन-जाने ही हमारे शहरके साथ अन्याय किया है। आपने एक राष्ट्रीय स्कूलके हिसाब-किताबके बारेमें स्थानीय तौरपर उठ खड़ी हुई एक बहसके बारेमें टीका की थी। (वह एक ही राष्ट्रीय स्कूलके बारेमें है, कई राष्ट्रीय स्कूलोके बारेमें नहीं जैसा कि आपने लिखा है)। वह बहस इसलिए उठी थी कि कुछ ईमानदार कार्यकर्त्ताओंको कुछ दूसरे उतने ही ईमानदार, हालाँकि कुछ ज्यादा अनुदार, देश-सेवकोंके बारेमें एक बिलकुल ही बेबुनियाद किस्मकी गलतफहमी हो गई थी; आप-की टिप्पणी पढ़कर बड़ी पीड़ा पहुँची। उसमें कुछ ऐसे खरे और त्यागी व्यक्तियों-की ईमानदारीपर शक जाहिर किया गया है जिन्होंने मातृभूमिकी बलिवेदी-पर अपना सर्वस्व चढ़ा दिया है और जो किसी भी तरहके संदेहसे उतने ही

१. देखिए "टिप्पणियाँ", ४-५-१९२१।

परे है जितने कि अली भाइयों-जैसे हमारे बड़े-बड़े नेतागण, जिनके बारेमें कुछ लोगोंने अभी कुछ ही दिन पहले दुर्भावनापूर्ण प्रचार किया था। इस मामलेमें बदनामीके शिकार बननेवाले सज्जनोंने दो बड़ी-बड़ी सार्वजनिक सभाओंमें हिसाब-किताब पेश किया था और कहा था कि जो भी चाहे वह उनके दफ्तरमें आकर हिसाब-किताब देखकर अपनी पूरी तसल्ली कर सकता है। इस मामलेको तभी बिलकुल खत्म हुआ मान लिया गया था। लेकिन आपके पत्रमें उसका हवाला देखकर वह बहस फिर शुरू हो गई है। मुझे भय है कि इससे हमारे विरोधियोंको हमारे आन्दोलनपर पहलेसे कहीं ज्यादा जमकर कीचड़ उछालनेका मौका मिल जायेगा। महोदय, आपको ठीक-ठीक पता नहीं है कि हमारे विरोधीगण आपकी उक्तियों और लेखोंको (और आपके द्वारा अपने अनुयायियोंको दी गई चेतावनियों और झिड़कियोंको) किस तरह तोड़-मरोड़कर एक दूसरी ही शक्लमें पेश करते है, और कैसे वे उनमें से कुछ असम्बद्ध, अलग-थलग वाक्य इत्यादि निकालकर असहयोगियोंका मजाक बनाया करते हैं — ये काम सरकार या एंग्लो-पार्टी नहीं हमारे अपने ही भाई नरम दलके लोग करते हैं; ये लोग इस समय क्रूरताकी सीमाका अतिक्रमण करनेपर तुले हुए हैं। हमारे विरोधी लोग 'हिन्द स्वराज्य' के कुछ वाक्यों, वासनाके सम्बन्धमें आत्म-संयम विषयक आपके लेख, को लेकर, या खालसाजीके नाम आपके या जनता द्वारा हिंसाको अपनानेपर आपकी हिमालय-वासकी धमकीकी बातको लेकर अक्सर आन्दोलन और उसके अनुयायियोंका मजाक उड़ाया ही करते हैं और कराचीके सम्बन्धमें आपकी टीकाने उनके लिए और भी मसाला जुटा दिया है।

आपने गवर्नरकी कराची-यात्राके समय आयोजित हड़तालका समर्थन नहीं किया है और आपने लिखा है कि वे अच्छेसे-अच्छे गवर्नरोंमें से हैं। महोदय, इस सम्बन्धमें मेरा कहना यह है कि हो सकता है उन्होंने बम्बई या गुजरातकी कृतज्ञता पाने लायक कोई काम किया हो या न किया हो पर सिन्धके लिए तो उन्होंने निश्चय ही ऐसा कोई काम नहीं किया कि सिन्धी लोग उनकी भूरि-भूरि प्रशंसामें आपका साथ दें। आज सिन्धमें जितना दमन चल रहा है, उसके साथ जितनी नृशंसता बरती जा रही है या लोगोंको जितना आतंकित किया जा रहा है, वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। आपको अपने ऊपर पूरा संयम है, लेकिन यदि आप अपनी सिन्ध-यात्राके चन्द दिनोंमें सक्खर, नवाबाद और थार गये होते और आपने वहाँ अपने कानोंसे पुलिस और अन्य सरकारी अफसरोंके रोंगटे खड़े कर देनेवाले अत्याचारोंकी कहानियाँ वहाँके लोगोंकी जुबानी सुनी होतीं तो आपके संयमका बाँध टूट जाता। महोदय, मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि आप उसके बाद इन गवर्नर साहबके बारेमें अपनी राय बदल देते। इन्हींके इशारोंपर वहाँ लोगोंपर इतनी मुसीबतें ढाई जा रही हैं। यही

वे गवर्नर हैं जिन्होंने अभी-अभी सत्ताके मदमें चूर होकर जनताकी तुलना नौकरोंसे और सरकारकी तुलना मालिकोंसे की थी और कहा था कि असहयोगियोंको वही करना चाहिए जो नौकरीसे असन्तुष्ट होनेपर नौकर करते हैं; यानी जैसे वे नौकरी छोड़ देते हैं उसी तरह असहयोगियोंको देश छोड़कर चले जाना चाहिए। कहा जाता है कि सिन्धके प्रमुख "सहयोगी" नेताओंकी एक सभामें यह कहा गया था। उनकी अच्छाईका एक ताजा सबूत है हमारे स्वामी गोविन्दानन्दपर मुकदमा चलानेकी मंजूरी देना, जिसके कारण बादमें उनको पाँच वर्षकी कैद हुई। अब हम अत्यन्त सम्मानपूर्वक आपसे पूछते हैं कि महोदय यह बतलाइये ऐसे गवर्नरकी कराची-यात्राके समय उनको यह दिखलानेके लिए हड़ताल करनेमें कौनसा घोर अपराध हो गया कि हम सिन्धके लोग अब पहले-जैसे बेजुबान मवेशी नहीं रहे जिनको विलिंगडनके इशारेपर लॉरेंसने कभी छल-बलसे डरा-धमका दिया था। लोग दिलसे उस प्रदर्शनके पीछे थे, यह इसीसे सिद्ध है कि हड़ताल मुकम्मिल थी, ६ और १३ तारीखकी राष्ट्रव्यापी बड़ी-बड़ी हड़तालोंसे भी ज्यादा मुकम्मिल।

कराची आपका,
८ मई, १९२१ गिरधारीलाल खूबचन्दानी

मैं बडी खुशीसे उपर्युक्त पत्र छाप रहा हूँ। उसमे से सिर्फ वे हिस्से छोड़े गये है जिनमे बातको बढा-चढाकर कहा गया था। अगर मेरे द्वारा किसी स्कूलके प्रति अन्याय हो गया हो तो उसके लिए मुझे खेद है। सार्वजनिक सस्थाओके खिलाफ प्रामाणिक और सच्ची शिकायते प्रकाशित करना मेरा कर्त्तव्य है। किसी भी भ्रामक कथनसे ईमानदार राष्ट्रीय सस्थानोका कुछ भी नही बिगड सकता। जहाँतक बम्बईके गवर्नर साहबका सवाल है, मैंने अपनी राय जाहिर की थी। मेरा अब भी यही खयाल है कि गवर्नर साहब बहादुरको सिन्धके हाकिमोकी धाँधलीकी कोई जानकारी नही है। लेकिन सरकारपर जो आरोप लगाया गया है अगर वह साबित हो भी जाये तो भी मै इस बातके लिए राजी नही कि जब भी कोई बदनाम अफसर कहीका दौरा करे तो हर बार हमे हडताल करनी ही चाहिए। गवर्नर साहबके बारेमे जो बात कही गई है, अगर सचमुच उन्होने वैसा कहा है तो यह बडे ही दु खकी बात है। मेरा ऐसा विश्वास रहा है कि बम्बईके गवर्नर बहादुर गम्भीर और चतुर व्यक्ति है, इसलिए जल्दबाजीमे कोई अविचारपूर्ण बात कह जानेकी जो शिकायत उनके बारेमे की गई है उसके सच होनेसे मुझे जबरदस्त धक्का लगेगा।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-५-१९२१

७०. नागरिकों द्वारा दिये गये अभिनन्दनपत्रका उत्तर[1]

२६ मई, १९२१

गांधीजीने पहले खड़े होकर भाषण न दे सकनेके लिए क्षमा माँगी और नगरपालिका द्वारा अंग्रेजीमें मानपत्र दिये जानेकी थोड़ी आलोचना की। उन्होने कहा कि नम्रतापूर्वक ऐसी त्रुटियोंकी ओर ध्यान दिलाना मैं अपना कर्त्तव्य मानता हूँ। यदि यह मानपत्र मराठी या हिन्दीमें दिया गया होता तो वह भारतके वर्तमान मानसके अधिक अनुकूल होता। अब वह समय आ गया है कि जब नगरपालिकाएँ अपनी पहलेकी सीमाओंके बाहर कदम रख रही हैं। नगरपालिकाओंने उन्हें आगे आकर मानपत्र देना शुरू कर दिया है। इस विषयमें पहल बरेली नगरपालिकाने की थी। चाँदीकी जो मंजूषा दी गई थी उसके विषयमें उन्होंने कहा कि अगर शोलापुरके कोई सम्पन्न सज्जन उसे खरीद लें तो अच्छा हो; क्योंकि इस तरह प्राप्त रकम तिलक स्वराज्य-कोषमें दी जा सकेगी। उन्होने कहा मुझे यह देखकर सन्तोष हुआ है कि शोलापुरकी नगरपालिका अपना कर्त्तव्य कर रही है। नगरपालिकाओंका काम केवल सड़कोंकी सफाई करना है यह धारणा अब समाप्त हो जानी चाहिए और इन्हें राजनीतिके क्षेत्रमें उचित भाग लेना चाहिए। अन्तमें उन्होंने भगवान्से प्रार्थना की कि वह शोलापुरकी नगरपालिकाको अपना कर्त्तव्य करनेकी शक्ति और साहस प्रदान करे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-५-१९२१

१. गांधीजी पण्ढरपुरसे सुबह ३-३० पर शोलापुर पहुँचे थे। उस दिन नगरका सब कारोबार बन्द रहा, जुलूस निकाला गया और ९ बजे सवेरे ही नगरपालिकाने उन्हें मानपत्र भेंट किया।

७१. तार : महादेव देसाईको[1]

बागलकोट
२७ मई, १९२१

महादेव
द्वारा मथुरादास
९३, बाजार गेट
फोर्ट, बम्बई

शुरूमे प्रस्तावित परिवर्धन कर दे किन्तु बादका अनुच्छेद कायम रहे। तुम 'मानते हैं' के पहले 'अब' रख सकते हो। किन्तु जोड़ा गया शब्द 'हृदयसे' के पहले रहे। सलाहके अनुसार समाचारपत्रोको परिपत्र भेजो। मन्त्रीकी हैसियतसे अपने हस्ताक्षरोके साथ परिवर्धनोके बारेमे शिमला तार दो और लिखो कि परिवर्धनो सहित वक्तव्य हस्ताक्षरोके साथ प्रचारित कर दिया गया है। मोटरसे बीजापुर जा रहा हूँ। निश्चयके अनुसार कल बीजापुर छोड़ रहा हूँ। परिणामकी सूचना तारसे बीजापुर दो।

गाधी

मूल अग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५३२) की फोटो-नकलसे।

७२. बीजापुरके अभिनन्दनपत्रोंका उत्तर[2]

२७ मई, १९२१

श्री गुण्डप्पाको बोलनेकी अनुमति दे दी गई,[3] इसकी मुझे खुशी है। अपने विरोधियोके विचार धैर्यसे सुनना हमारा कर्त्तव्य है। मै ब्राह्मणेतर लोगोकी भावनाएँ

१. यह तार महादेव देसाईको उनके २६/२७ मईके तारके जवाबमें भेजा गया था। उनका तार इस प्रकार था: "केवल इस संशोधनके साथ मसविदेपर हस्ताक्षर हो गये है: 'किन्तु हम मानते हैं कि हमारे भाषणोके कुछ अंशोका यह अर्थ हो सकता है' शब्दोके स्थानपर 'हमने कभी सोचा भी नही था कि हमारे भाषणोंके उन अशोका वैसा अर्थ भी हो सकता है' रख दिये गये हैं। "इसलिए हम हृदयसे" शब्दोसे वाक्य प्रारम्भ होता है। निर्देश, द्वारा मथुरादास एक्सप्रेस तारसे दीजिए।" मूल मसविदेके लिए देखिए "अली भाइयोंकी क्षमा-याचनाका मसविदा", १४–५–१९२१।

२. गाधीजी बागलकोटसे शामको बीजापुर पहुँचे। उन्होंने स्त्रियोंकी एक सभा और बादमें थान-बावडीके मैदानमें लगभग १२,००० लोगोकी एक आम सभामें भाषण दिया। उन्हें नगरपालिका और स्थानीय व्यापारी सबकी ओरसे अभिनन्दनपत्र भेंट किये गये थे।

३. गुण्डप्पा शवाडी नामक एक लिंगायत ब्राह्मणेतर सज्जन जो इससे पहले बोले थे।

जानता हूँ और उनका कारण भी समझता हूँ। मैं ऐसा नही कहता कि ब्राह्मणोंका कोई दोष नही है। ब्राह्मण भी अपने निर्दोष होनेका दावा नही करते। ब्राह्मणोंने अपनी धार्मिक भावनाओंकी उपेक्षा की है और उनका जीवन पवित्र नही रह गया है। वे कभी जिस ऊँचाईपर प्रतिष्ठित थे उससे च्युत हो गये और उनके पतनके साथ ही भारतका पतन प्रारम्भ हुआ। मैं ब्राह्मणेतर हूँ और अपने ब्राह्मणेतर मित्रोंसे अपील करता हूँ कि वे आजके ब्राह्मणोंके पतित हो जानेके कारण अपने धर्म और जीवनके आदर्शोंको न भूले। शायद आप यह न माने कि ब्राह्मणोंकी बदौलत ही ब्राह्मणेतर अपनी कमजोरियोंके प्रति जागरूक होकर अपने हकोंके लिए आन्दोलन कर रहे है। किन्तु फिर भी यह सच है कि अपने पतनके बावजूद आज भी ब्राह्मण राजनीतिक और सामाजिक सभी आन्दोलनोंमें सबसे आगे है। दलित वर्गोंकी उन्नतिके लिए अन्य जातियोंकी अपेक्षा ब्राह्मण ही अधिक प्रयत्न कर रहे हैं। लोगोंके सभी वर्ग देशभक्तिके लिए लोकमान्य तिलकका आदर करते है। आन्ध्रमें एक ब्राह्मण सज्जनने अछूत-वर्गोंकी सेवाके लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया है। स्वर्गीय श्री गोखले,[1] श्री रानडे[2] और आदरणीय श्री शास्त्री सबने पिछड़े वर्गोंकी उन्नतिके लिए बहुत सुन्दर काम किया है। ये सब ब्राह्मण थे। मेरी समझमें ब्राह्मण हमेशा ही आत्मत्यागके लिए प्रसिद्ध रहे हैं। आप ब्राह्मणशाहीकी बात करते हैं। परन्तु जरा हम इसकी तुलना ब्रिटिशशाहीसे करे। यह सरकार तो "फूट डालो और राज्य करो" की नीतिका अनुसरण करती है और तलवारकी ताकतसे अपनी सत्ता कायम रखती है। ब्राह्मणोंने शस्त्रबलका सहारा कभी नही लिया। उन्होंने केवल अपने बुद्धिबल, आत्मत्याग और तपस्या द्वारा अपनी प्रभुता स्थापित की। किसीको भी उनकी प्रभुतासे ईर्ष्या नही करनी चाहिए। मैं अपने ब्राह्मणेतर भाइयोंसे अपील करता हूँ कि वे ब्राह्मणोंसे घृणा न करे और नौकरशाहीके जालमें न फँसे।

ब्राह्मणेतर लोग धनी हैं। कृषि और वाणिज्य उनके हाथमें है। यदि वे सार्वजनिक सेवाओंकी आकांक्षा रखते हैं तो असहयोग आन्दोलन द्वारा उसका रास्ता भी उनके लिए खोल दिया गया है। असहयोग तो ब्राह्मण-अब्राह्मण सबकी समान रूपसे भलाईके लिए है। आप कहते है कि स्कूलों और कालेजोंके बहिष्कारकी सलाह शिक्षित ब्राह्मणोंको स्वीकार्य हो सकती है परन्तु उन अब्राह्मणोंके लिए वह सलाह जरूर हानिकर होगी जो अभी अशिक्षित है। आप यह भी कहते हैं कि मैं आधुनिक शिक्षाकी एक अच्छी देन हूँ। परन्तु मैं आपको इतना अवश्य बतला देना चाहता हूँ कि आधुनिक शिक्षाने हम सबको कायर बना दिया है। हमारी बेबसी और पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेषका कारण यही शिक्षा है। इसने हममें गुलामीकी मनोवृत्तिको बढ़ाया है। आप मुझमें जो गुण बताते है, निश्चय ही वे इस शिक्षाके परिणाम नही है। मैंने बहुत पहले इस शिक्षाके सम्मोहक प्रभावसे अपनेको मुक्त कर लिया था। मैं जो-कुछ हूँ,

१. गोपाल कृष्ण गोखले (१८६६–१९१५), शिक्षा-शास्त्री और राजनीतिज्ञ। भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के संस्थापक।

२. (१८४२–१९०१); समाज-सुधारक और लेखक; कांग्रेसके संस्थापकोंमें से एक।

वह अपने धार्मिक और जीवनके शाश्वत सिद्धान्तोके चिन्तन और ब्राह्मणो द्वारा सकलित 'भगवद्गीता', 'महाभारत' तथा 'रामरक्षा'-जैसे ग्रन्थोके अध्ययनसे हूँ। मैं अपने ब्राह्मणेतर मित्रोसे इन बातोपर शान्तिसे विचार करनेके लिए कहता हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि ऐसा करनेपर उन्हे मेरे कथनकी सचाईपर विश्वास हो जायेगा।

मैं और अली भाई, भाइयोकी तरह रहते है। और मैं हिन्दू और मुसलमान दोनो जातियोसे अपील करता हूँ कि वे इसी तरह भाई बनकर रहे। असहयोग आन्दोलन आत्मशुद्धिका आन्दोलन है। जो बुराइयाँ हमारे समाजके मर्मको खा रही है उनसे हमें अवश्यमेव छुटकारा पाना चाहिए। हमें देशकी बलि-वेदीपर अपना जीवन बलिदान करनेके लिए तैयार रहना होगा। हमे हर कीमतपर अहिंसा अपनानी होगी। हमे पजाबके लछमनसिंह और दलीपसिंहके प्रशसनीय उदाहरणका अनुकरण करना होगा। यद्यपि वे इतने सशक्त थे कि महन्त नारायणदासको मार सकते थे, तथापि उन्होने आत्मरक्षाके लिए अँगुली तक नही उठाई।

मुझे दु ख है कि यह जिला अकाल-पीड़ित है। अत. आप इस हालतमे तिलक स्वराज्य-कोषमे उदारतापूर्वक दान नही दे पा रहे है। परन्तु मुझे यह सुनकर खेद हुआ है कि पूरे जिलेमें केवल १,४०० चरखे चल रहे है। चरखा तो अकालके विरुद्ध बीमा ही है। कृषिपर निर्भर रहनेवाली ८७ प्रतिशत आबादीके लिए अभावकी स्थितिमे जीवन निर्वाह करनेका इसके सिवा और कोई जरिया नही है। इसलिए हमे हर घरमे चरखा जरूर शुरू करना चाहिए। इससे हमारे दो काम सधेगे। स्वदेशी उद्योग पनपेगा और फलस्वरूप विदेशी वस्त्रोका पूर्ण बहिष्कार हो जायेगा। यदि हम अहिंसाका मार्ग अपनाने और ब्राह्मण तथा अब्राह्मणोके विवादको हल करनेके लिए कृतसकल्प रहे, यदि हिन्दू-मुसलमान एक दूसरेके साथ भाई-भाईकी तरह प्रेमसे व्यवहार करते रहे, और यदि हर घरमे चरखा चलता रहे तो मैं आपको आश्वासन देता हूँ कि इसी एक बरसके भीतर स्वराज्य स्थापित हो जायेगा।

लोकमान्य तिलकने हमें सिखाया है, स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।[1] इस मन्त्रको साधनेके लिए हमे स्कूलो या परिषदोमे जानेकी जरूरत नही है। हमे स्वराज्य चाहिए और वह स्वराज्य चरखा देगा। ३० जूनसे पहले ही हमको एक करोड़ रुपया जमा करना है। मैं समझता हूँ कि लोकमान्य तिलकके नामपर एक करोड़ रुपया इकट्ठा करना कठिन काम नही है।

आपने मेरा जो सम्मान किया और बीजापुरकी नगरपालिका तथा यहाँके व्यापारियोने स्वागतके लिए जो अभिनन्दनपत्र भेंट किये है, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। यदि नगरपालिकाएँ और व्यापारीगण अपने कर्त्तव्योके प्रति जागरूक है तो वे अवश्य ही स्वराज्य हासिल करने और खिलाफत तथा पजाबके मामलोमें न्याय प्राप्त करनेके लिए हमारी ठोस मदद कर सकेगे।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, ३–६–१९२१

१. "स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं उसे लेकर रहूँगा" यह तिलकका प्रसिद्ध सिद्धान्त-वाक्य था।

७३. पत्र : हसन इमामको

[२७ मई, १९२१ के बाद]

प्रिय मित्र,

आपके पत्र[1] और सलग्न पत्रके[2] लिए धन्यवाद। विश्वास रखिए उत्तेजना दूर करने और दगे रोकनेके लिए यथाशक्ति सब-कुछ करूँगा। इस महीने किसी भी हालतमें भारतके इस अचलको छोड सकना मुझे कठिन दिखाई देता है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५३७)की फोटो-नकलसे।

७४. सन्देश : गयाकी जनताके नाम[3]

मैने सुना है कि बिहारमे मेरे नामसे कितने ही लोग हिन्दू और मुसलमानोको गोश्त-मछली खानेसे रोकते है। शान्तिमय असहयोगके युद्धमें किसीको निरामिष भोजन करनेकी बात समझानेका समावेश नही होता। जबरदस्तीकी तो बात ही नही है।

किसी आदमीको अपनी रुचिके अनुसार खानेसे जबरदस्ती रोकना अहिंसा नही है, हिंसा है। मै तो किसीको दारू पीनेसे भी जबरदस्ती नही रोकना चाहता।

बअमन तर्कमवालात (सविनय अवज्ञा) मे जबरदस्तीकी मनाही है। जो आदमी किसीको [जबरदस्ती] उसकी रुचिके अनुसार खाने-पीनेसे रोकता है वह सबके प्रति गुनाह करता है। ऐसी जबरदस्तीसे हमारे व्रतको बडा नुकसान पहुँचेगा। इसलिए मै चाहता हूँ कि कोई किसीको मेरे या अहिंसाके नामसे खाने-पीनेमें जबरदस्ती न रोके और किसीके पाससे गोश्त-मछली छीननेकी भी कोशिश न करे।

मेलेमे जबरदस्ती जानवरोको छीनना भी मना है।

मोहनदास गाधी

आज, २९–५–१९२१

१. हसन इमामने अपने २७ मईके पत्रमें गाधीजीसे गया आनेका आग्रह किया था ताकि वे बकरीदसे पहले स्थिति शान्त बना दें।

२. उपलब्ध नही है।

३. यह सन्देश सम्भवत: हसन इमामके पत्रके उत्तरमें गयाकी जिला कांग्रेस कमेटीको भेजा गया था। देखिए पिछला शीर्षक।

७५. गुजरातके धनिक-वर्गसे

जूनकी ३० तारीख समीप आती जाती है। गुजरातमे अभी हम तिलक स्वराज्य-कोषके लिए दो लाख रुपया भी इकट्ठा नही कर पाये है। उसमे भी वस्तुत: धनिक-वर्गका योगदान बहुत कम है।

क्या धनिक-वर्गको स्वधर्म प्रिय नही? और क्या वे हिन्दुस्तानको जगत्के सम्मुख गर्वसे खडा हुआ नही देखना चाहते? हिन्दुस्तानमे जो तीन करोडसे भी अधिक लोग भूखे मरते है क्या उनका पेट भरनेके लिए वे अपना योगदान नही देना चाहते? क्या उन्हे हिन्दुस्तानकी कीर्ति प्रिय नही है? क्या उन्हे हिन्दुस्तानका गुलामीसे मुक्त होना पसन्द नही है? यदि वे चाहे तो गुजरातका बोझा एक दिनमे उठा सकते है, क्या यह बात सच नही है? यदि सिर्फ अहमदाबादके मिल-मालिक चाहे तो क्या एक ही दिनमे दस लाख रुपया नही दे सकते?

वे चाहे तो बहुत-कुछ कर सकते है। मै आशा रखता हूँ कि वे देशमे इस समय प्रचण्ड वेगसे जो आन्दोलन चल रहा है उसमे अपना हिस्सा दिये बिना न रहेगे।

"यदि हम सहायता करेगे तो सरकार अड़चने डालेगी", मुझे उम्मीद है कि धनिक-वर्ग अपने मनसे इस दहशतको निकाल देगा। मनमे ऐसी दहशत रखनेके दिन अब लद गये। और फिर यदि एक ही धनिकके पैसा देनेकी बात हो तो उसे डराया भी जा सकता है लेकिन जहाँ सबकी बात आती है वहाँ यह कैसे सम्भव हो सकता है।

तथापि डर ऐसी चीज है कि यदि किसीकी देनेकी इच्छा हो भी तो पहल करनेकी हिम्मत नही होती। इस तरहके भयसे मुक्त होना भी इस जगी लडाईका एक महान् परिणाम होना चाहिए। मुझे उम्मीद है कि धनिक-वर्ग हिम्मतसे राष्ट्रीय उन्नतिमे पूरा-पूरा भाग लेगा।

लेकिन कदाचित् धनिक-वर्गमे से किसी-किसीको निर्भयताके धर्मका पालन करना कठिन जान पड़े तो भी मैं उनसे यह उम्मीद तो करूँगा ही कि वे दयाधर्मका परित्याग नही करेगे। अकालग्रस्त लोगोके लिए जो मदद दी जानी चाहिए वह तो अवश्य देगे। जब प्लेगका भीषण प्रकोप था, जब अकाल पडा था तब धनिक-वर्गने पैसा देनेमे कोई कसर उठा नही रखी थी। अगर वे कुछ भी नही कर सकते तो अन्तमे मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे कमसे-कम अकाल निवारणके दायित्वको अपने कन्धोपर उठा ले।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-५-१९२१

७६. गुजरातसे बाहर रहनेवाले गुजरातियोंसे

बेजवाडाकी माँगके उत्तरमे गुजरातको न केवल अपने हिस्सेका दान देना है बल्कि उसे असमर्थ प्रान्तोकी सहायताके लिए भी आगे आना होगा और इसीलिए मैंने गुजरातके हिस्सेमें दस लाख रुपयेकी रकम निर्धारित की है। यदि गुजरात इतने भारको वहन नही करेगा तो मुझे आशका है कि तीस जूनसे पहले-पहले हम एक करोड रुपया कदापि इकट्ठा नही कर सकते।

लेकिन गुजरातको एक तीसरा बोझ और वहन करना है। गुजरातमे कितने ही स्थानोपर अकाल पडा हुआ है वहाँ भी मददकी जरूरत है। मै इन तीनो बातोकी ओर गुजरातसे बाहर रहनेवाले गुजरातियोका ध्यान आकर्षित करता हूँ। वे जिस किसी प्रान्तमे रहते है उसके प्रति उन्हे अपने फर्जको पूरा करना चाहिए इस विषयमे तो कोई मतभेद ही नही हो सकता। लेकिन गुजरातके प्रति भी उनका उतना ही कर्त्तव्य है। गुजरात अपने हिस्सेकी दस लाख रुपयेकी रकम तभी दे सकता है जब गुजरातसे बाहर रहनेवाले गुजराती अपने मनमे निरन्तर उसका ध्यान रखे। यदि वे ऐसा करे तो गुजरात दस लाख रुपयेकी पूरी रकम दे सकेगा, इतना ही नही बल्कि उससे भी अधिक दे सकनेकी स्थितिमे होगा।

पारसी और मुसलमान गुजरातियोको अगर मै गुजरातके प्रति उनके कर्त्तव्यका भान करवा सकूँ तो वे अकेले ही एक करोड रुपया इकट्ठा करनेमे समर्थ है।

मै गुजरातके विभिन्न भागोमे पडे हुए अकालपर ज्यादा जोर देना चाहता हूँ। उडीसाके अकालके समय गुजरातियोने बहुत अच्छी रकम देकर मदद की थी।[1] उस अकालको गुजरातने ही सँभाल लिया था — ऐसा कहे तो अनुचित न होगा। तब अगर गुजरातके अकालको गुजराती सँभाले तो इसमे आश्चर्यकी क्या बात है?

अन्य बातोको लेकर आजकल देशमे जो आन्दोलन हो रहा है उसके प्रति जिन लोगोको कोई सहानुभूति नही है उनसे भी मै अकाल-निवारणके लिए धन देनेकी याचना करता हूँ। वे अकाल-कोषमे दो तरहसे पैसा दे सकते है। एक तो तिलक स्वराज्य-कोषमे दान देकर और यदि वैसा करनेमें उन्हे कोई दिक्कत महसूस हो तो केवल अकाल-कोषके लिए ही पैसे भेजकर। वस्तुतः देखा जाये तो तीन प्रकारसे पैसा भेजा जा सकता है. (१) तिलक स्वराज्य-कोषमे, बिना किसी शर्तके (२) तिलक स्वराज्य-कोषमें, लेकिन सिर्फ अकाल-निवारणके लिए ही, यह रकम तिलक स्वराज्य-कोषकी मानी जायेगी परन्तु इसका उपयोग अकालके अवसरपर ही किया जायेगा, और (३) सिर्फ अकाल-कोषके लिए और तिलक स्वराज्य-कोषमें शामिल न किये जानेकी शर्तके साथ।

तीसरी शर्तके अनुसार सरकारी कर्मचारी और असहयोगका विरोध करनेवाले भी मुक्तभावसे दान दे-सकते है और देंगे, मै ऐसी उम्मीद रखता हूँ। जो रकम हमें

१. देखिए खण्ड १७।

प्राप्त होती है उसका पूरा-पूरा हिसाब प्रकाशित किया जाता है। सावधान मन्त्रियो और खजाचियोके हाथमे सारा काम है। इसलिए गुजरातसे बाहर रहनेवाले गुजरातियो-से मेरी प्रार्थना है कि वे तत्परतापूर्वक बिना-किसी सकोचके पैसा भेजे।

दक्षिण तथा पूर्व आफ्रिका अथवा जापान और विलायतमें रहनेवाले भारतीयोको यह पत्र देरसे मिलेगा। इसलिए गुजरातमे रहनेवाले जिन लोगोके सम्बन्धी उपर्युक्त स्थानोमे रहते है उन्हे मै सलाह देता हूँ कि वे अपने सम्बन्धियोको इस आशयके तार दे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-५-१९२१

७७. टिप्पणियाँ

महाराष्ट्रकी यात्रा

लोकमान्य तिलक महाराजकी जन्मभूमिमे जाना — जहाँ आधुनिक कालमे वीर पुरुषोका जन्म हुआ, जहाँ शिवाजी हो गये है, जहाँ रामदास और तुकारामने गाया है वहाँ जाना — मेरे लिए तो तीर्थयात्रा करनेके समान ही है। मेरा हमेशासे यह विश्वास रहा है कि महाराष्ट्र चाहे तो सब-कुछ कर सकता है। लेकिन महाराष्ट्रकी अश्रद्धा मुझे हमेशा दुखी करती रही है। जिस प्रान्तमें सबसे ज्यादा काम हो सकता है उसी प्रान्तमे सबसे कम काम हुआ है, मुझे सदा ऐसा भय रहता है। महाराष्ट्रके कार्यकर्त्ता भी ऐसा ही मानते दीख पडते है। शिमला छोडनेके बाद मैं कालका और अम्बाला गया। वहाँसे मध्य-प्रान्तके खडवाके लिए रवाना हुआ और बादमे भुसावल, सगमनेर और येवला गया। यह टिप्पणी कुर्डूवाड़ी जाते हुए रास्तेमे लिख रहा हूँ। कुर्डूवाड़ी जानेके लिए येवलासे धोड जाना पडता है और धोडसे गाड़ी बदलनी पडती है। धोड हमारी गाडी देरसे पहुँची और इसी कारण जिस गाडीमे हमें कुर्डूवाडी जाना था वह छूट गई। परिणामत हमें धोडका अनुभव भी मिला। मुझे यह एहसास हुआ कि आम जनताकी श्रद्धा सब ओर एक समान है लेकिन काम करनेवाले कम है। प्रबन्ध करनेकी शक्ति अल्प है, हड़बडी और शोर-गुलका कोई हिसाब नही है, लोगोसे स्टेशन खचाखच भरा हुआ है, लेकिन अगर कामकी ओर देखे तो नही के बराबर। मुझे भुसावल, सगमनेर और येवलामें जिन्होने निमन्त्रित किया था वे लोग अवश्य ही अच्छे कार्यकर्त्ता है। तथापि परिणाम अत्यन्त नगण्य दिखाई दिया।

हमारे पास शोर-गुल, जयघोष और चरणस्पर्शके लिए अब समय ही कहाँ रह गया है? यदि हमारे पास स्टेशन जानेका समय है तो क्यो न हम उसे कातनेमें लगाये? उतना समय चन्दा इकट्ठा करनेमे क्यो न बिताये? क्या हमे कांग्रेसके कम सदस्य बनाने है? हम दिन-रात लगातार काम करके ही जून मासतक सारा काम कर लेनेके अपने उद्देश्यमे सफल हो सकेगे। दो महीने बीत गये लेकिन हम

अभीतक दो-तिहाई कार्य भी पूरा नही कर पाये है — आधा काम भी खत्म नही हुआ है।

यदि हम तीस जूनतक कार्य पूरा नही कर पाये तो यह माना जायेगा कि हमारी स्वराज्य प्राप्त करनेकी शक्ति अथवा इच्छा कम है।

भूसावल और सगमनेरमे सामान्य तौरपर चन्दा ठीक ही इकट्ठा किया गया है। लेकिन मुझे कहना चाहिए कि येवलामे तो नहीके बराबर चन्दा मिला। येवलामे बहुत पैसा है। वहाँ दो सौ वर्षसे बसे हुए गुजराती व्यापारी है तथापि येवलामे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए सबसे कम पैसे मिले हैं। यह ठीक है कि येवलाके एक ही सज्जनने राष्ट्रीय स्कूलके लिए बीस हजार रुपये दिये। यह रकम दिये जानेकी बात तो बहुत दिनोसे चल रही थी। जिन सज्जनने यह रकम दी है वे अपनी दान-शीलताके लिए प्रसिद्ध हैं। तिलक स्वराज्य-कोषके लिए तो जनतासे पैसा इकट्ठा करना था। उसमें स्त्री-पुरुष दोनोकी ओरसे कुल मिलाकर तीन सौ रुपया ही इकट्ठा हुआ होगा जब कि येवलाके पास एक छोटेसे गाँवने हमारे वहाँसे गुजरनेके कारण तीन सौकी रकम दी।

धर्मसंकट

येवलामे मेरे ऊपर भारी धर्मसंकट आ पड़ा। मुझे वहाँ बीस हजार रुपयेकी रकम ग्रहण करनेके लिए खास तौरसे बुलाया गया था, राष्ट्रीय स्कूलका उद्घाटन भी मुझे ही करना था। हम मोटर द्वारा रातके दस बजे येवला पहुँचे। सार्वजनिक सभा रातके एक बजे हुई। मै बहुत ज्यादा थका हुआ था। सारे दिन मोटरोकी यात्राके बाद यह रतजगा था। इस सभामे मैंने राष्ट्रीय स्कूलकी बात की और इसी सभामें मैंने सुना कि इस स्कूलमे इस वर्ष भी अग्रेजी सिखाई जायेगी। ऐसे स्कूलका उद्घाटन करके मुझे खुशी तो नही होती तथापि अग्रेजी शिक्षाके सम्बन्धमे अपने उद्‌गार व्यक्त करनेके बाद स्कूलका उद्घाटन करते हुए मैंने दो शब्द कहे। किसी तरह मै इस कड़वे घूँटको चुपचाप पी गया। दूसरा दिन मेरे मौनका पवित्र दिन था तथापि मैंने अपना मौन रखते हुए ही स्कूलके उद्घाटनके लिए आनेकी स्वीकृति दे दी थी। इतनेमे मुझे खबर मिली कि इसमे तो अस्पृश्योका प्रवेश निषिद्ध है। इस वर्ष मैंने अनेक स्कूलोका उद्घाटन किया था लेकिन किसी ऐसे स्कूलका उद्घाटन नही किया था। मुझे विवश होकर व्यवस्थापकोसे कहना पडा कि मैं ऐसे स्कूलका उद्घाटन करनेके लिए नही जा सकता और मै अन्तमे नही गया। मुझपर ऐसा ही सकट कराचीमें स्वदेशी भण्डारका उद्घाटन करते समय आ पडा था। उस भण्डारमे सब तरहका माल था इसीसे मैंने उसका उद्घाटन करनेसे इनकार कर दिया था। जो-जो कार्य असहयोगके विरुद्ध है अथवा जो मेरे अपने निश्चित विचारोके विरुद्ध हो उन कार्योमें भाग लेनेके लिए मुझसे नही कहना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-५-१९२१

७८. भाषण: बम्बईकी सार्वजनिक सभामें[1]

२९ मई, १९२१

महात्मा गांधीने भाषणके आरम्भमें कहा:

मुझे अत्यन्त खेद है कि आप महानुभावोको चार बजेसे अबतक यहाँ बैठना पडा, परन्तु इसमे दोष मेरा नही है। मुझे ७–३० बजे शामका ही समय दिया गया था। मेरा सम्पूर्ण समय आपके ही लिए है और मै उसमे से अपने लिए कुछ नही रखता।

सज्जनो, अब इस देशमे सभाएँ करनेका समय नही रहा। अब तो ठोस काम कर दिखानेका समय आ पहुँचा है। आप लोगोको मालूम होगा कि मै शिमलेमे ६ दिनतक रहा और मैंने माननीय वाइसराय महोदय लॉर्ड रीडिंगसे मुलाकात भी की; परन्तु मै वहाँ कुछ लेनेकी आशासे बिलकुल नही गया था। श्री पण्डित मालवीयजीका आदेश था कि मै शिमला जाऊँ और मेरे मित्र श्री एन्ड्रयूजने भी मुझे सूचना दी थी कि वाइसराय महोदय मुझसे मुलाकात करना चाहते है। मै वहाँ गया और वाइसराय महोदयसे मिला। मुझे वाइसराय महोदयसे जो-कुछ कहना था सो विस्तारसे कहा और उन्होने भी उसे अत्यन्त प्रेम, धैर्य और शान्तिके साथ सुना। वहाँ जो-कुछ हुआ उसका ब्यौरेवार विवरण मै 'यग इडिया' मे पहले ही प्रकाशित कर चुका हूँ।[2] अब इस मुलाकातके बाद वाइसराय महोदय और मै एक-दूसरेको अधिक अच्छी तरह जानने लगे है। अब वे समझ गये है कि असहयोगके द्वारा मै क्या प्राप्त करना चाहता हूँ।

भारतका भविष्य स्वय हमारे ही हाथमे है। हमको एक स्पष्ट और सादेसे कर्त्तव्यका पालन करना है। हमको अहिंसक रहना है और हिन्दुओ एव मुसलमानोको एकताकी ग्रन्थिमे बँध जाना है। हमे देशमें बीस लाख चरखे चलवाने है। हमे राष्ट्रीय महासभा [कांग्रेस] के लिए एक करोड सभासद बनाने है और तिलक स्वराज्य-कोषमें एक करोड़ रुपया एकत्र करना है। हमे यह सब ३० जूनके पूर्व ही कर लेना है। अत्यन्त खेदकी बात है कि इन दो महीनोमे जितना-कुछ किये जानेकी आशा की जा रही थी उतना हम नही कर पाये है। और इसके दोषी हम स्वय है। हमारे ही प्रयत्नोके अभावके कारण हमारा प्रचार-कार्य बहुत आगे नही बढ पाया। यदि हम लोग उतना कार्य भी नही कर सकते जितना करनेका कांग्रेसका आदेश है तो हम स्वराज्य कैसे प्राप्त कर सकते है? या खिलाफत और पजाबके अन्यायोका निराकरण कैसे

१. इस सभाका आयोजन उत्तरी बम्बईके उपनगर माटुगामें सायं ७–३० पर स्थानीय वार्ड कांग्रेस कमेटी और माटुगा नागरिक संघके तत्त्वावधानमें किया गया था। इसका विवरण **बॉम्बे क्रॉनिकल**, ३०–५–१९२१ तथा **गुजराती**, ५–६–१९२१ मे भी प्रकाशित हुआ था तथा उनसे इसका मिलान कर लिया गया है।

२. देखिए "शिमला-यात्रा", २५–५–१९२१।

करा सकते हैं? मुझे पूर्ण आशा है कि आप अपने कर्त्तव्यसे मुँह न मोड़ेंगे और ईश्वरसे प्रार्थना है कि वह आपको मातृभूमिके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करनेके लिए पर्याप्त शक्ति प्रदान करे।

आपसे इस समय मैं जो चाहता हूँ वह केवल यही है कि आप सब लोग, भाई और बहनें, कांग्रेसके सदस्य बनें। यदि आप भय अथवा किसी स्वार्थके कारण सदस्य न बनेंगे तो आप स्वराज्यके योग्य कदापि नही हो सकते। यदि हम स्वराज्यके हेतु एक करोड रुपया एकत्र करनेको तैयार नही है तो स्वराज्य कभी प्राप्त नही हो सकता। यदि हम स्वराज्यकी खातिर एक करोड़ रुपये जमा नही कर सकते तो हम स्वराज्य पानेकी योग्यता कैसे प्राप्त करेंगे। अगर हम इतनी रकम इकट्ठी न कर पाये तो हमे स्वराज्य नही मिल सकता। मिलना भी नही चाहिए क्योकि हम उसके अयोग्य हैं। क्षण-भरके लिए विचार कीजिए कि इस नगरमें नाटको, तमाशो और अन्य आमोद-प्रमोदोमे कितना धन नष्ट किया जाता है और इस विशाल देशमें मद्य-पानमें कितना। लगभग सत्तर करोड रुपया मद्यपानमे इसी वर्ष व्यय हुआ है। यदि हम अपने दुर्गुणोपर इतना रुपया खर्च कर सकते है तो स्वराज्यके लिए एक करोड रुपया क्यो नही दे सकते? मुझे इतनेसे ही सन्तोष न होगा कि प्रत्येक व्यक्ति अपना भाग, जो केवल दो पैसे होता है, दे दे। हमें एक करोड़ रुपया एकत्र करना है और इस रकमको पूरा करना हमारा परम कर्त्तव्य है। मुझे विश्वास है कि केवल बम्बई ही इस रकमको पूरा करनेमें समर्थ है।

मुझे मॉरीशसके व्यापारी भाइयोकी ओरसे अभी २३१ रुपये प्राप्त हुए हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि इतनी दूरीपर बसे हुए हमारे ये भाई हमारी स्वराज्यकी माँगमे हमारे साथ हैं। आज ही मेरे एक मित्र रुस्तमजी घोरखोदूने[1] इस देशमें चरखे-के प्रचारार्थ १२,००० रुपये भेजे हैं। आपके सम्मुख यह एक अच्छा उदाहरण है जिसका अनुकरण करना सर्वथा उचित है। केवल एक मास शेष रह गया है जिसमे [आप चाहे तो] देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा कर सकते है। मेरी अपील बम्बई-निवासियोसे है, जो इस देशमे चलाये गए प्रत्येक आन्दोलनमे सबसे आगे रहे हैं। जलियाँवाला बाग-कोषमे उसने सबसे अधिक धन दिया था और अब वह तिलक स्वराज्य-कोषके लिए भी बडी रकम दे सकता है। लोकमान्य तिलकने ही बतलाया था कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और उसको हमें प्राप्त करना है। यदि हम तीस करोड़ मनुष्य स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए कृत सकल्प है तो हमे कौन रोक सकता है? हमारे लिए एक करोड़ रुपया इकट्ठा करना असम्भव नही है।

आप माटुंगाके लोग स्वराज्य-कोषमे केवल ५,००० रुपये जमा कर पाये, इससे मुझे बहुत दु ख हुआ। क्या आप इतनी छोटी रकम एकत्र करके ही अपना कर्त्तव्य पूरा हुआ मान बैठे है। ऐसा मानना अपनेको तथा देशको धोखा देना है? याद रखे जूनके अन्तमें हमारी कर्त्तव्यपरायणताकी परीक्षा होनेवाली है। मुझे आशा है कि आप

१. पारसी रुस्तमजी; नेटालके एक भारतीय व्यापारी जिन्होंने दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके सत्याग्रह आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया था।

इसमे अनुत्तीर्ण न होगे। मैं माटुगावासियोसे स्वराज्य-कोषमे यथाशक्ति दान देनेका अनुरोध करता हूँ।

आप यह तो कह ही नही सकते कि आपके पास देनेके लिए धन नही है। क्या आप अपने पुत्रो और पुत्रियोके विवाहोमे रुपया पानीकी तरह नही वहाते ? अथवा स्वय अपने लिए किसी वस्तुकी आवश्यकता होनेपर मनमाना खर्च नही करते ? आज तो भारतका विवाह रचा जा रहा है। आपको उसमे खुले हाथो सहायता देनी चाहिए। यह सोचनेकी आवश्यकता नही कि हमे कितना रुपया इकट्ठा करना है। केवल यही ध्यानमें रखें कि आप स्वराज्यके निमित्त जितना दे सके उतना अवश्य दें।

इस समय किसी भी स्त्रीको धार्मिक रीतियोका पालन करनेके विचारसे जो आभूषण धारण करना आवश्यक है उससे अधिक धारण करनेका अधिकार नही है। स्त्रियोको सीताका अनुकरण करना चाहिए। सीताने श्रीरामचन्द्रजीके साथ वन जाते समय सब आभूषण उतार दिये थे। भारतीय स्त्री-वर्गको आज ऐसा ही करना चाहिए। वहनो, यदि आप रामराज्य चाहती है तो आप स्वराज्य-कोषमे अपने आभूपणोको दे डाले। स्त्रियाँ विशेष रूपसे ऐसे आन्दोलनोके योग्य होती हैं; वे पुरुपोसे भी अधिक काम कर सकती हैं, इसीलिए मैं उनसे यह अनुरोध कर रहा हूँ। यदि स्त्रियोका अनुराग विदेशी कपडो, आभूषणो, फ्रासीसी और जापानी रेशम एव मैनचेस्टरके सूती कपडोके प्रति वना रहेगा तो स्वराज्य कैसे प्राप्त हो सकता है। वहनो, क्या आप देशके इस महान् यज्ञमे ऐसे बाहरी आडम्बरोकी आहुति नही दे सकती और सादा खद्दर नही पहन सकती ? हमारे देशमे अनेक भाई और बहने अधनगे फिरते है। उन्हे भी पूरा कपडा मिल सके यह मेरी इच्छा है। इसलिए आप खद्दरको ही सबसे अच्छा और सबसे पवित्र पहनावा माने। आप प्रत्येक घरमे सूत कातनेकी एक मिल खोल दे, परन्तु प्रत्येक घरमे चरखा पहुँचाये बिना यह सम्भव नही है। मुझे उन बड़ी-बड़ी मिलोकी दरकार नही है जो हमारे पुरुषो और स्त्रियोका सत निकाल ले। विदेशी कपड़ा पहनना भारतीयोके नजदीक एक पाप और अत्यन्त अनुचित कर्म होना चाहिए। जवतक खद्दरकी पवित्रता आपके मनमे नही समाती तबतक स्वराज्य दूर ही रहेगा। महीन स्वदेशी कपडोके अभावमे खद्दरपर ही सब्र कर लेना होगा। अपने भाइयो और वहनोके हाथके कते हुए सूतसे वुना हुआ खद्दर सबसे अधिक अच्छा, दर्शनीय तथा पवित्र है। हमें खिलाफत और पजाबके अन्यायोका निराकरण करानेके लिए यह सब करना होगा।

मुझे विश्वास है कि इस नगरीसे धर्मका लोप नही हो गया है। मेरा खयाल है कि बम्बई-निवासी ऐशो-आरामकी चीजे पसन्द करते है, विलासमय और आरामका जीवन वितानेके शौकीन है और उन्हे ससारकी वढिया-वढिया चीजे चाहिए परन्तु उनके हृदय पापमय नही है। अब स्वराज्यकी खातिर उन्हे इन सबका त्याग करना पड़ेगा। आपको सिनेमाओ, नाटकघरो और शराबखानोको तिलाजलि देनी होगी और सम्पूर्ण दुर्गुणोका परित्याग करना होगा। आपको व्यभिचार छोड़ना होगा। 'मातृवत् परदारेषु' यह सबका भाव होना चाहिए। परमेश्वर आपको इतना बल और साहस दे कि आप देशके इस आड़े समय उसके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन कर सके। श्रीमती

सरोजिनी नायडूका भाषण सुननेसे पहले आप लोग तिलक स्वराज्य-कोषमें उदारतासे धन देनेकी कृपा करें।

आज, ६–६–१९२१

७९. टिप्पणियाँ

अफगानी खतरा

कुछ स्वार्थ-साधकोंको अफगानोंके बारेमें नाहक चिल्ल-पों मचाते देखकर श्री विपिनचन्द्र पाल[1] जिस तरह आतंकित हो उठे हैं उसपर, मेरी ही तरह, दूसरे भी कई लोगोंको अचरज हुआ होगा। वे तो पूर्ण स्वराज्यमें विश्वास करते हैं, इसलिए मैं उनसे कहना चाहूँगा कि अपने-आपको लाचार माननेकी भावनासे मुक्त किये बिना हम भारतमें स्वराज्य स्थापित नहीं कर सकते। स्वराज्यका मतलब ही है अफगानी हमले और देशके अन्दर-बाहरके हर खतरेसे निपटनेकी हमारी तैयारी। असहयोगकी समूची रूपरेखाका आधार ही है — दूसरे लोगोंपर विश्वास करना, और अगर वे अविश्वसनीय साबित हों तो स्वयं कष्ट उठाकर उनके छल-कपटका सामना करनेके लिए तैयार हो जाना। इलाहाबादकी हिन्दू-मुस्लिम कान्फ्रेंसमें स्वयं पाल महाशयने डा० सप्रूको[2] जवाब देते हुए जो बात कही थी, मैं उनको उसीकी याद दिलाना चाहता हूँ। उन्होंने बिलकुल सच कहा था कि मेल-मिलाप, सूझ-बूझ और कष्ट सहनेकी जो शक्ति वर्तमान दासताका अन्त करेगी वही हमें इस तरहकी दूसरी सभी बुराइयोंसे निपटनेके योग्य भी बना देगी।

अखिल-इस्लामवादके जिस सिद्धान्तसे पाल महाशय इतना डरते हैं, वह इस मानीमें तो बहुत अच्छा सिद्धान्त है कि एक मुसलमान दुनियाके सभी मुसलमान राज्योंके बीच एकता और भाईचारा चाहता है। लेकिन अगर उसका मंशा तमाम मुसलमान राज्योंको जोड़-बटोरकर दुनियाका शोषण या जबरदस्ती इस्लामका प्रचार करना हो तो वह जरूर एक खतरनाक सिद्धान्त है। बहुतसे समझदार मुसलमान मेरे परिचित हैं और मैं जानता हूँ कि उनमें से कोई भी दुनियाका शोषण या जबरदस्ती इस्लामका प्रचार करनेकी बात नहीं सोचता। निरे भौतिक बलके आधिपत्यसे दुनिया तंग आती जा रही है।

मैं पाल महाशयको यह भी विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं किसी कौम, फिरके या भावनाओंकी ठकुरसुहाती नहीं करता। मैं गलत भावनाओंको अमान्य करता हूँ और अच्छी भावनाओंको अपनाता हूँ। मैं इस बातमें तनिक भी विश्वास नहीं करता कि संजीदा किस्मके मुसलमान अफगानोंकी हुकूमतको खुशी-खुशी मंजूर कर लेंगे। इस मामलेमें उनका रवैया ठीक संजीदा किस्मके हिन्दुओं-जैसा ही होगा।

१. विपिनचन्द्र पाल (१८५८–१९३२); बंगालके शिक्षाविद्, पत्रकार, वक्ता और राजनीतिक नेता।

२. सर तेजबहादुर अम्बिकाप्रसाद सप्रू (१८७५–१९४९); राजनीतिज्ञ और वकील।

"अफगानी हमलेका हौआ"पर लेख लिखते समय मेरे मनमे केवल दो बाते थी : एक तो अपने साथीके सही खयालोका समर्थन करना और दूसरे, स्वार्थ-साधकोकी चिल्ल-पोके डरसे देशवासियोको आगाह करना।

मै पाल महाशयकी इस बातको बिलकुल नही मान सकता कि अफगानोने हमला कर दिया या उनके हमलेकी महज अफवाह ही उडा दी गई तो हमारी मुसलमान आबादीका काफी बडा हिस्सा, अगर 'बागी' न हुआ तो कमसे-कम गैरकानूनी हरकते तो करने ही लगेगा। उलटे मेरा तो यह पक्का विश्वास है कि हिन्दुस्तानका मुसलमान इस बातको बहुत अच्छी तरह जानता है कि आज अगर उसने इस तरहकी कोई बेवकूफी की तो उसका दीनो-ईमान खतरेमे पड जायेगा। जैसा कि मौलाना शौकत अली अक्सर कहते रहे है, मुसलमान इतने बेवकूफ नही है कि अहिंसाकी आडमे हिंसा करने लगे। पाल महाशयने यह कहकर कि "हिन्दुओकी काफी बडी सख्या मुसलमानोसे अपना हिसाब चुकता कर लेना चाहती है" हिन्दुओके साथ घोर अन्याय किया है। मै दावेके साथ कह सकता हूँ कि उन्होने हिन्दुओके विचारोको समझनेमे सरासर गलती की है। हिन्दुओको गायकी रक्षाकी उतनी ही फिक्र है जितनी कि मुसलमानोको खिला-फतकी। और हिन्दू इस बातको भी बहुत अच्छी तरह जानते है कि गोरक्षाकी उनकी चिर अभीप्सित आकाक्षा मुसलमानोकी सहायताके बिना कभी पूरी नही हो सकती। मै दावेके साथ कह सकता हूँ कि जिस प्रकार मुसलमानोको गोरक्षाके मामले-मे मदद करते देख हिन्दू उनकी सभी पुरानी गलतियो और गुनाहोको भूल जायेगे ठीक उसी तरह हिन्दुओको इस्लामकी सम्मान-रक्षामे खुशी-खुशी हाथ बँटाते देखकर मुसलमान भी उनके हमेशाके लिए शुक्रगुजार हो जायेगे।

श्री विपिनचन्द्र पालकी इस धारणाको माननेके लिए मै कदापि तैयार नही हूँ कि मुसलमान और हिन्दू अफगानोके हमलेका स्वागत करेगे। मौलाना मुहम्मद अलीके कल्पित इरादोका जैसा विरोध हुआ है उससे तो हर किसीको यह विश्वास हो जाना चाहिए कि भारत कभी अफगानी हमलेको बरदाश्त नही करेगा।

पाल महाशयका ऐसा विचार है कि अगर अमीरने हमला किया और हमने सरकारकी मदद नही की तो यहाँ क्राति हो जायेगी। मेरा खयाल कुछ दूसरा है। अगर असहयोग-रत भारतने मदद नही की तो सरकार यहाँ की जनतासे समझौता कर लेगी। मै अग्रेजोको इतना नासमझ और बिना सूझबूझवाला नही मानता कि वे खिलाफत और पजाबके घाव भरकर भारतसे समझौता करनेके बदले इसे छोडकर चले जायेगे। मगर मै इस बातको भी बहुत अच्छी तरह जानता हूँ कि अभी भारत उतनी ताकत अपनेमे पैदा नही कर पाया है कि दूसरोको उसकी बातपर ध्यान देना ही पड़े। मैने तो सिर्फ एक सम्भावनाकी ओर इशारा किया है।

पाल महाशयको लालाजीकी[1] और मेरी शिमलावाली घोषणा और उससे पहले-वाली घोषणाओमे फर्क दिखाई देता है। लेकिन मुझे तो दोनोमे कोई फर्क नजर नही आता; मैने अथवा लालाजीने कभी यह नही कहा कि हम अफगानी हमलेका स्वागत

१. लाला लाजपतराय।

करते है। तो मैं एक बार फिर अपने दृष्टिकोणको बहुत स्पष्ट शब्दोमें रख देना उचित समझता हूँ :

(१) मै नही मानता कि अफगान भारतपर हमला करना चाहते है।

(२) मै मानता हूँ कि सरकार अफगानी हमलेका मुकाबला करनेके लिए पूरी तरह तैयार है।

(३) मै दुःखके साथ मजूर करता हूँ कि अगर भारतपर अफगानोने हमला किया तो सभी राजा-महाराजा सरकारकी बिना शर्त मदद करेगे।

(४) मै यह भी मानता हूँ कि हम लोगोमे अभीतक इतनी पस्ती, आत्मविश्वासकी इतनी कमी, अफगानोके इरादोके बारेमें इतने सन्देह और हिन्दू-मुसलमानोमे पारस्परिक अविश्वास इतना अधिक है कि बहुत-से लोग तो मारे डर और घबराहटके ही सरकारकी मदद करनेको दौड पडेगे और इस तरह देशकी गुलामीकी जजीरोको और भी कस देंगे।

(५) सैद्धान्तिक रूपसे तो भारतपर होनेवाले हमले और खिलाफतकी खातिर ब्रिटिश सरकारपर किये जानेवाले हमलेमे भेद किया जा सकता है, पर व्यावहारिक रूपसें मै इस बातको नही मानता कि अफगान लोग सरकारको तग करनेके इरादेसे भारतपर हमला करेगे और फतह मिल जानेपर यहाँ अपनी हुकूमत कायम करनेका लोभ नही करेगे।

(६) अपनी इस मान्यताके बावजूद मैं मानता हूँ कि असहयोगी जिस सरकारको मिटाना या सुधारना चाहता है उसकी बिना शर्त सहायता उसके धर्मके विपरीत है।

(७) निष्ठापूर्वक युद्धका विरोध करनेवाले गिने-चुने लोग चाहे तत्कालीन घटनाक्रमको प्रभावित न कर सके, परन्तु वे बहादुर भारतके फलने-फूलनेका बीज तो बो ही देंगे।

(८) अफगान लोगोंके हाथो भारत तबाह हो जाये, यह मुझे मजूर है, लेकिन अफगानी हमलावरोसे इज्जत देकर आजादीका सौदा किया जाये, यह मुझे कभी बरदाश्त न होगा। जिस सरकारको खिलाफत और पजाबके रिसते घाव कुरेदते रहनेका जरा भी पछतावा नही है उससे भारतकी रक्षा करवाना, भारतकी इज्जत बेचना है।

(९) फिर भी अग्रेज जातिमे मेरी इतनी आस्था जरूर है कि हमारे द्वारा आवश्यक मात्रामे सकल्प-बलका प्रदर्शन और प्रचुर परिमाणमे आत्म-बलिदान किये जानेका उनपर ठीक प्रभाव होगा, उनकी प्रतिक्रिया अनुकूल होगी। इतिहासके अपने ज्ञानके आधारपर मैं जानता हूँ कि शुद्ध न्यायकी बिलकुल सीधी-सादी बातका उनपर कोई असर नही होता। उनको वह कोई हवाई-खयाल सा लगता है। लेकिन जब उसी न्यायकी बातके पीछे शक्ति भी होती है तब उनकी दूरदर्शिता काम करने लगती है। शक्ति होनी चाहिए; फिर वह निरी भौतिक शक्ति है या आत्मिक शक्ति, इसमें वे कोई अन्तर नही करते।

(१०) अफगानोको यह जतला देना हर असहयोगीका कर्त्तव्य है कि उसका पक्का विश्वास है कि असहयोग खिलाफतको युद्धके पहलेका उसका दर्जा दिलानेमे सर्वथा समर्थ है और यह भी कि भारत उनका सशस्त्र हस्तक्षेप नही चाहता। अफगानोको यह भी जतला दिया जाना चाहिए कि ब्रिटिश सरकारके साथ भारतको गुलामीमे रखनेवाले करारसे इनकार करनेपर असहयोगी उनकी सराहना करेगे और यह भी कि अपने पड़ोसियोके प्रति भारतका मैत्रीको छोड़ और कोई भाव नही है।

अंग्रेजीकी पढ़ाई

पाठक अन्यत्र देखेगे मैने डा० ठाकुर[1] द्वारा की गई असहयोगकी टीकाका जवाब[2] देनेकी विनम्र कोशिश की है। उसके बाद शान्तिनिकेतनके व्यवस्थापकके नाम लिखा उनका पत्र मुझे पढनेको मिला। मुझे यह देखकर दुख हुआ कि वह पत्र तथ्योको जाने विना गुस्सेमे लिखा गया है। लन्दनमें कुछ विद्यार्थियोने श्री पियर्सन[3], जो बहुत अच्छे और सच्चे अग्रेज है, की बात सुननेसे इनकार कर दिया, यह जानकर कवि रोपमे आ गये। और उसी प्रकार इस वातपर भी वे रुष्ट हुए है कि मैने महिलाओ को अग्रेजीकी पढाई वन्द करनेकी सलाह दी है। अग्रेजीकी पढ़ाई वन्द करनेके मैने जो कारण दिये है कविने उन्हे अपने लिए मान लिया।

क्या ही अच्छा होता कि वे विद्यार्थियोकी अभद्रताको असहयोगके मत्थे न मढते। कविको भूलना नही चाहिए था कि असहयोगी एन्ड्रयूज साहबको श्रद्धेय मानते है, स्टोक्सकी इज्जत करते है और उन्होने नागपुरमे वैजवुड, वैन स्पूर और हॉल्फोर्ड नाइट आदिके भाषण पूरे आदर-मानके साथ सुने थे, जब एक अग्रेज हाकिमने मौलाना मुहम्मद अलीको दोस्ताना तौरपर चायकी दावत दी तो उन्होने उसे मजूर किया और हकीम अजमलखाँ[4]-जैसे कट्टर असहयोगीने अपने तिव्विया कालेजमे लॉर्ड और लेडी हार्डिगके चित्रोका अनावरण-समारोह किया तथा उसमे कई अग्रेज दोस्तोको वुलाया। कितना अच्छा होता अगर कविने अपने मनमे वर्तमान आन्दोलनके सही और धार्मिक स्वरूपके वारेमे सन्देहके दैत्यको एक क्षणके भी लिए न उभरने दिया होता, और काश उन्होने विश्वास किया होता कि यह आन्दोलन राष्ट्रीयता और देशभक्ति-जैसे पुराने शव्दोको नई अर्थ-गरिमासे मडित कर उनके भाव-क्षेत्रको कितना विस्तृत कर रहा है।

अगर वे कवि-कल्पनासे काम लेते तो स्वय देख लेते कि भारतीय नारियोके मनको कुठित करनेकी वात तो मै कभी सोच ही नही सकता और न मै अपने-आपमे अग्रेजी पढने-लिखनेका ही विरोधी हूँ; और उन्हे यह बात भी अवश्य याद आ जाती

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुर (१८६१–१९४१)।

२. देखिए अगला शीर्षक।

३. विलियम विंस्टेनली पियर्सन; सी० एफ० एन्ड्रयूजके सहयोगी, जिन्होंने बंगाऊमें मिशनरीके रूपमें काम किया था; वे कुछ समयतक शान्तिनिकेतनमें अध्यापक भी रहे थे।

४. १८६५–१९२७; प्रसिद्ध हकीम और राजनीतिज्ञ जिन्होने खिलाफत आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया; १९२१–२२ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष।

कि मैं तो जीवन-भर नारियोकी पूर्ण मुक्तिके लिए लड़ता रहा हूँ; और तब वे मेरे साथ ऐसा अन्याय न करते जैसा कि, मै जानता हूँ, वे जान-बूझकर तो अपने बड़ेसे-बड़े शत्रुके साथ भी नही करेंगे। कविको शायद यह मालूम नही है कि आज अंग्रेजी सिर्फ अपने व्यापारिक और तथाकथित राजनैतिक महत्त्वके कारण ही पढी जाती है। हमारे लडके-बच्चे बिलकुल ठीक ही सोचते है कि आजकी परिस्थितियोमे अंग्रेजी पढे बिना उन्हे सरकारी नौकरियाँ नही मिल सकती। लड़कियोको शादीके परवानेके तौरपर अंग्रेजी पढाई जाती है। मै ऐसी बहुत-सी औरतोको जानता हूँ जो सिर्फ अंग्रेजोसे बात करनेके ही लिए उसे सीखना चाहती है। मै ऐसे पतियोको भी जानता हूँ जिन्हे इस बातका मलाल है कि उनकी बीवियाँ उनसे और उनके दोस्तोसे अंग्रेजीमे बात नही कर पाती। मै ऐसे परिवारोको भी जानता हूँ जहाँ अंग्रेजीको मातृभाषा बनाया जा रहा है। सैकडो नौजवानोका ऐसा विश्वास है कि अंग्रेजीके ज्ञानके बिना भारत स्वतन्त्र हो ही नही सकता। यह बीमारी समाजमे इतनी गहरी पैठ चुकी है कि आम तौरपर शिक्षाका मतलब अंग्रेजीके ज्ञानसे ही लगाया जाता है। मै इन सब बातोको हमारी गुलामी और अध.पतनका लक्षण मानता हूँ। देशी भाषाओका इस तरह कुचला, दबाया और वंचित रखा जाना मै बरदाश्त नही कर सकता। न मै यही बरदाश्त कर सकता हूँ कि माता-पिता अपने बच्चोको या पति अपनी पत्नियोको अपनी भाषाको छोड़कर अंग्रेजीमे पत्र लिखे। मै अपने-आपको खुली हवाका उतना ही बडा उपासक मानता हूँ जितना कि कवि स्वयंको समझते है। मै अपने घरको चारो ओरसे दीवारोसे घेर नही लेना चाहता और न खिडकियोको बन्द कर रखना चाहता हूँ। मै तो चाहता हूँ कि सब देशोकी संस्कृतियाँ मेरे घरके चारो ओर अधिकसे-अधिक निर्बाध रूपसे प्रवाहित हो सके। अलबत्ता मै यह कभी नही चाहूँगा कि उनके तेज झोके मेरे पाँव ही उखाड दे। मै किसी दूसरेके घरमे एक अवाछनीय मेहमान, भिखारी या गुलामके रूपमे रहना भी बरदाश्त नही करूँगा। मै अपनी बहनोपर झूठी शान और सन्दिग्ध सामाजिक लाभके लिए अंग्रेजीकी पढाईका बोझा लादनेको बिलकुल तैयार नही हूँ। साहित्यमे रुचि रखनेवाले हमारे युवक और युवतियाँ खुशीसे अंग्रेजी और विश्वकी अन्य भाषाएँ सीखे और बसु, राय अथवा स्वयं कविकी भाँति अपने ज्ञानसे भारत और विश्वको लाभान्वित करे। मुझे इससे अपार प्रसन्नता ही होगी। लेकिन मै इसे कभी ठीक नही मान सकता कि हिन्दुस्तानी अपनी मातृभाषाको भुला दे, उसकी उपेक्षा करे, उसके लिए लज्जित हो या यह महसूस करे कि वह अपने उत्कृष्ट विचारोको अपनी भाषामे व्यक्त नही कर सकता। मेरा धर्म जेलकी तंग कोठरी-जैसा संकुचित और अनुदार नही है। इसमे तो भगवान्‌की सारी सृष्टिके लिए स्थान है। लेकिन अविनय, जाति, धर्म अथवा वर्ण-गत अहंकारके लिए यहाँ कोई स्थान नही है। मुझे इस बातका हार्दिक दु.ख है कि कविने सुधार, शुद्धीकरण और मानवतामे प्रतिफलित होनेवाली देशभक्तिके इस महान् आन्दोलनके अभिप्रायको गलत समझ लिया। अगर वे धीरज रखे तो वे देखेंगे कि उन्हे अपने देशवासियोके कारण लज्जित या दु.खित नही होना पडा है। मै विनयपूर्वक कविको सचेत किया चाहता हूँ कि वे आन्दोलनकी विकृतियोको ही आन्दोलन समझनेकी भूल न करे। लन्दनमे विद्यार्थियोके

अशोभन आचरण और भारतमे मालेगाँवकी अशुभ घटनासे असहयोगकी नाप-जोख करना उतना ही गलत है जितना कि डायरो या ओ'डायरोके पैमानेसे समूची अंग्रेज जातिकी।

अली बन्धुओंकी सफाई

अपने कुछ भाषणोके बारेमें अली बन्धुओने जो छोटा-सा बयान दिया है, मै जानता हूँ कि उसकी सार्वजनिक रूपसे चाहे प्रतिकूल आलोचना न हो पर आपसी चर्चाओमे तो जरूर ही होगी। इसलिए उनकी सफाईको अच्छी तरह समझ लेना जरूरी है। शुरूसे सारी बातको तो मै अभी नही उठा सकता, सिर्फ इतना कह सकता हूँ कि जब दो-चार दोस्तोने उनके भाषणोके कुछ हिस्सोकी ओर मेरा ध्यान खीचा तो मैंने महसूस किया कि उनमे उग्रता है और उससे हिंसाको भडकानेवाला मतलब भी निकाला जा सकता है। उनके गिरफ्तार किये जानेकी अफवाह भी काफी गरम थी। गलत समस्याको उठाकर और खास तौरपर अपने मत यानी अहिंसाका खण्डन करके किसी भी असहयोगीका जेल जाना अनुचित है। मैंने तुरन्त ही उनका ध्यान भाषणोके आपत्तिजनक माने जानेवाले उन हिस्सोकी ओर खीचा और यह सलाह दी कि अपने दृष्टिकोणका स्पष्टीकरण करते हुए उन्हे फौरन बयान देना चाहिए। क्षणिक जोशमे आकर आदमी जिस भाषाका इस्तेमाल कर बैठता है उससे ऐसा मतलब भी निकल सकता है, जो कभी उसका मशा न रहा हो। जब आदमी कानूनके डरकी परवाह नही करता और सिर्फ अपनी अन्तरात्मासे डरता है, तब तो उसे दुहरी सावधानी बरतनी चाहिए। लेकिन पूरी तरह सावधान रहनेके बावजूद कई बार आदमी चूक जाता है। अली बन्धुओके कन्धोपर कम बोझा नही है। इस्लामकी प्रतिष्ठाका सवाल उनकी सबसे बडी जिम्मेवारी है। व्यवहारमे सचाई और ईमानदारी तथा आचरणमे अत्यधिक विनम्रता और उच्च कोटिके साहसको पूरी तरह अपना कर ही वे अपनी इस जिम्मेदारीको ठीक-ठीक निभा सकते हैं। मुझे उनकी ईमानदारी, सचाई, निडरता, साहस और विनम्रतापर पूरा भरोसा है और हमारी दोस्तीका, जिसे कि गठबन्धनके नामसे पुकारा जाता है, आधार भी उनके ये गुण ही हैं। आज देशमे सबसे अधिक निन्दा भी इन्ही कारणोसे की जाती है। उनकी नीयतपर हर तरहके सन्देह किये जाते है, उनके इरादोको दुर्भावनापूर्ण बताया जाता है। यहाँतक कहा जाता है कि उन्होने मुझे अपनी कठपुतली बना रखा है। मुझे विश्वास है कि ऐसे मिथ्या आरोप देर तक टिके नही रह सकते; आगे-पीछे झूठ क्या है और सच क्या, यह साबित हो ही जायेगा। लेकिन जरूरी था कि जल्दबाजीमें बगैर सोचे-समझे वे जो-कुछ कह गये हैं उसका उपयोग उनकी प्रतिष्ठा और सदाशयताको क्षति पहुँचानेके लिए न करने दिया जाये। आत्मसम्मानी व्यक्तिके लिए उसकी नीयतपर सन्देह करनेसे अधिक चोट पहुँचानेवाली बात और कोई नही हो सकती। अपनेको लाछित होनेसे बचाना खुद उनके अपने हाथमे है, इसलिए मैंने उन्हे वह बयान देनेकी सलाह दी जो अभी-अभी छपा है। मेरी रायमे उनके इस बयानसे खिलाफतकी जिस लड़ाईकी वे रहनुमाई कर रहे हैं उसका दर्जा और रुतबा ऊँचा ही हुआ है। दूसरे कार्यकर्त्ताओके लिए उन्होने एक मिसाल

पेश की है। महज वाहवाही लूटनेके लिए हमें जेल नही जाना है। यदि कोई ऋजुता-को सीखचोमें बन्द करे तो जेल मुक्ति और प्रतिष्ठाका सिंहद्वार बन जाता है। अली बन्धुओका बयान हम सब लोगोके लिए, जो सत्य और स्वतन्त्रताकी लडाई लड रहे है, इस बातकी चेतावनी है कि हमारी भाषा बिलकुल नपी-तुली और दुरुस्त होनी चाहिए। अच्छा तो यही होगा कि हम लिखित भाषण पढे अथवा भाषण ही न दे। बहुत ही ऊँचे विचारोके एक मुसलमान सज्जन है, जिन्होने अपने-आपपर इस तरहकी बन्दिश लगा ली है। वे है मौलाना अब्दुल बारी साहब।[1] वे बडे भावुक हैं और भाषण करते समय जोशमे आकर ऐसी भाषाका इस्तेमाल कर जाते है, अन्यथा जिसके उपयोग करनेकी बात वे कभी सोच भी नही सकते। इसलिए दोस्तोके कहनेपर उन्होने अपने लिए नियम बना लिया है कि किसी सार्वजनिक सभामे भाषण नही देंगे। इस शानदार मिसालका जिक्र मै इसलिए कर रहा हूँ कि हम सब भी वैसा ही करे। अली बन्धुओने अपने स्पष्टवादी, सीधे-सच्चे बयानसे हमे रास्ता दिखा दिया है। अच्छा तो यही होगा कि हम भाषण न दे, और देना ही पड़े तो हर शब्द तोल-तोलकर मुँहसे निकाले, ताकि कही कोई ऐसी बात न कह जाये जो हम कहना न चाहते हो और जिससे हमारे काम और हमारे आन्दोलनको नुकसान पहुँचे।

पारसियोंकी दानशीलताकी एक और मिसाल

दक्षिण आफ्रिकाके श्री रुस्तमजी जीवनजी घोरखोदूने गुजरातके अकाल-ग्रस्त लोगोमे चरखे बाँटनेके लिए तारसे बारह हजार रुपये मेरे पास भेजे है। पाठकोको याद होगा कि इससे पहले मदरसोके लिए वे चालीस हजार रुपयेका शानदार दान दे चुके है। यह बारह हजार रुपया ठीक मौकेपर आया है, क्योकि अकाल-समितिको पैसोकी बडी जरूरत थी। जो लोग तिलक स्वराज्य-कोषमे राजनीतिक कारणोसे चन्दा नही दे सकते, मै उम्मीद करता हूँ कि वे श्री रुस्तमजीकी शानदार मिसालसे प्रेरणा लेगे और बिना हिचकिचाहटके अकाल सुरक्षा-कोषमे मदद करेगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १–६–१९२१

१. १८३८–१९२६; लखनऊके एक राष्ट्रवादी मुसलमान; जिन्होंने खिलाफत आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया और अपने अनुयायियोंसे गो-हत्या न करनेका अनुरोध किया। १९२१ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष।

८०. कविवरकी चिन्ता

लॉर्ड हार्डिंगने डाक्टर रवीन्द्रनाथ ठाकुरको एशियाका महाकवि कहा था। पर अब श्री रवीन्द्रबाबू न सिर्फ एशियाके बल्कि ससार-भरके महाकवियोमे गिने जा रहे है। यदि अभी नही तो बहुत जल्द उनका नाम ससार-भरके महाकवियोमें गिना जाने लगेगा। दिनपर-दिन उनकी प्रतिष्ठा बढ़नेसे उनकी जिम्मेदारी भी बढ़ती जा रही है। समूचे संसारके लिए भारतके पास जो सन्देश है उसकी कवित्वपूर्ण व्याख्या करके भारतकी उन्होने सबसे बड़ी सेवा की है। इसीलिए रवीन्द्रबाबूको सच्चे हृदयसे इस बातकी चिन्ता है कि भारतवासी भारतमाताके नामसे कोई झूठा या सारहीन सन्देश ससारको न सुनायें। हमारे देशका नाम न डूबने पाये, इस बातकी चिन्ता करना रवीन्द्रबाबूके लिए स्वाभाविक ही है। उन्होने लिखा है, "मैंने इस आन्दोलनके स्वरके साथ अपना स्वर मिलानेकी भरसक कोशिश की पर खेदके साथ स्वीकार करना पड़ता है कि इसमे मुझे निराश होना पड़ा।" उन्होने स्वीकार किया है कि वे इस गुत्थीमे उलझकर रह गये है। उन्होने यह भी लिखा है कि असहयोग आन्दोलनके शोरगुल में उनको अपनी हृदय-वीणाके योग्य कोई स्वर नही मिल सका। तीन जोरदार पत्रोमें[1] उन्होने इस आन्दोलनके सम्बन्धमे अपने सन्देह प्रकट किये है। अन्तमे वे इस नतीजेपर पहुँचे है कि असहयोगका आन्दोलन इतना गम्भीर और गौरवपूर्ण नही है कि वह उस भारतवर्षके योग्य हो सके जिसे वे अपनी कल्पनाका आदर्श समझे हुए हैं। उनका मत है कि असहयोगका सिद्धान्त मात्र नकारात्मकता और नैराश्यका सिद्धान्त है। रवीन्द्रबाबूकी समझमे यह सिद्धान्त अलगाव, भेदभाव और अनुदारतासे भरा हुआ हैं।

रवीन्द्रबाबूके हृदयमें भारतवर्षकी प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिए जो चिन्ता है उसपर हर हिन्दुस्तानीको गर्व होना चाहिए। यह बहुत अच्छा हुआ कि उन्होने अपना सन्देश ऐसी सुन्दर और सरल भाषामें प्रकट करके हमारे पास भेजा है।

मै रवीन्द्रबाबूके सन्देहोका उत्तर बड़ी नम्रताके साथ देनेका प्रयत्न करूँगा। मै रवीन्द्रबाबू या उन लोगोको जिनके हृदयपर रवीन्द्रबाबूकी कवित्वपूर्ण भाषाका प्रभाव पड़ा है शायद विश्वास न दिला सकूँ पर मैं उनको और कुल भारतवर्षको यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि असहयोगकी संकल्पनामे वैसा कुछ भी नही जिसकी उनको आशंका है। मै उन्हे यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि यदि उनके देशने असहयोगके सिद्धान्तको स्वीकार किया है तो इसमें उनके लिए लज्जाकी कोई बात नही है। अगर अमल करनेपर अन्तत. यह सिद्धान्त असफल सिद्ध हो जाये तो यह सिद्धान्तका दोष नही कहा जायेगा, क्योकि अगर सचाईको अमली रूप देनेवाले सफल न हो तो इसमें सचाईका कोई दोष नही। यह अवश्य हो सकता है कि असहयोग आन्दोलन अपने उचित समयके पहले ही शुरू हो गया हो। तब हिन्दुस्तान और संसार दोनोंको उस

१. देखिए परिशिष्ट ४।

उचित समयकी प्रतीक्षा करनी चाहिए। पर हिन्दुस्तानके सामने हिंसा और असहयोग इन दोमे से किसी एकको चुननेके अलावा कोई मार्ग नही रह गया था।

रवीन्द्रबाबूको इस बातकी भी शंका नहीं करनी चाहिए कि असहयोग आन्दोलन भारतवर्ष तथा यूरोपके बीच एक बड़ी दीवार खड़ी करना चाहता है। इसके विरुद्ध असहयोग आन्दोलनका मन्शा यह है कि पारस्परिक सम्मान और विश्वासकी बुनियाद-पर बिना किसी दबावके सच्चे, स्वैच्छिक तथा सम्मानपूर्ण सहयोगके लिए जमीन तैयार की जाये। वर्तमान सघर्ष विवशतापूर्ण सहयोग, एकतरफा गठजोड़ और सभ्यताके नामपर किये जा रहे शोषणके आधुनिक तरीकोको सशस्त्र ढंगसे थोपनेके विरुद्ध चलाया जा रहा है।

असहयोग आन्दोलन इस बातके विरोधमे किया गया है कि बिना हमारी इच्छा और जानकारीके हमसे बुराईमे सहयोग कराया जा रहा है।

रवीन्द्रबाबूको अधिकतर चिन्ता विद्यार्थियोंके बारेमे है। उनका मत है कि जबतक दूसरे स्कूल न खुल जायें तबतक उनसे सरकारी स्कूल छोड़नेको न कहा जाये। इस बातपर मेरा उनसे मतभेद है। मैंने कोरी साहित्यकी शिक्षाको कभी परम आवश्यक नही समझा है। अनुभवसे मुझे यह मालूम हो गया है कि अकेली साहित्य-शिक्षासे मनुष्यके चरित्रकी रत्ती-भर भी उन्नति नही होती और चरित्र-निर्माणसे साहित्यकी शिक्षाका कोई सम्बन्ध नही है। मेरा पक्का विश्वास है कि सरकारी स्कूलोंने हमें बुजदिल, लाचार और अविश्वासी बना दिया है। जिसके सबबसे हमारे हृदयमें असन्तोष तो उत्पन्न हो गया है पर उस असन्तोषको दूर करनेके लिए कोई दवा हमे नहीं बत-लाई गई। इससे हमारे हृदयोंमे निराशाने घर कर लिया है। सरकारी स्कूलोंका उद्देश्य हमें क्लर्क और दुभाषिया बनाना था और वह उद्देश्य पूरा हुआ है। किसी सरकारकी प्रतिष्ठा तभी कायम रहती है जब प्रजा स्वय अपनी इच्छासे उस सरकारसे सहयोग करती है। अगर सरकार हमे गुलाम बनाये हुए है और ऐसी सरकारके साथ सहयोग करना और उसे सहायता देना अनुचित है तो हमारे लिए यह जरूरी है कि हम उन सस्थाओसे अपना नाता तोड़ लें जिनमे हम स्वयं अपनी इच्छासे अबतक सहयोग देते रहे है। राष्ट्रकी आशाका आधार उसके नौजवान ही होते है। मेरा मत है, अगर हमे इस बातका पता लग गया है कि यह सरकार पूरी तरहसे या मुख्यत बुराईसे भरी हुई है तो अपने लड़कोको उसके स्कूलो और कालेजोमे भेजना हमारे लिए पाप होगा।

मैंने जो प्रस्ताव रखा है उसका खण्डन इस बातसे नहीं होता कि अधिकतर विद्यार्थी प्रारम्भिक जोश ठण्डा होते ही अपने स्कूलोंमें फिर वापस चले गये। उनका अपनी बातसे टल जाना इस बातका सबूत नही है कि हमारा यह प्रस्ताव गलत है बल्कि वह इस बातका सबूत है कि हम किस कदर गिर गये हैं। अनुभव यह बताता है कि राष्ट्रीय स्कूलोंके खुलनेपर बहुत ज्यादा विद्यार्थी उनमे भरती नहीं हुए। जो विद्यार्थी सच्चे और अपने विश्वासके पक्के थे वे बिना कोई राष्ट्रीय स्कूल खुले सरकारी स्कूलोसे बाहर निकल आये। मेरा पक्का विश्वास है कि जिन विद्यार्थियोंने पहले-पहल स्कूल-कालेज छोड़े है उन्होंने देशकी बहुत बड़ी सेवा की है।

वास्तवमे रवीन्द्रवाबू मूलत. असहयोग-सिद्धान्तके विरुद्ध है। ऐसी हालतमें अगर उन्होने स्कूल और कालेजोसे विद्यार्थियोके निकलनेका विरोध किया तो कोई बड़ी बात नही है। उनका ऐसा करना स्वाभाविक ही है। रवीन्द्रवाबूके हृदयको ऐसी हरएक वस्तुसे धक्का पहुँचता है जिसका उद्देश्य खण्डन करना हो। उनकी आत्मा धर्मकी उन आज्ञाओके विरोधमे उठ खड़ी होती है जो हमे किसी वस्तुका खण्डन करनेके लिए कहती है। मै उनका मत उन्हीके अनूठे शब्दोमे आपके सामने रखता हूँ: "एक महाशयने वर्तमान आन्दोलनके पक्षमे मुझसे कई वार यह कहा है कि प्रारम्भमे किसी उद्देश्यको स्वीकार करनेकी अपेक्षा उसे अस्वीकार करनेका भाव ही व्यक्तिमे अधिक प्रवल रहता है। यद्यपि मै यह मानता हूँ कि वास्तवमे वात ऐसी ही है, पर मैं इसे सचाई नही मान सकता भारतवर्षमे ब्रह्मविद्याका उद्देश्य मुक्ति या मोक्ष है पर बौद्ध-धर्मका उद्देश्य निर्वाण प्राप्त करना है। मुक्ति हमारा ध्यान सत्यके मण्डनात्मक पक्षकी ओर और निर्वाण उसके खण्डनात्मक पक्षकी ओर खीचता है। इसीलिए बुद्धने इस वातपर जोर दिया कि ससार दु खमय है तथा उससे छुटकारा पाना हमारा धर्म है, और ब्रह्मविद्याने इस वातपर जोर दिया कि ससार आनन्दमय है और उस आनन्दको प्राप्त करना हमारा परम कर्त्तव्य है।" इन वाक्यो और इसी तरहके दूसरे वाक्योसे पाठकगण रवीन्द्रवाबूकी मानसिक वृत्तिका पता लगा सकते है। मेरी विनम्र रायमे किसी वातको अस्वीकार करना उतना ही वडा आदर्श हो सकता है जितना किसी बातको स्वीकार करना। असत्यको अस्वीकार करना भी उतना ही जरूरी है जितना कि सत्यको स्वीकार करना। सभी धर्म हमे यही शिक्षा देते है कि दो विरोधी शक्तियाँ हमपर अपना प्रभाव डालती रहती है, और मनुष्य जीवनके प्रयत्नोकी सार्थकता इसी वातमे है कि वह जो वस्तुएँ स्वीकार करने योग्य है उन्हे स्वीकार करता रहे और जो अस्वीकार करने योग्य है उन्हे अस्वीकार करता रहे। बुराईके प्रति असहयोग करना हमारा उतना ही वडा कर्त्तव्य है जितना कि भलाईके साथ सहयोग करना। मै साहसपूर्वक कह सकता हूँ कि रवीन्द्रवावूने निर्वाणको केवल एक खण्डनात्मक या अभावसूचक दशा वतलाकर वौद्धधर्मके साथ अनजाने ही वडा अन्याय किया है। मै साहसके साथ यह भी कह सकता हूँ कि जिस हदतक निर्वाण एक अभावात्मक दशा है उसी हदतक मुक्ति भी अभावकी सूचक अवस्था है। शरीरके वन्धनसे छुटकारा पाना या उस वन्धनका विलकुल नाश कर देना आनन्द प्राप्त करना है। मै अपनी दलीलके इस हिस्सेको खत्म करते हुए इस वातकी ओर ध्यान खीचना चाहता हूँ कि उपनिषदोके रचयिताओने ब्रह्मका सवसे अच्छा वर्णन 'नेति-नेति' कहकर ही किया है।

इसलिए मेरी समझमे रवीन्द्रवावूको असहयोग आन्दोलनके अभावात्मक या खण्डनात्मक पक्षसे चौकनेकी कोई जरूरत न थी। हम लोगोने 'नही' कहनेकी शक्ति विलकुल गँवा दी है। सरकारके किसी काममे 'नही' कहना पाप और अभक्ति गिना जाने लगा था। वोनेके पहले निराई करना वहुत जरूरी होता है, जान-वूझकर पक्के इरादेके साथ असहयोग करना वैसा ही है। खेतीके लिए वुआई जितनी जरूरी है उतनी ही निराई भी। हर एक किसान जानता है कि फसलके वढते रहनेकी अवधिमे भी खुरपीका उपयोग करते रहना जरूरी है। इस असहयोग आन्दोलनके रूपमे राष्ट्रकी ओरसे सरकार-

को इस बातका निमन्त्रण दिया गया है कि वह राष्ट्रके साथ राष्ट्रकी अपनी शर्तोंपर सहयोग करे, जो कि हर राष्ट्रका अधिकार और हर सरकारका कर्तव्य है। असहयोग आन्दोलन राष्ट्रकी ओरसे इस बातकी पूर्व-सूचना है कि वह अब और ज्यादा दिनोंतक दूसरोंके संरक्षणमे रहकर सन्तोष नही करेगा। हिन्दुस्तानने तलवार या मारकाटके अस्वाभाविक और अधार्मिक सिद्धान्तके स्थानपर असहयोगके निर्दोष, स्वाभाविक और धार्मिक सिद्धान्तको ग्रहण किया है। अगर हिन्दुस्तान कभी उस स्वराज्यको प्राप्त करेगा, जिसका स्वप्न रवीन्द्रबाबू देख रहे है, तो वह सिर्फ अहिंसापूर्ण असहयोग आन्दोलनके द्वारा ही प्राप्त करेगा। वे संसारको अपना शान्तिका सन्देश सुनाये और इस बातका भरोसा रखे कि हिन्दुस्तान अगर अपनी बातका धनी बना रहा तो अपने असहयोग द्वारा उनके सन्देशको अवश्य सच्चा साबित करेगा। रवीन्द्रबाबू जिस देशभक्तिके लिए उत्सुक हैं उसे अमली रूप देनेके लिए ही यह आन्दोलन खड़ा किया गया है। यूरोपके पैरोंके नीचे पड़ा हुआ भारत ससारको कोई आशा नही बँधा सकता। स्वतन्त्र और जाग्रत भारत ही दुःखी संसारको शान्ति और सुखका सन्देशा सुना सकता है। असहयोग आन्दोलन एक ऐसा मंच तैयार करनेके लिए ही चलाया गया है जिसपर खड़े होकर भारत अपना सन्देश सारे ससारको सुना सके।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १-६-१९२१

८१. खिलाफत और अहिंसा

'सर्वेंट ऑफ इंडिया' के श्री वाजने अपने साप्ताहिक पत्रके पिछली ५ मईके अंकमें प्रकाशित श्री जकरियाके एक लेखकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित करते हुए मुझसे कहा है कि मैं उस लेखकके दृष्टिकोणसे खिलाफतके सवालपर विचार करूँ। श्री जकरियाने अपने उस विस्तृत लेखमें प्रश्नको इस तरह पेश किया है:

> अहिंसाके सिद्धान्तका कोई भी प्रचारक अहिंसाके सर्वथा विरोधी खिलाफतके सिद्धान्तका समर्थन कैसे कर सकता है? मुझे इस बातसे कतई मतलब नहीं कि खिलाफतके या अहिंसाके सिद्धान्तमें कितनी सच्चाई है। पर मैं तो यह कहता हूँ कि ये दोनो एक-दूसरेका खण्डन करते हैं; और मैं अगर पूरी ईमानदारीसे कुछ चाहता हूँ तो सिर्फ यही कि सभी पक्ष इस समस्याके बारेमें अपने विचार स्पष्ट रखें। मानवताको हालमें जिस विपत्तिका सामना करना पड़ा है उसका सबसे बड़ा कारण यही अस्पष्ट और उलझी हुई विचार-पद्धति और उसके फलस्वरूप सिद्धान्तोंके साथ समझौते करनेकी प्रवृत्ति ही है।

आगे लेखकने भूतपूर्व प्रेसीडेंट विल्सनके पतनका उदाहरण पेश करते हुए कहा है:

> क्या पूर्वी जगत्का महान् सत्याग्रही इस चेतावनीपर कान देगा? क्या वह अपने समूचे जीवनके सिद्धान्तके प्रति सच्चा रहेगा? . . . क्या वह अपने

सिद्धान्तके प्रति सच्चा रहनेके बजाये दूसरे सिद्धान्तोंके साथ समझौता कर लेगा? निःसन्देह हिन्दू-मुस्लिम मैत्री एक बेशकीमत चीज है लेकिन क्या इसकी खातिर वह अपने सिद्धान्तके एक सर्वथा विरोधी सिद्धान्त — खिलाफतके — सिद्धान्तके साथ समझौता कर लेगा?

लेखककी इस उत्कट अपीलको देखते हुए, मुझे खिलाफतके प्रश्नके सम्बन्धमें अपना दृष्टिकोण फिरसे स्पष्ट कर देना चाहिए। मै अहिंसाके सिद्धान्तकी पैरवी करता हूँ। यही मेरे समूचे जीवनका सिद्धान्त रहा है। और अब यदि मै दूसरे किसी विचारसे, चाहे वह हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित करनेके लिए ही क्यो न हो, अहिंसाके इस सिद्धान्तका आशिक त्याग करके कोई ऐसा समझौता करता हूँ तो मै अपने समूचे जीवनको झुठला दूंगा। मैंने हिन्दू-मुस्लिम एकताका काम अपने हाथमें तभी लिया जब मैंने परख लिया कि मुसलमानोकी मॉंगे हर दृष्टिसे उचित है। मेरे लिए तो वह जीवनका एक महान् क्षण था। मैंने महसूस किया कि अगर मै अपने मुसलमान देश-वासियोकी इस सकटकी घड़ीमे उनके प्रति अपनी वफादारी सिद्ध कर दूँ तो दोनो सम्प्रदायोमे चिरस्थायी मैत्री स्थापित कर सकता हूँ। जो भी हो, मुझे यही लगा कि ऐसा प्रयत्न किया जाना चाहिए। दोनो सम्प्रदायोके बीच सच्ची मित्रताके बिना मै स्वतन्त्र भारतकी स्थापनाकी सम्भावनाकी कल्पनातक नही कर पाता।

पर श्री जकरिया कहते है कि खिलाफतकी बुनियाद जोर-जबरदस्तीपर है। खिलाफत इस ससारमें इस्लामका प्रतिनिधित्व करती है, और वह तलवारके बलपर भी इस्लामकी रक्षा करनेके लिए वचन-बद्ध है। और मैं अहिंसामे विश्वास करते हुए किसी भी ऐसी सस्थाको बनाये रखनेके लिए कैसे सघर्ष कर सकता हूँ जो अपनी रक्षाके लिए भौतिक बलका प्रयोग करनेके लिए स्वतन्त्र है?

श्री जकरियाकी खिलाफतकी परिभाषा बिलकुल सही है। पर अहिंसाको मानने-वालोका क्या कर्त्तव्य है, इस मामलेमें उनका निष्कर्ष गलत है। अहिंसाको माननेवाला किसी भी चीजकी रक्षा करनेके लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपमे हिंसा या भौतिक बलका प्रयोग न करनेके लिए वचन-बद्ध है, लेकिन अहिंसाका समर्थन न करनेवाले व्यक्तियो या संस्थाओकी सहायता करनेकी तो उसे कोई मनाही नही है। यदि बात इसकी उलटी होती तो, उदाहरणके तौरपर, मुझे भारतको स्वराज्य प्राप्त करनेमें सहायता नही देनी चाहिए क्यो कि मै जानता हूँ कि स्वराज्यके बाद बननेवाली भारतीय ससद निश्चय ही कुछ सेना और पुलिसकी शक्ति तो रखेगी ही; या अगर घरेलू किस्मकी मिसाल ली जाये तो अहिंसामे विश्वास न रखनेवाले अपने पुत्रको मुझे न्याय हासिल करनेमे सहायता नही देनी चाहिए।

यदि श्री जकरियाकी बात ठीक मान ली जाये तो अहिंसामे विश्वास करनेवाला व्यक्ति कोई भी व्यापार-धन्धा नही कर सकेगा। और ऐसे आदमियोकी भी कमी नही जो पूर्ण अहिंसाका मतलब सभी काम-धन्धे बिलकुल बन्द कर देना समझते है

पर मेरा अहिंसाका सिद्धान्त ऐसा नही है। अहिंसावादी होनेके नाते मेरा अपना कर्त्तव्य यही है कि मै स्वय हिंसासे बिलकुल दूर रहूँ और भगवान्के बनाये जितने भी

प्राणियोको समझा-बुझाकर तथा सेवाके जरिये अहिंसामे विश्वास और इसपर अमल करनेके लिए प्रेरित कर सकूँ, करूँ। लेकिन यदि मै अहिंसाके सिद्धान्तमें पूर्णत: विश्वास न करनेवाले किसी व्यक्तिको या प्रवृत्तिमे, जहाँतक उसका उद्देश्य न्यायोचित है, यदि सहायता न दूँ तो मै अपनी आस्थाके साथ विश्वासघात करूँगा। यह जानकर भी कि मुसलमानोकी माँग उचित है यदि इस्लामकी इज्जतके खिलाफ साजिश करनेवालोके विरुद्ध लडनेमे मुसलमानोकी सहायता बिलकुल अहिंसक ढगसे न करूँ तो वह मेरे लिए हिंसाको बढावा देना ही होगा। जहाँ दोनो ही पक्ष हिंसामे विश्वास करते है, उन मामलोमे भी न्याय अक्सर किसी एक पक्षकी ओर होता है। डाकेजनी-का शिकार बननेवाले आदमीके पक्षमे न्याय होता है, चाहे वह हिंसाके सहारे ही अपना माल लौटा लेनेकी कोशिश कर रहा हो। हाँ, अगर उस पीडित व्यक्तिको उसका माल लौटा लेनेके लिए खुले लडाई-झगड़ेके बजाय सत्याग्रहके तरीको, अर्थात् प्रेम या आत्मिक बलका सहारा लेनेके लिए तैयार किया जा सके तो वह अहिंसाकी एक बड़ी जीत मानी जायेगी।

मैंने यहाँ जितनी मर्यादाएँ बतलाई है, उनको देखते हुए श्री जकरिया कह सकते है कि मै अहिंसाके सिद्धान्तका पुजारी नही हूँ; मेरा वैसा दावा गलत है। इसपर मै सिर्फ यही कहूँगा कि जीवन एक बडी पेचीदा-सी चीज है और सत्य तथा अहिंसा हमारे सामने ऐसी कई समस्याएँ पेश करते है जिनका बहुधा कोई विश्लेषण नही किया जा सकता और न जिनपर कोई फतवा दिया जा सकता है। सत्य और उसपर आचरण करनेके उचित साधनो — अर्थात् सत्याग्रह और आत्मिक बल — की समझ आदमी अर्सेतक सतत प्रयत्न और मन-ही-मन प्रार्थना करके ही अपने अन्दर पैदा कर पाता है। मै तो अपने मित्रोको इतना ही आश्वस्त कर सकता हूँ कि मै सत्यका मार्ग टटोल रहा हूँ और इसमे अपनी ओरसे कोई कसर नही होने देता, और सत्यान्वेषियोके इस बहुत ही थकानेवाले मगर बड़े ही सुन्दर मार्गपर मेरे दो ही अत्यन्त विश्वस्त साथी है — विनम्रतापूर्ण सतत प्रयत्न और मन-ही-मन भगवान्से प्रार्थना। यही दोनो सदा मेरे साथ रहते है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १-६-१९२१

८२. भाषण: गुजरात राजनीतिक परिषद्, भड़ौंचमें[1]

१ जून, १९२१

यह एक ऐसा प्रस्ताव है जिसे कोई भी सीधा-सादा बालक अथवा बालिका समझ सकती है। इस प्रस्तावके पूरे होनेपर हिन्दुस्तानका स्वराज्य निर्भर है, खिलाफतके प्रश्नका समाधान इसपर निर्भर करता है और पजाबके न्यायकी आधारशिला भी यही है। गुजरातके भाई-बहनोको मै पिछले वर्षकी याद दिलाता हूँ। पिछले साल जब काग्रेस-ने असहयोगका प्रस्ताव पास नही किया था तब भी हमने असहयोगका प्रस्ताव पास किया था। जब पजावके न्याय और स्वराज्यकी बाततक भी न थी तब हमने, गुजरातके हिन्दुओ और मुसलमानोने, सोच लिया था कि खिलाफतके प्रश्नका निर्णय हम अपनी सात्विक सत्ताके बलपर करेगे। भले ही सारा भारत यह न समझे कि पजाब और स्वराज्यके प्रश्नका निबटारा खिलाफत-प्रश्नके निर्णयके अन्तर्गत ही आता है तब भी हम गुजरातियोने अपने सर्वस्वकी बलि देकर खिलाफतके प्रश्नका समाधान कर लेनेका निश्चय किया था। उस समय गुजरातने जिस श्रद्धा-भावनाका परिचय दिया था उसकी मै आपको याद दिला देना चाहता हूँ। श्री विट्ठलभाईने हमपर आक्षेप लगाया है कि हमने अपना कर्त्तव्य पूरा नही किया, हमने पूरा-पूरा चन्दा नही दिया। यदि हम अपने कर्त्तव्यको पूरा नही करेगे तो इसी आक्षेपके योग्य ठहरेगे। लेकिन यदि हम निश्चय करेगे तो अपने कर्त्तव्यको पूरा करके हम तीस दिनोमें ही आक्षेपके इस धब्बेको धो सकेगे। इस परिषद्मे आये हुए भाई-बहन, सारा हिन्दुस्तान क्या करेगा, इसका विचार न करके अगर सोते, खाते, बैठते गुजरातके प्रति अपने कर्त्तव्यको याद रखेगे तो दस लाख रुपया, एक लाख चरखे और तीन लाख सदस्य जरूर बना सकेगे।

चरखेसे यह सरकार किस तरह हट जायेगी, यह प्रश्न पूछा गया है। उसका जवाब यह है कि सरकार चरखेको देखकर नही चली जायेगी बल्कि निर्धारित अवधिके बीच बीस लाख चरखोको चलाना शुरू करके आप दुनियाके सम्मुख जिस श्रद्धा, विश्वासका परिचय देगे उसे देखकर यह सरकार हमारी शरण आयेगी। यह हमारी शक्तिका मापदण्ड है। जब आप इतना कर दिखायेगे उस समय ससार जान लेगा, सरकार समझ जायेगी कि आप श्रद्धालु है, आप सचमुच स्वराज्य प्राप्त करना चाहते है। उस समय हमें सिपाहियोसे हथियार छोड़ देने अथवा जनतासे कर न देनेकी बात कहनेकी जरूरत न रहेगी। जबतक हिन्दुस्तानमे यह श्रद्धा नही आती तबतक चरखा जितनी आसान चीज है उतनी ही मुश्किल भी है। जब घर-घरमें लोग चरखा चलाने लगेगे तब हिन्दुस्तानमे एक भी व्यक्ति भूखो नही मरेगा, औरतोको आजीविका कमानेके

१. बेजवाडामें हुए कांग्रेस अधिवेशनमें जो कार्यक्रम निश्चित किया गया था उसे तीस जूनसे पहले-पहले खत्म करनेके लिए और भी ज्यादा प्रयत्न करनेके सम्बन्धमें इस परिषद्में एक और प्रस्ताव पेश किया गया था। गाधीजीने यह भाषण उसी अवसरपर दिया था।

लिए अपने शीलका सौदा नही करना पड़ेगा, उस समय हिन्दुस्तानमे धर्मराज्य होगा, रामराज्य होगा, खुदाका राज्य होगा।

एक लाख चरखे चालू करना, [कांग्रेसके] तीन लाख सदस्य बनाना और दस लाख रुपया इकट्ठा करना — यह सब गुजरातकी शक्तिका मापदण्ड है। यह सवाल भी पूछा गया है कि यद्यपि गुजरातके हिस्सेमे तीन लाख रुपया आता है तथापि उस-पर दस लाख रुपया इकट्ठा करनेका बोझ क्यो लादा गया है? गुजरातको हमने इस सघर्षका आधारस्तम्भ बनाया है और आधारस्तम्भको ही सबसे अधिक भार वहन करना पडता है, इसे कौन नही जानता? और इसीलिए इसका भाग भी अन्य प्रान्तोकी अपेक्षा ज्यादा है। हम सबमे अगर श्रद्धा हो तो दस लाख रुपया इकट्ठा करना कोई मुश्किल काम नही है। यदि हम गुजरातमें इस आन्दोलनके प्रति इतनी श्रद्धा भी नही दिखला सकते तो मै बम्बई जाकर व्यापारियोके सम्मुख बात कैसे कर सकूँगा? बेजवाडामे निश्चित किये गये कार्यक्रमको समयपर पूरा करनेके लिए हमे प्राण तक त्याग देने चाहिए। तीस जूनतक अगर यह कार्य पूरा न हो तो हमारे लिए मर जाना ही बेहतर है। यही स्वराज्यकी कुंजी है। हिन्दुस्तानने इस कुजीको पा लिया है, यह सरकार जिस क्षण इस बातको समझ जायेगी उसी क्षण या तो वह भाग जायेगी अथवा जनताकी सेवक बनकर रहेगी।

कलकत्तामें किसी व्यक्तिने मौलाना मुहम्मद अलीसे पूछा, अनेक लोगोका कहना है कि चरखेसे स्वराज्य प्राप्त करनेकी बात चमत्कार प्रतीत होती है। मौलानाने कहा, होती होगी, लेकिन छः हजार मीलसे चलकर आये हुए मुट्ठी-भर गोरे तीस करोड़ व्यक्तियोपर शासन कर रहे है यह बात अधिक चमत्कारपूर्ण है या कि चरखेसे स्वराज्य प्राप्त करनेकी बात? स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए हममें आत्मविश्वास पैदा होना चाहिए, हमें परस्पर एक हो जाना चाहिए। हिन्दुस्तान-जैसे महान् मन्दिरमे — जिसमे मुसलमानोकी मस्जिदे है, हिन्दुओके मन्दिर है, सिखोके गुरुद्वारे है, पारसियोके देवालय है — पूजा करनेके लिए गुजरातियो-जैसे पुजारी अगर दस लाख रुपया देते है तो हम नि सन्देह स्वराज्यके योग्य ठहरते है। अगर गुजरात अकेले ही इस कार्यका बीड़ा उठा लेनेको तैयार हो जाता है तो हमारे लिए वही काफी है। यदि हम इतनी योजना-शक्तिका परिचय नही देते, इतना बलिदान करनेके लिए तैयार नही होते तो हमे स्वराज्यकी बात छोड़ देनी चाहिए। इतने-भरमे गरीब बनने जैसी कोई बात नही है। यदि सिर्फ गुजराती बहनें ही इस बातका निश्चय कर ले तो कल ही गुजरातसे दस लाख रुपया इकट्ठा करके दे सकेगी। आज जब कि हिन्दुस्तानकी हालत असहाय विधवा-जैसी है ऐसे समय हमे आभूषण पहनने अथवा शृगार करनेका क्या अधिकार है? जब हजारो व्यक्ति भूखो मर रहे हो उस समय सोने-चाँदीके आभूषण पहने ही कैसे जा सकते है? आप सब बहने सौभाग्यसूचक आभूपणोको छोड़कर अगर बाकीके आभूषण दे दे तो दस लाख रुपया घडी-भरमे इकट्ठा हो जाये। गुजराती बहनोमे जब यह भावना प्रकट होगी उसी दिन इसे देखनेके लिए देवता आकाशसे उतरेगे। गुजराती बहनोको स्वराज्यके, स्वधर्मके इस मन्त्रको जान लेना चाहिए कि आज आभूषणोका त्याग करनेपर ही उनके शीलकी रक्षा हो सकेगी।

हमे अपने-आपपर अविश्वास है; कितने ही लोगोको मुझपर आवश्यकतासे अधिक विश्वास है। उन्हे लगता है कि गाधी चाहे किसी भी स्थानसे क्यो न हो तीस जूनसे पहले-पहले एक करोड रुपया लाकर पूरा कर देगा। लेकिन मै कहता हूँ कि उनकी यह मान्यता सर्वथा भूलसे भरी है। गाधीमे यदि ऐसा बल हो भी तो इस तरह गाधीके बल-बूतेपर मिला हुआ राज्य गाधीराज्य होगा, स्वराज्य नही। गाधीराज्यको आप राक्षसी राज्य समझना। गाधीकी तो यह इच्छा है कि उसके जितना बल, उसके जितना आत्म-विश्वास आप सबमे भी आये। मै केवल यह चाहता हूँ कि मुझमे जो दोष है, जो पाखण्ड है वह आपमे न आने पाये। मुझे अपने राज्यकी इच्छा नही है, मै तो स्वराज्य चाहता हूँ। मेरी कामना है, हम तीन भाइयोमे[1] जो शौर्य और एक दिली है वह आप सबमें भी आये।

मैने ऐसे व्यक्ति भी देखे है जिन्होने अपनी धर्मपत्नीको विवेकपूर्वक समझा-बुझा-कर देशके निमित्त उससे उसके आभूषण ले लिये है। आप सब पुरुष इसपर विचार करे। अपनी बहनो, अपनी पत्नियोको समझा-बुझाकर उनसे आभूषण ले लेनेका निश्चय करे। शुरुआत हमेशा घरसे ही करे। जो-जो अच्छे काम है उनकी शुरुआत परि-वारसे ही होनी चाहिए। जबतक हम परिवारको बचाकर अलग रखते रहेगे तबतक काम नही हो सकेगा। मै इन प्रतिनिधि भाइयोसे कहता हूँ कि आप फकीर बनें। एक लँगोटीसे गुजारा करे, दस लाख इकट्ठा करनेके लिए रात-दिन मेहनत करे और उसके बाद कहे कि दस लाख रुपये इकट्ठे नही हो सके। जब ऐसी घडी आयेगी तब अमीर खुद-ब-खुद शरमिन्दा हो जायेगे। हममे फकीरकी-सी श्रद्धा आनी चाहिए।

मै आपको हमेशाके लिए फकीर बननेको नही कहता। अंग्रेज स्त्री-पुरुषोने गत विश्वयुद्धमे जो बलिदान दिये, दक्षिण आफ्रिकामे जगली माने जानेवाले बोअरोने जो आत्मत्याग किया, अरबोने जो बलिदान दिये उनकी अपेक्षा मै आपसे बहुत कम बलिदान माँगता हूँ। अरबोने स्वदेशकी खातिर अपने प्रिय प्राणोकी बलि दी। उन्होने अग्रेजोसे कह दिया कि हमे तुम्हारी ट्राम, मोटर और रेल नही चाहिए, हमे तो हमारा देश प्यारा है। इन अरबोने जिस उत्साहसे आत्म-यज्ञ किया आप भी उसी उत्साहसे, मै आपसे जो माँग रहा हूँ और जो इन अरबोके बलिदानसे बहुत कम है, मुझे दे।

स्वराज्य मिलनेपर आप हीरे-मोती, आभूषण सब पहनना। उस समय मुझे आपपर क्रोध न होगा। इस समय तो मुझे क्रोध आता है। हालाँकि मै द्वेष-भावसे बहुत ज्यादा मुक्त हो गया हूँ फिर भी इस समय जब कि हिन्दुस्तानकी हालत इतनी गिरी हुई है तब यदि किसीको मै अपने पास शृगार किये तथा आभूषण पहने देखता हूँ तो मुझे बुरा लगता है। मन-ही-मन सोचने लगता हूँ कि ये लोग अभीतक क्यों नही समझते ? यह काम आप आज रातसे ही शुरू कर दें। नर्मदाके पवित्र तटसे यदि आप इस रगमे रँगकर जाये तो [मेरे लिए यही] बहुत होगा। हिन्दू और मुसलमान दोनोके हितके लिए काम करनेमे, धर्मकी रक्षा करनेमे कदापि पीछे न हटे। मन्दिर बनवाने तथा लड़के-लडकीके विवाहमे आप जितना धन खर्च करते है उतना ही धन

१. गाधीजीका आशय अपने और अली भाइयोंसे है।

यदि इस महान् देवालयके निर्माणमे, विवाहकी अपेक्षा कही अधिक इस मगल-कार्यमें देंगे तो दस लाख रुपया इकट्ठा करना कोई मुश्किल बात न होगी। गरीब व्यक्तियोके पास पैसे न हो तो उनकी ओरसे स्वय चार आने देकर उनका नाम काग्रेसकी बहीमे दर्ज कराये। चरखेके लिए अगर हम बढइयो और लुहारोको जुटा ले तो चरखा-कार्यक्रम भी बच्चोका खेल हो जाए। मेरा तो कहना है कि अगर अकेली बहने ही तीस दिन काम करनेके लिए निकल पड़े तो भी पैसा इकट्ठा करना खेल है। भाषण कर-करके अब मै थक गया हूँ, लेकिन मेरे मनसे गुजरातकी बहनोके प्रति विश्वास नही गया है। उनमे इतनी निर्मलता, इतनी श्रद्धा है कि धर्मराज्यकी बात सुनते ही वे पिघल जाती है। उनकी ओरसे आभूषणोकी जो बरसात हुई है उसीसे मेरे मनमे श्रद्धा जाग उठी है।

श्रद्धा तो मुझे बहनो और भगियोसे प्राप्त हुई है। अभी थोडे दिन पूर्व ही एक पारसी भाईने मुझे फिर बारह हजार रुपये भेजे है। ये पारसी दक्षिण आफ्रिका-वाले भाई रुस्तमजी है। ये टाटाकी अपेक्षा कम पैसेवाले है, लेकिन इनके पास टाटाकी अपेक्षा अधिक विशाल हृदय है। उन्हे प्राप्ति-सूचना तक भेजनेका मुझे समय नही मिल पाया है। ऐसे लोगोसे ही मुझे श्रद्धा मिली है।

हमे शिमलासे स्वराज्य प्राप्त नही होगा। यहाँ लाल, हरे और सफेद रगका जो झण्डा फहरा रहा है और जिसपर चरखेका चित्र अकित है, उस झण्डेके लिए अगर आप मरनेको तैयार हो जायें तो उसी दिन स्वराज्य है। आपकी बात सुननेके लिए जो अग्रेज आपको बुलाते है उन्हे आप अपनी बात भले ही सुनाये-समझाये, लेकिन इतना आप समझ ले कि स्वराज्य तो आपको अपने बलपर ही मिलेगा। यह अत्युत्तम मुहूर्त है। यदि यह शुभ मुहूर्त टल गया तो जैसे लक्ष्मीके आनेपर मुँह धोनेके लिए जानेवाले व्यक्तिको हम मूर्ख कहते है उसी तरह हिन्दुस्तानको भी मूर्ख समझा जायेगा। इस परिषद्को शुभ मुहूर्त मानकर आप इसका उपयोग करे। यदि हम दृढ प्रतिज्ञ होकर काम करेंगे, मरनेके लिए तैयार रहेगे तो पजाबके प्रति न्याय, खिलाफतके प्रति इन्साफ और स्व-राज्य इन तीनोको मिला ही माने।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–६–१९२१

८३. भाषण : भड़ौंचमें अहिंसा-प्रस्तावपर[1]

१ जून, १९२१

जैसे-जैसे हम आगे बढते जायेंगे वैसे-वैसे हमारा सरकारको आवेदनपत्र देना खत्म होता जायेगा। तब हम सरकारसे नही स्वय अपने-आपसे प्रार्थना करेंगे। अपने सकल्प निभानेमें अगर हम कच्चे निकले तो हमारी स्वराज्यकी रोटी कच्ची रह जायेगी और अगर हम पक्के निकले तो स्वराज्यकी रोटी अच्छी तरह पक जायेगी। पैसा, चरखा और सदस्य तो आँखोसे देखे जा सकते है लेकिन शान्ति तो भीतरकी, दिलकी चीज है। वह आँखसे देखनेकी चीज नही है। हमे जीवित रहनेके लिए श्वासकी जितनी जरूरत है उतनी ही इस लड़ाईके लिए शान्तिकी जरूरत है, यह बात हिन्दुस्तानको समझ लेनी चाहिए। हमे पाषाणकी-सी शान्तिकी आवश्यकता नही कि जो ठुकराये जानेपर भी शान्त रहे, हमे जानवरोकी-सी, उदाहरणार्थ कुत्ते-जैसी, शान्तिकी भी आवश्यकता नही जो किसीके मारनेपर उसे काटनेको दौडे अथवा उसपर भौंकने लगे। हमें तो सरदार लछमनसिंह और दलीपसिंहने जिस शान्तिका परिचय दिया, वैसी शान्तिकी जरूरत है। भाई शौकत अलीके शब्दोमे कहूँ तो हमे ठडी ताकतकी जरूरत है। जबतक हम इसे प्राप्त नही कर लेते तबतक हम स्वराज्यके योग्य नही ठहरते। हवाई जहाजोके बलपर स्वराज्य प्राप्त करनेकी इच्छा करेंगे तो वह सौ सालतक भी नही मिलेगा। मालेगाँवके किस्सेसे स्वराज्यकी सुई पीछे खिसक गई। यह सच है कि इससे हम कोई स्वराज्य नही खो देंगे। किन्तु इससे हमे पीछे तो हटना ही पड़ा है। सरकारके शान्त रहनेपर ही हम शान्ति रखे, यह हमारी शर्त नही है। यह तो सरकारके साथ सहयोग हुआ। हम तो शान्तिमय असहयोग करने बैठे है। सरकारकी ओरसे गोलीबारी हो अथवा सिरपर हवाई जहाजसे बम-वर्षा हो तब भी शान्तिपूर्वक हम अपना कार्य करते रहे और कलक्टरको मारने न दौडे, डाकघरको न जलाये तभी सच्ची शान्ति कहलायेगी। जब हम इस शान्तिको प्राप्त कर लेंगे तब हमें 'अंग्रेज जायेंगे तो पठान आयेंगे' ऐसा भय नही रहेगा। हममे जबतक शान्तिकी ताकत होगी तबतक हमे कोई नही जीत सकेगा।

हमें जो पाठ सीख लेने चाहिए उनमे से एक पाठ शान्तिका है और दूसरा पाठ हिन्दू-मुस्लिम एकताका है। हम यदि परस्पर लडते रहेंगे तो हमारी लड़ाई इसीमे खत्म होकर रह जायेगी। हमें तो शूरवीरोके शौर्यकी जरूरत है, कायरताकी नही। हमें वीरोकी शान्ति चाहिए। ऐसी शान्ति मुझ जैसे [शरीरसे] दुर्बल व्यक्ति और मुझ जैसे पाँच व्यक्तियोको जेबमें रख लेनेवाले [शरीरसे सबल] व्यक्ति दोनोमे ही हो सकती है। मैं जब दस-बारह वर्षका था तब मुझे भूतसे डर लगा करता था। उस समय मेरी धाय रम्भाने मुझसे कहा था कि बेटा भूत आये तब रामका नाम लेना। इस तरह

१. गुजरात राजनीतिक परिषद्में; देखिए पिछला शीर्षक।

मैं "रामरक्षा" का पाठ करता और भूत-प्रेतको कोठरीसे निकाल सकनेमें सफल होता। हिन्दुस्तानमें जिस शान्तिकी जरूरत है वह शान्ति, प्राण जानेपर भी आत्मसमर्पण न करनेवाले अरब लडकेकी-सी है, वह प्रह्लाद-जैसी शान्ति है। मुसलमानोसे मैं कहता रहा हूँ कि आप अरब लडकेका आदर्श अपने ध्यानमे रखे और हिन्दुओसे कहता रहा हूँ कि प्रह्लादका आदर्श अपने ध्यानमे रखे तथा उनके जैसी शान्ति, धीरज और धैर्यका विकास करे।

प्रस्तावमे मालेगाँवका जो जिक्र किया गया है उसका कारण यह है कि इस घटनाको हमें भूल जाना है। और दलीपसिंह और लछमनसिंहकी शान्तिको — उनके आत्म-बलिदानको — याद रखना है। यदि ऐसी शान्तिका विकास करनेके लिए आप यहाँ अपना मत देगे तो उसका अर्थ यह होगा कि आप आदमीके भयसे मुक्त हो गये है और मात्र ईश्वरसे ही भय खानेवाले व्यक्ति बन गये है। जबतक हम मानवमात्रके भयको छोडकर खुदासे डरनेवाले नही बन जाते तबतक जगत् हमे डराता है, और डराता रहेगा। यह शक्ति हमें गुजरातकी मार्फत हिन्दुस्तानको देनी है। गुजरातकी मार्फत सरकारको कर देनेका काम बन्द करना है। लेकिन यह काम तभी हो सकता है जब हममे शान्तिकी वह ताकत आ जाये। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि हे ईश्वर! तू सब भाइयोको यह ताकत दे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–६–१९२१

८४. प्रस्ताव[1]

१ जून, १९२१

(१) यह सभा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके नागपुर अधिवेशनमें पास किये गये अहिंसात्मक असहयोगसे सम्बन्धित प्रस्तावका हार्दिक समर्थन करती है और सभी वर्गोके लोगोका आह्वान करती है कि वे प्रस्तावपर पूरी तरह अमल करनेके लिए अधिक उत्साहपूर्वक और अधिक सगठित ढगसे काम करे, विशेष रूपसे इसलिए कि गुजरातमें उक्त प्रस्तावपर जिस रफ्तारसे अमल किया जा रहा है सभाका विश्वास है कि वह इसी वर्षके अन्दर स्वराज्य प्राप्त करनेकी आशा दिलानेके लिए पर्याप्त नही है।

(२) इस सभाके विचारानुसार गुजरातका कर्त्तव्य है कि वह कांग्रेस समितियोके तीन लाख सदस्य बनाये, तिलक स्वराज्य-कोषमे दस लाख रुपये जमा करे और एक लाख चरखे चालू करे तथा बेजवाडामें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा निर्धारित कार्यक्रमके अनुसार गाँवों, ताल्लुको और जिलोके सभी कार्यकर्त्ताओसे अपील करे कि वे ३० जूनसे पहले यथाशक्ति चन्दा दें।

१. अनुमानतः गुजरात राजनीतिक परिषद्में पारित इन प्रस्तावोंका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था।

(३) मनसा-वाचा-कर्मणा अहिंसा असहयोग योजनाका जरूरी अग है और अहिंसा के सिद्धान्तका पालन करनेपर ही योजनाकी सफलता निर्भर करती है, इसलिए यह सभा सबसे अनुरोध करती है कि सरकारी अधिकारियो द्वारा अभियोग लगाये जाने या उत्तेजित किये जानेपर भी पूर्ण शान्ति कायम रखे, और द्वेषपूर्ण भाषण न दे और भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस द्वारा सुझाये कार्यमे पूरी तरह जुट जाये। गुजरात प्रान्तीय काग्रेस कमेटीके विशेष आदेशके बगैर हडताल करना बन्द कर दे और सरकार द्वारा की जानेवाली नेताओकी गिरफ्तारीपर सभी तरहके विरोधी प्रदर्शन बन्द कर दे।

(अ) यह सभा सरकारकी दमनकारी नीतिके बावजूद समूचे देशने जो शान्ति रखी उसपर सन्तोष व्यक्त करती है और मालेगाँवमे सरकारी अधिकारियो और प्रमुख सहयोगियोके विरुद्ध किये गये हिंसापूर्ण कार्योके लिए कडे शब्दोमे खेद तथा निराशा व्यक्त करती है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ६–६–१९२१

८५. भाषण: अन्त्यज परिषद्, वेजलपुरमे[1]

१ जून, १९२१

अन्त्यजोके अतिरिक्त जो भाई यहाँ आये है उन्हे मै मुबारकबाद देता हूँ और हिन्दुओको तो मै पवित्र हुआ मानता हूँ। मुझे तो मानपत्र भेट करनेकी जरूरत ही न थी। अब यदि कोई मुझसे पूछता है तो मै कहता हूँ कि मै अन्त्यज हूँ। यह धन्धा पवित्र है। इसके बिना गुजारा नही हो सकता। पाखाना साफ करनेवाले न हो तो हैजे-से हम मृत्युकी शरण ही चले जाये। आप लोग मुझे मानपत्र देना भूलकर पुरुषार्थ करे। अपना उद्धार करे, दारू छोडे और चमडेके लिए पशुओके प्राण न ले। मरे हुए पशुओकी चमड़ी उतारे। अपना धन्धा करनेके बाद नहा-धोकर स्वच्छ हो जानेपर बाहर निकले। जूठे भोजनकी भीख न मॉगे और किसीकी भी जूठन स्वीकार न करे। विनयपूर्वक उसे लेनेसे इनकार कर दे। विवेककी रक्षा करते हुए जो मिले उसे ही स्वीकार कर ले।

कॉंचसे जडे विदेशी सन्दूकमे मानपत्र देकर आपने मेरा अपमान किया है। आपको केवल अपने हाथकी कारीगरीसे बना हुआ मानपत्र ही देना चाहिए था। विदेशी वस्तुएँ आपके लिए नही है।

अहमदाबादका केलिको कपड़ा कगालोके लिए है। आपको तो कुलीनताकी परिचायक खादी चाहिए। उसी तरह आपको कपड़ा बनाना, पहनना और बेचना

१. गुजरातके भड़ौंच जिलेमें। यह भाषण सभामें दिये गये मानपत्रका प्रत्युत्तर देते हुए दिया गया था।

चाहिए। आपके उद्धारके दो साधन है दारूत्याग तथा बुनाईका काम। उनके द्वारा ही आपका उद्धार होगा।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १२-६-१९२१

८६. भाषण: भड़ौंचकी खिलाफत सभामें

२ जून, १९२१

श्री गांधीने सातवाँ प्रस्ताव रखते हुए कहा: मैं जानता हूँ कि आप जल्दी घर जाना चाहते हैं। इसलिए मैं विस्तारसे नहीं बोलूँगा। बन्नू कहाँ है सो आप जानते हैं। सीमान्तके सवालपर मेरे विचारोंको अध्यक्ष अच्छी तरह जानते हैं और इसीलिए मुझसे तत्सम्बन्धी प्रस्ताव रखनेको कहा गया है। बन्नूके मुसलमान डंडों और अन्य शस्त्रोंसे लैस हैं। वे खुदासे डरनेवाले लोग हैं और खिलाफतके मसलेको समझते हैं। बन्नूके मुसलमानोंपर जितना अत्याचार हुआ अगर उतना हमपर होता तो मैं निश्चित रूपसे जानता हूँ कि हम सब तत्काल वहाँसे भाग जाते। उनमें से कुछ बैरिस्टर और सुविख्यात लोग हैं। उन्होंने अब आपको सन्देश भेजा है कि आप सत्यके आधारपर अपना आन्दोलन जारी रखें।

हम सरकारकी उत्तेजनात्मक कार्रवाइयोंको कहाँतक सहन करते हैं, ईश्वर इसे लेकर हमारी परीक्षा लेता रहा है। आपके सामने तीन रास्ते हैं जबकि मेरे सामने केवल एक है और वह है जिहाद। यदि मुसलमानोंने हिंसाका सहारा लिया तो मैं उनके खिलाफ जिहादका रास्ता ही अपनाऊँगा। सम्भव है कि वे तलवारका उपयोग करें, परन्तु मैं नहीं करूँगा। यदि किसी मुसलमानने तलवार बाहर निकाली तो वह भयानक भूल करेगा। इस समय मैं विशेष रूपसे खिलाफतके बारेमें बोल रहा हूँ, स्वराज्यके बारेमें नहीं। हमने पहले ही सरकारको चेतावनी दे दी है कि वह न तो जनताको उत्तेजित करे और न उसका दमन करे। अली भाई सरकार द्वारा दिये जाने-वाले किसी भी कष्टको झेलनेके लिए तैयार हैं किन्तु वे हर हालतमें अहिंसात्मक असह-योगके मार्गको ही अपनायेंगे। हमें सरकारको कर नहीं देने चाहिए और असहयोग आन्दोलनको बल देनेके लिए अधिकसे-अधिक चेष्टा करनी चाहिए। मुसलमानोंको रम-जानमें अपना राष्ट्रीय कार्य अवश्य जारी रखना चाहिए। कल कुछ हिन्दू मुझे बता रहे थे कि मुसलमान गायकी कुरबानी करनेकी बात कर रहे थे और कह रहे थे कि वैसा न करना बहुत बड़ा पाप होगा। आपके लिए जिस तरह मक्का शरीफ पवित्र स्थान है उसी तरह हिन्दुओंके लिए गाय पवित्र पशु है। गोवध करनेसे पहले आपको अली भाइयोंसे अवश्य सलाह लेनी चाहिए। मुझे विश्वास है कि मुसलमान

ऐसा नहीं करेंगे। मुसलमान हमेशा ही हिन्दुओंके समान माने जायेंगे। आपको वे सारे अधिकार दिये जायेंगे जो हिन्दुओको प्राप्त हैं। आपको मुझमें और मेरे महान् आन्दोलनमें ईमान और विश्वास अवश्य होना चाहिए। मैं अन्तमें ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको [मुसलमानोंको] राष्ट्रीय कार्यके लिए सफलतापूर्वक और शान्तिसे आगे बढ़नेकी पर्याप्त शक्ति दे।'[1]

[अंग्रेजीसे]

***बॉम्बे क्रॉनिकल*, ६-६-१९२१**

८७. वाइसरायका भाषण

मैंने वाइसराय महोदयका भाषण पढा। वह ठीक है, ऐसा मै मानता हूँ। तथापि उससे शिमलाकी गन्ध आती है। हमे उसकी फिक्र नही। यदि ये महोदय अपने काम-काजमे "जैसा कहो वैसा करो" वाली बातको चरितार्थ करना चाहते है तो उन्हे ऐसा करके बताना होगा।

भोजनके बाद भाषण करनेकी आदत ही बुरी है। खाकर व्यक्ति आलसी बन जाता है। खानेके तुरन्त बाद व्यक्ति ठोस विचार करने लायक नही रह जाता और सो भी ऐसे आडम्बरपूर्ण वातावरणमे दिये गये भोजके बाद जिसका कि समाचारपत्रोमे विशेष विवरण प्रकाशित किया जाता हो। इसीलिए वाइसरायके भाषणोमे जो गाम्भीर्य होना चाहिए वह नही होता।

हिन्दुस्तानको फिलहाल गाम्भीर्यकी जरूरत है। हिन्दुस्तान घायल है, उसका घाव अभी भरा नही है। इतना ही नही बल्कि वह घाव गहरा होता जाता है। उससे अभी खून बहता रहता है। वह मरहम-पट्टीसे ठीक हो जानेवाला नही है। उसके लिए तो अभी ऐसे कुशल शल्य-चिकित्सककी आवश्यकता है जिसमे दक्षताके साथ धैर्य भी हो। अच्छे शल्य-चिकित्सकोको मैंने खतरनाक आपरेशन करते समय भूखे पेट रहते देखा है। किसी-किसी श्रद्धालु शल्य-चिकित्सकको मैंने आपरेशनके समय भगवान्का नाम लेते हुए भी देखा है।

वाइसराय महोदय, अली भाइयोके पत्रको भी ऐसा-वैसा पत्र न समझें। यह पत्र उनकी खातिर नही लिखा गया। यह पत्र तो मित्रोकी खातिर लिखा गया है। वाइसराय महोदयने अली भाइयोके भाषणोका जो जिक्र किया सो ठीक किया। कोई शत्रु भी अगर भूलकी ओर निर्देश करे तो उसे स्वीकार कर लेना सज्जनताकी निशानी है। अली भाइयोके किसी-किसी भाषणमे कुछ-एक वाक्य ऐसे थे जिनके दो अर्थ निकल सकते हैं। अली भाइयोके वक्तव्यका यही मतलब है कि अपनेको, धर्मको और देशको बचानेका प्रयत्न करनेवाले व्यक्तियोको भी अपने मुखसे जाने-अनजाने द्विअर्थक शब्द नही निकालने चाहिए। उन्होने अपनी सज्जनताका परिचय देते हुए मेरे-जैसे मित्रो-

१. प्रस्तावका अनुमोदन हयात साहबने और उसका समर्थन फैजुल्लाखाँने किया था। मत लेनेके बाद प्रस्ताव पास कर दिया गया।

की सलाह मानी है। और उन्होंने अपनी जिह्वापर और भी अधिक काबू रखनेकी शुद्ध और पवित्र प्रतिज्ञा की है।

वाइसराय महोदयको अभी अनुभवकी जरूरत है। उन्हें इस अभूतपूर्व प्रवृत्तिका अध्ययन करना है। उनका भाषण प्राथमिक अध्ययनको ही सूचित करता है। उनके भाषणमें सावधानी बरतनेकी कोशिश की गई है, लेकिन वे अपनी इस कोशिशमें पूरी तरहसे कामयाब नहीं हुए हैं। उन्होंने असहयोगीको रिझानेका प्रयत्न किया है। असहयोगी भाषणोंसे रीझनेवाले नहीं हैं। वे भाषणोंका उलटा अर्थ नहीं लगाते, लेकिन उसकी कसौटी तो वे कामसे ही करते हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–६–१९२१

८८. गुजरातका निश्चय

भड़ौंचमें जो परिषद् हुई उसके बारेमें मैं बहुत-कुछ लिखना चाहता था। लेकिन मैं थका-हारा मध्य रात्रिमें अब थोड़ा ही लिखूंगा।

इस मासके अन्ततक गुजरातको दस लाख रुपया इकट्ठा करना है, कांग्रेसके लिए तीन लाख सदस्य बनाने हैं तथा एक लाख चरखे चालू करवाने हैं। यह गुजरातके लिए जितना कठिन है उतना ही आसान भी है।

कार्यकर्त्ताओंके अभावमें यह कार्य कठिन जान पड़ता है। यदि असंख्य व्यक्ति — स्त्री और पुरुष — काम करनेके लिए निकल पड़ें तो यह काम आसान है। इन तीनों कामोंमें जो कच्चे असहयोगी हैं, जिन्हें असहयोगके प्रति कोई श्रद्धा नहीं है वे भी मदद कर सकते हैं। केवल वही लोग ये काम नहीं कर सकते जो असहयोगको पाप मानते हैं। मुझे विश्वास है कि गुजरातमें असहयोगको पाप माननेवाले लोग अँगुलियोंपर गिने जा सकने योग्य भी नहीं मिलेंगे।

इतना पैसा किस तरह इकट्ठा हो? (१) यदि स्त्रियाँ अपने आभूषणोंको उतार फेंकें, (२) यदि धनाढ्य अपनी सम्पत्तिका अमुक प्रतिशत दें, (३) यदि सब लोग अपनी कमाईका अमुक भाग दें, (४) यदि शराब पीनेवाले अपने शराबके खर्चका अमुक हिस्सा दें, (५) यदि कुछ-एक अमीर लोग अपना सर्वस्व अर्पण करें, — ऐसे बहुत सारे "यदि" लगे हुए हैं। इन शर्तोंको पूरा करके हमें अपना काम सम्पन्न कर डालना है।

भड़ौंच परिषद्में की गई प्रतिज्ञा अगर पूरी न हो तो गुजरातकी नाक कट जायेगी; इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त करनेमें विघ्न पड़ेगा। जो चरखा नहीं चला सकते वे सदस्य बनायें। सब कोई अपने-अपने कर्त्तव्यका पालन करें।

हे ईश्वर! गुजरातकी लाज रखना।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–६–१९२१

८९. टिप्पणियाँ

सदस्योंका धर्म

मुझसे निम्नलिखित प्रश्न पूछा गया है:

जिस तरह आपने प्रतिनिधि कैसे चुने जाने चाहिए इसके बारेमें लिखा है उसी तरह अगर आप सदस्य किन व्यक्तियोंको बनाया जाना चाहिए, इसकी जानकारी भी दें तो अच्छा होगा।

यह स्पष्ट है कि जो लोग असहयोगके प्रस्तावको पसन्द करते हैं वे लोग उन्हीं व्यक्तियोंको अपना प्रतिनिधि चुनेंगे जो इस प्रस्तावका समर्थन करनेवाले हों। मतलब यह कि प्रतिनिधिको वकील नहीं होना चाहिए, खिताबयाफ्ता नहीं होना चाहिए, खादी पहननेवाला होना चाहिए और ऐसा होना चाहिए जो अन्त्यजोंका तिरस्कार न करता हो आदि। सदस्यके लिए तो जो शर्तें रखी गई हैं वे निम्नलिखित हैं.

१. उसकी आयु २१ वर्षकी अथवा उससे ज्यादा होनी चाहिए।

२. वह प्रतिवर्ष चार आना चन्दा देगा।

३. स्वराज्यको हिन्दुस्तानका ध्येय मानेगा।

४. स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए शान्ति और सत्य, इन्हीं दो साधनोंको स्वीकार करेगा।

इतनी शर्तोंका पालन करनेवाला व्यक्ति भले ही सरकारसे सहयोग करनेवाला हो, खिताबयाफ्ता हो, वकील हो, विलायती कपड़े पहनता हो तथापि वह कांग्रेसका सदस्य बन सकता है। कांग्रेस एक ही पक्षका प्रतिनिधित्व नहीं करती और इसीसे इसका सदस्य बननेके लिए कमसे-कम प्रतिबन्ध ही होने चाहिए। जो सर्वमान्य प्रतिबन्ध हैं उन्हीं प्रतिबन्धोंको रखा गया है। यह तो हुआ कांग्रेसकी नियमावलीका अर्थ।

मुझे निजी तौरसे निस्सन्देह यह उम्मीद है कि अब असहयोग भी इतना व्यापक बन गया है कि सभी असहयोगी ही होंगे। लेकिन देशकी भावनाको पढ़नेमें मुझसे भूल भी हो सकती है अथवा यह भी हो सकता है कि देश जो मानता है उसे आज करनेके लिए तैयार नहीं है। हाँ, असहयोगी होनेका दावा करनेवाले व्यक्तिसे मैं अवश्य ही असहयोगकी शर्तोंका पालन करनेकी अपेक्षा करता हूँ। लेकिन अगर कांग्रेसके सदस्य अधिक संख्यामें असहयोगी बन जायें तो वे आगामी [अधिवेशनमें] कांग्रेसके विचारोंको बदल भी सकते हैं। दिन-प्रतिदिन मामला शुद्ध होता जाता है. साध्य और साधन स्पष्ट होते जाते हैं। "कठिन समयमें (जो टिका रहे वही) मर्द" इस कहावतके अनुसार हम देशमें 'मर्द'की तलाश करते रहते हैं। इस मर्दकी तलाश करनेमें कांग्रेस एक साधन है।

अली बन्धुओंकी प्रतिज्ञा

मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना शौकत अलीने अपने हस्ताक्षरो सहित जो स्पष्टीकरण प्रकाशित किया है वह नीचे दिया जा रहा है।[1]

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-६-१९२१

९०. टिप्पणियाँ

वक्तकी पुकार

यह महीना खत्म होनेसे पहले अगर हमने बेजवाडा-कार्यक्रम पूरा नही किया तो यह एक दुखद घटना ही होगी। इन टिप्पणियोके प्रकाशित होते-होते इस महीनेके सात दिन निकल जायेंगे। बेकार खोनेके लिए अब एक मिनटका समय भी नही है। हम अबतक मुश्किलसे बीस लाख रुपये ही जमा कर पाये है। अगले तीन हफ्तोमे अस्सी लाख इकट्ठा करना असम्भव-सा ही लगता है। लेकिन हम काममे जुट जाये और रात-दिन एक कर दे तो असम्भव भी सम्भव हो सकता है। इक्कीस सूबे है और अगर हर सूबा अपनी हैसियत और काबिलियतके मुताबिक दे तो बाकीकी रकम आसानीसे मिल सकती है। बेजवाडा-जैसा ठोस कार्यक्रम देशके सामने पहली बार रखा गया है। अगर लोग साथ दे और काफी कार्यकर्त्ता निकल पड़े तो तीस करोड लोगोसे स्वराज्य-जैसे महान् उद्देश्यके लिए और लोकमान्यकी स्मृति-रक्षा-जैसे ऊँचे कामके लिए एक करोड रुपया जमा कर लेना कोई बडी बात नही। चाहे तो हमारे देशकी महिलाएँ ही अपने गहनोके रूपमे इतना रुपया दे सकती है, और चाहें तो शराब पीनेवाले अपनी शराबकी मदसे ही इतनी रकम जमा कर सकते है। स्वदेशी आन्दोलनसे सबसे ज्यादा फायदा उठाया है मिल-मालिकोने, वे चाहे तो एक दिनमे अस्सी लाख रुपया दे सकते है। अकेले मारवाडी अपनी पूँजीको छुए बिना ही इतनी रकम जमा कर दे सकते है, और यही बात भाटियो, मेमनो, पारसियो और बनियोके बारेमें भी है। ये सब मालदार तबके है और हमेशा सार्वजनिक कार्योमे कमोवेश मदद करते रहे है। चाहे तो सिन्धी भी इतनी रकम दे सकते है। अगर देशके मजदूर अपनी सालाना कमाईका सिर्फ बारहवाँ हिस्सा देनेको तैयार हो जाये तो इतनी रकम निकल आयेगी। मैंने कई दोस्तोसे सलाह ली है कि हिन्दुस्तानके अलग-अलग तबकोमे कौन कितना दे सकता है। नीचे एक काम-चलाऊ आधार प्रस्तुत किया जाता है

(१) नौकरीपेशा लोग अपनी माहवारी तनख्वाहका दसवाँ हिस्सा दे।

(२) वकील, डाक्टर, व्यापारी और इसी तरहके दूसरे लोग पिछले मई महीनेको आधार मानकर अपनी सालाना आमदनीका बारहवाँ हिस्सा दे।

१. देखिए "अली भाइयोकी क्षमा-याचनाका मसविदा", २१-५-१९२१।

(३) धनवान अपनी जायदादकी कीमतका ढाई सैकड़ा दे।
(४) बाकी सारे लोग कमसे-कम चार-चार आने दे।

अगर सब लोग इस हिसाबसे दें तो कई करोड़ रुपए हो जायेंगे। लेकिन असहयोग करनेवालो और असहयोगसे सहानुभूति रखनेवालो मे तो सभी तबकोके लोग है, और कोई तबका इस हदतक पूरा-पूरा असहयोगी नही हो पाया है कि चन्दा देनेकी अपनी जिम्मेदारी महसूस करे। तो इस तरह चन्दा देनेका सवाल हम सबकी ईमानदारी, तत्परता और क्षमताकी कसौटी है। उम्मीद की जाती है कि इस महीने की ३० तारीखको हम इस कसौटीपर खरे उतरेंगे।

एक सवाल बार-बार पूछा जाता है कि इतनी भारी रकमकी जरूरत किस लिए है। जवाब सीधा-सादा है। स्वराज्य-कोषमे पैसा देना निजी फायदेके लिए न सही, सार्वजनिक लाभकी बात है। यह रकम खास तौरपर चरखे बाँटने और राष्ट्रीय शिक्षण सस्थाओको चलानेमे खर्च की जायेगी। अगर उजडी-उखड़ी गृहस्थियोको भी परिवारका नाम दिया जा सके तो हमारे यहाँ लगभग छ करोड परिवार है। इन परिवारोको चरखे देकर इन्हे सच्ची और खुशहाल गृहस्थियाँ बनाना है। इसके लिए कमसे-कम एक करोड़ रुपया तो चाहिए ही; इससे कममे कताईको घर-घर नही पहुँचाया जा सकता। उसी तरह अपनी शिक्षा-प्रणालीके पुनर्निर्माणके लिए भी हमे एक करोड़से ज्यादा ही रुपयेकी जरूरत होगी।

दूसरा सवाल यह पूछा जाता है कि यह-सब पैसा खर्चने और उसका हिसाब रखनेमे ईमानदारी बरती ही जायेगी इस बातकी क्या गारटी है? इसके जवाबमे पहली बात तो यह कि हमारे पास सर्वश्री छोटानी और जमनालाल-जैसे प्रामाणिक कोषाध्यक्ष है, जिनकी ईमानदारीमे सन्देह किया ही नही जा सकता। दूसरे, हमारे पास पण्डित मोतीलाल नेहरू-जैसे बहुत काबिल, तजुर्बेकार और उतने ही खरे एव ईमानदार मन्त्री है। और तीसरे यह कि हमारे पास देशके पन्द्रह प्रतिनिधियोकी एक सदा चौकस कार्य-समिति है, जिसकी काग्रेसकी कार्रवाइयोका कारगर ढगसे नियन्त्रण करनेके लिए महीनेमे कमसे-कम एक बार बैठक होती है। यह तो हुई अखिल भारतीय पैमानेपर हिसाब-किताबकी बात। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी कुल कोषका सिर्फ चौथाई हिस्सा खर्च कर सकती है। बाकी तीन चौथाई हिस्सा प्रान्तीय (प्रादेशिक) कमेटियोके पास उनकी अपनी जरूरतोके लिए छोड दिया जाता है। और हर प्रान्तसे यह उम्मीद की जाती है कि वह अपने आय-व्ययका ठीक ब्योरा रखेगा और पैसे-पैसेको समझ-बूझकर खर्च करेगा। फिर केन्द्र और प्रान्तके आय-व्ययके पूरे हिसाबकी जाँचके लिए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी लेखा-परीक्षक नियुक्त करेगी।

जैसी व्यवस्था रुपए-पैसेके लिए है, ठीक वैसी ही सदस्योकी भरती और चरखोके निर्माण एव वितरणके बारेमे भी है। ये तीनो चीजे हमारी रचनात्मक सामर्थ्यकी सीधी और कारगर कसौटियाँ है।

काग्रेस और खिलाफतके कार्यकर्त्ताओको मेरा यह सुझाव है कि वे महीनेके आखिरी दस दिनोको कांग्रेस-दिवसोके रूपमे मनाये और बेजवाड़ा-कार्यक्रम पूरा करनेके लिए अपनी पूरी ताकत लगा दे। न भाषण देनेकी जरूरत है और न सभाएँ करनेकी।

जो काम हमारे सामने है और जिसे हमें पूरा करना है उसके लिए चुपचाप घर-घर जाना और एक-एक आदमीको समझाकर राजी करना भाषणो और सभाओसे कहीं अधिक प्रभावोत्पादक है।

गुजरातका संकल्प

गुजरातने अपना प्रादेशिक सम्मेलन और खिलाफत सम्मेलन भडौचके ऐतिहासिक नगरमें किया। दोनो सम्मेलन नर्मदाके सुरम्य तटपर किये गये। खद्दर और चरखेकी एक प्रदर्शनी भी वहाँ की गई। उसमें कई तरहके चरखे प्रदर्शित किये गये, जो इस बातके प्रमाण थे कि भारतीयोकी खोज-बुद्धिका कितना लाभकारी उपयोग किया जा सकता है। लेकिन इससे पाठकोको यह नही समझ बैठना चाहिए कि वहाँ कोई ऐसा चरखा भी प्रदर्शित किया गया था जिसमे कई तकुए थे और जो अपेक्षाकृत बहुत ज्यादा सूत कात सकता था। स्वागत-समितिके अध्यक्ष और सम्मेलनके सभापति दोनोके भाषण अत्यन्त सक्षिप्त और सारगर्भित थे। स्वागताध्यक्ष श्री हरिभाई अमीनने अपना स्वागत भाषण सिर्फ पन्द्रह मिनटमे पढकर सुना दिया। सभापति श्री वल्लभभाई पटेलने भी अपना पूरा भाषण पढनेमें तीस मिनटसे ज्यादा वक्त नही लिया। उनका यह भाषण एकदम सरल, सक्षिप्त, प्रसगानुकूल और सौजन्यसे परिपूर्ण था। मै अपने सभी पाठकोको यह भाषण पढनेकी सलाह देता हूँ। असहयोगके विरोधियोके बारेमें इसमे कही भी कटु शब्दोका प्रयोग नही किया गया है। सरकारकी आलोचना भी बडे सयत ढगसे की गई है। इस भाषणमे ज्यादातर तो असहयोगके रचनात्मक हिस्सेके ही बारेमे कहा गया है।

लेकिन इस सम्मेलनकी सबसे महत्त्वपूर्ण बात वह प्रस्ताव है जिसमे बेजवाडा-कार्यक्रममे गुजरात क्या करेगा यह तय किया गया है। इस प्रस्तावके अनुसार, तिलक स्वराज्य-कोषके लिए जो राशि निश्चित की गई थी गुजरात उससे तीन गुनी राशि यानी दस लाख रुपये इकट्ठे करेगा, पूरे-पूरे यानी तीन लाख सदस्य भरती करेगा और एक लाख यानी मूल राशिके लगभग दूने चरखे तैयार करके बाँटेगा। मै यह तो नही कहता कि अगर इतना काम पूरा कर दिया गया तो यह गुजरातके लिए कोई गर्व करने लायक काम होगा; मगर इतना जरूर कहूँगा कि अगर ३० जूनसे पहले यह-सब हो गया तो बुरा नही कहा जायेगा। दस लाख रुपया चन्दा जमा करनेके लिए अलग-अलग जिलोका अपना-अपना हिस्सा तय कर दिया गया है, ताकि ढगसे पैसा इकट्ठा किया जा सके। अभी गुजरातमे काग्रेसके ४०, ५१४ सदस्य है। १,४०,१४९ रुपया चदा किया जा चुका है, और उसमें से ३५ हजार रुपये अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीको भेजे गये है। चरखोकी तादाद २०,०५८ है।

राष्ट्रीय शिक्षाके मामलेमें गुजरात सबसे आगे, मगर वकालत छोडनेके मामलेमें सबसे कमजोर है, अभीतक सिर्फ आधा दर्जन वकीलोने अपनी वकालत छोडी है। राष्ट्रीय शिक्षामे गुजरातकी प्रगतिके विषयमे विवरणमे कहा गया है:

> गुजरातमें राष्ट्रीय शिक्षाका काम करनेवाली २४५ संस्थाएँ हैं, जिनमें सब मिलाकर ३२,१०२ विद्यार्थी हैं। इस वृद्धिका आंशिक कारण अहमदाबाद नगरपालिकाके स्कूलोको भी इसमें मिला लेना है।

गुजरात विद्यापीठकी विभिन्न परीक्षाओंमें सम्मिलित होनेवाले विद्यार्थियोंकी संख्या इस प्रकार है — बी० ए० में ४६, बी० एससी० में ४, इंटरमीडिएट आर्ट्समें ९६, इंटर विज्ञानमें ४६ और मैट्रिक परीक्षामें ५४८। उत्तीर्ण परीक्षार्थियोंकी संख्या क्रमश: ३९, २, ६५, ९ और ३७४ रही।

पंजाब आगे बढ़ रहा है

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके महामन्त्रीको पंजाबमें असहयोगके कामका जो विवरण दिया गया, उसे मैंने भी देखा। पाठकोंकी जानकारीके लिए उक्त रिपोर्टसे कुछ उत्साहवर्धक आँकड़े मैं नीचे उद्धृत कर रहा हूँ। विवरण तैयार किये जानेकी तिथि यानी ३० अप्रैलतक कुल २,०९,०८१ रुपये, १३ आने चन्दा जमा हुआ। जिस मुस्तैदीसे वहाँ चन्दा जमा किया गया उसके बारेमें मैं पहले लिख चुका हूँ। पंजाब सब सूबोंसे आगे है और इसके लिए उसे बधाई दी जानी चाहिए। अन्य किसी सूबेने भी अबतक दो लाख जमा किये हैं, यह मुझे नहीं मालूम। लेकिन जैसा कि कायदा है, ज्यादा देनेवालों से और भी ज्यादाकी उम्मीद की जाती है, इसलिए मैं आशा करता हूँ कि निर्धारित समय-के इस आखिरी महीनेमें पंजाब और भी जोर लगायेगा और सम्भव हुआ तो जितना कर चुका है उससे ज्यादा इकट्ठा करके अपने प्रथम स्थानको अक्षुण्ण बनाये रहेगा। मैंने सम्भव शब्दका प्रयोग इसलिए किया कि यद्यपि बम्बईका सूबा अभीतक बिलकुल सोया पड़ा है, लेकिन दूसरा कोई भी सूबा उसे मात दे सके ऐसी सम्भावना मुझे दिखाई नहीं देती। लेकिन पंजाबकी सामर्थ्य मैं जानता हूँ और यदि वह पक्के इरादे-से जुट जाये तो चाहे प्रथम न रह सके पर उसका दूसरा नम्बर तो कहीं जा नहीं सकता। मैं चन्दा माँगनेके मामलेमें मालवीयजी महाराजके बाद लालाजीका[1] ही नम्बर समझता हूँ। आर्यसमाजकी हलचलोंके कारण पंजाबका मध्यम वर्ग राजनैतिक आन्दो-लनोंके लिए खुले हाथों पैसा देनेका अभ्यस्त हो गया है। बाकीकी रकम अकेले अमृत-सरके व्यापारी ही पूरी कर सकते हैं। और एक हिसाबसे अमृतसरको बाकी रकम पूरी करनी भी चाहिए। फिर जालन्धर, लायलपुर, रावलपिंडी, मुलतान, गुजराँवाला, स्यालकोट, हाफिजाबाद आदि भी हैं, जिनमें से हरेक काफी बड़ी रकम दे सकता है। लाहौर खासमें भी बहुत-से धनी व्यापारी हैं, मगर मुश्किल यह है कि हममें आत्म-विश्वासकी कमी है, वरना पंजाब और बम्बई दोनों ही मिलकर सारी कसर पूरी कर सकते हैं। और कमसे-कम पंजाबसे तो हमें यह आशा करनी ही चाहिए।

शिक्षाके मामलेमें भी पंजाबका काम बुरा नहीं है। हालाँकि मार्शल लॉके दिनोंमें पंजाबके कालेजों और स्कूलोंके विद्यार्थियोंको जितना कुछ भुगतना पड़ा है, उसे देखते हुए वहाँ इस दिशामें और भी ज्यादा काम होना चाहिए था। ३५० से ज्यादा विद्यार्थी हमेशाके लिए कालेज छोड़ चुके हैं। इनमें से ८५ के करीब जो सबसे प्रतिभासम्पन्न छात्र थे, वे राष्ट्रकी सेवामें लग गये हैं। राष्ट्रीय शिक्षाका एक मण्डल भी वहाँ बन गया है। गुजराँवाला के 'गुरु नानक खालसा कालेज' ने वहाँके विश्वविद्यालयसे अपना सम्बन्ध-

१. लाला लाजपतराय।

विच्छेद कर लिया है। काग्रेसकी प्रादेशिक समितिने लाहौरमे एक नेशनल कालेज खोल दिया है। पुराने आठ स्कूलोने, जिनमे कुछ तो काफी प्रतिष्ठित है, अपनेको राष्ट्रीय शिक्षण सस्थामे परिवर्तित कर लिया है और पन्द्रह नये राष्ट्रीय स्कूल और भी खोले गये है। अगर श्री सन्थानम् (मन्त्री) इन राष्ट्रीय सस्थाओमे शिक्षा पा रहे विद्यार्थियोकी ठीक-ठीक सख्या बता सकते तो बहुत अच्छा होता। कुछ स्कूलोको देखनेका मुझे मौका मिला है, उसके आधारपर मै कह सकता हूँ कि सब मिलाकर पाँच हजार-से कम विद्यार्थी तो नही ही होगे। करीब २५ शिक्षकोने सरकारी नौकरी छोड दी है। ४१ वकीलोने प्रैक्टिस बन्द कर दी है। इनमे से १३ वकील प्रादेशिक समितिसे गुजारा पा रहे है। ८० स्थानोमे पचायते कायम हो गई है। अप्रैल महीनेके अन्तमे पजाबमे २५८ काग्रेस कमेटियाँ थी। हर कमेटीकी औसत सदस्य संख्या ७५ है। रोहतक जिलेका नम्बर पहला है, वहाँ ४७ कमेटियाँ है।

चरखेके मामलेमे तो पजाबको भारतका दूसरा कोई भी सूबा मात नही दे सकता। रिपोर्टमे यह बात बड़े गर्वके साथ कही गई है कि शायद ही ऐसा कोई घर होगा जहाँ चरखा न मिले। "कुछ ही दिन पहलेतक लोग हाथपर-हाथ धरे बैठे रहते थे, लेकिन पिछले दो महीनेसे सभी घरोमे चरखा चलानेकी पुरानी बात रूढ होती जा रही है।" पजाबमें चरखेका आम रिवाज होनेके बावजूद, यह कितने दु खकी बात है कि पजाबी लोग आसानीसे पसीना सोखनेवाली सुन्दर, मुलायम और टिकाऊ खादीके बदले मिलका भडकीला, भोडा, कड़ा और कलफदार कपडा पहनते है, जो हमारे देशके मौसमके जरा भी अनुकूल नही। इसलिए रिपोर्टमें यह पढकर कि "खाते-पीते मालदार तबकोमे खद्दर पहननेका चलन दिनोदिन बढता जा रहा है" मुझे बहुत खुशी हुई। पजाबमे जुलाहोकी भारी कमी महसूस की जा रही है। बहुतसे लोगोको यह नही मालूम कि भरती-एजेटोकी धूर्ततापूर्ण, चिकनी-चुपडी और सब्ज बाग दिखानेवाली बातोमे फँसकर पजाबी जुलाहे अपना पेशा छोडकर फौजका, हत्या करनेका पेशा अपनाते जा रहे है। किसी जमानेमे पजाबमे जुलाहोकी सख्या सारे भारतकी तुलना-में, वहाँकी आबादीके लिहाजसे, काफी ज्यादा थी। अब चूंकि बुनाईका धन्धा दिनोदिन इज्जत और अच्छी कमाईका धन्धा होता जा रहा है, यह आशा की जाती है कि तथाकथित सिपहगरीके बदनाम धन्धेके बदले पजाबी लोग इस नायाब पेशेको ज्यादासे-ज्यादा अपनायेगे।

इस तरह असहयोगके मामलेमें पजाबके आँकड़े कुल मिलाकर अच्छे ही कहे जायेगे।

असमिया कुली

मैने इस झगड़ेके बारेमे जान-बूझकर ही नही लिखा, वैसे श्री एन्ड्र्यूज और दूसरे लोगोसे जो मौकेपर पहुँचकर मामलेको सुलझानेकी कोशिश कर रहे है, मै सम्पर्क बनाये हुए हूँ। वहाँ झगड़ा कैसे शुरू हुआ, इसके बारेमे मुझे कुछ भी नही मालूम। अगर मेरा नाम लेकर किसीने मजदूरोसे मालिकोको छोड़ जानेकी बात कही हो तो मुझे उसके लिए सख्त अफसोस है। जाहिरा तौरपर यह मालिको और मजदूरोका झगड़ा

मालूम पडता है। यह बात भी मजूर की गई है कि मालिकोने मजदूरीकी दरे कम कर दी है। श्री दास और श्री एन्ड्रयूज दोनोका यही कहना है कि झगडा शुद्ध रूपसे आर्थिक है और सचमुच कुलियोकी कई शिकायते भी है। यह भी मानना ही होगा कि पुनर्गठित सरकार इस मसलेको हल करनेमे नाकामयाब रही है। यह बात भी मेरे देखनेमे आई है कि 'टाइम्स आफ इडिया' अखबारने इस झगडेका बहुत ही बेजा इस्तेमाल किया, और भारतमे ब्रिटिश व्यावसायिक हितोसे दुश्मनीका आरोप इसके मत्थे मढ दिया है। असहयोगियोपर नफरतका मनगढन्त आरोप लगानेका तो जैसे रिवाज ही हो गया है। मै इस सचाईपर पूरा जोर देना चाहता हूँ कि एक असहयोगने ही जातियोके आपसी झगडो और दगोको रोका है और आम जनताके गुस्सेको उचित दिशामे मोडा है। जाति-विशेषसे सम्बन्धित होनेके ही कारण किसीके हितको हानि पहुँचाना असहयोगका उद्देश्य नही है। उसका उद्देश्य है हर एक निहित स्वार्थको उसके हानिकारक और अपवित्र तत्त्वोसे मुक्त करना। अन्याय या पशुबलपर आधारित, या भारतके विकासके प्रतिकूल हर ब्रिटिश या भारतीय हित आज बिला शक खतरेमें है। सार्वजनिक सद्भावनाके बदले महज पशुबलपर आधारित कोई भी हित आज असहयोगकी आँचसे बचा नही रह सकता। असमके बागानोके मालिक अगर भारतीय मजदूरोके शोषणपर पोषित नही है तो उन्हे डरनेकी कोई जरूरत नही। समय आ रहा है जब अनाप-शनाप मुनाफा किसी भी तरह नही कमाया जा सकेगा। बडे कारबारके मुनाफो और वहाँके मजदूरोकी तनख्वाहोमे जमीन-आसमान-का अन्तर नही होना चाहिए। मै ये दो टूक बाते इसलिए कह रहा हूँ क्योकि मै विश्वासपूर्वक जानता हूँ कि असहयोगको सगीनोसे दबाया नही जा सकता। उसने भारतीयोके दिलोमे अपना सुरक्षित स्थान बना लिया है। मेरे जैसे कार्यकर्त्ता अपना समय आनेपर चले जायेंगे लेकिन असहयोग तो फिर भी रहेगा। मै समझता हूँ कि अभीतक भारतीय मजदूरवर्ग इतना प्रबुद्ध नही हो पाया है कि पूंजी और श्रमके पारस्परिक रिश्तेको न्यायपर आधारित करके उसे निभा सके। लेकिन वह समय आ रहा है — हमारी कल्पनासे कही तेज गतिसे आ रहा है। मैं आशा करता हूँ कि पूंजीपति, चाहे वे यूरोपीय हो या भारतीय, इस नई जागृति और नई शक्तिको जो हमारे बीचमें उभर रही है परखेंगे-समझेंगे।

मंजूरीके काबिल नहीं

कुछ अखबारोने अली बन्धुओकी सफाईको जेलकी तकलीफोसे जान बचानेवाले कमजोर आदमीका माफीनामा समझनेकी भूल की है, इसलिए उन्होने यह सुझाव दिया है कि जेलकी सजा काट रहे दूसरे राजनैतिक बन्दियोसे भी सरकारको इसी तरहका वचन लेकर उन्हे रिहा कर देना चाहिए। कोई भी सच्चा असहयोगी सरकारको किसी भी तरहका वचन देकर जेलसे नही छूट सकता और न छूटना चाहेगा। प्राय सभी राजनीतिक बन्दियोने हिंसाके इरादेसे इनकार करते हुए अपने-आपको निर्दोष बतलाया है। अली बन्धु दण्डित हो जानेपर भी अपना यह बयान तो जरूर ही देते, इस बयानसे उनका जेल जाना रुक नही सकता था। इस तरहका

अस्वीकार्य सुझाव देनेवाले लोग भी इतना तो जानते ही है कि अधिकतर सजाएँ अश्रद्धा फैलाने या भाषण न करनेकी जमानत देनेसे इनकार करनेपर ही दी गई है। वर्तमान सरकारके प्रति अश्रद्धा फैलाना, देशको सविनय अवज्ञाके लिए तैयार करना और ऊपर बताये हुए ढगकी जमानते देनेसे इनकार करना हर असहयोगीका कर्त्तव्य है। अली बन्धुओने ऐसा कोई वचन नही दिया है कि वे अश्रद्धा नही फैलायेगे या देशको सविनय अवज्ञाके लिए तैयार नही करेगे। इसलिए अगर सरकार हिंसाके उकसावेको ही दण्डनीय अपराध मानती है तो उसे इधर हालमें गिरफ्तार किये हुए करीब-करीब सभी राजबन्दियोको, उनसे कोई भी वचन लिये बिना, बिना शर्त रिहा कर देना चाहिए। जहाँतक असहयोगियोका सवाल है उन्हे इस मामलेमे सर्वथा उदासीन रहना चाहिए। उनमें से अधिकाशको जेलकी जिन्दगीको ही सामान्य जिन्दगी समझना चाहिए। बहुत-से लोग वचन देकर छूटनेके बदले खुशी-खुशी जेल जा रहे है। उन सबके नाम पढ़कर मुझे बड़ी प्रसन्नता होती है। अपना प्रण न टूटे इसकी पूरी सावधानी बरतते हुए, असहयोगीको चाहिए कि वह किसीको किसी भी तरहका वचन न दे।

विध्वंसात्मक कार्यक्रम

'लीडर' अखबारने इस कार्यक्रमका सारा श्रेय मुझे अनायास ही दे डाला है और साथ ही यह कहकर मेरी हँसी उड़ाई है कि मैंने देशको असहयोगका विध्वसात्मक पक्ष अपनानेकी सलाह दी है। उस अखबारके एक सवाददाताने तो मुझसे अनुरोध भी किया है कि कार्यक्रमके विध्वसात्मक भागको मुझे वापस ले ही लेना चाहिए। सबसे पहले तो मैं 'लीडर' और उसके संवाददाताको यह बता देना अपना फर्ज समझता हूँ कि अगर मै चाहूँ तब भी ऐसा नही कर सकता। वह अधिकार तो सिर्फ कांग्रेस और केन्द्रीय खिलाफत समितिको ही है। और कार्यक्रमके विध्वसात्मक अशमें मेरा सतत विश्वास होनेके कारण, अगर कांग्रेस और केन्द्रीय खिलाफत समितिने कभी उसे वापस ले भी लिया तो भी मैं उसपर अमल करना बन्द नही कर सकूँगा। अहिंसामें उनका सम्पूर्ण विश्वास नही भी हो सकता, एक सस्थाका तो नही ही है। लेकिन मेरे निकट तो अहिंसा ही सारी बीमारियोका एकमात्र और रामबाण इलाज है। इसलिए मै न तो वकीलोको फिरसे वकालत शुरू करनेकी सलाह दे सकता हूँ और न विद्यार्थियोको सरकारी स्कूलोमें लौट जानेकी, और न ही मै वकीलो तथा सरकारी स्कूल-कालेजोके विद्यार्थियोसे कांग्रेसके तत्त्वावधानमें, जबतक वह असहयोगपर आमादा है, सरकारी पद-ग्रहण करनेकी बात ही कह सकता हूँ।

असहयोगके प्रथम चरणमे विध्वंसात्मक अशके मौखिक प्रचारका काम पूरा हो चुका है। खिताबो, अदालतो, स्कूलो और कौसिलोके सम्बन्धमे हमे अपनी ठीक-ठीक स्थिति मालूम हो गई है। और मेरे खयालसे असहयोगियोको इस बातका सन्तोष है कि इन सस्थाओकी अब वह पहलेवाली धाक और प्रतिष्ठा नही रही। विरोधियोको जरूर इस बातकी खुशी हो सकती है कि लोगोने बहुत बड़ी संख्यामे इसमें हिस्सा नही लिया। फिर भी जिन लोगोंने इस आह्वानको सुना वे सख्यामे भले ही बहुत नही है

और उनके कामका शोर भी नही मचा, परन्तु उसका काफी कारगर प्रचारात्मक असर तो हुआ ही। और एक बात तो बिलकुल साफ है। जबतक कांग्रेसकी तीनो शर्तें पूरी नही हो जाती, सहयोग करनेकी बात सोची भी नही जा सकती।

मै मजूर करता हूँ कि अकेला 'बेजवाड़ा-प्रस्ताव' अपने-आपमे स्वराज्य कायम करनेके लिए काफी नही है। लेकिन मै उसे स्वराज्यकी दिशामे एक काफी अच्छा कदम मानता हूँ। कार्यक्रमकी पूर्ति राष्ट्रमे आत्मविश्वास पैदा करेगी और उसे इस योग्य बना देगी कि आवश्यकता पड़नेपर वह दूसरे कदम उठा सके। कांग्रेसके सदस्य राष्ट्रकी विभिन्न सभा-समितियोके लिए राष्ट्रीय प्रतिनिधियोका निर्वाचन करते है, इसलिए कांग्रेसके एक करोड सदस्य बनानेका मतलब है एक करोड निर्वाचक, जो स्वराज्यमे सच्चे निर्वाचक-मण्डलका बीजकेन्द्र होगे। बीस लाख चरखे चलते रहनेका मतलब है कि भारत गरीबीको मार भगाने, आत्मनिर्भर बनने और आर्थिक स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए कृत-सकल्प है। एक करोड़ रुपया इकट्ठा करना इस बातका जीता-जागता प्रमाण है कि देशने अपने भाग्यको सँवारनेका पक्का फैसला कर लिया है।

दूसरे मुल्कोके इतिहास हमारे मन-मस्तिष्कपर इस तरह छाये हुए है कि हम किसी भी तरह इस बातपर विश्वास नही कर पाते कि यहाँ भी तीस या सौ वर्षो-तक चलनेवाली लड़ाइयोकी पुनरावृत्ति हुए बिना और इसीलिए अच्छी सैनिक शिक्षा और काफी अस्त्र-शस्त्रोके बिना हम स्वतन्त्र हो सकते है। अपने इतिहासकी ओर हम आँख उठाकर भी नही देखते और सर्वथा भूल जाते हैं कि इस महान् देशमें सम्राट् और राजाधिराज आये और चले गये, राजवश बने और बिगड़े पर देश और जनता उनसे अछूती ही रही, उसपर कोई असर नही हुआ। यहाँतक कि पिछले महायुद्धका यह ताजा सबक भी हम याद नही रखना चाहते कि हमें फौजी तैयारियो-की इतनी जरूरत नही है जितनी कि भारतके भविष्यके बारेमे अपना दृष्टिकोण बदलनेकी। गुलामीकी आदतके कारण हमारे मनमें यह धारणा बद्धमूल हो गई है कि हम कुछ नही है, इसीलिए करोड़ोकी सख्यामे होते हुए भी हम अपने-आपको लाख-दो लाख अंग्रेजोके मुकाबले हेय समझते है, जब कि सारेके-सारे अंग्रेज शासक भी नही है। जिस दिन हम अपनेको दीन-हीन समझना छोड़ देंगे और ब्रिटिश राज्यका भय अपने अन्दरसे निकाल फेंकेंगे उसी दिन स्वतन्त्र भी हो जायेंगे। यह वैचारिक क्रान्ति इसी सालके दौरान की जा सकती है, इसमे मुझे जरा भी सन्देह नही है। और मै यह आशा करता हूँ कि भारत निर्धारित समयपर तैयार हो जायेगा। अभीतक हमने प्रतिज्ञाएँ तो बहुत की परन्तु उनमे से पूरी एक भी नही की। अगर हम कांग्रेसके पिछले दो साल पुराने प्रस्तावोको निकालकर देखें तो पता चलेगा कि जिन प्रार्थनापत्रोको भेजनेका हमने फैसला किया था उन तकको नही भेजा। अभीतक हम हर बातके लिए सरकारका मुँह ताकते रहे है, जब कि उसने हमारे लिए किसी भी मामलेमे कुछ भी नही किया है। इसीलिए हमारे अन्दर गहरी निराशा घर कर गई है। न हमें अपने-आपपर विश्वास रह गया है, न सरकारपर ही। वर्तमान आन्दोलन, निराशाकी काली रातको आशा और विश्वासकी सुनहरी किरणमे बदलनेकी कोशिश है। जब हम अपने-आपपर विश्वास करने लग जायेंगे तो मै दावेके साथ कहता हूँ

कि अग्रेज लोग भी हमपर विश्वास करने लगेगे। केवल तभी हमारे और सरकारके बीच किसी तरहके सहयोगकी आशा की जा सकती है। विश्लेषण करनेपर यही पता चलेगा कि वर्तमान सरकार और उसका सारा तन्त्र हमारी खामियो और कमजोरियो-के वैज्ञानिक अध्ययनपर आधारित है और हमारी कमजोरियोको कम करनेके वजाय वह उलटा उन्हे बढाती ही है। इसलिए असहयोग जहाँ हमारी अपनी कमजोरियोका विरोध है वही वह वर्तमान शासन-प्रणालीमें भिदे हुए भ्रष्टाचारका भी विरोध है। अग्रेज हो या भारतीय, इस प्रणालीसे सम्वन्धित होते ही हम भ्रष्ट और पतित हो जाते हैं। इनमे से किसी एक पक्षके हटते ही दोनो शुद्ध और पवित्र हो जाते हैं। मै तो सन्देहवादियोसे भी यही कहता हूँ कि परीक्षणकी खातिर ही सही, वे एक वार असहयोगके कार्यक्रमको अपनाकर तो देखे, और मै वादा करता हूँ कि यदि कार्य-क्रमको सागोपाग पूरा किया गया तो एक सालके अन्दर भारतमे स्वराज्य जरूर कायम हो जायेगा।

स्वराज्यका मतलब है आत्मनिर्भरता

वाइसरायसे मेरी भेटका जिक्र करते हुए एक आदरणीय मित्र लिखते है :

> मेरी विनम्र रायमें, आजकी परिस्थितियोंमें असहयोगी नेताओकी ऐसी मुलाकातें राजनीतिक गलती है, और हमारे आन्दोलनके लिए इसका परिणाम अनिष्टकारी हो सकता है। पंजाब और खिलाफतके अन्यायोंके पीछे स्वराज्यका प्रश्न है; और भारतके स्वराज्यका मतलब हैं साम्राज्यकी मौत। दूसरे शब्दोमे और अच्छे वातावरणमें इस मौतका मतलब होगा राष्ट्र-मण्डलके रूपमें साम्राज्य-का पुनर्जन्म। लेकिन विश्व-राजनीतिकी उन्मुक्त और उदार दृष्टिसे सम्पन्न ऐसा राजनीतिज्ञ आज है कहाँ जो ब्रिटिश हितोंसे ऊपर उठकर मानवताके आधार-भूत मूल्योंपर ध्यान दे सके? स्वराज्यके आन्दोलनकी जीतका मतलब मैं यह नहीं लगाता कि लॉर्ड रीडिंगसे[1] कुछ सुविधाएँ हथिया ली जायेंगी; मेरे निकट उसका मतलब है आत्मनिर्भरता। मेरी समझमें तो इस तरहकी उलझनो और गड़बड़ियोंको रोकनेका एक ही उपाय है और वह है समूचे राष्ट्रका समग्र रूपसे सरकारसे बातचीत बन्द करके कष्टसहनके निश्चयपर दृढ़तासे जमे रहना। सूलीपर लटका हुआ भारत ही स्वतन्त्र और मुक्त भारत होगा।

मैं लेखकसे इस वातपर तो सहमत नही हूँ कि मुलाकाते करना राजनीतिक भूल है, परन्तु हमारे दृष्टिकोणके वारेमे उनका बयान सोलहो आने ठीक है। हमें फिक्र इस बातकी नही होनी चाहिए कि अग्रेज-नेता और राजनीतिज्ञोको क्या करना चाहिए और क्या नही। हमारी सारी फिक्र और कोशिश तो अपने-आपको सही रास्ते-पर बनाये रखनेकी ही होनी चाहिए। हमारे अलगावका मतलव यह नही होना चाहिए कि हम घमण्डी और उद्धत बन जाये, या कि हम विरोधियोको अपना दृष्टिकोण भी

१. १८६०–१९३५; भारतके वाइसराय और गवर्नर-जनरल, १९२१–२६।

समझानेको राजी न हो। अगर हममे अपने ध्येयके प्रति निष्ठा और दृढता है तो हमे सारी दुनियाके पास जाकर अपनी बात समझानेके लिए तैयार रहना चाहिए। लेकिन यह आपत्ति भी कि इस तरहकी मुलाकाते खतरेसे खाली नही हुआ करती, मुझे काफी सारपूर्ण लगती है। अपनी कमसे-कम माँगपर अन्ततक डटे रहनेकी आदत न होनेके कारण आसानीसे फिसल जानेका डर तो रहता ही है।

कांग्रेसका सदस्य कौन बन सकता है?

एक मित्र पूछते है कि क्या वेश्याएँ काग्रेसकी सदस्याये बन सकती है और क्या वे लोग जो काग्रेसके सिद्धान्तोको नही मानते सिर्फ चार आने देकर ही सदस्य बन सकते है। उन अभागी बहनोको काग्रेसकी सदस्याये बननेसे किसी भी तरह रोका नही जा सकता, अगर वे विधानकी बाकी सारी शर्ते पूरी करती हो। अगर चोर भी सदस्यता-की शर्तोको पूरा करते हो तो उन्हे भी काग्रेसमे शामिल होनेका अधिकार है और वे इसकी मॉग कर सकते है। अगर समाजके पतित और गलित हिस्सोमे काग्रेसके सदस्य बननेकी उमंग पैदा होती है तो उसे भावी नव-निर्माणका एक शुभ सकेत ही समझना चाहिए। लेकिन सिर्फ तादाद बढानेके ही लिए हम लोगोको सदस्य बनाये या सदस्य बननेके लिए कहे, यह तो कदापि उचित नही। फिर यह बात भी बिलकुल साफ है, कमसे-कम मेरे निकट तो है ही, कि जो काग्रेसके सिद्धान्तोको मजूर नही करता और उसके प्रतिज्ञा-पत्रपर दस्तखत नही करता वह सदस्य नही बन सकता। सदस्य बननेकी यह कसौटी वैसे है तो बहुत आसानपर साथ ही निहायत जरूरी भी है·

१ पूरे इक्कीस वर्षकी उम्र।

२ शान्त और वैध उपायोसे स्वराज्य प्राप्त करनेकी अभिलाषा और उसके लिए प्रयत्न।

३ वार्षिक चार आना चन्दा।

कोई भी स्त्री-पुरुष, सहयोगी या असहयोगी, अगर ये आसान शर्ते पूरी करता है तो उसे बिना ज्यादा पूछताछके सदस्य बनाया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–६–१९२१

९१. वाइसरायका भाषण

वाइसराय महोदयने शफी साहबके भाषणको 'भोजनके बाद की वक्तृता' कहा है। जो बात उन्होंने शफी साहबके भाषणके बारेमे कही है ठीक वही उनके अपने भाषणके बारेमें भी कही जा सकती है। मेरे विद्यार्थी-कालमे इग्लैंडके विभिन्न प्रधान मन्त्रियोके जो तथाकथित ऐतिहासिक भाषण मैन्शनहाउसमे हुआ करते थे, मैं उनका काफी बारीकीसे अध्ययन किया करता था। वे भाषण हमेशा ही मुझे कुछ अवास्त-विकतापूर्ण लगा करते थे। और वाइसराय महोदयके भाषणको ध्यानसे पढनेके बाद मुझे यह कहते हुए दु ख होता है कि उसमें भी वैसी ही अवास्तविकता दिखाई देती है। इसका यह मतलब नही कि लॉर्ड रीडिंगने जान-बूझकर अपने उस भाषणमें अवास्तविकताका पुट दिया है। इसके विपरीत उन्होंने तो आस लगाये बैठे भारतको एक सच्चा सन्देश देनेकी ही कोशिश की है, जो उनके भाषणसे साफ झलकता है। लेकिन मेरी विनम्र रायमें उन्हे सफलता नही मिली, क्योकि वाइसरायके पदपर आसीन होनेके कारण उनकी कुछ अपनी सीमाएँ हैं। उदाहरणार्थ वे भी अपने पूर्ववर्तियोके समान इस परम्परागत दावेसे ऊपर नही उठ सके कि ब्रिटिश शासक कभी गलती कर ही नही सकता। उन्होने यह मत प्रतिपादित कर दिया कि "नि.सन्देह भारतमें रगगत असमानताका कोई भी चिह्न नही हो सकता और न होना चाहिए"। भार-तीयोको ऐसा मत वास्तविकतासे कितना परे लगता है यह कहनेकी जरूरत नही, हमारा दीर्घकालीन अनुभव तो इसकी ठीक उलटी बात ही जाहिर करता है। औसत अग्रेजके लिए जातीय श्रेष्ठता मनका एक आवेग, बल्कि कहना चाहिए कि धर्म बन गया है। और वह इसे छिपानेकी कोई कोशिश भी नही करता। अन्य उपनिवेशोकी तरह भारतमें भी अग्रेज अपनी इस वृत्तिको हमारे ऊपर थोपे रहता है। यहाँतक कि कानूनमें भी इस जातीय श्रेष्ठताको स्थान दिया गया है। पहलेकी बहुत-सी असफलताओ-को वाइसरायने अपने भाषणमें कही भी खुले दिलसे स्वीकार नही किया है। इसी-लिए उसमें नया अध्याय आरम्भ करनेकी, नये सिरेसे काम करनेकी सहज आकाक्षाका अभाव दिखाई देता है।

मेरी विनम्र रायमे, वाइसराय महोदयने 'ब्रिटिश राज्यके बुनियादी सिद्धान्त' के बारेमे जैसी अनुपयुक्त बात कही है लेकिन उससे भी कही गई-बीती बात उन्होने मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना शौकत अलीके बारेमें कही है। मै इस बातको मजूर करता हूँ कि अपने भाषणमे उन्होंने सावधानी तो बहुत ही ज्यादा बरती है। किसीकी भावनाओको चोट न पहुँचे, इसकी उन्होने पूरी कोशिश की है। लेकिन वास्तवमें देखा जाय तो भावनाओंको चोट पहुँचानेका कोई प्रश्न ही नही है। यदि अली बन्धुओने गलती की होती तो उनको माफ करनेकी कोई जरूरत नही थी। अली बन्धुओसे वह बयान तो मैने दिलवाया था, केवल मेरी ही प्रेरणासे वह दिया गया था। वह सफाई दोस्तोको दी गई है, सरकारको नही। और उस बयानका मशा दण्डसे

वचना नही, अपनी आत्मा और अपने दोस्तोके सम्मुख अपनी स्थितिका स्पष्टीकरण करना ही है। ऐसी सूरतमे उन्हे यह आश्वासन देना कि जबतक वे अपने वचनका पालन करते रहेगे, उन्हे गिरफ्तार नही किया जायेगा, यदि आपत्तिजनक न भी माना जाये तो उनपर एहसानका बेकार बोझ लादना ही हुआ। लॉर्ड रीडिंगकी सरकार अली बन्धुओपर जब उसका जी चाहे मुकदमा चलानेके लिए आजाद है।

असहयोगके इस आन्दोलनमे छिपे या खुले तौरपर कही भी कूटनीतिकी गुंजाइश नही है। यहाँ तो सिर्फ एक ही कूटनीति है और वह है सत्य कहना और हर कीमत-पर उसका पालन करना। वाइसरायने मुझे अली बन्धुओके भाषण दिखाये थे, मुझे उनमे से कुछ अंश पढनेमें ठीक नही लगे। उनसे हिंसाको भड़कानेवाला अर्थ निकाला जा सकता था। इसके लिए अली बन्धुओकी गिरफ्तारी हो सकती है या नही, इसकी जरा भी चिन्ता किये बगैर मैंने मन-ही-मन पक्का फैसला कर लिया कि उन्हे अपनी सफाई देनी ही चाहिए और यही सलाह मैंने उन्हे दी। वाइसराय महोदयसे भी मैंने यही कहा था कि अगर वे असहयोगियोके सन्देहो और अविश्वासोको मिटाना चाहते है तो कूटनीति छोडकर बिलकुल सीधा और खरा व्यवहार करे। असहयोगीको रक्षा या शरणकी जरा भी जरूरत नही है; वैसी सूरतमे वाइसराय महोदयको भी पारस्परिक विश्वास पैदा करनेके लिए शासक-वर्गके अपराधियोको पनाह नही देनी चाहिए।

शासक-वर्गोके लिए सचमुच न तो वर्तमान भारतमे कोई स्थान है और न भावी भारतमे रहेगा। इसलिए अगर वाइसराय महोदय अपने इस विश्वाससे चिपटे रहे कि "न्यायपूर्ण शासन करनेके हमारे इरादोका भारतीय दिल खोलकर स्वागत करेगे" तो उन्हे अपने इस कथनकी गलती भी मालूम हो जायेगी। मै भविष्यवाणी कर सकता हूँ कि भारतके भविष्यके लिए इस बातका कोई मूल्य नही रहेगा कि अंग्रेजोके इरादे क्या है, उसके लिए तो जिस चीजका मूल्य होगा वह है भारतीयोका अपना इरादा। भारतीयोका इरादा बिलकुल उजागर है। अपनी मर्जीके मुताबिक अपना राज-काज खुद करनेकी हम भारतीयोकी माँग दिनोदिन जोर पकडती जा रही है। हम भारतवासी इस बातको बहुत अच्छी तरह समझ गये है कि कोई भी अच्छीसे-अच्छी सरकार अपनी सरकारका, स्वराज्यका स्थान नही ले सकती।

तो वाइसराय महोदयके इरादोके बारेमे हमे कोई सन्देह, कोई आशका नही है, क्योकि मुझे विश्वास है कि उनके इरादे नेक है; जो भी भय और आशका है वह उस आदर्शके बारेमे है जिसपर वे चल रहे है। वे आज नही; भविष्यमे पता नही कब भारतके ऊँचे भविष्यकी बात सोचते है। इसके विपरीत, असहयोगियोका ऐसा खयाल है कि वर्तमान शासन-प्रणाली भारतके ऊँचे भवितव्यका आज ही गला घोट देनेपर उतारू है। वह शासन-प्रणाली भारतको अगर हमेशाके लिए न सही तो कमसे-कम काफी लम्बे अर्सेतक गुलाम बनाकर रखनेके लिए ईजाद की गई है। कभी-कभी छोटे-मोटे अन्तर या मतभेदके पीछे मूलभूत आदर्शोका मतभेद या अन्तर होता है। इसलिए जब कोई यह सोचता है कि भारतका भावी लक्ष्य भले ही स्वतन्त्रता हो किन्तु आज तो उसे किसीके आश्रयमे ही रहना चाहिए, तो मुझे कहना होगा कि

उसका आदर्श भारतके आदर्शसे सर्वथा भिन्न है। स्वर्गीय लोकमान्य तिलकने बिलकुल ठीक कहा था — स्वराज्य भारतका जन्मसिद्ध अधिकार है। इतने लम्बे समयतक भारतको उसके इस जन्मसिद्ध अधिकारसे वंचित रखा गया है। इसलिए अब यदि वह व्यग्र हो उठे तो इसमें आश्चर्य ही क्या!

लॉर्ड रीडिंगने इस मन्तव्यको पढ़ा और सुना ही होगा और अब वे इसकी सचाईके भी कायल हो जायेंगे कि सरकारका कोई भी काम, दिखनेमें कितना ही अच्छा क्यों न हो, अगर उससे हालतमें पूरा सुधार नहीं होता तो कमसे-कम असहयोगी तो उसपर बुरी नीयतका आरोप लगायेंगे ही और यही कहेंगे कि वह काम भारतकी गुलामीको काफी लम्बे अर्सेतक बनाये रखनेके लिए ही किया गया है। आज ब्रिटिश राज कलंकित हो गया है, उसपर सन्देह किया जाने लगा है। जलियाँवालाके बेगुनाह लोगोंके खूनसे उसके हाथ रँगे हुए हैं और इस्लामके प्रति विश्वासघातके कलंकका टीका उसके माथेपर लगा हुआ है। जिस प्रकार जहरके कटोरेमें भरे शुद्ध दूधको भी हर समझदार आदमी जहर ही समझता है, उसी तरह ब्रिटिश सरकारके हर कामको उसके पहले किये हुए कामोंकी रोशनीमें ही देखा-परखा जायेगा। भारतकी बेचैनीको मिटानेका सिर्फ एक ही तरीका है, बेचैनीके कारणोंको मिटाइए। पद या सुविधाओंकी मिठाससे कड़वाहटको ढँकनेसे कुछ न होगा। पद और सुविधायें लुभावने हो सकते हैं पर हैं बेमतलब ही, अगर उनसे बेचैनीके मूल कारणोंको कारगर ढंगसे मिटाया नहीं जा सकता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–६–१९२१

९२. पत्र : नरमदलीय भाइयोंको

प्रिय मित्रो,

मैंने जिन लोगोंसे काम करनेकी शिक्षा पाई है, वे 'माडरेट' या नरमदलीय ही माने जाते हैं। मैं उन्हींकी संगतिमें रहा हूँ। इसलिए अब यह देखकर मेरे मनको बड़ा सन्ताप होता है कि मेरे विचार आप 'माडरेट' भाइयोंसे भिन्न पड़ने लगे हैं। कुछ तो परिस्थितियोंके कारण और कुछ अपने स्वभावके कारण, मैं देशके किसी भी बड़े दलमें कभी शामिल नहीं रहा। पर मेरे जीवनको गरम दलके लोगोंकी अपेक्षा नरम दलके लोगोंने ही अधिक प्रभावित किया है। दादाभाई नौरोजी, गोखले, बदरुद्दीन तैयबजी,[1] फीरोजशाह मेहता[2] — सभी नाम देशके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

१ १८४४–१९०६; न्यायाधीश, विधान सभाके सदस्य; १८८७ में मद्रास कांग्रेस अधिवेशनके अध्यक्ष।

२. १८४५–१९१५; सन् १८६८ में बैरिस्टरीकी परीक्षा पास करनेवाले प्रथम पारसी भारतीय। सन् १८७२ से १९१५ तक बम्बई कारपोरेशनके सदस्य, ३० सालतक बम्बई विधान परिषद्के सदस्य; कांग्रेसके जन्मसे ही उससे सम्बद्ध; १८९० और १९०९ में कांग्रेसके अध्यक्ष।

देशके प्रति उनकी सेवाओको भुलाया नही जा सकता। उन्होने देश-भरमें मेरे जैसे अनेक व्यक्तियोको प्रेरणा दी है। मुझे आपमें से अनेक भाइयोके सम्पर्कमे रहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है और उसकी सुखद स्मृतियाँ मेरे साथ है। फिर वह कौनसी चीज है जिसने मुझे आप लोगोसे दूर करके राष्ट्रवादी दल (नेशनलिस्ट पार्टी)की पाँतमे ला खडा किया? मेरे विचार आप लोगोके मुकाबले 'नेशनलिस्टो'के विचारोसे ही क्यो ज्यादा मिलते है? यह तो मै मान नही सकता कि आपका देश-प्रेम 'नेशनलिस्टो' से घटकर है। मै नही मान सकता कि आप देशकी भलाईके लिए 'नेशनलिस्टो' के मुकाबले कुछ कम त्याग करनेके लिए तैयार है। और 'माडरेट' दलके पास बुद्धि, निष्ठा और योग्यता भी यदि अधिक नही तो कमसे-कम उतनी तो अवश्य है जितनी कि 'नेशनलस्टिो'के पास। इसलिए अन्तर दोनोके अपने-अपने आदर्शोका ही है।

मै यहाँ विभिन्न आदर्शोकी बहस छेडकर आपको उबाना नही चाहता। अभी इस समय तो मै असहयोग आन्दोलनके रचनात्मक कार्यक्रमकी कुछ बातोकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करूँगा। आपको शायद यह शब्द ही पसन्द न आये। हो सकता है कि आप इस कार्यक्रमकी कई बातोको सख्त नापसन्द करे, मै जानता हूँ कि आप नापसन्द करते ही है। पर यदि आप इतना मान ले कि असहयोगी भी देशसे उतना ही प्रेम करते है जितना कि आप लोग, तो क्या उसके बाद भी आप कार्यक्रमकी उन बातोको ठीक नही समझेगे जिनके बारेमे कोई मतभेद नही हो सकता? मेरा इशारा शराबबन्दीकी तरफ है। मेरा अनुरोध है कि आप इसके बारेमे मेरे कथनको ही प्रमाण मान ले। मै कहता हूँ कि समूचा देश शराबके अभिशापसे पीडित है। जिन अभागोको इसकी लत लग गई है, हमे उनकी मदद करनी चाहिए। इस लतको छोड़नेमे हमे उनकी सहायता करनी चाहिए। शराबखोरीके खिलाफ जनताकी भावनाएँ उमड पडी है। मेरा अनुरोध है कि आप इसका लाभ उठाये। शराबखोरीके खिलाफ यह आन्दोलन अपने-आप चल पडा है। विश्वास रखिये कि इस आन्दोलनके सिलसिलेमे इस बातका कोई महत्त्व ही नही कि शराबकी चुगीसे होनेवाली सरकारी आमदनीसे सरकार वचित हो जायेगी। देश तो बस यही चाहता है कि इस बुराईको जितनी जल्द खत्म किया जा सके, कर दिया जाये। आज हमारे देशमे इस बुराईके खिलाफ जनता जितनी एकता और प्रबुद्धताके साथ खडी हुई है, इतनी यदि ससारके अन्य किसी देशमे हो गई होती तो वहाँ शराबका बचे रहना नामुमकिन हो जाता। नागपुरमे जन-समुदायने गलतियाँ या ज्यादतियाँ जो भी की हो, पर उसका उद्देश्य सर्वथा उचित और न्यायपूर्ण था। जनता इसपर तुली हुई थी कि जीवनकी शक्ति और स्फूर्तिमे घुन लगानेवाले इस अभिशापसे पिण्ड छुडाया जाये। एक बडी वजनी-सी दलील इस सिलसिलेमे दी जाती है कि हिन्दुस्तानको जबरदस्ती सयमित या होशो-हवास बनाये रखनेकी, मार-मारकर हकीम बनानेकी कोशिश नही करनी चाहिए और जो शराब पीकर होशो-हवास खोना चाहते है उनको पीनेकी सुविधा होनी चाहिए। आप इस दलीलके चक्करमे नही आयेगे। राज्यका काम लोगोकी बुराइयोके लिए सहूलियत जुटाना नही होता। हम वेश्यावृत्तिको कायदेसे चलाने और लाइसेसशुदा बनानेकी कोशिश तो नही करते। हम

चोरोको चोरी करनेकी सुविधाएँ तो नही जुटाते। मैं शराबखोरीको चोरी और यहाँ-तक कि वेश्यावृत्तिसे भी ज्यादा निन्दनीय मानता हूँ। क्या शराबखोरी अक्सर ही इन दोनो बुराइयोको पैदा नही करती? मेरा अनुरोध है कि आप शराबकी चुगीसे होनेवाली आमदनी और शराबके ठेकोका नामनिशान मिटानेमे देशकी जनताका साथ दें। यदि उनका दिया हुआ रुपया-पैसा लौटा दिया जाये तो ऐसे कई शराब-विक्रेता हैं जो खुशी-खुशी अपनी दूकाने बन्द कर देगे।

सवाल उठ सकता है कि 'बच्चोंकी पढ़ाई-लिखाईका क्या होगा?' मैं आपसे यह कहनेकी धृष्टता करता हूँ कि शराबकी चुंगीसे मिलनेवाले धनसे देशके बच्चोकी पढ़ाई-लिखाईका इन्तजाम करना हमारे लिए बड़ा ही शर्मनाक है। आगे आनेवाली पीढियाँ हमको कोसेगी, और बिलकुल ठीक कोसेगी। अगर हम यह फैसला करनेकी बुद्धिमानी नही करते कि हम शराबखोरीको खत्म करके रहेगे, चाहे फिर अपने बच्चो-की शिक्षाका इन्तजाम न कर पाये। लेकिन इसकी नौबत नही आयेगी। हम स्कूल-कालेजोमे कताई शुरू करवाकर शिक्षाको खर्चके मामलेमे आत्मनिर्भर बना सकते है। मैं जानता हूँ कि आपमें से कई भाई मेरे इस ख्यालको मजाकमें उड़ा देते हैं। पर मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि शिक्षाकी समस्याका इससे अच्छा हल कोई दूसरा नही। देश अब और ज्यादा करोका भार बरदाश्त नही कर सकता। मौजूदा कर भी बहुत भारी पड़ते है। अगर निकट भविष्यमे जनताकी दिन-दिन बढ़ती गरीबीको रोकना हो और उसमे काफी कमी करनी हो तो हमे अफीम और शराबकी चुगीसे होनेवाली आमदनी ही नही अन्य करोकी आमदनी भी छोड़ देनी पड़ेगी।

इसी सिलसिलेमे सवाल उठता है मौजूदा शासन-पद्धतिका। 'सुधार' जनतामें और अधिक गरीबी लाये हैं। शासनका सालाना खर्च बढ़ गया है। मौजूदा शासन-पद्धतिका गहराईसे अध्ययन करनेपर मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि इसमें थोड़ी-बहुत तब्दीलियाँ करने, पैबन्द लगानेसे काम नही चलेगा। आज समयकी सबसे बड़ी माँग है — क्रान्ति, एक व्यापक क्रान्ति। क्रान्ति शब्दसे आप नाराज होगे। पर मैं जिस क्रान्तिकी बात करता हूँ वह खून-खराबीवाली क्रान्ति नही है, वह विचार-जगत्की क्रान्ति है, जो देशके उच्चतर उद्देश्योकी दृष्टिसे हमे जीवनके माप-दण्डोमे आमूल-चूल परिवर्तन करनेको विवश कर दे। मैं आपको बिना किसी लाग-लपेटके बतला देना चाहता हूँ कि सिविल सर्विसके ऊँचे-ऊँचे अफसरोके वेतनोमे दिन-दिन जैसी वृद्धि होती जा रही है उसे देखकर मुझे बड़ा डर लगने लगा है, और उम्मीद है कि आपको भी डर ही लगता होगा। शासन करनेवाले जिस ढंगका जीवन जी रहे है उसमें और उनके पैरों तले कराहनेवाले करोड़ो शासितो या प्रजाके जीवनमे कही भी कोई सम्बन्ध दीखता है? गरीब जनताके नगे और छिले-झुलसे हुए से बदन मेरे इस कथनकी सचाईका प्रमाण हैं। अब आप लोग शासक-वर्गमे आ गये हैं। लोगोंको अपने बारेमें तो यह कहनेका मौका न दीजिए कि आपके जूतोके नीचे भी आपसे पहलेके शासको या सहयोगियोके मुकाबले जनता किसी कदर कम नही कुचली जा रही है। क्या जरूरी है कि आप भी शिमलासे ही शासन चलाये? क्या यह भी जरूरी है कि आप भी उसी नीतिपर चले जिसकी आप अभी एक वर्ष पहले सख्त आलोचना किया

करते थे? यह आप ही के शासनमें हुआ है कि एक आदमीको अपनी निश्चित राय रखनेके अपराधमे कालेपानीकी सजा मिली। अब आप यह दलील तो दे नही सकते कि वह लोगोको हिंसाके लिए भड़का रहा था, क्योकि आप अभी कुछ ही दिन पहलेतक ऐसी दलीलोको स्वय ठुकराते रहे है। अली भाइयोने अपनी सफाई पेश कर दी है और उनके भाषणोमे हिंसाका पुट तक होनेका सन्देह भी नही किया जा सकता। अब यदि आप सोचें कि उन्होने दण्डके भयसे सफाई दी है, तो वह देशके प्रति आपका अन्याय, निर्दयतापूर्ण अन्याय होगा। देशमे एक नयी भावनाका सचार हुआ है। बाहरके किसी भी न्यायाधीशके मुकाबले, अपने अन्दर बैठे न्यायाधीशका भय कही ज्यादा बड़ा होता है। क्या आप जानते हैं कि पिछले छः महीनोके दौरान आप ही के देशवासी, अनेक उत्साही नौजवान सिर्फ इसलिए जेल गये है कि वे जमानते देना अपमानजनक मानते है, और इसलिए उन्होने अपनी जमानते देनेके बदले जेल जाना कही अच्छा समझा। और आप ही के शासनमे बिलकुल ही बेगुनाह मोपला[1] लोगोपर तरह-तरहकी ज्यादतियाँ करके उनके धैर्यकी कड़ी परीक्षा ली गई है और मोपलाओने अभीतक धैर्यको अपने हाथसे छूटने नही दिया है। मुझे यह सोचकर बडी सान्त्वना मिलती है, और सचमुच मेरा यही विश्वास है कि अमन और इन्साफके नामपर आजकल जो अत्याचार किये जा रहे हैं उनके पीछे आपका हाथ नही है। परन्तु आप जनताको या मुझे यह भी नही कहने देते कि ब्रिटिश सरकार आपकी आडमे अपना उल्लू सीधा कर रही है और जिन बातोमे वह आपकी आड नही लेती उनमें आप लाचारीके मारे कुछ नही कर पाते। लेकिन इसपर बहस करनेके लिए जरूरी होगा कि हम दोनोके अपने-अपने आदर्शोकी चर्चा उठाई जाये जिसे मैं इस समय ठीक नही समझता। पर यदि आप देशकी जनताकी शराबबन्दीके काममें ही मदद करे, तो भी वह आपका एक बड़ा योगदान होगा और आपकी पिछली अनेक सेवाओमे एक यह सेवा और जुड़ जायेगी, और सम्भव है कि यही एक काम हाथमे लेनेपर आपको अन्य कई उपयोगी काम या सेवाएँ नजर आने लगे।

सदैव आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ८–६–१९२१

१. दक्षिण भारतके मलाबार प्रदेशके निवासी मुसलमान।

९३. गौओंको बचाओ!

प्रोफेसर वासवाणीने गो-रक्षाका झंडा उठा लिया है। मुझे इस खतरेके आनेकी आशंका थी; किन्तु खतरा समयसे पहले ही सामने आ गया है। मैंने सोचा था कि यह काम उस समय उठाया जायेगा जब भारत इससे शान्तिसे निवटनेकी स्थितिमें होगा। मेरी नम्र सम्मतिमे प्रोफेसर वासवाणीको यह आन्दोलन किसी बेहतर साइतमें शुरू करना चाहिए था। मुसलमानोके पूरे सहयोगके बिना गो-रक्षाके लिए हिन्दू जो भी आन्दोलन शुरू करेंगे उसका विफल होना निश्चित है।

गो-रक्षाका सबसे बड़ा और अच्छा आन्दोलन यही है कि हिन्दू खिलाफत आन्दोलनमे शामिल हो। इसीलिए खिलाफतको मैंने कामधेनु बताया है।

हिन्दुओके लिए जीवन-मरणके इस सवालपर उनकी भावनाका आदर करनेके लिए मुसलमान भरसक कोशिश कर रहे हैं। मुस्लिम लीगने हकीम श्री अजमलखाँकी अध्यक्षतामे अमृतसरमे अभी दो साल पहले गो-रक्षाके बारेमें एक प्रस्ताव पास किया। मौलाना अब्दुल बारीने इसपर लेख लिखे है। अपने हिन्दू भाइयोंका खयाल करके अली बन्धुओने अपने घरमे गो-मांसका प्रयोग बन्द कर दिया है। मियाँ छोटानीने पिछली बकरीदपर अकेले बम्बईमे सैकड़ों गौओकी जान बचाई। अत. इस सम्बन्धमे हम यह नही कह सकते कि मुसलमान हाथपर-हाथ धरे बैठे रहे हैं।

अगर हमने गो-रक्षाके लिए मुसलमानोको राजी करनेकी जल्दी मचाई तो निश्चित मानिए कि इसका मतलब अपने उद्देश्यको विफल करनेका सामान जुटाना होगा। मुसलमान अपना वचन नही निवाहते, ऐसा कुछ मैंने तो नही देखा। लेकिन पूर्वग्रहोंके मिटनेमे समय तो लगता ही है, और यही बात मुसलमानोंके पूर्वग्रहोंके सम्बन्धमे भी लागू होती है। प्रबुद्ध मुसलमानोका मत हमारे पक्षमें है। आम लोगोपर उसका असर होनेमे कुछ समय तो लगेगा ही। इसलिए हिन्दुओको धीरज रखना चाहिए।

शिकारपुरके हिन्दुओने एकमत होकर गो-वध रोकनेके पक्षमे मत दिया। लेकिन इसमे आश्चर्य क्या है? क्या कोई ऐसा हिन्दू भी हो सकता है जो इसके विपक्षमें मत दे? अगर इस सर्वसम्मत विचारका उपयोग मुसलमानोका विरोध तोड़नेके लिए किया जाता है तो इससे उनका विरोध बढ़ेगा ही। हिन्दू सदस्योंको इस सवालपर मुसलमानोकी भावना जाननी चाहिए थी, उसका पता लगाना चाहिए था। और जब-तक वे मुसलमानोंका मत अपने विपक्षमे पाते तबतक उन्हे इस सवालपर मतदान नही कराना चाहिए था।

हमे हमेशा इस बातको याद रखना चाहिए कि एक ऐसा पक्ष है जो अपने स्वार्थके लिए हम हिन्दू-मुसलमानोको अलग-अलग रखनेके लिए बराबर प्रयत्नशील है। यह पक्ष इस मामलेमे कभी हिन्दुओकी भावनाओका सम्मान करनेका भी दिखावा कर सकता है। मैं तो उससे बराबर सावधान ही रहूँगा और कभी उसका विश्वास

नही करूँगा। इसलिए मैं अपने शिकारपुरवासी मित्रोको पूरे आग्रहके साथ सलाह दूंगा कि अभी वे मुसलमान भाइयोकी सहमतिका इन्तजार करे।

हाँ, अगर उनसे वने तो वे इस वीच मासाहारका पूरी तरह त्याग करके दिखाये, ताकि उनके मुसलमान भाइयोको दूसरे मास गो-मासकी तुलनामे सस्ते दामोपर मिल सके। वे यह दिखाये कि किसी गाय या गायकी सन्तानको कष्टमे पाकर, या स्वय हिन्दुओके हाथो दुर्व्यवहार सहते देखकर उन्हे सचमुच लज्जाका अनुभव होता है। वे अपनी गोगालाओको ऐसा रूप देकर दिखाये कि वे वूढे और कमजोर गोधनके लिए आश्रय-स्थल होनेके साथ-साथ आदर्श दुग्धशालाओका भी काम करे। वे अपनी गोशालाओमे अच्छीसे-अच्छी नस्लके पशु तैयार करके दिखाये। अगर वे ऐसा करे तो वह गोमाताकी सच्ची सेवा होगी। शिकारपुरवासियोका कर्त्तव्य यह है कि उनमे से एक-एक व्यक्ति सच्चा असहयोगी वन जाये, ताकि खिलाफतके प्रति किये गये अन्यायका परिशोधन जल्दी हो सके। विश्वास कीजिए, अगर वे खिलाफतकी रक्षाके लिए अपनी सामर्थ्य-भर प्रयत्न करके दिखायेगे तो उसका मतलव यह होगा कि उन्होने गायकी रक्षा भी कर ली।

हर हिन्दूको यह वात एक आन्तरिक विश्वासकी तरह माननी चाहिए कि गायकी रक्षा सिर्फ मुसलमानोके सौहार्दसे ही हो सकती है। हमे स्पष्ट रूपसे स्वीकार करना चाहिए कि गायकी सम्पूर्ण रक्षा पूरी तरह मुसलमानोकी सद्भावनापर निर्भर है। जैसे मुसलमान हमे अपनी मर्जीके मुताबिक नही झुका सकते वैसे ही हम भी उन्हे अपनी मर्जीके मुताबिक नही झुका सकते। हम लोग समान और स्वतन्त्र साझेदारीके सिद्धान्तका विकास कर रहे हैं। हम डायरशाहीके विरुद्ध, भय और आतकके विरुद्ध लड़ रहे हैं।

गो-रक्षा हर हिन्दूके हृदयकी सबसे प्यारी कामना है। यह एक सहत विश्वास है और सभी हिन्दुओमें समान रूपसे व्याप्त है। जिसका गो-रक्षामे विश्वास नही है, वह हिन्दू नही हो सकता। यह एक उदात्त विश्वास है। प्रोफेसर वासवाणीने गायकी प्रशसामे जो-कुछ कहा है, मैं उसके एक-एक शब्दसे सहमत हूँ। मेरे विचारसे गायकी पूजा निरीहता और भोलेपनकी पूजा है, और गो-रक्षाका मतलव है दीनो और असहायोकी रक्षा करना। प्रोफेसर वासवाणीने ठीक ही कहा है कि गो-रक्षाका अर्थ है मनुष्य और पशुके वीच वन्धु-भाव। यह एक श्रेष्ठ और उदात्त भावना है, जिसका विकास अथक परिश्रम और तपस्याके बलपर किया जा सकता है। यह किसीपर जवरदस्ती थोपी नही जा सकती। जोर-जवरदस्तीसे गो-रक्षाका प्रयत्न करना गो-रक्षा शब्दका दुरुपयोग करना है। कहते है, प्राचीन कालमे ऋषिगण गायके कल्याणके लिए तपस्या करते थे। हमे भी उन ऋषियोके चरण-चिह्नोपर चलकर तपस्या करनी चाहिए, जिससे हम इतने पवित्र हो जाये कि गो-रक्षा और गो-रक्षासे जिन वातोका वोध होता है सो सव हम कर सके।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–६–१९२१

९४. कताई बनाम बुनाई

सेवामें

सम्पादक

'यंग इंडिया'

११ मईके पत्रमें डा० एस० बी० मित्रका पत्र और उसपर आपकी टिप्पणी,[1] दोनोंको मैंने बड़े ध्यानसे पढ़ा। टिप्पणीमें आप कहते हैं कि "हाथ-कताईमें वे सभी बातें आ जाती हैं जिनका पत्र-लेखकने सुझाव दिया है बल्कि उसमें कुछ और भी विशेषताएँ हैं।" मानो आपका मतलब यह है कि हाथ-कताईमें हाथबुनाई तथा और भी कुछ चीजें शामिल हैं।

लेकिन मेरा तो खयाल है कि अधिकांश लोगोंके लिए कताईका मतलब सिर्फ कताई है, और चूंकि आपका सारा जोर चरखे और कताईपर रहा है; और बुनाई तथा हाथकरघेपर स्पष्ट रूपसे आपने कोई जोर नहीं दिया है, इसलिए करघे और बुनाईकी बात लोगोंके खयालसे उतर गई है। चरखेकी शिक्षा और कताई-प्रतियोगिताके बारेमें तो हम बहुत सुनते हैं, लेकिन ऐसा सुननेको नहीं मिलता कि अमुक स्थानमें, नये करघे बैठानेकी बात तो दूर बिलकुल ही पुराने ढंगके करघे क्यों न हों, हजारोंकी तादादमें बैठाये गये हैं। हर दस नये चरखोंको चालू करनेके साथ-साथ तत्काल एक करघा भी अवश्य चालू करना चाहिए — फिर चाहे वह खोड़ियोंवाला हो या उससे कुछ बेहतर ढंगका या उड़न फिरकीवाला। अगर ऐसा नहीं किया गया तो मौजूदा करघोंपर बहुत दबाव पड़ेगा और हर बुनकरके घर सैकड़ों मन हाथ-कते सूतका ढेर लग जायेगा, क्योंकि बुननेमें आसान होनेके कारण वह तो मिलका सूत बुनना ही ज्यादा पसन्द करता है। अभी पिछले सालतक देशमें विदेशी या देशी मिलोंका जितना सूत रहता था, उसके अनुपातमें करघोंकी संख्या भी ठीक थी; लेकिन अब देशमें हाथकते सूतका उत्पादन बहुत बढ़ जानेके कारण वह बात नहीं रह गई है, और इस स्थितिको सुधारनेका एकमात्र उपाय है उसी अनुपातमें करघोंकी संख्या बढ़ाना — अर्थात् मोटे तौरपर हर दस चरखोंपर एक करघेकी व्यवस्था करना। काठियावाड़में खादीके उत्पादनके लिए काम करनेवाले एक विनम्र कार्यकर्त्ताके नाते मुझे कहना चाहिए कि नये चरखे तो हजारोंकी तादादमें चालू कर दिये गये हैं, किन्तु करघोंका यह हाल है कि दो-चार दर्जन नये करघे भी नहीं बनाये जा रहे हैं। परिणाम यह हुआ है कि मिलके

१. देखिए "करघेका अधिक प्रयोग", ११–५–१९२१।

सूतसे बुननेवालों और हाथ-कते सूतकी बुनाई करनेवालो के बीच बड़ी जबरदस्त प्रतियोगिता चल पड़ी है, जिससे बुनाईका खर्च बहुत बढ़ गया है।

इस अवसरपर मैं इतना और बता देना चाहूँगा कि कुछ महीने पहले चरखेकी उपयोगिता और सफलताकी सम्भावनाओके बारेमें मेरे मनमें बड़ी शंकाएँ थीं। मुझे गाँवकी अर्थ-व्यवस्थाका कोई ज्ञान नहीं था, इसलिए बहुत-से सैद्धान्तिक अर्थ-शास्त्रियोकी तरह मेरे मनमें भी यह सन्देह था कि दो या तीन आनोंकी दैनिक आय भी क्या एक व्यक्तिके गुजारेके लिए पर्याप्त है। इसलिए मुझे लगता था कि हाथ-कताईकी बात क्या एक अव्यावहारिक कल्पना नहीं है। लेकिन अब यह भ्रम दूर हो गया है। मैं हर रोज देखता हूँ कि हर खादी उत्पादन केन्द्रमें कताईका काम करनेको उत्सुक बीसियों औरतें आती है। चूँकि उन क्षेत्रोमें बुनकरोकी कमीके कारण मैं काम बढ़ा नही सकता, इसलिए उन औरतोंको निराश लौटा दिया जाता है; किन्तु इससे बड़े पैमानेपर हाथ-कताई शुरू करनेके आपने जो लाभ बताये हैं वे समझ में आ जाते हैं। लेकिन मैं चाहता हूँ कि बुनाईके महत्त्वपर भी आप कुछ जोर अवश्य दें — भले ही उतना जोर न दें जितना कि हाथ-कताईपर देते हैं। देशको कपड़ा और अधभूखे किसानोंको सहायक उद्योग देनेकी दृष्टिसे करघा चरखेसे किसी भी तरह कम महत्त्व नही रखता।

अमरेली, काठियावाड़ — अ० वि० ठक्कर

२०–५–१९२१

मैं नही समझता कि हाथ-बुनाईके हाथ-कताईसे पिछड जानेका कोई खतरा है। इसके अतिरिक्त, जिन मौजूदा करघोपर विदेशी सूत बुना जा रहा है, उन्हे उससे मुक्त करना है। सच तो यह है कि हममे अब भी उतना हाथ-कता सूत तैयार करनेकी क्षमता नही आई है, जितना तैयार करना चाहिए। अब समस्या है इस हाथ-कते सूतको मामूली बुनकरो द्वारा आसानीसे बुनवा सकनेकी। जहाँतक अतिरिक्त सूतकी बात है, मेरा सुझाव यह है कि इससे रस्सियाँ, फीते, पट्टियाँ आदि बहुत सारी चीजें बनाई जा सकती हैं। हाथ-बुनाईको सब लोग उतनी आसानीसे नही सीख सकते जितनी आसानीसे कताई सीख सकते हैं। लेकिन इससे कोई यह न समझे कि मैं कहता हूँ, हाथ-बुनाईके लिए विशेष प्रयत्न करनेकी जरूरत ही नही है। मेरे कहनेका मतलब तो यही है कि यह काम भी यथासम्भव तेजीसे चल रहा है। बुनकरोकी मजदूरी इसी-लिए बढ गई है कि स्वदेशीके प्रति लोगोका अधिक चाव हो गया है। मजदूरी बढनी भी चाहिए थी। बढईको बुनकरोसे ज्यादा मजदूरी मिलती है, लेकिन बुनकरोका काम किसी भी तरह बढईके कामसे कम महत्त्वपूर्ण नही।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–६–१९२१

९५. पत्र-लेखकोंसे[1]

हमारे पास हर तरहकी पूछताछके इतने पत्र आया करते हैं और हमारे लिए डाकसे उनके उत्तर अलग-अलग भेजना रोज-ब-रोज कठिन होता जा रहा है। इसलिए हम उस पूछताछका उत्तर यथासम्भव इस स्तम्भ द्वारा देना चाहते हैं।

के० एस० सुब्बियाहिएर: सौ नम्बरका सूत कातनेके लिए बहुत सावधानी रखने और ध्यान देनेकी जरूरत है। यदि इस कलामें आपकी रुचि है तो आपको गंजाम जिलेका दौरा करना चाहिए और कत्तिनोंको सूत कातते समय ध्यानसे देखना चाहिए। हमें खेद है कि इतने बारीक सूतकी धोतियाँ अभी इतनी अधिक तादादमें उपलब्ध नहीं हैं। इसलिए उनकी खपतके लिए खास एजेन्ट रखनेकी जरूरत नहीं है।

के० एस० वेंकटरमन: श्री रेवाशंकर झवेरीने जैसा चरखा बनानेके लिए पुरस्कार घोषित किया है यदि वैसे चरखेका आविष्कार आपने कर लिया है तो आप सत्याग्रह आश्रमके व्यवस्थापकको पत्र लिखें। साथमें चरखेके नक्शे भेज दें और एक घंटेमें काते जा सकनेवाले सूतकी मात्रा भी लिखें।

मुहम्मद अनवरुद्दीन, पानीपत: सरौतेका पता नहीं लग रहा है। यदि आपके पास रसीदकी नकल रखी हो और आप उसे हमारे पास भेज दें तो हम फिर पूछताछ करेंगे। हम ऐसी चीजोंकी समालोचना नहीं छापते और न विज्ञापन ही लेते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–६–१९२१

९६. हमारी कसौटी

हिन्दुस्तानने दो मास पूर्व बेजवाड़ामें अपने-अपने प्रतिनिधियोंकी मार्फत वाद-विवाद करनेके बाद विचारपूर्वक प्रतिज्ञा की कि तीस जून तक:

१. हम तिलक स्वराज्य-कोषके लिए कमसे-कम एक करोड़ रुपया इकट्ठा करेंगे और उसका उपयोग स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए करेंगे।

२. हम कांग्रेसके दफ्तरमें कमसे-कम एक करोड़ ऐसे स्त्री-पुरुषोंके नाम दर्ज करायेंगे जिनकी अवस्था २१ वर्षसे ऊपर होगी।

३. हम हिन्दुस्तानमें कमसे-कम बीस लाख चरखे चालू करेंगे।

इनमें से अगर एक कार्य भी हम पूरा न कर सके तो इसमें हिन्दुस्तानकी, पाठकोंकी और मेरी भी लाज जायेगी। फिलहाल तो मैं पैसेकी बात करना चाहता हूँ। अगर मेरे पास पैसा हो तो इस लाजको रखनेके लिए, चाहे मुझे भिखारी ही क्यों न

१. यह सम्भवतः गांधीजीका लिखा है।

बनना पड़े, मुझे एक करोड़ रुपया दानमे दे देना चाहिए। पाठकोको भी ऐसा ही करना चाहिए। लाख रुपयोकी अपेक्षा मनुष्यको अपनी लाज अधिक प्रिय होनी चाहिए। स्वराज्य प्राप्त करनेका अर्थ है कि हम हिन्दुस्तानकी लाजको अपनी लाज समझे, हिन्दुस्तानके दु खको अपना निजी दु.ख माने।

सारे हिन्दुस्तानमे अभी हम बीस लाख रुपयेसे ज्यादा धन एकत्रित नही कर पाये है। अभी हमे अस्सी लाख रुपये और जमा करने है। उतना पैसा जमा करनेके लिए हमारे पास आजसे कुल चौबीस दिन ही रह गये है। हमने अभीतक जिस गतिसे काम किया है अगर आगे भी उसी गतिसे काम करते रहे तो चौबीस दिन कोई चीज ही नही है। अपनी गतिको अगर हम नया वेग प्रदान करेगे तो चौबीस दिन बहुत है।

गुजरात अगर चाहे तो अकेले ही इस मासके अन्ततक अस्सी लाख रुपया इकट्ठा कर सकता है। लेकिन गुजरातको अपने-आपमे इतना विश्वास नही है। इसलिए गुजरातने कजूसकी भाँति अपनी शक्तिको दस लाख रुपयेतक निश्चित किया है। भडौचमे हुई परिषद्मे गुजरातके प्रतिनिधियोने विचारपूर्वक प्रतिज्ञा की कि हिन्दुस्तानके प्रति अपने कर्त्तव्यके रूपमे गुजरात

१ दस लाख रुपया देगा,

२ तीन लाख सदस्य बनायेगा, और

३ एक लाख चरखे चालू करेगा।

इस पत्रिकाका मुख्य उद्देश्य तो यह बताना है कि दस लाख रुपया इकट्ठा करनेका फर्ज किस तरह निभाया जाये।

अधिकसे-अधिक कितनी रकम दी जा सकती है, यह बात तो मैने बता दी, लेकिन ऐसे देनेवाले सख्यामे अधिक नही होते। अनेक लोगोके लिए कुछ आधार अथवा नियमोका होना जरूरी है। मित्रोके साथ सलाह-मशविरा करनेके बाद मै निम्नलिखित नियमोका सुझाव देता हूँ:

१. जिन लोगोको वेतन मिलता है वे अपने मासिक वेतनका कमसे-कम दसवाँ भाग दे।

२ स्वतन्त्र धन्धा करनेवाले लोग जैसे व्यापारी, वकील, डाक्टर आदि पिछले बारह महीनोमे हुई अपनी गाढ़ी कमाईका कमसे-कम बारहवाँ भाग दे।

३ जिसके पास स्थावर सम्पत्ति अथवा नकद रुपया है उसे अपनी स्थावर सम्पत्तिके किराये अथवा पूँजीपर मिलनेवाले व्याजसे और अगर उसने अपनी सम्पत्ति गिरवी रख दी है तो गिरवीकी रकमको छोड़कर बाकी रकमपर कमसे-कम ढाई प्रतिशत देना चाहिए।

अगर उपर्युक्त नियमोके अनुसार सब लोग धन दें तो हमें एक करोड़ रुपया आसानीसे मिल सकता है।

पाठकवृन्द! आप हिन्दू हो अथवा मुसलमान, पारसी, ईसाई अथवा यहूदी, आप स्त्री हो अथवा पुरुष, आप मिल-मालिक हो अथवा मजदूर, आप नौकर हो अथवा

स्वतन्त्र धन्धा करनेवाले, दूसरोकी चिन्ता न करके, किसीके साथ अपनी तुलना न करके, किसी चन्दा उगाहनेवाले की प्रतीक्षा न करके चन्दा लेनेके जो केन्द्र स्थापित किये गये है वहाँ आज ही अपनी शक्ति-भर पैसा देकर अपने कर्त्तव्यको पूरा करे।

जहाँ आप पैसा दे वहाँसे रसीद अवश्य ले।

आप अपने सगे-सम्बन्धियोको, मित्रोको यह पुस्तिका पढनेके लिए दें और उनसे भी चन्दा उगाहकर तिलक स्वराज्य-कोषमे जमा करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९–६–१९२१

९७. भाषण: सार्वजनिक सभा, बढवानमें[1]

९ जून, १९२१

कितने ही लोग कहते है कि मै काठियावाडको भूल गया हूँ। ऐसी बहुत सारी चीजे होती है जिन्हे भूल जाना ही बेहतर होता है। मै काठियावाडसे अलग रहता हूँ सो ठीक है। मै ब्रिटिश भारतमे जो कार्य कर रहा हूँ उसमे काठियावाडके प्रति मेरी सेवा भी आ जाती है। फिलहाल तो मै तिलक स्वराज्य-कोषके लिए आपसे भिक्षा माँगता हूँ। मुझे हर रोजके पचास हजार रुपये इकट्ठे करने है। यदि तीस जूनतक भारत अपनी प्रतिज्ञाका पालन नही करता तो निर्धारित फल-प्राप्ति कर सकना ही मुश्किल है। मुझे ईश्वरमें श्रद्धा है। मै क्षण-क्षण उसके चमत्कारका अनुभव करता हूँ और हमारी प्रतिज्ञाके पूर्ण होनेका मुझे भरोसा है।

अमृतसर कांग्रेसमे मैंने सरकारके साथ सहयोग करनेकी बात कही थी, क्योकि मुझे सम्राट्के घोषणापत्रके प्रति विश्वास था। मुझे उसमे सरकारके पश्चात्तापकी झलक दिखाई दी थी। लॉर्ड सिन्हाकी[2] भाषाकी ओर भी मेरा ध्यान गया था। श्री मॉन्टेग्युकी इच्छा भी स्पष्ट दीख पडती थी। लेकिन बादके अनुभवसे यह स्पष्ट हो गया कि इस सरकारके साथ सहयोग करनेका अर्थ पापमे भागी होना है जबकि असहयोग-का तात्पर्य पाखण्डसे बचना, दगाबाज न बनना और अन्याय न करना है। इस राज्यमे सबके लिए समान न्याय नही है। कदाचित् ही किसी भारतीयको यहाँ न्याय मिलता है। गोरे और कालोके बीच बहुत भेदभाव बरता जाता है।

हमने अपने देशमे विदेशी कपड़ेको आने दिया इससे हमारी बहनोकी लाज लुटी, पजाबको पेटके बल रेंगना पडा। तीन करोड व्यक्तियोको अन्न नसीब नही होता। जहाँ जगन्नाथजी विराजते है वहाँ भी लोगोकी पसलियाँ दिखाई पड़ती है — जगन्नाथजी

१. यह सभा लिम्बडीके महाराजाके निवास स्थानपर हुई थी।

२. सत्येन्द्रप्रसन्न सिन्हा (१८६४–१९२८); वकील, राजनयिक और भारत सरकारके प्रथम भारतीय मन्त्री। १९२०-२१ में बिहार और उड़ीसाके गवर्नर। १९१५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके बम्बई अधिवेशनके अध्यक्ष।

भी रूठ गये है। हमे विदेशी व्यापारने लूट लिया है। भारतको सचाईसे प्यार है। ऐसा कहा जाता है कि अहमदाबादमे पाखण्ड भरा हुआ है। नवलरामने[1] लिखा है कि काठियावाडके लोग "शहदसे भी मीठे" होते है। हम एक जमानेमे दम्भी थे। लेकिन जब हम विवेकको हृदयगम करेगे तो उसका अर्थ होगा कि हम [सरकारसे] असहयोग कर रहे है।

काठियावाड हिन्दको अभयदान दे सकता है। मै नही मानता कि काठियावाड़ भिखारी है, काठी और मियाणा-जैसी लडाकू जातियोका देश भिखारी हो ही नही सकता। कुदरतकी सहायतासे मजबूत और साहसी प्रदेशमे गरीबी अथवा नामर्दानगी असम्भव है। काठियावाड चाहे तो समस्त हिन्दुस्तानको अभयदान दे सकता है। आपके मनमे अगर श्रद्धा हो तो आप अपना सर्वस्व दे सकते है।

स्त्रियाँ जितनी गहनोपर निर्भर रहती है अगर वे उतनी प्रभुपर निर्भर रहे तो कभी दुखी न हो। सुदामा और श्रीकृष्णकी भूमिके बालकोको कायर कैसे माना जा सकता है? चरखा लोगोको खानेके लिए देगा, विधवाओका पोषण करेगा, लेकिन लडकीके विवाहमे व्यर्थकी धूमधामके लिए पैसे नही देगा।

काठियावाडको चाहिए कि वह मुझे वचन दे कि जब मेरी इच्छा हो तब मै काठियावाडके नाम हुडी लिख सकूँ। काठियावाड़ चाहे तो एक वर्षमे विलायती कपडे-का सम्पूर्ण वहिष्कार कर सकता है। खादी सन्यासियोकी पोशाक नही है। मै सन्यासी नही हूँ। मेरे पुत्र, स्त्री, बहन सब कोई है। उनसे मै स्नेह करता हूँ, उनकी सेवाको स्वीकार करता हूँ। मै एक मूढ गृहस्थ हो सकता हूँ, लेकिन मै सन्यासी होनेका दावा नही करता। खादी कुलीनताकी परिचायक है। मै वेश्याओसे निरन्तर कह रहा हूँ कि आप खादी पहने। साध्वियोसे भी कहता हूँ कि मै खादीविहीन शरीरको मलिन समझता हूँ। सीताने रावणके भेजे सुन्दर वस्त्रोको पत्तोसे भी तुच्छ समझा। उसी तरह हम सबको भी विदेशी कपडेको खादीसे हलका मानना चाहिए।

स्त्रियोके गलोमे यह सोनेकी माला कैसी? अभी तो सूतकी अथवा तुलसीकी माला ही सुशोभित हो सकती है। एक स्थानपर एक बालाने सारेके-सारे गहने दे डाले। मैने कहा कि तुम्हे तुम्हारे माँ-बाप डाँटेंगे। उसने कहा कि मै स्वराज्यसे पहले दूसरे गहनोकी माँग नही करूँगी। मैने कहा कि अभी तुम्हारा विवाह होना है। उसने उत्तर दिया, "आज जब कि हिन्दुस्तानकी हालत असहाय विधवा-जैसी है तव मै अपना विवाह कैसे रचा सकती हूँ?" यह सतयुगकी झाँकी नही तो और क्या है?

[गुजरातीसे]

गुजराती, १९-६-१९२१

१. १९ वी शताब्दीके एक गुजराती कवि।

१८. गुजरातका कर्त्तव्य

किसी भी कार्यको आरम्भ न करना यह बुद्धिमानीकी सबसे पहली निशानी है, लेकिन जिस कार्यको आरम्भ कर दिया उसे पूरा करना अत्यन्त आवश्यक है। गुजरात [राजनीतिक] परिषद्ने नर्मदाके तटपर निर्णय किया था कि गुजरात इसी मासके अन्ततक तिलक स्वराज्य-कोषके लिए दस लाख रुपया इकट्ठा करेगा, कांग्रेसके तीन लाख सदस्य बनायेगा और एक लाख चरखे देगा। अगर परिषद्को इतना कार्य करनेके सम्बन्धमे विश्वास नही था तो परिषद् उस प्रस्तावसे इनकार कर सकती थी। इसके विपरीत उसने प्रस्तावका स्वागत किया। परिषद् अर्थात् गुजरात-काठियावाडसे आये सदस्यगण। उन्होने जान-बूझकर यह प्रतिज्ञा की थी कि वे जूनकी तीस तारीखसे पहले-पहल उपर्युक्त तीनो कार्योको पूरा करेगे। अगर यह प्रतिज्ञा पूरी नही होती तो हम स्वराज्यके लिए लगभग अयोग्य ठहरेगे और फिर गुजरातकी मार्फत स्वराज्य प्राप्त करनेका प्रयत्न करना भी कठिन हो जायेगा। मैंने परिषद्मे जो कहा था उसे आज भी मानता हूँ। मैंने कहा था कि यदि हिन्दुस्तानका एक भी प्रान्त सम्पूर्ण असहकार करनेके लिए तैयार हो तो स्वराज्य मिल जाये। इस प्रवृत्तिका गुण ही समकोण जैसा है। जिस तरह एक चौरस आकृतिके एक कोणके समकोण होनेपर अन्य तीन कोण भी समकोण ही होते है उसी तरह यदि एक प्रान्त तैयार हो जाये तो अन्य प्रान्त भी स्वयमेव तैयार हो जायेगे। बात सिर्फ लोगोको भयसे छुटकारा दिलानेकी है। सिंह माने जानेवाले किसी ऐसे व्यक्तिकी दुर्बलताओको जाननेवाले पाँच-सात व्यक्ति भी अगर डर छोडकर उससे खेलना शुरू कर दें तो दूसरे भी तुरन्त वैसा करने लगे। एकका अनुभव दूसरोको ज्ञान प्रदान करनेके लिए काफी है। यही बात स्वराज्यपर लागू होती है। किसी एक बडे समुदायको अपनी शक्तिका परिचय देना है।

लेकिन यदि गुजरात [स्वराज्यका] ककहरा ही नही पढ सकता तो फिर वह उसकी अन्तिम परीक्षामे किस तरह उत्तीर्ण हो सकता है? परिषद्ने जो कार्यक्रम निर्धारित किया है वह स्वराज्यके ककहरेकी परीक्षा है। इस प्राथमिक परीक्षामे यदि हम उत्तीर्ण नही होते तो हमारे दिलोमे अपने ही प्रति अश्रद्धा उत्पन्न होती जायेगी।

इस लेखके प्रकाशित होने तक लगभग आधा महीना बीत चुका होगा। यदि हम परिषद्मे ली हुई प्रतिज्ञाको पूरा करना चाहते है तो सभीको अपना कार्य समझकर अपना दायित्व सँभाल लेना चाहिए। यदि असख्य व्यक्ति यथाशक्ति दे अथवा थोडेसे व्यक्ति जानपर खेलकर अपना सब-कुछ अर्पण कर दे तो हम अपने कार्यको पूरा कर सकेगे।

यदि सभी अपने-अपने कर्त्तव्यका पालन करे तो हम विना-किसी मुश्किलके अपना काम पूरा कर लेगे।

गुजरातकी दान करनेकी क्षमताको देखते हुए दस लाख पर्याप्त नही है। गुजरातने आजतक सार्वजनिक प्रवृत्तियोमे पैसा देनेकी रुचि प्रकट नही की और

इसीलिए पैसा दिया भी नही। उसकी नजर हमेशा बम्बईकी ओर रही है और इसीसे गुजरातको अपनेपर विश्वास नही है। वीरमगाँव सिर्फ बारह हजार देकर ही कैसे सन्तोष मान सकता है? वढवान सिर्फ छ-सात हजार देकर ही कैसे सन्तुष्ट रह सकता है? यह सब सार्वजनिक कार्योके प्रति हमारी कजूसीकी निशानी है। तथापि एक समय ऐसा था कि जब वढवान अथवा वीरमगाँवमे इतना पैसा इकट्ठा करना भी मुश्किल था। वीरमगाँव तथा बढवानमे अगर इतना मिला है तो और भी मिलेगा, और इसी तरह अन्य स्थानोसे भी मिलेगा। प्रत्येक बडे शहरको दान देनेकी अपनी क्षमताकी जाँच करके चन्दा उगाहना चाहिए। मित्रवर्गकी सलाह लेकर मैंने जो नियम निर्धारित किये है उन्हे तो लागू कर ही दिया जाना चाहिए।[1] वेतनभोगी कोई भी व्यक्ति अपने मासिक वेतनका दस प्रतिशतसे कदापि कम न दे। अधिक वेतन पानेवाला अपनी ओरसे अधिक रकम देकर कम वेतन पानेवालोकी मदद करे। व्यापारी, वकील, डाक्टर आदि अपनी कमाईके बारहवे भागसे कम न दे। और फिर प्रथम कोटिके डाक्टर, वकील आदिके लिए ये आँकडे किस कामके? कोई वकील यदि वर्षके ६०,००० रुपये कमाता है तो क्या वह अपने हिस्सेके पाँच हजार रुपये देकर ही सन्तोष मान ले? श्री दास[2] सार्वजनिक कार्योमे अपनी कमाईका आधा भाग देनेमे आगा-पीछा नही देखते थे। जब वकीलोके धन्धा छोडनेकी बात उठी तब उन्होने खुशी-खुशी अपनी कमाईका आधा भाग देनेकी घोषणा की थी। तात्पर्य यह कि ऐसे वकील स्वय बहुत सारी रकम देकर मनसे कमजोर अपने दूसरे भाइयोकी, जो उनकी अपेक्षा कम समर्थ है, मदद करे। ब्याजपर ही निर्वाह करनेवाला साहूकार अगर अपनी सम्पत्तिका ढाई प्रतिशत दे तो इसमे आश्चर्यकी क्या बात है? जिस व्यक्तिके पास एक लाख रुपयेका मकान है अगर वह ढाई हजार रुपया दे तो उसमे वह कौन ज्यादा रकम देता है? सैकडे पीछे ढाई रुपया देना तो ज्यादासे-ज्यादा छ महीनेका ब्याज हुआ। अनेक लोग तो सौ रुपयेकी सम्पत्तिका भाडा अथवा ब्याज वार्षिक पाँच प्रतिशत न लेकर बारह प्रतिशत लेते है। उनके लिए ढाई रुपये तो ढाई महीनेका ही ब्याज हुआ। इस तरह विचार करनेपर हम गुजरातके शहरोसे ही तीस जूनसे पहले-पहले सहज ही दस लाख रुपया इकट्ठा कर सकते है। शक्ति, इच्छा और कार्यदक्षताकी त्रिवेणी मिल जाये तो गुजरात बहुत ज्यादा प्रयत्न किये बिना ही अपनी प्रतिज्ञाको पूरा कर सकेगा। भगवान् गुजरातकी सहायता करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२–६–१९२१

१. देखिए "टिप्पणियाँ", ८–६–१९२१।

२. चितरंजन दास।

९९. टिप्पणियाँ

जंग लगी तोपें

दक्षिणके प्रवासके बारेमे मेरा बहुत ज्यादा लिखनेका विचार था लेकिन उसके बादके अनुभवोके सम्बन्धमे तो इतना अधिक लिखना है कि मुझे कुछ महत्त्वपूर्ण सस्मरणोका सक्षेपमे जिक्र करके ही सन्तोष मानना होगा। मै देखता हूँ कि जहाँ-जहाँ तनिक भी श्रद्धा है, कार्यकर्त्ता है, वहाँ-वहाँ लोग उदारताके साथ दान देते है। इस प्रवासके दौरान ऐसे अनुभवोके दृष्टान्त प्रस्तुत करनेका मेरे पास समय नही है। बार्शी, कुर्डूवाडी, पढरपुर और शोलापुरकी यात्रामे मुझे ये अनुभव हुए। बार्शीमे एक ही मिल है। भावनगरके देसाई परिवारके भाई यशवन्तप्रसाद हरिप्रसाद उस मिलके मालिक है। मिल-मालिक होनेके बावजूद वे प्रत्येक सार्वजनिक कार्यमे भाग लेते है और उसमे अपना योगदान देते है। वे स्वय जिस तरहसे रहते है वह सब मिल-मालिकोके लिए अनुकरणीय है। उन्होने अपने रहनेके लिए मजदूरोके समान एक झोपडी बनवाई है। उन्होने, उनके कार्यकर्त्ताओने और मिलके अधिकारियोने मिलकर तिलक स्वराज्य-कोषमे चन्दा दिया है। वहाँके मजदूर मुझे सुखी प्रतीत हुए। भाई यशवन्तप्रसादकी चरखेमे अटल श्रद्धा है और वे खुद ही चरखेका प्रचार कर रहे है। स्वय खादी पहनते है और दूसरोको भी खादी पहननेको कहते है। बार्शीमे और भी बहुत सारे व्यापारी है तथापि उनके पूरी-पूरी मदद न करनेके कारण हमे जितना चन्दा मिलनेकी उम्मीद थी उतना चन्दा न मिल सका।

कुर्डूवाडी तो एक साधारण रेलवे जकशन ही है। यद्यपि वहाँकी आबादी सिर्फ दो हजार है तथापि वहाँसे लगभग दो हजार रुपये मिले। इसके लिए हम एक कच्छी-भाई सेठ रायमलके आभारी है जिनके उत्साहके कारण यह सम्भव हुआ। पढरपुर दक्षिणकी काशी है, इसके बावजूद वहाँ अपेक्षाकृत निराशा ही हाथ लगी। फिर भी पढरपुर एक ऐसा स्थान है जिसके लिए एक अलग प्रकरण ही लिखा जाना चाहिए। प्राचीन कालमे महाराष्ट्रके बहुत सारे सन्त और ज्ञानी वहाँ आकर रहे थे। शोलापुरके लिए भी एक अलग प्रकरणकी जरूरत है। वह महाराष्ट्रमे व्यापारका एक बडा केन्द्र माना जाता है। वहाँपर एक तालाबके मध्यमे लिंगायत सम्प्रदायका सिद्धेश्वर नामक सुन्दर देवालय है। शोलापुरमे कपडेकी मिले है। किन्तु वहाँ अन्य वस्तुओका व्यापार भी काफी है। वहाँ दस हजारसे ऊपर रुपया इकट्ठा हुआ लेकिन वहाँके व्यापारको देखते हुए यह रकम बहुत ही थोडी कही जायेगी।

शोलापुरके बाद हमने कर्नाटकमे प्रवेश किया, बागलकोट और बीजापुर गये। दोनो स्थानोपर बहुत उत्साह था, रकम भी अच्छी-खासी मिली, हालाँकि वहाँ अकालकी-सी हालत है। वहाँ कौजलगीका[1] राज्य है। उनके नाम तो वहाँके मजिस्ट्रेट महोदयने

१. हनुमन्तराव कौजलगी, कर्नाटकके एक कांग्रेसी नेता।

नोटिस जारी करनेकी मेहरबानी भी की है। बीजापुर मुस्लिम साम्राज्यके इतिहासमे प्रसिद्ध है। वहाँ अनेक प्राचीन भवन, मस्जिदे और दरगाहे है। मै सुलतान मुहम्मदका मकबरा और वहाँकी जुमा मस्जिद देखने जा सका। मुसलमान बादशाहोने मकबरे बनानेमे जितना रुपया खर्च किया है उतना रुपया ससारमे किसीने भी खर्च नही किया होगा। ताजमहल एक रत्नजडित मकबरा ही है।

मुझे बताया गया कि बीजापुरके मकबरेका "गोल गुम्बज" जगत् प्रसिद्ध है। यह गुम्बज लगभग दो सौ फीट ऊँचा है। गुम्बजके अन्दर चारो ओर एक वीथी है। वहाँतक पहुँचनेके लिए डेढ़ सौ सीढियाँ है। वीथीका व्यास सवा सौ फुट होगा। दोनो ओर खड़े हुए व्यक्ति अगर दीवारकी ओर मुँह करके धीमे स्वरमे बात कहे तो वह सुन सकते है। बीजापुरकी जुमा मस्जिद भी भव्य है। वहाँ मैने हाथसे लिखी हुई, बेल-बूटोसे सजी हुई ऐसी 'कुरान शरीफ' भी देखी जिसे जेबमे रखा जा सकता था।

लेकिन मुझे जिनके बारेमे लिखना है वे है जग लगी तोपे और ढहते हुए किले। जो तोपे कभी बादशाहतकी निशानी समझी जाती थी, लोगोके लिए भयका कारण थी उन तोपोको आज मैने जीर्णावस्थामे देखा और देखा हिन्दू-मुस्लिम बच्चोको उनपर "घोडा-घोडा" खेलते हुए। आसपासके कोटको मैने खडहर होते हुए देखा और मुझे कोलाबाकी तोपोके सम्बन्धमे लिखी हुई अपनी पक्तियाँ याद आ गई। "मेरी मान्यता है कि अगर भारत शान्तिमय असहयोगके कार्यक्रमको पूरी तरह लागू करेगा तो ब्रिटिश तोपोमे भी जग लग जायेगी, उनपर घास उग आयेगी और उनपर तथा भारतमे ब्रिटिश सरकारके बनाये हुए किलोमे हमारे बच्चे गिल्ली डडा खेलेगे।" मेरे इस कथन-पर बहुत थोडे लोगोने विश्वास किया, कुछ-एकने मेरा उपहास किया है और कुछ-एकको मेरे भोलेपनपर तरस आया है। इसके बावजूद मेरी यह मान्यता दिन-प्रतिदिन दृढ होती जाती है। दिल्लीके लाल किलेको देखकर क्या कोई कह सकता था कि मुगल-साम्राज्य कभी नष्ट हो जायेगा? उस समय ऐसा सोचनेवाले व्यक्तिकी क्या लोगोने हँसी नही उडाई होगी? तथापि मेरी धारणा है कि मुगल-साम्राज्यके पतनकी जितनी सम्भावना थी उससे कही अधिक सम्भावना इस साम्राज्यके पतनकी है। लोगोकी तीव्र अनिच्छाके सामने कोई भी साम्राज्य नही टिक सकता। जो डरते है उन्हे ही दूसरे लोग डराते है। हिन्दुस्तानमे मै अनेक अपगोको सरेआम रास्तेमे पडा हुआ देखता हूँ। उन्हे कोई भी भयभीत नही करता, क्योकि वे स्वय निर्भय हो गये है। उनको विश्वास है कि उनका कोई कुछ बिगाडनेवाला नही है। हजारो चलनेवाले लोगोको उनकी उपस्थितिसे असुविधा होती है तो भी वे लोग उसे बरदाश्त कर लेते है। उसी तरह यदि हम उपर्युक्त अपंगोकी भाँति निर्भय बन जाये तो कोलाबाकी तोपे अथवा किले हमे डराने-धमकानेके बदले डकरहित लगेगे।

निर्दोष टोपी

इसे लिखते-लिखते ही मैने समाचारपत्रमे पढा कि श्री कौजलगी अदालतमे सफेद टोपी पहनकर गये, इसलिए अदालतने उन्हे उस टोपीको उतारनेका आदेश दिया।

उन्होने वैसा करनेसे इनकार कर दिया जिसके फलस्वरूप अदालतने उनपर दो सौ रुपये जुर्माना किया और एक घटेके लिए अदालतसे बाहर भेज दिया। एक घटे बाद वे फिर उसी निर्दोष टोपीको पहनकर अदालतमे आये, जिसपर उन्हे फिरसे टोपी उतार देनेका आदेश हुआ और उन्होने फिर वैसा करनेसे इनकार कर दिया और उनपर फिर दो सौ रुपये जुर्माना किया गया। तब मजिस्ट्रेटने उन्हे दूसरे मजिस्ट्रेटके सामने जानेका हुक्म दिया। जहाँ इतना अन्धेर चल सकता है वहाँ वकील वकालत करनेके लिए तैयार है! लेकिन वकील चाहे जो करे, इतना जाननेके बाद भी अगर लोग विदेशी टोपीसे चिपके रहे तो इसके समान शर्मकी और क्या बात हो सकती है? निर्दोषको जब ऐसे दोषी करार दिया जाता है तब समझना चाहिए कि स्वराज्यकी नौबत बजने लगी है। लेकिन निर्दोषको जब ऐसे दोषी ठहराया जाता है और जब लोग इससे डरने लगते है तो गुलामीकी जजीरे और भी जोरसे झनझनाने लगती है। मैने पुराने कैदियोको अपनी बेडियाँ साफ करते समय उनकी झनझनाहटसे खुश होते हुए देखा है। असहयोगीपर जैसे-जैसे अत्याचार होता जाये वैसे-वैसे हमें असहयोग-को और भी बढाना चाहिए, हमारे पास गुलामीके बन्धनको तोडनेका यही एकमात्र रास्ता है। अगर बीजापुरकी सभी अदालतोमे सभी सफेद टोपी पहने हुए दिखाई दे तो मजिस्ट्रेट किसपर जुर्माना करेगा और कैसे वसूल करेगा?

गुजरात परिषद्

इस परिषद्के विषयमे भी मुझे सक्षेपमे ही लिखना होगा। इस परिषद्को आगामी काग्रेसकी तैयारीके रूपमे लेना चाहिए और इस दृष्टिसे परिषद्ने सराहनीय कार्य किया है।

परिषद्की सजावट सादी और अधिकाशतया स्वदेशी सामग्रीसे की गई थी। परिषद्मे भूमिपर ही बैठनेका पूरा इन्तजाम किया गया था। प्रमुख नेता और कुछ अन्य लोग मचपर गद्दियोपर बैठे थे, झण्डियाँ अधिकतर खादीकी थी। स्वराज्यका झण्डा मडपके प्रवेश स्थलपर फहरा रहा था। लोग शोरगुल नही मचा रहे थे। जगहकी कोई तगी न थी। स्त्रियोके लिए बैठनेका बहुत अच्छा प्रबन्ध किया गया था। स्वागत-समितिके प्रमुखका भाषण सक्षिप्त और सुन्दर गुजरातीमे था। उन्होने अपना भाषण पढनेमे सिर्फ पन्द्रह मिनट लिये। अध्यक्षका भाषण भी सक्षिप्त, सादा और विनययुक्त था। वह जितना विवेकपूर्ण था उतना ही उत्साहसे भरा हुआ भी था। लेकिन हम बहुधा यह मानकर चलते है कि हिम्मत अथवा शौर्यके साथ तीखे और कटु विशेषणोका होना लाजिमी है। श्री वल्लभभाई पटेलने बता दिया है कि शुद्ध बलके साथ तो शुद्ध सभ्यता ही हो सकती है। उन्हे अपना भाषण पढनेमे कुल तीस मिनट लगे। इस तरह इन दोनो और अधिकाश भाषणोके सक्षिप्त होनेके कारण जनताका समय बच गया, किसीको थकावट महसूस न हुई और दो दिनोमे काफी काम हो सका। परिषद्की बैठक सवेरे और साँझको रखी गई थी, इस योजनासे लोग धूपसे बच गये। हमे सवेरे सभाओका आयोजन करनेके रिवाजको अधिक लोकप्रिय बनानेकी जरूरत है। विशेष रूपसे गर्मियोके दिनोमें तो सभाएँ सुबह-सुबह ही बुलाई जानी चाहिए।

मेरे-जैसे रोगीके लिए कुर्सीकी व्यवस्था की जाती है। इसे बदलकर हमें प्राचीन चौकीको अपनाना चाहिए। जहाँ सब लोग जमीन अथवा मचपर बैठे हो वहाँ सबके बीच एक कुर्सी तनिक भी शोभा नही देती। हमे यह सिद्ध कर देना चाहिए कि कुर्सी सम्मानकी द्योतक नही है। एक स्थानपर कुर्सीके कारण कुछ गलतफहमी हो गई थी। वहाँ दो ही कुर्सियाँ थी, एक वक्ताके — मेरे लिए और दूसरी अध्यक्षके लिए। सभा शुरू होनेके थोडी देर बाद एक अपरिचित सज्जन सभामे आये। सब नीचे ही बैठे हुए थे लेकिन इन सज्जनको लगा कि अगर वे जमीनपर बैठेंगे तो अपना अपमान स्वय ही करेंगे। मै समझ गया। उनके नीचे बैठनेमे अपमानकी कोई बात नही, इस बातको समझाना मुझे व्यर्थ जान पड़ा। मै तुरन्त मेजपर बैठ गया और मैंने अपनी कुर्सी खाली कर दी। यदि मेरे लिए भी चौकी होती तो उपर्युक्त दिक्कत सामने ही न आती। बात छोटी-सी है लेकिन है सारगर्भित।

स्वयसेवकोने व्यवस्था आदि ठीक ही की थी। भाई पुराणीकी शिक्षाका प्रभाव स्पष्ट दिखाई पडता था। तथापि उनमे अभी और अधिक कार्यदक्षताकी आवश्यकता है, ऐसा मुझे जान पडा। उनमे शोरगुलको बन्द करवानेकी समझ कम थी। दल बाँध-कर खडे होनेकी आदत भी दिखाई पडी। वे बालकोके प्रति कदाचित् कम विनयशील थे। जिस राष्ट्रके लोग अपने बच्चोका, अपनी स्त्रियोका और अपने सेवकोका सम्मान नही करते उस राष्ट्रकी सभ्यता नष्ट हो जाती है। जनताकी सेवा करनेवालो को तो धर्म मानकर दुर्बलकी रक्षा करनी चाहिए, उन्हे मान सहित सम्बोधित करना चाहिए और उनके लिए उचित व्यवस्था करनी चाहिए।

स्वयसेवक तो खादीके अलावा कोई और कपडा नही पहन सकते। परिषद्मे आये हुए बहुतेरे प्रतिनिधियोने विदेशी वस्त्र पहने हुए थे। यह दृश्य खेदजनक था। अब तो स्वदेशीकी प्रतिज्ञाको नौ मास हो गये हैं, तथापि प्रतिनिधि भी विदेशी कपडेके मोहको न छोडे, खादीके बोझसे घबराएँ अथवा उसमें शर्म महसूस करे तो यह नदीमे आग लगनेके समान हुआ। उसे कौन बुझाये? मै जानता हूँ कि पगडी और धोतीके बारेमे बडी मुश्किले दिखाई देती है। लेकिन विचारपूर्वक इन दोनो बातोमे परिवर्तन किया जा सकता है। महीन धोती पाँच गजकी होनी चाहिए। मोटी धोती साढे तीन गजकी भी चल सकती है। महीन ५४ इच पनेकी होनी चाहिए तथा मोटी पैंतालीस इच पनेकी। खादीको रँगवाकर उससे पगडी बनाना कोई मुश्किल बात नही है। लेकिन अगर ऐसी पगडी बोझीली जान पडे तो जबतक महीन खादी तैयार नही होती तबतक खादीकी टोपीसे ही गुजारा करना चाहिए।

आगामी कांग्रेसके समय गुजरातमे खादीके अलावा और कोई चीज नजर न आये, यह हमारे लिए स्पृहणीय है। उससे क्या गुजरात कुछ खोयेगा? बल्कि उससे तो गुजरातके गरीबोके घर सम्पन्न होगे। जो व्यक्ति एक गज खादी खरीदता है वह गरीबके घरमे कमसे-कम तीन आने देता है। जहाँ खादीमे इतनी अधिक शक्ति निहित है वहाँ कोई भी व्यक्ति खादी पहने बिना कैसे रह सकता है? खादीमे कितना स्वदेशाभिमान समाया हुआ है यह तो सोच-समझकर खादी पहननेवाला व्यक्ति ही जानता है।

बहनोंका बलिदान

जब मैंने पैसोंकी माँग की तब जो दृश्य दिखाई दिया वह अविस्मरणीय है। एकके बाद एक बहनोका ताँता ही बँध गया। उन्होने आभूषणो और रुपयोकी झडी लगा दी। पुरुष भी पीछे न रहे और उन्होने भी खासी रकम दानमे दी। जहाँ एक ओर स्त्री-पुरुषोने इतनी उदारताका परिचय दिया वहाँ दूसरी ओर मैंने सुना कि दो बहनोने अपने आभूषण दानमे दे दिये, इसपर उनके पतियोने उन्हे डाँटा। आभूषण स्त्री-धन है। उसपर पुरुषोका कोई अधिकार नही है। मेरी यह नम्र राय है कि अगर स्त्रियाँ अपने गहनोका सत्कार्यके लिए उपयोग करती है तो पुरुषोको उसमे हस्तक्षेप नही करना चाहिए।

लेकिन मुझे स्वीकार करना चाहिए कि स्त्रियोकी उदारतासे मुझे जितना सुख और सन्तोष हुआ उतना ही दु ख और असन्तोष मुझे उनकी पोशाकको देखकर हुआ। विलायती, जापानी और फ्रासीसी साड़ियोने जिस सख्यामे गुजरातमे प्रवेश किया है उस सख्यामे भारतके किसी अन्य भागमे कदाचित् ही किया हो।

इस विषयपर बहनोको विचार करना चाहिए। हिन्दुस्तानकी खातिर, हिन्दुस्तानकी गरीब स्त्रियोकी पवित्रताकी रक्षा करनेकी खातिर गुजरातकी बहनोको निश्चयपूर्वक खादीकी साडीके भारको वहन कर लेना चाहिए।

प्रदर्शनी

परिषद्के अन्तर्गत खादीका, चरखेका और रुई पीजनेके यन्त्रोका प्रदर्शन भी किया गया था। चरखोमे कोई खास नवीनता न थी लेकिन वे अलग-अलग सुविधाओसे युक्त थे। कोई चरखा सफरके लिए हल्का और पेटीमे रखने योग्य था तो कोई सुन्दरतासे परिपूर्ण था, तो कोई मजबूतीकी दृष्टिसे बखान करने योग्य था। अनेक स्थानोपर कारीगर आजकल चरखा बनानेमे कला-कौशलका जितना प्रयोग कर रहे है उतना सम्भवत किसी दूसरी वस्तुको बनानेमे नही किया जा रहा है। मेरी भगवान्से प्रार्थना है कि हम आगामी कांग्रेस और उसके अन्तर्गत होनेवाली खादी और चरखा प्रदर्शनीको आदर्श बना सके।

सरखेज और साणंद

जहाँ पहलेसे ही कार्य किया गया हो, जहाँ थोडे ही लेकिन दिलसे काम करनेवाले कार्यकर्त्ता हो उसमे और जहाँ पहलेसे काम न किया गया हो उसमे क्या फर्क होता है उसका अनुभव सरखेज और साणदमे हुआ। सरखेजमे लगभग दो हजारकी आबादीसे एक घटेमे करीब १,२०० रुपये इकट्ठे हुए और साणद जहाँ पाँच हजारकी बस्ती है तथा जहाँ अच्छा व्यापार है वहाँ सिर्फ पाँच सौ रुपये ही इकट्ठे हुए। सरखेजमें राष्ट्रीय स्कूल है। सरखेजकी सभामे अत्यन्त शान्ति थी, स्त्री और पुरुष समान सख्यामें उपस्थित थे और दोनोके लिए एक ही सभासे काम चल सका। साणदमें दो अलग-अलग सभाएँ की गईं। दोनोमे शोरगुल और अव्यवस्थाकी सीमा न थी। सरखेजकी

सभामें अन्त्यजोको भी आनेकी अनुमति थी। उनके बीस घर है और उन्होने तिलक स्वराज्य-कोपके लिए बत्तीस रुपये इकट्ठे किये थे। साणदमे अन्त्यजोसे अलग भेट करनी पड़ी और वहाँसे सात-एक रुपये मिले।

यह कहकर मै साणदके दोष नही बताना चाहता। मुझे विश्वास है कि यदि साणंदमे थोड़ेसे चरित्रवान स्वयसेवक काम करे और वे थोडेसे स्थानीय लोगोके दिलोमें इस कार्यके प्रति दिलचस्पी उत्पन्न कर सकें तो साणंद सरखेजके साथ खडा हो सकता है। मुझे उम्मीद है कि साणदमे कोई-न-कोई स्वयसेवक पहुँच ही जायेगा और वहाँ आवश्यक जागृति आ ही जायेगी। साणद-निवासियोको मै सलाह देता हूँ कि वे तुरन्त अपने सार्वजनिक कार्यको व्यवस्थित रूप देकर साणदमे जो शक्ति है उसके अनुरूप उक्त कार्यको शोभान्वित करे।

विदेशोंको नुकसान पहुँचाना

विदेशोको नुकसान पहुँचाकर हिन्दुस्तानको लाभ पहुँचानेका अपराध मै नही करूँगा, मेरे इस आशयके लेखको दृष्टिमे रखते हुए एक नवयुवकने पूछा है कि चरखे और असहयोगसे इंग्लैंडको जो भारी नुकसान पहुँचेगा उसके सम्बन्धमें मेरा क्या कहना है? ऐसे प्रश्न उठा ही करते है। बालकी खाल निकालनेवाले प्रश्न वैसे तो अच्छे होते है लेकिन अगर मानसिक चरखा कातनेवाले लोग वास्तविक चरखा कातने लगे तो उनके मनकी गुत्थियाँ स्वयमेव सुलझ जायेंगी। चरखे अथवा असहयोगसे इग्लैंडको कुछ नुकसान होगा ऐसा मै कतई नही मानता। ये दोनो आत्मशुद्धिके साधन है, वे हमें और उसी तरह इग्लैंडको पावन बनानेवाले है। शराबकी दूकानोको बन्द करनेसे शराब पीनेवालो और बेचनेवालोको जैसे नुकसान होता है ठीक वही बात हम चरखे और असहयोगके सम्बन्धमे भी कह सकते है। और फिर मै अपना घर फूंककर तमाशा नही देखना चाहता। जैसे मै विदेशका नुकसान नही करूँगा वैसे ही मै अपने देशका नुकसान भी नही होने दूंगा। जैसे मैनचेस्टरके व्यापारने हिन्दका नुकसान किया, इससे मै उसे त्याज्य समझता हूँ, वैसे ही हिन्दुस्तानका चीनके साथ अफीमका व्यापार चीनके लिए हानिकारक होनेके कारण मै उसे भी त्याज्य समझता हूँ। कोई हमसे अनुचित लाभ उठाता हो और अगर हम शान्तिपूर्ण ढंगसे उसका प्रतिकार करते है तो इसमे उस व्यक्तिका नुकसान होनेकी कोई बात ही नही उठती।

हिन्दू-मुस्लिम एकता

यही भाई अभीतक हिन्दू-मुस्लिम एकताके सम्बन्धमे दुविधामे पडे हुए है। वे लिखते है कि जबतक हिन्दुस्तानका एक भी मूक प्राणी मुसलमानके हाथो मारा जाता है और जबतक वे ताबूतमे 'गिरगिट' लटकाते है तबतक एकता असम्भव है। इसमे मुझे बहुत अज्ञान दिखाई देता है। करोड़ो हिन्दू दूसरे जानवरोको मारते है, गिरगिटके समान करोड़ो अन्य प्राणियोको धर्मके बहाने लटकाते है, वैसा होनेपर भी उनके साथ कोई विवाद नही करता तो हम मुसलमानोके साथ कैसे कर सकते है? सहिष्णुता हिन्दू धर्मका और सभी धर्मोका गुण रहा है। मुसलमान हिन्दुओके सम्मानके

लिए, प्रेमके लिए गायकी रक्षा कर रहे हैं, इसे मैं उनका उपकार मानता हूँ और सब हिन्दुओंको मानना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२–६–१९२१

१००. भाषण: अहमदाबादकी सार्वजनिक सभामें[1]

१३ जून, १९२१

मौलाना मुहम्मद अली आज पहली बार अहमदाबाद आये हैं। आपने इनका स्वागत किया और आप इनका भाषण सुनना चाहते हैं। मेरा इरादा उनके और आपके बीच अधिक देरतक खड़े रहनेका नही था। लेकिन जब मैं यहाँ आया तब मैंने जो सुना उससे मुझे ऐसा लगा मानो मेरे दिलमें खंजर भोक दिया गया हो। इसलिए अब मैं दो-चार मिनटमे ही समाप्त नही करूँगा। मैंने साबरमतीमें जब सुना कि मौलाना साहब आ गये हैं तब मैं प्रसन्न हो उठा और सीधे यहाँ चला आया। लेकिन यहाँ आते ही मैंने क्या सुना? मैंने सुना कि मजदूर आज कामपर नही गये। वे मिलमे गये और चले आये। ऐसा करके हिन्दू और मुसलमान मजदूरोंने अपनी नाक खुद काट ली है, अनसूयाबेनकी[2] नाक काटी है, बैंकरकी नाक काटी है। इसमे नाक कटनेकी क्या बात है, यह आप स्वयं सोचे, लेकिन मेरी नाक तो आपने काट ही दी है।

मजदूर मुझसे गलत काम नही ले सकते। मै तो मानता हूँ कि हिन्दुस्तानमे कोई भी नही ले सकता। मैं हिन्दुस्तानको गुलामीके शिकंजेसे निकालनेका प्रयत्न कर रहा हूँ; तो फिर मै मजदूरोकी गुलामीमे कैसे पड़ सकता हूँ। आप सम्भवतः यह सोचते होंगे कि अनसूयाबेन तो महिला है, उसे धोखा दिया जा सकता है। गांधी तो अत्यन्त वृद्ध हो गया है और हिन्दुस्तान-भरमें घूमता रहता है, उसको भी भ्रमित किया जा सकता है। लेकिन आप ऐसा नही कर सकते। आपने अभी भाई अख्तरसे एक अत्याचारीके सम्बन्धमे एक कविता सुनी। एक अत्याचारीकी गुलामीसे छूटनेकी इच्छा करनेवाला व्यक्ति दूसरेकी गुलामीमे नही पड़ सकता। मौलाना शौकत अली और मौलाना मुहम्मद अलीको आप मिलमे काम करके ही अच्छेसे-अच्छा सम्मान दे सकते थे। ईदके त्योहारके लिए आपने तीन दिनकी छुट्टी मनाई। कलकी बातको भी मैं जैसे-तैसे पी गया।[3] लेकिन आजकी बातको पी जाना असम्भव है।

आप मनमे ऐसा सोचते हैं कि गांधी हिंसा तो करना चाहता है लेकिन 'बड़ा' आदमी होनेके कारण प्रकट रूपसे ऐसा नही कह सकता। इसलिए जब वह कहे कि

१. गांधीजीकी अध्यक्षतामें आयोजित इस सभामें मौलाना मुहम्मद अलीने भाषण दिया था।

२. अनसूयाबेन साराभाई, अहमदाबादके एक प्रमुख मिल-मालिक सेठ अम्बालाल साराभाईकी बहन। गांधीजीके स्वदेशी आन्दोलनकी समर्थक।

३. मौलाना शौकत अलीका भाषण सुननेके लिए मजदूरोंने छुट्टी की थी।

हिंसा मत करो तो उसका अर्थ होता है हिंसा करो। आपको ऐसा उलटा अर्थ नहीं लगाना चाहिए। आपने ऐसा गलत अर्थ लगाकर अप्रैल १९१९ में दो निर्दोष व्यक्तियोंका खून किया। आप कदापि ऐसा अर्थ न करें कि गांधी तो 'बड़ा' व्यक्ति है, इसलिए जब वह कहे कि मकानोंमें आग मत लगाओ तब आग लगाना और जब वह कहे तलवार मत चलाओ तब तलवार चलाना ही आपका काम है। याद रखिए, अगर आपसे फिर ऐसी भूल हुई तो आपको अपनी तलवारें गांधीकी गर्दनपर चलानी होंगी। जो गांधी आपको अपना सगा मानता है वह आपसे कहता है कि मैं जो-कुछ कहता हूँ उसका अगर आप गलत अर्थ लगायेंगे तो मेरी गर्दनपर आपकी छुरी चलेगी। आपकी ऐसी भूलोंके विचार-मात्रसे मैं काँप जाता हूँ। आप मिल छोड़कर बाहर आये ही कैसे? दो-चार व्यक्तियोंने आपपर दबाव डाला, आपसे कुछ कहा और आप निकल पड़े? अपने-आपको मिलसे ऐसे छुडाकर भागनेमें आपने जवाँमर्दी नहीं दिखाई। यदि मुसलमान खिलाफतकी, हिन्दू हिन्दू धर्मकी और ये दोनों हिन्दुस्तानकी रक्षा करना चाहते हैं तो आपको सिंह बनना होगा, भेड़ नहीं। हमें चालाकी नहीं करनी है। हम धर्मको और इस्लामको चालाकीसे नहीं बचाना चाहते। हमें तो जवाँ-मर्दी दिखानी है। हमें विश्वासघातका मुकाबला विश्वासघातसे नहीं करना, खूनीको मारना नहीं बल्कि स्वयं मरना है। यह बात आप जान लें और अच्छी तरहसे समझ लें। आज मजदूरोंने अपने कामसे मेरी नाक काट दी है, मौलाना साहबका अपमान किया है। खिलाफतके, स्वराज्यके, हिन्दुस्तानके काममें विघ्न डाल दिया, इस कामसे स्वराज्यका चाँद ओटमें हो गया, उसे आज ग्रहण लग गया। मेरे जैसे व्यक्तिको, जो आज एक ही काममें तल्लीन है, आप हतोत्साहित कैसे कर सकते हैं? मुझे मज-दूरोंपर इतना अधिक विश्वास था कि जिन भले मजदूरोंने २३ दिनतक लगातार एक पेड़के नीचे बैठकर[1] ईश्वरके सम्मुख प्रतिज्ञा ली थी, वे ईश्वरको नहीं भूलेंगे। आज आप खिलाफत, हिन्दू धर्म और हिन्दुस्तानको भूल गये हैं।

इसके प्रायश्चित्तके रूपमें आप मिल-मालिकोंसे माफी माँगेंगे और जितने घंटे कामसे दूर रहे हैं उतने घंटोंकी क्षतिपूर्ति करेंगे। ऐसा करनेमें भलमनसाहत है। आप डरते हैं कि मिल-मालिक आपको रौंद देंगे। ऐसा भय तो भेड़ोंको होता है। जिनमें शक्ति होगी वे इस तरहसे नहीं डरेंगे, ऐसे लोगोंको कोई नहीं दबा सकता। जिनमें शक्तिका अभाव होगा उन्हें सारी दुनिया डरायेगी। तर्के-मवालातका मतलब ही यह है कि इन्सानियतको जानें और उसका विकास करें।

हमसे अगर आप काम करवाना चाहते हैं तो हम जो कहें उसका आप उलटा अर्थ न लगायें। अब मैं किस मुँहसे मिल-मालिकोंके पास खिलाफत और स्वराज्यके लिए मदद माँगने जा सकता हूँ? वे मुझसे कहेंगे कि आप जो काम कर रहे हैं उससे तो हिन्दुस्तानका नाश ही होनेवाला है। अगर हम करोड़पति बन गये हैं तो हमने मजदूरोंको भी तो कुछ दिया है, हम उनको जो पैसा देते हैं वे उसका कमसे-

१. यह जिक्र अहमदाबादमें उस बबूलके वृक्षका है जिसके तले बैठकर गांधीजी हड़ताली मजदूरोंके सामने भाषण दिया करते थे। देखिए खण्ड १४।

कम सदुपयोग तो करे। अभी तो वे जिस तरहसे पैसेका उपयोग कर रहे है अगर वैसे ही करते रहे तो हिन्दुस्तान बिलकुल बैठ जायेगा। मै ऐसा नही चाहता। लेकिन आप तो ऐसा ही रास्ता अपनाये बैठे है। मै स्वय मिल-मालिक होता तो आपको बता देता कि आप मुझे कभी गुलाम नही बना सकते। अभी तो वे आपके सामने बकरी बन गये है। आप दोनो ऐसे अवसरकी तलाशमे है जब आप दोनो परस्पर एक-दूसरेको कुचल सके। आप दोनो वर्ग एक दूसरेसे डरते है और इसीसे आप नही चाहते कि आप मिल-मालिकोसे माफी माँगे और उन्हे सिर उठानेका अवसर मिल जाये।

अली भाइयोने जो क्षमा माँगी मै आपसे उसके बारेमें बात करना चाहता हूँ। उन्होने क्या यह क्षमा जेल न जानेकी खातिर माँगी है? अली भाई कोई जेल जानेसे नही डरते। हम तीनो जने इस वर्ष फाँसीपर चढनेकी बात कह रहे है। तब क्या यह क्षमा उन्होने अपने लिए माँगी? नही, यह क्षमा उन्होने खिलाफतके प्रति न्यायकी खातिर माँगी है, भलमनसाहतसे काम करनेवालो के लिए माँगी है। मैने उनसे कहा था कि आपके भाषणमे कटुता है। आपके भाषणका कोई यह अर्थ भी लगा सकता है कि आप हिंसा करवाना चाहते है। उन्होने मेरी नम्र सलाह मानी और उन्होने शुद्ध हृदयसे सारे हिन्दुस्तानको बता दिया कि हम हिंसा नही चाहते। ये दोनो भाई जानते है कि अमन और तलवारके बीच कोई मेल नही हो सकता। वे कहते है कि तर्के-मवालातसे अगर खिलाफतके प्रश्नका सन्तोषजनक हल नही निकलता तो हम तलवार खीचकर या तो खुद मर जायेगे या दुश्मनकी हत्या कर देंगे और इस तरह खिलाफतके प्रश्नका निर्णय करेगे। मेरा अपना धर्म मुझे तलवार खीचनेसे मना करता है। मै किसीकी हत्या नही करना चाहता। हिन्दू धर्मको बचाते हुए मै मर भले ही जाऊँ लेकिन किसीको मारूँगा नही। मेरे और अली भाइयोके बीच इतना फर्क होनेके बावजूद मै उन्हे यह समझा सका हूँ कि अभी तलवार न खीचना हमारा कर्त्तव्य है। इन्होने माफी माँगी है सो जेलसे बचनेके लिए नही। दिलपर अकुश न रखकर जेल जाना पाप है। हम पवित्र बने, बलिदान करे और फिर यदि अत्याचारी हमे जेल भेजे तो दुनिया उसपर थूकेगी। जो पवित्र व्यक्तिको फाँसीपर चढाता है वह सारी दुनियाके तिरस्कारका पात्र होता है। हम तो चाहते है कि हम सरकारके हाथोमे जाये और सरकार हमे फाँसीपर चढाये। अली भाइयोकी इस माफी माँगनेका अगर अहमदाबादमे दूसरा अर्थ किया जाता है, हिन्दुस्तानमे दूसरा अर्थ किया जाता है तो अहमदाबाद भूलता है, हिन्दुस्तान भूलता है। दिन-ब-दिन हममे भलमनसाहत जड पकड़ती जाती है। आप शिक्षित बनें, सज्जन बने। कोई बात अगर आपको अच्छी नही लगती और अपनी नापसन्दगी जाहिर करनेके लिए अगर आप उसका विरोध करते है तो यह एक जुदा बात है। लेकिन अगर आप सीनाजोरी करते है तो यह बात कैसे सहन की जा सकती है। इस न्यायको अगर आप सीख ले तो खिलाफत और पजाबके प्रति न्याय तथा स्वराज्य आपके हाथमे है।

मजदूरोके लिए आज एक पत्रिका वितरित की गई है। तिलक स्वराज्य-कोषमे चन्दा देना, कांग्रेसके रजिस्टरमे अपना नाम दर्ज कराना और अपने घरोमे चरखा चालू

करना मजदूरोका फर्ज है। घरमे चरखा दाखिल करनेका अर्थ यह हुआ कि आपने अकालके विरुद्ध बीमा करवा लिया है। मजदूरोको मिलका कपडा नही पहनना चाहिए और उन्हे समझ लेना चाहिए कि मिलका कपडा तो कगाल व्यक्तियोके लिए है।

मै अपने और अली भाइयोके सम्बन्धमें दो शब्द कहना चाहता हूँ। हमारा सम्बन्ध एक माँसे जन्मे भाइयोसे तनिक भी कम नही है। मै १९१५ मे जब दिल्ली गया तभीसे उनके सम्पर्कमे आया। उस दिनसे मैने उनका साथ नही छोडा और वे भी मेरे आँचलको पकडे रहे है। वे कट्टर मुसलमान है, मै कट्टर हिन्दू होनेका दावा करता हूँ। वे नही चाहते कि मै अपने धर्मसे विचलित होऊँ और मै भी नही चाहता कि वे अपने धर्मको बिगाडे। अपने-अपने धर्मका पालन करते हुए भी हम ऐसी स्थिति-मे पहुँच गये है कि हम एक साथ फाँसीपर चढने और मर मिटनेको तैयार है। हिन्दू धर्म और इस्लाम, दोनोमे इतनी सज्जनता जरूर है।

अब मै मौलाना साहबसे प्रार्थना करता हूँ कि वे आपको जो सन्देश देना चाहते है स्वय अपने मुखसे दे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १६-६-१९२१

१०१. पत्र : रणछोड़दास पटवारीको[1]

१३ जून, १९२१

आदरणीय भाई रणछोडदास,

आप अन्त्यजो सम्बन्धी मेरे विचारोसे भले ही सहमत न हो लेकिन अगर आप चरखेके प्रसार और शिक्षाके अर्थ तिलक स्वराज्य-कोषमे चन्दा दे और दूसरोसे भी देनेके लिए कहे तो अच्छा होगा। आपसे तो बहुत आशाएँ रखता हूँ। आपने जो लेख लिखा है, चिरजीव छगनलालने वह मुझे दिखाया था, लेकिन मै उसे पढ नही पाया हूँ। अवकाश मिलनेपर पढूँगा।

मोहनदासके प्रणाम

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २७९७)की फोटो-नकल तथा (जी० एन० ४११५ से भी। सौजन्य पटवारी परिवार

१. गोंडलके दीवान।

१०२. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको[1]

अहमदाबाद

१३ जून, १९२१

सुज्ञ भाई,

भावनगरसे लिखनेवालोने मुझे खबर दी है कि आप मेरी प्रवृत्तियोके एकदम विरुद्ध नही है। मै चरखे और शिक्षाके सम्बन्धमे आपकी और अन्य सभी लोगोकी सहायताकी अपेक्षा रखता हूँ। यह रकम इन्ही कार्योके लिए दी जा रही है, इस वातका स्पष्ट रूपसे उल्लेख करते हुए आप तिलक स्वराज्य-कोषमे चन्दा दे और लोगोसे दिलवाये।

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१७७) की फोटो-नकल और (एस० एन० २७७६९) तथा (जी० एन० ५८६४) से भी।

१०३. बहनोंसे

सत्याग्रह आश्रम

ज्येष्ठ सुदी ९, सवत् १९७७ [१४ जून, १९२१]

यह मेरी अन्तिम पत्रिका है। पत्रिकाओका जनतापर आजतक क्या प्रभाव हुआ है, सो मै नही जानता। जिस-जिस वर्गको सम्बोधित करके मैंने पत्रिका लिखी है उनमें से अगर एक वर्ग भी तदनुसार पूरी तरह चले तो जून मासके अन्ततक दस लाख रुपया अवश्य एकत्रित हो जाये।

समस्त भारतवर्षमे बहनोने जिस जागृतिका परिचय दिया है वैसी जागृति किसी दूसरे वर्गने नही दिखाई है। इससे पहले महिलाओने राष्ट्रीय सभाओमे इतनी बडी सख्यामे भाग नही लिया था, लेकिन अब वे सब स्थानोपर हजारोकी सख्यामे आने लगी है। यह तो मेरे जैसे श्रद्धालुके लिए शुभ चिह्न है। यही मुझे बताता है कि अब धर्मराज्य हमारे समीप आता जा रहा है।

अगर दूसरे वर्ग भारतकी लाज न रखें तो भी भारतकी महिलाएँ उसकी लाजको अक्षुण्ण रख सकती है। स्त्रियोने हमेशा धर्मकी रक्षा की है। धर्मके लिए स्त्रियोने अपने प्राण उत्सर्ग कर दिये है। धर्मके लिए सीता-दमयन्तीने हजारो दु ख उठाये हैं।

१. सर प्रभाशकर दलपतराम पट्टणी (१८६२–१९३७); भावनगर रियासतके दीवान, इडिया कौंसिलके सदस्य, १९१७–१९१९।

स्त्रियोने अपनी उदारताके वशीभूत हो सैकडो तरहके अन्धविश्वास और ढोंगको भी प्रश्रय दिया है। वही स्त्रियाँ जब राष्ट्रकार्यके मर्मको समझ जायेगी तो शेष क्या रह जायेगा? फिर तो राष्ट्रका खजाना खाली नही रहना चाहिए।

स्त्रियाँ स्वर्गीय लोकमान्य तिलकके नामसे अपरिचित नही है। उनकी स्मृति उन्हे कोई कम प्रिय नही है। उनके चारित्र्य बलसे हिन्दुस्तान दीप्त हो रहा है। उनके आत्मत्यागसे हिन्दुस्तान स्पन्दित हो रहा है। उनकी स्मृतिको चिरस्थायी बनाने तथा स्वराज्यकी स्थापना करनेके लिए गुजरातको दस लाख रुपया चन्दा देना है। इस कोषमे बहने रुपया और आभूषण दे सकती है। आज बहने आभूषणोका क्या उपयोग करेगी? जब हिन्दुस्तानके करोडो व्यक्तियोको भरपेट खाना नही मिलता, जब हिन्दुस्तानमे अत्याचारका बोलबाला है तब बहने आभूषण कैसे पहन सकती है? अशोक वाटिकामे सीताजी क्या आभूषण पहनती थी? दमयन्ती जब वनमे विलाप करती फिर रही थी तब क्या उसके अगपर आभूषण थे? तारामती जब हरिश्चन्द्रके साथ भटक रही थी तब क्या वह हीरे-मोतीके हार पहने हुए थी? अधर्मके इस युगमे आभूषण पहनना मुझे तो अनुचित जान पड़ता है।

जो बहने यह सोचकर अपने आभूषणोको सँजोकर रखती है कि दुःखके समय वे काम आयेगे तो उनसे मै इतना ही कहूँगा कि यदि आप ईश्वरपर विश्वास रखती है तो आभूषणोकी अपेक्षा वह विश्वास आपके अधिक काम आयेगा। याद रखे कि हिन्दुस्तानमे करोडो स्त्रियाँ ऐसी है जिनके पास एक हलकी-सी अँगूठी भी नही है और जिनके सिरपर आकाश और नीचे धरती ही है। उन्हे भी ईश्वर खानेको दे रहा है। आप भी अगर परिश्रम करनेमे न शरमाये तो आपके पवित्र हाथ-पैर आभूषणोकी अपेक्षा आपको अधिक प्रतिफल देगे। भगवान्ने जिसे दाँत दिये है वह उसे दाने भी देगा। मेहनती और ईमानदार व्यक्तिको आजतक भूखा नही मरना पड़ा है। आलसीको ही आभूषणोपर निर्भर रहना पडता है। बहने आलस्य छोड़े और गहनोका भी त्याग करे।

बहने जो पैसा देगी उसका उपयोग ही आभूषणोकी आवश्यकताकी पूर्ति करेगा, क्योकि वह पैसा गरीब बहनोको चरखा दिलाने और हमारे बच्चोको अच्छी शिक्षा देनेमे खर्च होगा। तात्पर्य यह कि बहने जो पैसा अथवा आभूषण दान देगी उसका लाभ वस्तुतः उन्हे ही मिलेगा। जो व्यक्ति अपनी कमाई अपने पास रखकर अपने ऐश-आरामके लिए उसका उपयोग करता है वह व्यक्ति कुटुम्बघाती माना जाता है, स्वार्थी कहलाता है। जो अपनी कमाई परिवारकी गोलकमे डालता है वह भी अपनी कमाईका उतना ही उपयोग कर सकता है जितना कि पहला व्यक्ति करता है तथापि वह कुटुम्बका सेवक माना जाता है, निस्स्वार्थी समझा जाता है। देश-सेवाका अर्थ है देशको अपना कुटुम्ब समझना। देशकी गोलकमे हम जो पैसा डालेगे उसका हमे पूरा लाभ मिलेगा। जिस तरह हमारे पैसेका लाभ औरोको मिलता है वैसे ही औरोके पैसेका लाभ हमे मिलता है। इस तरह जो बहनें पैसे अथवा आभूषण देगी वे कुछ भी नही खोयेगी।

बहने अपने परिवार और पतिको भी इस कार्यकी ओर प्रेरित कर सकती है। अनेक बार स्त्रियोके खर्चके कारण पुरुष जितना चाहते है उतना देशको नही दे पाते।

कभी-कभी स्त्री अपने पतिको दान देनेसे रोकती भी है। इसके बजाय मैं उनसे पुरुष-वर्गको प्रोत्साहन देनेकी प्रार्थना करता हूँ। यह बात भी मेरी जानकारीसे बाहर नही है कि अनेक स्त्रियाँ पुरुष-वर्गको अधिक देनेके लिए प्रेरित करती है और उसमे सफल होती है। अन्य बहने भी इनका अनुकरण करे।

मेरी प्रार्थना है कि जो बहनें इस पत्रिकाको पढें वे दूसरोको भी पढायें। मुझे उम्मीद है कि बहने स्वय देकर ही सन्तुष्ट न रहेगी बल्कि अपनी अन्य बहनोको भी देनेके लिए प्रेरित करेगी।

जहाँ पैसा दे, वहाँसे रसीद अवश्य लें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १६–६–१९२१

१०४. टिप्पणियाँ

अली बन्धुओंकी वह सफाई[1]

अली बन्धुओने अपनी सफाईमे जो वक्तव्य दिया था, उसे लेकर अभीतक लोगोके मनमे शकाये उठती रहती है। अब भी मेरे पास इस बातके उलाहनेसे भरे हुए पत्र आ रहे हैं कि मैं वाइसरायसे मिलनेके लिए गया ही क्यो। कुछ लोगो-का ऐसा खयाल है कि मैंने सारा मामला बिगाड दिया; कुछ अन्य लोग अली बन्धुओपर यह आरोप लगाते है कि आखिर एक बार उन्होने भी कमजोरी दिखाई है, और वह भी मेरे प्रति उनकी भावनाके कारण। मै जानता हूँ कि यह सारा तूफान जल्दी ही शान्त हो जायेगा। क्योकि मैने इस प्रसगमे जो-कुछ सुना और पढ़ा है, उसके बावजूद, मुझे यही लगता है कि वाइसरायकी इच्छा जानकर अपने विचारोसे उन्हे अवगत करानेके लिए उनसे मिलकर मैंने कोई गलती नही की। गलती तो तब होती जब मै उनसे लिखित निमन्त्रण पानेके लिए बैठा रहता। मुझे यह भी लगता है कि अली बन्धुओने जो वक्तव्य जारी किया, उन्हे वह वक्तव्य जारी करनेकी सलाह देकर मैंने खिलाफत और भारतके हकमे जो सर्वोत्तम था वही किया। यह वक्तव्य देकर अली बन्धुओने विनम्रता और उच्च कोटिका साहस ही दिखाया है। उन्होने दिखा दिया है कि अपने देश और अपने धर्मके लिए वे अपना अभिमान और अपना सभी कुछ खुशी-खुशी बलिदान कर सकते हैं। अगर वे वक्तव्य देनेसे इनकार कर देते तो उससे हमारे पक्षको हानि ही पहुँचती, इसलिए उन्होने वक्तव्य देकर हमारे पक्षको मजबूत किया है।

एक एतराज

लेकिन इस बातका पूरा-पूरा एहसास होनेके बावजूद इसपर मुझे कोई आश्चर्य नही है कि मेरे पास अली बन्धुओके बयानपर एतराज भरे पत्र आ रहे हैं। उन एतराजो-से केवल यही प्रकट होता है कि हम जिन तरीकोपर चल रहे है वे नये हैं, देश

१. देखिए "अली भाइयोंकी क्षमा-याचनाका मसविदा", १४–५–१९२१।

अपनी उचित माँगोमे जरा-सी भी कमी करनेको तैयार नही है, और उन माँगोको पूरा करानेके लिए जनता सिर्फ अपनी ही ताकतपर निर्भर रहना चाहती है।

मेरी इस सलाहकी और अली बन्धुओ द्वारा उसे स्वीकार करनेकी भर्त्सनामे प्राप्त सबसे जोरदार दलीलवाले पत्रके कुछ सम्बद्ध अश यहाँ दिये जा रहे है। इसके अतिरिक्त यह पत्र एक बहुत बड़े असहयोगी नेताने लिखा है। यह पत्र प्रकाशनके लिए नहीं भेजा गया है। लेकिन मै जानता हूँ कि उसे यहाँ छापनेमे लेखकको कोई खास आपत्ति भी न होगी; क्योकि मुझे मालूम है कि ऐसे विचार अकेले उन्हीके नही और भी कई विचारशील असहयोगियोके है। इस प्रसगको लेकर जो सवाल पैदा हो गये है, उनपर और असहयोगके फलितार्थोपर विचार करना मै अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। शान्तिसे अपनी बात कहकर ही मै असहयोगकी सचाई, खूबी और औचित्यको समझानेकी आशा कर सकता हूँ। तो उस पत्रके कुछ अश इस प्रकार है:

> अली बन्धुओंके वक्तव्यको अगर पूर्व-परिस्थितियोंसे अलग करके पढ़ा जाये तो अपने-आपमें वह एक शानदार वक्तव्य है। किसी क्षण जोशमें आकर अगर वे ऐसी बातें कह गये हों, जिनके बारेमें बादमें उन्हें लगता है कि इनमें किसीको हिंसा भड़कानेवाली प्रवृत्तिका आभास मिल सकता है, तो उसके लिए खेद प्रकट करके उन्होंने अपने स्तरके सार्वजनिक नेताओंके सम्मानके योग्य ही कार्य किया है। भविष्यके लिए उन्होंने जो आश्वासन दिया है, उसे भी मैं सर्वथा उचित समझता, यदि यह आश्वासन उन्होंने अपने उन सहकर्मियोंको दिया होता, जो उनके विपरीत, किसी भी स्थितिमें हिंसामें विश्वास नहीं करते हैं। लेकिन उन्होंने जिस शब्दावलीका प्रयोग किया है, वह इस प्रकार है: "जो ऐसा चाहते हैं उन सभीको सार्वजनिक रूपसे आश्वासन और वचन" आदि। सभीपर लागू होनेवाली ऐसी गोलमोल शब्दावलीके प्रयोगसे इस बातके सम्बन्धमें किसीको भी कोई भ्रम नहीं हो सकता कि वास्तवमें किस पक्ष-विशेषको ऐसे "आश्वासन और वचन" की आवश्यकता थी और किसके आदेशपर यह आश्वासन और वचन दिया गया है। वाइसरायके भाषणसे तो रहा-सहा सन्देह भी पूरी तरह जाता रहा और हमें यह बात निर्विवाद रूपसे मालूम हो गई कि असहयोग आन्दोलनका नेता सरकारसे बातचीत चला रहा था और उसीने अली बन्धुओंको सार्वजनिक रूपसे सफाई और आश्वासन देनेके लिए प्रेरित करके उन्हे गिरफ्तारीसे बचाया।
>
> मैं इस मामलेको किसी और दृष्टिसे देख नहीं पा रहा हूँ और इस दृष्टिसे देखनेपर तो समूचे आन्दोलनसे सम्बन्धित कई अन्य गम्भीर प्रश्न विचारार्थ उपस्थित हो जाते हैं। दरअसल मुझे तो लगता है कि असहयोगके पूरे सिद्धान्तको ही तिलांजलि दे दी गई है।
>
> मैं न तो उन लोगोंमें से हूँ जो सरकारके नामसे ही कतराते हैं, और न उन लोगोंमें से ही जो हमारी सारी शिकायतोंका एकमात्र हल और स्वराज्य-

प्राप्तिका एकमात्र उपाय अन्तमें सरकारसे समझौता कर लेना ही मानते है। मेरा तो आपकी इस सीखमें विश्वास है कि स्वराज्य प्राप्त करना पूरी तरह और सर्वथा हमपर ही निर्भर है। लेकिन साथ ही अभीष्ट परिस्थितियोंमें सरकारसे समझौतेकी सम्भावनाको भी मै रद नहीं करता, और जहाँतक मै जानता हूँ, स्वयं आप भी नहीं करते। लेकिन ऐसे समझौते सिर्फ सिद्धान्तोके आधारपर ही हो सकते है, व्यक्तियोंकी सुविधा या सुरक्षाको सोचकर नहीं। जिस आन्दोलनमें बहुतसे कार्यकर्त्ता मिल-जुलकर काम करते हों, उसमें आप व्यक्ति-व्यक्तिमें कोई भेदभाव नहीं कर सकते; उसमें तो छोटेसे-छोटा कार्यकर्त्ता भी नेताओंसे उतनी ही सुरक्षा पानेका अधिकारी है जितना कि बड़ेसे-बड़ा और प्रमुखतम व्यक्ति। अली बन्धुओसे कहीं नरम भाषाका उपयोग करनेके अपराधमें हमारे सैकड़ों नहीं तो, अवश्य ही बीसियों कार्यकर्त्ता खुशी-खुशी जेल गये है। इसी तरहकी सफाई और आश्वासन देकर उनमें से कुछको तो जेल जानेसे बचाया ही जा सकता था, लेकिन किसीको उन्हे वैसी सलाह देनेका खयाल नहीं आया। उलटे जेल जानेके लिए नेताओं और असहयोगसे सम्बन्धित सारे अखबारोंने उनकी तारीफ ही की। ऐसे लोगोमे मुझे इस समय हमीद अहमदका सबसे ज्यादा खयाल आ रहा है, जिन्हे हालमें ही इलाहाबादमें आजीवन कालेपानीकी सजा दी गई है और जिनकी सारी सम्पत्ति जब्त कर ली गई है। क्या कोई खास कारण है, जिसकी वजहसे इस आदमीको बचाया नहीं जाना चाहिए? मौलाना मुहम्मद अलीने ३० मईके अपने बम्बईवाले भाषणमें हमीदकी खूब तारीफ की है। मै नहीं कह सकता कि जिस व्यक्तिकी स्थिति ठीक हमीद अहमदकी सी थी, उसकी प्रशंसासे, हमीद अहमदको क्या कोई सान्त्वना मिल सकती है जब कि स्वयं उस व्यक्तिने सफाई और आश्वासन देकर अपने-आपको बचा लिया हो। जेलोमें और भी बहुत-से लोग सड़ रहे है, जिन्होंने कोई अपराध नही किया है; और फिर उससे भी कहीं ज्यादा लोगोंके प्रति सरकार वैसा ही करने जा रही है। अपने निरापद स्थानसे उन सबकी तारीफ कर देना और अपनी शुभाकांक्षाएँ पहुँचा देना ही क्या हमारे लिए काफी है?

वाइसरायके भाषणसे स्पष्ट हो गया है कि उनसे आपके बार-बार मिलनेका जो सिर्फ एक निश्चित परिणाम निकला, वह है अली बन्धुओकी सफाई और आश्वासन। बादके अपने भाषणोंमें आपने भी इस बातको बिलकुल स्पष्ट कर दिया है कि हमारा आन्दोलन बिना रुके चलता रहेगा। ऐसा लगता है कि किसी सैद्धान्तिक प्रश्नपर कोई समझौता नहीं हुआ है, और जिस प्रश्नपर समझौता हुआ यानी हिंसाको न भड़कानेके प्रश्नपर, उसके लिए दोनो पक्षोकी ओरसे बातचीतकी कोई भी आवश्यकता नही थी। मै यह नही कहता कि

आजकी परिस्थितिमें सरकारसे बातचीत करनी ही नहीं चाहिए थी, यद्यपि न करनेके पक्षमें भी बहुत-कुछ कहा जा सकता है। जब दोनों पक्षोंने यह समझ लिया था कि इस खेलको अन्ततक खेलना ही है, तो आप और लॉर्ड रीडिंग जैसे ईमानदार और खरे प्रतिद्वन्द्वियोंके लिए यह बहुत जरूरी और उचित था कि इस खेलके नियम तय कर लेते, ताकि किसी भी पक्षकी ओरसे बेईमानी नहीं की जाती। और बेशक इन नियमोंका लाभ थोड़ेसे कृपापात्र व्यक्तियोंको नहीं, बल्कि इस खेलमें शामिल सभी लोगोंको प्राप्त होना चाहिए था। सबसे जरूरी चीज तो यह थी कि इस विषयपर सहमति हो जाती कि किन हथियारोंका प्रयोग किया जाना है। कुछ प्रान्तीय सरकारें ऐसी है जो कहनेको तो कहती हैं कि प्रचारका मुकाबला प्रचारसे किया जायेगा, लेकिन दरअसल वे घोर दमनकी कार्रवाइयाँ कर रही हैं। मेरे विचारसे मुख्य सवालपर कोई सहमति न हो सकनेपर भी इस और ऐसे ही दूसरे अनेक मुद्दोंपर बातचीत करना उचित और उपयोगी हो सकता है।

आशा है कि आप मुझे गलत नहीं समझेंगे। अली बन्धुओंके त्यागके लिए मेरे मनमें किसीसे भी कम आदरका भाव नहीं है और उनकी मैत्रीको मैं अपना परम सौभाग्य मानता हूँ। जिस विचारसे इधर कुछ दिनोसे मेरा मन परेशान रहा है वह यह है कि हम लोग, जो अपने कार्यकर्त्ताओंके जेल जाने और तरह-तरहके कष्ट उठानेका मुख्य कारण हैं; स्वयं सारी आपदाओंसे अछूते बचे हुए हैं। उदाहरणके लिए सरकारने पत्रक बाँटनेके अपराधमें निर्दोष बालकोंको जेल भेज दिया है, लेकिन उन पत्रकोंके लेखकोंको मुक्त रहने दिया है। हममें से कुछ लोगोको गहरा मानसिक कष्ट पहुँचानेका इससे ज्यादा बढ़िया कोई और उपाय वह सोच ही नहीं सकती थी। फिर भी मेरी रायमें वह समय आ गया है, जब नेताओंको जेलके कष्ट भोगनेके अवसरका स्वागत और बच निकलनेके प्रस्तावोंको दृढ़तासे अस्वीकार करना चाहिए। मैंने अली बन्धुओंके आचरणपर जो आपत्ति की है, वह मामलेको इसी दृष्टिकोणसे देखते हुए की है। व्यक्तिगत रूपमें तो मैं उनसे स्नेह ही करता हूँ।

गलत धारणा

पत्र उच्चाशयता और साहससे ओत-प्रोत है। और इन्ही गुणोके कारण परिस्थितिको ठीक रूपसे समझनेमे भूल हुई है। इस गलत धारणाका मुख्य कारण वाइसरायके दुर्भाग्यपूर्ण कथनको ही समझना चाहिए।

अली बन्धुओने सफाई सरकारको नही दी। वह उन मित्रोके लिए है, जिन्होने उनके भाषणोकी ओर उनका ध्यान दिलाया। इतना तो निश्चित ही है कि यह सफाई "वाइसरायके आदेशपर" नही दी गई। मेरे इस कथनको कि उन्होने तो इस ओर इशारा भी नही किया था, आपसी चर्चाको जाहिर करनेका गुनाह न समझ

लिया जाये। अली बन्धुओके भाषणोको देखते ही उनकी प्रामाणिकता और आन्दोलनके अहिसात्मक रूपको साबित करनेकी गरजसे मैने खुद ही कहा कि मै उन्हे बयान देनेकी सलाह दूँगा। उनकी आजादीके लिए सौदेबाजी करनेका कोई सवाल ही नही था। उनके भाषणोकी ओर मेरा ध्यान दिलाये जानेके बाद मै उन्हे (अगर मुझसे बनता तो) हिंसा भड़कानेके स्पष्ट आरोपके आधारपर तो कभी जेल जाने नही दे सकता था। जिन लोगोपर ऐसा आरोप लगाया गया है, उनमे से सभीको मैने यही सलाह दी है और कहा है कि अगर उनके भाषण हिंसात्मक हो तो उन्हे जरूर अफसोस जाहिर करना चाहिए। असहयोगी इसके सिवा दूसरा कुछ कर भी नही सकता। अदालतमे अली बन्धुओपर मुकदमा चलनेकी सूरतमे मै उन्हे अपने भाषणोके उन अशोके लिए अदालतसे माफी माँगनेकी सलाह देता जो मेरे विचारसे ऐसे है जिनके बारेमे यह सोचा जा सकता है कि इनके पीछे हिसा भडकानेका मशा था। हिंसाका मशा न रखना ही असहयोगीके लिए काफी नही होता बल्कि यह भी जरूरी है कि कोई भी समझदार आदमी उसके भाषणका वैसा मतलब न लगा सके। हमारा व्यवहार ऐसा होना चाहिए कि हमारे ऊपर कोई अँगुली न उठा सके। इस आन्दोलनकी सारी सफलता इस बातपर निर्भर करती है कि वह सर्वथा निष्कलक बना रहे। इसलिए पत्र-लेखक और उनकी तरह सोचनेवाले दूसरे लोगोसे मै यही कहूँगा कि असहयोगके पूरे सिद्धान्तको, जैसा कि उनका खयाल है, "तिलाजलि नही दी गई है" बल्कि अली बन्धुओकी सफाईसे उसके अहिसात्मक रूपकी पुष्टि ही हुई है और इस तरह हमारा पक्ष ज्यादा मजबूत हो गया है।

आजाद कौन है?

लेकिन लेखकको असल दु:ख इस बातका है कि जहाँ अली बन्धु आजाद है, वहाँ दूसरे सामान्य कार्यकर्त्ता उनसे कही कम कडी बाते कहनेके लिए जेलोमे पड़े हुए है।

एक इसी बातसे असहयोगके असली स्वरूपका पता चल जाता है। असहयोगी अपनी सुरक्षाके लिए सौदेबाजी नही कर सकता, न उसे करनी चाहिए। मै दूसरोकी मुक्तिके लिए सौदेबाजी करनेके लिए स्वतन्त्र था। लेकिन अगर ऐसा करता तब तो असहयोग जिन सिद्धान्तोकी नीवपर खड़ा है मैने उन्हीका त्याग कर दिया होता। इसलिए मैने अली बन्धुओतक की मुक्तिके लिए सौदेबाजी नही की। बिलकुल साफ-साफ शब्दोमे मैने यही कहा कि सरकार जो चाहे करे, मेरा कर्तव्य तो अली बन्धुओसे मिलने पर उन्हे यही सलाह देना होगा कि अपनी प्रतिष्ठाकी, अपनी प्रामाणिकताकी रक्षाके लिए वे वक्तव्य दे।

हर हालतमें ईमानदारी

हमे तो इस खेलको सचमुच खेलकी भावनासे ईमानदारीसे खेलना ही है, चाहे सरकार उसी भावसे इसमें भाग ले या न ले। और सच बात तो यह है कि सरकार ऐसा करेगी, इसकी मुझे कोई उम्मीद भी नही है। जब मै इस नतीजेपर पहुँचा कि सरकारमे ईमान नही है, तभी मैने असहयोग किया। लॉर्ड रीडिंगकी सचाई और न्यायपर चलनेकी इच्छा हो सकती है और है भी; मगर उन्हे चलने नही दिया

जायेगा। अगर सरकारमे ईमानदारी होती तो अली बन्धुओपर मुकदमा न चलानेका फैसला करते ही दूसरे सब कैदियोको भी वह छोड़ देती। अगर सरकार ईमानदार होती तो पडित मोतीलाल नेहरू-जैसे प्रमुख अपराधीको आजाद छोडकर जवानोको जेलमे वन्द न करती। अगर सरकार ईमानदार होती तो वह नकली अमन सभाओ (लीग्ज़ ऑफ पीस) को बढावा न देती। अगर सरकार ईमानदार होती तो जिस तरह अमृतसर, कसूर, वीरमगाँव, अहमदावाद और अभी हालमे मालेगाँवमे अपने लोगो द्वारा किये गये गुनाहके लिए हमने पश्चात्ताप किया, उसी तरह वह भी बहुत पहले ही अपने नृशस और घृणित कृत्योपर पश्चात्ताप करती। इस सरकारके बारेमे मुझे किसी भी तरहकी झूठी आशा या भ्रान्ति नही है। सरकार चाहे तो कल अली बन्धुओको गिरफ्तार कर ले, मैं तो फिर भी उनकी सफाईको वाजिब ही मानता रहूँगा। उन्होने ईमानदारीका बरताव किया है और हम सबको भी वैसा ही करना चाहिए। सच तो यह है कि सरकार जो लोगोको अराजभक्तिके लिए गिरफ्तार कर रही है, वह अली बन्धुओको ही गिरफ्तार करने-जैसा है।

पत्र-लेखक महोदयके इस कथनके बारेमे भी कि जेलमे बन्द असहयोगी बाहर रहनेवाले असहयोगियोसे कम भाग्यवान है मुझे यही कहना पडेगा कि असहयोगके बारेमे उनकी समझ सही नही है। अगर मैं असहयोगके नियमोको किसी तरह भग न करूँ और निजी या सार्वजनिक नैतिक मूल्योको भी भग न करूँ और फिर भी काल-कोठरीमे बन्द कर दिया जाऊँ, तो इस सजाको मै आजादी मानूंगा। जैसे गुलाम-के लिए उसके मालिकका घर कैदखाना है, उसी तरह मेरी नजरोमे तो सारा भारत एक कैदखाना है। गुलाम अगर आजाद होना चाहता है तो उसे अपनी गुलामीके खिलाफ बराबर बगावत करते रहना पडेगा और बागी होनेके कारण मालिककी काल-कोठरीमें बन्द भी रहना पडेगा। काल-कोठरीका दरवाजा तो आजादीका राजद्वार है। जो लोग सरकारकी जेलोमे तकलीफे उठा रहे है, उनपर मुझे तरस नही आता। अन्यायी सरकारके राज्यमे निर्दोष लोगोको तो बराबर सूलीपर ही सुख मानना चाहिए। मेरी सलाह माननेसे इनकार करके जेलमे अपने साथियोके बीच जा बैठना तो अली बन्धुओके लिए सबसे आसान काम था। यहाँ मै पाठकोको यह भी बता दूं कि दक्षिण आफ्रिकाकी लड़ाईके आखिरी दौरमे जब मै पकडा गया[1] तो मेरी पत्नी और दूसरे सभी दोस्तोने छुटकारेकी साँस ली। दक्षिण आफ्रिकाकी जेलोमे ही मुझे लडाई और आन्दोलनसे फुर्सत मिल पाती थी।

अब यह बात साफ हो गई होगी कि असहयोगमे पकडे जानेवालोको जेलसे छुटकारा पानेके लिए बयान क्यो नही देना चाहिए।

अराजभक्ति एक सद्‌गुण

वर्तमान शासन-प्रणालीकी बेईमानीकी दो बहुत बढिया मिसाले मेरे सामने है। गुजरात विद्यापीठके उपकुलपति प्रोफेसर गिडवानीने दो महीने पहले बेजवाड़ामे एक

१. यह बात नवम्बर १९१३ की है; देखिए खण्ड १२।

भाषण दिया था। उस सिलसिलेमे मद्रासमे अराजभक्तिके आरोपका जवाब देनेके लिए उनके नाम एक सम्मन आया हुआ है। उसमे हिंसाको भडकानेकी कोई बात नही है, जैसा कि उनपर लगाये गये आरोपको पढनेसे साफ हो जायेगा। दफा १२४-ए जिसके मातहत उनपर आरोप लगाया गया है इस प्रकार है ". जो भी सम्राट्के या ब्रिटिश भारतमे कानूनसे स्थापित सरकारके प्रति नफरत या हिकारत पैदा करनेकी कोशिश करेगा या अपरागको बढावा देगा या देनेकी कोशिश करेगा, वह सजाका भागी समझा जायेगा। . " सम्राट्के प्रति घृणा या अराजभक्ति कोई नही फैलाता। श्री गिडवानीने अपने भाषणके द्वारा जिस प्रकारका अपराग फैलाया होगा, उस तरहकी अराजभक्ति तो अली बन्धु रोज ही उभारते और फैलाते रहते हैं। और इस सरकारके प्रति मुझसे ज्यादा अपराग रखने और अपराग फैलानेवाला तो दूसरा शायद ही कोई होगा। मै तो हर भले आदमीका यह परम कर्त्तव्य मानता हूँ कि अगर वह असहयोगियोके समान मौजूदा सरकारको एक बुराई समझता है तो इसके प्रति उसका भाव अपरागका ही होना चाहिए। उचित तो यही होता कि अली बन्धुओपर मुकदमा न चलानेका फैसला कर चुकनेके बाद सरकारको एक हिंसाके अलावा और किसी भी मामलेके सम्बन्धमे किसीपर मुकदमा नही चलाना चाहिए था। मगर सरकारका मौजूदा तन्त्र जैसा है, उसमे अपने वातावरणसे रिश्ता तोडे विना और एक भ्रष्ट तन्त्रकी भ्रष्ट परम्पराओकी पूरी तरह अवहेलना किये बिना इग्लैडके भूतपूर्व प्रधान न्यायाधीश (लॉर्ड चीफ ऑफ जस्टिस) भी कथनी और करनीके इस घोर अन्तरको मिटा नही सकते।

सताया हुआ सिन्ध

एक दोस्तने सिन्धमे दमनकारी कार्रवाइयोका जो विस्तृत ब्यौरा भेजा है, वह इस प्रकार है

> सिन्धके कमिश्नरने तमाम मुख्तियारकारोंको एक गुप्त गश्ती पत्र भेजकर असहयोग आन्दोलनके खिलाफ जवाबी आन्दोलन शुरू करनेकी हिदायत दी है। कई जगहके मुख्तियारकार असहयोग आन्दोलनको रोकनेके लिए बड़े ही विचित्र कदम उठा रहे हैं। उनमें एक तो है असहयोग-विरोधी समितियाँ बनाना, जो कि खुला और साफ तरीका है और जिससे किसीको एतराज नहीं हो सकता। लेकिन इसके साथ ही कई स्थानोंपर लोगोंसे यह भी कहा गया है कि वे असहयोग आन्दोलनके प्रचारकोंको अपने घरोंमें न ठहरायें और पंचायतोंपर जोर डाला गया है कि वे लोगोंको उनकी सभाओं और भाषणोंमें जानेसे रोकें। और वास्तवमें कहीं-कहीं ऐसा हुआ भी है कि ठहरे हुए प्रचारकोंसे मेजबानने (उदाहरणके लिए बदीनमें) घर छोड़कर चले जानेके लिए कहा गया। थरपारकर जिलेके खिपरो कस्बेकी खबर है कि बस्तीसे कुछ दूर एक भाषणकर्त्तापर किसी नकाबपोशने हमला कर दिया; उसे ऊँटपर से नीचे घसीट लिया और लाठीसे पीटा, मगर रुपये-पैसेको हाथ नहीं लगाया। हमलावर उसका स्वराजी झंडा और शाल

लेकर चम्पत हो गया, मगर उसकी घड़ी और पैसोंको छुआ भी नहीं। सारे जिलेके लोग जानते हैं कि यह हमला एक जाने-माने अफसरकी शह पाकर किया गया, लेकिन इस हलकेमें पुलिसका ऐसा आतंक है कि कोई बयान या गवाही देनेके लिए तैयार नहीं होता। सक्खर जिलेकी हालत तो और भी खराब है। कोई तीन हफ्ते पहले रेलवे स्टेशनसे दस-एक मील दूर उबावरोमें सक्खर जिला कान्फ्रेंसका जलसा किया गया। हलकेके डिप्टी कलक्टरने गाड़ीवालोंको कह रखा था कि वे गांधी टोपीवालोंको अपनी गाड़ियाँ न दें। गाड़ीवालोंकी डिप्टी कलक्टरको नाराज करनेकी हिम्मत न हुई, वे डर गये और उन्होंने उनकी बात मान ली। जब जलसेके सदर श्री वीरुमल बेगराज, सक्खरके असहयोगी वकील श्री मूलचन्द और अन्य लोग सक्खरवाली ट्रेनसे स्टेशनपर उतरे तो उन्हें कोई गाड़ी नहीं मिली। एक गाड़ीवान किसी तरह राजी भी हुआ तो पुलिसके जमादारने उसकी पिटाई कर दी और तब उसने भी जानेसे इनकार कर दिया। अध्यक्ष और दूसरे लोग तेज धूपमें करीब एक मीलका फासला तय करके पासके एक गाँवमें पहुँचे। वहाँकी पंचायतने उनके लिए सवारीका इन्तजाम किया और तब कहीं धूपमें तपते हुए वे उबावरो पहुँच सके। उबावरोमें लोगोंको डरा दिया गया था कि अगर वे जलसेमें गये तो यहाँ उनके घर लूट लिये जायेंगे। इसलिए वे हिचकिचाने लगे। इसपर कान्फ्रेंसके स्वयंसेवकोंने उनके घरोंपर पहरा देनेका इन्तजाम किया और तब लोग जलसेमें आये। जलसेमें सी० आई० डी०का गुर्गा एक मुसलमान भाषण देनेकी जिद करने लगा। पूछनेपर भी उसने यह नहीं बताया कि वह किस विषयपर बोलेगा। आखिरमें इजाजत मिल जानेपर वह वहाँ मौजूद कार्यकर्त्ताओंमें से एकको भद्दी जबानमें बुरा-भला कहने लगा, मगर लोगोंने इसे भी बरदाश्त कर लिया। थोड़ी देर बाद पुलिसका दूसरा गुर्गा बिना किसी वजहके दो स्वयंसेवकोंपर टूट पड़ा और उसने उन्हें और आसपासके दो-चार आदमियोंको घूसों और जूतोंसे पीटा। लेकिन मार खानेवालोंने उलटकर जवाब नहीं दिया। सारे जलसेके दौरान जलसेका आयोजन करनेवालोंको यह अन्देशा बना रहा कि कहीं हिंसा न भड़क उठे; लेकिन अधिकारियोंके गुर्गे जी-तोड़ कोशिश करनेपर भी हिंसा नहीं भड़का सके। गाड़ीवाले कान्फ्रेंसके प्रतिनिधियोंको वापस ले जानेके लिए भी तैयार न हुए। मीरपुर माथेलोमें, जहाँ कार्यकर्त्ता और प्रतिनिधि उतरे थे, जलसेमें मौजूद कुछ अफसरोंने मौलवी ताज मुहम्मदकी खुलेआम तौहीन की, मगर मौलवी साहब और दूसरे लोगोंने भी सब-कुछ बरदाश्त किया और उनके साथ न तो मारपीट की और न उन्हें कड़ी बातें ही कहीं। जलसेके बादसे जिलेकी हालत दिनोदिन बिगड़ती जा रही है। उधर ये मुख्तियारकार मुसलमानोंकी सभाएँ करते रहे हैं और उन्हें भड़काते रहे हैं कि हिन्दू तुम्हारे साथ दगा और फरेब कर रहे हैं। इसलिए

मुसलमान हिन्दुओंको खुलेआम धमकाने लगे हैं कि अगर तुमने असहयोगियोंको अपने यहाँ ठहराया तो हम तुम्हारे यहाँ चोरी करवा देंगे। एक गाँवमें कांग्रेसका जत्था वहाँके मन्दिरमें आकर ठहरा। बात-की-बातमें तीस-एक मुसलमान लाठियाँ लिये हुए आ पहुँचे और कहने लगे: "हम भाषण देनेवालोंको पीटेंगे।" अन्तमें, पुजारीने बड़ी मुश्किलसे जत्थेवालोको दूसरे दरवाजेसे निकल जानेके लिए राजी किया। सक्खर कांग्रेस कमेटीके नौजवान मन्त्री श्री चोइथराम वलेछाको घोटकी नामके गाँवमें कोई तीस-चालीस लाठीधारी मुसलमानोंने घेर लिया। वे शान्तिसे मार खानेके लिए तैयार हो गये। यह देखकर कई नौजवान हिन्दू वहाँ आ गये और श्री वलेछाको घेरकर चुपचाप बैठ गये। वहाँकी हिन्दू पंचायतको जब यह बात मालूम हुई तो उसने आदमी भेजकर श्री वलेछा और उनके साथके तीन या चार स्वयंसेवकोको बुलवा भेजा। जब वे पंचायतमें गये तो ३० या ४० हथियारबन्द मुसलमानोंने वहाँ भी उनका पीछा किया और पंचायतकी सभामें जा बैठे और कहने लगे कि हम वलेछाको मारेंगे। पंचायतने श्री वलेछासे कस्बा छोड़कर चले जानेकी दर्ख्वास्त की। उन्होंने साफ कह दिया कि मैं जिस कामके लिए आया हूँ उसे पूरा किये बिना यहाँसे जानेका नहीं। तब पंचायतने मुसलमानोंसे जानेकी दर्ख्वास्त की, ताकि पंचायत अपना काम कर सके। मुसलमान सिर्फ़ हँस दिये और उन्होंने पंचायतकी बैठकसे जानेसे इनकार कर दिया। एक घंटेतक इन्तजार करनेके बाद भी जब कोई नतीजा नहीं निकला तो लाचार होकर पंचायतने श्री वलेछासे ही दर्ख्वास्त की कि वे गाँव छोड़कर चले जायें। तब कोई चालीस हिन्दुओंके संरक्षणमें वे स्टेशन चले गये। जहाँ-तक हमें मालूम है, जिन लोगोंने इस तरह आतंक, जोर-जबरदस्ती, मार-पीट और मार-पीटके लिए धमकियाँ देनेके तरीकोंसे गाँवोंमें कांग्रेसके प्रचारको रोकनेकी कोशिश की, उनके खिलाफ उच्च अधिकारियोंने अभीतक तो कोई कार्रवाई की नहीं है। क्या इन्हीं तरीकोंसे लॉर्ड रीडिंग और सर जॉर्ज लॉयड[1] आन्दोलनका मुकाबला करना चाहते हैं?

अन्तिम वाक्यमें मुझपर मीठी मार की गई है। मैंने लॉर्ड रीडिंग और सर जॉर्ज लॉयडकी तारीफमें पहले कुछ कहा है, उसीकी ओर यह इशारा है। मैंने जो तारीफ की, वह इस पत्रमें बताई गई घटनाओंके बावजूद अपनी जगह ठीक है। उससे तो मेरे आरोपका यह सार ही साबित होता है कि हुकूमतके इस बुरे तन्त्रमें भलेसे-भला हाकिम भी कोई अच्छा काम नहीं कर सकता। मेरे खयालमें तो सर जॉर्जका सिन्धके कमिश्नरपर उससे ज्यादा असर नहीं है, जितना कि गलियोंमें घूमनेवाले किसी शोहदेपर। बल्कि सच तो यह है कि वे चाहें तो उस शोहदेको डरा भी सकते हैं, मगर कमिश्नरसे तो उन्हें खुद ही डरना है। और लॉर्ड रीडिंगका सबसे बड़ा

१. बम्बई और सिन्धके तत्कालीन गवर्नर; सिन्ध तब बम्बई प्रान्तका ही हिस्सा था।

काम यह है कि उन्होने पंजाबमे अपने कार्योंके लिए विख्यात श्री टॉमसनको और भी बड़ा पद दिया और उसे मजूर फरमानेके लिए उन्हे राजी कर लिया। सर जॉर्ज लॉयडको जहाँ खुद देख-भाल करनी होती है, वहाँ वे आम तौरपर चतुराई और विनम्रतासे पेश आते है। लॉर्ड रीडिंग, जैसा कि अभी ऊपर बताया, उस तरह दिलासा देनेका काम कर सकते है। लेकिन चूंकि सिन्धका कमिश्नर उनकी परवाह नही करता और अपने-आपको उनसे कम नही समझता इसलिए सर जॉर्ज लॉयड इस्तीफा तो नही देगे। न लॉर्ड रीडिंग ही इस बातपर इस्तीफा देगे कि हाकिम लोग न्याय करनेके उनके इरादोका मखौल उड़ाते है। दोनो ही पूरी ईमानदारीसे ऐसा सोचते है कि उनके बगैर तो हालते और भी खराब हो जायेगी। असहयोग आन्दोलन यही दिखाने-के लिए आया है कि बुराईसे सम्बन्ध रखकर कोई अच्छा काम नही कर सकता। जब बुनियाद ही बुरी हो तो उसपर बनाये अच्छाईके महलसे फायदा कुछ भी नही होता, उलटे बुराईका जोर ही बढता है। असफलताके लिए ऐसे अच्छे हाकिमोको दोष देना बेकार है, क्योकि भलाई करनेके अपने नेक इरादोके बावजूद वे ऐसा नही कर पाते और असफल हो जाते है। सभी हाकिम बुरे नही है, इसलिए अगर हम हुकूमत और हाकिमोमे, इस तन्त्र और उसके प्रशासकोमे इसी तरह फर्क करे तो हमारा असहयोग इस तन्त्रमे गहराईतक पैठी हुई बुराइयोके प्रति उनकी आँखे खोल देगा।

मगर प्रशासकोके गुण, दोषोके बारेमे इस सारी सैद्धान्तिक बहससे सिन्धकी तक-लीफोमे तो कोई कमी होती नही। आजकी बुरी हालतोमे वे जो बहादुरी और धैर्य दिखा रहे है उसके लिए मै उन्हे बधाई देता हूँ। अगर वे धीरज और बहादुरीसे डटे रहे तो यह बेलगाम और विवेकहीन दमन उलटे हमारे लिए ही अपने लक्ष्यतक पहुँचनेमे सहायक सिद्ध होगा। सारे कष्टोंको धीरजके साथ सहकर हमे अपने गुमराह भाइयोका मन जीतना चाहिए जो आसानीसे अविचारी अफसरोके हाथकी कठपुतली बन जाते है। भारतके दूसरे हिस्सोकी तरह सिन्धके ग्रामीण भी जल्दी ही अफसरोसे डरना छोड़ देंगे और काग्रेस तथा खिलाफतके कार्यकर्ताओको अपना सच्चा दोस्त और मुक्तिदाता समझकर उनका स्वागत करने लगेगे। अगर हममे आस्था है तो शीघ्र ही मुसलमानोको हिन्दुओके और हिन्दुओको मुसलमानोके खिलाफ भड़काना नामुमकिन हो जायेगा।

मन्दिरोंमें खादी

विदेशी कपड़ा हमारी जिन्दगीमे इस तरह छा गया है कि पवित्र कार्योंमे भी हम उसीका इस्तेमाल करते है। पुरी, अयोध्या और दूसरी जगहके जिन मन्दिरोमे भी मै गया, करीब-करीब सर्वत्र देव-मूर्तियोको विदेशी कपडेमे सजा हुआ पाया। यहाँतक कि जनेऊ भी हमेशा हाथ-कते सूतसे नही बनाया जाता। ऐसी स्थितिमे जब सवाददाता-से यह समाचार मिला कि गुजरात विद्यापीठके आचार्य गिडवानीने[1] अपनी हालकी सिन्ध-यात्रामे 'ग्रन्थ साहब' के लिए विदेशी रेशमके बदले खादीका वेष्टन पेश किया तो

१. चोइथराम गिडवानी।

मुझे बहुत अच्छा लगा। गिडवानी साहब इस तरहकी तारीफके लायक मिसाल पेश करनेवाले पहले शख्स है। और मुझे उम्मीद है कि दूसरे भक्त भी उनका अनुकरण करेगे और मन्दिरोमे खादी विदेशी कपड़ेकी जगह लेगी।

माता-पिताका कर्त्तव्य

इस साल २१ बरसके मेरे तीसरे बेटेने ऑनर्सके साथ बी० ए०का इम्तहान पास किया। उसकी पढ़ाईपर बहुत ज्यादा खर्च हुआ। लेकिन वह सरकारी नौकरी नहीं करना चाहता, सिर्फ देशकी सेवा करना चाहता है। मेरे परिवारमें बारह आदमी हैं। पाँच लड़कोंकी पढ़ाई अभी बाकी है। कुछ जायदाद थी, जिसे कर्ज चुकानेके लिए दो हजार रुपयेमें बेच देना पड़ा। अपने तीन बेटोकी पढ़ाईपर मैंने अपनी जिन्दगीकी सारी कमाई खर्च कर दी। मुझे उम्मीद थी कि तीसरा बेटा युनिवर्सिटीकी ऊँचीसे-ऊँची डिग्री हासिल करके मेरी खोई हुई श्री-सम्पदाको वापस ला देनेकी कोशिश करेगा; मैंने उम्मीद लगा रखी थी कि वह पढ़-लिखकर घरका सारा भार खुद उठा लेगा। लेकिन अब तो ऐसा लगता है कि समूचा परिवार ही तबाह हो जायेगा। एक तरफ कर्त्तव्य है और दूसरी तरफ मनकी अभिलाषाएँ; और दोनोंमें द्वन्द्व छिड़ा हुआ है। मै इस मामलेमें आपकी राय और सलाह चाहता हूँ।

यह पत्र केवल एक नमूना है, शिक्षाकी यह हालत आम है। इसी रवैयेके कारण मै कुछ वर्षो पूर्व शिक्षाके मौजूदा ढगके खिलाफ हो गया था और अपने तथा गैरोके लडकोकी पढाई-लिखाईके ढगमे मैंने कुछ परिवर्तन कर दिये, और (मेरी रायमे) इनका नतीजा बहुत अच्छा निकला। हैसियत और रुतबेकी दौड़मे बहुतसे परिवार तबाह हो गये और बहुतसे सादगी और सदाचारके रास्तेसे भटक गये है। सभी जानते है कि अपने बच्चोकी पढाई-लिखाईके लिए पैसा जुटानेमे उनके अभिभावकोने कौनसे सुकर्म-कुकर्म करना अपना फर्ज नही माना है। मुझे तो यकीन हो गया है कि अगर हमने शिक्षाका सारा तरीका नही बदला तो हमारी हालत और भी ज्यादा खराब हो जायेगी। बच्चोकी शिक्षाके मामलेमे हमने अभीतक जो-कुछ किया है, वह समुद्रमे सिर्फ एक बूंदकी तरह है। ज्यादातर बच्चे अशिक्षित है, और इसकी वजह इच्छाकी कमी नही, माता-पिताओका अज्ञान और अक्षमता ही है। जब माता-पिताको अपने बडे-बड़े बच्चोका भरण-पोषण करना पडे, उन्हे भारी खर्चका बोझ उठाकर महँगी शिक्षा देनी पडे और बदलेमे तत्काल कोई लाभ न मिले तो मानना पडेगा कि व्यवस्थामे कही-न-कही कोई गहरी बुराई घुसी हुई है। विशेषकर भारत-जैसे गरीब मुल्कमे इन बातोका होना तो और भी अनुचित है। बच्चे शुरूसे ही काम करके अपनी पढाई-लिखाईका खर्च निकालने लगे, इसमे मुझे तो कोई बुराई दिखाई नही देती। कताई और उससे पहले धुनाई और पूनी बनाना आदि बेशक सभीके लिए उपयुक्त एक बहुत ही आसान हुनर है और आज सारे देशको उसकी जरूरत है। अगर हम इस हुनरको अपनी शिक्षण सस्थाओमे जारी करते है तो एक साथ तीन बड़े काम हो

जाते है। शिक्षाका सारा खर्च निकल आता है, बच्चोको दिमागी और शारीरिक दोनो तरहका प्रशिक्षण मिलता है, और विदेशी सूत और कपड़ेके सम्पूर्ण बहिष्कारका रास्ता साफ हो जाता है। फिर जिन बच्चोको इस तरीकेसे शिक्षा दी जायेगी वे अपने-आपपर भरोसा करनेवाले और आत्मनिर्भर भी होगे। मै तो पत्र-लेखकको यही सलाह दूंगा कि वे अपने परिवारके हर सदस्यको कताई और बुनाईके द्वारा परिवारके भरण-पोषणमे मदद देनेके लिए तैयार करे। शिक्षाकी मेरी योजनामे तो जो लड़का एक खास मात्रामे सूत नही कातता उसे शिक्षा पानेका भी कोई अधिकार नही। जो परिवार ऐसा करेगे, उनकी आत्मनिर्भरता और आत्मसम्मान और इस लिहाजसे उनका रुतवा भी इतना बढ जायेगा जितना उन्होने कभी सोचा तक नही होगा। इस योजनामे उच्च और बहुमुखी शिक्षाके लिए स्थान ही न हो, ऐसी बात नही है; उलटे यह पद्धति हर लडके-लडकीके लिए उच्च और व्यापक शिक्षा सुलभ कर देती है। इसके अन्तर्गत साहित्यकी शिक्षाको उसका असली गौरव हासिल होता है, क्योकि साहित्य-शिक्षाको इसमे मुख्यत मानसिक और नैतिक सस्कार देनेका साधन बना दिया गया है, और रोजी कमाना इसका गौण और अप्रत्यक्ष उद्देश्य माना गया है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-६-१९२१

१०५. असमका सबक

मनुष्यताके नामपर, मै बंगालकी सरकारपर यह आरोप लगाता हूँ कि उसने गरीबोंको सताया। जहाँ दयाकी जरूरत थी वहाॅ उसने हिंसाका सहारा लिया; जहाँ नर्मीकी जरूरत थी वहाँ उसने अपने गुरखा सिपाहियोंको झोंक दिया; जहाँ इन्सानियत चिल्ला-चिल्लाकर हमदर्दी और रहम माँग रही थी वहाँ इस सरकारने ऐसा किया कि अपने-आपको इन्सान कहलानेके काबिल नहीं रखा। और इतना ही नहीं, ये क्रूर अत्याचार करनेके बाद उसने अपने सूचनाधिकारियोंसे दैनिक अखबारोंमें उनको वाजिब ठहरानेके लिए लेख आदि लिखनेको कहकर जलेपर नमक छिड़का है।

× × ×

आज सिर्फ बंगालमें ही नहीं, सारे देशमें हालत यह है कि न सिर्फ बंगाल-की बल्कि सारे हिन्दुस्तानकी सरकार गरीबों और मजलूमोंके खिलाफ, निहित स्वार्थो, पूँजीपतियों, अमीरों और ताकतवरोंका ज्यादासे-ज्यादा साथ देने लगी है। यह बड़ा संगीन आरोप है। और यही वजह है कि यहाँके सभी गरीब लोग मुल्कके सबसे गरीब और गरीबोकी मुसीबतोंको समझनेवाले महात्मा गांधीके झण्डे तले आ जुड़े हैं। यही वजह है कि सरकार अब भी जो-कुछ मदद दे सकती

> है उस तकको लेनेसे मुल्कके गरीब और जरूरतमन्द इनकार करने लगे है। आजके संकटपूर्ण समयका उस घटनासे ज्यादा गम्भीर प्रमाण और कुछ नहीं हो सकता, जिसका आँखों देखा हाल एक आदमीने मुझे बताया है। असमसे चले आ रहे गरीब मजदूर सचमुच भूखों मर रहे थे। उनके आगे गरमागरम भात परोसा गया। लेकिन जब उन्हें पता लगा कि यह चावल सरकारकी ओरसे दिया जा रहा है तो उन्होंने खानेसे साफ इनकार कर दिया। वे डर गये कि कहीं यह उन्हें बागानोंको लौटा ले जानेकी कोई चाल न हो! लेकिन जब सेवा समितिवालों ने जनतासे माँग-जाँचकर उन्हें चावल दिया तो वे मारे भूखके उसे कच्चा ही चबाने लग गये।
>
> यह भारतमें अंग्रेजी राज्यके इतिहासमें एकदम नई और अमंगलकारी घटना है। वे लोग जो हमारी आँखोके ठीक आगे होनेवाले इस इन्कलाबके बीच नहीं है और दफ्तरोंमें फाइले खोले बैठे है उन सबके लिए समझदारीका तकाजा यही है कि वे समय रहते सचेत हो जायें। सबके फैसलेका दिन आ गया है। अब तो सिर्फ एक ही अहम सवाल है, जिसका सरकारको जवाब देना होगा; 'आप किसके साथ है — अमीरके या गरीबके, लक्ष्मीपतिके या दीनदयालुके?'

श्री एन्ड्रयूजने असमसे लौटकर वहाँकी उन दु खद घटनाओके बारेमे, जिनका सिलसिला अब भी समाप्त नही हुआ है, एक लिखित विचारपूर्ण भाषण कलकत्तामे दिया था। उनका वह भाषण आँखोमे आँसू ला देनेवाला था। अगर पाठकोने उसे पढ़ा है तो उन्हे ऊपरके अशोको पहचानते देर न लगेगी। श्री एन्ड्रयूज जो सोचते है वही लिखते और बोलते है। सत्यको वे न अपनेसे छिपाते है और न दूसरोसे। वे निरन्तर मानवताकी सेवा करते रहनेमे अपने शरीरका भी खयाल नही करते। अपनी गलतियोको वे उसी तत्परतासे माननेको तैयार रहते है जितनी तत्परतासे, अगर सच हुए तो, दूसरोपर आरोप लगानेको — फिर चाहे वह व्यक्ति कितने ही ऊँचे पदपर क्यो न हो। और चूंकि वे सच्चे, दृढ और निडर है इसलिए कुछ अखबारवाले या तो उनकी निन्दा करते है या अवहेलना, लेकिन एन्ड्रयूज साहबके फीजी, दक्षिण आफ्रिका, पूर्व आफ्रिका, सीलोन और पजाबके बारेमे दिये हुए वक्तव्य आज भी उतने ही सही है, जितने कि वे दिये जानेके समय थे। उन वक्तव्योमे से कइयोकी सत्यताको सम्बन्धित अधिकारियोने मजूर भी किया है। इनमें से हर मामलेमें गरीबो और जरूरतमदोकी मदद करनेमे उन्हे कामयाबी मिली है। उनपर कितना ही कीचड क्यो न उछाला जाये, उनकी प्रतिष्ठाको कोई आँच न आयेगी।

लेकिन ये पक्तियाँ एन्ड्रयूजका बचाव करनेके इरादेसे नही लिखी जा रही है। असमके दु खद वाक्योका उल्लेख करनेमे मेरा उद्देश्य अपनी आत्मापर पडे बोझको हलका करना और उनसे सबक लेना है। कुलियोके काम बन्द करते ही मुझे तार द्वारा उस स्थानपर पहुँचनेका निमत्रण मिला जहाँ ये वाकये, जिन्होने एक राष्ट्रीय विपत्तिका रूप धारण कर लिया है, हो रहे थे लेकिन हाथमे लिया हुआ काम

छोडकर जानेकी हिम्मत नही हुई। यहीसे मैंने उन सभीको तार और पत्र भेजे, जिन्हे भेजनेकी मैंने जरूरत समझी। हाथमे लिया हुआ काम चाहे कितना भी छोटा क्यो न हो, उसे छोड़कर दूसरे किसी भी कामके लिए, चाहे वह बहुत बड़ा ही क्यो न हो, जाना किसी भी आदमीके लिए उचित नही है; हाँ, कोई साफ रास्ता निकल आये तो बात दूसरी है। मेरे सामने ऐसा कोई रास्ता नही था, इसलिए मै हाथमे लिये हुए कामको छोडकर वहाँ नही जा सका। अगर यह मेरी गलती थी तो भगवान् और बेजबान मजदूर भाई मुझे माफ कर दें। मै तो ऐसा ही समझता हूँ कि बेजवाड़ा-कार्यक्रमको पूरा करनेमें लगे रहकर मै मजदूरोकी पूरी सेवा कर रहा हूँ। मुझे अपनी मजबूरीका अफसोस इसलिए और भी ज्यादा है कि मजदूरोका, किसी भी वजहसे हो, ऐसा खयाल बन गया है कि उनकी विपत्तिके समय जब और जहाँ उन्हे मेरी जरूरत होगी मै उनके पास पहुँच जाऊँगा। मै नम्रतापूर्वक अपनी सीमाएँ स्वीकार करता हूँ। मै जानता हूँ कि बहुतसे मामलोमे तो मै अपनी हार्दिक सहानुभूति और प्रार्थनाओके अतिरिक्त उन्हे कुछ भी नही दे सकता। जी तो बहुत चाहता है, लेकिन शरीर साथ नही दे पाता। मै सुनता हूँ, मै महसूस करता हूँ और मदद न कर पानेकी अपनी मजबूरीपर तड़पकर रह जाता हूँ।

मगर आदमी जितना असमर्थ है, भगवान् उतना ही समर्थ है। उसकी कृपा अपरम्पार है और वह हजार हाथोसे मदद करता है। एन्ड्रयूज और दास साहब-जैसे सज्जनोको जरूरतके समय वह न जाने कहाँसे भेज ही देता है। मै इस विश्वाससे सन्तोष प्राप्त करता हूँ कि भगवान् किसी भी दु.खको अनसुना नही करता, दु.खी-दर्दीकी कातर पुकार सुनकर कुछ-न-कुछ मदद कर ही देता है। ऐसी हालतमे हमारे लिए उसने जो काम निर्धारित कर दिया है उसे विनम्र श्रद्धा और पूरी सतर्कतासे करते जाना ही उचित है, क्योकि इसके सिवा हम और कुछ कर भी नही सकते।

असमकी दु.खद घटनाओने भी एन्ड्रयूजको भारतीय सरकारपर सगीन आरोप लगानेका मौका दिया है। थोड़ी देरके लिए मान भी लिया जाये कि वे गलतीपर थे, फिर भी मजदूरोकी तात्कालिक आवश्यकताओके प्रति, तटस्थताके नामपर, जो क्रूरतापूर्ण उपेक्षा बरती गई और बिलकुल निहत्थे लोगोपर हथियारबन्द गोरखे छोडकर उसे जिस घिसे-पिटे तरीकेसे वाजिब ठहरानेकी कोशिश की गई, उस सबसे तो इस सरकारकी बर्बरता ही जाहिर होती है और यह किसी भी इज्जतके काबिल नही रह जाती। कुलियोपर गोरखे छोड़े ही क्यो गये? फौजमे कुछ लोगोको सिर्फ उजड्डता और क्रूरता ही सिखाई जाती है, इसे कौन नही जानता? निहत्थे नागरिकोके बीच फौज उतारनेका मतलब जनता समझती है। सभी जानते है कि फौजमे भरती होनेवालो मे मानव समाजका घटियासे-घटिया अश भी होता है। लड़ाईके लिए ऐसे लोग अच्छे हो सकते हैं, मगर हड़ताली कुलियोके खिलाफ उनका इस्तेमाल करना तो साफ तौरपर मालदारों और ताकतवरोकी मदद करना है। हर महत्त्वपूर्ण मामले-मे, सुधारोकी योजना विफल हो रही है। अब तो कोई शक ही नही रह गया है कि अगले कुछ महीनोमे या तो सरकारके तन्त्रमे इतना परिवर्तन हो जायेगा जिसकी

वजहसे ऊँच-नीचका भेद ही नही रहेगा या फिर ऐसा सघर्ष छिड़ेगा जैसा सघर्ष दुनियाने पहले कभी नही देखा होगा। सरकारका दिया भात खानेसे इनकार करनेका मतलब ही अपमानित करनेवाले हाथकी मददसे जिन्दा रहनेसे इनकार करना है। और जब सारे देशमे मूक साहस और त्यागकी यह भावना भर जायेगी, उस दिन इस सरकारकी किस्मतका फैसला हो जायेगा। हम हिंसाका हुनर सीखे, यह कतई जरूरी नही है; जरूरी है' हिंसाको बरदाश्त करनेका, मर जानेका हुनर सीखनेकी। हिंसाके जरिये सफलता पानेका मतलब होगा एक राक्षसी सरकारकी जगह दूसरी राक्षसी सरकारको बिठाना, जिसके अधीन गरीब और निरीह लोग आजकी तरह ही तबाह होते रहेगे।

कुलियोंकी सहानुभूतिमे जहाजी कर्मचारियोने जो हड़ताल की उसके लिए एन्ड्रूयूज साहबने अफसोस जाहिर किया है। उन्हे हड़तालके लिए उकसानेवालो ने मजदूरोका अनिष्ट ही किया है। हम अपने देशमे राजनैतिक हड़ताल नही चाहते। अभी हममे उसके लिए अपेक्षित समझदारी नही है। राजनैतिक हड़तालोसे हमारी आजादीका पक्ष कमजोर ही होता है। गड़बड़ी और हगामेका वातावरण हम नही चाहते। ये चीजे हमारे आखिरी मजिलतक पहुँचनेके रास्तेमे रुकावटे है। पागल होकर मार-धाड़ मचानेवाला सिपाही फौजमे रहनेके काबिल नही। गड़बड़ी मचानेवाले उच्छृखल तत्त्वोपर हमे कड़ा नियन्त्रण रखना चाहिए, या फिर उन्हे सरकारकी ही तरह अलग-अलग कर देना चाहिए। इसलिए हड़तालियोको हम एक ही तरहसे मदद दे सकते है, अर्थात् जब वे अपनी सच्ची शिकायतोको दूर करानेके लिए हड़ताल करे तो उन्हे मदद दे और उनके लिए रोटी-कपड़ेकी व्यवस्था करे। दूसरी हड़ताले रोकनेकी हमे जी-तोड़ कोशिश करनी चाहिए। हम पूँजी या पूँजीपतियोको खतम करना नही चाहते, पूँजीपतियो और मजदूरोके आपसी रिश्तोको सुधारना चाहते है। हम पूंजीपतियोको अपने साथ, अपने पक्षमे करना चाहते है। ऐसी सूरतमे सहानुभूतिमे की जानेवाली हड़तालोको बढ़ावा देना बेवकूफी ही होगी।

असमके गरीब कुलियोको अपने-अपने घर पहुँचानेके लिए एन्ड्रयूज साहबने फण्डकी अपील की है। यह अपील इस बातकी कसौटी है कि देशके भूखो और नगोके लिए यानी स्वराज्यके लिए हमारे दिलमे कितनी जगह है, और हम कितना कर सकते है। मै आशा करता हूँ कि दीनबन्धुने[1] दीनोके लिए जो झोली फैलाई है, कलकत्तेने उसे लबालब भर भी दिया होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-६-१९२१

१. भारतीयोंके लिए किये गये सेवा-कार्यके कारण एन्ड्रयूज इस नामसे प्रसिद्ध थे।

१०६. मजिस्ट्रेटकी धाँधली

लाहौरके जिला मजिस्ट्रेटने लाहौर नगर कांग्रेस कमेटीकी सभापर पाबन्दी लगा दी। राजद्रोहात्मक सभा कानूनके अन्तर्गत, सार्वजनिक सभाएँ वे सभाएँ है जिनमे प्रवेशके नियमोके अनुसार, प्रत्येक जनसाधारण सम्मिलित होनेकी माँग कर सकता है, बाकी सब सभाएँ असार्वजनिक और घरेलू किस्मकी होती है। लाहौर कांग्रेस कमेटीकी वह सभा सिर्फ कमेटीके सदस्योके लिए ही विज्ञापित की गई थी। लेकिन मजिस्ट्रेट साहबको इससे इतमीनान नही हुआ। उन्होने कमेटीके मन्त्रीको तलब किया कि खुद आकर उन्हे इतमीनान कराये। लाला अमीरचन्दने स्वभावत. मजिस्ट्रेटकी ऐसी दरबारदारी करनेसे इनकार कर दिया और विनम्रतासे सूचित किया कि यह एक खास मकसदसे बुलाई गई सिर्फ घरेलू किस्मकी बैठक है। मजिस्ट्रेट साहबने फिर भी उस सभापर पाबन्दी लगा ही दी। मन्त्रीने विरोध किया कि हुक्म गैर-कानूनी है, मगर साथ ही यह भी सूचित कर दिया कि फिलहाल वे इस गैर-कानूनी हुक्मको मान लेते है। इससे जाहिर होता है कि सरकारी अफसर असहयोगियोको सविनय अवज्ञाके लिए मजबूर कर रहे है, उसके लिए चुनौती दे रहे है। अगर इसी तरहके कुछ और हुक्म जारी हुए तो मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही कि यह चुनौती मजूर की जायेगी। अभीतक हम अपनी कमजोरीकी वजहसे ऐसे हुक्मोको मानते रहे। अब हम ताकतकी वजहसे मान रहे है और हमारी यह ताकत दिनो-दिन बढती जा रही है। देशमे जहाँ-जहाँ ऐसे हुक्म दिये गये है वहाँ सभी जगह सविनय अवज्ञाकी इच्छा जोर पकड़ती जा रही है। अनुकरणीय आत्मसयम और आत्म-अनुशासनके ही कारण कार्यकर्त्ता अपने-आपको इस तरहके हुक्मो और पाबन्दियोकी विनयपूर्वक अवज्ञा करनेसे रोके हुए है। लोग जितना आत्मसयम तथा आत्म-अनुशासन दिखायेंगे उससे देशको उतना ही फायदा होगा। सविनय अवज्ञाके काबिल होनेके लिए हमे अपने भीतर इन दोनो गुणोको अभी बहुत ज्यादा विकसित करना होगा। पूरी विनयके साथ अवज्ञा करने-का मतलब है कही जरा-सा भी हगामा या किसी तरहकी हिंसा न होने पाये। अराज-कताकी इसमे कोई गुजाइश नही। सविनय अवज्ञा करनेवाला स्वय आगे बढकर कारा-वासको निमन्त्रित करता है। इसलिए गिरफ्तारीपर प्रदर्शन करना गलत है। गिरफ्तारी-पर तो वैसी ही खुशी मनानी चाहिए जैसी किसीकी दिली इच्छा पूरी हो जानेपर मनाई जाती है। अगर सविनय अवज्ञाको निर्धारित कानून और व्यवस्थातक ही सीमित रखनेकी हमारी पक्की तैयारी हो, और अगर हमे पूरा इतमीनान हो कि नेताओ-की गिरफ्तारीपर लोग किसी तरह हिंसा-उपद्रव नही करेगे तो यह कल ही शुरू किया जा सकता है। असहयोगमे जो जगह अहिंसाकी है वही अवज्ञामे विनयकी है। अवज्ञा असहयोगका उग्रतम रूप है—यह करबन्दीसे भी ज्यादा उग्र है। सविनय अवज्ञा करनेवाला आदमी स्वय ही कानूनका मूर्तिमन्त स्वरूप हो जाता है। सविनय अवज्ञाका आचरण करनेके लिए उच्च कोटिके साहस और सदसद् विवेककी जरूरत है।

सविनय अवज्ञाका मतलब सरकारके हुकूमत करनेके अधिकारको आचरणके द्वारा पूरी तरह नामंजूर करना है, इसकी इजाजत तभी दी जा सकती है जब सरकार इतनी भ्रष्ट हो जाये कि उसे किसी भी तरह सुधारा न जा सके। मेरी बेवकूफी ही सही, मगर हमारी इस सरकारको अपने कुकृत्यों और लोगोंको हिंसाके लिए भड़कानेका कोई पछतावा हो, इसका जरा-सा भी संकेत मुझे कहीं दिखाई नहीं देता। उलटे उसका इरादा हिंसाकी बिनापर डायरशाहीकी पुनरावृत्तिको उचित ठहरानेका लगता है। पंजाबके अन्यायके परिशोधनका केवल एक ही तरीका है और उस तरीकेसे उसका परिशोधन करनेसे इनकार करनेका मतलब यह है कि अमृतसरकी तरह लोगोंके क्रोधसे पागल हो उठनेपर उनके अपराधोंके लिए दोषी और निर्दोष दोनोंको समान रूपसे दण्डित किया जायेगा और इस तरह अमृतसरके उस एक अधिकारीके इस कथनको चरितार्थ किया जायेगा कि मौजूदा पीढ़ीके गुनाहोंकी सजा आनेवाली पीढ़ियोंको भुगतनी पड़ेगी।

जबरदस्तीसे लादा हुआ ब्रिटिश जुआ असहनीय भी है और अपमानजनक भी। यह जाति जो अपने आत्मसम्मानके प्रति सजग हो गई है कष्टोंकी भट्टीमें तपेगी और उसे तपना भी चाहिए। वह गुलामीके जुएको उतार फेंकनेके प्रयासके क्रममें जितनी भी तकलीफें आयें, बरदाश्त करेगी; बरदाश्त करनी ही चाहिए। अंग्रेज हिन्दुस्तानमें सिर्फ बराबरीके रिश्तेपर और दोस्त बनकर ही रह सकते हैं। अगर वे सेवा करना चाहते हैं तो उन्हें अपने मालिकोंकी इच्छाओंका पूरी पाबन्दीसे पालन करनेवाले सच्चे सेवक बनना चाहिए। अंग्रेज पूँजीपतियोंको सुविधाएँ दी जायें और भारतीय मजदूरोंका शोषण हो, यह चल नहीं सकता। हममें से छोटेसे-छोटेके साथ भी उन्हें बराबरीका सलूक करना होगा। इस बातसे कोई इनकार नहीं करता कि उनकी संगठन करनेकी प्रतिभा, उनके अध्यवसाय और उनकी सूझबूझकी हमें जरूरत है। मगर उनकी बन्दूक और उनके कोड़ेका आतंक हमेशा-हमेशाके लिए खत्म हो जाना चाहिए। लेकिन पंजाबके अन्यायका परिशोधन करने और मुस्लिम जनमतको सन्तुष्ट करनेसे इनकार करते देखकर तो यही लगता है कि उस आतंकको मिटानेका उनका कोई इरादा नहीं है। ऐसे रवैयेसे हमारा कोई समझौता नहीं हो सकता। कमजोर हों या ताकतवर, इसकी परवाह किये बिना हमें तो अन्ततक लड़ना ही चाहिए, फिर चाहे जो भी कीमत क्यों न चुकानी पड़े। इसलिए जैसे ही सविनय अवज्ञाके उपयुक्त निरापद वातावरण तैयार हो जाये, हमें उसे शुरू कर देना चाहिए। मगर तबतक ऐसे विवेकशून्य आदेशोंको भी, जैसा कि लाहौरके जिला मजिस्ट्रेटने दिया, सहते जाना होगा। अगर आज हम अपनी इच्छासे नियमों और आदेशोंका पालन करते हैं तो कल निश्चय ही हममें अधिकारपूर्ण अवज्ञाकी शक्ति आयेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-६-१९२१

१०७. फिर श्री पालके बारेमे

श्री पालने[1] 'इंगलिशमैन' को जो पत्र लिखा था और जिसे अखबारोने उद्धृत किया है, उसका पूरा उत्तर देना जरूरी है। स्पष्ट है कि अनेक बातोके बारेमे श्री पालको गलत जानकारी मिली है, जिसके कारण वे ऐसी बाते कहनेका लोभ सवरण नही कर सके है जो सही जानकारी होनेपर वे कभी न कहते।

मेरी शिमला-यात्रा और अली बन्धुओके बारेमे जो गलतफहमी पैदा हुई है, उसके लिए सरकारी विज्ञप्ति, वाइसरायका भाषण और अखबारोके प्रतिनिधियो द्वारा शिमला-यात्राका काल्पनिक विवरण जिम्मेदार है।

जिस समय मै शिमला गया, मुझे इस बातका गुमान भी नही था कि मै परम-श्रेष्ठसे भेंट करूँगा। मुझे मालूम था कि पण्डित मालवीयजी और श्री एन्ड्रचूज इस बातके लिए बड़े उत्सुक है कि मै लॉर्ड रीडिंगसे भेट करूँ। लेकिन शिमला मै केवल पण्डित मालवीयजीसे मिलने गया था, कारण यह था कि चूँकि मै बराबर दौरेपर था और उनका स्वास्थ्य अच्छा नही था, इसलिए उनका मुझसे आकर मिलना मुश्किल था। यात्राओके दौरान वे मुझे पकड़ सकनेमे असमर्थ थे। पडितजीकी बाते सुननेके बाद ही मैने वाइसरायके सचिवको यह लिखनेका[2] निश्चय किया कि यदि परमश्रेष्ठ इस आन्दोलनके बारेमे मेरे विचार जानना चाहे तो मै सहर्ष उनसे भेंट कर सकता हूँ। उनसे मैने भेट की, लेकिन अली बन्धुओकी गिरफ्तारीका निर्णय बदलवानेके लिए नही वरन् वाइसरायको यह बतानेके लिए कि मै असहयोगी क्यो बना। पहली और सबसे लम्बी मुलाकातमे तो अली बन्धुओके आसन्न मुकदमेका जिक्र तक नही आया। अली बन्धुओका प्रश्न तो बिलकुल स्वाभाविक रूपसे अहिंसा विषयक हमारी इस चर्चाके दौरान उठा कि उसका पालन कहाँतक किया जा रहा है। जब परमश्रेष्ठने मुझे भाषणोके कुछ उद्धरण दिखाये तो मैने यह पाया कि उनका वह अर्थ लगाया जा सकता है जो लगानेकी कोशिश की जा रही है। इसलिए मैने परमश्रेष्ठको बता दिया कि अली बन्धुओसे भेट होते ही मै उनको यह सलाह दूंगा कि सरकार उनके मुकदमेके सम्बन्धमें चाहे कुछ करे, उन्हे स्थिति स्पष्ट करते हुए एक वक्तव्य दे देना चाहिए। ऐसी कोई शर्त नही थी कि सरकारके अपना निर्णय बदलनेको राजी होनेपर ही वे वक्तव्य देंगे। इस वक्तव्यके आधारपर सरकारने अपना निर्णय बदल दिया, सो उसका बुद्धिमत्तापूर्ण और स्वाभाविक कार्य था। मै यह मानता हूँ कि इससे मुझे राहत मिली है। परन्तु श्री पालकी तरह मै यह नही समझता कि अली बन्धुओकी गिरफ्तारीके फलस्वरूप खून-खराबी लाजमी थी। अली बन्धु मेरी ही तरह समझ-बूझकर अपराग फैलानेसे सम्बन्धित कानूनको निरन्तर तोड़ते आ रहे हैं, और इस तरह गिरफ्तारीको

१. विपिनचन्द्र पाल; देखिए "टिप्पणियाँ", १-६-१९२१।

२. पत्र उपलब्ध नहीं है।

भी न्यौता देते आ रहे है। यदि हम देशको अपने साथ लेकर चल पाये तो जल्दी हो या देरमें, लेकिन इसी वर्ष हम ऐसी हालत अवश्य ही पैदा कर देंगे, जिसमे सरकारको या तो हमे गिरफ्तार करनेके लिए बाध्य होना पड़ेगा अथवा उसे जनताकी माँगे स्वीकार कर लेनी होगी। अली बन्धुओके वक्तव्यका मन्शा एक ऐसे गलत आधारपर गिरफ्तारीसे बचनेकी कोशिश है, जिसको किसी भी तरह उचित नही ठहराया जा सकता।

इसलिए जहाँ मै अली बन्धुओको हिंसाके लिए उकसानेके आरोपपर मुकदमेसे बचानेके लिए उत्सुक हूँ, वहाँ मै उनपर और स्वय अपने आपपर इस आरोपमे मुकदमा चलाये जानेका स्वागत करूँगा कि हम कानूनसे स्थापित सरकारके प्रति अपराग फैलाते है। हम सभीको लगा कि जो-कुछ घट रहा है, उसे जानते हुए भी वक्तव्य न देना अपने लक्ष्यके प्रति अन्याय करना और दुश्मनके हाथका खिलौना बन जाना है।

श्री पालका यह विचार सही है कि जो मसले बहुत अधिक महत्त्वके नही है, मै उनके आपसी विचार-विमर्श और समझौते द्वारा निबटारेकी आशा करता हूँ। परन्तु मैंने वाइसरायसे समझौतेकी शर्तोंके बारेमे चर्चा नही की, यह काम तो जनताके मान्य प्रतिनिधियोके करनेका है। मै श्री पालको यह विश्वास दिलाता हूँ कि ऐसी आशका रखनेका कोई कारण नही है कि मै लोगोकी उपेक्षा करके अपनी मर्जीके मुताबिक किसीसे समझौता कर लूँगा। इसी तरह अगर किसी समझौतेकी शर्तोंपर चर्चा हुई तो उसे भी गुप्त नही रखा जायेगा। हाँ, जब दो अजनबी व्यक्ति मैत्रीपूर्ण चर्चाके लिए और एक-दूसरेका दृष्टिकोण समझनेके लिए आपसमे मिलते है, तब इस हदतक उनकी मुलाकातको गुप्त रखना ही पड़ेगा। और हम केवल एक-दूसरेका दृष्टिकोण समझनेके विचारसे ही मिले थे। परन्तु इसके साथ ही, मै यह बताकर पाठकोके मनपर से बोझा उतार देना चाहता हूँ कि उन्हे यह आशा नही करनी चाहिए कि इस भेंटके फलस्वरूप शीघ्र ही कोई समझौता हो सकेगा — भले ही इसके न होनेका कारण सिर्फ यह हो कि जनता अभी इसके लिए अपने-आपको अच्छी तरह तैयार नही कर पाई है। इसके अलावा वाइसरायके बारेमे तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि वे दो सर्वथा भिन्न दृष्टिकोणोके बीच सामजस्य स्थापित करनेकी कोशिश कर रहे है, जो असम्भव है। वे पुरानी बोतलोमे नई शराब नही भर सकते। वे खिलाफत और पजाबके घावोका इलाज किये बिना भारतको सुखी और सन्तुष्ट नही बना सकते।

श्री पालका यह कथन बिलकुल ठीक है कि यदि पजाब और खिलाफत सम्बन्धी अन्यायोंका परिशोधन हो जाये तो स्वराज्यके लिए आन्दोलन जारी रखनेका काम मुझे अन्य नेताओपर छोड़ देना चाहिए; इसका कारण सिर्फ इतना ही है कि इन दो बडे प्रश्नोके बारेमे जब भारत इस बातका पूरा एहसास करा देगा कि उसकी ताकत कितनी है तो स्वराज्य उसे माँगते ही मिल जायेगा। स्वराज्यको मै हर अन्यायका परिशोधन कराने, डायरशाही और लॉयड जॉर्जशाहीको रोक सकनेकी जनताकी शक्तिसे अलग नही मानता। सर माइकेल ओ'डायरका रास्ता आतंकवादका रास्ता है और श्री लॉयड जॉर्जका विश्वासघातका। श्री पालसे मै यही कहूँगा कि यदि हमने इन दोनो दैत्योको पछाड दिया तो उसका अर्थ यही होगा कि हम अपना शासन सँभालनेके लिए तैयार

हैं। बंगालके मेरे अनुयायी यदि वाइसरायसे मेरी मुलाकातसे नाखुश नहीं हैं तो इसका कारण यही है कि वे जानते हैं कि जबतक इन दोनों अन्यायोंका परिशोधन नहीं होता तबतक मैं कोई समझौता नहीं कर सकता, और वे यह भी जानते हैं कि स्वराज्यकी योजनाओंपर विचार-विनिमय करनेका समय तभी आ सकेगा जब समझौतेकी हर योजनाकी राहके ये दोनों रोड़े हटा दिये जायेंगे। यदि इन दोनों बाधाओंको दूर नहीं किया गया तो भारतके लिए पूर्ण स्वाधीनताके अलावा कोई चारा नहीं होगा। बारीसाल सम्मेलनमें भाग लेनेवाले बंगाली श्री पालकी चर्चासे इस कारण नाखुश हुए कि मेरे ख्यालसे वे समझते हैं कि अभी यह चर्चा छेड़नेका समय नहीं आया है और इससे स्वराज्यकी सही भावनाके विकासमें बाधा पड़ेगी। श्री पालका काम उस कारीगरकी तरहका था जो इमारतकी पक्की नींव तैयार करनेसे पहले ही सबसे ऊपरकी मंजिल बनाना शुरू कर दे। श्री पालसे मेरा यह निवेदन है कि वे देशको स्वराज्यकी योजनाओं-पर असामयिक चर्चामें न लगा दें और मेरा यह आश्वासन स्वीकार करें कि जहाँतक मेरा सम्बन्ध है मैं जनताके प्रतिनिधियोंसे खुला परामर्श किये बिना स्वराज्यकी किसी भी योजनाके बारेमें कोई कार्रवाई नहीं करूँगा। खिलाफत और पंजाबके बारेमें परामर्श करनेका तो कहीं प्रश्न ही नहीं है, क्योंकि उसके सम्बन्धमें न्यूनतम शर्तोंको तो भली प्रकार समझ-बूझ लिया गया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-६-१९२१

१०८. भाषण: घाटकोपरमें[1]

१५ जून, १९२१

महात्मा गांधीने पहले घाटकोपरके निवासियोंको मानपत्रके लिए धन्यवाद दिया। उसके बाद उन्होंने कहा: मैं इन ४०,००० रुपयोंको जिन्हें आपने तिलक स्वराज्य-कोषके लिए इकट्ठा किया है स्वीकार करता हूँ। किन्तु मेरा ऐसा करना एक शर्तके साथ है। यदि आपके द्वारा इकट्ठी की गई यह रकम यहाँके उन बहुतसे निवासियोंके, जो बम्बईमें व्यापार करते हैं, अधिकतम प्रयत्नका फल है तब मैं तत्काल कहूँगा कि हमें स्वराज्य इस वर्ष कदापि नहीं मिल सकता। यदि आपने थोड़ा-सा भी त्याग किया

१. बम्बईके इस उपनगरके नागरिकोंने एक समारोहमें गांधीजीका स्वागत किया था। इस समारोहमें अन्य व्यक्तियोंके अलावा श्री वि० झ० पटेल, हकीम अजमलखाँ, सरोजिनी नायडू, डाक्टर मु० अ० अन्सारी, डाक्टर बी० एस० मुंजे, न० चि० केलकर, अली बन्धु, मौ० अब्दुल बारी, मौ० अबुल कलाम आजाद, जमनालाल बजाज और श्री शंकरलाल बैंकर भी उपस्थित थे, जो वहाँ कांग्रेस महासमितिकी बैठकमें भाग लेनेके लिए आये हुए थे। घाटकोपरके व्यापारियोंकी ओरसे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए ४०,००० रुपयेकी थैली भेंट की गई थी। सभामें गांधीजी शौकत अलीके भाषणके बाद बोले थे। गांधीजीके भाषणका विवरण २०-६-१९२१ के हिन्दूमें भी छपा था।

होता तो मुझे सन्तोष हो जाता; किन्तु आपने तो तनिक भी त्याग नहीं किया है। मैं अपने भाइयों और बहनोंसे फिर प्रार्थना कर रहा हूँ कि आप इस कोषमें जो भी दे सके दें। आपने कबूल किया है कि घाटकोपर ऐसी जगह है जहाँ बम्बईके धनी भारतीय व्यापारी रहते हैं। उस बातको ध्यानमें रखते हुए आपके द्वारा इकट्ठी की गई रकम इतनी थोड़ी है कि इससे मुझे निराशा हो रही है। इस कोषके लिए अकेला मैं ही रुपया इकट्ठा नहीं कर रहा हूँ। अली भाई मंचपर मौजूद हैं; उनके सम्बन्धमें कहा गया है कि मैं उनके इशारेपर चला करता हूँ। यह सच नहीं है। अली भाइयोंको अपने धर्मसे प्रेम है और मुझे भी अपना धर्म प्यारा है। हम दोनों ही अपने-अपने धर्मोका त्याग करनेवाले व्यक्ति नहीं हैं। हममें से हर एकका अपना एक धर्म है और हमें उसका पालन पूरी तौरपर करना है, फिर उसका परिणाम कुछ भी निकले। इसके अलावा यहाँ महान् व्यक्ति हकीम अजमलखाँ साहब आये हुए हैं। ये कोई मामूली आदमी नहीं हैं जो घाटकोपर यों ही चले आये हों। उनकी फीस बहुत ऊँची है। हकीम साहब कहीं जानेका एक दिनका एक हजार रुपया लेते हैं। ये वे डाक्टर नहीं है जिन्होंने पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञान पढ़ा हो; इनको कुछ रामबाण नुस्खे मालूम हैं जिन्हें और लोग नहीं जानते। फिर यहाँ डाक्टर अन्सारी भी आये हुए हैं। ये पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञानके विशेषज्ञ हैं। इन्हें लोगोंको मार डालनेकी सनद मिली हुई है, (हँसी) क्योंकि अगर कोई डाक्टर किसी आदमीके प्राण हर ले तो हम उसके विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं कर सकते। (हँसी) इनके अलावा यहाँ एक महान् व्यक्ति मौलाना अबुल कलाम आजाद भी मौजूद हैं। इस्लाम धर्म और इस्लामी कानूनके मामलोंमें इनकी बात बहुत प्रामाणिक मानी जाती है। ये सब बड़े-बड़े लोग घाटकोपर क्यों आये हैं? आपके सामने भाषण देनेके लिए नहीं। यह समय भाषण देनेका नहीं बल्कि काम करनेका — देशके लिए ठोस काम करनेका — है।

घाटकोपरके निवासियोंने मुझ अकेलेको ४०,००० रुपये दिये हैं; किन्तु वे हकीम अजमलखाँ और डाक्टर अन्सारी-जैसे अन्य अतिथियोंको क्या देंगे? आपको सेठ जमनालाल बजाज, शंकरलाल तथा यहाँ आये हुए दूसरे कार्यकर्त्ताओंको भी कुछ देना है। आप लोगोंने पूर्ण रूपसे अनुभव नहीं किया है कि यह वह अवसर है जब इस देशका सच्चा गौरव परखा जानेवाला है। यह असम्भव है कि ऐसे संकटके समय इस देशके निवासी अपने देशके गौरवके प्रति उदासीन रहें। अभी हमें ४० लाख रुपये भी नहीं मिले हैं। हम अभीतक २० लाख ही इकट्ठे कर पाये हैं। बम्बई नगरका यह कर्त्तव्य है कि वह शेष ६० लाख रुपये दे और इस बारेमें मुझे कोई सन्देह नहीं कि आप मुझे इतना रुपया दे सकते हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि बम्बई नगर कांग्रेसको इतनी रकम दे देगा। इस नगरमें रहनेवाले चार बड़े-बड़े समाजों — भाटिया, मेमन, मारवाड़ी और पारसीपर मुझे विश्वास है। पारसी लोग मुझे क्या देंगे यह मैं नहीं

जानता और मुझे यह भी नहीं मालूम कि मैं उनसे कितना रुपया लेनेकी आशा कर सकता हूँ। दो पारसी व्यापारियोने, जिनका नाम श्री बोमनजी और श्री रुस्तमजी घोरखोदू है, १,५२,००० रुपये दिये हैं, इसलिए अब मेरी आशा शेष दो समाजो, मारवाड़ी और भाटिया व्यापारियों से है। मैं उनको इस सभामें बैठा देख रहा हूँ। यदि आप यह मानते हों कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है तो आपका यह परम कर्त्तव्य है कि आप उसको प्राप्त करनेके लिए अपनी पूरी शक्ति लगा दें। इस सम्बन्धमें मैं आपसे यह भी कहना चाहता हूँ कि यदि हम खिलाफतके प्रश्नको पूर्ण सन्तोषजनक ढंगसे हल नहीं करते तो हम गो-रक्षाकी समस्याको भी सन्तोषजनक रूपसे कभी हल न कर सकेंगे।

जो मानपत्र मुझे दिया गया है उसमें लिखा है कि घाटकोपरमें बम्बईके बड़े-बड़े व्यापारी रहते हैं। यदि ये बड़े-बड़े व्यापारी चाहते तो इस सभामें मुझसे यह वादा करके मुझे यहाँसे भेजते कि ज्यादा नहीं तो कमसे-कम ४० लाख रुपये तो वे मुझे देंगे ही। आपने जो उद्देश्य अपने सामने रखे हैं उन्हें पूरा करनेका ऐसा दृढ़ संकल्प कर लेना था कि किसी भी प्रकारका त्याग करनेके अवसरका स्वागत करते न कि ऐसे संकटके समय आप भारतमाताकी पुकार अनसुनी कर देते। यह समय ऐसा है जब हमें बहुत-सा धन इकट्ठा करना है, ज्यादा बातें नहीं करनी हैं। मुझे इस बातका पूरा भरोसा है कि यदि शहरके अन्य वर्ग अपने कर्त्तव्यका पालन न भी करें फिर भी भाटिया और मारवाड़ी ये दो वर्ग, इस संकल्पके साथ कि हम ब्रिटिश सरकारकी गुलामीमें हरगिज न रहेंगे, नियत की गई रकम मुहैया कर देंगे। इसी कारण आपको अपना धन उदारतासे देना है। हमें अगले कुछ महीनोंमें स्वराज्यकी स्थापना करनी है और उसके लिए हमें बड़े-बड़े त्याग करने होंगे। आपको विदेशोंका बना कीमती विलासिताका सामान और विलायती कपड़े छोड़ने हैं। इस शहरमें स्त्रियोकी सभा करनेके लिए मेरे पास अतिया बेगम आई हुई है, किन्तु उनके साथ एक ऐसी महिला है जो पश्चिमी ढंगकी ठाट-बाटकी पोशाक पहने हुए है; इसलिए मैंने उनसे कहा है कि यदि बम्बईकी स्त्रियाँ केवल इतना ही करें कि खद्दर पहनने लगें तो मैं उनका बिन दामोंका गुलाम बननेको तैयार हूँ। यह समय कीमती जेवर या कीमती वस्त्र पहननेका नहीं है; आपको इन सब शान-शौकतकी चीजोंको छोड़ना है। आपको दत्त-चित्त होकर चरखेके प्रचारमे लग जाना है और आपके लिए खद्दर पहनना निहायत जरूरी है। जबतक आप ऐसा न करेंगी तबतक स्त्रियोंकी सभामें आनेसे क्या फायदा है? क्या आप जानती हैं कि हमारे देशके करोड़ों स्त्री-पुरुष अन्न-वस्त्रके अभावमें भूखों मर रहे हैं और अधनंगे रह रहे हैं। तब आप इन विदेशी चमक-दमककी चीजोंको, जिनका आपके मनपर इतना बड़ा प्रभाव है, काममें लानेकी निष्ठुरता कैसे कर सकती हैं? जब हमारे देशके इतने लोग कष्ट भोग रहे हैं तब हम ऐसे ऐशोआरामका जीवन कैसे बिता सकते हैं? हर स्त्रीका यह पवित्र कर्त्तव्य है कि वह खद्दर पहने।

जिन लोगोंने मुझे घाटकोपरमें बुलाया है वे सबसे पहले अपना धर्म ठीक तरहसे समझ लें। लोगोंको स्वराज्य देना मेरे हाथमें नहीं है; यह अली बन्धुओंके भी बसकी बात नहीं है। स्वराज्य तो लोगोंको खुद ही लेना है; यह काम उनको स्वयं ही करना है। यदि लोग जो भी काबुली या अंग्रेज उनके पास आये उन सभीसे डर जायें तो उनके लिए स्वराज्य प्राप्त करना कैसे सम्भव है? मेरी समझमें यह बात नहीं आती कि भारतीयोंको काबुलियों या यूरोपीयोंसे क्यों डरना चाहिए। वे हम भारतीयोंके भाई ही हैं। हम अपनी रक्षा करनेमें पूरी तौरपर समर्थ हैं; और यदि आवश्यक हो तो हम उनसे असहयोग भी कर सकते हैं। फिर हिन्दू लोग मुसलमानोंसे क्यों डरें और मुसलमान हिन्दुओंसे क्यों भयभीत रहें? यदि हम लोग ईश्वरसे डरते हैं और यदि हममें एकता है तो हम एक-दूसरेसे क्यों डरें? जबतक हममें आवश्यक उत्साह, सामर्थ्य और बल नहीं आता तबतक हम स्वराज्य नहीं ले सकते और न उसकी रक्षा ही कर सकते हैं। स्वराज्य और संसद या विधान सभाएँ एक बात नहीं हैं; हमें उनको अपने मनमें एक न मान लेना चाहिए। यदि हम अपने अधिकारोंकी रक्षा स्वयं नहीं कर सकते तो हमको वे अधिकार मिल ही नहीं सकते।

दुःखकी बात है कि बहुतसे हिन्दुओंने अपना धर्म छोड़ दिया है। मेरा पालन-पोषण एक वैष्णव परिवारमें हुआ था और अहिंसा मेरे रक्तमें समाई हुई है। दया और अहिंसा मेरे मनमें बसी है और मैं उन्हें कभी त्याग नहीं सकूँगा। इस सम्बन्धमें मुझे वैष्णवोंने कई धमकीभरे पत्र लिखे हैं। इसका कारण यह है कि मेरा सम्बन्ध दलित-वर्गोंसे है। चूंकि मैंने अन्त्यजोंका साथ देना शुरू किया है इसलिए वैष्णवोंने मुझे इस आशयका पत्र लिखा है कि महीने दो महीनेमें तुम्हारे साथ बहुत भयंकर घटनाएँ घटेंगी। इन लोगोंसे मैं साफ-साफ कहना चाहता हूँ कि यदि वैष्णव लोग अस्पृश्योंसे कोई सम्बन्ध रखना नहीं चाहते तो वे सच्चे वैष्णव नहीं हैं, बल्कि केवल अधर्मी और पापी लोग हैं। सच्चे वैष्णवका आदर्श यह नहीं है। जो लोग अस्पृश्योंको ऊँचा उठाना नहीं चाहते वे अधर्मी ही कहे जा सकते हैं। वैष्णव धर्ममें यह नहीं कहा गया कि हम किसीके प्राण ले लें या किसीको चोट पहुँचाएँ; वह तो दूसरोंके प्रति प्रेम और सहानुभूतिसे भरा पड़ा है। यही बात श्रावकोंके सम्बन्धमें भी कही जा सकती है। ये लोग बेजुबान जानवरोंको खिलाने-पिलानेके लिए बिलकुल तैयार रहते हैं किन्तु अपने साथी मानवोंको, जो दुर्भाग्यसे भूखे मर रहे हैं, भोजन देना नहीं चाहते। इन श्रावकोंमें पशुओंके प्रति तो गहरा दयाभाव है किन्तु मनुष्योंके प्रति नहीं। क्या आप इसे धर्म कहते हैं? यदि वैष्णव धर्म अपने साथी मनुष्योंसे घृणा करना सिखाता है तो मैं उसे धर्म नहीं कह सकता, अलबत्ता धर्मकी भयंकर विकृति कह सकता हूँ। मैं वैष्णवोंसे हार्दिक अनुरोध करता हूँ कि उनके मनमें अस्पृश्योंके प्रति इस प्रकारका जो घृणाभाव है उसे वे निकाल फेंके। मैं आपसे यह नहीं कहूँगा कि आप ढेढ़ों या भंगियोंके हाथका खाना खाने लगें। आपको यह समझ लेना चाहिए कि

वर्णाश्रम धर्मका सार यह है कि हम गरीबों, अन्त्यजों और दलितोंके प्रति सहानुभूति रखें। हमारा सच्चा धर्म क्या है यह 'श्रीमद्भगवद्गीता' में बताया गया है। उसमें छुआछूतकी भावनाका समर्थन नहीं है। गरीबोंके प्रति प्रेम और दयाका भाव रखना कर्त्तव्य बताया गया है और जबतक हममें ये गुण प्रचुर रूपसे नहीं आते तबतक हम अपने-आपको सच्चा वैष्णव नहीं कह सकते। क्योंकि जिस धर्ममें पीड़ितों और दलितोंके प्रति प्रेम न हो वह धर्म कैसा? वह तो केवल अधर्म और धर्मका विकृत रूप है।

चरखेकी बात उठाते हुए गांधीजीने कहा: चरखेसे समस्त भारतमें नये जीवनका संचार हुआ है और वह खिलाफतके अन्यायको दूर करवानेका उपाय भी है। मैं आपसे यह नहीं कहता कि आप अस्पृश्योंके हाथका भोजन करें। आप घाटकोपरके लोग इस बातको एक ओर छोड़ दें और स्वराज्यके अन्य मार्गोंका अवलम्बन करें। चरखेमें इतनी शक्ति है कि उससे खिलाफत और पंजाबके अन्यायोंका निराकरण हो जायेगा और साथ ही उससे हमें स्वराज्य भी मिल जायेगा। उन लोगोंसे मेरा अनुरोध है कि वे अपना ध्यान कांग्रेसके कार्यक्रमपर केन्द्रित करें। वह कार्यक्रम क्या है, यह आप सभी जानते हैं। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह हमें इतनी शक्ति दे जिससे हम देशके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन कर सकें और ठीक राहपर चलकर स्वराज्यके लक्ष्यतक पहुँच सकें। (भारी हर्षध्वनि)

इसके बाद गांधीजीने श्रोताओंसे, जिनमें स्त्री और पुरुष सभी थे, तिलक स्वराज्य-कोषके लिए यथाशक्ति धन देनेका अनुरोध किया। उन्होंने कहा: आप जो-कुछ दें स्वयंसेवकोंको दें। साथ ही साथ मैं चाहता हूँ कि आप दान श्रद्धापूर्वक करें। मैं यह नहीं चाहता कि आप अपने देशके लिए अनिच्छासे धन दें। जिन श्रावकों और वैष्णवों-ने इस कोषमें धन दिया है, वे उसे वापस लेनेके लिए सर्वथा स्वतन्त्र हैं, क्योंकि मुझे ऐसा अनिच्छापूर्वक दिया हुआ धन नहीं चाहिए; मुझे तो वही रुपया चाहिए जो श्रद्धापूर्वक दिया गया हो। जो लोग अपना रुपया वापस लेना चाहें वे खुशीसे ले सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-६-१९२१

१०९. पत्र : मणिबेन पटेलको

बम्बई
गुरुवार [१६ जून, १९२१][1]

चि० मणि,[2]

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने काका विट्ठलभाईको[3] उससे पहले ही बता दिया था कि हमें मिलना है। वे पूना जा रहे हैं। हम जरूर ही मिलेंगे। मिलनेके बाद जो होगा वह लिखूँगा। बम्बईमें क्या अनाचार तुमने देखा है, वह मुझे बताना। तुम निश्चिन्त रहना। मैं काकासे पूरी बातें करनेवाला हूँ।

तुम दोनों भाई[4]-बहन देशकार्यमें पूरी तरह लग जाना। और तुम्हारे पूरी तरह लग जानेका अर्थ यह है कि कातने और पीजनेका काम यहाँ तक जान लो कि उसमें तुम्हें कोई मात न दे सके। और सब काम अस्थायी हैं। यह काम स्थायी है, ऐसा मानना। हमारी सारी शक्ति इसीमें से आयेगी।

भाई महादेव[5] कल बम्बई आ गये हैं। कहना चाहिए कि उन्होंने खूब चन्दा इकट्ठा किया।

यहाँ बरसात अच्छी हो रही है। कल लगभग ५५,००० रुपये घाटकोपरमें मिले हैं।

मैं पत्र लिखूँ या न लिखूँ, परन्तु तुम तो लिखती ही रहना।

बापूके आशीर्वाद

मणिबेन
द्वारा/श्री वल्लभभाई पटेल
भद्र, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो मणिबहेन पटेलने

१. घाटकोपरमें १५ जूनको भेंट की गई राशिके उल्लेखसे लगता है कि यह पत्र इसी तारीखको लिखा गया होगा।

२ सरदार वल्लभभाईकी पुत्री।

३ माननीय विट्ठलभाई पटेल (१८७३–१९३३); वल्लभभाईके बड़े भाई। १९०३ में वकालत पास की; बम्बई विधान परिषद् तथा शाही परिषद्के सदस्य; भारतीय विधान सभाके प्रथम निर्वाचित अध्यक्ष, १९२५-३०।

४. डाह्याभाई पटेल।

५ महादेव देसाई।

११०. तार : चित्तरंजन दासको

[साबरमती
१७ जून, १९२१ या उसके पश्चात्][1]

मोतीलालजीको तार भेज रहा हूँ।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५७३)की फोटो-नकलसे।

१११. भाषण : बम्बईमें असहयोगपर[2]

१८ जून, १९२१

महात्मा गांधीने कहा : पारसी जाति और हिन्दू जातिमें सदासे ही बड़ी मित्रता रहती आई है। पारसियोंने जिस देशको अपना देश बना लिया है उसके प्रति उन्होंने प्रेम और मित्रताका भाव भी व्यक्त किया है। बचपनसे ही पारसियोंसे मेरा निजी सम्बन्ध रहा है और जीवन-भर मैं उनके निकट सम्पर्कमें आया हूँ; मैंने उनके गुणोंकी सराहना की है। मैं स्पष्ट रूपसे कह देना चाहता हूँ कि मैं यहाँ पारसी जातिकी झूठी प्रशंसा करनेके उद्देश्यसे नहीं आया हूँ; मैं अपनी अन्तरात्मामें जिस बातको सच्ची मानता हूँ वही कह रहा हूँ। आवश्यकता होगी तो मैं आपके दोषोंकी आलोचना करनेमें भी नहीं हिचकूंगा। मेरे मनमें पारसियोंके प्रति अत्यधिक प्रेम और सम्मान है और मैंने जितने सार्वजनिक काम हाथमें लिये उन सबमें मैं उनके सम्पर्कमें आया हूँ। समस्त संसारमें इतनी छोटी अन्य कोई जाति नहीं है जिसने अपनी दानशीलता और धार्मिकतासे इतना काम कर दिखाया हो। हिन्दू धर्म और पारसी धर्ममें अधिक अन्तर नहीं है, क्योंकि दोनोंमें सत्यको प्रथम और सर्वोच्च स्थान दिया गया है। मैं पूरी तरह

१. यह चित्तरंजन दासके १७ जून, १९२१के निम्नलिखित तारके उत्तरमें भेजा गया था: "पूर्वी बंगालमें कुलियोंसे सम्बन्धित हलचलोंके कारण अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके लिए बंगालके प्रतिनिधियोंका चुनाव १५ जुलाईसे पहले सम्भव नहीं, तदनुसार कार्य-समितिके एक सदस्यकी हैसियतसे प्रबन्ध कर रहा हूँ। यदि कांग्रेस संविधानके उन्नीसवें अनुच्छेदके बारेमें और मंजूरी जरूरी हो तो कृपया पत्रके जरिये या अन्य प्रकारसे प्राप्त कीजिए। स्वराज्य-कोषमें करीब तीन लाख। ठीक-ठीक आंकड़ोंके लिए कलकत्ता तार दे रहा हूँ। माधुरीपुर तार भेजिए। कृपया मोतीलाल नेहरूको सूचित कीजिए।" —पूर्वी बंगालमें रेलवे और जहाजोंके मजदूरोंकी हड़तालें हुई थीं और सी० एफ० एन्ड्रयूजके अनुरोधपर गांधीजीने भी वहाँका दौरा किया था।

२. गांधीजीने शनिवारको दोपहर बाद केन्द्रीय पारसी संघकी परिषद्की बैठकमें भाषण दिया था। बैठककी अध्यक्षता होरमसजी अदनवालाने की थी।

स्वीकार करता हूँ कि जो आन्दोलन इस समय चल रहा है उसमें भाग लेनेके लिए आपकी अन्तरात्मा जबतक गवाही न दे तबतक आपका उससे अलग रहना ही उचित होगा। और यदि चंद पारसी ही दृढ़ संकल्प होकर तथा इस उद्देश्यके औचित्यमें विश्वास रखते हुए आन्दोलनमें भाग ले तो मुझे पूरा सन्तोष हो। इसलिए मैं पारसियो-से अनुरोध करता हूँ कि वे समस्त स्थितिपर उचित रूपसे विचार करें और दृढ़ निश्चय करके आन्दोलनमें भाग लें। श्रद्धाकी जितनी कमी हिन्दुओं और मुसलमानोंमें है उतनी ही पारसियोंमें भी है, और उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे स्थितिके अनुकूल और प्रतिकूल दोनो प्रकारके पहलुओंको समझनेके अनन्तर ही संघर्षमें भाग ले। जब काठियावाड़में पोलिटिकल एजेंटसे मेरा झगड़ा[1] हो गया था और जब मैंने उसके विरुद्ध कार्रवाई करनी चाही तो वे एक पारसी सज्जन, सर फीरोजशाह मेहता ही थे जिन्होंने मुझसे कहा था कि ऐसे मामलेमें न्यायकी आशा करना व्यर्थ है। मैंने एक पारसीसे यह पहला पाठ पढ़ा था और तबसे मैंने अपने जीवनमें इतने अधिक अपमान सहे हैं कि मेरे खयालसे इस सभामें तफसीलके साथ उनका जिक्र करना लाभदायक न होगा।

असहयोग आन्दोलन एक आध्यात्मिक आन्दोलन है; यह हमारे जीवनकी आध्यात्मिक अवस्था है। सभी धर्मोमें यह बताया गया है कि हमें बुराईसे दूर भागना चाहिए। उससे बिलकुल अलग रहना चाहिए। मैं डायरको निभानेके लिए तैयार हूँ परन्तु डायरशाहीको नहीं। मैं पूरी तरह मानता हूँ कि अनेक भारतीयों और पारसियोको अंग्रेजी राज्यसे लाभ हुआ है और वे करोड़पति हो गये हैं एवं सब तरहसे सुखमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं; किन्तु इस राज्यसे सामान्य भारतीय समाजको कोई लाभ नहीं पहुँचा है। अंग्रेजोंसे हमारा सम्बन्ध जनसाधारणके लिए बिलकुल ही लाभदायक नहीं हुआ है और इसका सबसे अच्छा प्रमाण हमें दादाभाई नौरोजीकी लिखी पुस्तकों[2] और गोखलेकी साक्षीसे मिलता है। मणिपुरके मामलेमें जब बातचीत की जा रही थी तो सर जॉन गर्स्टने ही कहा था कि समाजके प्रमुखोंको समाप्त कर देना ब्रिटिश सरकारकी नीति है। मेरी आँखें इससे पहले नहीं खुलीं, यह मेरा दुर्भाग्य है। मेरा कहना यह है कि अंग्रेजी राज्यसे जहाँ कुछ लोगोंको शायद लाभ पहुँचा हो, वहाँ बहुत बड़े जनसमुदायको और अधिकांश जनताको आर्थिक या नैतिक अथवा शारीरिक दृष्टिसे जरा भी लाभ नहीं पहुँचा है। आज भारतकी अवस्था जितनी खराब है उससे ज्यादा खराब पहले कभी नहीं रही। मुझे हिन्दुओं, पारसियों और मेमनोंने खानगी तौरपर कहा है कि वे मेरे आन्दोलनमें गुप्त रूपसे सहायता देनेके लिए बिलकुल तैयार हैं, किन्तु वे खुली सहायता नहीं दे सकते, क्योंकि उनके निहित स्वार्थ हैं और वे व्यापार तथा ऐसे ही अन्य कामोंमें लगे हुए हैं।

१. गांधीजीने अपने भाई लक्ष्मीदाससे सम्बन्धित एक मामलेमें एजेंटसे हस्तक्षेप करनेकी प्रार्थना की थी और इसपर उस एजेंटने उन्हें अपने कमरेसे निकलवा दिया था। देखिए आत्मकथा, भाग २, अध्याय ४।

२. इनमें मुख्य है पावर्टी ऐंड अन-ब्रिटिश रूल इन इंडिया।

मुझे यह स्वीकार करनेमें तनिक भी संकोच नहीं हो रहा है कि मुगलोंके राज्यमें दमन और अत्याचार होता था; किन्तु भारतीयोंका जितना पतन आज हुआ है उतना उस जमानेमें नहीं हो पाया था। जहाँतक मेरा सवाल है वहाँतक मैं इस बातसे सहमत नहीं कि हमारी कौंसिलोंमें सदस्योंकी संख्या बढ़ाने और ऐसे ही दूसरे कदम उठानेके बादसे हमारी राजनैतिक स्थिति बहुत अधिक सुधरी है। मैं नहीं मानता कि सुधारोंसे भारतको कोई भी अधिकार मिला है और यदि मुझे कोई यह विश्वास करा दे कि ऐसा नहीं है तो मैंने नरमदलीय लोगोंको जो पत्र लिखा है उसे वापस लेनेके लिए मैं बिलकुल तैयार हूँ। यदि इन सुधारोंमें वास्तविकता और क्षमता है तो ब्रिटिश सरकारको लोगोंके विरुद्ध कोई गैरकानूनी कार्रवाई न कर सकनी चाहिए, किन्तु स्थिति ऐसी नहीं है। कुछ दिन पहले मुझे एक सज्जनका एक पत्र मिला था। उसमें उन्होंने कहा था कि उनपर पुलिसकी इमारतोंमें आग लगानेका आरोप लगाया गया है और वे इन मामलोंमें बिलकुल ही निर्दोष हैं। देशमें आज इस सम्बन्धमें इसी तरहकी बहुत-सी दूसरी बातें भी हो रही हैं। लाला हरकिशनलाल पंजाबके एक नरमदलीय नेता हैं। उस प्रान्तमें उन जैसा नरमदलीय नेता दूसरा नहीं है और वे समस्त राजनैतिक आन्दोलनोंसे अलग रहे हैं। किन्तु मार्शल लॉके दिनोंमें वे गिरफ्तार कर लिये गये और उनको सजा दे दी गई।[1] लाला दुनीचन्द और कुछ अन्य लोगोंके साथ भी ऐसा ही किया गया था। इस समय भी बिहार प्रान्तमें, जहाँ लॉर्ड सिन्हा गवर्नर हैं, इतना दमन चल रहा है जितना भारतके अन्य किसी भागमें नहीं चल रहा। लॉर्ड सिन्हा ऐसे आदमी नहीं हैं जो ऐसी बातोंको सहन कर लें, किन्तु वे अपने अधीनस्थ सिविल सर्विसके अधिकारियोंको अपने नियन्त्रणमें रखनेमें असमर्थ हैं, क्योंकि वे भारतीय हैं और अधिकारी अंग्रेज हैं। यदि लॉर्ड सिन्हाकी जगहपर सर एडवर्ड गेट[2] गवर्नर होते तो वे इन अधिकारियोंको झिड़कते; किन्तु लॉर्ड सिन्हा उन्हें नहीं झिड़क सकते। मुझे निश्चय है कि यदि लॉर्ड सिन्हा अपने इन अधीनस्थ अधिकारियोंको अंकुशमें रखनेका प्रयत्न भी करें तो वे ऐसा कदापि नहीं कर पायेंगे। बिहार प्रान्तमें मजहरुल हक[3] और उनके जैसे दूसरे बड़े-बड़े नेता हैं। श्री एन्ड्रयूज ऐसे आदमी नहीं हैं जो गोरखोंके अत्याचारके सम्बन्धमें झूठी बातें लिखें। हम अच्छी तरह जानते हैं कि चाँदपुरमें मजूरोंके साथ क्या किया गया है।[4] किन्तु सरकारने लोगोंको बताया है कि वहाँपर सैनिकोंने उतना ही बलप्रयोग किया है जितना आवश्यक था, उससे ज्यादा या कम नहीं। ऐसी ही

१. देखिए खण्ड १५।

२. १९१७में हुए चम्पारन सत्याग्रहके समय बिहार और उड़ीसाके लेफ्टिनेंट गवर्नर।

३. (१८६६–१९३०); वकील और राजनीतिज्ञ; मुस्लिम लीगके जन्मदाताओंमें से एक। बादमें उसके सभापति; चम्पारनमें गांधीजीके मददगार।

४. यहाँ असमके मजदूरोंसे सम्बन्धित घटनाका उल्लेख किया गया है। जिसकी जाँच एन्ड्र्यूजने की थी।

बातें जनरल डायरने कही थीं। मैं आपसे वही बात कह रहा हूँ जिसे मेरा अन्तःकरण सत्य बताता है, अन्य कुछ नहीं। जब अली बन्धुओंने भूल की थी तब मैंने उनका ध्यान उसकी ओर खींचा था और उन्होंने तत्काल अपना रवैया सुधार लिया था।

असहयोग आन्दोलनकी सफलताकी चर्चा करते हुए श्री गांधीने कहा: लोग इस आन्दोलनकी जितनी सफलताकी आशा कर रहे थे वह उससे अधिक सफल हुआ है। उससे लोगोंके दिमागोंमें से अधिकारियोंका और कष्टोंका सब भय निकल गया है तथा देशके लिए त्याग और काम करनेसे वे अब बिलकुल नहीं डरते। लोग अपने देशके लिए कुछ भी करनेको तैयार हैं। यद्यपि पारसी जाति संख्याकी दृष्टिसे बहुत छोटी है, फिर भी उसमें दादाभाई और मेहता-जैसे लोग पैदा हुए हैं और उन्होंने इस देशकी महान् सेवा की है। पारसी अपनी श्रद्धा, दानशीलता और त्यागवृत्तिसे भारतकी बहुमूल्य सेवा कर सकते हैं। श्री मेहता बम्बईके शेर कहे जाते हैं और मुझे आशा है कि पारसी लोग ऐसा काम करेंगे जिससे वे भारतके शेर कहे जायें। पारसी दानी विचारशील हैं और धनी हैं; उनमें बड़े-बड़े व्यापारी हैं; उनमें देशके लिए अत्यधिक त्याग करनेकी क्षमता भी है। यदि वे आवश्यक त्याग करके भारतके लिए काम कर सकें तो वे सहज ही भारतके नेता बन सकते हैं। मैं तो पारसियोंसे बड़े-बड़े कामोंकी आशा करता हूँ।

श्री एच० पी० मोदीके प्रश्नोंके उत्तरमें महात्माजीने कहा: स्वराज्य लेनेके लिए अब हमारे पास केवल तीन महीने शेष रह गये हैं। मुझे स्वराज्य मिलनेका विश्वास है भी और नहीं भी है। मुझे विश्वास इसलिए नहीं है कि हमने बेजवाड़ामें जो कार्यक्रम स्वीकार किया था और देशके सम्मुख रखा था वह अभीतक पूरा नहीं किया गया है। लेकिन मेरा ईश्वरमें बहुत विश्वास है और मुझे निश्चय है कि भारतको स्वराज्य अवश्य मिलेगा। असहयोग आन्दोलन आरम्भ करनेका उद्देश्य देशके लोगोंकी मनोवृत्तिको पूर्णतया बदल देना है। दुर्भाग्यका विषय है कि लोगोंने अभीतक बेजवाड़ामें रखा गया कार्यक्रम पूरा नहीं किया है और इसीलिए मुझे सितम्बरके[1] महीनेमें स्वराज्य मिलनेके सम्बन्धमें कभी-कभी सन्देह होने लगता है।

चरखेकी उपयोगिताके प्रश्नपर बोलते हुए गांधीजीने कहा: चरखेमें मेरा बहुत अधिक विश्वास है और मेरा खयाल है कि उसमें देशका हित करनेकी क्षमता बहुत है। खाद्य-समस्याके बाद जनसाधारणके सामने तन ढाँकनेकी समस्या आती है। हम अभी जनताको पूरा कपड़ा नहीं दे सकते; इसके लिए हमें जापान, इंग्लैंड और दूसरे देशोंकी सहायता लेनी होती है। मैं यह चाहता हूँ कि भारत दूसरे देशोंकी तनिक भी सहायता लिये बिना अपने लोगोंको पूरा कपड़ा दे सके। यदि हमारे कारखाने एक छटांक भी सूत या एक गज भी कपड़ा बाहर न भेजें तो भी वे जनसाधारणकी जरूरतके लायक कपड़ा तैयार नहीं कर सकते। देशमें लगभग ३ करोड़ लोग ऐसे हैं जिन्हें ठीक तरहसे

१. गांधीजीने सितम्बर १९२० में कहा था कि स्वराज्य एक वर्षमें मिल जायेगा। देखिए खण्ड १८।

न तो खाना मिलता है और न वस्त्र। यह बात मैं इस देशके अपने निजी अनुभवके आधारपर कह रहा हूँ और मैंने स्वयं उड़ीसा तथा अन्य प्रान्तोंमें जो-कुछ देखा है केवल वही बता रहा हूँ। इन जगहोंमें लोग अधनंगे रहते हैं और आधा पेट खाकर जिन्दा हैं। मुझसे धनी लोग गरीबोंके लिए सदाव्रत खोलनेकी बात कहेंगे, किन्तु मैं उनसे कहता हूँ कि इस तरहकी चीजोंमें मेरा विश्वास नहीं है। मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक मनुष्य स्वतन्त्र हो और अपना गुजारा अपनी ही मेहनतसे करे। मैंने भंगीका काम किया है, इसलिए मुझे इन बातोंके सम्बन्धमें कुछ जानकारी है और मैं यह भी जानता हूँ कि मजदूरीमें थोड़ी-सी बढ़ोतरी होनेका क्या अर्थ होता है। अमृतलाल ठक्करने 'सर्वेंट्स ऑफ इंडिया' नामक पत्रमें एक बहुत ही मनोरंजक लेख लिखा है। इसमें उन्होंने बताया है कि काठियावाड़में गरीब लोगोंको चरखा कातनेसे कितनी मदद मिल रही है।

उन्होंने काठियावाड़में ढेढ़ोंमें चरखेका प्रचार किया है और उससे उन लोगोंका बहुत हित हो सकता है। भारतके विशिष्ट जलवायुमें हमें अपने व्यवहारके लिए खादी ही चाहिए जो एक सुन्दर चीज है और मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप सब लोग इसीका व्यवहार करें। जब देश-भरके भारतीय चरखा चलाना सीख लेंगे तब वे बिलकुल स्वतन्त्र, निर्भय और स्वावलम्बी हो जायेंगे। भारतीय इतने गरीब हैं कि गरीबीसे मजबूर होकर बहुतेरी औरतें पत्थर तोड़ती और ऐसे ही दूसरे काम करती हैं। मैं अपने अनुभवसे जानता हूँ कि इन गरीब स्त्रियोंको किस तरह अपने सतीत्व एवं शीलसे हाथ धोना पड़ता है। किन्तु यदि वे चरखा चलायेंगी तो वे अपने घरोंमें ही बनी रहकर अपनी आजीविका कमा सकेंगी। इसीलिए मैं कहता हूँ कि चरखेमें स्वतन्त्रता और पवित्रताका समावेश है।

सरकारी आँकड़ोंके अनुसार प्रत्येक भारतीयकी औसत आमदनी दो रुपये, चार आने प्रति मास है। इसमेंसे करोड़पतियोंकी आमदनी घटा देनेपर एक आदमीकी आमदनी दो रुपये प्रति मास रह जायेगी; इतनी आमदनीसे एक साधारण आदमी अपना गुजारा कैसे कर सकता है? इसलिए यदि परिवारकी आमदनीमें थोड़ी-बहुत वृद्धि हो तो उसका स्वागत किया जायेगा और उसके कष्टोंमें कुछ कमी होगी।

शिक्षाके प्रश्नपर बोलते हुए श्री गांधीने कहा: भारतमें अनिवार्य शिक्षाकी व्यवस्था करना लगभग असम्भव है, क्योंकि ऐसी शिक्षापर भारी खर्च आता है; किन्तु यदि लोग चरखा चलायेंगे तो उनके लिए अपने बच्चोंको शिक्षित करना सम्भव हो जायेगा। इस प्रकार चरखा उनके आर्थिक पुनरुत्थान, सम्पत्ति और स्वतन्त्रताका साधन बन जायेगा और सच तो यह है कि हमारा छुटकारा चरखा चलानेसे ही होगा। हमें एक करोड़ रुपये जमा करने हैं। मैं मानता हूँ कि अभीतक मैं उतनी राशि इकट्ठी नहीं कर पाया हूँ, किन्तु आशा है कि हो जायेगी। श्री गांधीने हाथ-बनी चीजोंका प्रश्न फिर उठाते हुए कहा कि इंग्लैंडमें भी जहाँ सब लोग यन्त्रोंका उपयोग करते हैं हाथ-

बनी चीजें सर्वोत्तम और यन्त्रोंकी बनी चीजोंकी अपेक्षा ज्यादा अच्छी समझी जाती है। नवसारीमें पारसी लोग भी ऐसा ही समझते हैं और भारतीयोंको भी हाथ-बनी चीजोको मूल्यवान समझना चाहिए। इंग्लैंडमें भी लोग हाथकी बनी चीजोको व्यवहारमें लाना पसन्द करते हैं क्योंकि वे उन्हें सर्वोत्तम समझते हैं, और मेरी समझमें नहीं आता कि हम भारतीय भी उन्हें सर्वोत्तम क्यों न मानें। पारसियोंने मुझे अधिक रुपये नहीं दिये हैं; अधिक रुपये मेमनोंने भी नहीं दिये हैं। मेरे मित्र पारसी रुस्तमजीने[1] मुझे बड़ी-बड़ी रकमें दी हैं और मेरे ऊपर उनका इतना अधिक विश्वास है कि यदि मैं इस प्रकारकी इच्छा प्रकट-भर कर दूं तो वे मुझे अपना समस्त धन दे डालेंगे। सभाओंमें आनेवाले लोग विश्वास रखें कि जो रुपया इकट्ठा किया गया है उसका ईमानदारीके साथ अच्छेसे-अच्छा उपयोग किया जायेगा, क्योंकि हमें इस कामके लिए श्री मोतीलाल नेहरू, श्री जमनालाल बजाज, शंकरलाल बैंकर और उमर सोबानी तथा छोटानीसे अच्छे व्यक्ति नहीं मिल सकते।

> एक पारसी सज्जनने कहा: मैं जानना चाहता हूँ कि हम अपनी शक्ति केवल खद्दर बनानेतक ही क्यों सीमित रखें और रेशम और दूसरी उपयोगी वस्तुएँ क्यों न बनायें? मैं जापान गया था; वहाँ मैंने देखा कि देहातके लोग अपने-अपने घरोंमें छोटीसे-छोटी चीजें बनाते हैं और उससे अच्छी खासी आजीविका कमा लेते हैं। वे करघोंपर बढ़ियासे-बढ़िया रेशमी कपड़े बुन लेते हैं। मैं पूछता हूँ कि क्या हमारे देशके लोग शहरोंमें ही संघ और समितियाँ बनाकर उनकी सहायतासे ऐसे काम नहीं कर सकते और इस प्रकार देशके बढ़ते हुए उद्योगोको प्रोत्साहन नहीं दे सकते। यदि इन उद्योगोंमें कुछ नुकसान हो तो ये संघ और समितियाँ उसको पूरा करें और अभी हालमें खड़े किये गये उद्योगोंको प्रोत्साहन दें।

गांधीजीने कहा, जापान एक छोटा-सा द्वीप है, और भारत एक महाद्वीप है। हमें भारतकी इस ३० करोड़ आबादीका खयाल रखना पड़ता है और इसलिए भारतके लोग ऐसी अत्यन्त सामान्य वस्तुएँ ही बना सकते हैं जिनका उपयोग देशके सभी लोग करते हैं। भारतीय चरखा चलानेके अभ्यस्त हैं और वे अपने घरोंमें आसानीसे खादी तैयार कर सकते हैं। मैं यह नहीं कहता कि हमें सदा खद्दरका ही व्यवहार करना चाहिए। मुझे आशा है कि हम मलमल, जिसके लिए ढाका प्रसिद्ध था, और बारीक रेशमी कपड़ा भी बना सकेंगे। दुर्भाग्यसे इस समय हमें बढ़िया किस्मका कपड़ा बनानेके लिए समस्त बारीक सूत बाहरसे मँगाना पड़ता है। हम कुछ ही समयमें बढ़िया सूत तैयार करने योग्य हो जायेंगे, परन्तु जबतक ऐसा नहीं होता तबतक हमें खद्दरसे ही सन्तोष करना होगा।

१. नेटालके प्रमुख भारतीय व्यापारी, जिन्होंने दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहमें खास हिस्सा लिया था।

श्री विमदलाल और श्री बुमसियानें गांधीजीसे पूछा, आप जो स्वराज्य चाहते हैं वह किस किस्मका होगा और उसमें हमारे वर्तमान शासकोंके लिए कोई स्थान रहेगा या नहीं?

गांधीजीने कहा, मैं चाहता हूँ कि सेना, पुलिस, क़ानून और राजस्वपर भारतीयोंका पूरा नियन्त्रण रहे और वे अपना धन स्वयं खर्च कर सकें। इस समय हम अपना प्रधान सेनापति नियुक्त नहीं कर सकते। यदि सैनिक भारतसे बाहर भेजे जानेको तैयार हैं तो हम उनमें से एकको भी बाहर जानेसे नहीं रोक सकते। मैंने जो-कुछ कहा है वह मैं वोटों अथवा उसी प्रकारकी अन्य बातोंके बारेमें नहीं कहूँगा। यदि इस समय ये बातें हमारे नियन्त्रणमें आ जायेंगी तो हम धीरे-धीरे आगे बढ़ते जायेंगे। यदि हम अपनी जरूरतका पूरा कपड़ा बना सकें तो भारत स्वावलम्बी देश हो जायेगा; किन्तु हम अभी दूसरे देशोंके मोहताज हैं। जबतक हमें सरकारको उससे प्राप्त प्रत्येक अदना चीज तकके लिए धन्यवाद देना पड़ता है तबतक हम बहुत सफलता प्राप्त नहीं कर सकते। हमें ऐसी स्थितिमें आ जाना चाहिए कि हम दूसरे लोगोंकी सहायताके बिना काम चला सकें। मेरा खयाल है कि असहयोगके कारण लोगोंकी मनोवृत्ति बहुत-कुछ बदलती है, उदाहरणार्थ मलाबारके मोपला लोग, जो बड़े जोशीले हैं, असहयोगके प्रभावसे अनुशासन-प्रिय हो गये हैं।

गांधीजीने एक अन्य प्रश्नके उत्तरमें कहा कि मैं औपनिवेशिक स्वराज्यसे सन्तुष्ट हो जाऊँगा। वाइसरायकी राय है कि वह हमें धीरे-धीरे दिया जाये; किन्तु मेरी राय है कि तत्काल दिया जाये। जो लोग यह कहते हैं कि अभी हम शासन-भार सँभालनेके योग्य नहीं हैं, उनसे मैं कहूँगा कि ऐसा इस कारण है कि हमें हमारे उचित अधिकारसे वंचित रखा गया है। मैं नहीं मानता कि भारतमें अपना शासन स्वयं करनेकी क्षमता नहीं है। हमारी शासन व्यवस्थामें मन्त्रिगण भारतीय हों या अंग्रेज, इसकी चिन्ता नहीं। मैं तो यही चाहता हूँ कि हम जब चाहें तब उनको नियुक्त कर सकें और जब चाहें तब हटा सकें। मैं यह नहीं चाहता कि किसी व्यक्तिको उसके रंगके कारण ही हटा दिया जाये; बल्कि तभी हटाया जाये जब उसे अयोग्य पाया जाये। मन्त्रियोंको कमिश्नरों और कलक्टरोंसे ऊँचा माना जाना चाहिए। भारतीय लोग सैनिक विभागके प्रशासनके अयोग्य हैं, ऐसा मैं नहीं मान सकता।

एक सज्जनने कहा, आप हिन्दुओं और मुसलमानोंकी एकताकी बात तो करते हैं, परन्तु इसमें पारसी लोग कहाँ आते हैं, यह मैं नहीं जानता। हिन्दू और मुसलमान अपने-अपने लोगोंको नियुक्त करेंगे और पारसियोंको कोई नहीं पूछेगा।

श्री एन० एम० बुमसियानें कहा, श्रीकृष्ण गुप्त ने हमें बताया है कि जबतक हम अपना बचाव स्वयं करने योग्य नहीं हैं तबतक स्वराज्य लेनेसे

कोई लाभ नहीं है। हमें पहले विदेशी सरकारसे अपना बचाव स्वयं करनेके योग्य बनना चाहिए।

श्री एच० पी० मोदीने कहा कि हम लोग बहुत सालोंसे बाबूगीरी करते आये हैं और हमें फौजी काम करने और वैदेशिक सम्बन्धोंका संचालन करनेका अभ्यास नहीं है। हम इन कामोंको अंग्रेजोंके नियन्त्रणमें चलाते रहे हैं; इसलिए हम भारतीय इनको स्वतन्त्र रूपसे संचालित करनेमें अनभ्यस्त हैं।

गांधीजीने कहा, मेरा खयाल यह है कि अंग्रेज फिलहाल भारत छोड़ जानेके लिए तैयार नहीं हैं; वे यहाँ रहेंगे, किन्तु मैं चाहता हूँ कि वे ऐसा अपनी शर्तोंपर नहीं, भारतीयोंकी शर्तोंपर करें। इसी समय भारतको छोड़कर चले जानेमें अंग्रेजोंको शर्म लगेगी। दूसरी बात यह है कि मैं नहीं मानता कि यदि हमें कल ही स्वराज्य मिल जाये तो हमें दूसरी सभी विदेशी सरकारोंसे एक बार लड़ना होगा। किन्तु यदि हमें किसी दूसरे देशकी सरकारसे लड़ना भी पड़े तो हम उससे लड़ेंगे और जबतक हमारी जीत नहीं होगी तबतक लड़ते ही रहेंगे। मैं आपकी समझमें यह पैठा देना चाहता हूँ कि भारतीय अपने उद्देश्योंकी पूर्ति केवल अपनी शक्तिसे ही कर सकते हैं, दूसरोंकी चतुराई भरी चालोंसे या वक्रनीतिसे नहीं कर सकते। हम अपने अधिकारोंको तभी कायम रख सकते हैं जब हममें उनकी रक्षा करनेकी योग्यता होगी; न कि संसद या विधान परिषदोंकी मददसे।

श्री बुमसियाने कहा कि सामान्यतया बड़ा राष्ट्र छोटे राष्ट्रको घर दबाया करता है। संसारमें युद्ध या संग्रामके बिना कोई भी बड़े महत्त्वका काम सम्पन्न नहीं हुआ है। राष्ट्रमें सही भावना उत्पन्न करनेमें वर्षों लग जाया करते हैं और राष्ट्रोंके जीवनमें वर्ष क्षणोंके समान हुआ करते हैं। इसलिए हमसे कहा गया कि ऐसे मत चलो कि रपट जाओ। डायरशाही और ओ'डायरशाही दोनोंसे पारसियोंको उतनी ही घृणा है जितनी कि अन्य किसीको। पारसी समाज सदासे ही शासकोंके प्रति राजभक्त रहा है, फिर वे चाहे हिन्दू हों, चाहे अंग्रेज। हम अंग्रेजोंसे यह कहनेके लिए तैयार नहीं हैं कि वे इस देशसे अपना बँधना-बोरिया लेकर चले जायें। हम बादशाह जॉर्जके साम्राज्यसे निकलना भी नहीं चाहते। हम ऐसे सभी आन्दोलनोंका पूरा समर्थन करेंगे जिनमें ये दोनों बातें मौजूद होंगी। यदि गांधीजी वैधानिक तरीकोंसे आगे बढ़ना चाहें, और दूसरे तरीके काममें न लायें तो हम पूरी तरह उनके साथ हैं। हम अपने बादशाह और अपने देशकी खातिर त्याग करने और हर तरहकी सेवा करनेको तैयार हैं।

अन्य प्रश्नोंका उत्तर देते हुए महात्मा गांधीने कहा, मेरा आन्दोलन बोल्शेविक-वादके विरुद्ध एक बड़ा मोर्चा है। भारतीय यह नहीं चाहते कि इस देशमें अराजकता और आतंक फैल जाये। लोगोंके मस्तिष्क असहयोगके फलस्वरूप बहुत अधिक शुद्ध हो गये हैं। उदाहरणार्थ सिन्ध, हैदराबाद और खेड़ामें लोग नैतिक दृष्टिसे

बहुत-कुछ ऊँचे उठ गये हैं। इस आन्दोलनसे उनके दिलोंसे घृणा जाती रही है; यदि इससे दूसरे समाजोंके प्रति घृणा बढ़ रही होती तो मैं असहयोग आन्दोलनसे अलग हो गया होता।

श्री एन० एम० मुखियाने कहा, मैंने स्वयं देखा है कि नगरोंमें पारसियोंको हिन्दुओं और मुसलमानों दोनोंने ही दबाया है। मैंने १८८६ में मालेगाँवमें भी यही बात देखी थी। यदि पारसी यह देखेंगे कि यह आन्दोलन उनके लिए हितकर है तो वे उसमें भाग लेंगे, अन्यथा वे उससे अलग ही रहेंगे।

श्री गांधीने कहा, अंग्रेज भारतमें आजसे कोई १५० साल पहले आये थे। उससे पहले पारसी लोग मुसलमानों और हिन्दुओंके ही साथ रहते थे; अतः वे स्वयं ही यह तय कर सकते हैं कि तब उनकी अवस्था अबसे अच्छी थी या बुरी। हम हिन्दुओं और मुसलमानोंकी एकताकी बात इसलिए करते हैं कि उनमें एकता पहले थी ही नहीं और इस एकतामें दूसरी छोटी-छोटी सब जातियोंकी जैसे यहूदियों, ईसाइयों, पारसियों आदिकी एकता आ जाती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि हमारी मित्रता दूसरी जातियोंसे नहीं रहेगी और केवल हिन्दू-मुसलमान ही परस्पर मित्र रहेंगे। कांग्रेसमें इतने दिनोंसे पारसियोंका बोलबाला है और वे उसमें बहुतसे प्रमुख पदोंपर आसीन रहे हैं। कांग्रेस सभीके हितोंकी बराबर देखभाल करती है और मैं नहीं समझता कि भविष्यमें पारसी हिन्दू और मुसलमान दोनों बड़ी जातियोंके बीचमें पड़कर पिस जायेंगे। यदि पारसी लोग यह समझते हों कि असहयोग आन्दोलनमें भाग लेनेसे उनको लाभ न होगा तो वे उससे अलग रह सकते हैं; यह उनकी मर्जीकी बात है। मेरा कहना तो यही है कि वे आन्दोलनमें केवल तभी भाग लें जब वे इस परिणामपर पहुँचें कि उससे उनका हित ही सधेगा; अन्यथा वे इसमें भाग न लें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-६-१९२१

११२. पत्र : सी० विजयराघवाचार्यको[1]

[१८ जून, १९२१ को या उसके पश्चात्]

प्रिय श्री आचार्य

आपका तार[2] मिला। कमेटीने पंजाब कांग्रेसको लिख दिया है कि जबतक अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी इस मामलेमें फैसला नहीं दे देती तबतक वे आदेशोंका पालन करते रहें। अ० भा० कां० कमेटीकी बैठक २२ जुलाईको सवेरे लखनऊमें होगी।

१ व २. (१८५२-१९४३); तमिलनाडके कांग्रेसी नेता। सन् १९२० की नागपुर कांग्रेसके अध्यक्ष। विजयराघवाचार्यने १८ जूनको कोडाइकनालसे यह तार भेजा था: "आशा है कार्य-समिति प्रस्तुत तीव्र संकटके सम्बन्धमें पंजाबको अपना सुविचारित निर्देश भेज रही है। मालवीयजी चाहते हैं वाइसरायके सम्मुख तत्काल ही व्यवहार्य योजना रखी जाये।"

योजना बनानेके प्रश्नपर उसी बैठकमे विचार किया जा सकता है। मेरी रायमे अभी उसके लिए उपयुक्त समय नही आया है।

आपका विश्वस्त,

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ७५४८) की फोटो-नकलसे।

११३. भाषण: बम्बईमें स्वराज्यपर[1]

१९ जून, १९२१

श्री गांधीने कहा कि घंटे-भरसे अधिक हो गया आप लोग मंडपमें बैठे हुए है। इस पंडालको तैयार करनेमें स्थानीय गरीब-अमीर सभीने योग दिया है; इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। निश्चय ही इस तरह मिलकर काम करनेमें मुझे स्वराज्यकी पक्की बुनियाद दिखाई देती है। मेरे स्वागतमें आपने जो-कुछ किया है उस सबके लिए भी मैं आपका आभारी हूँ। मुझे यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई है कि कोषके लिए चन्दा करनेमें सभी वर्गों और जातियोंने — हिन्दुओं, मुसलमानों और पारसियोंने — हिस्सा लिया है। यही स्वराज्यकी कुंजी है। मैं अपने भाइयों और बहनोंसे अपील करता हूँ कि कोषके लिए आप लोग और भी जो-कुछ देना चाहें, मुझे दें। भारत एक धर्मराज्य और नीतिराज्यकी स्थापनाके लिए प्रयत्नशील है। भारतके लोगोंने ईमानदारीसे सही रास्तेपर चलनेका संकल्प कर लिया है। मुझे बहुत खेद है कि मैं सभामें बहुत देरसे आया। मेरी मोटर रास्तेमें बिगड़ गई थी; इसके अतिरिक्त मुझे मांडवी वार्डकी ओरके श्री वेलजी लखमसी नापूसे ६०,००० रुपये भी लेने थे। आशा है कि विले पार्लेके निवासी भी तिलक कोषके लिए इतनी ही रकम देंगे।

इसके बाद गांधीजीने पारसियोंकी सभाका जिक्र करते हुए वहाँ पूछे गये प्रश्नोंका उल्लेख करते हुए कहा कि मैं यहाँ कई मुद्दोंको अधिक विस्तारसे समझाऊँगा। मुझे बताया गया है कि २३ करोड़ हिन्दुओं और सात करोड़ मुसलमानोंमें एकता है; किन्तु उनके बीच रहनेवाले ८०,००० पारसियोंकी हालत खराब रहेगी। जो जातियाँ बहुसंख्यक हैं उनका कर्त्तव्य है कि अल्पसंख्यकोंके हितोंकी रक्षा करें, और उनका संरक्षण करे। स्वराज्यका पहला सिद्धान्त यही है। इसे आपको ध्यानमें रखना है। बहुसंख्यक लोगोंको अल्पसंख्यकोंके हितोंकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। एक वोहरा सज्जनने मुझे लिखा है कि मैं केवल मेमन लोगोंका नाम ले रहा हूँ, वोहरोंका नहीं। उन्होंने मुझसे पूछा है कि क्या मैं बोहरा लोगोंपर सन्देह करता हूँ। इसके बारेमें मैं इतना ही कहूँगा कि मेरा यह मतलब हरगिज न था। मैंने मेमन शब्दका प्रयोग समस्त मुस्लिम समाजके लिए किया था न कि किसी वर्ग विशेषके लिए। मैं इसी

[1] उत्तरी बम्बईके एक उपनगर विले पार्लेमें, जहाँ गांधीजीको तिलक स्वराज्य-कोषके लिए एक थैली भेंट की गई थी।

सिलसिलेमें आप लोगोंसे कहना चाहता हूँ कि एक बोहरा सज्जन मुझे अपने घर ले गये थे और वहाँ उन्होंने मुझे कोषके लिए १,००० रुपये दिये। जो भी हो मैं एक-दूसरेके प्रति इस प्रकारके अविश्वास और शंकाओंको नापसन्द करता हूँ। जबतक अपने साथ रहनेवाले समाजोंके प्रति आप इस तरहकी भावना बनाये रखेंगे, आप स्वराज्य नहीं पा सकते।

कलकी सभामें मुझसे पूछा गया था कि क्या हमें मिलका बना कपड़ा नहीं पहनना चाहिए। इस प्रश्नका उत्तर मैंने यही दिया था कि मिलका बना कपड़ा मुख्यतः गरीब लोगोंके लिए है; अमीर और खुशहाल लोगोंको तो खद्दर ही पहनना चाहिए। यदि आप यह नहीं कर सकते तो आपको स्वराज्य मिलना सम्भव नहीं है। एक दूसरे पारसी सज्जनने मुझसे पूछा है कि यदि जापान और अन्य राष्ट्रोंने हमारे देशपर आक्रमण किया तो आप क्या करेंगे। मैंने जवाब दिया, चूँकि मनुष्य स्वार्थी जीव है इसलिए यदि जापानियोंने देखा कि वे अपना माल भारतीयोंमें नहीं खपा सकते हैं और भारतीय उन चीजोंको कदापि इस्तेमाल नहीं करेंगे तो भारत उनके लिए किसी कामका नहीं होगा। यदि भारतीय विदेशोंमें बनी चीजोंका प्रयोग करनेके प्रति उदासीन रहें तो जापानियोंके लिए भारत किस कामका?

इसके बाद उन्होंने मौलाना अबुल कलाम आजादका परिचय कराते हुए कहा कि ये मुसलमानोंमें एक महान् व्यक्ति हैं। मुसलमानोंपर उनका बहुत असर है। ये सज्जन दोनों जातियोंका बहुत ज्यादा हित-साधन कर सकते हैं और मैं आशा करता हूँ कि चन्दा जमा हो चुकनेके बाद आप इनके विचार ध्यानसे सुनेंगे।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-६-१९२१

११४. तार : जितेन्द्रलाल बनर्जीको[1]

[१९ जून, १९२१ को या उसके पश्चात्]

बेजवाडाका कार्यक्रम पूरा करनेमे व्यस्त। इतनी दूरसे राय देना असम्भव। पत्र लिख रहा हूँ।[2]

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५४७) की फोटो-नकलसे।

१. कलकत्ताके एक कांग्रेसी जितेन्द्रलाल बनर्जीके १९ जूनके तारके जवाबमें यह तार भेजा गया था। तार इस प्रकार था: "बंगालकी परिस्थितिमें आपकी मौजूदगी और रायकी तत्काल जरूरत है। श्री दास हड़तालोंको और अधिक समयतक बढ़ाकर जारी रखना चाहते हैं, परन्तु मेरी और यहाँके कई एक सच्चे असहयोगियोंकी दृढ़ धारणा है कि हड़तालें करना असहयोगके सिद्धान्तसे हटना है और वे बेजवाड़ाके कार्यक्रमकी सफलतामें बाधा डाल रही हैं। यदि आ सकना असम्भव है तो परिस्थितिपर पूरी तरहसे विचार करके तारसे राय दीजिए।"

२. गांधीजीका पत्र उपलब्ध नहीं है।

११५. समाचारपत्र-प्रतिनिधिके प्रश्नका उत्तर

एक समाचार प्रतिनिधि द्वारा यह प्रश्न किये जानेपर कि क्या आप मिलीटरी रिक्वायरमेंट कमेटीके सामने, जिसके लिए आपको आमन्त्रित किया गया है, एक गवाहके रूपमें उपस्थित होंगे। श्री गांधीने जवाब दिया कि मैंने समितिको उसके सामने उपस्थित होनेके सम्बन्धमें अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए पहले ही पत्र लिख दिया है क्योंकि एक असहयोगी होनेके नाते मैं समितिकी कार्रवाइयोंमें भाग नहीं ले सकता।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २०–६–१९२१

११६. पत्र : कुँवरजी आनन्दजीको

बम्बई

२१ जून, १९२१

भाईश्री ५ कुँवरजी आनन्दजी,

तिलक स्वराज्य-कोषके लिए भावनगरने अभीतक कुछ नही किया है अर्थात् आपने अभीतक कुछ नही किया है। आपकी सुस्तीपर मुझे दु ख होता है। आप सब-कुछ जानते है, आपके पास धन है। यह कार्य कैसा है, उसमें देशकी उन्नति किस प्रकार निहित है, यह सब आपको मालूम है, फिर भी इसमे आप पूरा-पूरा धन नही देते। मै तो आपकी बुद्धि, आपका हृदय, आपका समय और आपका पैसा, यह सब चाहता हूँ। ऐसा समय फिर आनेवाला नही है। मेरी आकाक्षा है कि आप हमारी मदद करे।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

११७. पत्र : मंगलदास पारेखको

बम्बई
२१ जून, १९२१

सुज्ञ भाईश्री,[1]

भाई वल्लभभाई लिखते हैं कि मिलोसे जो चन्दा मिलनेवाला था वह अभीतक नही मिला है। देशका कारोबार इस तरह कैसे चल सकता है? यदि यह आन्दोलन अच्छा है तो उसका पोषण किया जाना चाहिए और यदि वह बुरा है तो फिर उसे नष्ट कर दिया जाना चाहिए। लेकिन आपके काम तो ऐसे ही चलते हैं। मिल-मालिकोको क्या गुजरातकी लाज भी प्यारी नही है? गुजरातके हिस्सेका थोडा-सा चन्दा भी क्या वे आसानीसे पूरा नही कर सकते? मुझे उम्मीद है कि अब आप ढिलाई नही बरतेंगे। मैं आपसे यही माँगता हूँ कि आप क्या देंगे, सो साफ बता दे। आप एक साथ ही सारी रकम न दे तो कोई हर्ज नही लेकिन पूरी रकम मिलोके खातेमे जमा हो जानी चाहिए। और वह भी इस तरहसे कि उसका व्याज भी प्रान्तीय समितिको मिले। जब जरूरत पड़े तब हुडी लिखकर देनेकी अनुमति भी मिलनी चाहिए। मैं कमसे-कम पाँच लाखकी आशा अवश्य करता हूँ। हर जगह मुझसे पूछा जाता है कि मिले क्या कर रही है, वे मिले जिन्होने इस आन्दोलनसे इतना कमाया है।

मोहनदास गांधीका जय श्रीकृष्ण

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

११८. टिप्पणियाँ

तोला-भर काम

अली बन्धुओकी क्षमा-याचनाके बारेमे 'सर्वेन्ट ऑफ इडिया' की टिप्पणियोने मेरे सामने इस कथनकी सत्यता बहुत ही स्पष्ट रूपसे सिद्ध कर दी है कि तोला-भर कामका मन-भर भाषणोसे कही ज्यादा महत्त्व है। इस बातकी तो मैं कल्पना ही नही कर सकता कि 'सर्वेन्ट ऑफ इडिया' जान-बूझकर इस क्षमा-याचनाका गलत अर्थ पेश करेगा अथवा उसे स्वय ठीक ढगसे नही समझ पायेगा। फिर भी इसके बारेमे उसने

१. अहमदाबादके उद्योगपति; जिन्होंने अहमदाबादमें आश्रमकी स्थापनाके समय गाधीजीको आर्थिक सहायता की थी।

तीन पैरे लिख मारे हैं और उससे जाहिर होता है कि उसने इसे बिलकुल उलटा समझा है। मैंने तो उसे असहयोगका अमलमें क्या स्वरूप होता है इसका पदार्थ पाठ माना था और आज भी, जब उसे लेकर इतना विवाद खड़ा हो गया है, मेरा यही खयाल बना हुआ है। यह कदम एक ध्रुवतारा है जो असहयोगकी राहसे भटकनेवाले लोगोंको हमेशा रास्ता दिखाता रहेगा। विरोधियोंकी उपस्थितिमें और इस बातका खतरा उठाकर भी कि उनके आचरणको कमजोरीका लक्षण समझा जा सकता है, असहयोगियोंको निरन्तर अपनी शुद्धि करते चलना है। अपनेको सुधारनेकी प्रक्रियामें उनको इस बातका खयाल नहीं करना चाहिए कि उसकी उनको क्या कीमत चुकानी पड़ती है। सत्यके लिए सत्यके पालनका यही अर्थ होता है। तात्कालिक परिणाम चाहे कितना ही अन्धकारमय क्यों न दिखाई दे, सत्यकी खोजमें लगे हुए व्यक्तिको दृढ़ताके साथ वही करते रहना चाहिए जिसे वह सत्य समझता हो। मुहम्मद साहबने यदि सत्यको ही अपना एकमात्र और परम कवच न माना होता तो कई बार उनके कदम भी डगमगा गये होते। यदि यह बात मान ली जाये कि अली बन्धुओंको यह परामर्श मैंने अपने आत्मबलके कारण दिया था और उन्होंने अपने आत्मबलके कारण उसको समझकर स्वीकार कर लिया तो यह स्पष्ट हो जायेगा, जैसे मेरे सामने बिलकुल स्पष्ट है, कि इस सफाईने इस्लाम और देशका बड़ा कल्याण किया है। इसलिए यदि 'यंग इंडिया'का पिछला अंक[1] भी सब शंकाओंका समाधान न कर पाया हो तो फिर यह काम समयपर ही छोड़ देना पड़ेगा।

अभिव्यक्तिकी असमर्थता

नरम दलवालोंके नाम मेरे पत्रके[2] बारेमें भी कुछ इसी प्रकारकी गलतफहमी, भले ही वह इतना महत्त्व नहीं रखती, उठ खड़ी हुई है; मैं अपने विचारोंको अकसर ठीक-ठीक अभिव्यक्त करनेमें चूक जाता हूँ, इसकी मुझे ग्लानि है। ऐसी कोई बात नहीं है कि मैं जो-कुछ लिखता हूँ, सोच-समझकर और अपने तईं ठीकसे नहीं लिखता। मैं पूरी कोशिश करता हूँ कि बिलकुल सही और साफ ढंगसे लिखूँ। इसके बावजूद 'सर्वेन्ट ऑफ इंडिया' के 'एक समालोचक' के मनमें मेरे लिखनेसे यह धारणा बन गई है कि मैं धरना देनेमें नरम दलवालोंसे यह आशा करता हूँ कि वे असहयोग आन्दोलनकारियोंका साथ देंगे। मेरे मनमें ऐसी कोई बात नहीं है। यह हो सकता है कि सहयोग करनेवाले लोगोंको धरना देनेका तरीका भोंडा और बहुत नाकाफी लगे और इसलिए वह उन्हें पसन्द न आये। लेकिन मेरा खयाल है कि वे अपने ढंगसे नशाबन्दीके काममें सहायता अवश्य पहुँचायेंगे, अर्थात् शराबकी दुकानोंको फौरन खत्म करा देंगे। देशके प्रति कमसे-कम इतना कर्त्तव्य तो उनका है ही। धरना देनेके आन्दोलनकी सरगर्मी दिन-दिन जैसे-जैसे बढ़ती जा रही है वैसे-वैसे धरना देनेवालोंपर शराबकी दुकानोंके मालिकों और उनके ग्राहकोंकी मेहरबानी भी बढ़ती जा रही है। मेरा खयाल है कि अहमदाबादमें

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १५-६-१९२१।
२. देखिए "पत्र: नरमदलीय भाइयोंको", ८-६-१९२१।

दो धरना देनेवालो पर गुण्डोने हमला किया और उनके सिर फोड़ दिये। ये दोनो वीर अपने सिरोपर पट्टियाँ बाँधे रोज अपने मोर्चेपर डटे रहते है। बम्बईमे एक भीडके सामने एक स्वयसेवकके गालपर चाँटा मारा गया लेकिन वह मजबूतीसे अपनी जगह डटा रहा और उसने बदला लेनेकी कोशिश नही की। शराब वगैरा बेचने-वालोको जैसे-जैसे धरनोके असरका अहसास होता जायेगा वैसे-वैसे ऐसी घटनाएँ बढती जायेगी। इस सुधार-कार्यको बन्द कर देना सम्भव नही है, भले ही अपना कर्त्तव्य पूरा करनेमे धरना देनेवालोको अपनी जान ही क्यो न गँवानी पड़े। जबतक धरना देनेका काम करनेके लिए पर्याप्त स्त्री-पुरुष मिलते रहेंगे, और जबतक वे बदला लेनेकी कोशिश किये बिना अपनी जानपर खेलनेको राजी होगे तबतक यह काम चलता रहेगा। इसी खतरेकी आशकासे मैने नरम दलवाले लोगोसे देश-प्रेमके नामपर, एक ही बारमे शराबकी दुकाने समाप्त करानेकी अपील की थी ताकि युवक और युवतियोंके चोट खाने या जानसे हाथ धोनेकी नौबत न आये। इसलिए पत्र द्वारा अपनी बात ठीक ढगसे स्पष्ट न कर सकनेका मुझे बडा दुःख है। मै जानता हूँ कि भविष्यमे किसी-न-किसी दिन नशाबन्दी होकर रहेगी। लेकिन जिसका घर जल रहा हो उसे यह जानकर क्या राहत मिल सकती है कि आग बुझानेके यन्त्र बनाये जा रहे है।

ब्रिटिश सरकार बनाम अन्य सरकारे

'टाइम्स ऑफ इडिया' मे किसी 'प्रेक्षक' ने इस आन्दोलनके बारेमे मुझसे कुछ प्रश्न पूछे है। मुझे खेद है कि मै इससे पहले उत्तर नही दे सका। एक मित्र यदि इनकी कतरन मुझे न भेजते तो शायद वे मेरी नजरसे गुजरते ही नही। 'प्रेक्षक' ने पूछा है कि 'क्या ब्रिटिश शासन मुगल और मराठा शासनसे बेहतर नही है।' मुझे यह कहनेकी जुर्रत करनी ही पडेगी कि मुगल और मराठा शासन ब्रिटिश शासनसे बेहतर थे, क्योकि उस समय साराका-सारा राष्ट्र उतना निर्बल अथवा दीन-हीन नही था जितना आज है। मुगल अथवा मराठा साम्राज्यमे हम परिया[1] नही थे, बहिष्कृत नही थे। ब्रिटिश साम्राज्यमे हम परिया है, बहिष्कृत है।

पारसी क्या करें

'प्रेक्षक' आगे पूछता है :

> कि क्या पारसियोसे इस बातकी आशा की जाती है कि वे उस सूरतमें भी अपने बच्चोंको सरकारी अथवा सहायता प्राप्त शालाओसे निकाल आनेको कहे जब कि पारसियोंकी विशिष्ट आवश्यकताओको ध्यानमें रखकर राष्ट्रीय शालाओंकी कोई व्यवस्था नहीं है। क्या पारसी वकीलोंको अदालतोंका बहिष्कार करके अपने परिवारोंको भूखों मरने देना चाहिए? क्या पारसियोंको अपने अच्छी कमाईवाले धंधोंको छोड़कर सूत कातने और सिर्फ तीन आने रोज कमानेमें ही लग जाना चाहिए? प्रतिदिन तीन आने कमाकर तो वे कोरे सोडा वाटरकी एक बोतल

१. दक्षिण भारतकी एक दलित जाति।

भी नहीं पी सकते, व्हिस्की और सोडा मिलाकर पीनेकी बात तो दूर रही। और क्या पारसियोको अपनी मौजूदा पोशाक, जो एशियाई ढंगके बनिस्बत यूरोपीय ढंगकी अधिक है, छोड़कर अपने पूर्वजोंकी पोशाक, अर्थात् ऐसे पाजामे पहनने चाहिए जिनके पायँचोंका घेर इतना होता है कि एक-एकमें दर्जन-भर मुर्गीके बच्चे समा जायें? इस तरह जमानेको ढकेलकर बिल्कुल पीछे ले जाना क्या सम्भव है? क्या श्री गांधी इन सवालोंका ऐसे जवाब देनेकी कृपा करेंगे जो लोगोंको सही लगें?

शिक्षाके मामलेमे पारसी सबसे आगे रहे है। उन्हे मौजूदा स्कूलोसे अपने एक भी बच्चेको निकालनेकी जरूरत नही है। जरूरत सिर्फ इस बातकी है कि वे डिग्रियोके व्यामोहसे अपने-आपको मुक्त करे, वे चाहे तो अपने सभी स्कूलोका सम्बन्ध आज ही सरकारसे तोड़ सकते है। उनके पास इतना पैसा है कि वे अपनी विशेष शिक्षाका व्यय स्वय ही वहन कर सकते है। और अगर पारसी वकील वकालत छोड़ दे और राष्ट्रकी सेवा करनेमे हाथ न बँटाना चाहे तो मै जानता हूँ कि उनमे इतनी सूझ-बूझ है कि वे व्यापार-व्यवसायमे आसानीसे लग सकते है, जो कि उनके हाथकी बात है। सुयोग्य पारसी वकीलोके त्यागसे स्वय पारसियोका भी कल्याण होगा और राष्ट्रका भी। ऐसी आशा तो किसीसे नही की जाती, और खासकर पारसीसे तो कदापि नही, कि वह अपना अच्छी खासी कमाईका ऐसा धन्धा भी छोड़ दे जो किसी भी तरह सरकारकी प्रतिष्ठा कायम रखनेमे सहायक नही है और बदलेमे कताईका काम शुरू करे। लेकिन जिस किसी पारसी स्त्री या पुरुषके पास अवकाश है, उसे राष्ट्रके कल्याणके लिए उस अवकाशका उपयोग कताईके काममे करना चाहिए। इस तरह पारसियोको अपने सोडेसे वचित रहनेकी बात ही नही उठती। लेकिन जो शराब वगैरह पीते है, वे अगर पूरी तरह उसका त्याग कर दे तो इससे उनकी भी भलाई होगी और राष्ट्रकी भी। पारसियोको अपनी मौजूदा पोशाके भी नही छोड़नी है। सिर्फ इतना ही ध्यान रखना है कि वे पोशाके हाथ-कते सूतसे हाथ-बुने कपडेकी बनी हो। लेकिन अगर वे अपने पूर्वजोकी सादगीको फिरसे अपना ले तो उससे उनका कुछ नुकसान नही होगा। पुरानी पारसी पोशाक ऐसी थी जो भारतीय जलवायुको दृष्टिमे रखकर बनाई गई थी। यूरोपीय पोशाक भद्दी और भारतीय आबोहवाकी दृष्टिसे नितान्त अनुपयुक्त है। अग्रेज भारतमे भी अपनी अलग-थलग बने रहनेकी प्रवृत्ति और कल्पना-शक्तिके अभावके कारण वही पोशाक अपनाये हुए है — यद्यपि वे स्वीकार करते है कि भारतीय जलवायुकी दृष्टिसे यह जरा भी आरामदेह नही है। मै तो कहूँगा कि बिना सोचे-समझे नकल करना प्रगतिकी निशानी नही है। और न पुरानी आदतोको फिरसे अपनानेका मतलब हर बार "जमानेको ढकेलकर पीछे ले जाना" ही होता है। अगर जल्दबाजीमे या भूलसे कोई गलत कदम उठा लिया गया हो तो उसे वापस ले लेना निश्चय ही प्रगतिकी निशानी है। और लोगोका खयाल है कि पिछले सौ बरसोमे हमने बहुतसे गलत कदम उठाये है। इसलिए आगे बढ़नेसे पहले सही रास्तेपर आनेके लिए हमे कई कदम पीछे हटना पड़ेगा। हम रास्ता भूल गये है, और मै 'प्रेक्षक' तथा

अन्य सभी पारसी भाइयोंसे निवेदन करता हूँ कि उन्होंने जहाँसे गलत रास्ता पकड़ा था वहाँ जल्दीसे-जल्दी वापस लौट जायें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२–६–१९२१

११९. जुएका अभिशाप

सम्पादक
'यंग इंडिया'

महोदय,

यह बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि 'यंग इंडिया' और इसके सम्पादक महोदयने जुएकी बुराइयोंका सवाल उठाया है। लेकिन मुझे लगता है कि यों कभी-कभी 'यंग इंडिया' में इक्के-दुक्के लेख लिख देनेसे पश्चिमसे आई इस बुराईका जड़-मूलसे नाश नहीं किया जा सकता। यह तो अब निठल्ले बैठे रहनेवाले धनी लोगोंसे बढ़ते-बढ़ते व्यापारी-वर्ग, मध्यम-वर्ग, कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरों और स्कूलोंके छात्रों तकमें फैल गई है। हर सप्ताह नियमित रूपसे घुड़दौड़ोंमें जाकर बाजी लगानेवाले हजारों-हजार लोगोंके अलावा, हजारोंकी तादादमें ऐसे लोग भी हैं जो बीच शहरमें खुलेआम सट्टेकी दुकानोंमें सट्टेबाजीके रूपमें जुआ खेलते हैं। सरकारने इन दुकानोंको बन्द करानेके सवालपर विचार करनेके लिए एक समिति नियुक्त की है, और अगले सत्रमें वह इस सम्बन्धमें कोई कानून भी पास करेगी। लेकिन यह पर्याप्त नहीं है। इस बुराईके विरुद्ध जनमत तैयार करना चाहिए और निश्चित रूपसे यह सिद्ध कर देना चाहिए कि घुड़दौड़ोंमें दाँव लगाना और सट्टा खेलना भी शराबखोरी और वेश्यागमन-जैसा ही बुरा काम है। इसके लिए एक प्रबल आन्दोलनकी जरूरत है, और मुझे आशा है कि 'यंग इंडिया' के पाठक इसमें साथ देंगे।

बम्बई
२६–५–१९२१

आपका,
सत्य

जैसा कि मै कह चुका हूँ, दुर्भाग्यवश घुड़दौड़ और घुडदौडोके सिलसिलेमे जुआ खेलना फैशनकी चीजे हो गई हैं। ये चीजे लोगोमे लज्जाकी वह भावना नही जगाती जो शराबखोरी जगाती है। इसलिए शराबखोरीकी तुलनामे घुडदौडकी कुटेवसे निवटना ज्यादा मुश्किल है। 'सत्य' महोदयको घुडदौडकी बुराइयोका खास ज्ञान है। मै तो

उनसे कहूँगा कि खुले तौरपर आगे आयें और समाजकी नैतिकताकी जड़ोंको खोखली बनाती जा रही इस बुराईको दूर करनेका काम हाथमें लें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-६-१९२१

१२०. तिलक स्मारक-कोष

किसी व्यक्तिकी स्मृतिका सच्चा आदर इसीमें है कि उसके जीवनके उद्देश्यको पूरा किया जाये। जिन्हें लोकमान्य कहनेमें भारतको पहले भी बड़ी खुशी होती थी और अब भी बड़ा हर्ष होता है, उन बाल गंगाधर तिलककी स्मृतिका सच्चा आदर इसीमें होगा कि स्वराज्यकी स्थापना करके उनकी स्मृतिको अमर बना दिया जाये। यदि हम उनकी पहली पुण्य-तिथिपर ही स्वराज्यकी स्थापना कर सकें तो कितना अच्छा, कितना महान् कार्य होगा? और अभी हमारे पास जो चालीस दिन बाकी हैं, उनमें यह काम कर दिखाना असम्भव भी नहीं है। लेकिन मेरा आशावादी स्वभाव भी अगले अगस्तकी पहली तारीखतक स्वराज्यकी स्थापनाकी कल्पना नहीं कर सकता। हाँ, कठोर परिश्रम करके आगामी अक्तूबरकी पहली तारीखतक स्वराज्यकी स्थापना निश्चय ही सम्भव है। लेकिन अगर आगामी ३१ दिसम्बर या उसके पहले स्वराज्य स्थापित न हुआ तो कांग्रेसकी मौत ही समझिए। और यदि हम एक करोड़ रुपये जमा करनेका बेजवाडाका अपना संकल्प पूरा नहीं कर सके तो यह काम किसी हालतमें पूरा नहीं हो सकता। ये पंक्तियाँ इस महीनेकी २२ तारीखको प्रकाशित होंगी। इसलिए पाठकोंको इस बातपर विचार करना होगा कि आठ दिनमें एक करोड़ रुपये कैसे जमा किये जायें।

आइए, अब देखें कि हम हैं कहाँ। यदि सारा काम बदस्तूर चलता रहा तो यह आसानीसे माना जा सकता है कि उक्त तारीखतक चालीस लाख रुपये बम्बईसे बाहर-बाहर जमा हो चुके होंगे। इसका अर्थ यह हुआ, मैं ब्योरा दूँ, कि कमसे-कम तीन लाख बंगालमें, चार पंजाबमें, तीन सिन्धमें, तीन आन्ध्रमें, तीन मध्य प्रान्तमें, चार बिहारमें और दस गुजरातमें जमा होंगे। ये हुए तीस लाख। बाकीके प्रान्तोंके लिए दस लाखका अनुमान किसी प्रकार भी बहुत ज्यादा नहीं है। तो हम यह मान लें कि बम्बईको छोड़कर अन्य सभी प्रान्त मिलकर चालीस लाख रुपये जमा कर लेंगे।

तब सवाल यह है कि बाकीके साठ लाख रुपये बम्बईसे कैसे जमा किये जायें? ३० जूनसे पहले-पहले यदि हमें एक करोड़ रुपयेकी कुल रकम जमा करनी है तो यह मुख्यतः बम्बई और कलकत्तेके ऐसे धनाढ्य लोगोंसे ही लेनी होगी, जो देनेको तत्पर हों, अर्थात् उनसे जिनकी इस आन्दोलनमें सहानुभूति और उसमें विश्वास हो।

भारतके सारे अमीर लोग यदि यह बात समझ लें कि उनकी हिफाजत मौजूदा शासनसे डरनेमें नहीं वरन् निर्भय होकर आन्दोलनकी मदद करनेमें ही है, तो न

केवल एक करोड रुपये जमा करनेमे कोई परेशानी नही होगी, वरन् एक महीनेके भीतर स्वराज्य लेना भी सुनिश्चित हो जाये। आज यदि वे करोड़ो रुपये कमा रहे है तो अरबो देशसे बाहर भी भेज रहे है, अर्थात् वे अपने गरीब और बहुतसे भूखो मरते देश-भाइयोके मुँहका ग्रास छीनकर खुद करोड़ो रुपये जमा कर रहे है, और अरबो रुपये देशसे बाहर भेजनेमे सहायक सिद्ध हो रहे है। मोटी-मोटी तनख्वाहे पानेवाले उच्चाधिकारियोके भारसे दबा यह शासन इस खयालमे कि और कोई उपाय न रहनेपर, डायरशाही और ओ'डायरशाहीके बलपर भारतको कब्जेमे रखा जा सकता है, सेनापर कमरतोड खर्च किया जा रहा है, और जिस वर्गसे आज इस शासनको सबसे अधिक सहारा मिल रहा है, वह इन्ही धनिकोका वर्ग है।

परन्तु जैसी वस्तुस्थिति हो, हमे उसे उसी रूपमे लेना चाहिए। धनी लोग कलक्टरो और कमिश्नरोको नाखुश करनेसे डरते है। कुछ लोग वास्तवमे असहयोग आन्दोलनकी सफलतासे डरते है। वे समझते है कि यदि यह सफल हो गया तो कमसे-कम कुछ समयके लिए तो अराजकता फैल ही जायेगी और जान-मालकी हानि होगी। हमे उनके हृदयपर विजय पानी है और इसका तरीका यही है कि हम अत्यन्त धैर्यपूर्वक काम करते जाये और इस तरह ऐसा वातावरण तैयार करे कि कोई भी व्यक्ति मन, कर्म या वचन किसी भी प्रकारसे हिंसा न करे।

इस बीच, हमे यह समझ लेना है कि यदि इस कसरको पूरा करना है तो जो थोड़े-से धनी और बहुत-से अच्छे खाते-पीते लोग हमारे साथ है, उन्हे साधारणसे अधिक कुर्बानी करनी पडेगी। बम्बईमे इस दृष्टिसे बडे अच्छे ढगसे काम शुरू हुआ है। वहाँ बड़े ही ईमानदार कार्यकर्त्ता, जो स्वय धन-सम्पन्न है, रात-दिन एक करके बड़ी-बड़ी रकमे जमा कर रहे है। उन्हे बड़े-बडे उतार-चढ़ावोका सामना करना पड़ रहा है। लेकिन वे अदम्य उत्साहसे अपने सीधे रास्तेपर आगे बढते जा रहे है।

हमे किसीके कहे बिना काम न करनेकी आदत छोड़ देनी चाहिए। बम्बईके धनी लोग स्वेच्छासे अपनी सहायता और भेट क्यो नही भेजते? वे इस बातका इन्तजार क्यो करते रहते है कि पहल कोई और करे?

और उनका क्या होगा जो स्वय लाख-लाख अथवा हजार-हजार रुपये नही दे सकते? वे थोडेसे धनवान व्यक्तियोका बोझ कम करनेके लिए काफी-कुछ कर सकते है। उन्हे तो समाजके आह्वानकी राह नही देखनी चाहिए। प्रत्येक समूह, प्रत्येक जाति और प्रत्येक व्यापारिक सगठनको अपने-आप धन जमा करने और जमा हुए धनको प्रान्तीय केन्द्रोको भेजनेका काम शुरू कर देना चाहिए। जिन लोगोमें धन जमा कर सकनेकी कुछ भी योग्यता है, उन्हे बाकीके दिनोमे अन्य कोई काम न करके सारे समयका उपयोग इसी कामके लिए करना चाहिए।

यह बड़े शर्मकी बात है कि सब प्रान्तोसे कुल मिलाकर चालीस लाख रुपयेसे अधिक धन जमा करना सम्भव नही है परन्तु यदि प्रत्येक प्रान्त उस गौरवपूर्ण और सौभाग्यपूर्ण सप्ताहमे ऐसे नि.स्वार्थ-भावसे काम करनेवाले कार्यकर्त्ता तैयार कर सके जो धन जमा करनेमे अपनी पूरी शक्ति लगा दे तो अब भी इस कलकको धो सकनेका समय है।

तमाम धनवान व्यक्ति अभी चन्दा नही दे रहे है और हम जन-साधारणसे चन्दा जमा करनेका काम सगठित करनेमे भी सफल नही हुए हैं, इसका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि कुछ लोगोको अपना सब-कुछ दे देना होगा। मै ऐसे चार गुजरातियोको जानता हूँ, जो स्वय जाने-माने और योग्य कार्यकर्त्ता भी है, जिन्होने अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया है। एकका स्वर्गवास हुआ तो वे अपनी कुल जमा-पूंजी, २५,००० रुपयेसे अधिक, स्वराज्य-कोषके लिए छोड गये। मुझे आशा है कि इन चार दृष्टान्तोका बडी सख्यामे अनुकरण किया जायेगा। स्वतन्त्रताके यज्ञमे आहुति डालनेसे किसीकी कुछ हानि थोडे ही होती है।

हमे यदि इसी वर्षके दौरान स्वराज्य प्राप्त करना है तो इसके लिए कमसे-कम बेजवाडा कार्यक्रमको नियत समयके भीतर अवश्य पूरा कर लेना होगा। एक करोड रुपयोका सग्रह उसकी पूर्तिका सबसे प्रत्यक्ष प्रमाण होगा।

सदस्यता और चरखेका महत्त्व भी कम नही। मेरा यह सुझाव है कि केवल काग्रेसकी नीति और सिद्धान्तोकी व्याख्या करनेके लिए इक्कीस सालसे अधिक उम्रके हर स्त्री-पुरुषको किसी एक मूल काग्रेस कमेटीका सदस्य बननेकी बात कहनेके लिए रविवार, २६ तारीखको और ३० जूनको यथासम्भव प्रत्येक गाँव अथवा केन्द्रमें सभाएँ की जाये। इन सभाओमे सदस्य बनाने और सदस्यताका शुल्क जमा करनेके अलावा और कोई काम न किया जाये। इन दिनो ऐसे सभी स्थानोपर फार्म भी जमा कराये जा सकते है जहाँ जिम्मेदार लोग सदस्य बनानेके लिए प्रचार-कार्य प्रारम्भ करनेके लिए तैयार हो।

चरखोकी कोई गिनती तो हमारे पास नही है, लेकिन मुझे जो विवरण मिले है, उनसे प्रकट होता है कि शायद जनसाधारणके बीच चरखेका इतना अधिक प्रचलन हो गया है कि भारत-भरमें बीस लाख चरखोपर, येन-केन ही सही, कताईका काम चल रहा है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२–६–१९२१

१२१. युद्धोन्मुख डा० पॉलेन

डा० जॉन पॉलेनकी खुली चिट्ठी मुझे मिल गई है। यहाँ मै उसे इसलिए नही दे रहा हूँ कि वह समाचारपत्रोमे प्रकाशित हो चुकी है। चिट्ठी हर तरहसे डा० पॉलेनके अनुरूप है। उन्होने असहयोग आन्दोलनका अध्ययन करने, उसे समझनेकी थोडी भी तकलीफ गवारा नही की। लेकिन असहयोगके बारेमें कुछ न जानते हुए भी उसे खरी-खोटी सुनानेमे उन्होने कोई हिचक महसूस नही की। उनका आग्रह है कि मै अपने खुदके अनुभवको एक तरफ रखकर उनके ही शब्दोको ठीक मान लूं। यह अफसोसकी बात है कि डा० पॉलेनकी चिट्ठीमे भी हमे आम अग्रेजो-जैसा ही रुख दिखाई पडता है, अर्थात् वे प्रश्नके दूसरे पहलूको जानने-समझनेकी तकलीफ नही

उठाते और सर्वविज्ञताका अहकार रखते है और फलस्वरूप अपने मतके बारेमे आश्वस्त बने रहते है। इस तरहके लोगोपर केवल दो ही बाते असर पैदा कर सकती है — हिंसा या असहयोग। यदि हत्या हो जाती है तो वे परेशान होकर दौड़धूप करने लगेगे; और यदि आप बोल-चाल बन्द कर दे तो वे पूछने लगेगे कि बात क्या है। हत्यासे उत्पन्न मानसिक आघात आदमीको सक्रिय तो बना सकता हे, पर उससे उसका विवेक तो शायद ही कभी जागता हो। उससे कटुता पैदा होती है और आतक-वादी कृत्योकी प्रवृत्ति भी पैदा हो सकती है। इससे कुछ राहत मिली-सी महसूस हो सकती है, लेकिन बहुधा वह राहत मूल विषमता या रोगसे भी अधिक खतरनाक साबित होती है। दूसरी ओर बुराईके साथ कोई भी सरोकार रखने, बातचीतका रिश्ता रखने, उसमे हाथ बँटाने, आत्मपतनमे किसी भी तरहकी कोई सहायता देने और गलत काम करनेवाले के साथ सहयोगसे इनकार किया जाये तो व्यक्तिको आत्मिक बल मिलता है, गलत काम करनेवाले का विवेक जागता है और वह उसके मनको शुद्ध बनाता है। हिन्दुस्तानने यही मार्ग अपनाया है और यह सदैव अन्य सभी मार्गोसे बढकर होगा। डा० पॉलेनमे दिमागी काहिली इतनी है कि वे इतना समझनेकी भी कोशिश नही करते कि असहयोग तो हिंसाके खिलाफ सबसे बडी गारंटी है, इसलिए हिंसाको असम्भव बनाना उसमे अनिवार्यत शामिल है। वह हिंसाको जड़-मूलसे उखाडनेका प्रयास है। असहयोगने कमसे-कम इतना तो किया ही है कि हिंसाकी सम्भावनाको कुछ समयके लिये टाल दिया है, और अगर लम्बे अर्सेतक इसपर अमल करे तो उससे जनतामे एक ऐसी शक्ति पैदा हो जायेगी कि उनको हिंसा बिलकुल ही बेमतलब, गैर-जरूरी लगने लगेगी। असहयोग एक ऐसी चिकित्सा-पद्धति है जो रक्तके विकारको दूर करके शरीरको चगा करती है। वह बिना ऑपरेशनकी चिकित्सा है।

डा० पॉलेनको इतना तो मालूम होना ही चाहिए था कि मै ब्रिटिश मालके बहिष्कारका आज भी उतना ही विरोधी हूँ जितना कि पहले कभी था। मै जो आज कह रहा हूँ वही सदासे कहता आया हूँ कि सर्वदा विदेशी वस्त्रोका पूरा-पूरा बहिष्कार किया जाना चाहिए और उन सब वस्तुओका भी बहिष्कार होना चाहिए जिनको हिन्दुस्तानमे अच्छी तरहसे तैयार किया जा सकता है। मैंने जिस स्वदेशी-की कल्पना की है, उसमे किसीको दण्ड देने या किसीसे बदला लेनेके भावकी कोई गुजाइश नही। उसका मतलब है अपनी मदद आप करना, अपना काम खुद करना और इस नैसर्गिक नियमको स्वीकार करना कि मानवताकी सर्वोत्तम सेवा अपने बिलकुल निकटके मानव-समाजकी सहायता करना ही है। हिन्दुस्तान यदि अपने पैरोपर खड़ा हो जायेगा तो वह सारे संसारके लिए सहायक सिद्ध होगा, और यदि वह असहाय बना रहेगा, मैनचेस्टर और जापानके वस्त्रोपर निर्भर रहेगा, तो वह अपने लिए और मैनचेस्टर तथा जापानके लिए भी हानिकारक सिद्ध होगा।

डा० पॉलेनने तारीखें भी गलत-सलत लिखी है। मैने वाइसरायको असहयोग आन्दोलनके काफी पहले लिखा था,[1] जब कि उनका कहना है कि मैंने उसके बाद

१. देखिए खण्ड १४, पृष्ठ ३५७-६०।

लिखा था। तब मुझे ब्रिटिश सरकारपर भरोसा था। मैंने ब्रिटिश शासनकी निन्दा करना वाइसरायके नाम अपनी खुली चिट्ठीके दो वर्ष बाद शुरू किया था।

मैं डा० पॉलेनको इतना और बता देना चाहता हूँ कि आज मैं उसी ब्रिटिश शासन-पद्धतिका सबसे कट्टर शत्रु हूँ जिसे मैं कभी अज्ञानवश अपना मित्र समझता था। पर ब्रिटिश शासन-पद्धतिका सबसे कट्टर शत्रु होते हुए भी, मैं अपने-आपको ब्रिटिश जनताका मित्र मानता हूँ। मेरा धर्म कहता है कि न मित्र रखो, न शत्रु। मैं इसीलिए डा० पॉलेनको आश्वस्त करता हूँ कि ब्रिटिश जनताके प्रति मेरा भाव सदा वही रहेगा जो भाइयोका भाइयोके प्रति होता है और मैं उनके प्रति उसी भावनासे प्रेरित होकर कार्य कर रहा हूँ जिस भावनासे अपने सगे भाइयोके लिए सक्रिय होता हूँ।

मैंने शासन-व्यवस्थाके लिए जिन विशेषणोका प्रयोग किया है, जिनका प्रयोग करना मैंने अपना कर्त्तव्य माना है, मुझे उनपर दृढ़ रहना चाहिए, और मेरा कर्त्तव्य है कि मैं बुरी चीजको बुरी कहते हुए भी, बुराई करनेवालो के प्रति जनताके घटिया आवेगोको भड़कनेसे रोकूँ, अर्थात् उनको प्रतिहिंसक बननेसे रोकूँ। किसी भी रोगको इस डरसे छिपाना या अनदेखा करना तो ठीक नही होगा कि मरीज उसकी जानकारी पाकर पीड़ा और दुश्चिन्ताओसे पागल हो जायेगा। रोगके बारेमे उसे आगाह तो कर ही देना चाहिए और साथ ही उसका कोई माकूल इलाज भी तजवीज करना चाहिए।

डा० पॉलेनके पत्रमे इस अज्ञानभरी प्रस्तावनाके बाद फिर उन सभी स्थापनाओका खण्डन किया गया है जिनमे मैं और मेरे देशवासी विश्वास करते है। पर उन्होने अपने खण्डन-मण्डनके पक्षमे कोई प्रमाण नही जुटाया है। हमारी ये स्थापनाएँ है .

(१) हिन्दुस्तानका प्रशासन ससार-भरमे सबसे अधिक खर्चीला है।

(२) हिन्दुस्तान आज जितना गरीब है उतना पहले कभी नही रहा।

(३) शराबखोरीका जितना जोर आज है उतना पहले कभी नही रहा (यह तो कोई कहता ही नही कि अग्रेजोके आनेसे पहले हमारे यहाँ शराबखोरी बिलकुल नही थी।)

(४) कोई और उपाय न देखकर हिन्दुस्तानमे अब आतकपूर्ण कार्रवाइयोके बलपर शासन कायम रखा जा रहा है।

डा० पॉलेनने इन सभी जानी-मानी सचाइयोको गलत कहनेके साथ यह आग्रह भी किया है कि यहाँका प्रशासन ससार-भरमे सबसे कम खर्चीला है। वे भूल जाते है कि 'इडियन सिविल सर्विसवालो' को ससार-भरमे सबसे ऊँचा वेतन मिलता है और सरकारको जितना राजस्व मिलता है उसका एक-तिहाईसे भी ज्यादा भाग सेनापर खर्च किया जाता है। अब जरा एक ऐसे परिवारकी कल्पना तो कीजिए जिसे अपनी कुल आमदनीका एक-तिहाई भाग अपनी चौकीदारी करानेपर खर्च करना पडता हो।

डा० पॉलेन काफी जोर देकर कहते है कि हिन्दुस्तान 'सचमुच एक बडा ही समृद्ध देश है जिसमें अधिकाश व्यक्ति किसान है जो अपेक्षाकृत निर्धन और जाहिल है'। वे कहते है कि २७ रुपये प्रति व्यक्तिकी सालाना औसत आमदनीका पाँच गुना कर

देनेसे १३५ रुपयेकी आमदनी ठहरती है और उससे पाँच आदमियोंके एक परिवारकी आसानीसे गुजर-बसर हो सकती है। उनसे मेरा कहना है कि सवा दो रुपये प्रति महीनेमें एक आदमीका खाना-कपडा और मकान नही चल सकता, गरीबसे-गरीबका भी नही। और चूँकि इस औसत आमदनीमें लाखो करोड़पतियोकी आमदनी भी लेखी गई है, इसलिए गरीब जनताकी वास्तविक आय और भी कम बैठती है। इसलिए गरीबोंकी औसत आमदनी हमारे देशकी गरीबी ही नही बल्कि लगभग भुखमरीकी दशाका एक अकाट्य प्रमाण है।

डा० पॉलेनने शराबकी चुगीसे होनेवाली राजस्वकी दिन-दिन बढती आमदनीका स्पष्ट प्रमाण होते हुए भी यह कहनेकी धृष्टता की है कि वर्तमान सरकार बहुत ज्यादा शराबखोरीको बढ़ावा नही देती।

और अन्तमे, डा० पॉलेन सरकारकी दमन और आतक-नीतिसे इनकार करना तो दूर, उलटे यह दावा करते है कि 'वे लोग (हम लोग) उतने ही स्वतन्त्र है जितने कि स्काट और वेल्स और डोमीनियनोकी जनता, यहाँतक कि स्वय अग्रेज लोग है'।

इस घोर अज्ञानको केवल असहयोग आन्दोलन ही दूर कर सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२–६–१९२१

१२२. हमारी खामियाँ

अज्ञान और दम्भपूर्ण धारणाओके कारण डा० पॉलेनकी आलोचना मनमे सद्भावनाके बजाय केवल क्षोभ उत्पन्न करती है, इसके विपरीत मद्रासके एक अंग्रेजने, 'जॉन बुल' नामसे नीचे लिखी बड़ी ही सहायक और खरी आलोचना भेजी है.

> मै एक अंग्रेज हूँ और आपके कार्य और जीवनके बारेमें प्रशंसाके कुछ शब्द और अपनी सफाईमें कुछ शब्द प्रस्तुत करना चाहता हूँ। ऐसा करनेकी प्रेरणा मुझे लॉर्ड रीडिंगके भाषणके बारेमें 'यंग इंडिया' में आपकी टिप्पणी[1] पढ़नेसे मिली। मुझे ऐसा लगता है कि सीधे-सादे सत्यको देखकर उसे कह सकनेकी अमूल्य क्षमता आजके अन्य किसी भी राजनीतिज्ञकी अपेक्षा आपमें कहीं अधिक है। आपकी निगाहमें भारतके विक्षोभकी जड़ यह है कि भारतमें यूरोपके लोग भारतीयोंको अपनेसे तुच्छ मानते हैं। मेरा भी यही खयाल है। लेकिन मैं चाहता हूँ कि आप दो बातोंपर विचार करें: पहली, "इसमें कसूर किसका है?" और दूसरी, "इसमें सुधार कैसे किया जाये?"
>
> क्या भारतस्थित अंग्रेजके लिए यह सम्भव है कि वह भारतीय जन-साधारणको अपनी जातिसे तुच्छ समझनेसे बच सके? हममें से जो लोग वस्तुस्थितिको यथार्थ रूपमें देखना चाहते हैं वे क्या देखते हैं? हम देखते हैं कि नौकर

१. देखिए "वाइसरायका भाषण", ८–६–१९२१।

अथवा कर्मचारीके रूपमें हिन्दुस्तानी अंग्रेजोंकी तुलनामें घटिया होते हैं। वह कम ईमानदार और विवेकशील है, वह ज्यादा छुट्टियाँ लेता है और उसपर नजर रखना जरूरी होता है। हम यह देखते हैं कि मालिक अथवा कामपर रखने-वाले के रूपमें वह अंग्रेजोंसे घटिया है, उसमें न्यायशीलता और उदारता भी कम है। हम यह भी देखते हैं कि शारीरिक दृष्टिसे भी वह घटिया है, ज्यादातर भारतीय तो थके-माँदे बूढ़े आदमियों जैसे-ही हैं। वह (यदि उच्च वर्गका हुआ तो) आम तौरपर व्यायाम और श्रमसे जी चुराता है, और अपनी ऐन जवानीमें भी वह अक्सर थका-हारा बूढ़ा-सा लगने लगता है। उसके बच्चे पटापट मरते हैं। यहाँ मद्रासमें जितने बच्चे पैदा होते हैं, उनके आधे पाँच बरसके होते-होते मर जाते हैं। नागरिकके रूपमें वह घटिया है; और यह बहुत ही कम देखा जाता है कि वह घूस देने-लेनेका विरोध करे। वह क्योंकि जानवरोंको मार नहीं डालता, अपनी मानवीयताका डंका पीटता है, लेकिन गायोंको भी भूखों मरने देता है; घोड़ों तथा बैलोंके साथ जैसा बुरा बरताव भारतमें होता है वैसा किसी भी सभ्य देशमें नहीं किया जाता। विवाहित जीवनकी पवित्रता कायम रखनेके लिए उसने किशोरावस्थासे भी पहले विवाह कर देनेकी और फिर स्थायी वैधव्यकी परिपाटी बना दी है; इतना होनेपर यौन-रोग भारतमें इंग्लैंडसे कहीं अधिक पाये जाते हैं और धर्मके नामपर छोटी-छोटी लड़कियोंको वेश्यावृत्ति सिखाई जाती है। (केवल एक ही उदाहरण लें तो) जिस प्रकार आज अंग्रेज स्त्री-पुरुष उन देशोंमें सेवा-कार्यमें लगे हुए हैं जो युद्ध-कालमें ब्रिटेनके दुश्मन थे उस प्रकार भारत अभारतीयोंकी सेवा करनेका क्या एक भी दृष्टान्त प्रस्तुत कर सकता है? यदि पूर्ण स्वराज्य प्राप्त कर चुकनेपर वह खतरेमें पड़ जाये तो क्या भारतकी आबादीके हर साढ़े चार करोड़में से पचास लाख लोग स्वेच्छासे उसकी फौजमें नाम लिखा लेंगे?

अपनी विशाल आबादीमें से भारतने कितने थोड़े महान् व्यक्ति पैदा किये हैं? जीवित लोगोंमें से सिर्फ तीन ही ऐसे हैं — टैगोर, बोस और गांधी। भारत-जैसे देशके लिए यह संख्या कितनी शानदार है! महारानी एलिजाबेथके जमानेमें इंग्लैंडकी जनसंख्या आजके मैसूरकी आबादीसे ज्यादा नहीं थी।

ये सभी बातें आपको एकतरफा और गलत लग सकती हैं। शायद ऐसा है भी। लेकिन कोई भी अंग्रेज अंग्रेजों और भारतीयोंके बीच जो फर्क है, उसे इसी दृष्टिसे देखे बगैर कैसे रह सकता है?

यदि स्थिति ऐसी हो तो उसका उपचार भारतीयोंके हाथोंमें है, हमारे हाथोंमें नहीं। आपने राह दिखाना शुरू भी कर दिया है। मुझे आपका "असह-योग" शब्द पसन्द नहीं है, और न इससे आपका प्रयोजन स्पष्ट होता प्रतीत होता है। मैं उसके स्थानपर "स्वतन्त्र कार्रवाई" शब्दको ज्यादा पसन्द करूँगा।

भारतीय छुआछूतको खत्म करके दिखायें; वैवाहिक सम्बन्धोंमें संयम बरतकर दिखायें और शैशव कालमें ही काल कवलित हो जानेवाले अन्धाधुन्ध करोड़ों बच्चे न पैदा करें; ब्राह्मण पाठशालाओंमें सूत कातना और कपड़े बुनना सीखकर बतायें और शारीरिक श्रमको हीन कार्य समझना छोड़ दें; और स्थानीय बोलियोंमें से चाहे जितनी बोलियोंको कायम रहने दिया जाये, लेकिन भारत अपनी कोई ऐसी भाषा अवश्य ही अपनाकर बताये जिसे कश्मीरसे कन्याकुमारी तक बोला और समझा जा सके। जब कोई भी काम करना हो तो भारतीयोंको, "सरकार यह करे, सरकार वह करे" कहनेके स्थानपर स्वयं आगे बढ़कर उसे पूरा करनेमें जुट जाना चाहिए। आप ये सभी बातें कह चुके हैं, और यदि वे सभी लोग जो 'गांधीजीकी जय'के नारे लगाते हैं, ये काम करने लगें तो अंग्रेज जल्दी ही भारतीयोंकी उससे अधिक इज्जत करने लगेंगे जितनी अब करते हैं। ये काम पूरे करनेके बाद और भी बहुतसा काम करना होगा। इनमें ऐसी प्राचीन परम्पराओंके आतंकके खिलाफ विद्रोहका कार्य शायद सबसे महत्त्वका होगा, जिनका औचित्य अथवा उपयोग न रहा हो। आप निस्सन्देह नये-नये कार्य कराते जानेमें समर्थ होंगे। इस बीच, हम देखेंगे कि क्या होता है। क्या एक करोड़ रुपये जमा हो जायेंगे? क्या बीस लाख चरखे उपलब्ध हो सकेंगे और यदि उपलब्ध हो जायेंगे तो उनसे काम भी लिया जायेगा या नहीं? क्या असहयोग आन्दोलनकारी आत्म-अनुशासन कायम रखकर दंगे-फसादसे बचे रह सकेंगे? क्या गांधी ऐसे व्यक्तियोंकी सरकारको शैतानी शासन कहना बन्द कर देंगे जो भारतकी सेवाके लिए कुर्बानी देनेको आमतौरपर औसत भारतीयोंसे कहीं अधिक तत्पर हैं? क्या नशाबन्दी आन्दोलनका निर्बाध अवैध शराबखोरीसे भी अच्छा कोई परिणाम निकल सकेगा?

काश, हमें इन सवालोंका जवाब 'हाँ'में मिल सकता! काश . . . परन्तु क्या मिल सकेगा?

यदि सम्मान पाने योग्य काम किया जाये तो अंग्रेज सम्मान देनेके लिए तैयार रहते हैं। यह शिकायत नहीं होनी चाहिए कि अंग्रेज हिन्दुस्तानियोंका आदर नहीं करते; शिकायत यह होनी चाहिए कि हिन्दुस्तानी ऐसा काम नहीं करते कि उनका सम्मान किया जा सके।

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मेरा यह विश्वास है कि आप बड़े-बड़े काम कर रहे हैं और आगे भी करेंगे। "प्रशंसा, आशा और प्रेम ही मनुष्यका जीवनाधार है।" इन्हींके आधारपर महान् राष्ट्रोंका निर्माण होता है। मेरी कामना है कि भारत भी उनमें एक हो।

'जॉन बुल'के पत्रसे ऐसा लगता है कि उसके लेखकने इस आन्दोलनको समझनेकी कोशिश की है। उनकी अधिकांश आलोचना सर्वथा अकारण और निराधार

नही है। 'जॉन बुल' ने औसत अग्रेजके अनुभवकी बात कही है। लेकिन उन्होने अपने अनुभवोको जिस तरह सभी भारतीयोपर लागू कर दिया है, वह सचाईकी कसौटीपर ठीक नही उतरेगा। उनका अनुभव छावनियोमें रहनेवाले उन मुट्ठी-भर हिन्दुस्तानियो तक ही सीमित है जो लोभवश फौजमे भरती होते है और किसी अर्थमें भी भारतके जनसाधारणके प्रतिनिधि नही माने जा सकते। दोनो ही जातियोके व्यापक अनुभवके आधारपर मेरा विचार यह है कि जहाँतक इन्सानसे इन्सानकी तुलनाका प्रश्न है, महत्त्वकी सभी बातोके मामलेमे हिन्दुस्तानी दुनियाकी किसी भी जातिसे घटकर नही है। हाँ, यह मानना होगा कि शारीरिक दृष्टिसे हम अग्रेजोसे घटकर है। लेकिन ऐसा अन्य सभी बातोकी अपेक्षा जलवायुके कारण है। मेरा खयाल है कि जानवरो-की ओर उपेक्षाका आरोप भी आसानीसे सही सिद्ध किया जा सकता है। लेकिन मै यह नही मानता कि हममें अन्य जातियोकी तुलनामे यौन-रोग अधिक पाये जाते है। हाँ, बडे शहरोकी बात और है। वेश्यावृत्तिके लिए लड़कियोको देवार्पित कर देना निश्चय ही हमारी सस्कृतिपर एक कलक है। यदि हिन्दुस्तानियोको अग्रेजोकी तरह तैयार किया जाता और भारतकी स्थिति भी इग्लैड-जैसी ही होती तो वह भी अच्छा काम करके दिखा सकता था। लेकिन हमारी सस्कृति भिन्न प्रकारकी है, जिसे मेरे ख्यालसे हम अनन्त कालतक कायम रखेगे। भारतका स्वभाव युद्धप्रिय नही है। वह साथी इन्सानोको मारनेके लिए अपने लाखो लोगोको लडाईकी खन्दकोमे भेजनेमे कोई महानता नही समझेगा, भले ही विपक्षी गलतीपर क्यो न हो। मेरे विचारसे अपनी मुसलमान आबादी समेत पूरा भारत दूसरोको कष्ट पहुँचानेकी बजाय स्वत कष्ट उठानेमे अधिक सक्षम है। इसी विश्वासके कारण मैंने इस देशकी अनेक व्याधियोके उपचारके रूपमे असहयोगका प्रस्ताव करनेका साहस किया है। इसके सम्बन्धमे उसकी सही प्रतिक्रिया होती है या नही, यह तो आगे देखना है। यदि इसे केवल बदला लेनेकी भावनासे अपनाया गया होगा तो यह नाकाम रहेगा। यदि, जैसा मेरा विश्वास है, इसे आत्मशुद्धि और आत्मबलिदानके लिए अपनाया गया होगा तो इसकी सफलता अनिवार्य है। और भारत कायरोका राष्ट्र नही है, यह बात इसके लडाकू लोगोने — चाहे वे हिन्दू हो या मुसलमान, सिख हो या गुरखे — अपने व्यक्तिगत शौर्य और साहससे सिद्ध कर दी है। मेरा कहना यह है कि यह देश निरा मिट्टीका लोदा नही है और शायद उसे विश्वके विकासमे उच्चतर स्तरकी भूमिका निभानी है। यह केवल समय ही बतायेगा कि उसके भाग्यमे क्या है।

लेकिन 'जॉन बुल' को यह समझनेका पूरा हक है कि उनकी बातोके जवाबमें जो-कुछ मैंने कहा है, वह अपने पक्षकी वकालत-भर है। मै यह चाहूँगा कि इस प्रकारकी आलोचनाओको हम मैत्रीपूर्ण चेतावनियोके रूपमे ले और अपनी हर तरहकी खामियो-को दूर करना आरम्भ कर दे। मै 'जॉन बुल' की इस बातसे सहमत हूँ कि इस बातकी शिकायत करते रहनेसे कि कोई हमारी इज्जत नही करता, ऐसा काम करना कही अच्छा है जिससे लोग हमारी इज्जत करने पर मजबूर हो जाये। और वास्तवमे यही कारण है कि भारतने असहयोगका तरीका अपनाया है। इस पत्रके लेखकको यह शब्द पसन्द नही है। यदि मुझे उससे बेहतर शब्द मिले तो मै आज ही उसे छोड दूँ।

लेकिन यही एक शब्द है जो इस कामके लिए ठीक ठहरता है। हम काफी दिन अपने ही अध.पतनमे सहयोग कर चुके। अब आगे और सहयोग करनेसे इनकार कर देना हमारा कर्त्तव्य है। अब तो किसीको इस बातका हिसाब लगानेकी भी जरूरत नही है कि किसका कितना दोष है। वस्तुस्थिति यह है, और 'जॉन बुल' भी इसे भली प्रकार स्वीकार कर चुके है, कि औसत अंग्रेजके मनमे हमारे लिए जरा-सी भी इज्जत नही है। इसलिए हमे तबतक के लिए उनसे अलग हट जाना चाहिए जबतक हम और वे यह न समझने लगे कि दोनोका दर्जा बराबरीका है।

परन्तु 'जॉन बुल' के तर्कोका एक दूसरा पहलू भी है। उनके रुखसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उनको इस जातिसे ही घृणा है। यदि यह मान भी लिया जाये कि वे सब कमियाँ उसी रूपमे मौजूद है जिस रूपमे इस पत्रके लेखकने बयान की है, तब भी क्या यही कारण भारतीयोको अपनेसे हीन समझनेके लिए काफी है? अथवा क्या समताके सिद्धान्तका यह तकाजा नही है कि एकसे गुण हो या नही, परन्तु एक-दूसरेका आदर करना चाहिए? क्या 'जॉन बुल' स्वयं वही गलती नही कर रहे, जो बहुतसे हिन्दू 'अछूतो' के सम्बन्धमे करते है? यदि मेरा छुआछूतकी भावनाको दानवी प्रवृत्ति कहना सच है तो क्या अंग्रेजोको अपने-आपको श्रेष्ठ समझनेकी भावनाको उसी नामसे पुकारना कुछ कम सच होगा? क्या अंग्रेज अपनेसे कुछ कम भाग्यशाली अंग्रेजोसे वैसा ही बरताव करते है, जैसे वे हिन्दुस्तानियोके प्रति करते है? जैसे हिन्दुत्वके बारेमे कहा जाता है कि उसने अछूतोके भाग्यमे सदा-सदाके लिए अधीन रहना लिख दिया है, वैसे ही क्या अंग्रेज यह नही समझते कि वे शासन करनेके लिए पैदा हुए है और हिन्दुस्तानी हुक्म बजानेके लिए। मेरी सम्पूर्ण आत्मा मौजूदा शासनके प्रति विद्रोही हो गई है, क्योकि मेरा विश्वास है कि जबतक अंग्रेज अपनी जातीय श्रेष्ठताका पूर्वाग्रह नही छोडते तबतक उनसे सम्बन्ध रखते हुए भारतको वास्तविक स्वतन्त्रता नही मिल सकती। अंग्रेजोके इसी दृष्टिकोणने योग्यसे-योग्य हिन्दुस्तानीको अपनी शक्तियोका पूर्ण विकास कर सकनेके अवसरसे वंचित कर दिया है, इसलिए और व्यक्तिगत रूपसे अंग्रेज प्रशासकोके नेक इरादे रखनेके बावजूद हम स्वय अपनी निगाहमे इतने नीचे गिर गये है कि खुद हममे बहुत-से लोग यह मानने लगे है कि हमारे लिए काफी समयतक अंग्रेजोसे प्रशिक्षण लेना जरूरी है, जब कि मेरा यह दृढ विश्वास है कि हम आज भी अपना शासन चलानेमे पूरी तरह सक्षम है और इसीलिए हमे दृढतापूर्वक इन सुधारोको, जो पूर्ण स्वायत्तशासनसे बहुत कम ठहरते है, लागू करनेमे उनके साथ सहयोग नही करना चाहिए। इसमे सन्देह नही कि हमसे गलतियाँ होगी; हो सकता है आजकी तुलनामे उस समय ज्यादा गलतियाँ हो। लेकिन हम अपनी गलतियोसे ही सीखेगे, गलतियाँ करनेके अवसरको बलात् रोके रहनेसे नही।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२–६–१९२१

१२३. पत्र-लेखकोंसे

आर० शर्मा : जहाँ-कही जरूरत पड़ी है, स्थानीय कार्यकर्त्ता असहयोग आन्दोलनमे जेल जानेवालो के परिवारोकी देखभाल कर रहे हैं।

एल० एन० दास : प्रतियोगिताके लिए बनाये गये चरखे सत्याग्रहाश्रम साबरमती-को अपने खर्चेपर भेजे जा सकते है। जिस चरखेसे आठ घटेमें कमसे-कम तीन पौड एकसा और अच्छी बटवाला सूत काता जा सके उस चरखेके अन्वेषकको ५,००० रु० का पारितोषिक दिया जायेगा। इसके पुर्जे भारतमे बन सकने चाहिए और कीमत ५० रु० से अधिक हरगिज नही होनी चाहिए।

बी० नारायण जिन वकीलोने वकालत तो छोड दी है परन्तु जो असहयोगके अन्य कर्तव्योका पालन नही करते या जो आन्दोलनमें विश्वास ही नही रखते, केवल वकालत बन्द कर देनेसे ही वे असहयोगी नही माने जा सकते। ऐसा भी हो सकता है कि कोई वकील आन्दोलनको समाप्त करनेमे अपना समय लगानेके उद्देश्यसे वकालतका पेशा बन्द करे। अमुक काम ठीक है या गलत इसका निर्णय कामके उद्देश्यको देखकर किया जा सकता है।

बी० बी० साठे आपका पत्र प्रकाशित करनेकी जरूरत नही है। जो लोग अज्ञानसे, द्वेष-भावनासे या विश्वासकी कमीके कारण असहयोगका विरोध करते हो, उन्हे सही ज्ञान, प्रेम और निष्ठासे धीरे-धीरे अपना बनाना चाहिए।

टी० एम० : राष्ट्रीय कार्योके लिए ऋणके बतौर कोई कोष-सग्रह करनेका विचार बुरा नही है। परन्तु आप कोषके मुख्य उद्देश्यको जो स्वर्गीय लोकमान्यकी स्मृतिको अमर बनाना है, नजर-अन्दाज कर रहे हैं। हमें हाथमे लिया काम अवश्य पूरा करना चाहिए। यदि हमे और रुपयोकी जरूरत है तो हम ऋणकी बात सोच सकते है। स्मारक-कोषका स्थान कर्ज नही ले सकता। स्मारक-कोषमे तो दान दी गई रकमे ही हो सकती है।

आर० सी० माथुर छुआछूतकी भावनाके बिलकुल मिट जानेपर यह अन्देशा नही होगा कि भगी, यदि उन्हे ठीक पैसा दिया गया और उनके साथ अच्छा बरताव किया गया तो, सफाईका काम करनेसे इनकार करेंगे। ससारके अन्य भागोमे सफाई का काम, यदि यहाँसे बेहतर नही तो, भी काफी अच्छी तरह किया जाता है। परन्तु मान ले कि छुआछूतका प्रतिबन्ध हट जानेपर भगी गन्दगी साफ करनेसे इनकार कर देगे; उस हालतमें हमे खुद सफाई करनेको तैयार रहना चाहिए। अस्पृश्यताको मिटा देनेका अर्थ यह भी है कि दूसरोके मलमूत्रकी सफाई करनेमे उसी प्रकार कोई पाप या शर्मकी बात नही है जिस प्रकार माँके लिए बच्चेका मैला साफ करने या वैतनिक परिचारिका (नर्स) या परिचारकके लिए अपने मरीजका मैला साफ करनेमें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २२-६-१९२१

१२४. भाषण: बम्बईमें स्कूलके उद्घाटनपर[1]

२२ जून, १९२१

अपने भाषणके दौरान महात्मा गांधीने श्रोताओंसे जोर देकर कहा कि जिस एकमात्र उद्देश्यको हमेशा सामने रखना चाहिए वह है स्वराज्य। उसीकी पूर्तिके निमित्त आप अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाइए। केवल वही शिक्षा उपयोगी है जो आपके बच्चोंमें मातृभूमिके प्रति प्रेम जाग्रत कर सके, उन्हे देशभक्त बना सके और उन्हे प्राणोकी आहुति देकर भी वर्ष समाप्त होनेसे पहले स्वराज्य हासिल करनेके कर्त्तव्यका भान करा सके, ऐसी ही शिक्षा उन्हे दी जानी चाहिए। आपको चरखा चलाना और खद्दर पहनना चाहिए। आपको खिलाफत तथा पंजाबके सम्बन्धमें किये गये अन्यायोंका निराकरण भी करवाना है। कुमारी कृष्णाबाई और कुमारी जसलक्ष्मी यहाँ पैसेके लिए नहीं आईं वरन् अपने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य निभानेके लिए आई हैं।

महात्मा गांधीने कहा कि मुझे स्कूलका उद्घाटन करनेको बुलाया गया है। यद्यपि इस समय मैं किसी स्कूलका उद्घाटन नहीं करना चाह रहा था। मैं पहले कई स्कूलोका उद्घाटन कर चुका हूँ और आप जानते हैं कि इस विषयमें मेरे क्या विचार हैं। उन्हे दोहरानेसे कोई लाभ नहीं। भारतके भाग्य-चक्रकी इस नाजुक घड़ीमें इस तरहके स्कूल खोलनेका उद्देश्य केवल एक होना चाहिए और वह है स्वराज्य प्राप्त करना; इतना ही नहीं, इसी वर्षके भीतर प्राप्त करना। और फिर आपको खिलाफतका सवाल निपटाना है; और पंजाबमें किये गये अन्यायका निराकरण भी करवाना है। आप इन दोनो मसलोंको नजरअन्दाज नहीं कर सकते। यदि आप इसी बरसके भीतर स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए कृतसंकल्प हैं तो आपको सोचना होगा कि उसे हासिल करनेके लिए आपको क्या करना चाहिए। आप लोगोंको अपना सारा ध्यान स्वराज्य हासिल करनेके महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर लगा देना चाहिए और उसीके अनुसार कदम उठाने चाहिए। मैं तो ऐसा नहीं मानता कि यदि आपके बच्चे किसी तरहकी शिक्षा पाये बिना रह गये तो उनकी बहुत बड़ी क्षति हो जायेगी। आज भारत भीषण कष्ट सहन कर रहा है और हम उसके कष्टको दूर करनेके लिए स्वराज्य चाहते हैं। पहले तो आपमें अपने बच्चोंकी रक्षा करनेके लिए पूरी सामर्थ्य उत्पन्न होनी चाहिए और मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि भारतीयोंमें उनकी रक्षा करनेकी सामर्थ्य नहीं है। इस कामके लिए उन्हें अपनी आन्तरिक शक्ति पहचाननी होगी। भारतीय लोग अपनी काम करनेकी क्षमताको पूरी तरह नहीं पहचान सके हैं, वे अभीतक यह नहीं जान पाये

१. गांधीजीने गांधर्व महाविद्यालयमें लोकमान्य राष्ट्रीय कन्या शालाका उद्घाटन किया। बम्बई नगरकी यह प्रथम राष्ट्रीय कन्या पाठशाला थी।

है कि वे क्या-क्या काम कर सकते हैं। जिस क्षण लोग अपने कर्त्तव्य-पालनमें अपने प्राणतक न्यौछावर करनेको उद्यत हो जाते हैं तब वे महानतम योद्धा, महानतम पुरुष कहलाते हैं।

जिस देशमें आपने जन्म लिया है, उसके प्रति कर्त्तव्य-पालन करनेसे बढ़कर संसारमें कोई दूसरा काम है ही नहीं। इस नाजुक समयमें भारतीयोंको चाहिए कि वे अपने बच्चोंको अपने देशके प्रति कर्त्तव्य निभानेकी शिक्षा दें। मैं तो उन्हें अपना कर्त्तव्य करते हुए देशके लिए मर जानेको भी कहूँगा। इस कन्या शालाको खोलनेका प्रमुख उद्देश्य यही है। यदि आपने अपने सामने सदा यह उद्देश्य रखा तो आप प्रशंसाके पात्र होंगे। परन्तु यदि आप इस स्कूलमें केवल वही विषय पढ़ाना चाहे जो सरकारी और नगरपालिकाके स्कूलोंमें पढ़ाये जाते हैं तो मैं आपसे कहता हूँ कि इस तरह इस सालके भीतर स्वराज्य पा सकना असम्भव है। हम लोगोंका प्रथम उद्देश्य इसी साल स्वराज्य पा लेना है। और इसी उद्देश्यको ध्यानमें रखते हुए आपको अपने बच्चोंको शिक्षा देनी चाहिए। आपको अपने बच्चोंके दिमागमें अपने देशके लिए स्वराज्य प्राप्त करनेका महत्त्व अंकित कर देना है और देशकी जरूरतोंके प्रति उन्हें जागरूक बनाना है।

इसलिए मैं कहता हूँ कि आपको इस विद्यालयमें सूत कातना सिखाना चाहिए। जबतक आपमें से प्रत्येक व्यक्ति खद्दर नहीं पहनता तबतक मेरी समझमें नहीं आता कि आपको स्वराज्य कैसे मिल सकता है। यदि आप इस वर्षका अन्त होनेसे पहले सभी विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार कर सकें तो स्वराज्य लेनेमें और उसे कायम रख सकनेमें जरा भी कठिनाई उपस्थित नहीं होगी। इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए आपको पुरुषों, स्त्रियों और बालकोंकी सहानुभूति प्राप्त करनी होगी और इसमें उनकी शक्तियोंका उपयोग करना होगा। हमें इन सबको प्राप्य उद्देश्यकी महत्ता समझानी है। हम भारतवासियोंको चाहिए कि अपने बच्चोके दिलोंमें देशभक्तिकी भावना भरें। जिस स्कूलका मैं आज उद्घाटन कर रहा हूँ यदि वह ऐसा करे तो मैं सभी अभिभावकोसे कहूँगा कि वे अपने बच्चोंको इस संस्थामें पढ़नेके लिए भेजें क्योकि वे ऐसा करके न केवल अपना ही बल्कि अपने देशका भी भला करेंगे।

अभिभावकगण अपने बच्चोंको देशप्रेम सिखाएँ और उन्हे स्वराज्य हासिल करनेका रास्ता भी दिखायें। यदि लड़कोंके माँ-बाप अभीतक यह नहीं पहचान पाये हैं कि देशके प्रति उनका कर्त्तव्य क्या है तो बच्चोंसे यह आशा करना कि वे अपना कर्त्तव्य निभायेंगे, बेकार है। अभिभावकोंसे अपने बेटे-बेटियाँ वहाँ भेजनेको कहनेमें मेरा उद्देश्य यह है कि लड़के-लड़कियाँ खद्दर पहनें और अभिभावकोको भी खद्दर पहननेके लिए प्रेरित करें। शायद कुछ लोग यह कहें कि गांधी मूर्ख है जो उनसे खद्दर पहनने-को कहता है। इस अवसरपर हर आदमीको देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करना है। आपमें से हर व्यक्तिको खद्दर पहनना है और मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि

आज सुबह मैंने जिस संस्थाका उद्घाटन किया है, उसपर वह अपनी कृपाकी वर्षा करे, उसे समुन्नत करे और सफल बनाये।[1]

महात्मा गांधीने कहा कि मैं आपसे एक बात कहना भूल गया था। श्री बैंकरने[2] मुझे उसकी याद दिलाई है। पहले हमारा इरादा उस समयतक इस तरहके स्कूल खोलनेका नहीं था जबतक कि हमें हमारी जरूरतके लायक शिक्षक न मिल जायें। किन्तु अब हमें श्रीमती कृष्णाबाई और श्रीमती जसलक्ष्मीकी सेवाएँ सुलभ हो गई हैं। श्रीमती कृष्णाबाई इलाहाबादमें क्रास्थवेट गर्ल्स स्कूलकी प्रधानाध्यापिका थीं और जब मैं वहाँ गया था तब उनसे मिला भी था। उस अवसरपर मैंने उनसे तथा वहाँकी महिला शिक्षिकाओंसे असहयोगके बारेमें बातचीत की थी। और कुमारी कृष्णाबाईने मुझसे कहा था कि मैं आपके काममें हाथ बँटानेके उद्देश्यसे बम्बई आ जानेको तैयार हूँ। ये महाराष्ट्रकी हैं और इन्हें इलाहाबादमें रहना पसन्द न था; अपनी शिक्षाके सम्बन्धमें वे अमेरिका हो आई हैं और उन्होंने ऊँची शिक्षा पाई है। वे बम्बई धनोपार्जनकी दृष्टिसे नहीं वरन् अपने देशकी सेवा करने आई हैं। कुमारी कृष्णाबाईके लिए अकेले यह काम कर पाना असम्भव था। वे एक मराठी महिला हैं और हमें गुजराती लड़कियोंकी देखभालके लिए किसी व्यक्तिकी जरूरत थी। इस कामके लिए हमें कुमारी जसलक्ष्मी दलपतराम कवि मिल गई हैं। ये बहन अहमदाबादमें महालक्ष्मी ट्रेनिंग कालेजमें प्रथम सहायिकाका काम कर रही थीं। इस स्कूलको प्रारम्भ करनेसे पहले ही वे अपने पदको त्याग चुकी थीं और अहमदाबादमें आश्रममें रह रही थीं। यद्यपि वे बम्बई-जैसे बड़े शहरमें रहना नापसन्द करती हैं, फिर भी वे देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करने बम्बई आई हैं। किन्तु उन्हें एक कर्त्तव्य पूरा करना है और वह है गुजराती लड़कियोंकी देखभाल। भारतीय पूरा भरोसा रखकर इस स्कूलमें अपने बच्चे भेज सकते हैं और उन्हें इन दो योग्य महिलाओंको सुपुर्द कर सकते हैं।

इसके बाद तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा किया गया और कुछ आभूषण तथा बहुत-सा धन इकट्ठा हो गया। एक पारसी लड़कीने अपनी सोनेकी चूड़ी दी और एक पारसी सज्जनने एक चेक भेंट किया।

श्री गांधीने कहा, बहुतसे लोग मुझसे कहते हैं कि पारसी समाज कोषके लिए कुछ पैसा नहीं दे रहा है। मैं उन्हें बताना चाहता हूँ कि यह सही नहीं है। मुझे पहले भी उनसे मदद मिल चुकी है, अब भी मिल रही है और मुझे पूरा विश्वास है कि आगे भी मिलेगी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-६-१९२१

१. सरोजिनी नायडूके बोल चुकनेपर गांधीजीने फिर कुछ शब्द कहे।

२. शंकरलाल घेलाभाई बैंकर।

१२५. संदेश : बम्बईमें आयोजित स्त्रियोंकी सभाको[1]

२२ जून, १९२१

श्रीमती मोतीवालाने महात्मा गांधीका एक सन्देश पढ़ा जिसमें उन्होंने लिखा था कि यदि मैं सभामें शरीक न हो सकूँ तो आप लोग मुझे क्षमा कर दें। मैं कई बार अपनी बम्बईकी बहनोंसे मिल चुका हूँ और उनसे बार-बार कहनेको मेरे पास क्या है? मेरा मन भारतको आजाद और निष्कलंक देखनेको छटपटा रहा है। और ईश्वरसे मेरी यही प्रार्थना है कि भारतीय स्त्रियोंमें पवित्रता, निर्भीकता और सादगीका संचार हो। स्त्रियोंके आशीर्वादके बिना इस देशमें धर्मराज्य स्थापित नहीं किया जा सकता। हमें इसी सालके अन्दर विदेशी वस्त्रोंका इस्तेमाल छोड़ देना है और इसके लिए मुझे अपनी बहनोंकी मददकी जरूरत है। स्त्रियाँ चरखा चलाना और खद्दर पहनना अपना धार्मिक कर्त्तव्य समझें। इसके लिए चाहे उन्हे बहुत असुविधा क्यों न उठानी पड़े। उन्हे केवल वही वस्त्र पहनने चाहिए जो उनके अपने हाथके बनाये हुए हों। उन्हें विदेशी वस्त्रोंको इस्तेमाल करना पाप समझना चाहिए। मिलोंमें बना कपड़ा केवल गरीब लोग ही इस्तेमाल करें। मुझे अपने कामके लिए बहुत धनकी जरूरत है और इसके लिए मुझे स्त्रियोंकी मदद चाहिए। यदि वे केवल तिलक स्वराज्य-कोषके लिए समय दे सकें तो मुझे पूरा इतमीनान है कि वे बहुत अधिक धन आसानीसे इकट्ठा कर सकेंगी। मैं अपनी पारसी, हिन्दू और मुसलमान बहनोंको जब इस कामको पूरा करनेमें सचेष्ट पाता हूँ तब मुझे हर्ष होता है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३–६–१९२१

१ यह सभा मारवाड़ी विद्यालय हॉलमें राष्ट्रीय स्त्री-समाजके तत्त्वावधानमें हुई थी जिसकी अध्यक्षता बेगम रफिया सुलतानाने की थी। इस सभामें अली भाइयोंने भी भाषण दिये। सरोजिनी नायडू तथा अन्य लोगोंने स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा किया।

१२६. पत्र : एस० आर० हिगनेलको

लैबर्नम रोड
गामदेवी
बम्बई
२४ जून [१९२१]

प्रिय श्री हिगनेल[1],

मैंने कई बार परमश्रेष्ठके भाषण और अली भाइयोके बारेमे [प्रकाशित] प्रेस-विज्ञप्तिके सम्बन्धमे पत्र लिखनेका विचार किया। परन्तु जान-बूझकर रुका रहा कि मै कही जल्दबाजीमे कोई कदम न उठा बैठूं या बिना सोचे कुछ न लिख दूं। मै परमश्रेष्ठको सूचित कर देना चाहता हूँ कि उस प्रेस विज्ञप्ति और वाइसराय महोदयके भाषणसे मुझे बहुत ही दु ख हुआ है। मेरे खयालके अनुसार उक्त विज्ञप्ति और भाषण दोनोसे उस स्थितिपर सही प्रकाश नही पडता जो मेरी समझमे मेरे शिमलासे रवाना होते समय थी। हमारी मुलाकातोके विषयमे बहुत प्रश्न पूछे जा रहे है। निवेदन है कि या तो भेंटोका ऐसा सार देते हुए, जिसके मजमूनके विषयमे हम दोनो सहमत हो, एक वक्तव्य प्रकाशित किया जाये या मुझे भेंटोके बारेमे गोपनीयता बनाये रखनेके उत्तरदायित्वसे मुक्त कर दिया जाये। यह कहना जरूरी नही है कि अपनी हदतक मैंने भेंटोमे जो-कुछ भी परमश्रेष्ठसे कहा है उसे गोपनीय रखनेकी मेरी कोई इच्छा नही है।

आशा है कि आप परमश्रेष्ठका निर्णय तार द्वारा सूचित करेंगे। ३० जून तक मेरा पता रहेगा लैबर्नम रोड . . .।

गाधीजीके स्वाक्षरोमे अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ७५५९) की फोटो-नकलसे।

१२७. भाषण : शिक्षकोंके कर्त्तव्यपर[2]

२५ जून, १९२१

श्री गांधीने कहा कि जब मुझे आपकी ओरसे निमन्त्रण मिला तब अच्छी तरह यह जानते हुए भी कि आप लोग मुझे अधिक न दे सकेंगे, मैंने आपका निमन्त्रण बड़े हर्षके साथ स्वीकार किया, क्योंकि एक अनुभवी शिक्षकके रूपमें मैं महसूस करता हूँ

१ वाइसरायके निजी सचिव।

२ बम्बईके प्राथमिक विद्यालयोंके शिक्षकों और विद्यार्थियोंकी एक सभा माण्डवीमें हुई थी, जिसका आयोजन गाधीजीको तिलक स्वराज्य-कोषके लिए एक थैली भेंट करनेके लिए किया गया था। यह भाषण गाधीजीने इसी अवसरपर दिया था।

कि भारतकी स्वतन्त्रताकी कुंजी शिक्षकोंके ही हाथोंमें है। अपनी भारत-यात्राके दौरान में शिक्षकोंसे बराबर यह कहता आया हूँ कि स्वतन्त्रताकी कुंजी और खिलाफत सम्बन्धी अन्याय और पंजाब सम्बन्धी शिकायतोंके निराकरणके उपाय अध्यापको और अध्यापिकाओंके ही हाथोंमें हैं। मैं स्वीकार करता हूँ कि भारतकी महिलाओंने देशके प्रति अपने कर्त्तव्यको सच्ची भावनाके साथ निभाया है। अगर भारतीय गरीब हैं और दुनियाकी विभिन्न जातियोंकी तुलनामें इतनी गिरी हुई अवस्थामें हैं तो हमारी इस स्थितिके लिए आप भी उतने ही जिम्मेदार हैं जितने कि हमारे शासक। क्योंकि अगर यथा राजा तथा प्रजा कहना सही है तो यथा प्रजा तथा राजा कहना भी गलत नहीं है। इसके साथ ही मैं यह भी कहना चाहूँगा कि लोगोंको वैसे ही अध्यापक भी मिलते हैं जैसे अध्यापकोंके वे पात्र होते हैं। 'भगवद्गीता' में कहा गया है कि महत् जन जो कार्य करते हैं शेष लोग भी वही करते हैं। विद्वज्जन और शासक जो काम करते हैं, शेष व्यक्ति भी वही करते हैं। कांग्रेसने एक प्रस्ताव पास किया है जिसमें अध्यापकोंसे भी देशके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करनेका उतना ही अनुरोध किया गया है जितना वकीलोंसे और मुझे पूरा विश्वास है कि जो अध्यापक देशकी सेवा करना चाहते हैं, उन्हें कभी भूखों नहीं मरना पड़ेगा।

जब मैं बहुत बड़ी तादादमें विद्यार्थियोंको स्कूलोंमें पढ़ते देखता हूँ, जब मैं प्रशिक्षण-कालेजोंमें इतने सारे शिक्षकोंको प्रशिक्षण प्राप्त करते देखता हूँ तब मुझे अपने देशके लिए बड़ा दुःख होता है, क्योंकि मुझे पूरा यकीन है कि जो शिक्षक इन कालेजोंसे निकलेंगे वे इस देशकी नई पीढ़ीके शिक्षण-प्रशिक्षणका दायित्व सँभालनेकी दृष्टिसे योग्यतम व्यक्ति नहीं हैं। इन कालेजोंमें इतनी ज्यादा गुलामी है कि अपने देशके भविष्यके प्रति मेरा मन निराशासे भर जाता है। बम्बईके नेशनल गर्ल्स स्कूलकी अध्यापिका श्रीमती जसलक्ष्मीने मुझे अपने अनुभव सुनाये हैं। उनका प्रशिक्षण सरकारी कालेजमें हुआ है। उन्हें मजबूरन उस कालेजको छोड़ना पड़ा, क्योंकि उन्होंने महसूस किया कि जबतक वे इस कालेजमें सरकारकी सेवा करती रहेंगी तबतक आत्मसम्मान और स्वतन्त्रताको सुरक्षित रखना असम्भव है। एक शिक्षित और सम्माननीय महिलाने जब यह बात कही है तब आप अवश्य ही यह अनुभव करेंगे कि सरकारी स्कूलोंमें नौकरी करनेका मतलब सचमुच क्या होता है। संसारके राष्ट्रोंकी तुलनामें भारतके इतना नीचा होनेका एक कारण यह भी है। मुझे आपसे यह कहनेमें कोई संकोच नहीं है कि अन्य लोगोंकी भाँति अध्यापकोंने भी अध्यापनके धन्धेको इसलिए अपनाया है कि इसके द्वारा वे अपनी जीविका अर्जित करना चाहते हैं, इसलिए नहीं कि यह सुन्दर और सौम्य धन्धा है और इससे वे देशका भला कर रहे हैं। जिस तरह वकीलों और डाक्टरोंने अपने-अपने पेशे कमाईके धन्धेके रूपमें अपनाये हैं उसी तरह अध्यापकोंने भी अध्यापन कार्य सिर्फ पैसा कमानेके लिए ही अपनाया है और उसके पीछे अन्य कोई भाव नहीं है। स्वयं मैं भी वकील बनकर भारतसे बाहर चला गया,

क्योंकि मेरे घरवालों ने सोचा कि इस तरह मैं ज्यादा पैसा कमाऊँगा। उस समय मेरे मनमें मातृभूमिकी सेवा करनेका कोई विचार नहीं था। लेकिन बादमें मैंने यह अनुभव किया कि अपने देशकी सेवा करना सबसे अच्छी चीज है। इसलिए मैंने उन सब वस्तुओंको त्याग दिया और अब मैं आप लोगोंसे भी अपील करता हूँ कि आज देश जो महान् बलिदान कर रहा है उसमें आप भी हाथ बँटायें।

नेक और ईमानदार बनना आप लोगोंका कर्त्तव्य है। आपको चाहिए कि बालकोंको नेक, निर्भय और सत्यवादी बननेकी शिक्षा दें। अपने विद्यार्थियोंको ब्रह्मचर्यका पालन करना सिखायें। मैं भारतमें व्याप्त भ्रष्टाचारसे भयभीत हो उठा हूँ और मुझे आशंका है कि अगर हमेशा यही हालत बनी रही तो हम कभी स्वराज्यके योग्य नहीं बन पायेंगे। इन मामलोंमें किसी और देशका अनुकरण करना हमारा काम नहीं है। यह अध्यापकोंका कर्त्तव्य है कि वे अपने विद्यार्थियोंको वीर और सत्यवादी बनायें। हम जिस स्वराज्यकी स्थापना करने जा रहे हैं वह सत्य और न्यायपर आधारित होगा, अन्यायपर नहीं। हम धर्मराज्यकी स्थापना करने जा रहे हैं और ऐसा हम बल-पूर्वक अथवा किसी अन्य उपायसे नहीं करना चाहते। जब हजारों मुसलमान मारनेके लिए नहीं बल्कि मरनेके लिए तैयार रहेंगे, जब हजारों हिन्दू दूसरोंके प्राण लेनेके लिए नहीं बल्कि अपने प्राणोंकी बलि देनेके लिए तैयार होंगे तब आप यह निश्चित मान सकते हैं कि स्वराज्य आपका है। खिलाफतके प्रश्नके साथ-साथ गो-रक्षाका प्रश्न भी हल हो जायेगा।

श्री गांधीने विद्यार्थियोंसे एक बार फिर ब्रह्मचर्यका पालन करनेका अनुरोध किया, क्योंकि इसपर जितना जोर हिन्दू धर्ममें दिया गया है उतना किसी और धर्ममें नहीं दिया गया। भारतीयोंको भ्रष्टाचार भी छोड़ देना चाहिए। हमें अपनी पत्नीके अतिरिक्त सभी स्त्रियोंको माँ, बेटी अथवा बहन समझना चाहिए। जब मैं इस देशमें इतना पाप होते देखता हूँ तब मैं इस बातकी ओरसे निराश हो जाता हूँ कि हमारा स्वराज्य धर्मपर आधारित हो सकेगा। अगर हम धर्मराज्य स्थापित करनेके लिए कृत-संकल्प हों तो हमारे अध्यापकोंको तुरन्त इस बातका एहसास हो जाना चाहिए कि उन्हें विद्यार्थियोंको उचित भावनाके साथ प्रशिक्षित करना है। जब हम लड़के और लड़कियोंके मस्तिष्कमें सही बातें उतार सकेंगे तभी हमारे देशको अच्छे नागरिक प्राप्त हो सकेंगे। अपने धर्मराज्यके लिए हम सत्य और न्यायमें निष्ठा रखनेवाले पुरुष और स्त्री चाहते हैं। लेकिन अगर अध्यापक अपने उच्चाधिकारियोंसे झूठ बोलते हैं तो वे बालकोंसे सच बोलनेकी कैसे अपेक्षा कर सकते हैं। विद्यार्थी अपने अध्यापकोंसे ही सबक सीखेंगे। इसलिए उन्हें व्यक्तिगत उदाहरणके द्वारा सिखाना होगा। हमें स्वयंको अपने पापोंसे मुक्त करना चाहिए, हमें उन वस्तुओंसे मुक्त होना चाहिए और अनाचारका गुलाम नहीं बनना चाहिए।

जबतक भारतके स्त्री-पुरुष देशके प्रति अपने कर्त्तव्यको नहीं पहचानते और खद्दरके स्थानपर महीन विदेशी कपड़ेका प्रयोग करते रहेंगे तबतक वे स्वराज्य प्राप्त

नहीं कर सकेंगे। अगर आप लोग विदेशी कपड़ेका पूर्णतया त्याग नहीं करते तो आप इस वर्ष स्वराज्य कतई हासिल नहीं कर सकेंगे। आपको यह नहीं समझना चाहिए कि चूंकि आपने एक करोड़ रुपया इकट्ठा कर लिया इसलिए आप आसानीसे स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे। स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए आपको और भी बहुतसे काम करने पड़ेंगे। आप जो पैसा इकट्ठा करेंगे, वह स्कूल और कालेज खोलने तथा अन्य बहुतसे कार्योंमें लगाया जायेगा। लेकिन अभी और भी बहुत काम करने हैं। इसलिए मैं अध्यापकों — स्त्री और पुरुष दोनों वर्गों — से अनुरोध करूंगा कि आप अपने शरीरको यत्नपूर्वक पवित्र तथा शुद्ध रखें। उसकी उतनी ही सार-सँभाल करें जितनी कि आप अपने मनकी करते हैं। आपको अपने शरीरको भी उसी तरह पवित्र रखना चाहिए जिस तरह आप अपनी आत्माको रखते हैं। आपको ऐसा करना ही होगा। आपको विदेशी कपड़ेका प्रयोग करना छोड़ना है और विद्यार्थियोंको सिखाना है कि वे अपने तनपर विदेशी कपड़ेका एक टुकड़ा भी न रखें और सिर्फ खद्दर ही पहनें। जबतक भारतीय वैसा नहीं करेंगे तबतक देशकी गरीबी कभी दूर नहीं होगी। भारतीयोंके लिए ऐसा करना जरूरी है, सो इसलिए कि इस तरह उनकी स्त्रियोंके शीलकी रक्षा हो सकेगी क्योंकि तब उन्हें पत्थर तोड़नेके लिए अपने घरोंसे बाहर सड़कोंपर नहीं जाना पड़ेगा। आपको हर घरमें चरखेका चलन कराना चाहिए और गरीब तथा अमीर स्त्रियाँ सभी कातनेका काम अपनायें। अमीर स्त्रियाँ कहानियाँ आदि पढ़नेमें अपना समय गँवाकर देशका क्या भला करेंगी? आज भारतमें जिस वस्तुकी जरूरत है वह है स्वदेशी कपड़ेका सर्वव्यापी प्रयोग और यह आप सिर्फ चरखेके द्वारा ही कर सकते हैं।

अगर सब अपने-अपने कर्त्तव्यका पालन करें तो मुझे पूरा विश्वास है कि हम इस वर्ष सरलतासे स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। अपने उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए हमारे देशको स्वदेशी, असहयोग और मद्यत्यागकी समान रूपसे आवश्यकता है। आपको अपने समाजको शराबके व्यसनसे मुक्त कराना है और उसके लिए आपको शराबकी दुकानों-पर यह संकल्प लेकर जाना चाहिए कि आप अपने देशभाइयोंको शराब न पीनेके लिए समझाते हुए प्राण तक दे देंगे। जब आप इन स्थानोंपर जायें तब आप मृत्युके लिए भी तैयार रहें। शराबकी दुकानोंपर पहरा देती हुई पुलिस अथवा दुकानदारोंके हाथों आपमें से कुछ व्यक्ति मारे भी जायें तो स्वराज्य और पास आ जायेगा। आपको शराबके व्यापारियोंके हितोंकी रक्षा करनेवाले व्यक्तियोंके हाथो मरनेके लिए तैयार रहना चाहिए। आज ही मैंने आर्थर रोडपर हुई वारदातके बारेमें पढ़ा है और मुझे दुःख है कि वार सहनेके लिए मैं वहाँ नहीं हुआ।

शिक्षकोंसे मैं एक बात और कहना चाहूँगा। आपको हिन्दू और मुसलमान दोनो जातियोंके बच्चोंको परस्पर एक-दूसरेके प्रति पूर्ण मैत्री-भाव रखना सिखाना चाहिए। हमें उन सबको दोनों जातियोंके बीच पूरी एकता बनाये रखनेकी सीख देनी है। जब-

तक दोनों अपने-अपने धर्मोसे प्यार नहीं करते और ठीक तरहसे उनका पालन नहीं करते तबतक इन दोनोंके बीच पूर्ण एकता होना असम्भव है। यह अभिप्रेत नहीं है कि अपने-अपने धर्मोको त्यागकर हिन्दू मुसलमान और मुसलमान हिन्दू बन जायें।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आपको अपने दलित वर्गो, ढेढ़ो और भंगियोका उत्थान करना है। जबतक आप इन्हें दलित रखेंगे तबतक समाजके उच्च-वर्ग स्वयं भी ढेढ़ और भंगी बने रहेंगे। क्योंकि उन्हें नीचे रखकर आप स्वयं अपनेको उनके नीचे गिराते हैं। मैं आपसे भंगियोंके साथ रोटी-बेटीका व्यवहार करनेके लिए नहीं कहता। मैं तो सिर्फ यही चाहता हूँ कि आप इनके साथ भाइयोंका, मानवोंका-सा व्यवहार करें। जबतक ये लोग दलित रहेंगे तबतक स्वराज्य प्राप्त करना असम्भव है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७–६–१९२१

१२८. भाषण : बम्बईके स्वागत-समारोहमें[1]

[२६ जून, १९२१ के पूर्व]

दूसरे स्थानकी तो मै नही जानता परन्तु यहाँ मै पैसेके लोभसे नही आया हूँ। आपके आमन्त्रणको मैंने तुरन्त स्वीकार कर लिया क्योकि अस्पृश्य भाइयोकी विडम्बनाओसे मै परिचित हूँ। आपके दु खको मै जानता हूँ। इस वर्ष मै हिन्दू धर्मके कलक — अस्पृश्यता — को दूर करनेके लिए जुटा हुआ हूँ। स्वराज्यमे अनन्त शक्ति है, अगर उसमे अस्पृश्यता दूर नही होती तो वह धर्मराज्य — स्वराज्य — नही है। गन्दा, मैला, दुराचारी अथवा चाहे जैसा भी व्यक्ति धर्मके सिद्धान्तसे तो अस्पृश्य नही माना जाता, दयाके सिद्धान्तसे भी कदापि नही। अस्पृश्यसे दूषित होनेके सिद्धान्तको मै हिन्दू धर्मका अग नही मानता। जिसमे सत्य और अहिंसा न हो वह धर्म नही है। उच्च कौम आपको विना-किसी शर्तके स्पृश्य मानने लगे उसके लिए आपका क्या कर्त्तव्य है? किसीने कहा कि आप शुद्धि कीजिए लेकिन आपमे किसी प्रकारकी अशुद्धि हो ही नही सकती। मद्य और मासका सेवन करनेवाले को तो कोई अस्पृश्य नही मानता। फिर भी आपको मद्यमांस आदिका त्याग करना चाहिए। कोई ब्राह्मण अगर मद्यमासका सेवन करता हो तो मै उसके यहाँ न जाऊँ, आपसे भी मै कमसे-कम इतनी स्वच्छताकी अपेक्षा अवश्य करता हूँ। मेरी खातिर ही नही, स्वय अपनी खातिर भी आपको स्वच्छता [के नियमो] का पालन करना चाहिए।

ब्राह्मण चाहे जो करे उससे आपको क्या? आप स्वयं खुशहाल बनें। एकने मुझसे पूछा कि मै आपको असहयोग क्यो नही सिखाता? अब यदि स्वय हम आपसमें अत्याचार करते हो तो हम सरकारको अत्याचारी कैसे कह सकते है? असहयोगका बहाना

१ अन्त्यजों द्वारा आयोजित इस स्वागत-समारोहमें गांधीजीको अभिनन्दन-पत्र भेंट किया गया था।

लेकर कोई ढोग नही रचा जाना चाहिए। मेरे साथी दम्भी हो तो मै उनको भी छोड़ दूँ। आपमे से जबतक कुछ-एक अच्छे व्यक्ति नही हो जाते तबतक आप असहयोग नही कर सकते। लोगो के और आपके बीच मै एलची बना हुआ हूँ। मै एक शुद्ध हिन्दूके रूपमे ही आपसे यह कहता हूँ। गाधी आपको [असहयोगके लिए] तैयार करनेके लिए जब चाहेगा तब चला आयेगा। आप शुद्ध बननेका काम करे। हमें शुद्ध बलिदान देना है। और मै अपना काम करूँगा।

बहनो! मै आपके हाथोमे चरखे और करघे देखना चाहता हूँ। आपको तो सबको ढकना है। भाई शकरलाल दाँतमे दर्द होनेकी वजहसे नही आ सके। हम आये है सो कोई घर जाकर नहानेके लिए नही। कवि दलपतराम डाह्याभाईकी[1] पौत्री जसलक्ष्मी यहाँ आई है। वह आपके लिए मददगार साबित होगी।

[गुजरातीसे]

गुजराती, २६-६-१९२१

१२९. गुजरातमें आत्मत्याग

गुजरातने राष्ट्रके कार्यके लिए कोई बडा आत्मत्याग किया है, सो मै नही जानता। भडौच परिषद्के समय लोगोने जिस आत्मत्यागका परिचय दिया उसे मै गुजरातका आत्मत्याग नही मानता। वह तो गुजरातमे किया गया त्याग है, जब गुजरातमे अनेक स्त्री-पुरुष देश-कार्यके लिए सर्वस्व अर्पण करेगे तभी हम गुजरातके आत्मत्यागकी बात कर सकेंगे।

लेकिन जिन भाइयोने भडौच परिषद्के समय अपना सर्वस्व देनेका निश्चय किया था उन भाइयोका आत्मत्याग गुजरातकी प्रतिज्ञाका पालन करनेमे कितना सहायक हुआ सो तो हम कभी न जान सकेंगे। लेकिन मेरे जैसे श्रद्धालु इतना तो जरूर मानेगे कि यदि गुजरात तीस तारीखको अपनी परीक्षामे उत्तीर्ण हुआ तो उसका मुख्य कारण भड़ौचमे किया गया आत्मत्याग होगा।

चाहे जो भी हो, अगर गुजरात इसी वर्षके अन्दर-अन्दर स्वराज्य प्राप्त करना चाहता हो तो उसे सर्वस्व-त्यागी कार्यकर्त्ताओ — सेवको — की सख्त जरूरत है। हिन्दुस्तानमे हम चाहे किसी ओर दृष्टिपात करे, हम यही देखेगे कि आजतक गुजरातने सब प्रान्तोकी अपेक्षा कमसे-कम त्याग किया है। महाराष्ट्र सबसे ऊपर आता है। बगालके त्यागको मै सनकसे भरा मानता हूँ। बगालियोने सर्वस्व दे देनेसे इनकार नही किया है। पजाबमे भी लोगोने कुछ कम त्याग नही किया। आर्यसमाजकी रचनामे त्यागवृत्ति निहित है। सिखोके त्यागको भी कम नही कहा जा सकता।

लेकिन यह बात हम गुजरातके लिए नही कह सकते। दो नवयुवकोके 'भारत सेवक समाज' में शामिल होनेपर ही गुजरात आश्चर्यचकित हो गया था। सूरतके दो

१. दलपतराम डाह्याभाई त्रिवेदी (१८२०-१८९२); प्रसिद्ध गुजराती कवि।

सज्जन कमाई छोड़कर आश्रम चलाने लगे, तो हमे यह बहुत बडा त्याग जान पडा। पजाबके एक प्रोफेसरसे जब मैंने यह बात कही तब वे हँसे और मुझसे कहने लगे "मैं तो इसे त्याग ही नही मानता। उन्होने कौनसा सर्वस्व अर्पण कर दिया है? वे क्या कष्ट उठाते है? क्या उन्हे इस बातकी फिक्र है कि कल रोटी मिलेगी या नही?"

इस बातको वर्षो बीत गये है। उक्त प्रोफेसरने इसके बाद जेलयात्रा भी की और तब उनके पास फूटी कौड़ी भी न थी।

सर्वस्व-त्याग करनेवाले जब असख्य नवयुवक तैयार होगे तभी गुजरात अपना मस्तक ऊँचा कर सकेगा। तभी गुजरात स्वराज्यमे अपना पूरा योगदान दे सकेगा। प्रत्येक प्रान्तका कर्त्तव्य है कि वह स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए पूर्ण प्रयत्न करे। यदि इस वर्ष स्वराज्य नही मिलता तो यह बात प्रत्येक प्रान्तकी नाक कटनेके समान होगी। कोई प्रान्त दूसरेको दोष नही दे सकता। जो प्रान्त सम्पूर्ण योग्यता प्राप्त कर लेगा वह स्वय स्वराज्य लेगा और दूसरे प्रान्तोको तत्क्षण तैयार करेगा। स्वराज्य लेनेका अर्थ हिन्दुस्तानके अविश्वासको दूर करना और उसमें आत्मश्रद्धा जाग्रत करना है। अपनेको भेड़ माननेवाले सिंहोमे से अगर एकको भी वास्तविक स्थितिका ज्ञान हो जाये तो अन्य लोगोको भी अपने सिंहत्वका ज्ञान होनेमे देर नही लगेगी। एकमे भी स्वराज्यकी शक्ति आई कि खिलाफत और पंजाबका फैसला हुआ ही समझो। इस शक्तिके बारेमे मै किसी और समय लिखनेका विचार रखता हूँ। अभी तो मै इतना ही कहना चाहता हूँ कि असहयोगके लिए आवश्यक शक्ति प्राप्त करनेके लिए अनेक युवको और महिलाओको सम्पूर्ण त्याग करना चाहिए।

सब दे दे तो खाये क्या? भीख माँगकर खाने और सेवा करनेकी अपेक्षा तो सेवाका विचार छोडकर कुटुम्बका पेट भरना ही उचित है। 'भीख' माँगकर सेवा करनी हो तो उपर्युक्त विचार ही उचित है। लेकिन प्रत्येक मजदूर अपनी मजदूरी पानेके लायक है और मैं जिस सेवाका विचार कर रहा हूँ वह सेवा लोगोका नेतृत्व करनेकी नही बल्कि सच्चे अर्थोमें लोगोकी सेवा करनेकी है। सच्चा स्वयसेवक वही है जो वैतनिक सेवककी अपेक्षा अधिक परिश्रमी, अधिक ईमानदार और अधिक शक्ति-सम्पन्न हो, जो अधिक नम्र और अधिक आज्ञाकारी हो। ऐसे स्वयसेवकको सिर्फ पेट भरने योग्य वेतन दिया जाता है। यह भिक्षापर गुजारा करना नही वरन् देशकी सच्ची सेवा है। वह अधिक देता है और कम लेता है। जो अपने पास धन जमा करके देशकी मुफ्त सेवा करनेका दावा करता है वह सर्वस्व प्रदान करनेवाले स्वयसेवकसे कम उतरता है। यदि सामान्य अनुभव इससे उलटा हो तो उसका अर्थ यह है कि सर्वस्व अर्पण करनेवाले ने चोरी की है। तात्पर्य यह कि उसने अपना धन तो दिया लेकिन अपना मन और अपना शरीर नही दिया। इतना ही नही; प्राय सर्वस्व अर्पण करनेका दावा करनेवाला व्यक्ति अधिक लेता है और कम देता है। यदि मैं अपने पाससे एक लाख रुपया देकर देशको लाखो रुपयोके खर्चमें डाल देता हूँ और उसके काममें अपना पूरा समय और मन नही लगाता तो मै अवश्य भिखारी बन जाऊँगा बल्कि मेरी स्थिति भिखारीसे भी दयनीय हो जायेगी। मै ऐसे [अधूरे] आत्मत्यागका

वर्णन नही कर रहा हूँ। मै जिस आत्मत्यागकी माँग कर रहा हूँ उसमे भिखारीपनको अवकाश ही नही है। यह आत्मत्याग छिपानेसे छिप नही सकता और जबतक देशमे ऐसी स्थिति उत्पन्न नही हो जाती तबतक स्वराज्यका विचार करना निरर्थक है। जब कुछ-एक स्त्री-पुरुष सर्वस्व होमनेके लिए तैयार होंगे तभी स्वराज्यकी सेना उठ खडी होगी, तभी उसके लिए सामान्य त्याग करनेवाले निकलेंगे और उनसे स्वराज्यकी शोभा होगी।

यह समय ऐसे त्यागका है। [गुजरात] प्रान्तीय समितिने स्वयसेवकोकी माँग की है। जिनके पास शक्ति नही है, जिन्हे और कोई धन्धा नही सूझता भले ही वे लोग सरकारके पास अर्जी भेजे लेकिन मुझे ऐसे लोगोकी तलाश है जो अपना सर्वस्व अर्पण करे। देश उन्हे जितना दे उतनेमे अपना निर्वाह करे और उसमे गौरव माने। जिन्हे और कुछ नही सूझता, यदि ऐसे लोग स्वराज्यके सेवक बने तो उनके द्वारा हमें धर्मके इस महायुद्धमे विजय मिलनेवाली नही है। इससे मैं उम्मीद करता हूँ कि जिन भाइयोने त्याग किया है उनकी छूत और लोगोको भी लगेगी और मुझे गुजरातमें किये गये त्यागका वर्णन करनेके बदले गुजरातके त्यागका वर्णन करनेका शुभ प्रसग प्राप्त होगा।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २६–६–१९२१

१३०. माधुरी और पुष्पा

माधुरी और पुष्पा दोनो छ. या सात वर्षकी लडकियाँ है। तिलक स्वराज्य-कोषमें दान लेनेके लोभसे मैं एक परिवारमे पहुँच गया।

परिवारके स्नेही स्त्री-पुरुषोसे मैं घिरा हुआ बैठा था। इस बीच माधुरी धीरे-धीरे वहाँ आ पहुँची। मैंने उसे पास बुलाया। दुर्भाग्यसे मुझे कुर्सीपर बिठाया गया था। इस परिवारमे मेज कुर्सीका इस्तेमाल एक सामान्य बात थी। कुर्सीपर बैठा हुआ मैं माधुरीको गोदमे तो कैसे ले सकता था? मैंने उसे अपने निकट खीच लिया और उसके सिरको अपनी गोदमे रख लिया। माधुरी धीमे स्वरमें बोली

"मैंने आपके साथ छल किया है।"

"मुझे तो बडे लोग छलते है, बच्चे कभी नही छलते। तू मेरे साथ कदापि छल नही कर सकती।"

इस तरह मैंने हँसकर उत्तर दिया। मैं माधुरीकी मुखमुद्राको ध्यानसे देख रहा था।

"मैंने सचमुच आपको छला है, मैंने आपको सिर्फ डेढ़ रुपया ही दिया," माधुरी-ने हिम्मत करके उत्तर दिया।

"तब तो मैं सचमुच छला गया। तू तो इतने सारे गहने पहने हुए है और मुझे केवल डेढ़ रुपया ही दिया?"

यह कहकर मैंने माधुरीके नन्हेसे हाथको अपने हाथमे ले लिया। उसकी चूडी मेरे हाथमे नाचने लगी। मैंने कहा:

"अब तो तुझे प्रायश्चित्त करना ही चाहिए। नन्हे बच्चे बिलकुल निर्दोष होते है, वे किसीको छलते नही। प्रायश्चित्त करना अर्थात् पाप धोना, मैल साफ करना। अब तो तुझे मैल अवश्य साफ करना चाहिए।"

"यह मैल अब कैसे धुल सकता है? सच तो यह है कि मैंने आपको छला है।"

"मैल साफ करनेका सहज उपाय है। तू यह तो समझ ही गई है कि तुझे असलमे गहने देने चाहिए थे इसीसे तूने कहा कि तूने मेरे साथ छल किया है। अब तो तू मुझे सारे गहने दे दे तो तेरा पाप धुल जायेगा।"

अभीतक तो माधुरीका मुख चमक रहा था, वह अब कुछ मलिन पड गया। मै समझ गया और मैंने कहा·

"बच्चोंको गहनोसे क्या लेना-देना? हम तो अपने कामके द्वारा ही शोभा पा सकते है? गहने तो खो भी जाते है। बेहतर तो यह है कि उन्हे अच्छे कामके लिए दे दे। तू तो बहुत समझदार लडकी जान पड़ती है। इसके अतिरिक्त तू अपने गुनाह-को भी स्वीकार करती है। तुझे खुशी-खुशी सब गहने दे देने चाहिए। उनसे मै गरीबोको चरखे दूंगा। तेरे जैसे बच्चोको पढाऊँगा। तेरी जैसी अन्य लड़कियोने भी अपने गहने दिये है।" मै रुका।

माधुरीके कानोमे छोटे माणिककी दो लौगे थी। हाथमे सोनेकी दो चूडियाँ और एक काँचकी चूडी थी। वह धीमे स्वरमे बोली.

"मैं यह काँचकी चूडी दूं तो क्या ठीक होगा?"

इस बच्चेको क्या उत्तर दूं? इसे अपने साथ ले जाकर इसे अपनी बेटी बना लूं? लेकिन मेरी तो ऐसी कितनी ही बेटियाँ है। फिलहाल तो मै केवल कृपण बनिया हूँ, लेना ही जानता हूँ, इसलिए मैंने कहा.

"तेरी काँचकी चूडीको भी मै पैसेमे बदल दूंगा, लेकिन मुझे तो तेरे सारे गहने चाहिए। उन्हे देनेमे कौन-सी बडी बात है? एक तो तेरा पाप धुल जायेगा और मुझ जैसेका काम बन जायेगा। तेरे गहने स्वराज्य प्राप्त करनेमे हमारे काम आयेगे। क्या मुझे सब गहने नही देगी?"

"मैं अपनी सोनेकी चूडियाँ तो कतई नही दूंगी। लेकिन क्या आप (लौगोकी और सकेत करते हुए) यह लेगे?"

"यह तो तूने ठीक कहा। लेकिन अगर तू मुझे अपनी चूड़ियाँ भी दे दे तो कितना अच्छा हो?"

माधुरी कुछ मुरझा-सी गई। मैंने उसे चूमा और कहा—"अच्छा ठीक है, मुझे अपनी लौगे ही दे दे।"

माधुरी दौडी गई। एक मिनट बाद वापस आई। लौगे उतारनी शुरू की, इस बीच मै बोला "तूने माँसे अनुमति ले ली है?"

"हाँ, माँने अनुमति दे दी है।"

लौंगें उतारकर मेरे हाथमें धर दीं, एक लौंग गिर गई, माधुरीने ध्यानपूर्वक उसे ढूँढ़कर मुझे दे दिया।

लेकिन मेरा लोभ किसी तरह न जाता था। मेरी नजर चूड़ियोंसे हटती ही न थी। मैं अभीतक इस बच्चीका नाम नहीं जानता था। यह भी नहीं जानता था कि वह किसकी लड़की है। मैंने अब उसका नाम जान लिया और उसके लायक पिताको भी पहचान लिया और बोला:

"ओ माधुरी! इस चूड़ीमें इतना क्या लोभ? तेरी जैसी निर्दोष लड़कीको गहनोंसे क्या काम? क्या तू अपनी चूड़ियाँ भी न देगी?"

माधुरी पिघली। उसने अपने हाथसे ही चूड़ी उतारकर मेरे हाथमें धर दी। मुझे लगा कि मैं जीत गया।

लेकिन जीत तो माधुरीकी ही हुई। इस बालिकाने मेरे मनको हर लिया। मुझे मन-ही-मन उसके माता-पितासे ईर्षा हुई। मैंने परमात्मासे प्रार्थना की कि "हर माता-पिताके ऐसे बच्चे हों।" स्वराज्य प्राप्तिके विषयमें मेरा विश्वास और भी दृढ़ हो गया। मैंने माधुरीसे कहा:

"तूने कमाल ही कर दिया। अब अगर तू दूसरी चूड़ी देगी भी तो नहीं लूँगा। लेकिन तूने इतना जो दिया है सो क्या खुश होकर ही दिया है? तुझे वापस लेना हो तो ले ले।"

ऐसा कह मैंने गहने उसके आगे रख दिये।

"यह तो मैंने आपको खुशी-खुशी दिये हैं। वे मुझे वापस नहीं चाहिए।"

मेरा सवा सेर खून बढ़ गया।

मैं बहनोंके दर्शन करनेके लिए दूसरी कोठरीमें गया। मेरे और माधुरीके संलापको दूसरे बच्चे भी सुन रहे थे।

(२)

पुष्पाने, जो पड़ोसीकी लड़की थी, अपनी चूड़ी उतारकर मेरे हाथमें रख दी।

"तूने माँसे आज्ञा ले ली है?"

"हाँ जी, मुझे माँने आज्ञा दी इसीसे मैं यह चूड़ी दे रही हूँ।"

"इन सब गहनोंको लेनेकी मेरी जो शर्त है, क्या तू उसे जानती है? जो लड़कियाँ मुझे गहने देंगी वे जबतक स्वराज्य नहीं मिल जाता तबतक अपने पितासे वैसे ही नये गहनोंकी माँग नहीं कर सकेंगी। उसी तरहके और गहने हों और अगर पहननेका मन करे तो पहन सकती हैं। लेकिन फिलहाल नये नहीं बनवाये जा सकते।"

"मेरे पास ऐसी दूसरी चूड़ी है। मैं नई नहीं बनवाऊँगी। मैंने खुशीके साथ अपनी चूड़ी दी है।"

माधुरी देख रही थी। माँके साथ कुछ बात भी कर रही थी। उसने तो उपर्युक्त काँचकी और सोनेकी चूड़ियाँ भी उतारकर मेरे हाथमें धर दीं!

- "यह काँचकी तो ले लेता हूँ। लेकिन मैंने कहा था कि अगर तू दे तो भी मै सोनेकी चूडी नही लूँगा। इसलिए यह तू मुझे मत दे। तूने तो, वहन, वहुत दिया है।"

"मै तो आपको दे चुकी हूँ। मुझे यह नही चाहिए। मैंने आपको खुशीसे दी है; इसे आप रखे।"

माधुरीने मुझे पराजित कर दिया। मैंने अपना वचन भग किया। उपर्युक्त चूडी मेरे हाथमे देकर, खाली हाथ और खाली कानवाली माधुरी मुझे तो और भी ज्यादा सुन्दर लगी। मैंने उसे अपने हृदयसे लगा लिया।

मै हर्षसे पुलकित हो उठा, मैंने ईश्वरको धन्यवाद दिया।

इसके बाद माधुरी 'काम' मे लग गई। उसने दूसरी लडकियोके हाथोको खाली कराना शुरू कर दिया। उसमे उसे अतिशय सफलता मिली।

लेकिन क्या उसकी सफलता-असफलतापर ईश्वर उसका मूल्याकन करनेवाला है? उसका वचन तो यह है कि "तू कर्म कर, फल तो मेरे ही हाथमे रहने दे।"

माधुरीने तो अपने 'कर्म' को भली-भाँति निभाया। ससारको दिखानेके लिए नही बल्कि अपने छोटेसे शरीरमे वास करनेवाली विशाल आत्माको प्रसन्न रखनेके लिए।

माधुरी और पुष्पाको खादी पहनने और चरखा चलानेकी सलाह दे और परिवारकी स्त्रियोसे खादी और चरखेके सम्बन्धमे वचन ले, माधुरी और पुष्पाकी प्रशसा करता हुआ मै वहाँसे विदा हुआ।

ऐसे बच्चोके निर्दोष यज्ञसे भी यदि हमे इसी वर्ष स्वराज्य नही मिलता तो हमारे तथाकथित वुजुर्गोके पापका पुज कितना विशाल होगा?

भगवन्! निर्दोष माधुरी और पुष्पा-जैसे बच्चोको इस भूमिपर सदैव भेजते रहो। हम सब स्त्री-पुरुष ऐसे बच्चोकी पवित्र आत्माको प्रणाम करे और उनसे कुछ सीखे।

माधुरी और अपने बीच हुए इस सवादको मैंने तीस घटे बाद लिखा है और जहाँतक मुझे याद पड़ता है मैंने उसे अक्षरश यहाँ प्रस्तुत किया है। भाषा भी बच्चोकी होनेके कारण मैंने उसे बिना किसी आडम्बरके लिखा है और मै देख रहा था कि बच्चोकी भाषा अत्यन्त शुद्ध थी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६-६-१९२१

१३१. इन चार दिनोंमें हमारा कर्त्तव्य

३० जून, बृहस्पतिवार समीप आ रहा है। 'नवजीवन' पाठकोंके हाथमें शनिवारको आयेगा। बृहस्पतिवारको गुजरातकी तथा हिन्दुस्तानकी प्रतिज्ञा पूरी होगी।

१. लोकमान्य तिलक महाराजकी स्मृतिमें स्वराज्यके लिए गुजरातको दस लाख रुपया इकट्ठा करना चाहिए।

२. कांग्रेसमें तीन लाख सदस्योंको भरती करना चाहिए।

३. एक लाख चरखोंका इन्तजाम करना चाहिए।

हम अगर निश्चय करें तो चार दिनमें बाकी बचे सारे कामको पूरा कर सकते हैं।

'नवजीवन' का प्रत्येक पाठक, चन्दा उगाहनेके लिए किसीकी राह देखे बिना, समीपके किसी निश्चित स्थानपर अपनी सामर्थ्य-भर पैसा दे और रसीद ले आये।

प्रत्येक पाठक अपने साथीसे चन्दा देनेका आग्रह करे।

प्रत्येक पाठकको, अगर उसकी आयु २१ वर्षकी हो चुकी हो और वह अभीतक कांग्रेसका सदस्य न बना हो तो, तनिक भी विलम्ब किये बिना सदस्य बन जाना चाहिए तथा दूसरोंसे वैसा करनेके लिए कहना चाहिए।

प्रत्येक पाठक, अगर अभी तक चरखा न खरीदा हो तो, खरीद ले और कातना सीख ले।

ये चार दिन अमूल्य हैं, वे फिर नहीं आनेवाले, ऐसा समझकर प्रत्येक पाठक जो समय बचे वह सारा समय सार्वजनिक कार्यमें ही दे।

प्रत्येक पाठक राष्ट्रीय कार्यको अपना कार्य समझ उसे तेजीके साथ करे।

कोई यह न समझ ले कि अब चार दिनोंमें क्या हो सकता है?

चार दिनोंमें हजारों व्यक्ति जन्म लेंगे और हजारों मौतकी गोदमें सो जायेंगे।

एक ही रातमें रामचन्द्र-जैसेका भविष्य बदल गया, एक ही दिनमें हरिश्चन्द्रने सत्यकी खातिर फकीरी ली, एक ही दिनमें युधिष्ठिर राज्य हार गये। मनुष्य जीवन — लोकजीवन — में एक दिनका मूल्य कम नहीं होता तो फिर चार दिनोंका तो कहना ही क्या? यदि गुजरात अपने पराक्रमसे स्वराज्य — धर्मराज्य — प्राप्त करना चाहता हो तो गुजरातको इस प्रथम परीक्षामें पूरे अंक प्राप्त करने चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६–६–१९२१

१३२. काठियावाड़ियोंसे

जैसे-जैसे जूनकी अन्तिम तारीख समीप आती जाती है वैसे-वैसे मेरी दृष्टि काठिया-वाड़की ओर जा रही है। अभी तो मैं केवल काठियावाड़की पैसे-सम्बन्धी स्थितिके बारेमे ही लिखना चाहता हूँ। अन्य विषयोके सम्बन्धमे बाद मे लिखनेकी उम्मीद करता हूँ।

स्वराज्यका कार्य समस्त भारतवर्षका कार्य है। इसमे देशी राज्योका स्वार्थ भी कोई कम नही है। देशी राज्याधिकारी जानते है कि स्वराज्य आन्दोलनसे उनका बल बढ़ गया है। देशी राज्योकी रैयत जानती है कि उसका बल बढ गया है।

यह आन्दोलन राजा, सत्ता अथवा धनके नाश करनेका नही बल्कि इन सबको स्वच्छ करनेका आन्दोलन है। जिस अशतक पाखण्ड घटेगा उस हदतक स्वराज्यकी नलीका पारा चढ़ेगा। यह प्रवृत्ति पाखण्ड, अत्याचार और अधर्मका नाश करनेवाली है।

इस प्रकारकी इस प्रवृत्तिमे काठियावाडके राजा और प्रजा क्या योगदान देगे? अभी तो कुछ नही दिया है। काठियावाड चाहे तो करोड रुपया होनेमे जो कमी रह गई है उसे पूरा कर दे। काठियावाडके साहसी लोग व्यापारकी खातिर अनेक स्थानो-पर फैल गये हैं। वे जहाँ है वहाँ पैसा दे रहे है। मेरी इच्छा है कि वे और भी अधिक दें। तथापि उनका यह योगदान एक भारतीयके रूपमे है। लेकिन काठियावाडी गुजरातीके रूपमे वे काठियावाड़से क्या भेजेगे? गुजरातके दस लाख चन्देमे क्या देगे? अथवा हिम्मत करके क्या वे गुजरातके चन्देको दूना नही कर सकते?

पोरबन्दर, राणावाव, कुतियाणा, बाँटवा, जेतपुर तथा धोराजीके मेमन अगर चाहे तो अपने बीचमे से ही करोड रुपया इकट्ठा कर सकते है। जामनगरका एक ही मेमन चाहे तो साठ लाखकी कमी पूरी कर सकता है।

काठियावाडका एक ही राजा चरखेको धर्मको समझ ले तो सिर्फ उसके निमित ही स्वराज्य-कोषमे करोड़ रुपया दे सकता है।

लेकिन मै जानता हूँ कि मुझे ऐसी आशा नही रखनी चाहिए। राजाओमे अथवा मेमनोमे ऐसी श्रद्धा नही उपजी है। इस बारका चन्दा सबकी श्रद्धाका माप-दण्ड है।

अपने रोगके उपचारके लिए हम कितना पैसा देते है? हिन्दुस्तानके रोगको अपना माननेवाले हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई अथवा यहूदी कितने है? कितने राजा और रक है? हिन्दुस्तानके भयकर क्षय रोगके लिए सब कितना देनेको तैयार है? यह हम सबकी कसौटी हो रही है। तीस जूनतक प्रत्येक भारतवासीको उत्तर देना है। प्रत्येक काठियावाडीको अपने कर्त्तव्यका पालन करना है।

हिन्दुस्तानको क्षय हो गया है। जो लोग यह नही मानते और जो यह समझते है कि चालू प्रवृत्तिसे इस क्षयका आशिक रूपसे भी निवारण होनेवाला नही है, वे लोग नि सन्देह इस कोषमें दान न दे। लेकिन ऐसे अश्रद्धालु काठियावाड़ी मैने कम ही देखे है। इसलिए मुझे काठियावाड़से बड़ी आशा है।

वढवान और वीरमगाँवके लोगोंने मेरी उम्मीदोंको बढा दिया है। झालावाड अपनी गरीबी और कंजूसीके लिए कुख्यात है, इसी झालावाडने मुझे आश्चर्यचकित कर दिया है। अगर अकेला झालावाड ही २५,००० रुपयेसे अधिक दे सके तो हालार, सोरठ और गोहिलवाड़ क्या देंगे? भावनगर क्या देगा? भावनगर तो इस समय काठियावाडका सबसे बडा बन्दरगाह है। उसका व्यापार सबसे बढा-चढा है। वहाँकी प्रजा अपेक्षाकृत सुखी है। उसका हिस्सा कहाँ है?

हाँ, झालावाडकी बहनोंसे मुझे कुछ निराशा अवश्य हुई। मुझे बहनें बहुत ज्यादा दिखाई दीं। लेकिन खेदकी बात है कि समस्त भारतके मेरे अनुभवोंमें वढवानकी दो सभाओंमें उपस्थित बहनोंने मुझे कमसे-कम चन्दा दिया। क्या यह सम्भव है कि इन बहनोंने स्वराज्य — धर्मराज्य — का नाम ही न सुना हो? अथवा इसमें पुरुष-वर्गका दोष था? उन्होंने इस धर्मकार्यके लिए बहनोंको तनिक भी तैयार नहीं किया? कुछ भी हो, काठियावाडकी बहनोंसे मुझे तो बहुत आशा है। उन्हें चरखा पसन्द आया है। सैकडों गरीब बहनें उससे अपनी आजीविका अर्जित कर रही हैं और भारतमाताकी सेवा कर रही हैं। क्या अमीर बहनें अपने आभूषण अथवा पैसा नहीं देंगी?

काठियावाडी मुझे बिलकुल अपना मानते हैं। उस प्रेमकी अब कसौटी होनेवाली है। यदि काठियावाडका मेरे प्रति विशेष प्रेम होनेके बावजूद मैं काठियावाडको न समझा सकूँ तो अन्य भारतवासियोंको कैसे समझा सकता हूँ? काठियावाड यदि मेरे सन्देशको समझ गया हो तो मुझे उम्मीद है कि काठियावाड़के चन्देकी रकम सबसे अधिक होगी।

ईश्वर हमारी यह आशा पूरी करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६–६–१९२१

१३३. भाषण: बम्बईकी सभामें[1]

२६ जून, १९२१

महात्मा गांधीने कहा, मैं सान्ता क्रूजके लोगोंका बड़ा आभारी हूँ कि उन्होंने ३०,००० रुपयेसे भी अधिक एकत्र किये; हालाँकि आपको सिर्फ १५,००० रुपये ही एकत्र करने थे। मुझे सान्ता क्रूजपर गर्व है, क्योंकि मैं पहले अक्सर यहाँ ठहरा करता था[2] और मुझे खुशी है कि सान्ता क्रूजके लोग मुझे अभी भूले नहीं हैं। बम्बई और शेष भारतके लोगोंने मेरे प्रति जितना ज्यादा प्रेम और विश्वास दिखाया है, लोगोंके प्रति मेरा उत्तरदायित्व भी उतना ज्यादा बढ़ गया है, मेरे कन्धोंपर उतना ही बोझ आ पड़ा है।

१. इस सभाका आयोजन तिलक स्वराज्य-कोषके निमित्त गांधीजीको एक थैली भेंट करनेके लिए किया गया था।

२. यह बात १९०१-२ की है, जब गांधीजी बम्बईमें वकालत कर रहे थे।

क्या जाने वर्षके अन्ततक इस सबका क्या परिणाम होता है? आपके प्रयत्नोंका चाहे जो भी परिणाम निकले, मुझे विश्वास है कि आपके ये प्रयत्न कभी निष्फल नहीं जायेंगे और आपको इससे बहुत ज्यादा लाभ होगा। तथापि मेरा अन्तर्तम मुझे इस बातका पूरा यकीन दिलाता है कि आपको इस वर्षके अन्ततक स्वराज्य मिल जायेगा। सान्ता क्रूजकी स्त्रियों और बच्चोंको यह नहीं समझना चाहिए कि सिर्फ उन्होंने ही इस महान् उद्देश्यके लिए बहुत काम किया है; आपको याद रखना चाहिए कि समस्त भारतके बच्चों और स्त्रियोंने भी यही किया है। समस्त भारतके पुरुषो, स्त्रियों और बच्चोने तथा गरीब लोगोने भी स्वराज्य-कोषमें अपना हिस्सा दिया है। मेरे ख्यालसे, गरीबोने जो-कुछ दिया है उसकी तुलनामें, अमीर लोगोने अपना पूरा हिस्सा नहीं दिया। तुलनात्मक दृष्टिसे, गरीबोंने अमीरोसे ज्यादा दिया है और उन्होंने देशके प्रति अपने कर्त्तव्यको निभाया है। बोहरों, पारसियो और ईसाइयोंने भी ऐसा ही किया है। पारसी समाजके प्रति मेरे मनमें कोई शंका नही रही है। उनकी आबादी तथा उन्होंने जो दिया है उसको देखते हुए मै कहूँगा कि उन्होने अपने हिस्सेसे — इस देशके अन्य सभी समुदायोंके लोगोंसे — ज्यादा काम किया है। और आज, इस समय भी मुझे विश्वास है कि अन्य लोगोंकी अपेक्षा पारसियोसे अधिक पैसा मिलेगा। अगर मुझे आज नहीं मिला तो कल अवश्य मिलेगा। मुझे यकीन है कि पारसी हमारे साथ हैं, हमारे विरुद्ध नहीं; और वे अपने-आपको भारतके अन्य समुदायोसे अलहदा नहीं रखेंगे।

हमें स्वराज्य अन्य लोग नहीं देंगे, इसे तो हमें स्वयं ही प्राप्त करना होगा। मै अपने मित्रोंसे कहूँगा कि जबतक वे खिलाफतके प्रश्नका हल नहीं ढूंढ़ लेते और पंजाबमें किये गये अत्याचारोंके विरुद्ध न्याय प्राप्त नहीं कर लेते तबतक वे स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते। ये दोनों बातें स्वराज्यसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इन्हे हमें अपने कार्यक्रममें सबसे प्रमुख स्थान देना है। हमारे शासक हमें और चाहे जो भी रियायतें दें, हम उनसे कभी सन्तुष्ट नहीं होंगे। ये दो चीजें हमारे समाज-तन्त्रमें जहर-के समान हैं और हमें इस जहरको निकाल बाहर करना है। जबतक लोगोंको यह महसूस न हो जाये कि उन्हें स्वराज्य मिल गया है तबतक यह कैसे कहा जा सकता है कि उन्होंने उसे पा लिया है? जब आपमें से अमीर-गरीब, ऊँच-नीच सभी लोग अपने भीतर स्वराज्यका अनुभव करने लगेंगे तब निश्चय ही स्वराज्य मिल जायेगा। मैं अभी आपको स्वराज्यकी कोई परिभाषा नहीं दूंगा। लेकिन अगर अक्तूबर अथवा दिसम्बरके अन्ततक सारा भारत यह कहेगा कि उसे कुछ भी नहीं मिला है तो मैं भी उसके साथ यही कहूँगा। जिस चीजका एहसास अथवा अनुभव आप खुद नहीं कर सकते, जिसे आप खुद पहचान नहीं सकते उसका अनुभव या एहसास आपको मै नहीं करवा सकता और न उसे पहचानना ही सिखा सकता हूँ। आप यह न सोचें कि चूंकि आप लोगोंने एक करोड़ रुपया इकट्ठा कर लिया है इसलिए स्वराज्य अब आपके हाथोंमें ही है। यह

तो हमारे युद्धका साधन-मात्र है और इस बातका सूचक है कि लोग इस वर्षके अन्ततक स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं।

मैं नहीं समझता कि सान्ता क्रूजके निवासियोंने जो-कुछ दिया है, वह उनकी शक्तिसे बाहर था। जब मैंने एक करोड़ रुपया इकट्ठा करनेका कार्य हाथमें लिया था तब मुझे बम्बईपर बहुत भरोसा था। मुझे विश्वास था कि अगर देशके अन्य भागोंके लोग अपना कर्त्तव्य न भी निभा पायें तो बम्बईके लोग तो मुझे वह रकम दे ही देंगे। मैं नहीं समझता कि सान्ता क्रूजके स्त्रियों और बच्चोंने अपना उचित हिस्सा दे दिया है। आपको इन चीजोंके बारेमें बनियेकी भावनासे नहीं सोचना चाहिए हालाँकि मैं स्वयं बनिया हूँ। (हँसी) घरोंमें स्त्रियोकी बहुत चलती है और वे बिना-किसी विघ्न-बाधाके जितना धन देना चाहें, दे सकती हैं। मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि क्या आपने अपनी सारी सम्पत्तिका ढाई प्रतिशत दिया है, अगर आप चाहतीं तो मुझे निश्चय ही साठ लाख बड़ी आसानीसे दे सकती थीं। अगले चार दिनोंमें आपको इस घाटेको पूरा करना है, आपको इन बातोंके सम्बन्धमें बनियेवाली भावनासे नहीं सोचना चाहिए; आपको देशके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करना चाहिए। श्री जे० के० मेहताने मुझे, स्पष्ट ही, अभिमानपूर्वक बताया कि सान्ता क्रूजमें चालीस चरखे चलते हैं, जब कि मैं यहाँ चार सौ से भी ज्यादा स्त्रियोंको देख रहा हूँ और मुझे आश्चर्य होता है कि ये सब भी चरखा क्यों नहीं चलातीं।

इसके बाद श्री गांधी भारत-भूमिसे गरीबीको दूर करनेके लिए चरखेके इस्तेमाल-के सम्बन्धमें कुछ विस्तारसे बोले। उन्होंने कहा कि गरीब और अमीर, दोनों ही वर्गोंकी स्त्रियोंको चरखा चलाना चाहिए और मैं उन स्त्रियोंका आशीर्वाद पाना चाहता हूँ जो अपने हाथके कते सूतसे बुना खद्दर पहनती हैं। मुझे विश्वास है कि मैं जिस उद्देश्यको अपने सामने रखकर चला हूँ, उस उद्देश्यको उनके आशीर्वादसे अवश्य पूरा करूँगा। स्वराज्यके लिए, जिसे सब प्राप्त करना चाहते हैं, तीन महीने बहुत ज्यादा हैं — यह अवधि लम्बी है। हम समस्त भारतकी मनोवृत्तिको पूर्णतया परिवर्तित करके स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं। आप लोगोंने जो-कुछ किया उतनेसे ही सन्तुष्ट होकर न बैठ जाये बल्कि मुझे और अधिक पैसा देनेके लिए आपसे जितना बन पड़े, कीजिए। बम्बईका यह कर्त्तव्य है कि वह मुझे ज्यादा धन दे, क्योंकि बम्बईके रास्ते ही सारे भारतमें, प्रत्येक शहर और गाँवमें, विदेशी कपड़े पहुँचते हैं। मैं चाहता हूँ कि बम्बई साठ लाख रुपयेकी इस कमीको पूरा करके अपने इस पापका प्रायश्चित्त करे। आप जानते हैं कि जहाँ सत्य है वहाँ विजय है।

सान्ता क्रूजके लोगोंकी इस शिकायतके बारेमें कि वे अपनी समितिको बम्बई प्रान्तीय समितिके साथ मिलाना चाहते हैं, श्री गांधीने कहा कि अगर आप बम्बईके साथ मिलना चाहते हैं तो आपको इससे कोई भी अलग नहीं रख सकता। अगर आप ऐसा चाहते हैं तो आपने जो पैसा इकट्ठा किया है वह या तो महाराष्ट्र समितिको

अथवा बम्बई समितिको चला जायेगा। बम्बई समितिके कोषाध्यक्ष सर्वश्री तैरसी और मोतीवाला हैं। इन कोषाध्यक्षोंको इस रकममें से एक पाई भी खर्च करनेका अधिकार नहीं है। समितिके मन्त्री सर्वश्री उमर सोबानी, बैंकर और डा० वेलकर हैं और लोग इनपर भरोसा कर सकते हैं कि ये एक पाई भी व्यर्थ खर्च नहीं करेंगे। आप लोग मुझमें ही विश्वास करके भूल करते हैं, क्योंकि समस्त भारतमें एकत्र की गई राशियोंकी देख-भाल करना मेरे लिए असम्भव है। कोषकी व्यवस्था अच्छे लोगोके हाथोमें देनेके लिए मुझसे जो-कुछ हो सकता था, मैंने कर दिया है। ऐसे लोगोंकी अब कमी नहीं है; क्योंकि भारतका वातावरण काफी हदतक पवित्र हो गया है। मैं आपको यकीन दिला सकता हूँ कि इस कोषकी व्यवस्था करनेवाले अधिकारियोंमें से एक भी अधिकारी अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताके लिए इस पैसेका उपयोग नहीं करेगा। मुझे इन सबपर पूरा-पूरा भरोसा है। मुझे बम्बई समितिके सदस्योंके नाम मालूम नहीं हैं, लेकिन मैं कोषाध्यक्षों और मन्त्रियोंको जानता हूँ और उनपर पूर्णतया विश्वास किया जा सकता है। मैंने आपसे अपना पैसा श्रीमती नायडूको देनेके लिए नहीं कहा, क्योंकि वे हिसाबमें चुस्त नहीं हैं; वे आपको स्वराज्य-कोषमें चन्दा देनेके लिए न सिर्फ फुसला सकती हैं बल्कि अपनी मीठी आवाजमें धमकी भी दे सकती हैं। (हँसी) इसलिए आप अपना पैसा पूरे विश्वासके साथ दे सकते हैं। जहाँतक उस रकमके उपयोगका सवाल है, वह नये स्कूल और कालेज स्थापित करने तथा चरखेका प्रचार करनेके लिए खर्च की जायेगी। समितिका उद्देश्य सिर्फ ब्याजपर ही गुजारा करना नहीं है। वह तो सारी पूंजीको भारतके पुनरुद्धारके कार्यमें खर्च करना चाहती है।

वैष्णवों और श्रावकोंको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा, जबतक आप दलित-वर्गके लोगोंके साथ भाइयोंका-सा व्यवहार नहीं करते तबतक आपको स्वराज्य नहीं मिलेगा। जबतक एक भी व्यक्ति दूसरे व्यक्तिके साथ उपेक्षा और घृणाका व्यवहार करेगा तबतक आपको स्वराज्य नहीं मिल सकता, क्योंकि तबतक आप इसके योग्य ही नहीं होंगे। मैं हिन्दुओं — श्रावकों और वैष्णवों — से अनुरोध करता हूँ कि वे अपने बीचसे अस्पृश्यताको जड़मूलसे उखाड़ फेंकें। अस्पृश्यताकी भावना शैतानकी भावना है। जिस तरह आप इस शैतानी सरकारसे छुटकारा पाना चाहते हैं उसी तरह आपको अपने बीच प्रचलित इस शैतानी प्रथासे भी छुटकारा पानेके लिए तैयार हो जाना चाहिए। आपके इन गरीब भाइयोंको कुएँसे पानी भरनेकी इजाजत नहीं है, वे बीमार हों तो उनके लिए अस्पतालोंमें गुंजाइश नही है — इस वस्तुस्थितिके बारेमें आप क्या कह सकते हैं? जबतक आपके मार्गमें इन गरीबोंको इस दलित अवस्थामें रखनेवाली अस्पृश्यताकी नैतिक बाधा मौजूद है तबतक आप कैसे कह सकते हैं कि आप स्वराज्यके काबिल हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७–६–१९२१

१३४. तार: मदनमोहन मालवीयको

बम्बई
२८ जून, १९२१

पण्डित मदनमोहन मालवीय
शिमला

सरकारसे क्षमा[1] माँगनेका मशा तो था ही नही। यदि होता तो मै स्पष्टत वैसा कहता। भेटका (दोनो पक्षो द्वारा) स्वीकृत विवरण प्रकाशित करने या गोपनीयतासे मुझे बरी किये जानेके लिए मैने पिछले सप्ताह वाइसरायको पत्र लिखा था।

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१३५. टिप्पणियाँ

अधिकारी तथा कर्मचारी

वाइसराय द्वारा अहमदिया जमातको दिये गये उत्तरसे यह स्पष्ट है कि वे नौकरशाहीके हाथमे खेल गये है। नौकरशाही बहुत चालाक, सगठित तथा पूर्णत सिद्धान्तहीन होती है। उन्होने अधिकारियो तथा कर्मचारियोका जिस तरह बचाव किया है, उससे जातीय समानताके अर्थका पता चल जाता है। यूरोपीय लोग भारतीयोपर नि शक होकर जुल्म करते है और करते रहे, इसमे वाइसरायको कोई असमानता नजर नही आती। मुझे पजाबके एक मजिस्ट्रेट द्वारा दिये गये एक विलक्षण फैसलेकी याद आ रही है। उसने एक आयरिश सैनिक द्वारा एक निरीह भारतीय महिलाके साथ छेडखानी किये जानेके मामलेमे अपनी कल्पना-बुद्धिका सहारा लेकर कुछ ऐसे कारण खोज निकाले जिनसे अपराध अपेक्षाकृत कम लगने लगे और फिर उसने उसपर केवल पचास रुपया जुर्माना करके यह समझ लिया कि न्यायकी माँग पूरी हो गई।

परमश्रेष्ठ दैनिक पत्रोको पढनेका कष्ट नही उठाते, वे यूरोपीयो द्वारा भारतीयोको अपमानित किये जानेके समाचारोसे भरे रहते है। वे इस तथ्यसे अनभिज्ञ मालूम होते है कि ब्रिटिश अधिकारी रेलमे अपने डिब्बेमे भारतीय न्यायाधीशो-तक की उपस्थिति गवारा नही करते। वाइसराय कहते है, "मुझे पूरा विश्वास है कि इस कथनमे जरा भी सत्यता नही है कि ब्रिटिश अधिकारी जिन भारतीयोके सम्पर्कमे आते

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १५-६-१९२१ और २९-६-१९२१।

है, उन्हे जातीय बड़प्पन जताना चाहते है।" मै लॉर्ड रीडिंगको यह बता देना चाहता हूँ कि उनका यह कथन औसत भारतीयके प्रतिदिनके अनुभवसे इतना भिन्न है कि इससे लोगोके मनमे उनकी निर्णयबुद्धि तथा उनके उद्देश्यकी ईमानदारी-तक के प्रति सन्देह उत्पन्न हो जाना अवश्यम्भावी है। वे अपने कर्मचारियो तथा अधिकारियोको आचरणके जो प्रमाणपत्र देगे, उनमे भी लोगोको यही लगेगा कि वे जान-बूझकर सत्यकी ओरसे आँखे फेर रहे है और न्याय नही करना चाहते। लोग इस बातमे शककी गुजाइश भी नही मानेगे और यही समझेंगे, जैसा कि मै समझता हूँ, कि वाइसराय स्वेच्छासे अपनी आँखें बन्द नही किये है बल्कि उन्हे सिवा उन चीजोके, जो नौकरशाही उन्हे दिखानेको तैयार है, और कोई चीज देखने ही नही दी जाती।

पाँच सौवी मंजिलसे

तथ्य यह है कि किसी भी वाइसरायके लिए सत्यको देख पाना असम्भव है, क्योकि सालमे सात महीने वह पहाड़की चोटियोपर रहता है, और जब वह मैदानमे रहता है तब भी पूर्णत अलग-सा रहता है। जरा बम्बईके एक ऐसे व्यापारीकी कल्पना कीजिए जो सबसे ऊपरवाली मजिलसे व्यवसाय-सचालन करता है, और जो अपने क्लर्कों तथा सेल्समैनोसे केवल लिफ्टो एव फोनोके जरिये उनसे सम्बन्ध रखता है। बम्बईके लोग इस स्थितिसे सन्तुष्ट नही है, हालाँकि वहाँ सबसे ऊपर और सबसे नीचेकी मजिलोके बीच कमसे-कम अनेक मजिलोकी ऐसी शृखला तो है, जिनमे लोग रहते हैं। पर शिमलेमे जो एक बड़ा व्यापार-भवन है उसके तथा मैदानमे रहनेवाले कराहते हुए करोडो लोगोके बीच तो ठोस निर्जीव चट्टान है, और उन अशक्त लोगोका चीत्कार भी, जब वह मैदानसे उठकर पहाड़की चोटीतक पहुँचता है, तो शून्यमे विलीन हो जाता है। राजकुमार सिद्धार्थको दुनियासे इतना अलग रखा गया कि उन्हे मालूम ही नही हो पाया कि दु ख, अभाव तथा मृत्यु क्या चीजे है। वे एक ईमानदार नवयुवक थे। पर यदि एक घटना न घटी होती तो ससारको उनका नाम भी मालूम न होने पाता। वे अपनी जनतासे अधिक दूर नही रहते थे, और उनका जीवन भी वैसा ही था जैसा उनके पिताकी प्रजाका। सिद्धार्थ जनतासे मुश्किलसे तीस फुटकी ऊँचाईपर रहते थे, जब कि वाइसराय साढे सात हजार फुटकी ऊँचाईपर[1] रहते है। फिर वाइसराय जनताकी आशाओ तथा आशकाओको नही समझ पाते इसमे उनका दोष नही है। उन्होने यदि स्वेच्छासे अपनेको जनतासे विच्छिन्न रखा हो तो बात अलग है। जबतक वे शारीरिक एव मानसिक रूपसे शिमला-वास करते रहेगे तबतक उन्हे सत्यसे अनभिज्ञ रखा जायेगा जैसे कि सिद्धार्थको रखा गया था। पर एक घटना तो उनकी भी आँखोके सामने उपस्थित है, जैसी उस सुप्रसिद्ध युवक राजकुमारके लिए थी जिसकी विश्व आज बुद्धके रूपमे पूजा करता है। वह घटना है असहयोग। और यदि लॉर्ड रीडिंगकी आँखे तथा कान खुले है तो वे शीघ्र ही सत्यको देख-सुन सकते है।

१ तात्पर्य समुद्रकी सतहसे शिमलेकी ऊँचाईसे है।

सावरकर बन्धु

'कैपिटल' के 'डिचर' ने इन बहादुर भाइयोपर कीचड उछाला है। उनमे से एक-पर उसने यह आरोप लगाया है कि उन्होने कारावास-कालमे बेतारके तारका दुरुपयोग किया और शत्रुके साथ मिलकर षड्यन्त्र रचा। उसने सारी बातका ऐसे विस्तारके साथ वर्णन किया है मानो अधिकारियोने उसे उस अशको लिखनेके लिए विशेषरूप से प्रेरित किया हो। यदि आरोप सही है तो सरकारको चाहिए कि वह तथ्योको प्रकाशित करे। वह जिस रूपमे पेश किया गया है उससे जान पड़ता है मानो आरोप सच्चा है और अवश्य ही इससे जनताकी निगाहमे दोनों बन्धुओकी प्रतिष्ठाकी हानि हुई होगी। मै समझता हूँ कि वे असहयोगी नही हैं। उनका दावा है कि वे बिलकुल निर्दोष हैं तथा उनके पास सम्बन्धित समाचारपत्रके विरुद्ध कारवाई करनेका स्पष्ट आधार भी है। बहरहाल जो भी हो, डा० सावरकरने मुझे सूचित किया है कि ऐसी सजाओमें आम तौरसे जितने दिनोकी माफी दी जाती है, अगर उन्हे भी गिना जाये तो उन दोनो भाइयोमे से श्री गणेश सावरकर तो चौदह साल दो मासकी सजा भुगत चुके हैं; अत कानूनन उन्हे रिहाईका अधिकार प्राप्त है। भारतीय दण्ड सहिताका खण्ड ५५ इस प्रकार है.

> ऐसे हर मामलेमें जिसमें आजीवन कालेपानीकी सजा दी जाती है, भारत सरकार अथवा उस स्थानकी सरकार जिसकी सीमामें उक्त दण्ड दिया गया हो, दोनोमें से हर तरहके अभियुक्तकी सहमतिके बिना उसकी सजा घटाकर चौदह वर्ष कर सकती है।

इस धाराके अन्तर्गत यह स्पष्ट है कि श्री गणेश दामोदर सावरकरको दो मास पूर्व ही रिहा हो जाना चाहिए था। चूंकि दोनो भाई अडमानसे हटा दिये गये हैं, अत. जिस खण्डको मैंने उद्धृत किया है वह उनके पक्षमे लागू किया जाना चाहिए, और उन्हे चौदह सालसे अधिक समयतक बन्दी नही रखा जाना चाहिए। सजामें से जितनी अवधि माफ की जा चुकी है उसे चौदह सालमे से घटना चाहिए। इस तरह-का उदाहरण, जो एक स्नेही भाईकी लगन तथा परिश्रमके कारण प्रकाशमे आया है, अपने ढगका अकेला नही है। ससारको यह कभी विदित ही नही हो पायेगा कि इस प्रकार कानूनके नामपर कितने गैरकानूनी काम किये गये है। मेरा मन यह स्वीकार करनेको नही होता कि श्री सावरकरको जान-बूझकर कैदमें रखा जा रहा है और इसके पीछे दुष्टताका भाव है। किन्तु पीडित व्यक्तिको तो इससे कोई सान्त्वना नही मिल सकती।

स्वतन्त्रताका प्रवेश-द्वार

अभीतक और तो और प्रगतिशील-वर्गोमें भी ऐसे लोग है जो भारतकी स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिए जेल जानेकी उपयोगितापर सन्देह करते हैं। उनका खयाल है कि जेल चले जानेसे जनता वीर पुरुषोकी सेवाओसे वचित हो जाती है। यह तो वैसा ही है जैसे यह कहना कि सबसे बहादुर सैनिकोको कभी कोई जोखिम उठानी ही नही चाहिए।

क्योंकि इससे जिस उद्देश्यका वे पृष्ठपोषण करते हैं, उसका नेतृत्व करनेवालों के अभाव-का खतरा पैदा हो जायेगा। ऐसे समयवादी यह भूल जाते हैं कि लोकमान्यकी महान् लोकप्रियता तथा प्रभावका कारण उनका जेल जाकर सजा भुगतना ही था। सूलीपर मृत्यु ईसाकी सबसे शानदार उपलब्धि थी। करबलाके मैदानमें इमाम हुसनके बलिदान-ने इस्लामको विश्वमें एक शक्ति बना दिया। हरिश्चन्द्रको अनन्त दुःख उठानेके कारण स्मरण किया जाता है। भारत तबतक स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं कर सकता जबतक कि लाखों लोग भयका त्याग नहीं कर देते, और बिना किसी अपराधके स्वेच्छासे जेल जानेको तैयार नहीं हो जाते। यदि लाखों नहीं तैयार होते तो कमसे-कम हजारोंको तो स्वतन्त्रता पानेके लिए वास्तवमें जेल जाना ही चाहिए। असहयोगका ध्येय राष्ट्रके सच्चे शौर्यको जाग्रत करना है। यदि हमें स्वतन्त्र होना है तो मरते दमतक कष्टोंका मुकाबला करनेके लिए तैयार रहना चाहिए। जो अपनेको बचायेगा उसका अवश्य नाश होना है।

क्या हम अपनी सफाई दें ?

यदि यह सत्य है कि इस सरकारकी इच्छाका न्यायोचित विरोध करनेके लिए हमें भारतकी जेलोंको भर देना चाहिए तो इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि हम किसी ब्रिटिश कानूनी अदालतके समक्ष अपनी सफाई नहीं दे सकते; और वकील नियुक्त करनेका तो सवाल ही नहीं उठता। मैं जानता हूँ कि जटिल मुकदमे भी हो सकते हैं, जैसे सावरकर बन्धुओंका मुकदमा। यदि मुझे यह मालूम हो कि वे असह-योगी हैं, और असहयोगमें विश्वास करते हैं तो मुझे उन्हें यह सलाह देनेमें जरा भी हिचक न होगी कि चाहे उनका पक्ष पूरी तरहसे सही भी हो, फिर भी उन्हें जिन लोगोंने उनपर अत्याचार किया उनके विरुद्ध क्षतिपूर्तिके लिए कोई भी कार्रवाई नहीं करनी चाहिए। यद्यपि ऐसे मुकदमोंमें सफाई न देनेका मुख्य कारण ब्रिटिश अदालतों-का बहिष्कार करनेसे सम्बन्धित प्रस्ताव ही होगा, तथापि कष्टसहनकी दृष्टिसे भी वह उतना ही आवश्यक है।

फिर अली बन्धुओंकी सफाईके बारेमें

शिमलामें वाइसराय महोदयसे मेरी भेंट तथा अली बन्धुओंकी सफाईने जितना समय नष्ट किया है, उतना किसी और चीजने नहीं। मेरे सामने जो बहुत-से पत्र हैं, उनमें से केवल एकके बारेमें मैं यहाँ जिक्र करना चाहता हूँ। एक सम्मानित मित्र,[1] जिन्हें ईमानदारी तथा सच्चे व्यवहारसे सम्बन्धित मेरी ख्यातिका बड़ा ख्याल है, लिखते हैं कि शिमलामें यह चर्चा हो रही है कि मैंने वाइसरायके साथ अन्याय किया है, उनपर लगभग वादाखिलाफीका आरोप लगाया है, और यह कहकर कि सफाई नहीं दी गई है, सम्भवतः मैं अनजाने ही सत्यसे डिग गया हूँ। मैं आज भी कहता हूँ कि सफाई सरकार-को नहीं दी गई है। यदि ऐसी बात होती तो उसकी शब्दावलीमें ही इस बातको स्पष्ट कर देनेमें मैं कभी न हिचकता। उसे अस्पष्ट रखना मेरा उद्देश्य नहीं था।

१. स्पष्टतः तात्पर्य पण्डित मदनमोहन मालवीयसे है; देखिए पिछला शीर्षक।

अली वन्धुओकी नाक रखनेके लिए किसी बातको छिपानेकी कोई जरूरत नही थी। सबसे पहले मै प्रत्येक व्यक्तिको, जिसमे परमश्रेष्ठ वाइसराय भी शामिल है, यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि यदि मै कभी सत्यसे वाल-भर भी डिग गया तो मै उनसे तथा विश्वसे अवश्य क्षमा-याचना करूँगा। सत्यको मै अपने प्रभावके मुकावले, चाहे वह मेरे देशमे हो अथवा किसी और जगह, अधिक महत्त्व देता हूँ। मैने लॉर्ड रीडिंग-पर वादाखिलाफीका आरोप लगाया हो यह मुझे स्मरण नही है। तीव्र गतिसे होनेवाली बातचीत मानसिक चलचित्रके समान होती है। मस्तिष्क शब्द-रूपी चित्रोको, जितनी तेजी-से वे आते है, ग्रहण करता जाता है, पर उसे वह पूरेका-पूरा अर्थात् ठीक उसी क्रममें स्मृतिमे नही रख पाता। हो सकता है कि विभिन्न मुलाकातोकी हम दोनोके मनपर अलग-अलग छाप पड़ी हो। मेरे मनपर जो छाप पड़ी उसे तो मैंने अधिकसे-अधिक सही रूपमे प्रस्तुत कर दिया है, और गोपनीयताका यथासम्भव उल्लघन किये विना किया है। पर यह मै विलकुल स्पष्ट देख रहा हूँ कि जनताके सामने चित्र विलकुल धुँधला है। वह मुलाकातोके पर्याप्त पूर्ण विवरणके विना सन्तुष्ट नही हो सकती। मै उसकी जिज्ञासा पूरी करनेके लिए उत्सुक हूँ। इस उद्देश्यसे मैंने परमश्रेष्ठ वाइसराय महोदयके साथ पत्रव्यवहार भी शुरू कर दिया है और उनसे कहा है कि या तो हम दोनोकी सहमतिसे एक विवरण प्रकाशित किया जाये अथवा मुझे उसे गोपनीय रखनेके दायित्वसे मुक्त कर दिया जाये। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मेरी कोई बात ऐसी नही है जिसे गोपनीय रखनेकी जरूरत हो। पर मै यह स्वीकार करता हूँ कि वाइसरायकी स्थिति मुझ जैसे सार्वजनिक कार्यकर्त्तासे बहुत भिन्न है। मै उन लोगोसे, जो पूरी बात जाननेको उत्सुक है, थोडा सब्र रखनेको कहूँगा। इस बीच मुझसे जो एक गम्भीर भूल हुई दिखाई देती है, मै उसे स्वीकार करना चाहता हूँ। जो विज्ञप्ति प्रकाशित की जानेवाली थी, मुझे कहना चाहिए था कि वह मुझे दिखा दी जाये। पर मै पुन. शिमला जाकर अपनी यात्रामे और विघ्न नही डालना चाहता था, और मुझे इस बातका पूरा विश्वास था कि पूरी बात अच्छे ढगसे तथा दोनो पक्षोके लिए सम्मान-जनक रूपसे सम्पन्न हो जायेगी। मुझे तो विना किसी दुर्भावनाके भी गलतफहमियाँ और उससे भी बुरी बाते होनेका इतना सारा अनुभव था, इसलिए मुझे इस ओर ज्यादा चौकसी बरतनी चाहिए थी। पर वैसा न हो सका। फिर भी मुझे पूरा विश्वास है कि यद्यपि इस विवादके कारण काफी कटुता उत्पन्न हो गई है, तथापि अन्तमे यही सिद्ध होगा कि इससे देशका अनिष्ट होनेके बजाय भला ही हुआ है। इस बीच मै नेक मौलाना अब्दुल बारीके इस कथनको स्वीकार करता हूँ कि असहयोगियोके उत्साहमे गिरावट आनेकी शक्लमें जो हानि हुई है वह तो प्रत्यक्ष है, पर लाभ भविष्यके गर्भमे है। खैर, देखे आगे क्या होता है।

पारसियोंकी उदारता

प्रसिद्ध तिजोरी-निर्माता श्री गोदरेजने तिलक स्वराज्य-कोषके लिए तीन लाख रुपये देनेकी घोषणा करके चन्देकी अन्य सब राशियोको फीका कर दिया है। सार्व-जनिक कामोके लिए दिये गये उनके चन्दे अभीतक गुप्त हुआ करते थे। पर इस बार

उन्होंने सार्वजनिक घोषणाकी आवश्यकताको समझा। मैं श्री गोदरेज तथा सम्पूर्ण पारसी समुदायको बधाई देता हूँ। मैं यह भी बता देना चाहता हूँ कि बम्बईमे चन्दा करनेके सप्ताह-भरमे एक दिन भी ऐसा नही गया जब कि पारसियोने चन्दे न दिये हो। पारसी महिलाएँ तथा पुरुष घर-घर जाकर भी चन्दा कर रहे है। वे धरना भी दे रहे है। समाचारपत्रोमें भी सभी पारसी-समाचारपत्र आन्दोलनके विरोधी नही है। पर श्री गोदरेजकी उदारताके कारण पारसियोको समस्त भारतमे सहज ही सर्वप्रथम स्थान प्राप्त हो गया है। वैसे तो पारसी रुस्तमजीकी ५२,००० रुपयेकी राशि ही पारसियोंको सम्मानित स्थान दिलानेके लिए यथेष्ट थी किन्तु श्री गोदरेजने उन्हे सर्वप्रथम स्थान दिला दिया है।

खतरेकी सम्भावना

शराबकी दुकानोपर धरना देना पारसियोसे बहुत सम्बन्ध रखता है। हमे अपने पारसी देशवासियोके प्रति बहुत सहिष्णुतासे काम लेना होगा। धरना देना हम बिलकुल तो बन्द नही कर सकते, पर हमे चाहिए कि हम शराबके व्यापारियोसे मिले, उनकी कठिनाइयोको समझे, और अपनी कठिनाइयाँ उन्हे बताये। श्री गोदरेजने अपने चन्देकी रकमको मद्यनिषेध तथा पददलित वर्गोके उत्थान-सम्बन्धी कार्योके लिए निर्धारित कर दिया है। अत हमे यह नही सोचना चाहिए कि सभी पारसी अवश्य ही महान् मद्यनिषेध आन्दोलनके विरोधी है। यदि नरमदलीय मन्त्रिगण पूरे साहसके साथ नीलामम मिली सारी रकम लौटा नही देते, और शराबकी दुकानोको बन्द नही कर देते तो इस समय मद्यनिषेध आन्दोलनके दौरान सबसे अधिक भय है हिंसाके विस्फोटका। मैं उन्हे विश्वास दिलाता हूँ कि आन्दोलनको सयमित-नियन्त्रित किया जा सकता है, पर उसे रोका नही जा सकता। लोग शराबकी दुकानोको बन्द करने तथा उसे दवाके दुकानदारो द्वारा दवाके रूपमे बेचे जानेके सिवा अन्य किसी भी रूपमे बेचे जानेको अपराध माननेपर तुले हुए है। यह ऐसा मामला है जिसमे जरा भी विलम्बकी गुजाइश नही है।

आत्मशुद्धिकी प्रक्रिया

श्री अब्बास तैयबजीको सभी जानते है। जबसे उन्होने काग्रेस कमेटीकी पजाब रिपोर्टपर[1] काम किया है तबसे वे देशकी कुछ-न-कुछ सेवा करते ही रहते है। पर असहयोगने उनके जीवनमे क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया है, जैसा कि अन्य बहुत-से लोगोके जीवनमे भी किया है। श्री अब्बास बूढे होते हुए भी खेडामे रात-दिन काममे जुटे हुए है, ताकि बेजवाडा कार्यक्रमके अनुसार खेडाको जो-कुछ करना है, उसे वह पूरा कर दे। वे किसानो-जैसे कठोर जीवनके आदी नही है। फिर भी वे इस समय खेडाके सामान्य किसानोके साथ, उन्हीकी मर्जी और सुविधाका खयाल रखते हुए, मिलने-जुलनेमें लगे हुए है। उनके साथ काम करनेवाले नवयुवक मित्र मुझे बतलाते है कि शक्ति और परिश्रममे वे उनमे से प्रत्येकको मात दे रहे है। मुझे विश्वास है कि पाठकगण

१ तात्पर्य पजाबमें हुए उपद्रवोंकी जाँचके लिए काग्रेस द्वारा नियुक्त उप-समितिकी रिपोर्टसे है; देखिए खण्ड १७, पृष्ठ १२८-३२२।

उनके पत्रसे लिये गये निम्न अंशको अवश्य पसन्द करेंगे। यह पत्र उन्होंने मेरे उन पत्रके उत्तरमें लिखा है जिसमें मैंने उनके स्वास्थ्यके प्रति चिन्ता व्यक्त की थी। वे कहते हैं :

> मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आपको मेरे स्वास्थ्यके बारेमें जरा भी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। मैं कई वर्षोंसे इतना स्वस्थ कभी नहीं रहा हूँ। वास्तवमें बेजवाड़ामें मैंने जो खद्दर अपनाया, उससे मैं अपनेको अपनी उम्रसे बीस वर्ष कमका अनुभव कर रहा हूँ। मुझे कितना अच्छा अनुभव हो रहा है। हर जगह, यहाँतक कि गाँवकी औरतों द्वारा भी मेरा हार्दिक स्वागत किया जाता है। जिन-जिन स्थानोंमें मैं गया हूँ, उनमें से अधिकांशने अपने हिस्सेसे दूना या तिगुना दिया है। केवल आनन्द तथा नडियाद-जैसे बड़े शहर ही पीछे हैं। पर नडियाद, जहाँ मैं चार दिन बिता चुका हूँ, प्रगति कर रहा है; और मेरा खयाल है कि यदि वह अपने हिस्सेसे अधिक नहीं, तो कमसे-कम अपने हिस्सेका तो देगा ही। मैं आज कपड़वंज जा रहा हूँ किन्तु रात मैं नडियादमें ही बिताया करूँगा, नहीं तो मेरे नेक दोस्त ढीले पड़ जायेंगे। . . .
>
> हमारे कुछ कार्यकर्त्ताओंमें उमंग और उद्यमकी कमी है। मेरा खयाल है कि वे उस सम्मानित वर्गका प्रतिनिधित्व करते हैं, जिस वर्गमें मैं अब नहीं रहा। क्या शानदार अनुभव है यह। मुझे उस सामान्य लोक-वर्गसे, जिस वर्गका होना अब मैं सम्मानकी बात समझता हूँ, कितना अधिक प्यार तथा स्नेह मिला है। इस फकीरके वेशने ही सारे बंधनोंको तोड़ा है। और अब स्त्री तथा पुरुष मुझसे उसी तरह मिलते हैं जिस तरह मैं चाहता हूँ। कितना अच्छा होता, अगर वर्षों पहले ही यह मालूम हो जाता कि फेंटा, साया, अँगरखा, जूते तथा मोजे एक व्यक्तिको उसके गरीब भाइयोंसे अलग कर देते हैं। मुझे केवल अब यह अनुभव हुआ है कि उस प्रकारके वेशमें किसीके अन्दर इतना विश्वास उत्पन्न कर सकना कि वह अपनी बातें आपसे कह सके, क्यों असंभव था। अब मेरी समझमें आ रहा है कि मैंने जीवनमें कितना गँवाया है। . . .
>
> आन्दोलनने मेरी जीवन-धाराको कितना प्रभावित किया है, उसे मैं बहुत धुँधले रूपमें ही देख पा रहा हूँ। फिर भी मैं उसे देख रहा हूँ, और यही महत्त्व रखता है। देनेमें कितना आनन्द है, यह महसूस करना भी एक नया अनुभव है।

चरखेकी प्रशंसा

एक ईसाई महिला लिखती हैं :

> चरखेके जरिये स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए मैं अपनी पूरी शक्तिसे काम करूँगी। यहाँसे रवाना होनेसे पहले-पहले मैंने अच्छे चरखे तैयार करा लिये।

तमिलमें हम चरखेको 'राट्टिनम' कहते हैं। गरीब औरतोंने मेरे पास आकर मुझसे चरखे माँगे और कातना सिखानेको कहा, ताकि वे अपनी जीविकाके लिए थोड़ा-बहुत कमा सकें। तब मुझे ईसाके शब्द स्मरण हो आये, "मैं नग्न था और तुमने मुझे वस्त्र नहीं दिया", "मैं भूखा था और तुमने मुझे खाना नहीं दिया।" मैं आशा करती हूँ कि परमेश्वर ह्श्रके दिन मुझसे ये कठोर शब्द न कहेंगे। भारत भूखा-नंगा है। भारतीय नारियाँ रोटीके लिए तड़पते हुए अपने बच्चोंके लिए भोजन प्राप्त करनेके निमित्त अपनी इज्जत तक बेचनेको मजबूर हुई हैं। चूँकि भारतकी अपनी ही सीमाओंमें यथेष्ट प्राकृतिक साधन मौजूद हैं, अतः उक्त स्थिति और भी दयनीय लगती है। भारत एक ऐसी स्त्रीके समान है जो सड़कके किनारे रुई, चावल तथा गेहूँके खेतोंके बीच नंगी-भूखी बैठी हुई है। भारतकी स्त्रियाँ बेकार क्यों बैठी हैं, जब कि दूसरे देशवाले भारतकी ही उपजपर फल-फूल रहे हैं? इसलिए कि वे उस कामको छीन लेते हैं जो भारतीय स्त्रियोंको मिलना चाहिए। चरखा भारतवासियोंको काम देगा और मुट्ठी-भर दानेके लिए तड़पते हुए यहाँके नन्हें बच्चोंको भोजन देगा। चरखेके संगीतके साथ स्त्रियाँ अपने सुन्दर गीत गायेंगी, पुराने जमानेकी कहानियाँ सुनायेंगी, और इस प्रकार सादे घरेलू जीवनकी सुन्दरता एवं सन्तुष्टि पुनः लौट आयेगी। यदि मेरे अन्दर कविकी प्रतिभा होती तो मैं चरखेके, उसके सौन्दर्य तथा उसकी उपयोगिताके, उसकी काव्यात्मकता तथा उसके धार्मिक मूल्यके गीत लिखती और गाती; जरूरतके समय सहायताके लिए ईश्वरकी प्रशंसाके गीत गाती। मैं अपनी समस्त भारतीय बहनोंसे अपने घरोंसे भूख तथा अपमानरूपी भेड़ियेको दूर रखनेके लिए चरखा अपनानेको कहूँगी।...पर मुझमें वह प्रतिभा नहीं है। केवल मेरी आत्माके अन्दर वह गीत ध्वनित हो रहा है। फिर मैं इसके सिवा और क्या कर सकती हूँ कि चरखेको अपना गीत स्वयं गाने दूँ, और मैं स्वयं चरखा चलाऊँ और दूसरोंको भी वैसा ही करनेकी शिक्षा दूँ।

उक्त महिला कताईमें काफी निपुण हो गई हैं, और वे अपने साधनोंकी शक्ति और साधनोंको लड़कियोंके लिए एक स्कूल खोलनेमें लगानेवाली हैं। कताई इस स्कूलकी एक खास विशेषता होगी।

सच्ची भावना

गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने कांग्रेस महासमितिके लिए अपने सदस्योंका चुनाव सम्पन्न कर लिया है। जिस क्रममें सदस्यगण चुने गये हैं, उसी क्रममें मैं उनके नाम यहाँ दे रहा हूँ: अब्बास तैयबजी, इमाम ए० के० बावजीर, एस० एफ० इदरस, अनसूयाबेन साराभाई, मो० क० गांधी, वल्लभभाई पटेल, महादेव देसाई, इन्दुलाल के० याज्ञिक, डा० दीक्षित, डा० चन्दूलाल देसाई, मोहनलाल पण्ड्या तथा वामनराव मुका-

दम। चुनाव स्वभावत आनुपातिक प्रतिनिधित्वके आधारपर हुआ। नाम देकर पाठकोको मैं कष्ट न देता यदि इस चुनावसे कुछ सीख न मिलती होती। पाठकगण यह देखेंगे कि तीन मुसलमान चुने गये हैं और वे सूचीमे सर्वप्रथम है, जिससे पता चलता है कि मतदाता उन्हे चुननेके लिए कृतसकल्प थे। सख्याकी दृष्टिसे दोसे अधिक नही चुने जाने चाहिए थे, पर मतदाताओने बुद्धिमानीसे सब मुसलमान उम्मीदवारोको चुननेका निर्णय किया। उसके बाद वे कमसे-कम एक महिलाको अवश्य चुनना चाहते थे, अत उनके बाद श्रीमती अनसूयाबेन आती हैं। लेकिन इस चुनावमे सबसे अधिक मार्केकी बात यह है कि जहाँ सब अच्छे कार्यकर्त्ता चुन लिये गये वहाँ बहुतसे उतने ही अच्छे और योग्य कार्यकर्त्ता चुपचाप अलग रह गये। वे चुनावमे खडे नही हुए। आत्म-विलोपनकी इस भावनाकी, जिस किसीसे वह सम्बन्ध रखती हो, मैं तारीफ करता हूँ। कार्यकर्त्ताओमे सम्मानके पदोके लिए आपसमे कशमकश नही होनी चाहिए। सबका ध्येय सर्वाधिक योग्य कार्यकर्त्ता बनना होना चाहिए। पर सबका सम्मानके पदोपर चुना जाना सम्भव नही है, खास तौरसे जब यदि उन पदोके साथ भारी जिम्मेदारी भी जुडी हुई हो। सबसे अच्छा तरीका यह है कि हर व्यक्ति चुनावसे अलग रहकर दूसरोको चुने जाने दे। इसी तरह कटुता, अस्वस्थ प्रतिद्वन्द्विता तथा विद्वेषकी भावनासे बचना सम्भव है। चाहे कोई व्यक्ति कभी भी कोई पद न ग्रहण करे, फिर भी उसके लिए सबसे उत्तम सेवा कर सकना निश्चय ही सम्भव है। सच तो यह है कि सम्पूर्ण विश्वमे सबसे अच्छे कार्यकर्त्ता वही सिद्ध हुए हैं जो सामान्यत सबसे अधिक चुप और शान्त रहते हैं।

मुस्लिम प्रतिनिधित्व

लखनऊ-समझौतेपर कार्य-समितिके परामर्शात्मक प्रस्तावके सम्बन्धमे बहुत लोगोको शिकायत है। नये सविधानमे मुस्लिम प्रतिनिधित्वसे सम्बन्ध रखनेवाला एक खण्ड वह है जो अल्पसख्यकोके अधिकारोके बारेमें है। चूँकि कार्य-समितिका ध्यान इस बातकी ओर आकृष्ट किया गया कि मुसलमान अपने प्रतिनिधित्वके बारेमे परेशान हो रहे हैं, और वे काग्रेस द्वारा लखनऊ-समझौतेपर अमल चाहते हैं, अत उस दिशामे निर्देश करना युक्तिसगत समझा गया। इसमे सन्देह नही कि हम लोगोके अन्दर फूट डालनेकी कोशिश की जा रही है। मुसलमानोका आना शुरू ही हुआ है। इसलिए प्रत्येक हिन्दूका कर्त्तव्य है कि वह उनको काग्रेसमे शामिल होनेके लिए हर तरहका उचित प्रोत्साहन दे। काग्रेसको समस्त जातियो तथा धर्मोका सामान्य मिलन-स्थल होना चाहिए। जहाँ अनुनय-विनयके बावजूद मुसलमान बिलकुल ही आगे नही आते, वहाँ उम्मीदवारोके अभावके कारण स्थान खाली रखे जा सकते है, अथवा जबतक अनुकूल मुस्लिम उम्मीदवार नही मिल जाते, तबतक के लिए उन स्थानोको दूसरो द्वारा भरा जा सकता है। कुछ मित्रोका कहना है कि इस समय हमे किसी जाति विशेषके अधिकारोके बारेमे नही बल्कि केवल कार्यक्षमताके बारेमे सोचना चाहिए। इसमे सन्देह नही कि कार्य-क्षमता प्रशसनीय चीज है, लेकिन यह भी हो सकता है कि हम उसके अन्धपुजारी बन जाये, जैसा कि हमारे अग्रेज मित्र बन गये हैं। एकता कार्यक्षमतासे अधिक महत्वपूर्ण है, और हमारे लिए एकता ही कार्यक्षमता है। हाँ, एकताके नामपर हमे एक वस्तुका

त्याग नही करना चाहिए और वह है सिद्धान्त अथवा अन्तरात्माकी आवाज, अथवा सत्य, सिद्धान्त अथवा अन्तरात्माकी आवाजका ही नाम सत्य है।

गो-रक्षा

हिन्दू-मुस्लिम एकताके सन्दर्भमे मैं एक वार पुन गो-रक्षाकी चर्चा कर रहा हूँ। गो-रक्षाकी भावना जितनी अधिक मेरे हृदयमें है उससे ज्यादा किसी अन्य हिन्दूके हृदयमे नही, पर मैं उतावला नही होना चाहता। वलप्रयोग द्वारा हम मुसलमानोसे गो-हत्या वन्द करानेमे कभी सफल नही हो सकते। उनके अन्दर गायके लिए उसी प्रकारकी तथा उतनी ही भावना नही हो सकती जितनी कि हम हिन्दुओके अन्दर है। अगर हम ईमानदारीका व्यवहार करेगे तभी तो ऐसी स्थिति आयेगी कि हमारे साथ ईमानदारीका व्यवहार करना उनके लिए जरूरी हो जायेगा। विहारमे अव तूफान मचा हुआ है। मैं हिन्दू तथा मुसलमान दोनो नेताओसे आग्रहपूर्वक विनय करता हूँ कि वे मौकेको हाथसे न जाने दे, और बुराईको आरम्भमे ही कुचल दे। साथ ही विहारके हिन्दुओको चाहिए कि वे निरामिषताके प्रश्नको गो-हत्याके साथ न मिलाये। दोनोका स्थान अलग-अलग है। गो-रक्षा दो करोड हिन्दुओका धार्मिक सिद्धान्त है, जब कि निरामिषता वहुत थोडेसे लोगोतक सीमित है। उन थोडेसे लोगोको अपना विचार दूसरोपर नही लादने दिया जा सकता।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी

नव-निर्वाचित महासमिति, जिसके सदस्योंकी सख्या पहलेसे वड़ी है, की वैठक २२ जुलाईको लखनऊमे होनेवाली है। यह वैठक वहुत महत्त्वपूर्ण होगी। इसमे ऐसा कार्यक्रम तैयार करना है जिससे साल-भरके अन्दर स्वराज्यकी स्थापना तथा खिलाफत एव पजाव सम्वन्धी अन्यायोका परिशोधन किया जा सके। उसे या तो एक नई कार्य-समितिका चुनाव करना होगा, अथवा पुरानी कार्य-समितिकी ही पुष्टि करनी होगी, यदि उसके सव सदस्य नई महासमितिके फिरसे सदस्य चुन लिये जाते है। उसे सभवत. कार्य-समितिके कुछ निर्णयोपर पुन. विचार-विमर्श भी करना होगा। उसके अन्दर जो विचार-विमर्श होगा, उसीसे साल-भरके अन्दर स्वराज्य-प्राप्ति सम्वन्धी प्रश्नका वहुत-कुछ निपटारा होगा। अत: लोगोके लिए ऐसी आशा करना स्वाभाविक है कि उस सस्थाके समक्ष जो प्रश्न उठाये जायेगे उनपर विचार करनेके लिए पूरा सदन भरा होगा।

जूनके बाद

जान पड़ता है कि कुछ लोग इस खयालमे है कि ३० जूनके वाद वेजवाड़ा कार्यक्रमके सम्वन्धमें आगे कोई प्रयास करनेकी जरूरत नही है। यह भ्रांतिपूर्ण विचार है। यदि हमने एक करोड़ सदस्य वना लिये और वीस लाख चरखे चालू करवा लिये, तो फिर हमें उनमे और वृद्धि करनी चाहिए। न्यूनतम निश्चित राशि एकत्र करके हम तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा करना वन्द कर सकते है, पर यदि हम उससे भी अधिक संग्रह करते है तो उसमे कोई हानि नही है।

जैसी स्थिति है, उससे मालूम होता है कि बहुत-से प्रान्त ऐसे होंगे जो ३० जून तक अपने लिए निर्धारित रकमसे बहुत-कम एकत्र कर पायेंगे। अतः उनसे यह अवश्य उम्मीदकी जायेगी कि वे कमसे-कम कांग्रेस महासमितिकी बैठक आरम्भ होनेतक अपना संग्रह-कार्य जारी रखें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९–६–१९२१

१३६. टर्कीका प्रश्न

अगर हम अपने मुसलमान भाइयोंके सच्चे शुभेच्छु हैं तो यूरोपमें टर्की राष्ट्रको कुचलनेके लिए जो आन्दोलन चल रहा है, उसके खिलाफ हमें मुसलमान भाइयोंके प्रति सहानुभूति होनी चाहिए। यह बड़े खेदकी बात है कि ब्रिटिश सरकार लुके-छिपे या खुले आम आन्दोलनका नेतृत्व कर रही है। हिन्दुओंको इस्लामी एकताके आन्दोलनसे भयभीत नहीं होना चाहिए। वह भारत या हिन्दुओंके खिलाफ नहीं है और न उसे ऐसा होनेकी जरूरत है। मुसलमानोंको हर मुसलमान राज्यका शुभेच्छु होना चाहिए और यदि कोई मुसलमान देश अकारण मुसीबतमें पड़ जाये तो उसकी मदद भी करनी चाहिए। और जहाँतक हिन्दुओंका सवाल है, यदि वे मुसलमानोंके सच्चे दोस्त हैं तो उनकी भावनाओंसे सहानुभूति होनी चाहिए। अतः हमें चाहिए कि हम अपने उन मुसलमान भाइयोंकी मदद करें, जो यूरोपमें तुर्की साम्राज्यको नष्ट होनेसे बचानेके लिए कोशिश कर रहे हैं।

यदि मुसलमानोंको इस बातका थोड़ा भी संकेत मिला हो कि ब्रिटिश सरकार अंकाराकी तुर्की सरकारके खिलाफ यूनानियोंके साथ खुल्लमखुल्ला मिल सकती है, और वे इससे सशंकित हो उठे हों तो इससे हिन्दुओंको अपना सन्तुलन नहीं खोना चाहिए। यदि ब्रिटेन ऐसे पागलपनपर उतारू हो जाता है तो टर्कीके खिलाफ ब्रिटिश सरकारकी किसी भी ऐसी योजनामें भारत साथ नहीं दे सकता। ऐसा करना इस्लामके खिलाफ युद्ध छेड़नेके समान होगा।

इंग्लैंड अपना मार्ग चुननेको स्वतन्त्र है। हिन्दू और मुसलमान अब जाग गये हैं। वह अब उन्हें गुलाम बनाकर नहीं रख सकता। यदि भारतको साम्राज्यके दूसरे सदस्योंकी बराबरीका दर्जा पाना है तो उसके मतकी शक्ति किसी भी अन्य सदस्यसे कहीं ज्यादा होगी। स्वतन्त्र राष्ट्र-मण्डलमें जैसे हर सदस्यका यह कर्त्तव्य है कि जबतक और सदस्य कुछ सर्वस्वीकृत सिद्धान्तोंका पालन कर रहे हैं तबतक वह उसमें शामिल रहे। वैसे ही उसे यह अधिकार भी है कि यदि दूसरे सदस्य गलत रास्तेपर चलें तो वह उससे अलग हो जाये। यदि भारत किसी गलत बातके पक्षमें मत दे तो इंग्लैंड-को अन्य सदस्योंकी तरह ही राष्ट्र-मण्डलसे अलग हो जानेका हक है। इस प्रकार जब भारतको अपना उचित पद प्राप्त हो जाये तब सन्तुलनका केन्द्र इंग्लैंडके बजाय भारत हो जायेगा। साम्राज्यके अन्तर्गत स्वराज्यसे मेरा यही मतलब है। किसी भी

मसलेपर विचार-विमर्श करते समय पशु-बलके प्रयोगकी बात कभी भी मनमें नही लानी चाहिए। हमे सदा न्याय-बुद्धिका सहारा लेना चाहिए, न कि बलका।

इग्लैंडकी तरह भारतको भी अपना रास्ता चुननेका हक है। आज हम साम्राज्यके अन्तर्गत स्वराज्यकी कोशिश इस उम्मीदसे कर रहे हैं कि इग्लैंड अन्तमे सच्चा साबित होगा, और यदि ऐसा नही होता तो हम पूर्ण स्वतन्त्रताके लिए लड़ेंगे। किन्तु यदि यह निर्विवाद रूपसे सिद्ध हो जाये कि ब्रिटेन टर्कीको खत्म कर देना चाहता है, तो भारतके लिए एकमात्र विकल्प होगा पूर्ण स्वतन्त्रता। जहाँतक मुसलमानोका सवाल है यदि टर्कीका अस्तित्व, जैसा वह आज है, खतरेमे पड़ जाये तो उनके लिए आगा-पीछा करनेकी गुजाइश ही नही रह जाती। तब तो यदि उनसे बन पड़ेगा तो वे तलवार खीच लेंगे और बहादुर तुर्कोके साथ लड़ते-लड़ते या तो मर मिटेंगे या जीतकर ही दम लेंगे। पर यदि वे भारत सरकारकी नीतिके कारण ब्रिटिश सरकारके खिलाफ युद्धकी घोषणा नही कर सकते तो कमसे-कम ऐसी सरकारके प्रति जो अन्यायपूर्वक टर्कीसे युद्ध छेड़ देती है, वफादार होनेसे इनकार तो कर ही सकते हैं। हिन्दुओका भी कर्त्तव्य उतना ही साफ है। यदि अभीतक हम मुसलमानोसे डरते है और उनपर अविश्वास करते हैं तो हम ब्रिटेनका साथ ही देंगे और इस तरह अपने गुलामीके दिन और बढ़ायेंगे। और यदि हममे इतना साहस और धार्मिक बल है कि हम अपने मुसलमान देश-भाइयोसे न डरे और यदि हममे इतनी बुद्धिमानी है कि हम उनपर विश्वास करे तो हमे चाहिए कि आजादी हासिल करनेके लिए हम सभी शान्तिपूर्ण और सच्चे तरीकोसे मुसलमानोका साथ दे। हिन्दू धर्मके बारेमें मेरी जो कल्पना है, उसके मुताबिक एक हिन्दूके लिए अहिंसात्मक असहयोगके सिवा और कोई रास्ता है ही नही। चाहे वह पूर्ण स्वतन्त्रताके लिए हो या साम्राज्यके अन्तर्गत स्वराज्यके लिए। यदि भारत अहिंसाके रहस्य और उसकी अजेय शक्तिको पहचान ले और उसे ग्रहण करे तो उसे आज ही उपनिवेशका दर्जा या पूरी आजादी मिल सकती है। जब वह अहिंसाके मन्त्रको सिद्ध कर लेगा तब वह असहयोगके हर कदमके लिए, जिसमे कर न देना भी शामिल है, तैयार हो जायेगा। आज भारत तैयार नही है। किन्तु यदि हम टर्कीके नाशके लिए या अपनी गुलामीके दिन और बढानेके लिए रचे जानेवाले षड्यन्त्रोको विफल करनेके लिए तैयार होना चाहते हैं तो हमे जल्दसे-जल्द प्रबुद्ध अहिंसाकी भावना पैदा करनी होगी। वह अहिंसा निर्बलकी नही, बलवानकी अहिंसा होगी जो मारनेके बजाय सत्यकी प्रतिष्ठाके लिए खुशी-खुशी मरनेको तैयार रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९–६–१९२१

१३७. कार्य-समिति और उसका काम

कार्य-समितिके प्रस्तावोकी कुछ आलोचना की गई है। कार्य-समितिने असहयोगी वकीलोके अदालतोमे जाने तथा असहयोगी प्रतिवादियोके अदालतमे अपना बचाव करनेको अनुचित करार देते हुए जो व्यवस्था दी है, उसपर बहुत आपत्ति की गई है, और यहाँतक कहा गया है कि उसकी व्यवस्थाओकी परवाह न की जाये। इसलिए यह जानना आवश्यक हो जाता है कि कार्य-समितिके क्या काम है और इसे समझनेके लिए हमे पहले काग्रेसके सविधानको समझना होगा।

काग्रेसका ध्येय शान्तिपूर्ण तथा न्यायोचित तरीकोसे स्वराज्य हासिल करना है। काग्रेसका सचालन ऐसे ढगसे होना चाहिए जिससे भारत अपने निर्दिष्ट लक्ष्यकी ओर तेजीसे बढ सके। काग्रेसका सविधान भी ऐसा बनाया गया है जिससे इस राष्ट्रकी स्वशासनकी क्षमताकी पूरी कसौटी हो जाये और यह सिद्ध हो जाये कि उसमें सचमुच यह क्षमता है। निस्सन्देह वह एक ऐसी ऐच्छिक सरकारकी स्थापना करता है, जिसका एकमात्र बल जनमत तथा जनताका सद्भाव है। आज जिस प्रकार काग्रेस वर्तमान शासन-प्रणालीका विरोध कर रही है — और इसमे सन्देह नही कि यदि जरूरत पड़ी तो उसे समाप्त कर देनेके लिए भी वह जुट जायेगी — उससे जाहिर होता है कि काग्रेसका प्रभाव जितना ही बढेगा सरकारका उतना ही कम होगा। जिस दिन लोग काग्रेसमे पूरी तरह विश्वास करने लगेगे और उसके निर्देशोका स्वेच्छया पालन करने लगेगे उसी दिन पूर्ण स्वराज्य स्थापित हो जायेगा, क्योकि तब सरकारको काग्रेसके माध्यमसे व्यक्त लोकमतका पालन करना ही होगा, अन्यथा वह स्वय समाप्त हो जायेगी। इसलिए काग्रेसको देशकी सर्वाधिक सगठित, सबल और शुद्ध तथा सबसे बडी सस्था बनना चाहिए। अत उसकी नीति ऐसी होनी चाहिए जिसे लोग प्रसन्नतासे स्वीकार कर ले।

काग्रेसका अधिवेशन सालमे केवल एक बार होता है, जिसमे वह अपनी नीतियाँ निर्धारित करती है। काग्रेस महासमिति उसके प्रस्तावोमे समाहित उन नीतियोको कार्यान्वित करती है। इसलिए काग्रेसकी महासमितिको भी उतने ही अधिकारके साथ काग्रेसके प्रस्तावोकी व्याख्या और सभी नये सवालोपर विचार करना चाहिए जितने अधिकारसे स्वय काग्रेस कर सकती है। उसके सदस्यगण विभिन्न प्रस्तावो एव उनके अर्थोपर जितनी चाहे उतनी बहस कर सकते है, पर कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तके मामलोको छोडकर बाकी सब बातोमे उन्हे बहुमतसे स्वीकृत प्रस्तावोको मानकर ईमानदारीके साथ कार्यान्वित भी करना चाहिए। किसी बातपर महासमितिमे बहस हो चुकनेके बाद फिर उसपर महासमितिके बाहर बहस नही हो सकती। महासमिति अपना काम तेजी और ठीक ढगसे कर सके, इसके लिए काग्रेसके सविधानमे एक कार्य-समितिकी व्यवस्था की गई है। इस कार्य-समितिकी बैठक बराबर होनी चाहिए और महासमिति द्वारा सौपे गये सभी कार्योको उसे पूरा करना चाहिए। जब महासमितिकी बैठक नही

हो रही हो तब कार्य-समितिसे महासमितिके सारे काम करनेकी अपेक्षा की जाती है। समितिको जनमतके बारेमे पूरी जानकारी रखनी चाहिए, उसे सही दिशा देनी चाहिए और उसकी व्याख्या भी करनी चाहिए। उसे सभी मातहत सगठनोको काम करनेकी स्थितिमे रखना चाहिए, देश-भरमे सगठनके लिए धन जुटानेकी कोशिश करनी चाहिए, उसका उचित वितरण करना चाहिए और जब-कभी बहुत महत्त्वके मामलोपर निर्णय लेना हो तब निर्देशके लिए महासमितिकी बैठक बुलानी चाहिए। काग्रेसके लिए कार्य-समितिका वही महत्त्व है जो ससदके लिए मन्त्रिमण्डलका। यदि हमे इसी वर्ष सवैधानिक सरकारकी स्थापना करनी है तो कार्य-समितिके सभी निर्णय ऐसे होने चाहिए जिनका आदर सब लोग करे। अत यह जरूरी है कि उसके सदस्य ऐसे हो जिन्हे महासमितिके सदस्य तथा पूरा राष्ट्र सम्मानकी दृष्टिसे देखता हो। उसे जल्दबाजीमे किसी बातपर निर्णय नही करना चाहिए और उसके सदस्योको एक-से विचारका होना चाहिए। उसके अन्दर दो नीतियाँ या दो दल नही हो सकते। चूँकि काग्रेस पूरे देशका प्रतिनिधित्व करती है, इसलिए उसके अन्दर सभी विचारो, सभी दलोके लोग हो सकते है। पर कार्य-समितिमे ऐसे लोग ही होने चाहिए जो काग्रेसके बहुसख्यक दल व उसकी नीतियोका प्रतिनिधित्व करते हो। उसके निर्णय अधिकतर सर्वसम्मत होने चाहिए। जब कोई सदस्य अन्य सदस्योके साथ मिलकर नही चल पाता तो वह अलग हो सकता है, पर उसे कार्य-समितिकी कार्रवाइयोकी अखबारोमे चर्चा करके उसके कामोमे बाधा डालने या उन्हे प्रभावित करनेकी कोशिश नही करनी चाहिए। अत. यद्यपि काग्रेसवालो को कार्य-समितिके निर्णयोको कार्यान्वित करना ही चाहिए, तथापि ऐसा नही है कि यह सगठन किसीके प्रति जवाबदेह है ही नही। काग्रेस महासमिति अविश्वासका प्रस्ताव पास करके उसे बरखास्त कर सकती है। महासमिति उसके निर्णयोपर फिरसे विचार कर सकती है और यदि गम्भीर कारण उपस्थित हो तो उन्हे रद्द भी कर सकती है। मेरे खयालसे जबतक कार्य-समितिका जनतापर काफी प्रभाव नही होता तबतक साल-भरके अन्दर स्वराज्य-प्राप्तिका लक्ष्य पूरा नही हो सकता। इसलिए हममे से हर व्यक्तिको चाहिए कि वह काग्रेसके सभी प्रस्तावोको पूरी तरहसे कार्यान्वित करके उसे एक ऐसी सस्था बना दे जिसकी इच्छाका कोई अनादर ही न कर सके। जो काम सरकार अन्तमे बल-प्रयोग द्वारा करती है, काग्रेस उसी कामको प्रेम द्वारा करनेकी उम्मीद रखती है। सरकारने जनताके हृदयमे भय पैदा करके अपनेको ऐसा-कुछ बना लिया है कि कोई उसकी इच्छाका अनादर नही कर सकता, पर काग्रेसको ऐसा रास्ता अख्तियार करके लोगोको अपनी शक्तिका एहसास कराना है जिससे इसके सिद्धान्तो और नीतियोको सभी अपनी मर्जीसे स्वीकार कर ले। इस तरह जनताके समक्ष जो भी कार्यक्रम रखा जाना है, उससे सम्बन्धित हर मामलेमे अहिसाका पालन करना जरूरी है। लेकिन हर सगठन जनताके सहयोगपर ही सफल होनेकी आशा रखता है। काग्रेसके निर्णयोके प्रति वफादारी नागपुर काग्रेसमे एक सालके अन्दर स्वराज्य प्राप्त करनेके हमारे सकल्पकी सफलताकी अनिवार्य शर्त है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९–६–१९२१

१३८. चरखेका सन्देश

'इडियन सोशल रिफॉर्मर' ने चरखेकी प्रशसामे किसी पत्र-लेखककी एक टिप्पणी प्रकाशित की है। उसने अपनी टिप्पणीमे यह कामना की है कि आन्दोलनका सगठन ऐसे ढगसे किया जाये कि कताई करनेवाले उससे उकता न जाये। श्री अमृतलाल ठक्करने ('सर्वेंट ऑफ इडिया' मे प्रकाशित) अपनी एक उपयोगी टिप्पणीमे काठियावाड़मे चल रहे अपने परीक्षणके बारेमे लिखा है। उन्होने लिखा है कि किसान स्त्रियोने चरखे अपना लिये हैं। इससे उनको उकताहट कभी नही होगी क्योकि यह उनकी अपनी जीविकाका साधन है, और पहले वे इसकी आदी भी थी। इसका चलन बन्द इसलिए हो गया था कि उनके काते हुए सूतकी कोई माँग ही नही रह गई थी। शहरी लोग यदि चरखेको एक फैशन या खब्तकी तरह अपनाये तो हो सकता है कि वे आगे चलकर उससे उकता जाये। चरखेके प्रति आस्था उन्ही लोगोकी रहेगी जो आज देशके लिए इस सबसे अधिक उपयोगी कार्यके लिए अपने अवकाशके कुछ घटे लगाना अपना कर्त्तव्य मानते हो। कताई करनेवालो का तीसरा वर्ग स्कूली बच्चोका है। राष्ट्रीय स्कूलोमे चरखा चालू करनेके परीक्षणसे मुझे बड़े अच्छे परिणामोकी आशा है। यदि राष्ट्रीय स्कूलोमे चरखे चालू करनेका काम वैज्ञानिक ढगसे ऐसे अध्यापको द्वारा शुरू किया जाये जो चरखेको भारतके साढे सात लाख गाँवोमे शिक्षा पहुँचानेका सबसे कारगर साधन मानते हो, तो फिर इससे उकताहट पैदा होनेका कोई खतरा नही रह जायेगा; और इतना ही नही उसके सहारे राष्ट्र नये-नये कर लगाये बिना और राजस्वके अनैतिक तरीके इस्तेमाल किये बिना ही जन-शिक्षाका खर्च जुटानेकी समस्या भी हल कर लेगा।

'इडियन सोशल रिफॉर्मर' के पत्र-लेखकने सुझाया है कि चरखेपर बढिया किस्मका सूत तैयार करनेकी कोशिश की जानी चाहिए। मै उनको आश्वस्त करना चाहता हूँ कि यह काम शुरू भी हो गया है, लेकिन ढाकाकी मलमलकी तरहका बढिया निखार (फिनिश) या उससे कुछ कम महीन किस्मका सूत कातनेमे अभी कुछ समय तो लग ही जायेगा। हाथ-कताई अभी पिछले सितम्बरमे ही शुरू हुई थी और भारतको उसकी उपयोगितापर दिसम्बरमे ही विश्वास होने लगा था। यदि इसे ध्यानमें रखा जाये तो इसने अभीतक जितनी प्रगति की है वह बहुत काफी मानी जानी चाहिए।

पत्र-लेखकने शिकायत की है कि हाथकते सूतकी बुनाई उतनी ही तेजीसे नही हो पाती। एक हदतक यह सही है। लेकिन इसका इलाज सिर्फ यह नही है कि करघोकी सख्या बढा दी जाये। इससे कही ज्यादा जरूरत इस बातकी है कि मौजूदा बुनकरोको हाथका कता सूत इस्तेमाल करनेके लिए प्रेरित किया जाये। बुनाईका काम कताईकी अपेक्षा अधिक पेचीदा किस्मका है। कताईकी भाँति, बुनाई केवल एक अनुपूरक उद्योग नही है, वह अपने-आपमे जीविकाका एक सम्पूर्ण साधन है। इसीलिए वह कभी बन्द नही हुआ था। "भारतमे इतने काफी बुनकर और करघे मौजूद

है कि वे विदेशोसे मँगाये जानेवाले सारे वस्त्रोकी कमी स्वय पूरी कर सकते है।" हमें यह समझ लेना चाहिए कि मद्रास, महाराष्ट्र और बगालमे हमारे हजारो करघे जापान और मैंनचेस्टरसे आनेवाले महीन सूतसे कपड़ा बुननेमे लगे हुए है। हमे उनका उपयोग हाथका कता सूत बुननेके लिए ही करना चाहिए। और इस कामके लिए राष्ट्रको बेकारकी आडम्बरपूर्ण और महीन, मात्र दिखावेकी मलमलकी ओर अपनी आसक्तिको छोडना ही पडेगा। मुझे तो ऐसी मलमलकी बुनाईमे कोई कला नही दिखाई देती जो शरीरको ढकनेकी बजाय उसे और उघाड़ देती है। कलाके सम्बन्धमे हमे अपने विचार बदलने चाहिए। यदि सामान्य परिस्थितिमे महीन वस्त्रोकी बुनाई वाछनीय मानी जाये, तो भी आजकी परिस्थिति सामान्य नही है। हम आज स्वतन्त्र और आत्म-निर्भर बननेका भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं, इसलिए हमें हाथके कते सूतका बुना वस्त्र पहननेमे ही सन्तोष मानना चाहिए। हमे एक ओर तो फैशन-परस्त लोगोको मोटे वस्त्रपर सन्तोष करनेके लिए कहना चाहिए और दूसरी ओर कताई करनेवालो को ज्यादा महीन और एकसा सूत कातना सिखाना चाहिए।

पत्र-लेखकने कहा है कि मिल-मालिकोको मिलोमें तैयार वस्त्रोके दाम घटाने चाहिए। जिन्हे स्वदेशीसे प्रेम है, जब वे लोग खद्दर पहनना अपना कर्तव्य मानने लगेगे, जब देशमें जरूरतके मुताबिक चरखे चलने लगेंगे और बुनकर लोग हाथका कता सूत इस्तेमाल करने लगेगे, तब मिल-मालिक कीमतें घटानेपर विवश हो जायेंगे। जिन लोगोका उद्देश्य अधिकसे-अधिक मुनाफा लेते चले जाना ही हो उनसे देशभक्तिकी अपील करना करीब-करीब बेमतलब लगता है।

पत्र-लेखकने कुछ अन्य असगतियोका जिक्र किया है—जैसे कि सार्वजनिक समारोहोमे खद्दर और अन्य अवसरोपर फैशनेबल अग्रेजी सूट पहनना, और खद्दरधारियो द्वारा सबसे कीमती किस्मके सिगार पीना। ये सभी बाते नये फैशनके चल निकलने पर धीरे-धीरे समाप्त हो जायेगी। मेरा तो कहना यह है कि जैसे-जैसे विदेशी वस्त्रोका पूर्ण बहिष्कार करनेमे हम समर्थ होते जायेंगे, वैसे-वैसे वर्तमान असगतियोको भी अवश्यमेव त्यागते जायेगे और देशकी विशाल जनताके हृदयमे बद्धमूल सादगी और स्वदेशीके आदर्शके अनुरूप अपने राष्ट्रीय जीवनको एक नये साँचेमे ढालते जायेगे। तब हम ससारकी कमजोर जातियोके शोषणपर आधारित साम्राज्यवादके शिकजेमे नही फँसेगे और हम नौसेना तथा वायु-सेनाओ द्वारा अभिरक्षित इस भड़कीली भौतिकवादी सभ्यताको स्वीकार करनेपर विवश नही होगे जिसने जनताका शान्तिसे रहना हराम कर रखा है। इसके विपरीत हम उस समय साम्राज्यको परिष्कृत करके एक राष्ट्र-मण्डलका रूप दे देगे जिसमे सभी राष्ट्र यदि चाहे तो ससारकी उन्नतिमे अपना सर्वोत्तम योगदान करनेके लिए और निरे भौतिक बलके बदले वास्तवमे कष्टसहन द्वारा ससारके कमजोर राष्ट्रो या जातियोको अभय देनेके लिए सम्मिलित और सक्रिय हो सकते है। असहयोगका उद्देश्य विचार-जगत्मे इसी प्रकारकी एक क्रान्ति लाना है। परन्तु ऐसी काया-पलट चरखेकी पूर्ण सफलताके बाद ही सम्भव है। भारत ससारको ऐसा सन्देश देने योग्य तभी बन सकता है जब वह सभी प्रलोभनोको अपने वशमें

कर ले और इस प्रकार विदेशी आक्रमणोके लिए दुर्भेद्य बन जाये और अपनी दो बडी-बड़ी आवश्यकताओ — खाद्य और वस्त्र — के मामलेमे आत्मनिर्भर बन जाये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९-६-१९२१

१३९. चाय-बागानके एक अधिकारीका पत्र

श्री गांधी तथा असहयोग आन्दोलनसे सम्बन्धित अन्य लोगोके नाम पत्र:

सज्जनो,

क्या आपने कभी इस बातपर तनिक भी विचार किया है कि आपका असहयोग आन्दोलन भारतको किधर लिये जा रहा है? यदि अनुमति हो तो असमके बारेमें मैं कुछ कहूँ। आप जिन बुराइयोको दूर करनेकी कोशिश कर रहे है, उन्हें दूर करने या दुरुस्त करनेका उपाय असहयोग नहीं वरन् कानून है। सबसे पहले कानून और फिर अनिवार्य शिक्षा। असमके जो चाय-बागान यूरोपीयोके नियन्त्रणमें है, उन सभीमें काम करनेवाले कुलियोंकी यूरोपीय अधिकारी बहुत अच्छी तरह देखभाल करते है। पर मुझे खेदके साथ कहना पड़ता है कि आपके ही देशवासियोंमें इन बागानोके कुलियोसे नाजायज तरीकेसे पैसे ऐंठनेकी नामुनासिब प्रवृत्ति बहुत अधिक फैली हुई है। चाय-बागानोंमें काम करनेवालों को काफी अच्छी मजदूरी मिलती है। मेरे बागानमें काम करनेवाले पुरुषोंको औसतन १० रुपये ३ आने ८ पाई, स्त्रियोको ६ रुपये १२ आने ८ पाई तथा बच्चोंको ४ रुपये १५ आने ९ पाई मिलते है। (सितम्बर १९२० की सरकारी रिपोर्ट)। इसके अलावा असमके सभी चाय-बागानोके कुलियोंको ईंधन तथा दवाई मुफ्त दी जाती है; उनका मुफ्त इलाज किया जाता है; मुफ्त रिहायशका इन्तजाम है; मवेशियोको चरानेके लिए चरागाहकी मुफ्त व्यवस्था है; खेतीके लिए मुफ्त जमीन दी जाती है; अकाल पड़नेपर चावल बाजार-भावसे काफी कममें दिया जाता है। आप यह तो मानेंगे ही कि किसीके आगे थाली परोसकर रखी जा सकती है, लेकिन उसके मुँहमें जबरदस्ती कौर तो नहीं डाला जा सकता। उसी तरह आप किसी कुलीको कामपर तो लगा सकते है, लेकिन उसे काम करनेके लिए मजबूर नहीं कर सकते; और कोई चाहे दुनियाके किसी भी धन्धेमें लगा हो, काम करना तो उसके लिए जरूरी ही है। चाय-बागानोमें नफरीपर भी काम कराया जाता है; और जिन दिनो ज्यादा काम रहता है उन दिनों पुरुष आसानीसे एक दिनमें ८ से १० आने तक और स्त्री ४ से ६ आने तक कमा

सकती है। उक्त सुविधाओंको देखते हुए, क्या आप असहयोगी लोग हृदयसे यह कह सकते हैं कि चाय-बागानका मालिक कुलियोंके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन नहीं कर रहा है? नहीं, आप ऐसा नहीं कह सकते। आपके देशवासी अब यह महसूस करने लगे हैं कि कुली पहलेकी तरह बेवकूफ नहीं रहा और अब उससे नाजायज ढंगसे ज्यादा-कुछ नहीं वसूल किया जा सकता। पर पैसा तो कहींसे आना ही चाहिए। अतः पैसा ऐंठनेके लिए आप उससे यह कहते हैं कि तुम्हें उचित मजदूरी नहीं मिलती, तुमसे कड़ी मेहनत करवाई जाती है, तुम्हारे साथ दुर्व्यवहार किया जाता है; और न जाने और भी कितनी झूठी बातें कही जाती हैं। आपकी नई कौन्सिलें क्या कर रही हैं? आप कौन-से कानून बना रहे हैं? जिस रफ्तारसे आप लोग चल रहे हैं उससे यह निश्चित है कि जल्दी ही आपको पछताना पड़ेगा।

तब क्या करना जरूरी है? असममें भारतीय कर्मचारियोंका वेतन दूना कर देना चाहिए। इससे बाबुओंमें इस समय जो असन्तोष व्याप्त है, वह समाप्त हो जायेगा। अधिकतर बाबुओंकी तनख्वाहें तो कम हैं, पर उन्हें काफी बड़े परिवारका भरण-पोषण करना होता है। इससे उन्हें कहीं-न-कहींसे पैसा पानेको मजबूर होना पड़ता है। वे बड़ोंसे, शक्तिशालियोंसे तो कुछ वसूल कर नहीं सकते, अतः छोटोंसे, कमजोरोंसे ही ऐंठते हैं। मेरे कर्मचारियोंमें एक प्रधान क्लर्क तथा उसके दो सहायक क्लर्क हैं। उन सबकी तनख्वाह बहुत कम है। वे चोरी नहीं करते और कर भी नहीं सकते, क्योंकि मुझे धोखा देना बहुत मुश्किल है। मैं उनकी वर्तमान स्थितिसे बहुत दुःखी हूँ। पर मैं अपनी तनख्वाहमें से उनकी मदद नहीं कर सकता। कारण, मैं भी अपनी जीविकाके लिए मेहनत-मशक्कत करता हूँ। और मैं मदद करूँ भी क्यों? मेरे मालिक मुझे उन्हे अधिक वेतन देनेकी इजाजत नहीं देते। पर आज नहीं तो कल, उन्हें अधिक वेतन देना ही होगा। अलबत्ता, वह आन्दोलन तथा सहयोगके जरिये ही होगा, असहयोगके जरिये नहीं। आपके अनुयायी बोल्शेविकोंका तरीका अपना रहे हैं। जहाँ खुशहाली है, वहाँ वे गड़बड़ी पैदा कर देना तथा सारी चीजोंको उलट-पलट देना चाहते हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि रचनात्मक आन्दोलन कीजिए, सहयोग कीजिए, कानून बनाइए। आप असहयोगकी बातको दिमागसे निकाल दीजिए। उससे कोई लाभ न होगा।

मैं असममें निम्नलिखित बातें चाहता हूँ:

(१) मजदूर आजाद हों, क्योंकि आजादी ही सच्चा धन है।

(२) प्रत्येक भारतीयको बिना किसी रोक-टोकके देशके किसी भी हिस्सेमें, अकालग्रस्त हिस्सेसे खुशहालीवाले हिस्सेमें, जानेका अधिकार हो।

(३) गरीब, अमीर तथा भारतीयों एवं गोरों सबके लिए समान कानून बनाये जायें।

(४) भारतीय स्त्रियों तथा उनके यूरेशियाई बच्चोंकी रक्षाके लिए कानून बनाया जाये।

(५) हर चाय-बागानके लिए एक पंचायत हो, जिसे कानूनी सत्ता हासिल हो और उसका अध्यक्ष चाय-बागानका मैनेजर हो। पंचायतको भारतीयों तथा गोरों, दोनोंके मामलोंकी सुनवाई तथा फैसला करनेका हक हो। (मेरे कुलियोंको मेरे विरुद्ध लगाये आरोपोंकी सुनवाई और फैसलेका अधिकार हो)।

(६) कुलियोंको बीमारीका भत्ता देना अनिवार्य हो।

(७) कुलियोंकी शादियोंपर से प्रतिबन्ध हटा लिया जाये।

(८) गर्भवती स्त्रियोंको छः मासतक प्रसूतिका भत्ता देना अनिवार्य हो।

आप यह स्वीकार करेंगे कि ये सब सुझाव विधायकोंके लिए हैं, न कि असहयोगियोंके लिए। इसलिए मैं कहता हूँ कि रचनात्मक आन्दोलन कीजिए, सहयोग कीजिए, कानून बनाइए।

आपके कौंसिलके सदस्य क्या कर रहे हैं? उनसे कहिए काम करें, अच्छे और उपयोगी कानून बनायें, जनताकी आवाजको सुनें। मेरा बल मेरे कुलियों-का प्यार है। उनका भी बल भारतीय जनताका उनके प्रति प्यार है; भारतीय जनतामें सहयोगी और असहयोगी, रचनात्मक आन्दोलनकारी और विधायक सभी शामिल हैं। अगर उन्हें उनका प्यार नहीं मिलता तो इसका मतलब है, भारत एक ऐसे परिवारके समान है जिसके सदस्य आपसमें विभक्त हैं, फूटसे ग्रस्त हैं। इसलिए मैं कहता हूँ कि सहयोग कीजिए। मैं जिन भारतीयोंके सम्पर्कमें आता हूँ या जिनसे मेरा साबका पड़ता है, उन सबके साथ मैं सहयोग करता हूँ, चाहे वे चमार हों या ब्राह्मण, कुली हो या राजा। सभी ईश्वरको प्यारे हैं, सभी मनुष्य हैं। सबको मैं अपना भाई मानता हूँ। जहाँ मैं मदद कर सकता हूँ, वहाँ मदद करता हूँ; जहाँ किसीका कष्ट दूर कर सकता हूँ, वैसा करता हूँ; जहाँ कोई बात समझा सकता हूँ, समझाता हूँ। भ्रातृत्वकी भावना पनपने दीजिए। यह असहयोग द्वारा सम्भव नहीं, सहयोगके द्वारा ही सम्भव है।

मुझे आपको यह बताते हुए खुशी होती है कि मैं जिस चाय-बागानका मैनेजर हूँ, उसके कुली दूसरे चाय-बागानोंके कुलियोंके मुकाबले कहीं अधिक सन्तुष्ट हैं तथा उन्हें उनके मुकाबले ज्यादा मजदूरी मिलती है। और मैं दावेके साथ कह सकता हूँ कि जबसे मैं भारत आया हूँ तभीसे मेरा ध्येय कुलियोंकी तकलीफोंको दूर करना रहा है, यद्यपि यह सही है कि सबको खुश नहीं किया जा सकता। यह सब काम सहयोगके जरिये ही सम्भव हो सका है, और मेरे अधीनस्थ बागानमें न तो कभी कोई हड़ताल हुई है और न होगी। यह मैं

विश्वासके साथ कह रहा हूँ। इसलिए मैं आपसे कहता हूँ कि आप अपनी गति-विधियाँ बन्द करें और उनकी भी जो आपकी योजनासे सहानुभूति रखते हैं; और इस तरह यह जो लोगोंपर असम छोड़कर चले जानेका पागलपन सवार हुआ है, उसे रोकें। इस भाग-दौड़के कारण हजारों लोगोंकी जानें जा रही हैं; जरा उनके बारेमें भी सोचिए। एक गलतीको दूसरी गलतीसे सुधारा नहीं जा सकता।

मैं अपने तथा थोड़े-से और बागानोंको छोड़कर बाकी सब बागानोंमें अपनाये गये तरीकोंके खिलाफ हूँ। मैं यह कबूल करता हूँ कि ये चाय-बागान जहाँ व्यवस्थाका काम बाबू लोगोंके हाथमें है, चाय-उद्योगके लिए कलंक-रूप हैं। पर स्थितिको सुधारनेके लिए सहयोगकी, रचनात्मक आन्दोलनकी, कानून बनानेकी जरूरत है, न कि आपके तरीकोंकी। आपका तरीका यानी साम्यवादी बोल्शेविकोंका तरीका है — असहयोगकी भावना भी इसमें शामिल है। सत्य किसीको नुकसान नहीं पहुँचाता।

मैं अपने इस पत्रकी भाषाके लिए, जो केवल मेरे दिलके भावोंको प्रकट करती है, माफी चाहता हूँ।

आपका,

"चुप रहनेवाला मानो अपना दोष स्वीकार करता है।"

मैं इस पत्रको जैसाका-तैसा छाप रहा हूँ। पत्र लिखनेवाले ने अपना नाम लिखा तो है, पर वे उसे जाहिर नहीं करना चाहते। मैंने नेटाल और चम्पारन, दोनों ही जगह इस पत्रके लेखकके समान लोग देखे हैं। वे कुलियोके शुभेच्छु अवश्य है, पर वे यह नही महसूस करते कि ऐसा होना केवल उस व्यक्तिके समान होना है जो दयालु होनेके नाते ही अपने पशुओकी अच्छी तरह देखभाल करता है। एक बार अगर यह मजूर कर लिया जाये कि मनुष्योके साथ जानवरोकी तरह बरताव किया जा सकता है तो बहुत-से गोरे मैनेजरोको पशुओके प्रति होनेवाली क्रूरताको रोकनेवाली सोसाइटीसे योग्यताके प्रमाणपत्र मिल सकते हैं। मुझे इस बातका पूरा अनुभव है कि मुफ्त दवा, मुफ्त इलाज, मुफ्त आवास तथा मुफ्त चरागाह — ये सब धन्धा चलानेकी चाले है, जिनका उद्देश्य कुलियोको सदाके लिए दास बनाकर रखना है। यदि उसे पूरी मजदूरी दी जाये और उससे आवास तथा दवाके लिए पैसे लिये जाये तो वह ज्यादा आजाद होगा। निःशुल्क चरागाह तो उसके लिए उतना ही जरूरी है जितना कि साँस लेना। आपको हर बागानमें जो यूरेशियाई बच्चे मिलेगे, वे वहाँकी मजदूर स्त्रियोकी दयनीय दशाके साक्षी हैं। यदि मेरा वस चले तो मैं उन सब बागानोको, जहाँ यूरेशियाई बच्चे पाये जाते है, बन्द कर दूँ, क्योकि ये बच्चे भारतीय नारीत्वके प्रति किये गये अप-राधके जीते-जागते प्रमाण है। मै जानता हूँ कि समस्या काफी कठिन है। लेकिन यदि गोरे भारतीय स्त्रियोके सतीत्वकी उतनी ही इज्जत करने लग जाये जितनी वे अपनी बहनोकी करते है तो विवाह-सम्बन्धके बाहर इस तरहके यूरेशियाई बच्चे होने ही न

पाये। मैं 'स्वच्छन्द' यौन-सम्बन्धमें विश्वास नहीं रखता। यह विषय बहुत ज्यादा दर्दनाक है। स्त्रियों तथा पुरुषोंके यौन-सम्बन्धोंकी शुद्धताको मैं बहुत ही पवित्र वस्तु मानता हूँ। और इसीलिए मैंने इन सब बागानोंमें जो-कुछ देखा व सुना है, उसके बारेमें संयमके साथ लिख पाना मेरे लिए बहुत मुश्किल है। मैं यह नहीं कहता कि केवल गोरे मैनेजर ही यह हरकत करते हैं, भारतीय मैनेजर नहीं। मैं जानता हूँ कि भारतीय मैनेजरोंका अपराध छिप जाता है, क्योंकि उनसे पैदा हुए बच्चोंका रंग भारतीयोंके रंगमें मिल जाता है। पर यह मैं अवश्य कहूँगा कि गोरे मैनेजरोंको यह अपराध करते हुए किसी प्रकारके दण्डका भय नहीं होता, भारतीय मैनेजरोंको दण्डका भय रहता है। लेकिन मैं इस अध्यायको यहीं समाप्त करता हूँ। पत्र-लेखकने सलाह दी है कि चाय-बागानके मैनेजर पंचायतोंके अध्यक्ष हों, इस कुटिल सलाहसे चाय-बागानके मालिकोंकी पोल खुल जाती है। उक्त पत्रके लेखकने असहयोगके बारेमें जो-कुछ कहा है, उससे जाहिर होता है कि उन्हें असहयोगके बारेमें पूरी जानकारी नहीं है। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि मैंने असमके किसी भी कुलीको हड़ताल करनेकी सलाह नहीं दी है। मैं वहाँके मजदूरोंकी समस्याको जाननेका भी दावा नहीं करता। इसके अलावा लेखकको यह मालूम होना चाहिए कि असहयोग पूँजी अथवा पूँजीपतियोंके खिलाफ नहीं, बल्कि इस समय जो शासन-पद्धति चालू है, उसके खिलाफ हो रहा है। लेकिन यह भी सही है कि जहाँ-कहीं बुराई होगी, अत्याचार और अन्याय होगा वहाँ कोई चाहे या न चाहे, असहयोग होगा ही। लोग एक बार असहयोगकी शक्ति जान लेनेपर उसका इस्तेमाल जरूर करेंगे। यदि वे इसका इस्तेमाल मूर्खतापूर्वक या अनुचित रूपसे करते हैं तो नुकसान उनका ही होगा। मेरे खयालसे कानून बनाने या कौन्सिलोंमें वाद-विवादसे ज्यादा फायदा नहीं हो सकता। मजदूरोंकी हालत तभी सुधर सकती है जब मालिक उनके साथ भाई-बन्धुओंकी तरह व्यवहार करने लगें, या जब मजदूरोंमें खुद इतनी समझ आ जाये कि वे अपने हकोंको जानने लगें और उन्हें हासिल करनेके तरीके भी मालूम कर लें। किसी कानूनके लिए जनमत तैयार किये बिना वैसा कानून बनाना बेकार ही नहीं, नुकसानदेह भी है। जनमत तैयार करनेका या मौजूदा मामलेमें, तरीकोंमें परिवर्तन लानेका, या मेरी शब्दावलीमें कहिए तो हृदय-परिवर्तनका सबसे जल्दी सफल होनेवाला उपाय असहयोग ही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९–६–१९२१

१४०. टिप्पणियाँ

[२९ जून, १९२१]

घड़ा अथवा गागर

मैं यह टिप्पणी, हमारी जो परीक्षा[1] होनेवाली है उसके एक दिन पहले लिख रहा हूँ। कुम्हारकी भाषामे कहे तो अभी चाकपर मिट्टीके पिण्डको रखा गया है। उसमे से शुद्ध सम्पूर्ण घडा उतरेगा अथवा छोटी गागर, यह तो कार्यकर्त्ता ही जानें अथवा भगवान् जाने। जैसी मनोवृत्ति होती है वैसी बरकत होती है। चन्दा उगाहनेवालो की मनोवृत्ति अच्छी होगी तो बरकत अवश्य होगी। गुजरातसे दस लाख रुपयोके बारेमे तो अब कोई शका नही रही। आशा तो यह है कि दस लाख रुपयेसे भी अधिक रकम मिलेगी। इसमे आश्चर्य भी क्या है? हमारे पास अपेक्षाकृत दौलत अधिक है। गुजरातकी मिलें ही हमारी आशा पूरी कर सकती है। गुजरातके बाहर व्यापार करनेवाले साहसी व्यापारी दे सकते है, राजा लोग भयका त्याग करे तो वे भी इतना दे सकते है। हमने तो आजतक ऐसे कार्योमे प्रजाके रूपमे हाथ ही नही डाला, अपनी शक्तिको आजमाया ही नही है, इसीसे हमने डरते-डरते कम अनुमान लगाया। भय छोडेगे तो आगे बढेगे।

लेकिन हमे तो तीन लाख सदस्य और एक लाख चरखे चाहिए। हम इतना करते है या नही, इसपर हमारा भविष्य निर्भर करता है। ईश्वर! गुजरातकी और भारतकी लाज रखना।

हमारा दायित्व

लेकिन जैसे-जैसे पैसा बढता जाता है, सदस्यो और चरखोकी सख्यामे वृद्धि होती जाती है वैसे-वैसे हमारा दायित्व भी बढता जाता है। पैसा मिलनेपर हम भाग्यवान नही माने जायेंगे, हमे पैसेको खर्च करना भी आना चाहिए, पैसेका हिसाब रखना आना चाहिए। हमे उस पैसेका सदुपयोग भी करना चाहिए। हमने पैसा ब्याजपर देनेके लिए नही लिया है बल्कि आजकी जरूरतको देखते हुए लिया है। हमे उस पैसेके द्वारा जन-जीवनको उन्नत बनाना है। हमे विदेशी कपडेका बहिष्कार करना है। हमे [बच्चोको] राष्ट्रीय शिक्षा देनी है, हमे अन्त्यजोकी दयनीय स्थितिको सुधारना है। हमे अकालकी पीडाको दूर करना है। हमे मद्यपान करनेवालो से मद्यको छुड़ाना है। इन सब कार्योमे हमे सारा पैसा चाहिए। उसके लिए हमारे पास ईमानदार कार्यकर्त्ता होने चाहिए। हमारा हिसाब स्पष्ट होना चाहिए। एक बालकको भी उसे देखनेका हक होना चाहिए। हमे जो पैसा मिला है उसके शुद्ध उपयोगपर ही हम भविष्यमें

१. ३० जून, इस तारीख तक बेजवाडा कांग्रेसमें निश्चित किये गये कार्यक्रमको पूरा किया जाना था।

मददकी आशा रख सकते है। इसमे हमारे पास निर्दोष बहनोके अमूल्य आभूषण आये है। कितनी ही बालिकाओने वे सब आभूषण दे डाले है जो उन्हे अत्यन्त प्रिय थे। मै कितनोका नाम जानता हूँ लेकिन मै उन्हे प्रकट नही करना चाहता। उन्होने भी नामसे कोई सरोकार नही रखा। स्त्रियोके धनको उनका नाम प्रकट करके देना मुझे अच्छा ही नही लगता। उसमे मै इतनी ज्यादा पवित्रताका आरोप करता हूँ कि उनका नाम प्रकट करना मुझे पाप-जैसा लगता है। उन्होने वे आभूषण सिर्फ धर्मार्थ ही दिये है। एक विधवा बहनने अपने पास रखे हुए मोती-माणिकके सब आभूषण दिये है। उन्हे लेते समय मेरा हृदय भर आया। क्या हम इन आभूषणोके अधिकारी है? विधवा अपने आभूषणोको दे डालनेकी कभी इच्छा नही करती, वह उन्हे सँभालकर रखती है। इस बहनको मैंने सावधान किया। मैने कहा कि अगर ये आभूषण सकोच अथवा शर्मके मारे दिये हो तो वापस ले लो। लेकिन वह क्यो लेती? उसने तो निश्चय कर रखा था। इस तरह मिले पैसेका हम गफलतसे, मूर्खतापूर्ण ढगसे, बेईमानी-से दुरुपयोग करे तो? तो हमें स्वराज्य तो कभी नही मिल सकता, इस तरह हम नरकके भी अधिकारी बनेंगे। इन बहनोका पुण्य, इनकी श्रद्धा हमें निभा लेगी, हमारी लाज रखेगी तथा हमारे मनोरथको पूर्ण करेगी।

पारसियोंकी उदारता

पारसी सघर्षमे भाग नही ले रहे है — ऐसा मैंने जब-जब सुना है तब-तब मुझे हँसी ही आई है। कुल मिलाकर हिन्दुस्तानमें एक लाख पारसी हैं। अगर हम सख्याके हिसाबसे ही विचार करे तो इनसे ४,१२० रुपया, उतने ही सदस्य और ८२४ चरखे मिल जाये तो हम कह सकते है कि उन्होने अपना भाग अदा कर दिया। लेकिन ४,१२० रुपया तो उन्होंने छुटपुट दान द्वारा ही पूरा कर दिया है। अनेक गुमनाम भाइयोंने जो रुपया भेजा है उससे ही यह रकम पूरी हो गई होगी। पारसी रुस्तमजीने ५२,००० रुपया भेजा है, इसे भी मैं उसीमें शामिल करता हूँ और मै मानता हूँ कि उन सबने मिलकर ४,१२० सदस्य भी अवश्य दिये होगे। कितने ही पारसी स्वयसेवक काग्रेसके सदस्य बनानेका काम कर रहे हैं। वे बम्बईमें अच्छा कार्य कर रहे है। पारसी वकीलोने वकालत भी छोड़ी है। एक सज्जनने अपना विज्ञान सम्बन्धी ज्ञान प्रजाको देनेका निश्चय किया है। चरखे अवश्य कम चलते है, तथापि कुछ-एक पारसी बहनो और भाइयोने चरखेके कामको हाथमे ले लिया है। वे शराबकी दुकानोपर धरना भी देते है। इसलिए क्या यह कहा जा सकता है कि उन्होने किसी भी क्षेत्रमे कम काम किया है? उनके समस्त समाचारपत्र इस आन्दोलनके विरुद्ध नही है। 'साँझ वर्तमान'की सेवा प्रसिद्ध है। भाई भरूचाकी मेहनतसे कौन परिचित नही है? पारसी बहने पर्याप्त सख्यामे जो काम कर रही है उसका विवरण तो मै किसी अन्य स्थानपर दूंगा लेकिन उनमें से एकका नाम दिये बिना बात नही बन सकती। भारतके पितामहकी पौत्री तनतोड काम कर रही है। वे पूरी तरह खादीकी पोशाक ही पहनती है। यदि पारसी समाजने इतना ही किया होता तो भी हमने उनका उपकार माना होता, उनकी ओर हमने अँगुली न उठाई होती।

लेकिन भाई गोदरेजने तो बिलकुल हद ही कर दी है। उन्होंने तो तीन लाख रुपयेका दान दिया है। इतना तो किसी एक व्यक्तिने अबतक नही दिया। यह सच है कि यह रकम इस समय हमारे पास नकदीके रूपमे नही है, लेकिन यह तो सोनेकी मोहरके समान है। उन्होने यह रकम हमारी प्रवृत्तिके दो शुद्धतम अंगोके लिए अर्थात् मद्य-निषेध और अन्त्यजोकी उन्नतिके लिए दी है। उन्होने यह रकम खास तौरसे अन्त्यजोकी उन्नतिके लिए दी है। इस कार्यके लिए मैं खुद तो सिर्फ हिन्दुओका पैसा ही लेना चाहता हूँ। यह सुधार हिन्दुओको ही करना है। लेकिन इस भाईने अपने निर्मल हृदयसे जब इसे देनेका निश्चय किया तो मैं इसे कैसे अस्वीकार कर सकता था? इस रकमको मिलाकर, जहाँतक मैं जानता हूँ, पारसियोकी ओरसे कमसे-कम चार लाख रुपये हो जाते है। उनकी ओरसे जो भेंट मिलनेवाली है वह अलग है। भाई गोदरेज और पारसियोको हम जितना धन्यवाद दें उतना कम है।

दक्षिण आफ्रिकासे भी मदद आ चुकी है। पाटीदार मण्डलने ८,२७५ रुपया, खत्री मण्डलने ९६० रुपया तार द्वारा भेजा है। मैं अभी और अधिककी उम्मीद रखता हूँ।[1] दक्षिण आफ्रिकाके पाटीदारोकी दानशीलताका तो मुझे हमेशा अच्छा अनुभव होता रहा है।

कुछ लोग यह मानते जान पड़ते है कि जूनके बाद उन्हे अनुमति लिये बिना पैसा इकट्ठा करना अथवा भेजना नही चाहिए। यह तो निरा वहम है। आजतक हमने बेजवाडामे तय की गई तीन वस्तुओपर ही ध्यान दिया है। उसका अर्थ यह नही है कि जूनके बाद नये सदस्य अथवा नये चरखे नही बनवाने चाहिए और पैसे इकट्ठे नही करने चाहिए। एक करोड रुपया इकट्ठा करनेके बाद तिलक स्वराज्य-कोषको हम भले बन्द कर दे। लेकिन एक करोड़ पूरा होने तक तो पैसा इकट्ठा करनेके लिए हम बँधे हुए हैं। हमारी प्रतिज्ञाके दो अंग है। एक करोड रुपया इकट्ठा करना और वह भी ३० जूनतक। अगर हम तीस जूनतक न कर सके और उसके बाद भी मेहनत करके एक करोड़ रुपया इकट्ठा करें तो हम ऋणमुक्त तो हो ही जायेंगे। अवधि बीतनेपर लज्जित हों। लेकिन बीतनेपर भी न देकर अथवा कम देकर हम निर्लज्ज तो नही बन सकते। इसलिए मुझे उम्मीद है कि जिन्हे इस कोषमें अभी चन्दा देना है वे अवश्य देंगे। गुजरातको उसके लिए प्रयत्न करनेकी जरूरत नही होगी क्योकि गुजरात अपना फर्ज अदा कर चुका होगा।

यह तो हुआ तिलक स्वराज्य-कोषके सम्बन्धमे। लेकिन सदस्यो और चरखोका क्या हो? [वचन तो] सिर्फ इतना ही है कि तीस जूनतक हम गुजरातसे कमसे-कम तीन लाख सदस्य बनाये और एक लाख चरखे चलाये। लेकिन हमारा कर्त्तव्य तो यह है कि गुजरात इस वर्ष २१ वर्षके लगभग प्रत्येक स्त्री-पुरुषको सदस्य बनाये, गुजरातके प्रत्येक घरमे चरखेका प्रवेश हो और आबाल-वृद्धको चरखा चलानेके लिए प्रेरित किया जाये। यदि हम गुजरात प्रान्तकी नौ लाख आबादी मानें और प्रति पाँच

१ यहाँ मूलमें एक पादटिप्पणी दी गई है जिसमें कहा गया है: "यह लिखनेके बाद तार द्वारा सूचना मिली है कि रुटैंजरकी इंडियन एसोसिएशनकी ओरसे लगभग १०० पौंड तथा नैरोबीसे १,२७४ रु० प्राप्त हुए हैं।"

व्यक्तियोको एक घर गिने तो अठारह लाख घर हुए। इसलिए जबतक हम ढाई लाख चरखे न चलाने लगे तबतक हमे सन्तोष नही होना चाहिए। चरखे और सदस्योकी सख्यामे वृद्धि करनेकी प्रवृत्तिकी कोई सीमा नही हो सकती। जैसे-जैसे इसमे वृद्धि होगी वैसे-वैसे हमारा बल बढेगा, स्वराज्यके झडेका तेज और भी प्रखर होगा, स्वराज्यका जहाज आगे बढानेके लिए हवा और प्रचण्ड होगी और स्वराज्यके जहाजकी गतिमें भी तीव्रता आयेगी। जून मासतक अमुक सख्यामे चरखे बढाकर और सदस्य बनाकर हमने अपनी गतिके वेगको आँका और अनुमान लगाया कि हमारा उत्साह कम हुआ कि बढा, हमारा विश्वास कम हुआ कि बढा। इन दोनो प्रवृत्तियोके निरन्तर जारी रहनेपर ही हमारे स्वराज्यका आधार निर्भर करता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३–७–१९२१

१४१. पत्र : लाला लाजपतरायको

[३० जून, १९२१ के पूर्व]

प्रिय लालाजी,

मुझे पूरी आशा है कि इस महीनेकी अन्तिम तिथिके पहले ही गुजरात जितना चन्दा देनेकी आशा कर रहा है, पजाब भी उतना दे चुकेगा। मेरे ऐसा कहनेका कारण यह है कि मै अमृतसरको बहुत अच्छी तरहसे जानता हूँ। अमृतसरने चन्दा वसूल करनेके सम्बन्धमे अबतक बहुत ही कम काम किया है। धनके मामलेमें अमृतसरका पजाबमें वही स्थान है जो गुजरातमें अहमदाबादका है। भारतमे सभी स्थानोसे अधिक जोरका धक्का अमृतसरको लगा है और इसलिए अमानवीय अपमानोको असम्भव बनानेके लिए चलाये जानेवाले सघर्षमे भी उसे अगुआ होना चाहिए। मेरी कामना है कि आपके प्रयत्नोसे अमृतसरके धनाढ्य व्यक्तियोको उनका महान् उत्तरदायित्व समझाना सम्भव हो सकेगा।

हृदयसे आपका,

गाधीजीके स्वाक्षरोमे मूल अग्रेजी मसविदे (एस० एन० ७५५६) की फोटो-नकलसे।

१४२. भाषण : बोरीवलीकी सभामें[1]

३० जून, १९२१

श्री गांधीने कहा कि बृहस्पतिवार आखिरी और सबसे महत्त्वपूर्ण दिन है। यह भारतकी परीक्षाका समय है और मुझे उम्मीद है आप इस परीक्षामें उत्तीर्ण होंगे। आज समय बहुत मूल्यवान है और मैं कोई लम्बा भाषण देने नहीं जा रहा हूँ। आज ही एक करोड़ रुपया इकट्ठा करना है और मैं आशा करता हूँ कि आप अपने कर्त्तव्यको पूरी तरह निभायेंगे। मैं नहीं जानता कि मैं यह रकम कैसे इकट्ठी कर पाऊँगा, लेकिन मुझे भारतीयोंकी योग्यता और देशभक्तिमें अत्यधिक विश्वास है और मेरे अन्तर्तमको इस बातका पक्का यकीन है कि हम यह जरूरी रकम इकट्ठी कर लेंगे। मुझे नहीं मालूम कि बम्बईमें कितना रुपया इकट्ठा हुआ है, क्योंकि मैं अहमदाबाद गया हुआ था। मुझे यह भी नहीं मालूम कि गुजरातमें कितना रुपया इकट्ठा हुआ है। गुजरातने दस लाख रुपया इकट्ठा करनेका जिम्मा लिया था; किन्तु गुजरातके लोगोंने वस्तुतः लगभग १२ लाख रुपया इकट्ठा कर लिया है और उन्हें पन्द्रह लाखकी पूरी-पूरी उम्मीद है। जब मैं अहमदाबादसे बम्बई आ रहा था तो रास्तेमें एक सज्जनने मुझे एक लाख रुपयेका चेक दिया और कहा कि वे बम्बईके समीप जमीनका एक बेशकीमती टुकड़ा भी दानमें देंगे। पंडालके द्वारपर मुझे २५,००० रुपयेका एक चेक दिया गया है। जोहानिसबर्गसे मुझे ९,००० रुपयेकी एक हुंडी और खत्री समाजसे १,००० रुपये मिले हैं।

मुझे बड़ी आशा है कि बम्बईके लोग मुझे आवश्यक रकम देंगे, क्योंकि चन्दा इकट्ठा करनेका बहुत बड़ा दायित्व बम्बईके कन्धोंपर ही है। जब मैं बम्बईसे रवाना हुआ था तबतक आप लोगोंने लगभग पन्द्रह-बीस लाख रुपया इकट्ठा कर लिया था और मुझे पूरी उम्मीद है कि भारतकी आज जो कसौटी हो रही है, उसमें वह खरा उतरेगा। मैंने वहाँ सिर्फ यह सुना ही है कि बोरीवलीमें बहुतसे धनवान व्यापारी रहते हैं और मैं भगवान्से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस कोषमें मुक्त-हस्त होकर दान देंगे।

मैंने अहमदाबाद और बम्बईमें सुना है कि वैष्णवोंको इस आन्दोलनके प्रति बहुत ज्यादा शंकाएँ हैं। मैं उन्हें एक पत्र[2] लिख चुका हूँ जिसे शायद आप सब लोग

१. बोरीवलीकी जनताने गुरुवारकी सुबह गांधीजीको तिलक स्वराज्य-कोषके लिए एक थैली भेंट की। स्त्री-पुरुष बहुत बड़ी तादादमें इकट्ठे हुए थे। उपस्थित लोगोंमें वि० झ० पटेल, अली बन्धु और सरोजिनी नायडू भी थे।

२. देखिए "वैष्णवोंसे", ३-७-१९२१।

देखेंगे। आज तो भारत यही अपेक्षा रखता है कि सभी समुदायोंके लोग एक होकर स्वराज्य प्राप्तिके लिए महान् प्रयत्न करेंगे। तथापि इसका मतलब यह नहीं है कि आप अपना-अपना धर्म छोड़ दें। जबतक यह संसार है तबतक विचारोंमें अनेकता और मतभेद तथा भिन्न-भिन्न धर्म भी रहेंगे ही। लेकिन आपको स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए एक होकर प्रयत्न करना है। तथापि समाजके निम्न वर्गोंको इस पतितावस्थामें रखकर आप कभी स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकेंगे। उनको दबाकर रखना, हेय दृष्टिसे देखना, उनसे नफरत करना, उन्हें गालियाँ देना, उन्हें अपने कुओंसे पानी न भरने देना, अपने गाँवोंसे अलग रखना — यह सब निश्चय ही वैष्णव धर्म नहीं है। वह तो ईश्वर-विहीन धर्म है। वैष्णव धर्म तो कुछ और ही चीज है। वल्लभाचार्यने अपने शिष्योंको घृणा और असहिष्णुताकी शिक्षा कभी नहीं दी थी। उनके उपदेशोंका आशय था कि आपको दलित वर्गोंको, गरीबी और अज्ञानके अन्धकारमें डूबे हुए लोगोंको उठाना चाहिए। वल्लभाचार्यने आपको यह नहीं बताया है कि आप अपने भाइयोंको दलित करके रखें। मैं इन बातोंके सम्बन्धमें जितना ज्यादा सोचता हूँ, मेरा यह विश्वास उतना ही दृढ़ होता जाता है कि इस सवालके बारेमें वैष्णवोंने जो रुख अपना रखा है वह गलत है।

मैं आपसे यह सब एक दुनियादार व्यक्तिकी हैसियतसे और एक ऐसे व्यक्तिकी हैसियतसे कह रहा हूँ जिसे इन सब बातोंका बहुत अनुभव है। मैं अपने दक्षिण आफ्रिका-के अनुभवोंसे यह समझ गया हूँ कि किसी दलित वर्गका सदस्य होनेका मतलब क्या होता है। दक्षिण आफ्रिकामें मेरे साथ दलित वर्गके व्यक्तिकी तरह व्यवहार किया गया था। वहाँ मुझे गोरे लोगोंसे अलग उस स्थानपर रहना पड़ा था, जिसे "बस्ती" कहते थे। वह स्थान सचमुच एक ढेढ़वाड़ा (भंगियोंके रहनेका स्थान) ही था। वहाँ सफाई वगैरहका कोई इन्तजाम नहीं था और न रोशनी, सड़कें अथवा किसी सभ्य शहरमें सुलभ होनेवाली सुविधाएँ ही थीं। वहाँ मैंने जाना कि अन्त्यज होनेका मतलब क्या होता है और मैंने वे सारे कष्ट सहे हैं जिनसे भारतमें आज मेरे भाई कराह रहे हैं। अगर आप अपने भाइयोंके साथ अच्छा बरताव नहीं कर सकते तो आपके भारतीय होनेसे क्या फायदा है, और आपके इस देशमें जन्म लेनेसे क्या लाभ है?

अंग्रेजोंके हाथों आपको जो अपमान और अत्याचार सहना पड़ा है उसीके कारण आपने इस सरकारको शैतानी सरकार कहा है और आपने उसके साथ सहयोग न करनेका निश्चय किया है। तो क्या आप भारतीय लोग भी अपने भाइयोंके साथ वही बरताव करेंगे जो गोरे आपके साथ कर रहे हैं? आप जो-कुछ कर रहे हैं, क्या उसका हिसाब-किताब करना उचित न होगा? क्या यह उचित नहीं होगा कि आप जो-कुछ कर रहे हैं, तनिक रुककर उसपर विचार करें? मैंने आपसे अस्पृश्योंके हाथका भोजन खानेके लिए नहीं कहा है, मैंने तो आपसे सिर्फ उनके साथ भाइयोंका-सा बरताव

करनेके लिए ही कहा है। अगर आप सब एक होकर संकल्प करें, तो आप इसी क्षण स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं, लेकिन आप तो इतनी सारी जातियोंमें विभक्त हैं। अगर हिन्दू यह सोचे कि मुसलमान उनके जन्मजात शत्रु हैं और इसलिए उनसे घृणा करना अपना कर्त्तव्य मान लें, तो आप कभी स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते। आप भयके कारण ही अस्पृश्यताको दूर करनेसे भागते हैं। जून मासके इस आखिरी दिन, उच्च संकल्प और महत्त्वके इस दिन में आपसे कहूँगा कि इसी भयने आपको अपने भाइयोंको दलित रखने और उनसे पृथक जीवन व्यतीत करनेके लिए विवश किया है। जबतक आपके दिलोंमें गरीबोंके लिए करुणा और दयाका भाव नहीं जागता, जबतक आपके दिलोंमें अपने भाइयोंके प्रति प्रेम-भाव नहीं उत्पन्न होता तबतक आप भारतीय स्वराज्यके योग्य नहीं होंगे। मुझे एक करोड़ रुपयोंकी उतनी चिन्ता नहीं, मैं उसकी इतनी परवाह नहीं करता, क्योंकि किसी-न-किसी तरह आप यह रकम इकट्ठी कर ही लेंगे। लेकिन मैं आपसे जो चाहता हूँ वह यह है कि आप अपने दलित भाइयोंसे प्यार करें। मैं जिस स्वराज्यकी स्थापना करना चाहता हूँ वह घृणा और भयपर आधारित नहीं होगा, मेरा स्वराज्य तो न्याय और सत्यपर आधारित होगा। वह धर्मराज्य होगा।

कलसे आप लोग मुझे पैसा माँगते हुए, उसकी चर्चा करते हुए नहीं सुनेंगे। आप मुझसे कुछ और ही सुनेंगे। कलसे आपको सभी विदेशी वस्तुओंका व्यापार छोड़ना होगा। जो विदेशी कपड़ेका लेन-देन करते हैं, उन्हें उसे छोड़ देना होगा। विलायती कपड़ेका व्यापार करनेवालों को यह व्यापार छोड़ देना होगा और मैं बहनोंसे अपील करता हूँ कि वे विदेशी वस्त्र पहनना छोड़ दें और खद्दर पहनें। अगर आप देशके प्रति अपना कर्त्तव्य निभाना चाहते हैं तो आपको विदेशी वस्त्रोंका त्याग करके खद्दर पहनना चाहिए। अगर मेरी बहनें और बेटियाँ मुझे प्यार करती हैं और अगर उनके दिलोंमें मेरे प्रति तनिक भी आदर-भाव है तो मैं उनसे अपील करता हूँ कि वे विदेशी वस्त्र पहनना छोड़ दें और हमेशाके लिए विलासिताके इन उपकरणोंको त्याग देनेका पक्का निश्चय कर लें।

यहाँ मैं आपको एक व्यक्तिगत अनुभव सुनाऊँगा। अभी पिछले दिन ही मेरी पत्नीने मुझसे कहा कि वह जो मोटे खद्दरकी साड़ी पहने हुए है, उससे उसे खाना पकाने और घरका काम-काज करनेमें असुविधा होती है और वह मुझसे कुछ हलका और महीन वस्त्र पहननेकी अनुमति चाहती है। जैसे मैं जो कुछ करना चाहूँ वह करनेकी उसने मुझे पूरी स्वतन्त्रता दे रखी है, वैसे ही मैंने भी उसे सभी बातोंमें पूरी स्वतन्त्रता दे रखी है। इस हालतमें मैं स्वभावतः उससे कुछ करनेको नहीं कहना चाहता था। लेकिन मुझे अपनी पत्नीसे कहना पड़ा कि अगर वह मेरा भोजन खादी पहनकर नहीं पका सकती तो अच्छा हो कि वह मेरे लिए कुछ पकाये ही नहीं, क्योंकि मैं अपवित्र विदेशी कपड़े पहनकर बनाये गये भोजनमें से कुछ भी ग्रहण नहीं करूँगा। मैं अपनी

पत्नी द्वारा विदेशी वस्त्र पहनकर पकाये गये भोजनको हाथ भी नहीं लगाऊँगा। अगर भारतीय स्त्रियाँ इतना त्याग भी नहीं करना चाहतीं, अगर वे इतना कष्ट उठानेको भी तैयार नहीं हैं तो आपको अभी जलियाँवाला बाग-जैसी बहुत सारी विभीषिकाएँ झेलनी होंगी। अगर आप मेरे कथनकी ओर ध्यान नहीं देंगी तो आपको महीनेकी इस आखिरी तारीखको जो कष्ट उठाना पड़ रहा है आगे उससे भी अधिक कष्ट सहन करने होंगे। अन्तमें उन्होंने सभी हिन्दुओं और मुसलमानोंसे उत्कटता-पूर्वक अपील की कि वे सभी विदेशी वस्तुओंका त्याग कर दें और सिर्फ स्वदेशमें ही बनी वस्तुओंका इस्तेमाल करें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १–७–१९२१

१४३. भाषण: पारसियोंकी सभामें[1]

३० जून, १९२१

श्री गांधीने अपने लम्बे भाषणके दौरान श्रोताओंसे अनुरोध किया कि मेरे बोलते समय आप लोग कोई बाधा न डालें और हर्षध्वनि वगैरह न करें। उन्होंने कहा, मैंने ऐसा कभी नहीं कहा कि पारसी लोग मुझे अच्छी तरहसे नहीं जानते और वे मेरे साथ नहीं हैं। जब मैं छोटा बच्चा था, तभीसे मैं पारसियोंको जानता हूँ और पारसी मुझे जानते हैं। मेरे सबसे अच्छे और अन्तरंग मित्र पारसी हैं और पारसी समाजसे मेरा सम्बन्ध बहुत घनिष्ठ है। दादाभाई मेरे पिताके, बल्कि पितामहके समान थे और अगर आपको कभी स्वराज्य मिला तो यह दादाभाईके प्रयत्नों और इस देशके लिए उन्होंने जो शानदार काम किया है उसकी बदौलत होगा। जब मैं नवयुवक था, तब उन्होंने ही मुझे स्वराज्यका प्रथम पाठ पढ़ाया था। जब मैं दक्षिण आफ्रिकासे एक शिष्टमण्डल लेकर इंग्लैंड गया था तब दादाभाई नौरोजी और श्री फीरोजशाह मेहता मुझसे जो कहते थे, मैं वही बोलता और करता था। मेरे मनमें ऐसा खयाल कभी नहीं आया कि पारसी लोग मेरे विरुद्ध हैं। मुझे बराबर पूरी उम्मीद रही है कि इस आन्दोलनमें वे मेरा साथ देंगे। मुझे इस बातका तनिक भी दुःख नहीं है कि उनके मनमें शंकाएँ हैं। ये सिर्फ पारसी लोग ही हैं जो सैकड़ों वर्षोंसे तीस करोड़ भारतीयोंके बीच रहते आये हैं और तब भी उन्होंने दुनियाको अपने अस्तित्वका विशेष बोध कराया है और इस देशके जीवनके विभिन्न क्षेत्रोंमें एक प्रमुख स्थान प्राप्त

१. पारसियोंकी यह सभा गांधीजीको ३०,००१ की एक थैली भेंट करनेके लिए बम्बईके एक्सलसियर थियेटरमें हुई थी। सभामें वि० झ० पटेल, सरोजिनी नायडू, श्री और श्रीमती पिक्थॉल, अली बन्धु और डाक्टर किचलू भी मौजूद थे।

कर लिया है। मैं आपकी झूठी प्रशंसा करने नहीं जा रहा हूँ। मेरा ऐसा करनेका इरादा नहीं है। मैं वही कह रहा हूँ जो मैं सचमुच महसूस करता हूँ। संसारमें अनेक ऐसी जातियाँ हैं जो संख्यामें पारसियोंके समान ही कम हैं, लेकिन ऐसा नहीं है कि उन्हें उनके देशसे बाहर भी सारी दुनिया जानती हो। संसारमें ऐसा कौन-सा स्थान है जहाँके लोग पारसी समाजसे परिचित नहीं हैं, हालाँकि उनकी संख्या सिर्फ ८०,००० है। अगर बम्बई सुन्दर है, अगर बम्बई अपनी उदारताके लिए प्रसिद्ध है, अगर बम्बई अपनी लोक-भावनाके लिए प्रसिद्ध है तो यह सब आप लोगोंके कारण ही है। अगर पारसी न होते तो बम्बई भी भारतके किसी अन्य नगरके समान ही होता। इसके लिए सारा भारत आप लोगोंका आभारी है। अगर राजनीतिक क्षेत्रमें किसीने भारतीयोंको नेतृत्व दिया है तो पारसियोंने ही दिया है। और मैं अपने हिन्दू और मुसलमान मित्रोंसे कहूँगा कि वे पारसियोंपर किसी तरहका दोषारोपण न करें। अगर सभी समुदायोंके लोग परस्पर एक हो जायें तो आप इसी क्षण स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। कमसे-कम मुझे तो इस बातपर बड़ा गर्व है कि पारसी किसी और देशमें न जाकर इसी देशमें आये और मुझे इस बातकी भी बड़ी खुशी है कि उन्हें गुजरातने आश्रय दिया, जिसकी उन्होंने बहुमूल्य सेवा की।

दक्षिण आफ्रिकामें जब गोरोंने आधी रातको मेरे मकानको घेर लिया था और वे मुझे मार डालना चाहते थे, उस समय जिन सज्जनने अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर अपना तथा अपने परिवारका सब-कुछ खतरेमें डालकर मेरी रक्षा की थी और मेरा साथ दिया था, वे पारसी रुस्तमजी ही थे। जबतक मैं जीवित रहूँगा तबतक पारसी रुस्तमजीने मेरे लिए जो-कुछ किया है, उसे कभी नहीं भूल पाऊँगा। पारसी लोग पवित्रता, सत्य और ईमानदारीसे भरपूर हैं और मुझे एक जातिके रूपमें आपपर अभिमान है। अगर आप लोगोंने ३०,००० रुपये इकट्ठे न किये होते और मुझे सिर्फ पाँच रुपये ही दिये होते तो भी मैं आप लोगोंसे सन्तुष्ट रहता। श्री गोदरेज मुझे पहले ही तीन लाख रुपये दे चुके हैं और उन्होंने समस्त भारतको दिखा दिया है कि पारसी लोग क्या-कुछ कर सकते हैं। पारसियोंने मुक्त-हस्त होकर न जाने मुझे कितना-कुछ दिया है और यह झूठ है कि भारत आकर आपने इस देशकी कोई सेवा नहीं की है। मेरे विचारसे तो आपने इस देशके प्रति अपना ऋण पूरा-पूरा चुका दिया है। स्वभावसे आप लोगोंकी जाति एक व्यावसायिक जाति है और यह दु:खकी बात है कि अभी थोड़े समयसे आप लोग सरकारी नौकरी भी करने लगे हैं। यह न केवल पारसी समाजकी बल्कि समस्त भारतकी क्षति है। लेकिन आपने जो शिक्षा प्राप्त की है उसने आपको सरकारी नौकरी करनेको विवश कर दिया है और यह सचमुच बड़े दु:खकी बात है। व्यापारने आपको ईमानदार बनना, पैसा इकट्ठा करके इस देशके अन्य वर्गोंकी सहायता करना सिखाया है और अब मैं आपसे वर्तमान परिस्थिति और अपने भविष्यका लेखा-जोखा करनेके लिए कहता हूँ। आपने दादाभाई नौरोजी,

फीरोजशाह मेहता और जमशेदजी टाटा जैसे नर-रत्नोंको जन्म देकर देशके प्रति अपना ऋण पूरा-पूरा चुका दिया है। मैं आप लोगोंसे स्वराज्य-आन्दोलनमें, जो अब जोरों-पर है, भाग लेनेका अनुरोध करता हूँ। आप लोग जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें अन्य समुदायोंका मुकाबला कर सकते हैं। अगर आपने अतीतमें इस देशके लिए इतना किया है, तो इस समय आप अपने-आपको इस आन्दोलनसे अलग क्यों रख रहे हैं? आप लोग बहुत समृद्ध हैं, आपके पास करोड़ों रुपये हैं, तो फिर आपने कोषके लिए और ज्यादा पैसा क्यों नहीं दिया? दादाभाईने राजनीतिक संन्यासीका जीवन व्यतीत करते हुए भारतकी जो सेवा की थी वह भारतको, सिर्फ पारसियोंको ही नहीं वरन् समस्त समुदायों और जातियोंको, स्वतन्त्र करनेके लिए ही की थी। मैं आपसे आपके मित्रके रूपमें इसलिए बात करने नहीं जा रहा हूँ, क्योंकि मैं आप लोगोंका बहुत बड़ा प्रशंसक हूँ और दीर्घकालसे आप लोगोंके साथ मेरा बहुत निकट सम्पर्क रहा है।

महात्माजीने आगे कहा कि अगर आप चाहें तो कोई भी काम बड़ी आसानीसे कर सकते हैं, क्योंकि आपका समाज सिर्फ अस्सी हजार लोगोंका एक छोटा और सुगठित समाज है। हिन्दुओं और मुसलमानोंके सम्बन्धमें यह बात नहीं कही जा सकती। अगर आप अंग्रेजोंके आनेसे पूर्व स्वतन्त्र रह सकते थे तो मेरी समझमें नहीं आता कि आप स्वराज्य प्राप्त करनेके बाद स्वतन्त्र क्यों नहीं रह सकते? इस देशमें छोटे समुदायोंकी रक्षा करना हिन्दुओं और मुसलमानोंका प्रथम कर्त्तव्य है। अगर हिन्दू और मुसलमान स्वयं अपने प्रति सच्चे हैं तो वे इस बातका ध्यान रखेंगे कि वे किसी भी पारसीके भूखे रहते अपने मुँहमें अन्नका एक कौर भी न डालेंगे। अगर हिन्दू और मुसलमान इसके अतिरिक्त कुछ और करना चाहते हैं तो माना जायेगा कि वे धर्म-राज्यके लिए काम नहीं कर रहे हैं। मैं आपको निर्भय बनाना चाहता हूँ और आपके मनमें किसी तरहकी शंका नहीं रहने देना चाहता। मैं चाहता हूँ कि आप अपनी सारी शक्ति देशके कल्याणके लिए लगायें। अगर आप ऐसा करें तो आप इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं तथा आप खिलाफत और पंजाब सम्बन्धी अन्यायोंका भी निराकरण कर सकते हैं। अगर आप संसारपर अंग्रेजोंकी तरह राज्य करना चाहते हैं तब मैं कहूँगा कि भारतीय उसके लायक नहीं हैं और मैं ईश्वरसे प्रार्थना करूँगा कि वे कभी उसके लायक भी न हों। क्या भारतीय हब्शी लोगोंको गुलाम बनाना चाहते हैं अथवा उन्हें कैदी बनाना चाहते हैं अथवा उनसे बेगार करवाना चाहते हैं और उन्हें भिखमंगा बनाकर रखना चाहते हैं? मैं चाहता हूँ कि आप आत्मशुद्धिके द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त करें और फिर समस्त संसारसे बुराइयोंको दूर करें।

मैं आपसे कहूँगा कि आप इसी क्षणसे स्वराज्यवादी बन जायें। आप स्वराज्य-वादी तो हैं ही, लेकिन आपके मनमें अभी कुछ शंकाएँ हैं; मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप सच्चे स्वराज्यवादी बनें। आप इन प्रश्नोंपर अच्छी तरहसे विचार करें और अपने-आपसे पूछें कि गांधी जो यह-सब बातें करता है, सो क्या वह मूर्ख है।

भारत जो स्वराज्य प्राप्त करनेवाला है वह धर्मराज्य है। भारतीय असत्यपर नहीं, बल्कि सत्यपर आधारित स्वराज्यकी स्थापना करना चाहते हैं और हम उन सभी चीजोंसे दूर रहना चाहते हैं जो असत्य हैं। मुझे शैतानसे असहयोग करनेकी शिक्षा पारसी समाजसे ही मिली है। इसने मुझे शैतानसे, सभी बुराइयोंसे अलग रहना सिखाया है। मैं अंग्रेजोंसे घृणा नहीं करता और न मैं उन्हें इस देशसे ही निकाल बाहर करना चाहता हूँ, लेकिन मुझे भारतीयोंको लॉर्ड रीडिंगकी तरह अंग्रेजोंकी प्रजा बताना पसन्द नहीं है। इन बातोंपर विचार करते हुए मेरी आत्मा काँप उठती है। आपमें किसी भी बुराईका प्रतिरोध करनेकी शक्ति होनी चाहिए। स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए आपके पास रिवाल्वरोंका होना अथवा आपका बैरिस्टर और वकील बनना जरूरी नहीं है। जो चीज आवश्यक है वह है आत्मविश्वास, किन्तु मुझे दुःख है कि पारसी लोग शंकाओंसे इस तरह भरे हुए हैं। मैं आपसे याचना करता हूँ कि आप अपनी शंकाओंको दूर कर दें। मैं आपसे अपील करता हूँ कि आप सब स्वराज्यवादी बन जायें और स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके निमित्त अन्य समुदायोंके साथ मिलकर काम करें।

इसके बाद श्री गांधीने शराबकी दुकानोंकी चर्चा की। उन्होंने कहा कि बम्बईमें पारसियोंके सिरपर एक बहुत बड़ा दायित्व है। बम्बईमें देशी शराबकी लगभग नौ सौ दुकानें हैं और अधिकांश दुकानोंके मालिक पारसी हैं। मेरे पास अनेक पारसी आये और उन्होंने मुझे बताया कि उन्होंने सरकारको एक सालकी पूरी रकम पहले ही दे दी है और अगर उनकी दुकानोंपर धरना दिया गया तो वे बरबाद हो जायेंगे और अपनी सारी पूंजी गँवा बैठेंगे। मैंने इन बातोंपर विचार किया है और मुझे दुकानदारोंसे बहुत सहानुभूति है। आप लोग सरकारके साथ सहयोग कर रहे हैं और आपने अपने खिताब नहीं छोड़े हैं, मुझे इसका तनिक भी दुःख नहीं है। लेकिन शराबकी दुकानोंकी बात अपेक्षाकृत अधिक गम्भीर है। मुझे दुःख है कि धरना देनेवालोंमें सिर्फ हिन्दू और मुसलमान ही हैं। क्या ही अच्छा होता, अगर मेरे पारसी भाई-बहन भी धरना देनेके इस काममें शामिल होते। मैं नहीं चाहता कि जोर-जबरदस्ती की जाये, मैं नहीं चाहता कि इस पवित्र उद्देश्यके लिए किसी प्रकारके आपत्तिजनक साधनोंका उपयोग किया जाये। जब पारसी स्त्रियाँ शराबकी दुकानोंपर जानेवाले पारसियोंकी राहमें खड़ी हो जायेंगी तब उन्हें शराबकी दुकानोंके अन्दर घुसनेमें शर्म आयेगी और उन्हें गाली देनेमें शर्म आयेगी तथा वे उनपर हाथ भी नहीं उठायेंगे। श्री गांधीने पारसियोंसे कहा कि आप शराब पीना छोड़ दें तथा अपने उन भाइयोंकी मदद करें जिन्हें धरना दिये जानेके कारण अपनी दुकानोंको बन्द करना पड़ा है। आप उन्हें सरकारसे उनकी रकम वापस दिलानेमें मदद करें और जिस तरह सम्भव हो, सहायता दें। अहमदाबादमें एक पारसी ठेकेदारने मुझसे शिकायत की कि धरना देनेवालोंने उसपर हमला किया लेकिन जाँच करनेपर उसकी यह बात गलत साबित हुई। सच तो यह है कि स्वयंसेवकोंपर ही हमला किया गया था और अब वे अपने सिरपर पट्टी बाँधकर धरना दे रहे हैं। उन्होंने बदलेमें हाथ नहीं उठाया।

श्री गांधीने अपने पारसी भाइयों और बहनोंसे अपील की कि वे अन्य समुदायों द्वारा शराबखोरीको रोकनेके लिए किये जानेवाले प्रयत्नोंमें सहायता दें। मैं नहीं समझता कि जो लखपती पारसी इस सभामें शामिल नहीं हुए हैं, वे मेरे आन्दोलनके विरुद्ध हैं और उन लोगोंसे मेरी प्रार्थना है कि वे शराबके ठेकेदारोंकी जितनी बने उतनी सहायता करें। इस बीच मैं आप लोगों [दुकानदारों]से स्वराज्यके काममें मदद देनेकी बात कहता हूँ। मैं भगवान्से प्रार्थना करता हूँ कि वह पारसी समाजको, स्वराज्य-प्राप्तिके लिए इस समय जो संघर्ष चल रहा है, उसमें उचित हिस्सा लेनेका बल प्रदान करे और इस समय उसका क्या कर्त्तव्य है, यह समझनेकी सद्बुद्धि दे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १-७-१९२१

१४४. भाषण: बम्बईके व्यापारियोंकी सभामें[1]

३० जून, १९२१

महात्मा गांधीने कहा कि आप लोगोंने देशको स्वतन्त्र करनेके निमित्त जो धन मुझे दिया है, उसके लिए मैं आपका कृतज्ञ हूँ। मैं आशा करता हूँ कि आप मुझसे इस समय लम्बे भाषणकी अपेक्षा नहीं करेंगे, क्योंकि शामको मुझे और भी दो सभाओंमें जाना है। आप लोगोंसे मुझे केवल यही कहना है कि यदि कोलाबाके सूतके व्यापारियोंकी तरह अन्य व्यापारियोंने देशकी स्थितिको पहचान लिया तो पंजाब और खिलाफतके प्रति किये गये अन्यायोंका निराकरण करवाना कदापि कठिन नहीं होगा। मैं चाहता हूँ कि देशके व्यापारी अब अपने देशकी राजनीतिमें प्रमुख हिस्सा लिया करें। जबतक व्यवसायमें लगे हुए लोग देशके मामलोंमें अधिक दिलचस्पी लेना शुरू नहीं करते तबतक हमें अपने उद्देश्यमें सफलताकी जरा भी आशा नहीं करनी चाहिए। परन्तु इन वर्गोंमें जागृतिके शुभ लक्षण दिखाई देने लगे हैं। और यदि यही क्रम जारी रहा तो इस वर्षके भीतर ही स्वराज्य मिलना निश्चित समझिए। अपने देशकी राजनैतिक स्थितिमें प्रमुख भाग लेना व्यापारी-वर्गोंका प्रथम कर्त्तव्य है। श्री मथुरादासने ठीक ही कहा है कि स्वराज्य-कोषमें हमने जो-कुछ दिया है वह उतना नहीं है जितना कि होना चाहिए था। इस कथनका कारण यह है कि हम करोड़ो रुपयेके मूल्यका सूत प्रतिवर्ष बाहर भेज देते हैं और हमें उस पापके प्रायश्चित्तस्वरूप एक करोड़ रुपयेमें जितनी कसर रहती हो उसे पूरा करना चाहिए था। ये एक करोड़ रुपये आज राततक इकट्ठे हो जाने चाहिए। मुझे भारतीयोंपर पूरा विश्वास है; आशा

१. यह भाषण कपड़ा-व्यापारी संघके तत्त्वावधानमें हुई एक सभामें दिया गया था जिसमें कपड़ा-व्यापारियों और कर्मचारियोंने तिलक स्वराज्य-कोषके लिए गांधीजीको २,५०,००० की थैली भेंट की थी।

है कि वे कांग्रेसके आदेशकी उपेक्षा नहीं करेंगे। हम अन्य प्रान्तोंसे ४० लाखकी उम्मीद कर सकते हैं और बाकीका ६० लाख आप लोग बम्बईमें पूरा करें। मुझे पूरी आशा है कि आप इस रकमको इकट्ठा करनेकी भरसक कोशिश करेंगे और इस तरह देशकी प्रतिष्ठाकी रक्षा करेंगे। हमने बेजवाड़ामें जो शपथ ली थी, आज उसे पूरा करनेका अन्तिम दिन है और यदि आज राततक यह धन नहीं प्राप्त किया जा सका तो सारे भारतकी आँखें नीची होंगी। आज तो राष्ट्रका सम्मान व्यापारियोंपर निर्भर है। धनके मामलेमें सिर्फ वे ही मदद कर सकते हैं। मेरे जैसे भिखारीसे तो कोई आर्थिक मददकी आशा नहीं की जा सकती। भाषण समाप्त करते हुए उन्होंने ईश्वरसे प्रार्थना की कि वह आवश्यक धन मुहैया करके देशकी प्रतिष्ठा बनाये रखनेकी सामर्थ्य प्रदान करे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १-७-१९२१

१४५. भाषण : बम्बईकी सभामें[1]

३० जून, १९२१

महात्माजीने कहा कि बम्बईमें स्त्री-पुरुषोंमें जो जोश मैंने देखा है, उससे मुझे भविष्य आशामय लगता है और मुझे उम्मीद है कि हमने जो शपथ कलकत्तामें और फिर दुबारा नागपुरमें ली थी, उसे हम पूरा कर सकेंगे। मुझे इस वक्ततक ठीक नहीं मालूम कि देशमें कितना रुपया चन्देमें आ चुका है। परन्तु केवल कुछ ही मिनट पहले मुझे सूचना मिली है कि काठियावाड़में दो लाखसे ज्यादा चन्दा हो गया है और आज सुबह एक सज्जनका भेजा हुआ २५,००० रुपयेका चैक मुझे मिला है। हमें काठियावाड़से ५०,००० रुपयेसे ज्यादाकी आशा नहीं थी। मैं जो-कुछ देख रहा हूँ, उससे आशा होती है कि एक करोड़ जमा हो जायेगा। परन्तु मैं इस सम्बन्धमें निश्चित रूपसे जानना चाहता हूँ और इसलिए बम्बईके कुछ मिल-मालिकोंसे आश्वासन चाहता हूँ कि यदि अपेक्षित रकम जमा न हो सकी तो वे कमीको पूरा कर देंगे। मुझे पूरी आशा है कि इस तरहका आश्वासन मिल जायेगा। आगे बोलते हुए उन्होंने कहा कि इस अवसरका लाभ उठाकर मैं कुछ शब्द महिलाओंसे अपने देशके हृदयमें पैठे हुए विश्वास और उसकी प्रतिष्ठाके विषयमें कहूँगा। जैसा कि सभी लोग जानते हैं स्त्रियाँ ही हम लोगोंके विश्वासकी न्यासी हैं और राष्ट्रकी अन्नपूर्णा हैं। राष्ट्र सशक्त या आदर्श राष्ट्र केवल तभी हो सकता है जब हमारी महिलाएँ पूर्णतया धार्मिक और देशभक्त हों। फिलहाल तो भारतीय महिलाओंकी पवित्रता और उनका धर्म

१. न्यू चिंचबन्दरमें मांडवी हल्केकी कांग्रेस समितिके तत्वावधानमें तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा करनेके लिए शामको की गई एक सभामें।

खद्दरमें ही समाहित है। इसलिए मैं अपील करता हूँ कि आजसे महिलाएँ सभी विदेशी वस्त्रोंका परित्याग कर दें और अपनी तथा अपने बच्चोंकी पोशाक शुद्ध खद्दरकी ही बनाया करें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २-७-१९२१

१४६. एक महिलाको लिखे पत्रका अंश

रेलगाड़ीमें
३० जून, १९२१

समाचारपत्रोंमें आपके जेवरोंके बारेमें प्रकाशित एक अंशने आपके दानकी सारी खूबसूरती ही नष्ट कर दी है। मैंने यह आशा कर रखी थी कि वह दान त्यागका एक मौन कार्य होगा। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि कई लड़कियोंने आपसे ज्यादा रकमें दानमें दी हैं। उन्होंने अपने नामका ढिंढोरा पीटनेकी इच्छा नहीं की। आजसे दो दिन पहले एक बहनने मुझे अपने सारे कीमती जेवर — मोतीका हार, मानिकके कंगन और बुन्दे दे डाले। उस बहनने ये सब चीजें बड़ी विनम्रता और शोभायुक्त ढंगसे दीं। वे अपना नाम प्रकाशित कराना नहीं चाहतीं। उन्होंने यह सब ईश्वरके नामपर दिया है। मुझे आपके लिए खेद है। इस कटु सत्यके लिए मुझे क्षमा कीजियेगा . . .।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

१४७. भाषण : बाँदराकी सभामें[1]

१ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने कहा : कल रात हम सो नहीं सके हैं। हम दो बजेतक नाट्य-शालामें रहे। हम वहाँ नाटक देखने नहीं गये थे बल्कि तिलक स्वराज्य-कोषके लिए रुपया इकट्ठा करने गये थे। जब मैंने अपने मित्र मुहम्मद अलीको अपने थैलेमें जेवरोंके अतिरिक्त २५,००० रुपयेकी रकम लाते हुए देखा तो मुझे ३० वर्ष बाद फिर नाट्य-शालामें प्रवेश करनेपर अपार हर्ष हुआ। इसी कारण अली बन्धु सभामें नहीं आ सके

१. गांधीजीने उत्तरी बम्बईके इस उपनगरमें सुबहके वक्त की गई एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया था। यह सभा उनको तिलक स्वराज्य-कोषके लिए १५,००० रुपयेका चैक देनेके उद्देश्यसे आयोजित की गई थी।

है, वे बिलकुल थक गये थे। यदि मैंने श्री पटेलको वचन न दिया होता तो स्वयं मेरे लिए भी यहाँ आ सकना कठिन था। श्री पटेल चाहते हैं कि यह राशि छोटी-छोटी रकमोंके रूपमें गरीब लोगोंसे इकट्ठी की जाये। मैं इस बारेमें उनसे सहमत हूँ और यदि इस देशके गरीब लोग थोड़ा-थोड़ा चन्दा देकर एक करोड़ रुपया पूरा कर दें तो मुझे प्रसन्नता हो। हम लगभग एक करोड़ रुपया इकट्ठा करनेमें समर्थ हो गये हैं। ४४ लाख रुपये शेष भारतने दिये हैं और बाकी रुपया इसी महाप्रान्तमें इकट्ठा किया गया है। मैं इस बातको प्रकाशित कर देना चाहता था कि हमने एक करोड़ रुपया इकट्ठा कर लिया है और इस देशकी लाज रह गई है। कल आधी राततक हम ८१-८२ लाखतक ही इकट्ठा कर पाये थे। जब हमने थोड़ेसे दिनोंमें इतनी बड़ी रकम इकट्ठी कर ली है तो हम शेष रकम भी बहुत आसानीसे इकट्ठी कर सकेंगे। फिर भी मैंने अपने ४ या ५ धनी मित्रोंसे इस कमीके बारेमें बातचीत की है और उन्होंने शेष रकमकी पूर्ति करनेका वचन दे दिया है। मैं इस बातको संसारके सम्मुख प्रकट करना नहीं चाहता कि मैंने इस प्रकारका आश्वासन प्राप्त कर लिया है, क्योंकि मेरे मित्रोंने मुझसे कहा है कि यदि उनका नाम प्रकट कर दिया जायेगा तो इसका अर्थ उनका विज्ञापन करना ही होगा; इसके अतिरिक्त अन्य लोग अपना-अपना चन्दा रोक लेंगे। इसलिए मुझे आपके सम्मुख यह घोषणा करते हुए प्रसन्नता होती है कि एक करोड़ रुपया तो पूरा हो ही जायेगा। यदि यह रकम छोटे-छोटे चन्दोंके रूपमें इकट्ठी की जाती तो मैं कहता कि बाँदराके लोग स्वराज्यके योग्य हैं। यदि बाँदराके धनी लोगोंने कुछ नहीं दिया है तो मेरे लिए यह चिन्ताकी बात नहीं है। वे आगे चलकर देंगे। जब मुझे श्री पटेलने यह सूचना दी कि बाँदरामें तो केवल १०,००० रुपये इकट्ठे किये जा सकेंगे तो मुझे जरा भी बुरा नहीं लगा। यद्यपि इस रकमके इकट्ठा करनेपर मैं आपको बधाई देता हूँ, किन्तु आपमें से कुल मिलाकर कांग्रेसके जितने सदस्य बने हैं और बाँदरामें जितने चरखे चल रहे हैं उसपर आपको मैं बधाई नहीं दे सकता। मुझे एक करोड़ रुपयेकी चिन्ता नहीं है, किन्तु मुझे कांग्रेसके एक करोड़ सदस्य बनानेकी चिन्ता जरूर है। जितने रुपयोंकी जरूरत मुझे है उसके बारेमें जब मैं अपने एक मित्रसे बात कर रहा था और उससे यह कह रहा था कि मैं एक करोड़ रुपयेसे सन्तुष्ट नहीं होऊँगा, मुझे तो कई करोड़ रुपये चाहिए, तब मेरे उस मित्रने कहा कि विक्टोरिया स्मारक-कोषमें भी लगभग ५२ लाख रुपये ही इकट्ठे हो पाये थे और वह कोष अधिकारियोंके प्रभावको काममें लाते हुए दबाव और खुशामदके जरिये इकट्ठा किया गया था। तिलक स्वराज्य-कोष बिना किसी दबावके और केवल स्वेच्छासे दिये गये पैसोंसे इकट्ठा किया गया है। तो फिर भला उस रकमको इकट्ठा करनेमें कितना प्रयत्न न किया गया होगा!

हमने बेजवाड़ाका कार्यक्रम पूरा कर लिया है। लेकिन अब हमें कांग्रेसके सदस्य बनाने हैं और घर-घरमें संकल्पित संख्यामें चरखे चलवाने हैं। इस देशमें ६ करोड़

परिवार रहते हैं; प्रत्येक घरमें चरखा होना चाहिए। मैं केवल चरखोंकी संख्यासे या उनके कते हुए सूतकी मात्रासे सन्तुष्ट होनेवाला नहीं हूँ। मुझे उससे भी बड़ी चीज चाहिए। मैं आपके शरीरोंपर चरखेकी छाप देखना चाहता हूँ। मेरे कहनेका अर्थ यह है कि आप सबको खद्दर पहनना चाहिए। यदि आप खद्दरका व्यवहार करते हैं तो साफ जाहिर है कि आप चरखेका उपयोग कर रहे हैं। हम इतने सालोंसे एक भ्रममें फँसे रहे और इसलिए हम विदेशी कपड़ेका व्यवहार करते रहे। यदि हम स्वराज्य चाहते हैं तो हमें केवल खद्दरका ही उपयोग करना चाहिए। भारतीयोंको केवल स्वदेशी वस्त्र ही पहनने चाहिए और हर कार्यके लिए खद्दर ही काममें लाना चाहिए। लोकमान्य तिलकने एक बार अपने एक मित्रसे कहा था कि यदि हमारा देश रोगों और मौसमी बुखारका घर बन जाये तब भी हम भारत छोड़कर इंग्लैंड नहीं जायेंगे और वहाँ रहकर स्वराज्य लेनेका प्रयत्न नहीं करेंगे। भारत हमारी मातृभूमि है और उसका जलवायु चाहे जितना बुरा हो तो भी हमें यहीं रहना है और यहीं मरना है। जबतक हम ऐसा नहीं कर पाते तबतक इस देशके लोग कभी सुखी नहीं रह सकेंगे। यदि हमें भारतसे प्रेम है, यदि हम उन तिलक महाराजका आदर करते हैं जिन्होंने यह कहा था कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, तो भारतीयोंको विदेशी कपड़े-का व्यवहार छोड़ देना चाहिए। अभी उस दिन एक पारसी महिलाने मुझे अपने एक हजारके विदेशी जेवर भेजे; मैंने उस महिलाको नहीं देखा है और मैं उसका नाम भी नहीं जानता। भारतीयोंको विदेशी जेवर क्यों पहनने चाहिए? क्या भारतके सब सुनार मर गये हैं? जबतक भारतमें सुनार हैं और उन्हें काफी काम नहीं मिल रहा है तबतक हम विदेशोंमें बने आभूषण क्यों पहनें? मुझे निश्चय है कि जिस पारसी बहनने मुझे अपने आभूषण दिये हैं वह अब खद्दर पहन रही होगी या यदि अबतक खद्दर नहीं पहनती होगी, तो अब जल्दी ही पहनने लगेगी। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप शुद्ध स्वदेशीका व्यवहार करें। मैं आपसे धन देनेका अनुरोध नहीं करता, क्यों कि धन तो किसी-न-किसी तरह इकट्ठा किया ही जा सकता है; किन्तु मेरी आपसे पहली प्रार्थना यही है कि आप विदेशी कपड़ा पहनना छोड़ दें। सितम्बरके बाद मैं आपसे ये बातें नहीं कहूँगा। सितम्बरके बाद मैं अपने मुसलमान मित्रोंसे यह कहने जा रहा हूँ कि यदि वे खिलाफतके प्रश्नका निपटारा अपनी इच्छाके अनुसार कराना चाहते हैं तो वे केवल स्वदेशी कपड़ेका व्यवहार करें। आपमें से हरएक स्त्री-पुरुषको चरखे-का प्रयोग करना चाहिए और आजसे केवल स्वदेशी कपड़ेका व्यवहार करनेका निश्चय कर लेना चाहिए। हमारे कार्योंमें एक नया दौर शुरू हुआ है और यदि हम स्वदेशी कपड़ेका उपयोग करेंगे तो हमारी शक्ति कई गुनी हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २–७–१९२१

१४८. 'नवजीवन' को तार[1]

बम्बई

[१ जुलाई, १९२१]

भारत लोकमान्य की स्मृति और स्वराज्य-स्थापनाके लिए बनाये गये कोषमें जून मासके अन्ततक लगभग ८० लाख रुपया इकट्ठा करनेमें सफल हो गया है। मुझे उम्मीद है कि शेष बीस लाख रुपया जनता बिना किसी देरके पूरा कर देगी। यद्यपि बेजवाडाके कार्यक्रमको अक्षरश पूरा हुआ नही कहा जा सकता तथापि यह कह सकते है कि जनताने कांग्रेसकी माँगका सुन्दर उत्तर दिया है। बम्बईने अपनी उदारता और दान देनेकी क्षमताके अपने पहले सभी रेकार्ड तोड दिये हैं। उसे और दूसरे प्रान्तोको मिलकर अब बाकी रकम को तुरन्त पूरा कर लेना चाहिए। लेकिन इस समय तो सबसे ज्यादा ध्यान विदेशी कपडेके सम्पूर्ण बहिष्कार और कांग्रेसके करोड सदस्य बनानेके कार्यको पूरा करनेकी ओर लगाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३-७-१९२१

१४९. 'नवजीवन' को तार[2]

बम्बई

[१ जुलाई, १९२१]

देशबन्धु चित्तरजन दास तार द्वारा खबर देते है कि तिलक स्वराज्य-कोषमें बगालने २५ लाख रुपया दिया है। इस तरह हिन्दुस्तानने अपनी प्रतिज्ञाका एक करोड रुपया पूरा कर लिया है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३-७-१९२१

१. यह सन्देश तार द्वारा बम्बईसे भेजा गया था।

२. यह तार पिछले शीर्षकमें जिस तारका उल्लेख है उसके तुरन्त बाद दिया गया था।

१५०. विदेशी कपड़ेका बहिष्कार[1]

ईश्वर महान् है। जिधरसे आशा नही होती वह उधरसे सहायता भेज देता है। अभी कुछ ही दिन पहले श्री दासने[2] मुझे तार द्वारा यह सूचित किया था कि बगालमे तीन लाखसे ज्यादा रुपया इकट्ठा नही हुआ है। मेरे लिए यह घोषणा करना कोई छोटी बात नही थी कि भारतमे नियत तिथितक पूरा एक करोड़ रुपया एकत्रित नही हो पाया। मैंने मित्रोसे कम पडनेवाली रकमकी पूर्तिका जिम्मा लेनेका बहुत आग्रह किया है। वे मुझे यह रकम देनेके लिए तैयार हो गये लेकिन उन्होने यह ठीक नही समझा कि उनके नाम ससारके सम्मुख प्रकट किये जाये, क्योकि उनकी रायमें यह प्रसिद्धि पानेके प्रयत्न-जैसा लगता है। उन्होने कहा कि रकमको जहाँका-तहाँ मानकर काग्रेस महासमितिकी बैठकसे पहले बाकी रकम सार्वजनिक रूपसे इकट्ठी करनेका प्रयत्न किया जाये तो ज्यादा अच्छा होगा। मैंने हार तो मान ली, लेकिन मेरा हृदय बहुत खिन्न हुआ कि ईश्वरने मेरी प्रार्थना नही सुनी। फिर भी मै यह जानता था कि ईश्वर सहायता देनेसे कभी नही चूकता। उसने बगालको मेरी रक्षाके लिए भेज दिया और बेजवाड़ामें राष्ट्रने जो सकल्प किया था वह हो गया। हमे नम्र भावसे उसके चरणोमे सिर झुकाना चाहिए, खुशियाँ मनानेके लिए हमे मार्गमे हरगिज नही रुकना है। हमें आगे बढते जाना चाहिए। यद्यपि सग्रह की हुई कुल रकम अब एक करोड़ ५ लाख[3] रुपयेसे ऊपर पहुँच गई है, फिर भी प्रत्येक प्रान्तको एक करोड रुपयेमें से अपनी आनुपातिक रकम तो पूरी करनी ही चाहिए।

लेकिन हमारा अगला आवश्यक कदम विदेशी कपडेका पूर्ण बहिष्कार करना है। पहली अगस्तको हम लोकमान्य तिलककी पुण्यतिथि मनाते है। यदि हम निश्चित रूपसे और विशेष प्रयास करे तो हम इस तारीखसे पहले ही विदेशी कपडेका लगभग पूर्ण बहिष्कार कर सकते है। मैं जानता हूँ कि इसके लिए हमे बहुत बडे बहुमतका समर्थन चाहिए। लेकिन यदि हम उतने ही उत्साहसे काम करे जितना हमने धनसग्रह करनेमे दिखाया है तो सबका ऐसा समर्थन प्राप्त करना असम्भव नही है। भारतमें स्वराज्यकी स्थापना करनेकी शक्ति तभी आयेगी, उससे पहले नही। हम विदेशी कपडे-

१. इस लेखका मूल शीर्षक था "अब हमें क्या करना चाहिए: एक अगस्ततक कपडेका बहिष्कार"।

२. चित्तरजन दास।

३. २–७–१९२१ के बॉम्बे क्रॉनिकलमें छपी रिपोर्टके अनुसार इस रकममें प्रान्तोंका भाग (लाखोंमें) इस तरह था: बम्बई नगर ३७½; बगाल २५; गुजरात और काठियावाड १५; पजाब ५, मद्रास और आन्ध्र ४; मध्य प्रदेश और बरार ३; महाराष्ट्र (बम्बईके उपनगरों सहित) ३; बिहार ३; सिन्ध २; उत्तर प्रदेश २½; कर्नाटक १; दिल्ली २; अजमेर और मारवाड ½; उडीसा और असम ¼; बर्मा १¼।

का पूर्ण बहिष्कार करके लोकमान्यकी पुण्यतिथि जितने अच्छे रूपमे मना सकते है, उससे अच्छे रूपकी कल्पना मै नही कर सकता।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २–७–१९२१

१५१. भाषण : बम्बईकी सार्वजनिक सभामे[1]

शनिवार, २ जुलाई, १९२१

अब आप मुझसे पैसेकी बात नही सुनेगें। अब तो इसीपर विचार करना है कि हमें आगे क्या करना है। पैसा आये तो कोई हर्ज नही। तिलक महाराजके नामपर एक करोड़ तो क्या दस करोड़ भी न्यौछावर करे तो यह कोई बडी बात न होगी। स्वराज्यके लिए आवश्यकता पड़े तो दस करोड़ भी खर्च करे, लेकिन दस करोडकी जरूरत पडेगी ही नही। आवश्यकतासे अधिक एक पाई भी खर्च न करनेवाले व्यक्तिको व्यवहारकुशल कहा जाता है। अब तो आप एक ही बातपर विचार करे। पहली अगस्तको तिलक महाराजकी पुण्यतिथि है, उस दिन हमे क्या करना चाहिए?

तिलक महाराजका जो मन्त्र[2] था उससे आपको मुग्ध होना चाहिए। उनकी विद्वत्ता अथवा मधुर वाणीसे नही बल्कि उनके कार्यसे, यज्ञसे, स्वार्थ-त्यागसे आपको मोहित होना चाहिए। उनकी जो हार्दिक इच्छा थी, जिसके लिए उन्होने अपने प्राण उत्सर्ग किये, जिसके लिए उन्होने कष्ट सहे, आपको वह कार्य पूरा करना चाहिए। उनका इससे बढकर और कोई अच्छा स्मारक हो ही नही सकता। आप अरबो रुपया केवल इकट्ठा करे, इसकी अपेक्षा आप एक भी पाई इकट्ठी किये बिना स्वराज्य प्राप्त करे तो वह बेहतर होगा। मुझे दृढ विश्वास है कि आप अवश्य ऐसा करेगे। लेकिन जबतक आप स्वराज्यका विचार नही करते तबतक कुछ नही हो सकता। आपको विदेशी कपडेका विचार करना ही होगा। इसपर कोई आपकी हत्या नही कर देगा, आपको सिर्फ अपने दिलको जरा समझाना पडेगा, जैसे बालकोके गलेमे कडवी दवाका घूंट उतारना पडता है उसी तरह बहनोको भी अपने गलेमे यह घूंट उतारना चाहिए। आप पहली अगस्तकी राह न देखे; बल्कि कल ही अपने सन्दूक, शरीर और समझकी जाँच कर ले। विदेशी कपड़ा हमारी गुलामी है। आपको गुलामी छोड देनी चाहिए। व्यापारियोंको तो अवश्य ही छोड देनी चाहिए। तिलक महाराजको गाली देकर अगर कोई पैसा दे तो वह मै कैसे लूं, मै अगर ले भी लूं तो महाराष्ट्र तो मेरा सिर ही काट ले। हम तिलक महाराजका सच्चा स्मारक बनाना चाहते हैं तो सबको स्वदेशी

१. यह सभा बम्बई कमीशन एजेन्ट्स एसोसिएशन और लिंगायत कमीशन एजेन्ट्स एसोसिएशनके संयुक्त तत्त्वावधानमें हुई थी। इनकी ओरसे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए गांधीजीको ५,००१ रुपये भेंट किये गये थे।

२. "स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूँगा।"

बनना ही चाहिए। अगर आप पैसा दे तो वह विदेशी कपडेका त्याग करनेके वचनके रूपमे ही दे। आप यह सोचकर कि विदेशी कपडेके व्यापारसे पैसा कमा लेगे, स्वराज्य-कोषमे पैसा नही दे सकते।

आप विदेशी कपडेके व्यापारको गोमास और शराब तुल्य समझे। आप आढतका धन्धा करते है और दलाल द्वारा माल भेजते है। उसमे आप विदेशी कपड़ा भी भेजते है। इसलिए आप प्रतिज्ञा करे कि आप अपने ग्राहकोको ऐसा माल नही भेजेगे। क्या कोई हिन्दू अपने ग्राहकको शराब भेज सकता है? जो वस्तु हम ग्राहकको भेज नही सकते तो उसका व्यापार कैसे कर सकते है? इसी तरह हम विदेशी कपडेका भी व्यापार नही कर सकते। आपके दिलोमे अग्रेज अथवा अग्रेजी कपडा बनानेवाले के प्रति तिरस्कार न होकर, विदेशी कपड़ेके प्रति होना चाहिए। देश जिस धन्धेसे गुलामीके गर्तमे गिरता है उससे आप पैसा कमाये, यह कैसे सम्भव है? एक पारसी भाई शराबके बारेमे मुझसे पूछने आये। उनसे मैने कहा कि अगर आप भिखारी भी बन जाये तो भी आपको शराबको हराम समझना चाहिए। जो चीज हिन्दके हिन्दुओ और मुसलमानोको फूटी आँख नही सुहाती उससे आप कमाई कैसे कर सकते है? यही बात विदेशी कपडेपर भी लागू होती है।

शराबकी दुकानोपर हम जैसे धरना देते है वैसे ही विदेशी कपडेकी दुकानोपर भी क्यो न दे, यह बात मेरी समझमे नही आती। विदेशी कपडेका बहिष्कार तो अधिक महत्त्वका है। बहनो, आप विदेशी कपडा खरीदती है, सो अधर्म है। विदेशी कपडा खरीदना अर्थात् अपने बालकको छोड़कर पराये बालकको गोद लेना। विदेशी कपडोमे आप सुन्दर लगती है, ऐसा आप समझती है। लेकिन सच्चा सौन्दर्य तो आपकी कर्त्तव्यपरायणतामे है। सीताने उद्धत रावण द्वारा भेजे गये कपडोका तिरस्कार कर पत्तोसे अपने शरीरको ढकना अधिक पसन्द किया था। आप बहने भी सीताजी बने। आप विदेशी कपडा न छोड़े और स्वराज्य माँगे, यह कैसे हो सकता है? पहली अगस्तसे पहले-पहले आपको इतना तो करना ही होगा।

आपमे से जो साहसी हो वे विदेशी कपडेको जला डाले। कगालोको देना चाहे तो मुझे दे, क्योकि आप असली कंगालोको नही पहचानते। उन्हे तो मै ही पहचानता हूँ। आपने उन्हे पहचाना होता तो आप विदेशी ठाठमे आनन्द न मनाते, मौज-शौक न करते। आप विदेशीके मोहको त्याग दे, तभी हमारा काम हो सकता है। आपने जो रुपया दिया है उसके पीछे निहित वचनका आप पालन करे। अभी तो हमे सिर्फ उसीकी जरूरत है।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १०-७-१९२१

१५२. वैष्णवोंसे

आपमे से अनेक मेरे सगे है, अनेक जातिभाई है, और कितने ही वचपनके मित्र है, [जिनके] वहुत-सारे पत्र मुझ मिलते रहते है। अन्त्यजो सम्वन्धी मेरे विचारोके लिए आपमे से कोई मुझे वधाई देता है, अनेक इसे मेरी भूल मानकर विनयपूर्वक मुझे समझाते है, कोई गुस्सेमे आकर मुझे गालियाँ देते है और कोई-कोई तो मुझे धमकी भी देते है।

इस सबको मै, उनके मनमे मेरे प्रति निहित प्रेमकी निशानी समझता हूँ। अन्त्यजो-के सम्वन्धमे मेरे जो विचार है वैसे ही विचार अन्य अनेक लोगोके भी है और वे अन्त्यजोको स्पर्श करनेमे कोई दोप नही देखते। लेकिन ज्यादातर लोगोको मुझपर ही गुस्सा आता है और उसका कारण मै यही समझता हूँ कि वे मुझे दूसरी तरहसे मर्यादा धर्मका पालन करनेवाला तथा एक अच्छा व्यक्ति मानते है। उनके अनुसार अन्त्यजो सम्वन्धी मेरे विचारोमे जो भूल निहित है उसको वे सहन नही कर सकते। उनकी मान्यता है कि मेरे ये विचार स्वराज्य सम्वन्धी हमारी गतिको भी अवरुद्ध करते है। कोई-कोई तो यह भी मानते है कि मैंने आपत्तिको अपने हाथो न्यौता दिया है और अपनी हठधर्मीसे स्वराज्यकी नावको तूफानमे डाल दिया है।

दूसरी ओर, मेरी नम्र मान्यता यह है कि अन्त्यजोके प्रति मेरे भाव मेरे वैष्णव-धर्मको दीप्त करते है, उनमे मेरी शुद्ध दया निहित है, उनसे मेरी मर्यादाकी शुद्धता सिद्ध होती है।

कितने ही वैष्णव यह मानते है कि मै वर्णाश्रम-धर्मका लोप कर रहा हूँ और मेरी मान्यता यह है कि मै वर्णाश्रम-धर्मको मलिनतासे निकालकर उसके शुद्ध स्वरूपको प्रकट कर रहा हूँ। मै अन्त्यजोसे रोटी और वेटीके व्यवहारकी हिमायत नही कर रहा हूँ। मै तो इतना ही कहता हूँ कि किसी भी मनुष्यको छूनेमे पाप होता है, ऐसा विचार करना ही पाप है।

रजस्वलाका उदाहरण देकर अन्त्यजोकी अस्पृश्यताके विचारका जो वचाव किया जाता है, उसे मेरी मति तो अज्ञान मानती है। रजस्वला वहनसे अगर हम छू जाते है तो उसे हम पाप नही मानते। उसे तो हम शारीरिक शौच नियमको भग हुआ जान, नहा-धोकर स्वच्छ हो जाते है। जिस अन्त्यज भाईने मैला उठाया हो और जवतक वह न नहाये अथवा दूसरी तरहसे स्वच्छ न हो तवतक स्पर्श न करना अथवा स्पर्श हो जानेपर नहा लेनेकी वात तो मै समझ सकता हूँ लेकिन अन्त्यज कुलमे जन्मे लोगोंका सर्वथा त्याग करनेमे धर्म होनेकी वातको मेरी आत्मा कतई स्वीकार नही कर सकती।

वैष्णव धर्मका मूल दया है। अन्त्यजोके प्रति हमारे व्यवहारमे दयाका लेशतक नही दिखता। हममे से अनेक व्यक्ति तो अन्त्यजोको गालीके विना वुलाते ही नही है। भूलचूकसे अगर वे हमारे डिव्वेमे वैठ जाते है तो उनपर गालियोकी वौछार होने

लगती है। हम उन्हे वही जूठा भोजन देते है जो हम जानवरोको देते है। उनके बीमार पड़ने अथवा साँपके काटनेपर हमारे वैद्य अथवा डाक्टर उनकी दवा करने नहीं जाते। यदि जाने लगे तो जहाँतक हमारा वश चलता है हम उन्हे जानेसे रोकते है। अन्त्यजो-के रहनेके लिए खराबसे-खराब मुहल्ला और उसमें न रोशनीकी व्यवस्था और न सड़कोका ही प्रबन्ध। उनके लिए कुएँ नही होते। सार्वजनिक कुओं, धर्मशालाओ और विद्यालयोंका लाभ उन्हे नही मिलता। उनसे हम कठिनसे-कठिन सेवा लेकर कमसे-कम वेतन देते है। उनके लिए तो ऊपर आकाश और नीचे धरती है। यह क्या वैष्णव धर्मकी निशानी है? इसे दयाधर्म कहे कि क्रूरताधर्म कहे? अंग्रेज सरकार, जिसके साथ आपने भी असहयोग किया है, हमारा इस सीमातक तिरस्कार नहीं करती। हम तो अन्त्यजोके प्रति अपनी डायरशाहीको धर्म मानकर पोषित करते हैं।

मै तो मानता हूँ कि हमने जो बोया है वही काट रहे हैं। हम अन्त्यजोका तिरस्कार करके जगत्के तिरस्कारका पात्र बनते है।

अस्पृश्यताको बुद्धि ग्रहण नही कर सकती। वह सत्य और अहिंसाका विरोधी धर्म है; इससे वह धर्म ही नही है। हम ऊँच है और दूसरे नीच हैं — यह विचार ही नीच है। जिस ब्राह्मणमे शूद्रका — सेवाका — गुण नही वह कोई ब्राह्मण नहीं है। ब्राह्मण तो वह है जिसमे क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रके सब गुण हो। इसीके उपरान्त ज्ञान आता है। शूद्र कोई ज्ञानसे नितान्त विमुख नही है। उनमें सेवा प्रधान है। वर्णा-श्रम धर्ममें ऊँच-नीचकी भावनाको अवकाश नही है। वैष्णव-सम्प्रदायमें तो भंगी, चाडाल आदि तर गये हैं। जो धर्म जगत्-मात्रको विष्णुमय जानता है वह अन्त्यजोको विष्णुसे रहित कैसे मान सकता है?

लेकिन मै आपसे शास्त्रार्थ नही करना चाहता। मै विद्वान् होनेका दावा नहीं करता। शास्त्रार्थमे सारे शास्त्री मुझे भले ही हरा दे। लेकिन मुझे विश्वास है कि दया धर्मका मुझे ठीक-ठीक अनुभव है। दया धर्ममे अन्त्यज तिरस्कारको अवकाश हो ही नही सकता।

और फिर आप अन्त्यज किसे कहेंगे? बुनकरको अन्त्यज कहेगे? चमड़ेके जो लखपति व्यापारी है उन्हे अन्त्यज कहेंगे? अथवा सोना सारी मलिनताको धो डालता है? जिसने चमारका धन्धा छोड़ दिया है, जो भंगी मोटर चलाता है, मिलमें काम करता है, हमेशा नहाता-धोता है, क्या उसे भी आप अस्पृश्य मानेंगे?

लेकिन मै दलील किसलिए करूँ? जिसे अस्पृश्य मानो, उससे छू जानेपर पाप मानो और नहाना चाहो तो नहा लो; लेकिन मेरी प्रार्थना तो यह है कि जिस तरह मासिक धर्ममे पड़ी हुई माताका आप तिरस्कार नही करते बल्कि उसकी सेवा करते है उसी तरह अन्त्यजोंका भी तिरस्कार न कर उनकी सेवा करे। उनके लिए कुएँ खुदवाएँ, स्कूल बनवाएँ, उन्हे दवा दें, उनके लिए वैद्य भेजें, उनके दुखमें भाग ले, उनकी आत्माकी दुआ लें, उनको अच्छी जगहमें रखे, अच्छा वेतन दे, सम्मान और शिक्षा दे तथा उन्हे अपना छोटा भाई समझे। उनसे मद्यपान, गो-मांसाहार आदि छुड़वाएँ, जो छोडें उन्हें प्रोत्साहन दें। ऐसा करके आप देख सकेंगे कि अस्पृश्यता समाज-का एक अतिरिक्त अंग है। आपमें कुछ-एकने अन्त्यजो सम्बन्धी मेरे विचारोंके कारण

तिलक स्वराज्य-कोषमे चन्दा दिया ही नही है। मै आप लोगोंसे प्रार्थना करता हूँ कि अगर आप अस्पृश्यताको नही छोडते तो भी आप सुधारोके कामके लिए पैसेकी मदद तो दे ही सकते है। कितने ही वैष्णवोने तो जो पैसा दिया है सो यह कहकर दिया है कि वह इसी कामके लिए खर्च किया जाये। इसके अतिरिक्त अन्त्यजो सम्बन्धी मेरे विचार आपको पसन्द न हों तो भी आप स्वदेशी आन्दोलनके लिए, अकालके लिए, स्कूलोके लिए तो पैसा दे ही सकते है। लेकिन मेरी मान्यता तो ऐसी है कि अन्त्यजोकी उन्नतिकी वातका विरोध आप करेगे ही नही। इसलिए मै आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप दया धर्ममे अपने विश्वासके प्रतीक रूपमे पैसा इसी शर्तके साथ दे कि वह अन्त्यजोकी उन्नतिके कार्योके लिए खर्च किया जाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३–७–१९२१

१५३. विदेशी मालका बहिष्कार कैसे हो[1]

इस समय जब कि काफी समय बीत गया है, यह बतानेकी आवश्यकता नही कि विदेशी वस्त्रोका प्रस्तावित वहिष्कार प्रतिहिंसात्मक कारंवाई नही है, वल्कि यह राष्ट्रीय जीवनके लिए उतनी ही आवश्यक है जितनी कि जीवनके लिए साँस। इसलिए वहिष्कार जितनी जल्दी अमलमे लाया जायेगा, देशका उतना ही अधिक कल्याण होगा। इसके बिना न तो स्वराज्यकी स्थापना की जा सकती है और न स्थापनाके बाद उसे कायम ही रखा जा सकता है। इसलिए यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि अगस्तकी पहली तारीखसे भी पहले इसपर कैसे अमल किया जाये।

बहिष्कारको जल्दीसे-जल्दी अमली रूप देनेके लिए निम्नलिखित बातोकी आवश्यकता है. (१) मिल-मालिक अपने लाभोको नियमित करे और प्रमुख रूपसे भारतीय बाजारके लिए माल तैयार करे, (२) आयात करनेवाले, विदेशी माल खरीदना छोड़ दे—तीन प्रमुख व्यापारी इसकी शुरुआत कर भी चुके है, (३) उपभोक्ता सभी प्रकारके विदेशी कपडेको खरीदनेसे इनकार कर दे और जहाँतक सम्भव हो खादी खरीदे, (४) उपभोक्ता केवल खादी पहने, मिलका कपड़ा उन गरीबोके लिए रहने दे जो कि स्वदेशी और विदेशीके भेदको नही जानते, (५) उपभोक्ता स्वराज्यकी स्थापना और खादीके निर्माणमे वृद्धि होने तक उतना ही कपडा उपयोगमे लाये जितना कि तन ढकनेके लिए आवश्यक हो, (६) उपभोक्ता विदेशी कपडोको उसी प्रकार नष्ट कर दे जिस प्रकार कि मद्य-त्यागकी शपथ लेनेपर मादक पेयको नष्ट कर दिया जाता है, या उसे विदेशोमे उपभोगके लिए वेच दे, या जिन कामोको

1. ऐसा प्रतीत होता है कि यह टिप्पणी जो ६–७–१९२१ के यंग इंडियामें छपी थी, अन्य समाचारपत्रोंको भी भेजी गई थी।

करनेमे कपडे गन्दे होते है उन कामोके समय अथवा सोने आदिके समय उन्हे पहनकर जीर्ण-शीर्ण कर डाले।

यह आशा की जाती है कि उपर्युक्त अनुच्छेदमे जिन लोगोका उल्लेख किया गया है, वे सब एक साथ और इस सम्बन्धमे अच्छा काम करेगे। किन्तु अन्तमे तो सफलता उपभोक्ताके दृढ निश्चयपर ही निर्भर करती है। उसका अपनी गुलामीका बिल्ला लगानेसे इनकार कर देना पर्याप्त है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-७-१९२१

१५४. पत्र : न० चि० केलकरको

बम्बई
४ जुलाई [१९२१]

प्रिय श्री केलकर,

मुझे अबतक जितनी बधाइयाँ मिली है उनमे से सबसे ज्यादा मूल्यवान बधाई मै आपकी मानता हूँ। यदि आपने कामको उचित मानकर बधाई दी है तो इसमे मै आपका हार्दिक सहयोग चाहता हूँ। मुझे कार्य-समितिके सम्बन्धमे आपका पत्र[1] मिला। भविष्यमे आपको जैसी आत्मिक प्रेरणा मिले आप वैसा ही करे। मेरे मनमे केवल यही खयाल आता है कि हमे कार्य-समितिको ऐसी सस्था बना देना चाहिए जो तेजीसे कार्य कर सके, जो शक्तिशालिनी हो और जिसमे मतैक्य हो। उसमे मतभेदकी गुजाइश है, विश्वास भेदकी नही। मेरा तो विश्वास है कि हम काग्रेसके सविधानको दक्षतापूर्वक कार्यान्वित करके जो-कुछ चाहते है वह सब पा सकते है। किन्तु मै अपने विश्वासको भारतपर जबरन लाद नही सकता। यदि हमे इस सालके अन्दर स्वतन्त्रता मिलनी बदी है तो वह विश्वास आ ही जायेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१२२) की फोटो-नकलसे।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

१५५. पत्र : के० राजगोपालाचार्यको

गामदेवी
बम्बई
५ जुलाई, १९२१

प्रिय महोदय,

आपका इसी २८ तारीखका पत्र मिला। आपने अपने पत्रमे जिस मामलेका उल्लेख किया है उसकी चर्चा मै 'यग इडिया'मे जल्दी ही कर रहा हूँ। आपने जो सुझाव दिया है उसके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

श्री के० राजगोपालाचार्य
तिरुपति
मद्रास राज्य

अग्रेजी पत्र (जी० एन० ५६६८) की फोटो-नकलसे।

१५६. टिप्पणियाँ

उत्तरदायित्वका आरम्भ

'तिलक स्वराज्य-कोष'को भारतने जो अभूतपूर्व समर्थन दिया, उससे प्रकट हो जाता है कि भारतको असहयोगके अपने नेताओपर भरोसा है। क्या नेता अपने-आपको इस भरोसेके योग्य सिद्ध करेगे? अनेक लोगोने बडी उदारतासे दान दिया है, और सभीने यह सवाल पूछा है कि इस निधिका उपयोग किस प्रकार किया जायेगा। मैने निस्सकोच यही उत्तर दिया है कि प्रान्तीय काग्रेस कमेटियोके नेता जिम्मेदार और परखे हुए व्यक्ति है। यदि हम इस कोषमे मिली पाई-पाईका लेखा-जोखा नही रखते और धनका उपयोग बुद्धिमानीसे नही करते तो हमे सार्वजनिक जीवनसे बाहर कर दिया जाना चाहिए। हमे याद रखना चाहिए कि गरीबसे-गरीब आदमियोने अपनी शक्ति-भर दिया है। कई लोगोने तो अपना सब-कुछ दे दिया है। धोबी, बढई, लुहार, ईसाई, यहूदी, पारसी, सिख, जैन, मुसलमान और हिन्दू — सभीने यथाशक्ति दिया है। १६ जूनतक, जब बम्बईमे सग्रहका काम आरम्भ हुआ, सारे भारतमे प्राप्त हुई धन राशि ३० लाख रुपये थी — और शायद इतनी भी नही थी। मुझे विश्वास था जूनके अन्ततक बम्बईके अतिरिक्त दूसरे प्रान्तोमे ही चालीस लाख रुपये इकट्ठे

हो जायेंगे। इसलिए सारे भारतने १४ दिनोमे अथक प्रयत्न करके प्रतिदिन ५ लाख रुपयेके हिसाबसे धन दिया। बम्बईके बाहरके प्रान्तोने ३० जूनतक बम्बईके जितने ही समयमे ३८ लाख रुपये जमा कर लिए थे। रिकार्ड बुरा नही रहा। इस विश्वासको हम किस प्रकार बनाये रख सकते है ? हमे हिसाब इस तरह बिलकुल ठीक-ठीक रखना चाहिए कि एक बच्चा भी उसे देख और समझ सके। असहयोगके अतिरिक्त और किसी भी उद्देश्यके लिए इस धनका उपयोग नही होना चाहिए और सामान्यत: नीचे लिखे उद्देश्योके अतिरिक्त और किसी उद्देश्यके लिए नही (१) चरखे और खादीके प्रचारके लिए, (२) अस्पृश्यता निवारण, और इस प्रकार दलित जातियोके उत्थानके लिए, (३) राष्ट्रीय पाठशालाओ — जहाँ कताई और बुनाई भी शिक्षणके विषय हो — के सचालनके लिए और (४) नशाबन्दी आन्दोलनको आगे बढ़ानेके लिए।

इन उद्देश्योमे राष्ट्रीय सेवाको जारी रखना भी शामिल है। इस सेवाके द्वारा ही हम ऊपर लिखे उद्देश्योको प्राप्त कर सकेगे और ऊपर लिखे उद्देश्योको प्राप्त करना यह दिखाना है कि हम स्वराज्यके योग्य है और उसके उचित पात्र है।

मै सभी प्रकारकी समितियोको सतर्क कर दूँ कि वे इस कोषसे मिलनेवाले सूद-पर निर्वाह करनेकी बात न सोचे। रुपया सूदपर लगाना और फिर सूदसे ही काम चलाना राष्ट्रपर और अपने-आपपर अविश्वास जाहिर करता है। राष्ट्रका विश्वास ही हमारी पूँजी होनी चाहिए और समय-समयपर उससे मिलनेवाला सहयोग ही हमारा सूद। यदि हम राष्ट्रके प्रतिनिधि होनेका दावा करते है तो हमे उसकी सेवाके लिए बनाई गई सस्थाओका वार्षिक व्यय चलानेके लिए उसपर भरोसा करना चाहिए। सूद-पर निर्वाह करनेकी प्रवृत्ति हमे गैर-जिम्मेदार बनाती है। भारतके विभिन्न भागोमें धर्मके नामपर जो अपार धनराशि पड़ी-पडी सड़ रही है, उसके कारण ऐसी तमाम धार्मिक सस्थाएँ यदि बाकायदा भ्रष्टाचारके अड्डे नही बन गई है तो ढोग-मात्र बनकर तो रह ही गई है। इसलिए यदि हम पिछले अनुभवसे लाभ उठाना चाहते है, तो हमे प्राप्त हुआ सारा धन अगले छ महीनोमे खर्च कर देना चाहिए। मैने बेजवाडामे अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके सामने वित्तीय कार्यक्रम पेश किया था। वह मैने इसलिए किया था कि मुझे मालूम था कि हमारे पास ईमानदार और योग्य कार्यकर्त्ता है जो राष्ट्रीय और प्रान्तीय स्तरपर उचित रूपसे धनका उपयोग कर सकते है और फिर हमे इस वर्षके लिए उस धनराशिकी आवश्यकता भी थी। विदेशी कपडे-के बहिष्कारमे हम तबतक सफल नही हो सकते, जबतक हम चरखे, हाथकता सूत और खादी खरीदनेमे खुले हाथो खर्च न करे। स्वदेशीका प्रचार हमें बराबर तबतक करते रहना चाहिए जबतक चरखा व्यावसायिक रूपसे लाभदायक बनकर घर-घरमें न पहुँच जाये। वर्ष-भरमे खर्च कर सकनेकी दृष्टिसे एक करोड रुपये बहुत बडी रकम नही है, क्योकि उसका वितरण एक बडे भू-भागमे करना है। मेरा सुझाव है कि इस मासके अन्ततक प्रत्येक प्रान्त अपना एक बजट बनाये और ठीक उतना ही खर्च करे — न ज्यादा, न कम। मैने एक महीनेका सुझाव इसलिए दिया है कि उससे पहले विभिन्न प्रान्त शायद ही अपना हिसाब-किताब ठीक कर पाये और शायद ही चन्देके वायदोकी रकम वसूल कर पाये। और फिर हमे देखना चाहिए कि अखिल भारतीय

काग्रेस कमेटी आनेवाले महीनोके बारेमे क्या निर्णय करती है। यदि हम सुव्यवस्थित रूपसे यह कार्यक्रम पूरा कर ले तो हम सितम्बरके अन्ततक नही तो दिसम्बरसे पहले ही स्वराज्य अवश्य प्राप्त कर लेगे।

बम्बईका फैसला

बम्बई प्रान्तीय काग्रेस कमेटीने वहाँ जमा चन्देकी रकमके इन्तजामके बारेमें एक बहुत व्यावहारिक और शोभनीय निर्णय किया है। उस प्रस्तावका महत्त्वपूर्ण भाग, जहाँतक मुझे याद है, कुछ इस प्रकार है

> चूँकि जूनमें अखिल भारतीय तिलक स्मारक-कोषके लिए जो चन्दा जमा किया गया था वह केवल प्रान्तीय आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिए नहीं बल्कि बेजवाड़ामें अपने ऊपर लिये गये उत्तरदायित्वको निभानेके लिए और उन प्रान्तोंकी सहायताके लिए था जिन्हें सहायताकी जरूरत है, इस कमेटीकी राय है कि इस निधिके व्ययके प्रबन्धके लिए एक विशेष समिति नियुक्त करना वांछनीय होगा। सर्वश्री राघवजी पुरुषोत्तम, वेलजी लखमसी नापू, रेवाशंकर जगजीवन झवेरी, उमर सोबानी, जमनालाल बजाज, अर्देशर बरजोरजी गोदरेज, शंकरलाल बैंकर और लक्ष्मीदास तैरसीको उस समितिमें नियुक्त किया जाये, जो उक्त कोषकी रकमके खर्चका नीचे लिखी शर्तोंके साथ प्रबन्ध करे और उसपर नियन्त्रण रखे :
>
> (१) निधिका पहला दायित्व प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीका असहयोग सम्बन्धी व्यय होगा।
>
> (२) अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी सिफारिशपर चरखे और खादीके प्रसार, दलित जातियोंके उत्थान, राष्ट्रीय पाठशालाओं, अकाल पीड़ितोंकी सहायता और मद्य-निषेधके लिए दूसरे प्रान्तोंको सहायता दी जायेगी।

यह कार्य आत्म-त्यागका है, जिसके लिए बम्बई प्रान्तीय काग्रेस कमेटी सारे देशकी बधाईकी पात्र है। प्रस्तावमे जो उद्देश्य साफ-साफ दिखाई देता है वह है इस विशाल धनराशिका इस प्रकार प्रबन्ध करना जिसमें सन्देहके लिए कोई गुंजाइश न रह जाये।

एक मुसलमान भाईके लिए त्यागपत्र

बम्बईने आत्म-त्यागका एक दूसरा उदाहरण भी प्रस्तुत किया है। मुसलमानोके प्रतिनिधित्वके बारेमें कार्य-समितिने अपनी राय तब दी जब मतदान पत्र जारी किये जा चुके थे। मतदानके फलस्वरूप केवल एक मुसलमानका निर्वाचन हो सका, वह थे श्री उमर सोबानी और उनके बारेमे शायद ही यह दावा किया जा सके कि वे मुसलमानोंके हितोका विशेष प्रतिनिधित्व करते है। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताके रूपमे उनकी इतनी ख्याति है कि उन्हे केवल मुसलमानोका प्रतिनिधि नही माना जा सकता। और

यह आवश्यक था कि बम्बईसे अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके लिए कमसे-कम दो मुसलमान सदस्य चुने जाये। इसलिए श्री विट्ठलदास जेराजाणीने एक मुसलमान प्रतिनिधिके लिए अपनी सदस्यता त्याग दी। भ्रातृभाव और सार्वजनिक भावनाके ये उदाहरण ही मुझे यह माननेको प्रेरित करते है कि स्वराज्य तेजीसे हमारे निकट आ रहा है। खतरा सिर्फ यह है कि कही हम स्वयं उससे दूर न भागने लगे। मेरी रायमे यह घटना कार्य-समितिकी बुद्धिमानीकी परिचायक है। हमे सतर्क बनाने और ईमानपर दृढ रखनेके लिए उसने ठीक मौकेपर अपनी राय दी। कार्य-समितिने हमे सतर्क किया है कि हम विशेष और नाजुक हितोकी अवहेलना न कर दे और जहाँ-कही भी मुसलमानोमे जोशका जरा भी अभाव दिखाई दे हिन्दू यह ध्यान रखे कि उनकी ओरसे मुसलमानोमे सकोच, उदासीनता और सन्देहके लिए कोई कारण न रह जाये। और जो बात हिन्दू और मुसलमानोके विषयमे है, वही दूसरी जातियोके आपसी सम्बन्धोपर भी लागू होती है। हित जितना ही दुर्बल हो उसका उतना ही अधिक ध्यान शक्तिशाली दलको रखना चाहिए। तब फिर जातीय भेदभावके लिए हमारे बीच कोई स्थान नही रह जायेगा।

क्या यह उल्लंघन है?

नरमदलीय लोगोसे यह निवेदन[1] करके कि वे मद्य-निषेध आन्दोलनमे हमारे साथ सहयोग करे, मित्रोको यह सन्देह है कि मैंने काग्रेसके प्रस्तावका उल्लघन किया है। और मेरा उनको मद्य-निषेधके बारेमे कानून बनानेके लिए आमन्त्रित करना तो विशेष रूपसे प्रस्तावका उल्लंघन माना गया है। एक मित्र पूछते है· "जिन परिषदोका हमने बहिष्कार किया है, हम उनकी सहायता क्यो ले? क्या इसका यह अर्थ नही कि आपने अपने रुखमे कुछ परिवर्तन कर लिया है?" मै कहूँगा कि इसका यह अर्थ बिलकुल नही है। चुनौती और प्रार्थनामे काफी बडा अन्तर है। यदि मै लाचारी महसूस करके कोई प्रार्थना करता तो उसका अर्थ काग्रेसके प्रस्तावका उल्लघन और मेरे पुराने रुखमे परिवर्तन होता, किन्तु विनम्र भाषामे नरम दलवालो को अपना कर्त्तव्य पूरा करने और जनताके प्रतिनिधि होनेके अपने दावेको सिद्ध करनेके लिए कहनेसे तो मेरी रायमे हमारी स्थिति और मजबूत होती है। जो-कुछ हम कर रहे है उसमे सहयोग देनेके लिए सरकार और नरम दलवालो को आमन्त्रित करनेमे मै कोई बुराई नही देखता। नरम दलवालो से और यहाँतक कि सरकारी अधिकारियो और अधिकृत सरकारी सस्थाओके जरिए सरकारसे भी यह प्रार्थना करनेमे कोई हानि नही कि वे खिलाफत और पजाबके मामलेमे सहायता दे, या शराबकी सभी दूकाने बन्द करा दे, या हर स्कूलमे चरखा चालू करा दे, या जनमतका खयाल करते हुए विदेशी कपडेके आयातपर कानूनन रोक लगा दे। क्योकि यदि वे यह-सब कर सकते है तो जिस प्रणालीसे उन्हे प्रेम है या जिसका वे सचालन करते है मै उसे बुरा समझना छोड दूंगा। यह अपील करके मैंने उन्हे आशिक रूपसे जनताका आदर फिर प्राप्त करनेका मार्ग बताया है और इस अपीलका असर न होनेपर अपने और देशके लिए

१. देखिए "पत्र: नरमदलीय भाइयोंको", ८–६–१९२१।

इस तन्त्रकी जड़ता प्रदर्शित करनेके लिए एक और कारण प्रस्तुत किया है। मैंने स्वय इस तन्त्रका भाग होनेके नाते अपील नही की है बल्कि एक बाहरके आदमीके नाते अपील की है।

धरनेके बारेमें

'इडियन सोशल रिफॉर्मर'ने अपनी प्रभावपूर्ण शैलीमे धरनेकी उपयोगिताको अस्वीकार किया है। यदि मै उसके द्वारा प्रस्तुत तर्ककी जाँचमें न पडकर इस सम्बन्धमे सिर्फ अपना अनुभव और अपने विचार सामने रखूं तो थोड़ेमे ही काम चल जायेगा। यह तो स्पष्ट ही है कि धरना देना थोड़े दिनोका ही कार्यक्रम हो सकता है; किन्तु यह किसी दवामे कोई अतिरिक्त उत्तेजक तत्त्व मिला देने जैसा है। शराब पीना व्यसन ही नही, एक व्याधि है। मै बीसियो ऐसे आदमियोको जानता हूँ जो खुशी-खुशी शराब पीना छोड़ दें, यदि यह उनके लिए सम्भव हो। मैं ऐसे भी लोगोको जानता हूँ जिन्होने प्रार्थना की है कि शराब उनकी पहुँचसे बाहर रखी जाये ताकि उन्हे उसका लालच न हो और ऐसा कर दिये जानेपर भी मैंने उन्हे चोरीसे शराब पीते हुए देखा है। लेकिन इसलिए मै यह नही समझता कि उन्हे उस प्रलोभनसे बचानेका प्रयत्न गलत था। व्याधिग्रस्त लोगोको उनकी अपनी गलतियोसे बचाना आवश्यक है। यदि मेरे किसी पुत्रको जुआ खेलनेकी लत हो और यदि जुआरियोकी कोई कम्पनी मेरे पुत्रको प्रलोभन देनेके लिए मेरे घरके पास ही आकर जम जाये तो मेरा कर्त्तव्य हो जाता है कि या तो उस कम्पनीको मिटाकर धर दूं या उसके अड्डेके सामने निगरानीके लिए आदमी बिठा दूं, ताकि मेरे पुत्रको लज्जा आये और वह वहाँ जाना छोड दे। यह सच है कि मेरे घरसे दूर जुआरियोकी दूसरी कम्पनियाँ है, तो भी मैं समझता हूँ इस कम्पनीपर निगरानी रखनेका मेरा काम उचित समझा जायेगा। अपने लडकेका जुआ खेलना कठिन बना देना मेरे लिए आवश्यक है। यदि 'रिफॉर्मर' राज्य द्वारा मद्य-निषेधके सिद्धान्तको स्वीकार करता है, तो उसे तबतक धरना देनेके सिद्धान्तको भी मानना चाहिए जबतक राज्य जनमतकी परवाह न करनेवाला बर्बर तन्त्र बना हुआ है। मान लीजिये कि राज्य हर गलीमे देहका व्यापार करनेवाली स्त्रियोके लिए आलीशान इमारते खडी करवा देता है और उन्हे अपना व्यापार चलानेके लिए अनुमति-पत्र देता है, तो जनताको क्या करना चाहिए? क्या उसका यह कर्त्तव्य नही होगा कि यदि वह इन इमारतोको, जो भ्रष्टाचारके अड्डे है, नष्ट नही करती तो उनका बहिष्कार कर दे और लोगोको सावधान कर दे कि वे इस भ्रष्टाचारसे, जो उनके ऊपर थोपा गया है, अलग रहे? मै इस बातकी आवश्यकताको मानता हूँ कि धरना देनेके लिए केवल चरित्रवान स्त्री-पुरुष चुने जाये और यह सावधानी बरती जाये कि जो लोग जनमतकी परवाह न करके शराब पीनेपर तुले हो उनके प्रति हिंसाका प्रयोग न होने पाये। धरना देना तो एक ऐसा कर्त्तव्य है कि यदि शराबबन्दीमें राज्यकी सहायता नही मिलती तो प्रत्येक नागरिकको इसे निभाना चाहिए। आखिर पुलिसका गश्तीदल चोरोके विरुद्ध धरना नही देता तो और क्या करता है? जब चोर किसीके घरमे घुसनेका इरादा जाहिर करता है तो पुलिस बन्दूकका इस्तेमाल करती है।

धरना देनेवाला कमजोर इच्छा-शक्तिवाले अपने किसी भाईको शराब पीनेकी लतसे सावधान करते हुए लज्जा, यानी प्रेमका दबाव डालता है। 'रिफॉर्मर'ने धरनेके सिर ऐसे अनेक दावे मढे है जो कभी किये ही नही गये।

धारवाड़में हिंसा

यदि 'क्रॉनिकल'मे छपे काग्रेस कमेटीके तारको सच माने, तो इसमे कोई सन्देह नही कि पुलिसका कोई अफसर, जिसको गोली चलानेका हुक्म देनेका अधिकार नही था, घबड़ा गया और उसने निहत्थी भीडपर गोली चलानेका हुक्म दे दिया। शराबकी दूकानोको कुछ ऐसी हठके साथ खुला रखा जा रहा है मानो जनताको शराब मुहैया करना सरकारका एक कर्त्तव्य है। वास्तवमे यह जनमतकी खुली और अनीतिपूर्ण अवज्ञा है। जो लोग मरे है, मै बेशक उनके कुटुम्बियोको बधाई दूँगा और यदि भीड़ने थोडा-बहुत भी शक्ति-प्रदर्शन किया हो, तो मै उसपर दु ख प्रकट करूँगा। साथ ही मैने उन भारतीय मन्त्रियोको, जिन्हे ये हस्तान्तरित विभाग सुपुर्द किये गये है, आदर-पूर्वक सावधान कर देना चाहता हूँ कि यदि वे साहसके साथ उस सकटका सामना नही करते जो देशके सामने है और तुरन्त शराबकी दूकाने बन्द करके उस धनको नही लौटाते जो गरीब ठेकेदारोसे पेशगी लिया गया था, तो वे अपने महान् दलकी परम्पराके विरुद्ध आचरण करेगे। इस जघन्य व्यापारसे दुराचारपूर्वक जो राजस्व प्राप्त होता है उसे खो देनेकी चिन्ता उन्हे नही होनी चाहिए। एक जाग्रत और क्रुद्ध जन-चेतनाके सामने यह धन्धा टिका नही रह सकता। एक भ्रष्ट साधनसे प्राप्त धनसे चलने-वाली शिक्षा वैसे काफी बुरी चीज है। अब निर्दोष व्यक्तियोके खूनका दाग लग जानेके बाद वह दुर्गन्धित हो उठेगी। मै मन्त्रियोसे प्रार्थना करता हूँ कि समय रहते चेत जाये। यह न हो कि उनपर कभी राजस्वके लोभमे अंधे होकर समयको न पहचान पानेका दोष लगाया जाये। इस ओरसे कुछ सप्ताह तो क्या कुछ घटे भी उदासीन रहना, उनके लिए हानिकारक होगा। शराबसे प्राप्त राजस्वको छोड देनेसे पहले, राजस्वके दूसरे साधनोको ढूँढनेके लिए रुके रहना गलत होगा। यह तो वैसा ही होगा जैसे किसी प्लेगवाले घरको दूसरा घर मिलने तक न छोडना। ऐसी स्थितिमे अधिकतर तो वह घर तत्काल खाली करके दूसरा घर तलाश किया जाता है।

एक बहादुर सिख

सरदार शार्दूलसिंह मुझे हमेशा बड़े ही बहादुर असहयोगी लगे हैं। वे बहुत सुसस्कृत और सम्मानशील व्यक्ति है। अहिसात्मक असहयोगपर उनकी बौद्धिक आस्था है। वे एक कट्टर राष्ट्रवादी है। सिख धर्मके सिद्धान्त उनको प्राणोके समान प्यारे है, किन्तु राष्ट्रवादसे भी उन्हे उतना ही प्यार है। अहिंसा सभी बातोमे उनका सर्वोपरि सिद्धान्त नही है। इसमे उनकी स्थिति अली बन्धुओ-जैसी ही है, और यह एक बडी बात है। वे अहिंसाके सिद्धान्तका उतनी ही ईमानदारीसे पालन करते है जितना कि अली बन्धु, और इतना कहना काफी कह देना है। किन्तु यह सरकार उनको केवल देश-निकाला देनेके योग्य व्यक्ति मानती है। उन्हे पाँच वर्षका देश-निकाला दिया गया है। वे आवश्यकतासे अधिक बहादुर, ईमानदार और इसलिए आवश्यकतासे अधिक

प्रभावशाली है, इसीलिए पजाव सरकार खौफ खा गई और इसी कारण उन्हे जनताके बीचसे हटा दिया गया है। मेरा दृढ विश्वास है कि उनके जेल भेज दिये जानेसे देशके लिए उनकी सेवाओका महत्त्व और भी बढ गया है। सारे भारतमे वहादुरी और आत्म-सयमका यह प्रदर्शन अद्भुत है कि इतने अधिक लोग प्रसन्नतापूर्वक जेल जाना स्वीकार करते है और लोग विना झुके धीर, गम्भीर और शान्त वने रहते है। मुझे आशा है कि सरदार शार्दूलसिंहके जेल भेजे जानेके फलस्वरूप सिख और दूसरे पजावी और अधिक उत्साहसे असहयोगके लिए काम करेगे। मै सरदार शार्दूलसिंह और उन सव लोगोको बधाई देता हूँ जो मातृभूमिके लिए यातनाएँ सह रहे है।

युवराजका प्रस्तावित आगमन

दुखकी बात है कि युवराजके आगमनकी बात फिरसे उठाई गई है और अस्थायी रूपसे उसकी तिथि भी निश्चित कर दी गई है। भारत जिस तन्त्रसे विलकुल आजिज आ गया है, उसके प्रतिनिधिके स्वागतको वह कभी तैयार नही होगा। यदि भारतकी अनिच्छुक जनतापर यह यात्रा थोपी गई, तो युवराजके आगमनके दिन उसी तरहकी हडताल होनी चाहिए जैसी ड्यूकके आगमनपर हुई थी। मै फिर स्पष्ट कर दूं कि व्यक्तिगतरूपसे युवराजके विरुद्ध असहयोगियोको कुछ नही कहना है। किन्तु जिस पदपर वे है उसे उनसे अलग नही किया जा सकता। यद्यपि यह सच है कि सम्राट् या उनके उत्तराधिकारी सक्रिय रूपसे राजकीय मामलोमे हस्तक्षेप नही करते (जो कि राज्यके लिए सुविधाजनक है) तथापि वे मौजूदा तन्त्रके उतने ही पुरअसर प्रतिनिधि है जितना कि वहुत हस्तक्षेप करनेवाला कोई प्रधान मन्त्री या वाइसराय हो सकता है। मेरा तो विचार है कि अपनी अलग-थलग स्थितिके कारण तन्त्रके समर्थकके रूपमे उनका प्रभाव और भी अधिक हो जाता है। यदि युवराज आते है तो वे असहयोगियोको या हमारे लक्ष्यको आशीर्वाद देने नही आयेगे, वल्कि इस सरकारकी प्रशसाके गीत गाने आयेगे जो पजावके अपमान, मुसलमानोके प्रति वचन-भग, भारतपर शरावका कुत्सित व्यापार थोपने और देशको गरीव और इतना दुर्वल बनानेके लिए जिम्मेदार है कि भारत समझने लगा है कि उसे अनिश्चित कालतक दासतामे वँधे रहना पडेगा। मेरी विनम्र रायमे युवराजका प्रस्तावित आगमन जलेपर नमक छिडकने-जैसा होगा और प्रत्येक असहयोगीका यह कर्त्तव्य होगा कि वह आदर किन्तु दृढताके साथ साफ-साफ शब्दोमे इस तरहके उन सव प्रयत्नोका विरोध करे जो एक गिरते हुए तन्त्रको सहारा देनेके लिए किये जा रहे है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ६–७–१९२१

१५७. बम्बईकी सुन्दरता

बम्बई सुन्दर है। इसलिए नही कि वहाँ बडी-बड़ी इमारते है; क्यो कि ये इमारतें अधिकतर तो भयकर गरीबी और गन्दगीका आवरण-भर हैं। इसलिए भी नही कि वह सम्पन्न है, क्यो कि अधिकाशत. यह धन जनताके शोषणसे कमाया जाता है। उसकी सुन्दरताका मूल कारण उसकी उदारता है जिससे सारा ससार परिचित है। दानवीरता सबसे पहले पारसियोने दिखाई और फिर बम्बईने हमेशा उसे निवाहा। बम्बईकी उदारताके कारण उसके अनेक पापोपर पर्दा पड गया है। तिलक स्वराज्य-कोषके मामलेमें बम्बईने अपने सब पुराने रिकार्ड तोड दिये है। १६ जून और ३० जूनके बीच बम्बईने इस कोषमें २।। लाख रुपये प्रतिदिनके हिसाबसे चन्दा दिया। बम्बईके कारण भारत अपने वायदेपर कायम रह सका। मुझे सन्देह नही कि चित्तरजन दास बम्बईके इस दावेको स्वीकार करेगे कि बगालको उसीके उत्साहकी छूत लगी और उसे त्राता बननेका अवसर दिया और बगाल ३ लाखसे छलाँग लगाकर एकदम २५ लाखपर पहुँच गया। यदि ऐसा न हुआ होता तो बम्बईके अच्छेसे-अच्छे कार्य-कर्त्ताओके भगीरथ प्रयत्नोके बावजूद भारत एक करोड़ रुपया जमा न कर पाता। इसीलिए मैंने कहा कि बम्बईकी सुन्दरता उसकी उदारताके कारण है।

कितने सदस्य बनाये गये कितने चरखे दाखिल किये गये इसके आँकड़े तो उपलब्ध नही है; किन्तु यह चन्दा भारतके दृढ संकल्पका सबसे ज्वलन्त प्रमाण है।

भारतने जैसा मान स्वर्गीय लोकमान्यको दिया है वैसा आजतक और किसीको नही दिया। किन्तु यह एक करोड तो उस स्मारककी पहली सीढी ही समझिए जिसे हम लोकमान्यकी स्मृतिमे खडा कर रहे हैं, उसका कलश तो स्वराज्य ही है। ऐसे महान् पुरुषकी स्मृतिके प्रति श्रद्धा प्रकट करने योग्य स्मारक तो स्वराज्य ही हो सकता है, इससे कम और कोई चीज नही।

तो भी हमे आत्मवचना नही करनी है। स्मारक सम्बन्धी प्रस्तावमे निहित भावनाके प्रति सचाई बरतनेके लिए प्रत्येक प्रान्त और प्रत्येक जिलेको अपनी जन-सख्याके अनुपातमे चन्दा देना चाहिए था। दो पैसे प्रति व्यक्तिके हिसाबसे देना साधारण स्त्री या पुरुषकी सामर्थ्यसे बाहर नही था। मुझे आशा है कि प्रत्येक प्रान्त शीघ्रसे-शीघ्र अपना निर्धारित अश पूरा कर देगा।

यह चन्दा हमारी लम्बी यात्राका प्रथम चरण है। इस एक करोड रुपयेसे स्वराज्य नही मिलनेवाला। सारे ससारका धन भी हमे स्वराज्य नही दे सकता। पूरी तरह स्वतन्त्र होनेके लिए पहले हमारा आर्थिक रूपसे स्वतन्त्र होना आवश्यक है। भूखो मरते हुए व्यक्तिसे भजनकी आशा करना व्यर्थ है। भूखसे विकल आदमी तो अपनी आत्मा भी बेच देगा। उस बेचारेके पास आत्मा कहाँसे आई। इसलिए स्वतन्त्रताकी बात सोचनेके पहले उसे यह अनुभूति जरूर होनी चाहिए कि वह आर्थिक रूपसे किसीका मोहताज नही है। और यह तबतक नही हो सकता जबतक भारत कपड़के

लिए विदेशी बाजारपर आश्रित है। ऐसा व्यक्ति जो प्राणवायुके लिए यन्त्रपर आश्रित है, मरणोन्मुख व्यक्ति है। तब फिर भारतको मरणोन्मुख कहनेमे क्या बुराई है? और यदि हम इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना चाहते है तो वह केवल तभी सम्भव है जब हम आत्म-त्यागका सहारा लेकर विदेशी वस्त्रोका पूर्ण बहिष्कार कर दिखाये। इसलिए इस रकमका उपयोग चरखे और हथकरघेसे यथासम्भव अधिकसे-अधिक खादी तैयार करनेमें किया जाना चाहिए। हर प्रान्तका मुख्य काम यही होना चाहिए। हमे अपनी मिलोके उत्पादनकी जाँच करनी चाहिए और मिल-मालिकोको इसके लिए राजी करना चाहिए कि वे अपना उत्पादन और मुनाफा राष्ट्रकी आवश्यकताओंको देखते हुए निर्धारित करे। मिलका कपड़ा तो गरीबसे-गरीब लोगोके लिए ही रहना चाहिए, क्योकि हम फिलहाल उनतक इसे पहुँचा नही सकते।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी आगामी बैठकको इसपर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए और इस बहिष्कारका काम पूरा करनेके लिए कार्यक्रम निर्धारित करना चाहिए।

मुख्य रूपसे बहिष्कारका भार आखिरकार बम्बईको ही उठाना है, जैसा कि उसने चन्देकी उगाहीके समय किया था। बम्बई भारतके कपडा बाजारको नियन्त्रित करता है। और वह कपडा लकाशायर और जापानसे मँगाया जाता है। इस प्रकार बम्बईके सूत और कपडा आयात करनेवालो के ऊपर एक बड़ा उत्तरदायित्व है। यदि हम बहिष्कारको सफल बनाना चाहते है तो उन्हे देशके लिए बडा त्याग करनेके लिए तैयार रहना चाहिए। मिल-मालिकोका भी कोई कर्त्तव्य है। उन्होने भारी मुनाफा कमाया है। उनके लिए बहिष्कार आन्दोलनकी भली प्रकार सहायता करना बहुत आसान है। इसके लिए राष्ट्रीय जीवनके प्रति उन्हे अपना दृष्टिकोण बदलना चाहिए। मिल-मजदूरोका भी देशके प्रति कर्त्तव्य है। अबतक उनकी दिलचस्पी केवल अपनी मजदूरीमे रही। अब उन्हे जनहितका भी विचार करना पडेगा। अन्तमे आती है अभागी जनता जिसका मूल्य निर्धारित करनेमे कोई हाथ नही और जिसे मिल-मालिको और आढतियोकी इच्छानुसार दाम देने पडते हैं। बहिष्कारका सवाल छोड दे तो भी यह एक बडी असन्तोषजनक स्थिति तो है ही। अकाल सामने खडा है। अब समय आ गया है कि हममे से प्रत्येक व्यक्ति, देशहितकी बात भुलाकर अपना उल्लू सीधा करनेकी बजाय समस्त जनताके हितके बारेमें सोचे। सुन्दर बम्बईके सामने एक स्वर्णिम अवसर है। या तो वह अपने इस सौन्दर्यको निखारे या जो यश मिला है उससे भी हाथ धोये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ६–७–१९२१

१५८. अपील : मिल-मालिकोंसे

६ जुलाई, १९२१

मिल-मालिकोकी सेवामे

सज्जनो,

शायद आप असहयोग आन्दोलनमे विश्वास नही रखते। मै जानता हूँ कि आपमें से कुछ लोगोका खयाल यह है कि अन्तमे इसका परिणाम हिंसा ही होगा। यदि इससे आपका यह आशय है कि हिंसा उस सरकारकी ओरसे होगी जो सत्ता नही छोड़ना चाहती तो आपका कहना सही है। यदि धारवाड कांग्रेसके मन्त्रीकी रिपोर्ट-पर विश्वास किया जाये तो वहाँकी घटना इसका एक ताजा उदाहरण मालूम होती है। आपमे से कुछ लोग यह समझते है कि आन्दोलनसे, चाहे वह सफल हो चाहे अस-फल, देशको हानि ही पहुँचेगी। मेरी आपसे यही प्रार्थना है कि फिलहाल अहिंसाकी बातपर न सोचे और इस समय विदेशी कपडेके बहिष्कारका जो आन्दोलन तीव्र किया जा रहा है, आप उसका अध्ययन करे। मै जब बगाल जाता हूँ तभी बगाली लोग मुझसे यह कहनेमे नही चूकते कि जब वगभग विरोधी आन्दोलन चल रहा[1] था तब मिल-मालिकोने सहायता नही दी थी, इतना ही नही उन्होने कीमते बढा दी, कपडोमे ज्यादा माँड़ी देकर उन्हे कुछ-का-कुछ दिखाया, यहाँतक कि स्वदेशीके नामपर हमारे सिर विदेशी कपड़ा मढकर हमे धोखा दिया। मै नही जानता कि इन आरोपोमे सचाई कितनी है। लेकिन आप इस बातमे मुझसे सहमत होगे कि यदि उनके आरोप सच है तो वे मिल-मालिकोके लिए किसी श्रेयके द्योतक नही है।

इस समय देशपर जो उस बारसे भी बडा सकट आया हुआ है उसमे आप लोग कौन-सा मार्ग ग्रहण करेगे, यदि इसके सम्बन्धमे मुझे सन्देह न होता तो मुझे ये आरोप याद न आते। मुझसे कई मित्रोने कहा है कि राष्ट्रको आप लोगोसे किसी बातकी अपेक्षा नही करनी चाहिए। वे कहते है कि अपवादस्वरूप एक या दो सच्चे लोगोको छोड-कर आपने तिलक स्वराज्य-कोषमे कुछ नही दिया है। मैने आपके चन्दा न देनेका बचाव इस आधारपर किया है कि आपमें से जिनको इसमे कोई वैचारिक आपत्ति नही है उन्होने सकोच या भयके कारण ऐसा किया है। मै अपने मनमे यह बात तो नही आने देना चाहता कि जब आपकी सहायताकी अत्यन्त आवश्यकता है तब आप व्यव-सायियोंकी हैसियतसे देशकी मदद नही करेगे। लेकिन जो व्यापारी विदेशी कपड़ेका व्यापार करते है और जिन्हे मै यह समझा रहा हूँ कि उन्हे देशकी भावना पहचाननी चाहिए और विदेशी कपड़ेका व्यापार बन्द कर देना चाहिए, वे मुझे यह कहकर डराते है कि इस आन्दोलनमे उनकी मददका परिणाम केवल यह होगा कि आप, मिलो-के मालिक-गण, तुरन्त कीमतें बढा देगे और कीमते बढ़ानेके समर्थनमे राष्ट्रके सामने

१. १९०५ में और उसके बाद।

उपलब्धि और माँगके नियमको प्रस्तुत करेंगे एव इस प्रकार हालत जितनी खराब अब है उससे भी ज्यादा खराब हो जायेगी। वे मुझसे कहते है कि वे विदेशी कपडेका व्यापार खुशीसे छोड देंगे परन्तु इस शर्तपर कि उन्हे इस बातका विश्वास दिला दिया जाये कि आप लोग उपलब्धि और माँगके नियमकी बात नही उठायेंगे और कीमते न बढाना अपना कर्त्तव्य समझेंगे। सन् १९१९ मे आपमे से कुछ लोगोने मुझसे यह कहा था कि यदि आप कीमते न भी चढाये तो भी फायदा उपभोक्ताको नही बल्कि बीचके लोगोंको होगा और वे लूट मचायेंगे। मेरा खयाल है कि आप जैसे बुद्धिमान व्यवसायियोके लिए यह तर्क देना अशोभनीय है। आप अपने बनाये हुए मालके व्यापार-को, जबतक वह उपभोक्ताओ तक न पहुँचे, भलीभाँति नियन्त्रित कर सकते है। आपको तो इतना ही करना है कि आप अपने व्यापारमे थोडी-सी राष्ट्रीय भावनाका समावेश करे।

मै यह नही कहता कि आप परोपकार करे, यद्यपि आप व्यापार करते हुए परोपकारकी भावना भी रखे तो इसमे अनुचित कुछ भी नही होगा। लेकिन मै यह प्रार्थना अवश्य करता हूँ कि आप अपने व्यापारको विशुद्ध स्वार्थके बजाय राष्ट्रीय आधारपर चलाये। कोई आदमी महज इसलिए कि वह अपने और अपने हिस्सेदारोंका खयाल रखनेके साथ-साथ राष्ट्रका भी खयाल रखता है कम व्यवसायकुशल नही हो जाता। इसलिए मेरा आपसे अनुरोध है कि असहयोगके सम्बन्धमे अपने विचारोको कोई क्षति पहुँचाये बिना यह आश्वासन अवश्य दे कि यदि विदेशी मालके प्रस्तावित बहिष्कारके कारण माँग बढ गई तो आप केवल उसी बातको लेकर अपने कपडेके भाव नही बढायेंगे और इस सम्बन्धमे व्यापारियो और उपभोक्ताओको डरनेकी कोई जरूरत नही है। देशको आपसे कमसे-कम इतनी अपेक्षा रखनेका अधिकार तो है ही।

आपका विश्वस्त मित्र,
मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-७-१९२१

१५९. तार: चक्रवर्ती राजगोपालाचारी और एस० श्रीनिवास आयंगारको[1]

[६ जुलाई, १९२१ या उसके पश्चात्]

कांग्रेस महासमितिकी बैठक और अन्य दायित्वोको देखते हुए अगस्तसे पहले दो सप्ताह देना असम्भव।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५९२)की फोटो-नकलसे।

१६०. पत्र: महादेव देसाईको

बुधवार [६ जुलाई, १९२१ या उसके पश्चात्][2]

चि० महादेव,

कल तुम्हारा पत्र मिला। तुमने जो लिखा था सो मैं समझ ही गया था। मैंने न उलटा अर्थ किया और न करनेकी मेरी आदत है। जब एक वाक्यके दो अर्थ होते हो तब जो अर्थ हमारे प्रतिकूल पडे उसे ही अपने ऊपर लागू करना चाहिए, यही उचित है और यही सच भी है। उपर्युक्त दोनो वाक्योमे यह दोष नही था। दोष तो मैंने जो बताया वही था। २५ लाख मानना हमारे कोई विशेष अनुकूल नही होता, क्योकि इस रकमके बिना भी एक करोड़ हो गये थे और अन्तिम पत्र लिखनेके बाद ही यह तार आया था। वे एक लाख चरखे दानमे देना चाहते है अथवा कम दाममे देना चाहते है इससे भी हमारे कार्यमे कोई फर्क नही पडता। अभीतक एक लाख चरखोवाले वाक्यका मैं दूसरा अर्थ नही करता। लेकिन वाक्योका अर्थ लगानेमे उतावली की गई है और यह उतावली भी आसक्तिकी सूचक है। आसक्तिमें हमेशा असत्य ही भरा होता है। अनासक्त पुरुषके पास सोचने-विचारनेका समय होता है और वह कुछ ऐसा ही अर्थ करता है जिससे विरोधी पक्षका बचाव हो सके और यदि व्यक्ति सत्यनिष्ठ है तो जैसा मैंने बताया है वह पत्र-लेखकके अभिप्रायकी सही कल्पना कर लेता है।

तुम्हारे बारेमे पढा। जो हुआ सो विपरीत हुआ। इससे यह प्रकट होता है कि हम किस तरह भूलमे पड जाते है। सच्चा प्रायश्चित्त तो यही हो सकता है कि

१. यह श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी और एस० श्रीनिवास आयंगारके ६ जुलाईको मद्रासले दिये गये इस तारके उत्तरमें भेजा गया था: "बम्बईमें कार्य आरम्भ कर देनेके बाद यहाँ जल्दी ही दो सप्ताहके दौरेके लिए जरूर आयें।"

२. '२५ लाख'के उल्लेखसे प्रतीत होता है कि यह पत्र ३० जूनके बाद पड़नेवाले बुधवार अथवा उसके बाद अर्थात् ६ जुलाईको लिखा गया था; देखिए "'नवजीवन'को तार", १-७-१९२१।

फिर कभी ऐसा न हो। तथापि मै निम्नलिखित सुझाव देता हूँ। प्रत्येक एकादशीको सिर्फ एक सेर, ८० तोला, गर्म दूध पर रहो। न फल लो, न शक्कर। और वह दूध भी दो या तीन बारमे पियो, एक ही बारमे नही। अगली एकादशीसे ऐसा एक वर्षतक करो।

श्रीमद् राजचन्द्रजीके[1] लेखोको पढ जाना और उनपर विचार करना।

तुलसीदासकी 'मणिरत्नमाला' पढकर उसपर मनन करना।

भर्तृहरिके 'वैराग्यशतक' को पढ उसपर अच्छी तरहसे विचार करना।

'योगवासिष्ठ' का वैराग्य प्रकरण खूब ध्यानसे पढ जाना।

हर रोज कमसे-कम एक घटा चरखा कातना और उस समय हमेशा यह विचार करना कि इस यज्ञके द्वारा मनकी मलिनता धुल जाये। यह भी एक वर्षतक करना, यात्रा और बीमारी अपवाद है।

सवेरे उठनेपर अन्य समस्त कार्य बादमे करना। सवेरे उठ शौचादि करना हो तो वह करके, यदि आश्रममें हो तो प्रार्थना करके, आध घटेतक चुपचाप उपर्युक्त पुस्तकोका पाठ करना और बादमे एक घटा चरखा चलाना। इसके बाद कुछ और काम करना।

एक वर्षके लिए नौ बजनेसे पहले सो जाना और चार बजनेके बाद बिस्तरपर कतई न रहना। इस कार्यक्रममे परिवर्तन तभी हो सकता है जब तुम बीमार पड़ो।

इस प्रायश्चित्तका विधान करते समय मै दोषको बढा-चढाकर नही कहता और न ही मैं उसको कम मानता हूँ। इसमे से तुम्हे जो-कुछ निकालना हो उसे निकाल देना। लेकिन लोक-लाजके अधीन होकर चरखेको मत निकालना। और लोक-लाज अथवा लोक-सेवाके विचारसे नौ बजे सोना मत छोडना। 'इडिपेंडेट' को आड़े नही आने देना। . . . दैनिकके लिए लिखनेके लिए रातको जागनेकी जरूरत नही है। और फिर जिस शैलीसे हम चलाना चाहते है उसमे ऐसा कुछ नही है।

और जान लो कि ऊपरका डेढ घटा तो मौनका ही है। देवदासने निर्दोष भावसे तुम्हारे पत्रको पढना शुरू किया, इससे उसे रोकना मुझे उचित नही लगा।

तुमने न आनेका जो कारण दिया है वह सबल है इसलिए चाहो तो मत आओ। पण्डितजी अथवा जोसेफ भेजे और आओ, यह अलहदा बात है। तुम्हारे न आनेकी मुझे चिन्ता नही, लेकिन अगर आ जाते तो मुझे खुशी ही होती।

तुम्हारे दोषको देखनेपर मेरे प्रेममे कोई कमी आ जायेगी, ऐसा तो तुम कभी नही मानोगे। मै पूर्ण होऊँ तो कमीको अवकाश नही हो सकता। मै अपूर्ण मुमुक्षु अगर दूसरोके दोषोको बढा-चढाकर देखूँ तो अपनी अपूर्णतामे वृद्धि करूँगा।

मैने नित्य-स्मरण करनेके लिए कहा है तथापि ग्लानि नही होनी चाहिए। शुद्ध पश्चात्ताप ग्लानिका विरोधी है। पाप लम्बा मुँह बनाता है। मलिनताका स्मरण हमे विनम्र बनाता है, ग्लानि कभी नही देता।

१. श्रीमद् राजचन्द्र, जिनका गांधीजीपर बहुत प्रभाव पड़ा; देखिए खण्ड १३, पृष्ठ १४६।

'सुख दुखे समेकृत्वा'[1] की बात यहाँ भी लागू होती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२९) की फोटो-नकलसे।

१६१. कपड़ेके व्यापारियोंको खुला पत्र

७ जुलाई, १९२१

सज्जनो,

कल मैंने मिल-मालिकोको विदेशी कपडेके बहिष्कार-आन्दोलनमें सहायता देनेके लिए निमन्त्रित किया था। सम्भव है वे सहायता दे, शायद न भी दे। आशा तो यही है कि वे सहायता देंगे। लेकिन आपका इस आन्दोलनसे अलग रह सकना असम्भव है, क्योंकि आपमें से अधिकतर लोग असहयोगमे पक्का विश्वास रखनेवाले हैं। आपके सहयोगसे तिलक स्मारक-कोषके सम्बन्धमे हमारी बेजवाडामें की गई प्रतिज्ञाकी पूर्ति सम्भव हुई है। लेकिन आप कहेंगे कि चन्दा देना तो हमारे लिए एक छोटी-सी बात थी किन्तु हमारा व्यापार हमारे लिए जीवन-मरणका मामला है। इसी प्रकारके भ्रमके कारण हमे स्वराज्य नही मिल रहा है। यदि आपका व्यापार आपके लिए जीवन-मरणका मामला है तो क्या देशका हित आपके नजदीक उससे कम महत्त्व रखता है? स्वराज्यका अर्थ यह है कि मैं और आप लोग निजी व्यापारसे देशके व्यापारको अधिक महत्त्व दे। दूसरे शब्दोमे आपसे विदेशी कपडा न मँगानेका जो अनुरोध किया गया है वह इस बातका अनुरोध है कि आप देशके लाभसे अपने लाभको कम महत्त्व दे।

आप इग्लैंड, जापान या अमेरिकासे जो कपडा मँगाते है उसके प्रत्येक गजपर आप अपने देशवासियोसे कमसे-कम तीन आने छीन लेते हैं और बदलेमे उन्हे कुछ नही देते। मै यह बात स्पष्ट करके कहूँ। भारतमे बहुत मजदूर है जो गाँवोमे बेकार पडे हुए है। पहले ये बेकार मजदूर सूत और कपडा तैयार करनेमे लगे हुए थे। विदेशी कपडेके आयातके फलस्वरूप वे अनिवार्यत बेकार बन गये और इस लम्बे अरसेमें उनमे से बहुतेरोको कोई दूसरा धन्धा नही मिल पाया। इसी कारण जब-जब भारतमें अनावृष्टि होती है तब-तब दयार्द्र व्यक्तियोके हृदय काँप उठते हैं। ऐसा होनेकी जरूरत नही है। भारतमे अनावृष्टि कोई असाधारण बात नही है। हमको उसके इतना घातक होनेका अनुभव इसलिए होता है कि हम करीब-करीब भूखो मर रहे हैं। लम्बी बेकारी-के फलस्वरूप अपना निर्वाह करते रहनेकी हमारी शक्ति क्षीण हो गई है। आप यह खयाल न कीजिए कि झोपडियोमे रहनेवाले ये करोडो लाचार लोग सबके-सब हमारे दर्जनभर शहरोमे, जहाँ मजदूरोकी कमी है, इकट्ठे होकर अपनी रोजी कमा सकते

१. भगवद्गीता, २-३८।

है। उनके ऊपर जमीनका भार है और वे इच्छा रहते हुए भी अपनी जमीनको नही छोड़ सकते। भारतके तमाम शहरोमे भी ये करोड़ो लोग समा नही सकते। उनकी आँखोमे चमक हाथ-कताई और हाथ-बुनाईके धन्धेकी पुन स्थापनासे ही आ सकती है, अन्यथा नही। और यदि मैं आपसे यह न कहूँ कि भारतकी गहरी और दु ख-जनक दरिद्रताके लिए मिल-मालिकोकी अपेक्षा व्यापारी अधिक उत्तरदायी है तो मैं अपने प्रति और देशके प्रति कर्त्तव्य-पालनसे च्युत माना जाऊँगा। इसमें सन्देह नही कि जब मिल-मालिक ऊँची कीमते वसूल करते है तो वे इस दरिद्रताको और भी भीषण बना देते है। लेकिन इसके लिए आप इतने उत्तरदायी है कि यदि आप विदेशी कपडेका आयात बन्द कर दे तो आप हाथ-कताईके प्राचीन और सम्मानपूर्ण धर्मको पुनरुज्जीवित कर सकते है। और हाथ-बुनाईके उद्योगको उत्तेजन दे सकते है।

आखिर जिस व्यापारसे भारतको हानि पहुँच रही है उसको छोड़ना आपमे-से बहुतेरोके लिए जीवन-मरणका मामला क्यो होना चाहिए? निश्चय ही आपमे इतनी सूझ-बूझ है कि आप कोई दूसरा ऐसा व्यापार खोज निकाल सकते है जो आपके लिए और देशके लिए समान रूपसे लाभप्रद हो। आयात बन्द करनेका अर्थ है प्रति वर्ष ६० करोड़ रुपये बाहर जानेसे बचा लेना। लेकिन इसका अर्थ इससे कही ज्यादा बडी पूंजीको यहाँ व्यवहारमे लाना है। इसका अर्थ यह है कि रुईकी समस्त प्रक्रियाएँ भारतमे ही पूरी की जाये। इसमे आपके लिए व्यापारकी गुजाइश है। इसका अर्थ है कि इस समय दिन-प्रतिदिन बढ़ती हुई मात्रामे जो धन हमारे प्यारे देशसे बाहर जा रहा है वह नही जायेगा और वह देशके व्यापारमे लगेगा। मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप अपनी तीक्ष्ण बुद्धिकी मददसे इसे अनुचित कामोमे लगाना बन्द करके ऐसे हितकर काममे लगाये जो आपके लिए सुलभ हो सकते है। आपको हाथ-कताई और हाथ-बुनाईके उद्योगका सगठन अवश्य करना चाहिए। तब आप मेरी तरह मोटी-झोटी खादीसे सन्तुष्ट नही होगे। आप अपने कतैयोसे बारीकसे-बारीक सूत कातनेका और बुनकरोसे ढाकाकी विश्वविख्यात मलमल बुननेका आग्रह करेगे। आप इसमे बड़ी-बडी पूंजी लगायेगे। परन्तु मैंने तो अपनी बहनोको केवल कुछ हजार रुपये दिये है, जो आपसे मुझे दानमे मिले थे। आपके लिए इस विदेशी कपड़ेके अपवित्र व्यापारको छोड़नेका अर्थ है हाथ-कते सूतके उत्पादन और वितरणका सगठन करना। यह उद्योग आपकी देशभक्तिके अनुरूप है। शायद आप यह कहे कि ऐसा सगठन करनेमे कुछ साल लग जायेगे। आपने अपना वर्तमान व्यापार एक क्षणमे तो नही जमा लिया है। यदि आपको यह विश्वास हो गया है कि यह ऐसा व्यापार है जिसने भारतको गरीब और गुलाम बनाया है, तो आप इसके नष्ट होनेके परिणामोपर विचार करनेके लिए नही रुकेंगे। आप कैसी भी हानि उठाकर इसकी इतिश्री हो जाने देगे।

और इसमे हानि ही क्या है? बहुत तो नही है। आपको विदेशी कपडे और सूतके सब नये ऑर्डर रोक देने है। इसमे कुछ खर्च नही होता। आपके पास विदेशी कपड़ा जमा है जो आपको खपाना है। इसकी खपतके लिए ससारका बाजार आपके लिए खुला पड़ा है। भारतकी जरूरतकी कपडेकी खास किस्मे मारिशस, दक्षिण आफ्रिका या पूर्व आफ्रिका जैसे देशोमे कई कामोमे प्रयुक्त की जा सकती है। आप

सिर्फ मुझे यह अनुमति दे दें कि आपके पास जो विदेशी कपड़ा और सूत जमा है उसको खपानेका सर्वोत्तम तरीका आपके लिए मैं सोच निकालूँ।

आपमें से कुछ लोगोंको उपभोक्ताओंकी जरूरतोंके बारेमें चिन्ता हो गई है। कपड़ेकी जो भी कमी होगी वे उसमें किसी तरह अपना निर्वाह कर लेंगे, उससे उन्हें कोई असुविधा न होगी और वे अगले साल हर तरहके अर्जकी और बारीक सुन्दर खादीको बड़ी मात्रामें इससे भी ज्यादा पसन्द कर सकेंगे।

मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप उपभोक्ताओंकी बात जरूरतसे ज्यादा न सोचें। आपका झीनी जापानी धोतियाँ या साड़ियाँ या माँड़ीदार महीन सूती कपड़े दिखाकर उनको प्रलोभन देना उचित नहीं है। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप इसकी अपेक्षा उपभोक्ताओंमें खादीमें कला देखनेकी रुचि पैदा करें। कपड़ेमें एकसापन और मुलायमियत ही कला हो, सो बात नहीं है। बहुत ही बढ़िया बने हुए रेशमके गुलाबी फूलमें कोई कला नहीं है। क्योंकि उसमें कोई जीवन नहीं है। लेकिन बागसे तोड़ा हुआ गुलाबका ऐसा फूल जिसकी बहुत-सी पँखुड़ियाँ झर गई हों सफ़ाईसे बनाये हुए नकली गुलाबकी अपेक्षा, जो सजी हुई खिड़कीमें रखा गया है, किसी भी हालतमें बढ़िया बैठता है। असली फूलमें जीवनका संचार है। क्या ही अच्छा हो कि भारतके व्यापारी पैसेके लिए काम न करें, बल्कि उसकी अपेक्षा प्राचीन कलाका अध्ययन करें और उसे पुनरुज्जीवित करना अपना व्यवसाय बना लें। इससे आपको और देशको धन मिलेगा। हमें सबसे बड़ी जिस कलाको पुनरुज्जीवित करना है वह स्वराज्य है। स्वदेशीको अपनाये बिना स्वराज्य मिल नहीं सकता। और भारतके लिए स्वदेशीको अपनानेका अर्थ है विदेशी कपड़ेका स्थायी रूपसे बहिष्कार करना। मैं आपको अगुआ बननेके लिए निमन्त्रित करता हूँ क्योंकि आपमें इसकी क्षमता है। परमात्मा आपको इस नेतृत्वकी शक्ति और समझ दे।

आपका विश्वस्त मित्र,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ७–७–१९२१

१६२. तार: गुलाम महबूबको[1]

[७ जुलाई, १९२१][2]

गुलाम महबूब
मोगा

जमानत न दे। वकील न करे। ब्यौरा भेजें।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५६४) की फोटो-नकलसे।

१६३. पत्र: ज० बो० पेटिटको

[७ जुलाई, १९२१ के पश्चात्][3]

प्रिय श्री पेटिट,[4]

एसोसिएशनने जो दो हजार रुपये मजूर किये है उनमे से कृपया ५०० रुपये मुझे दे। मैंने यह रकम श्री बनारसीदासके लिए माँगी है जो श्री एन्ड्रयूजकी अधीनतामे काम कर रहे है। उन्होने यह रकम खर्च कर ली है। मैंने इन ५०० रुपयोके बारेमे आपसे कहा था कि वह मुझे इस कार्यके लिए कलकत्ताके एक मित्रने दिये थे। यह खर्च केवल फीजीसे लौटे हुए उन प्रवासियोपर ही हुआ जिनकी श्री एन्ड्रयूज की देख-रेखमे श्री बनारसीदास सार-सँभाल कर रहे है।

आपका,

पेंसिलसे लिखे हुए अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ७५६५) से।

१. यह तार गुलाम महबूबके उस तारके जवाबमें दिया गया था जिसमें उन्होंने लिखा था: "हम ७ कांग्रेस कार्यकर्ताओंपर नौकरशाही और उसके खुशामदियोंके भड़कानेपर गैर-सरकारी लोगोंने धारा १०७के अन्तर्गत मुकद्दमा दायर कर दिया है। मुकदमा गैर-सरकारी है, हाजिरीकी जमानत और सफाईके बारेमें सलाह दें।"

२. यह तारीख डाक मुहरके आधारपर दी गई है।

३. स्पष्ट है कि यह पत्र बनारसीदासके बोलपुरसे भेजे गये ७ जुलाईका पत्र मिलनेके बाद लिखा गया था और इसमें उन्होने ५०० रुपये माँगे थे। यह रकम गांधीजीको दिसम्बर १९२० में, जब वे कलकत्तासे नागपुर आये थे, एक मारवाड़ी सज्जनने दी थी और उन्होंने इसे अमृतलाल ठक्कर और बनारसीदासको सौंप दिया था। पत्रका मसविदा, जो बनारसीदासके पत्रके पीछे लिखा गया है, सम्भवत: गांधीजीने बोलकर लिखवाया था।

४. जहांगीर बोमनजी पेटिट, प्रसिद्ध पारसी दानवीर।

१६४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

बम्बई
८ जुलाई, १९२१

भाईश्री वल्लभभाई,

मैं सोमवारको सुबह वहाँ जाऊँगा और उसी दिन वापस हो जाऊँगा। राजनीतिक मण्डलको क्या करना चाहिए, इस बारेमें भाई इन्दुलालको[1] पत्र लिखा है। उसे देख ले। मुझे आशा है कि असहयोगका निश्चय किया जायेगा। कौंसिलोंका सर्वथा बहिष्कार ही हमारा आसरा है।

भाई मावलंकर[2] वगैराको खबर दे दे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो : सरदार वल्लभभाईने

१६५. तार : मोतीलाल नेहरूको

बम्बई
[८ जुलाई, १९२१ या उसके पश्चात्][3]

मोतीलाल नेहरू

अध्यक्षका आग्रह है कि बहिष्कारके संगठनका खयाल करते हुए समितिकी तारीख चौबीसके बाद रखी जाये। मेरा सुझाव है कि बैठक अट्ठाईसको बम्बईमें बुलाई जाये। मंजूरी तारसे दें।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५६७) की फोटो-नकलसे।

१. श्री इन्दुलाल याज्ञिक, एक सक्रिय राजनैतिक कार्यकर्त्ता; गुजरात प्रान्तीय समितिकी स्थापनाके समय उसके मन्त्री। बादमें कांग्रेससे अलग हो गये। गांधीजीने इन्हींसे नवजीवन लेकर उसे साप्ताहिकका रूप दिया था।

२. श्री गणेश वासुदेव मावलंकर (१८७७–१९५६); अहमदाबादके सुप्रसिद्ध वकील, संसदीय मामलोंके विशेषज्ञ और कांग्रेसी नेता। १९३७ में बम्बई विधान परिषद्के तथा १९४६ में केन्द्रीय विधान परिषद्के अध्यक्ष निर्वाचित, मृत्युपर्यन्त लोकसभाके अध्यक्ष।

३. गांधीजीने यह तार कोडाइकनालसे ८ जुलाईको सी० विजयराघवाचार्यके नीचे लिखे तारके उत्तरमें भेजा था: "खुशीसे लेकिन तारीख इतवार २४के बाद रखें। स्वराज्य-कोषमें आश्चर्यजनक सफलतापर सधन्यवाद हार्दिक बधाइयाँ। तारीख तार द्वारा सूचित करें।"

१६६. पत्र : कुँवरजी मेहताको

शनिवार [९ जुलाई, १९२१]

भाईश्री कुँवरजी,[१]

आपके पत्रको मैं अभी-अभी पढ पाया हूँ। भाई मकनजी और वराड गाँवके भाइयोको मेरी ओरसे धन्यवाद दीजियेगा। भाई मकनजीने सच्ची बहादुरीका परिचय दिया है। उन्होने घड़ी-भरके लिए चले जानेके लिए कहा सो उसकी फिक्र नही, बादमे क्रोधपर विजय प्राप्त कर क्षमाके गुणको धारण किया और गाँवके लोगोने भी शान्ति रखी, इसे मैं महत्त्वकी बात मानता हूँ।[२]

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २६७१) से।

१६७. शुभ घड़ी

गिरनारकी चोटीपर पहुँचनेकी इच्छा करनेवाला व्यक्ति पगडडीपर पहुँचनेपर जिस तरह वहाँ पहुँचा हुआ नही कहलाता उसी तरह हम स्वराज्यकी नसैनीपर एक सीढी चढ़कर ही रुक जाये तो हम स्वराज्य प्राप्त नही कर सकेंगे। हमे एक साँसमे ही चढना होगा। पैसा इकट्ठा किया यह तो ठीक किया, इससे विश्वास आया। हमारे साथ कौन-कौन है, कितने लोग हैं इसका कुछ अन्दाज हुआ। हमे जो काम करने हैं उन कामोपर खर्च करनेके लिए हमे साधन मिले। लेकिन जिस कामसे हमे स्वराज्यकी झाँकी मिलती है वह तो स्वदेशी ही है। हजारो रुपया देनेसे हम स्वराज्य-मन्दिरमे प्रवेश नही पा सकते। उस मन्दिरमे प्रवेश पानेकी शर्त तो स्वदेशी ही है। इस मन्दिरका दरवान यह नही पूछेगा कि हमारे पास कितने पैसे हैं। बल्कि हमने खादी पहनी है या नही, यह देखेगा, हमारे मुँहसे शराबकी गन्ध आती है या नही, इसकी जाँच करेगा। स्वदेशीका पालन करनेवाला स्वयमेव स्वतन्त्रताका अनुभव करेगा। जिसके मनमे स्वतन्त्रताकी भावनाका प्रादुर्भाव नही हुआ वह दूसरोके कहनेसे स्वतन्त्र हो ही नही सकता। सभीको इस बातका अनुभव हो रहा है। विदेशी कपडेका त्याग न करनेवाले को ऐसा अनुभव कभी हो ही नही सकता।

जापानी साडी, फ्रेंच साटिन, मैनचेस्टरकी मलमल, यह सब एक प्रकारका व्यसन ही है। इस व्यसनकी गुलामीमे पडा हुआ व्यक्ति स्वतन्त्रताका कोई विचार नही करता

१. एक सार्वजनिक कार्यकर्ता, जिनका सम्बन्ध गुजरातके पाटीदार मण्डलसे था।

२. इसमें जिस घटनाका जिक्र किया गया है उसके लिए देखिए "टिप्पणियाँ", १७-७-१९२१।

क्योंकि वह पहरावेसे विदेशी हो जाता है। जिसके मनमे यह भावना है कि विदेशी सब चीजे अच्छी है उसमे स्वदेशकी भावना कहाँसे आ सकती है? उनका अपना तन्त्र कैसे हो सकता है? जिसे हिन्दुस्तानकी हवा माफिक नही आती, उसकी पोशाक नही भाती, उसकी खुराक रुचिकर नही लगती, उसके लिए हिन्दुस्तानको अपना देश माननेका क्या अर्थ हो सकता है? अभी करोड़ो हिन्दुस्तानकी हवासे उकताये नही है, हिन्दुस्तानकी गेहूँ-बाजरेकी रोटीको हाथसे पकाकर सन्तोष मानते हैं, लेकिन हिन्दुस्तान हमें जो कपडा देता है उससे हमारी तृप्ति नही होती। विदेशी कपड़ेसे हमें मोह हो गया है। जबतक यह मोह नही जाता तबतक हिन्दुस्तानको पराधीन रहना पड़ेगा।

कोई अगर हमे विदेशी कपड़ा मुफ्त दे तो भी व्यर्थ है। इतना ही नही बल्कि हानिकारक है क्योकि भेंट लेकर जीनेवाला व्यक्ति तो भिक्षुक बनता है। और भिक्षुक तो हमेशा ही पराधीन रहता है, उसने तो अपनी आत्मा बेच दी है।

हमे स्वराज्य-मन्दिरमे प्रवेश करनेके लिए स्वदेशीकी ही जरूरत है। स्वदेशी अर्थात् विदेशी कपडेका बहिष्कार। चरखेकी शक्तिको हिन्दुस्तानने परख लिया है। हिन्दुस्तानका कोई भी प्रान्त अब चरखेसे अनजान नही है। कम-अधिक प्रमाणमें हर एक प्रान्तमे खादी बुनी जाने लगी है। यह कला हाथमे आ गई है। लेकिन — ?

लेकिन विदेशी कपड़ेका मोह जाना चाहिए। जबतक यह मोह नही जाता तबतक चरखेका निरन्तर चलते रहना सम्भव नही है। हिन्दुस्तान जबतक चरखेके चमत्कारको नही पहचानता तबतक उसमे बाहुबल नही आयेगा, आत्मविश्वास नही आयेगा। विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करनेकी शुभ घड़ी अब आ पहुँची है।

अक्तूबरकी पहली तारीख तक अगर स्वराज्य नही मिला तो मेरी लाज जायेगी, हिन्दुस्तानके प्रति मेरा विश्वास झूठा ठहरेगा। दिसम्बर तक नही मिला तो हिन्दुस्तानकी प्रतिज्ञा टूट जायेगी, हिन्दुस्तानकी नाक कट जायेगी, नागपुर कांग्रेसमे सम्मिलित हुए प्रतिनिधियोकी लाज जायेगी।

विदेशी कपड़ेके बहिष्कारके बिना स्वराज्य नही मिलेगा। विदेशी कपडेका त्याग करना शरीरकी शुद्धि करना है। शरीर-शुद्धिके बिना स्वराज्य-मन्त्र जपनेका हमें अधिकार नही है।

इसलिए यदि हम इस वर्ष स्वराज्य-मन्दिरमे प्रवेश करना चाहते है तो अब हमे बहिष्कारमे ढील नही डालनी चाहिए। क्योकि स्वदेशी धारण करनेका अर्थ अपूर्व शक्ति धारण करना है। लेकिन अगर इस मन्दिरपर जिनका कब्जा है वे हमारी शक्तिको नही पहचानते और हमे कब्जा देनेको तैयार नही होते तो हमे उनके साथ लड़ना होगा। उसमें थोड़ा समय तो अवश्य लगेगा तथापि मेरा यह विश्वास भी है कि यदि हम विदेशी कपडेका सर्वथा बहिष्कार कर दे तो हमे युद्ध नही करना पडेगा और हमे कब्जा मिल जायेगा।

तथापि हमे युद्धकी अवधिका भी ध्यान रखना चाहिए। अतः अगर हम अक्तूबरमे स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हो तो हमे ३१ अगस्त तक बहिष्कार पूरा कर लेना चाहिए। ऐसा कर सकेंगे या नही इसका निश्चय पहली अगस्ततक हो सकता

है। पहली अगस्तको तिलक महाराजकी पुण्यतिथि है। यदि कार्य किया होगा तो वह दिन हम उत्साहसे मनायेंगे, यदि हम कर्त्तव्यका पालन न कर सके होंगे तो लज्जाके मारे घर बैठे रहेंगे। जिस तरह हमने जूनके अन्तिम दिनोमे ही खूब काम किया उसी तरह हम इस मासके बाकी दिनोमे खूब काम करके विदेशी कपडेका बहिष्कार पूरा करे। जो अपने-आपको असहयोगी कहलवाता है उसे सिर्फ खादी ही पहननी चाहिए। उसे कमसे-कम कपड़ोसे काम चलाना चाहिए। यह सन्धिकाल — कठिन काल — है। एकदम बहिष्कार करनेसे हमारे पास कपडे कम हो जायेंगे, देशमे कपडेकी तगी हो जायेंगी, यह जानकर भी हमे कम कपडे प्रयोगमें लाने चाहिए। और फिर हर कोई नये कपडे बनवा भी तो नही सकता, अतएव कमसे-कम कपडे पहननेमे ही हमारी गति है।

हमारे पास जितना विदेशी कपडा हो उसे या तो हम जला दे अथवा विदेश भेज दे अथवा शौचादि क्रियाके समय पहनकर फाड डाले। विदेशी कपडेको हम गुलामीकी निशानी समझकर उसका उपयोग उसी अवस्थामें करे जब अत्यन्त गरीब होनेके कारण गुजारा न हो सके।

गरीबोको सुविधा प्रदान करनेके लिए हम विदेशी कपडेको वापस लेनेके लिए भडार रखे और बदलेमे खादीकी आवश्यकताको पूरा करे। इस तरह अनेक प्रकारकी योजनाएँ बनाकर हमे पहली अगस्त तक अपने पहरावेमे तो विदेशी कपडेका बहिष्कार पूरा करना चाहिए। हम सबको अब अपने-अपने घरोमे विदेशी मालको न लेने और प्रतिदिन अमुक तोले सूत कातनेका निश्चय कर लेना चाहिए।

लेकिन इतना ही पर्याप्त नही है। हमे कपडेकी प्रत्येक दुकानपर घूम आना चाहिए। जो विदेशी माल बेचते हो उनसे विदेशी माल न मँगवानेकी प्रार्थना करनी चाहिए। और अगर उनके पास विदेशी माल पडा हो तो उसे विदेशमे बेचनेके लिए कहें।

खरीददारो तथा व्यापारियोंका जो फर्ज है वही मिल-मालिकोका भी है। उनसे हम प्रार्थना कर रहे हैं कि वे बहिष्कारको लेकर कपड़ेके दाम न बढाये। आज भी वे इतना ज्यादा दाम लेते है कि उसमें कमी की जानी चाहिए। तिसपर भी अगर वे जनताकी तगीका लाभ उठाकर दाम बढाते है तो वे स्वय विदेशी बनते है, देशके दुश्मन बनते है। मेरा खयाल है कि वे सीमाका अतिक्रमण नही करेगे।

स्वराज्य प्राप्त करनेके आन्दोलनको हमने आत्मशुद्धि माना है। हम जैसे-जैसे ऊँचे उठते जाते हैं वैसे-वैसे हमारी कसौटी होती जाती है। अगर प्रत्येक व्यक्तिके दिलमे देशभक्ति होगी, अगर हर व्यक्ति देशको अपना घर समझ उसे शुद्ध रखनेकी इच्छा करेगा तो इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना मै बहुत ही आसान बात समझता हूँ। जूनकी तीस तारीखको देशने एक चमत्कार कर दिखाया, इसलिए बहिष्कारके चमत्कारकी आशा रखनेका हमारे पास कारण है। प्रभु लाज रखना।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०-७-१९२१

१६८. पंच महायज्ञ

यज्ञके अनेक अर्थ हो सकते है। हिन्दुस्तानमे गृहस्थ, ससारीके लिए पाँच यज्ञ आवश्यक हैं. चूल्हा, मूसल, चक्की, घडा और चरखा। इनमे से जिस घरमे जो चीज जितनी कम होगी उतनी ही कम बरकत होगी। लेकिन इन यज्ञोपर दृष्टिपात करनेसे आप देखेंगे कि वस्तुत. दो ही यज्ञ है और बीचके तीन यज्ञ गौण है। चक्की, मूसल और घडा ये चूल्हेके ही अग है। जिसके यहाँ चक्की अथवा मूसल नही चलता उसका चूल्हा मन्द हो जाता है, उसका तेज कम हो जाता है, लेकिन चूल्हा तो जलता ही है। लेकिन जिसके यहाँ चरखा नही चलता उसके यहाँसे तो एक मुख्य अग ही चला गया, उसे तो पक्षाघात हो गया। अन्न अथवा वस्त्रके लिए जो यज्ञ न करे उसे अन्न अथवा वस्त्रका अधिकार ही नही है। ऐसा रिवाज होना चाहिए कि जो चूल्हा न जलाये वह खाना न खाये, जो चरखा न चलाये वह कपडा न पहने। लेकिन हमने तो चरखा छोड़नेपर भी वस्त्र न छोड़े। जो यज्ञ किये बिना खाता है वह चोर कहलाता है। वैसे ही जो यज्ञ किये बिना कपड़े पहनता है वह भी चोर है। यज्ञ अर्थात् कुरबानी, यज्ञ अर्थात् आत्मत्याग अर्थात् शारीरिक परिश्रम। जो चूल्हा और चरखा चलाता है वह बुद्धिपूर्वक यज्ञ करता है। जो व्यक्ति ऐसी पोषक मजूरी नही करता सो अन्तमें थोडी-बहुत कसरत करके अन्नको पचाता है।

अब कदाचित् अधिकाश लोग समझ गये होंगे कि हमने चरखेको छोडकर कितना पाप किया है। किसी समय हिन्दुस्तानकी महिलाएँ जब यह कोमल किन्तु पोषक परिश्रम किया करती थी तब हिन्दुस्तान सुखी था, स्वस्थ था, तेजस्वी था। आज हिन्दुस्तान चरखेको छोडकर दुखी, रोगी और तेजहीन हो गया है।

चूल्हा, चरखा आदि घरके शृगार है। चरखेके जानेके बादसे हिन्दुस्तानमें लाखो घर खडहर हो गये है। इस कथनमे कोई अतिशयोक्ति न माने। पाठकका घर भले ही ऐसा न हो। पानीकी तगीका अर्थ यह नही होता कि किसीको पानी ही न मिले। लेकिन होता यह है कि पानी सबको कम, अनेकको बहुत ही कम और थोडे लोगोको बिलकुल ही नही मिलता। चरखेके अभावमे भी छ. करोड घरोका बहुत अच्छा गुजारा होता है। लेकिन कितने ही घर तो जमीदोज हो गये है। उडीसा और चम्पारनको ही देखिए। उनके बहुतसे गाँव खण्डहर है। डेढ सौ वर्ष पहले जिस देशके लोग बारहो महीने किसी-न-किसी प्रवृतिमे व्यस्त रहते थे उनमें से कुछ वर्षोसे अगर अस्सी प्रतिशत लोग बिना कामके चार महीने बेकार रहते हो तो उस देशका क्या हाल होगा?

धातु तो दौलतकी निशानी मात्र है, खरा पैसा तो मजूरी ही है। अस्सी प्रतिशत लोग चार महीने बेकार रहते है अर्थात् उनकी एक तिहाई शक्ति कम हो गई। वर्षोसे तीन रुपयेका काम करनेकी योग्यता और इच्छा दोनो ही के बावजूद हिन्दुस्तानके लोग दो रुपयेका काम कर रहे है, उनको दो रुपयेका ही काम मिलता है। ऐसा देश

कगाल क्यो न हो? इस स्थितिसे उवरनेका उपाय यही है कि हम हाथसे कते सूतके ही कपड़े पहननेकी प्रतिज्ञा करे। ऐसा करेगे तो हमें अपनी गरजसे चरखा चलाना पडेगा और अन्तमे हमे पता चलेगा कि हमारा उसे छोडना ही भूल थी। लेकिन इस बीच उसे लोकप्रिय बनानेके लिए हमें विशेष प्रयत्न करने होंगे।

जबतक हम विदेशी कपड़ेके लालच और लतसे चिपके रहते है तबतक हम चरखा दाखिल करने और दाखिल करनेके बाद उसे चलानेके लिए अधीर नही होंगे। यदि हम विदेशी कपडा न पहननेकी प्रतिज्ञा करते है तो चरखा चलानेमें ही हमारी मुक्ति है। इस तरह चरखे और बहिष्कारका परस्पर निकट सम्बन्ध है। जिसकी जरूरत नही होती उसकी हमे कम चाह होती है। चरखेकी जरूरतको पैदा करना हमारा धर्म है। उसके बिना हिन्दुस्तानकी कगाली कभी दूर नही होगी। ऐसी अमूल्य वस्तुका त्याग करके हमने जो भूल की है उसका हम जितना प्रायश्चित्त करे उतना कम है। यदि स्वेच्छया प्रायश्चित्त करेगें तो अल्प त्यागसे काम चल जायेगा। बलात् तो क्या-क्या करना पडेगा सो तो दैव ही जाने।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १०–७–१९२१

१६९. टिप्पणियाँ

दक्षिण आफ्रिकासे मदद

तिलक स्वराज्य-कोषके लिए दक्षिण आफ्रिकासे जो रकम प्राप्त हुई है वह निम्नलिखित है.

	[रुपये]
पाटीदार मण्डल, जे० बी०	८,२७५
काठियावाड़ आर्य-मण्डल, नेटाल	२,५००
टोंगाट-वेरुलम	१,०००
दरजी-मण्डल, जेदा	१,४४५
दरजी-मण्डल, डर्बन	५३०
पाटीदार यूनियन, डर्बन	१,००१
मार्फत उमर शेठ	५,४२५
वेरुलम मन्दिर	१,६५८½
दरजी हरसुखराय मण्डल	७७०

दक्षिण आफ्रिकासे इतनी रकम कम नही कही जा सकती। बाहर रहनेवाले भारतीयोको दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोसे सबक लेना चाहिए।

"लोगोंको अपनी ओर करना चाहते हो"

एक सज्जन लिखते है कि वैष्णवोके प्रति अपने पत्रमे मैंने गुस्सा करनेवाले व्यक्तिके गुस्सेको भी प्रेमका गुस्सा माना है सो उसमें भी मेरा स्वार्थ है। वे कहते

है कि "आप चीजोको इतने सुन्दर ढंगसे प्रस्तुत करके अपने विरोधियोको भी अपनी ओर करना चाहते है"।

इस पत्र-लेखककी बातमे अर्धसत्य है। मै विरोधियोको अपनी ओर जरूर करना चाहता हूँ लेकिन जो मै मानता नही, उसे कहकर नही। ये भाई लिखते है कि "यदि गुस्सा भी प्रेमकी निशानी हो तो फिर कहा जायेगा कि जनरल डायरने भी प्रेमके कारण जलियाँवालाका कत्लेआम करवाया था।" मुझे तो लगता है कि इस दलीलमे बहुत अज्ञान भरा हुआ है। अनेक बार बाप बेटेपर क्रोधित होता है, सो प्रेमवश ही होता है; लेकिन जनरल डायरका गुस्सा तो सिर्फ द्वेषके कारण ही था। वैष्णवोके गुस्सेको मै प्रेमकी निशानी समझता हूँ, इसका कारण स्पष्ट है। मेरे साथ उनका कोई निजी वैर नही है। मेरे दूसरे आचरणोको वे पसन्द करते है। लेकिन अस्पृश्यता सम्बन्धी मेरे विचारोको वे भूल मानते है और उसे मेरा दोप मानकर मुझसे नाराज होते है। अन्य अनेक लोग मर्यादाका उल्लघन करते है लेकिन वे उन्हे कोई पत्र नही लिखते और उनपर नाराज भी नही होते। ऐसे अनेक उदाहरण दिये जा सकते है। पत्र-लेखकको मै फिरसे विचार करनेकी सलाह देता हूँ।

आक्षेप

एक भाई माणावदरसे लिखते है

> आप लिखते है कि अगर पंजाब और खिलाफतके मामलेमें न्याय मिल जाये तो आप स्वराज्यकी लड़ाईका शेष कार्य अन्य नेताओंको सौंपकर निवृत्त हो जायेंगे।

उनका कहना है कि मै ऐसा कर ही नही सकता और यह सच भी है। बात सिर्फ इतनी ही है कि वे मेरे कथनको नही समझ सके है। मैने उपर्युक्त बात कहकर यह बताया है कि खिलाफत और पजाबके न्यायमे ही स्वराज्यकी चाबी है। इन दोनोके मिलनेके बाद स्वराज्य प्राप्त करनेमे किसीको विशेष अडचन नही होगी। इन दोनोके मिलनेपर हमे आवश्यक शक्ति प्राप्त हो जायेगी, ऐसी मेरी मान्यता है। बाकी स्वराज्यकी लडाई शुरू हो गई है और उसे मै कभी छोड ही नही सकता।

सुन्दरलालजीका पत्र

सुन्दरलालजी जबलपुरमे पकड़े गये है और उन्हे सपरिश्रम कारावास मिला है, इस बातको सब कोई जानते है। उन्होने जेल जानेसे पूर्व मुझे एक पत्र लिखा है उसमें से जानने योग्य अश मै नीचे उद्धृत कर रहा हूँ।[1]

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०–७–१९२१

१. यहाँ नही दिया गया है। इस पत्रमे पण्डित सुन्दरलालने स्वराज्य प्राप्तिके साधनके रूपमें अहिंसामें अपना विश्वास प्रकट किया था तथा जेलकी सजाका, आत्मशुद्धिका अवसर मिलनेके कारण, स्वागत किया था।

१७०. भाषण: दवा-विक्रेताओंकी सभा, बम्बईमें

१० जुलाई, १९२१

कितने लोग विदेशी कपडेके बहिष्कारकी प्रतिज्ञा लेनेवाले है — इस लोभसे खिचकर मैं यहाँ आया हूँ। विदेशी कपडेके बहिष्कारका कारण मैं दे चुका हूँ। मिल-मालिक अथवा विदेशी कपडेके व्यापारी हमारी मदद करे या न करे लेकिन यदि हिन्दके लोग चाहे तो वे विदेशी कपडेका बहिष्कार कर सकते है। बाहरसे आनेवाले कपडोका हिन्द इस्तेमाल न करे, यह विदेशी कपडेका बहिष्कार हुआ। आप सिर्फ अबसे विदेशी कपड़ेका उपयोग न करनेकी प्रतिज्ञा ले, इससे मुझे सन्तोष नही होगा। आपके पास अगर विदेशी कपडा हो तो आप उसको भी इस्तेमालमे नही ला सकते। इसके लिए मैंने तीन उपाय ढूँढ रखे है। श्रेष्ठ तो यही है कि हमारे पास जितना विदेशी कपड़ा हो उसे हम जला डाले। इस उपायके सम्बन्धमे अनेक लोगोका कहना है कि हमारे देशमें अनेक गरीब लोग भूखे और नग्नावस्थामे घूमते है, क्यो न उन्हे ये कपड़े दे दे? कपडे जलानेमे तो द्वेषभाव दिखाई देगा। उसके जवाबमे मैं कहता हूँ कि यदि मैं द्वेष-बुद्धिसे विदेशी कपडोको जलानेकी बात कहता होऊँ तो लोगोके मनमें द्वेष-भाव बढ सकता है परन्तु अगर हम यह समझते हो कि विदेशी कपड़ेका इस्तेमाल करके हमने भयकर भूल की है तो गुलामीसे छुटकारा पानेका श्रेष्ठ उपाय उसे जलाना ही है।

दूसरा उपाय है ऐसे कपड़ोको हिन्दसे बाहर भेजना। अपने देशमे तो हम गरीबसे-गरीब और कगालसे-कगालको भी विदेशी कपडा नही दे सकते। मद्य और विदेशी कपड़ेको मैं एक ही कोटिमें रखता हूँ। आपसे विदेशी कपडेका तिरस्कार नही हो पाता, सो मैं समझता हूँ। मेरे ये विचार एक बहुत लम्बे अर्सेसे है इसलिए मुझे यह कठिन नही लगता। और आपको थोडे ही समयमे अपने विचारोमे परिवर्तन करना है। यदि आपका भी यही मत है कि विदेशी कपडेका उपयोग विदेश भेजनेमे ही किया जाना चाहिए तो आपके पास जितना भी कपडा है वह सब मेरे पास भेज दे। उसके लिए वैसी व्यवस्था कर दी जायेगी, लेकिन अगर आप यह मानते हो कि विदेशी कपडेके बहिष्कारसे द्वेष नही बल्कि जोश बढेगा, हिन्दका निश्चय और दृढ होगा तो मैं उसे अवश्य आगमे जला डालना चाहूँगा।

जो गरीब है अथवा जिनके पास स्वदेशी खरीदने लायक पैसे भी नही है, उनसे विदेशी कपडे लेकर बदलेमे उन्हे खादी देनेकी व्यवस्था की जा रही है। हमारे पास इस समय स्वदेशी दो तरहकी है, मिलका कपडा और चरखेकी खादी। हमारे लिए तो खादी ही हो सकती है, मिलका कपडा हमें गरीबोके लिए रहने देना चाहिए। भोग-विलासमे पडे हुए अनेक लोग खादी पहनना पसन्द नही करते, उसके प्रति उनमे रुचि नही है। लेकिन आप जबतक इतना त्याग नही कर सकते तबतक गुलामी-का त्याग असम्भव लगता है। यदि आप खादी न पहन सके तो आपको मिलका

कपड़ा पहनना चाहिए। कालबादेवीके स्वदेशी भण्डारमे १०,००० रुपयेकी खादी है और वह बिकाऊ है। मैंने आज भाई नारणदास पुरुषोत्तमदासके साथ विचार-विमर्श किया है और थोड़े ही दिनोमें ५०,००० रुपयेकी खादी आ जायेगी।

खादीका उपयोग आवश्यकतासे अधिक न करे। देश अभी इतना माल तैयार नही कर सकता जो सब तक पहुँच सके। खादीका उपयोग घी और सोनेकी तरह होना चाहिए। जबतक स्वराज्य नही मिल जाता तबतक हमे ठाठ-बाटसे नही रहना चाहिए। पुरुषोके पास दो कुर्ते और धोती होनी चाहिए। स्त्रियोको भी कम कपड़ोमे गुजारा करना चाहिए। एक भाईने सुझाव दिया है कि हमें फाँसीपर भी चढ़नेके लिए तैयार रहना चाहिए लेकिन आपको फाँसीपर नही चढ़ना है। अगर सारा भारत फाँसीपर चढ़नेके लिए तैयार हो जाये तो आज ही स्वराज्य है। लेकिन जब ऐसा समय आयेगा तब मुझे आपको विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करनेके लिए कहनेकी जरूरत ही न रह जायेगी। फिलहाल तो हममे ताकत ही नही रही है। कितनी ही बहने यह कहती है कि जापानकी साडी और फ्रासकी मखमल मुझे सौपकर खादी पहनना मुश्किल लगता है। लेकिन हममें सच्ची सामर्थ्य आई है या नही — इस बातका पता लगानेकी यह कुंजी है। कितने ही लोगोका कहना है कि आपने मेरी खातिर ही पैसा दिया है, लोगोने सच्चा त्याग नही किया है। इसे भी आप विदेशी कपड़ेका त्याग कर झूठा साबित कर सकेंगे।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १७-७-१९२१

१७१. तार: सी० विजयराघवाचार्यको

[१० जुलाई, १९२१ या उसके पश्चात्][1]

बम्बईमे अट्ठाईसको बैठककी सूचना भेजी जा रही है।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५६८) की फोटो-नकलसे।

१. सी० विजयराघवाचार्यने १० जुलाईको कोडाइकनालसे तार दिया था: "धारवाड़ प्रार्थना करता है, केलकर समर्थन करते हैं, तुरन्त तार दें बम्बई या धारवाड़ तारीख आवश्यक।"

१७२. पत्र :- मणिबेन पटेलको

सोमवार, ११ जुलाई, १९२१

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिल गया। कपडे जलानेका हेतु तो यह है कि विदेशी कपडोकी तरफ और वैराग्यवृत्ति पैदा की जाये। ये कपडे गरीबोको दिये जाये, इस विचारमे भी मोह है। लाख दो लाखके कपडे गरीबोको गये तो क्या, न गये तो क्या? इतने दिनतक ये कपडे मँगवाकर हमने हिन्दुस्तानको बडा नुकसान पहुँचाया है। मै मानता हूँ कि अब ये कपडे गरीबोको देनेसे भी लाभ नही होगा। ये कपडे विदेश भेज देनेमे कुछ सार अवश्य है। फिर भी मै सबकी राय लेता रहता हूँ। उसमे से जो सबको ठीक लगेगा वह मान लेगे। अब भी शका हो तो पूछना।

डाह्याभाईकी वानरसेना अच्छा काम कर रही दीखती है। एक बात वे याद रखे। लोगोसे विनयपूर्वक अपनी बात कहे। घृणा या खिल्ली उडाने, मजाकका भाव तनिक भी न रखे। शराब पीनेवाले पर दया रखी जाये।

काकासाहब[1] बढ़िया शिक्षक है, इसमे तो शक ही नही। तुम सबको वे पसन्द आये, इससे मै खुश हुआ हूँ।

काका विट्ठलभाईसे मुलाकात हुई है, काफी बातचीत हुई। उन्होने अपने जिला बोर्डमे ठीक प्रस्ताव पास करवाया है। मेरे पास आने-जानेवाले लोग कहते है कि काकाकी अभी चरखेपर श्रद्धा नही है। इतना ही नही, मण्डलियोमे चरखेके प्रति अरुचि प्रकट करते रहते है। फिर भी जब उनसे मिलूँगा तब फिर बात करूँगा। मुझ-पर पिछली मुलाकातका यह असर पड़ा था कि उनके मनका बहुत-कुछ समाधान हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

मणिबेन
द्वारा/श्री वल्लभभाई झवेरभाई पटेल
भद्र, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो: मणिबहेन पटेलने

१ दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर (जन्म १८८५); १९१५ से गांधीजीके साथ हुए।

१७३. पत्र : देवचन्द पारेखको

गामदेवी, बम्बई
११ जुलाई, १९२१

भाईश्री देवचन्दभाई,

आपके पत्र मिले। काठियावाडने तो आशासे अधिक किया है। मैं चाहता हूँ कि अब आप खादी तैयार करनेमे लग जाये।

कानूनकी सविनय अवज्ञा एकाएक नही करनी है। आपका हिसाब ठीक नही है। छ करोड चरखे अपने-आप शुरू हो जायेंगे। बीस लाख चरखे शुरू करनेमे हमे बहुत ज्यादा खर्च नही करना पडा है। हो भी नही सकता, क्योकि थोडा-सा खर्च करनेके बाद लोकोपयोगी वस्तुको लोग स्वयमेव उठा लेते है। सदस्य बढानेका काम भी चलता रहता है।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (जी० एन० ५७१७) से ।

१७४. भाषण : बम्बईमें शराब-बन्दीपर[1]

१२ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने कहा : बम्बई लौटनेके बाद मैंने शराबके ठेकेदारोंकी स्थिति समझ ली है और मैं सोचता रहा हूँ कि मैं प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको, और शराबके व्यापारियोंको भी, क्या सलाह दूँ। मैं इन बातोंके बारेमें गहराईसे सोचता रहा हूँ। शराबके व्यापारियोंका, जो अपनी आजीविका लोगोंको शराब बेचकर कमा रहे हैं, मुझे बहुत खयाल रहता है। श्री बी० एफ० भरूचाने मुझे इस सम्बन्धमें तथ्य और आँकड़े दिये है तथा कई पारसी भाइयोंने गुमनाम और अपना नाम देते हुए पत्र भी लिखे हैं। मुझे इन सब पत्रोंसे यह मालूम हो गया है कि इस व्यापारके सम्बन्धमें शहरकी वास्तविक स्थिति क्या है। मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि पारसियोंकी ८०,००० की छोटी-सी बिरादरीमें यदि एक दर्जन या ऐसे ही कुछ बुरे लोग हों तो भी उनसे उसे नुकसान पहुँचेगा, जब कि हिन्दुओ या मुसलमानोमें इन बुरे आदमियोंकी संख्या ५ या ७ लाख होनेपर भी उनका इतना साफ परिणाम नहीं दिखेगा। संसारमें सदा ऐसा

१. महात्मा गाधीने मगलवारको प्रातः बम्बईमें मारवाडी विद्यालयके भवनमें शराबके व्यापारियोंकी सभामे भाषण दिया था। यह सभा पारसी राजकीय सभाके तत्त्वावधानमें बुलाई गई थी।

ही होता आया है। इसलिए थोड़े-से पारसी शराब-विक्रेता बदनाम हो गये हैं और दूसरे नजरोंके सामने भी नहीं आये हैं। शराबके पारसी व्यापारियोंका उदाहरण बहुत स्पष्ट होकर देशके सामने आ गया है। मैंने एक्सलसियर थियेटर [वाली सभा]में अपने पारसी मित्रोंसे कहा था कि वे अपने शिष्टतम आचरणसे समस्त देशके सामने एक आदर्श उपस्थित कर सकेंगे। किन्तु मुझे गहरा दुःख है कि पारसियोंमें से इतने लोग जनताको शराब बेचकर अपनी आजीविका कमा रहे हैं और मेरा खयाल है कि यह उनके लिए बहुत बदनामीकी बात है। मुझे इस बातका भी खेद है कि इतनी सारी विधवाओंको अपना गुजारा शराब बेचकर करना पड़ता है। मेरी रायमें शराब बेचनेकी अपेक्षा इन बहनोंके लिए पत्थर तोड़कर या भीख माँगकर भी अपना पेट भरना ज्यादा अच्छा है।

अगर मेरे पास पेटिट या टाटाके[1] जैसे साधन होते तो मैं इन पारसी विधवाओंके पैरोंपर जा गिरता और उनसे प्रार्थना करता कि वे जितना रुपया चाहे ले ले, परन्तु उस व्यापारको छोड़ दें। मैं बहुत ही खुशीसे इन बहनोंकी सार-सँभाल करता। यदि मेरे पास रुपया होता तो मैं उसका सबसे पहला उपयोग यही करता कि उसे अपने पारसी भाई-बहनोंको देता और उनसे शराबका व्यापार बन्द कर देनेकी प्रार्थना करता। मेरे कुछ पारसी मित्रोंने मुझसे कहा है कि हम तो केवल एक गिलास शराब पीते हैं और उसे छोड़ नहीं सकते; हमारे धर्ममें मद्यपानका निषेध नहीं है। इसके विपरीत दूसरे कुछ लोगोंने बताया है कि पारसी धर्ममें मद्यपान निषिद्ध है। लेकिन आपके धर्ममें मद्यपानकी अनुमति हो या न हो, मेरा हृदय अपनी इन पारसी बहनोंके प्रति क्षोभसे भरा हुआ है। यदि शराब रूपी जहरका बेचना ज्यादा दिनतक जारी रहा तो वह आपके जैसी छोटी बिरादरीको बरबाद करनेके लिए बहुत काफी है।

आप पारसी मित्रोंने श्रीकृष्णका नाम सुना होगा और यादवोंके सम्बन्धमें, जिनकी संख्या लाखों या उससे भी ज्यादा थी, उनकी भविष्यवाणी भी सुनी होगी। श्रीकृष्णने उनसे कहा था कि यदि वे मद्यपान करेंगे और व्यभिचार करेंगे तो उनका समस्त वंश इस पृथ्वीतलसे सदाके लिए मिट जायेगा। और उन शक्तिशाली यादवोंका अब क्या चिह्न बचा है? क्या व्यभिचार मद्यपानका निकटतम साथी नहीं है? मुझे अपने दक्षिण आफ्रिकाके अनुभवसे मालूम है कि ये शराबके विक्रेता और खरीददार कैसे लोग होते हैं। जो लोग शराब बेचते हैं उनको शराबखोरोंके स्तरपर उतर आना पड़ता है और अपनी मनोवृत्ति भी उसी स्तरकी बना लेनी पड़ती है। मुझे इन बातोंका बहुत अनुभव है और मैंने वस्तुतः समस्त देशमें जो-कुछ देखा है वही मैं आपको बता रहा हूँ। मेरी यह भी राय है कि जो लोग शराब बेचते हैं वे ईमानदार नहीं हो सकते। मैं यह बात अपने पारसी भाइयोंसे ही नहीं कह रहा हूँ, बल्कि भण्डारियोंसे भी कह रहा हूँ जिन्होंने मुझे लिखा है कि वे बरबाद हो गये हैं और वे धीरे-धीरे २० या २५ सालमें

१. उद्योगपति व दानी।

अपना यह व्यापार बन्द कर देंगे। क्या इस देशके लिए तबतक रुकना सम्भव है? यदि एक चोर या व्यभिचारी यह कहे कि वह अपने व्यसनको कुछ दिनमें छोड़ देगा तो इससे देशका क्या लाभ? यदि पारसी लोग इस व्यापारको तुरन्त नहीं छोड़ देते तो इससे उनकी बिरादरी और उनके देशको नुकसान पहुँचेगा। आपने शराबका व्यापार करके ऊपरसे दीख पड़नेवाली जो समृद्धि प्राप्त की है उसकी बात आपको नहीं सोचनी चाहिए। मैं पारसी मित्रोंसे अनुरोध करता हूँ कि उन्हें चाहे कितना ही खर्च क्यों न उठाना पड़े या कितना ही बड़ा त्याग क्यों न करना पड़े, फिर भी वे पारसी विधवाओंकी देखभाल करें। लोगोंके बहुत बड़े फिरकेको नुकसान पहुँचाकर धनी बननेकी अपेक्षा कोई दूसरा निष्कलंक धन्धा करना ज्यादा अच्छा है।

रही धरनेकी बात। मैंने यह कभी नहीं सोचा कि वह स्थायी रूपसे बन्द किया जा सकता है। मुझे रक्तपातसे बड़ी चिढ़ है, किन्तु मैं शराबखोरीकी बुराई रोकनेकी खातिर हर तरहका खतरा मोल लेनेके लिए तैयार हूँ। जबतक धरना देनेवाले हिंसापर नहीं उतर आते तबतक सरकार क्या करती है, उसके प्रति मैं उदासीन हूँ। धारवाड़में क्या हुआ है वह मैं जानता हूँ। मुझे यकीन है कि धारवाड़के लोगोंने वह भूल नहीं की थी जो मालेगाँवके निवासियोंने की थी। धारवाड़के कलेक्टर श्री पेंटर अहमदाबाद भेजे जानेवाले हैं; इस खबरको सुनकर मुझे भारी धक्का लगा है। उनपर ठीक ही यह आरोप लगाया जा रहा है कि निर्दोष लोगोंकी हत्या उनकी मौन सम्मतिसे की गई। यदि श्री पेंटर अहमदाबाद जायेंगे तो वहाँ भी वे चैनसे न बैठ पायेंगे। अहमदाबादमें उनको धरना बन्द करवाने के लिए निर्दोष लड़कों और लड़कियोंकी हत्या करवानी पड़ेगी। श्री पेंटर-जैसे अधिकारीको गुजरातमें भेजना गुजरातके लोगोंका अपमान करना है।

इसके बाद श्री गांधीने धरनेके सम्बन्धमें अपने डर्बनके अनुभव सुनाये। उन्होंने कहा कि भारी कठिनाइयोंका सामना करने पर भी १४ या १५ सालके लड़कोंने बिना किसी भय या अनुग्रहकी आकांक्षाके अपने कर्त्तव्यका पालन किया। फलतः एक भी आदमीने अपना पंजीयन नहीं कराया। इन युवकोंने किसी तरहकी हिंसाका प्रयोग कभी नहीं किया था।

मैं समस्त देशमें पूरे धरनेके पक्षमें हूँ; लेकिन इस प्रणालीमें इस समय जो दोष विद्यमान हैं मैं उनको जानता हूँ। मुझे मालूम है कि गलत किस्मके लोग धरना-देनेवालों में घुस गये हैं। इसलिए मैंने यह सुझाव दिया है कि केवल बम्बईमें धरना इस महीनेके अन्ततक के लिए स्थगित किया जा सकता है ताकि उसका ज्यादा अच्छा संगठन किया जा सके और वह पूरी बम्बईमें लागू किया जा सके। इसके अलावा पहली अगस्ततक विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करवानेकी व्यवस्थाके लिए सब कार्यकर्त्ताओं-की आवश्यकता है। लेकिन इस सम्बन्धमें अन्तिम निर्णय करना कांग्रेस कमेटीका काम है। मैं कोई निरंकुश व्यक्ति नहीं हूँ जैसा कि 'प्रजामित्र' कहता है। मेरे लिए

३२ करोड़ लोगोंको उनके कर्त्तव्यका आदेश देना सम्भव नहीं है। मैं तो केवल सलाह दे सकता हूँ और रास्ता दिखा सकता हूँ। इस बीच शराबके व्यापारियोंका यह कर्त्तव्य है कि उनको जो-कुछ सोचना-विचारना हो वे सोच-विचार ले और यह देखें कि क्या वे कोई दूसरा धन्धा हाथमें ले सकते हैं और शराबका विक्रय बन्द कर सकते हैं। धारवाड़की घटनासे उनके द्वारा बेची जानेवाली शराबमें निर्दोष लोगोंका खून मिल गया है। मेरा यह पक्का विश्वास है कि धारवाड़के धरना देनेवालोंने कुछ नहीं किया था; उन्होंने मारपीट नहीं की थी; उनपर जो आरोप लगाये गये हैं वे निराधार हैं और मुझे बखूबी मालूम है कि पुलिसने शराबके ठेकेदारोंको तरह दी थी, इसलिए मैं शराबके व्यापारियोंकी भी इतनी ही जिम्मेदारी समझता हूँ जितनी इन अधिकारियोंकी।

पारसी समाजमें सज्जनता है, ज्ञान और साहस है, इस कारण मैं उससे बड़े-बड़े कामोंकी अपेक्षा रखता हूँ। धारवाड़में एक उद्धत कलेक्टरने क्या-क्या किया है, सो हम जानते हैं। मुझे विश्वास है कि मेरे सामने जो उद्देश्य है वह धरनेसे अवश्य पूरा होगा; किन्तु यदि सम्भव हो तो मैं यह चाहता हूँ कि वह उसके बिना ही प्राप्त किया जा सके। मुझसे ठेकेदार लोग कहेंगे कि वे अपने लाइसेंसोंका रुपया सरकारको दे चुके हैं। आपने सरकारको जो-कुछ दिया है वह आप उससे आसानीके साथ वापस ले सकते हैं। आपने जो रुपया दिया है यदि उसे आप सब वापस लेनेका इरादा कर ले तो मुझे निश्चय है कि आप उसे वापस ले सकते हैं। आप सरकारको दर्ख्वास्त दे सकते हैं कि आपका रुपया आपको लौटा दिया जाये, क्योंकि आप असहयोगी नहीं हैं; और यदि आपको इसमें सफलता न मिले तो आप अन्य उपायोंका आश्रय ले सकते हैं। यदि भारतको सितम्बर या दिसम्बरतक भी स्वराज्य न मिले तो आप यह समझ ले कि आपने सरकारको जो रुपया दिया है वह भावी सरकारके पास आपके नाम जमा रहेगा। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आपका रुपया कदापि नहीं मारा जायेगा।

लेकिन आखिर क्या आप लोग इतने गरीब हैं कि आप इस रुपयेका मारा जाना बरदाश्त नहीं कर सकते? मुझे अभी पिछले दिनों एक पारसी शराब-विक्रेताका पत्र मिला है उसमें कहा गया है कि आप लोगोंको जितना गरीब बतानेका प्रयत्न किया जाता है आप उतने गरीब नहीं हैं। पारसी विधवाएँ भी गरीब नहीं हैं; उनके पास बहुत रुपया है और मेरा भी यही विश्वास है। मैं अपनी निजी जानकारीके बलपर कहता हूँ कि आप गरीब नहीं है और यदि आप शराब बेचना बन्द कर देते हैं तो आप असहाय नहीं हो जायेंगे। मैं आपसे कहता हूँ कि आप डरपोक न बनें और परिणामोंसे भयभीत न हों; बल्कि साहसी स्त्री-पुरुषोंकी तरह तनकर खड़े हों। मैं चाहता हूँ कि पारसी लोग समानताके दर्जेकी माँग करनेमें राष्ट्रके साथ रहें। किसी तरहकी हीनताका दर्जा अब उन्हें बरदाश्त नहीं करना चाहिए। मुझसे कुछ लोगोंने

कहा कि जो लोग २० सालसे ज्यादा अरसेसे इस व्यापारमें लगे हुए हैं अब उनके लिए इस व्यवसायको छोड़ना कैसे सम्भव होगा? मेरी समझमें शान्त चित्तसे उन्हे परिस्थिति-पर विचार करना चाहिए और इसके बारेमें कोई निश्चित निर्णय कर लेना चाहिए। मैंने इस समस्यापर विचार किया है और मैं यह अनुभव करता हूँ कि चूंकि आप लोग गरीब नहीं हैं, इसलिए आप कोई दूसरा धन्धा, जिसे आप पसन्द करें, आसानीसे आरम्भ कर सकते हैं। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप अपनी एक समिति बना लें और तब यह विचार करें कि आपको इस मामलेमें क्या करना चाहिए। किन्तु आपको आशा तो कदापि नहीं छोड़नी चाहिए। आप दूसरे धन्धे और दूसरे काम कर सकते हैं और यह प्रयत्न करके देख सकते हैं कि क्या आप उनके द्वारा भी शराबके व्यापारकी तरह आसानीसे धनवान नहीं हो सकते। लेकिन सबसे पहले तो आपका कर्त्तव्य यही है कि आप शराबका व्यापार इसी दम छोड़ दें। जबतक आप अपने देशके निमित्त कुछ त्याग करनेके लिए तैयार नहीं होंगे तबतक आप स्वतन्त्रताकी रक्षा नहीं कर सकेंगे और न स्वराज्य ही ले सकेंगे। केवल त्यागके द्वारा ही हम स्वराज्य और पूर्ण स्वतन्त्रताके योग्य हो सकते हैं। आपको अपनी ही योग्यतापर निर्भर रहना चाहिए और अपने ऊपर भरोसा रखना चाहिए। अंग्रेज जातिने भी आत्मविश्वासके कारण ही सबसे अधिक उन्नति की है। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप आशा न छोड़ें और अपने ऊपर भरोसा रखें, आपसे जितने त्यागकी अपेक्षा की जाती है उसके लिए परमात्मा आपको बुद्धि देगा।

श्री गांधीने इसके बाद कहा कि यदि व्यापारी मुझसे कोई प्रश्न पूछेंगे तो मैं उनका उत्तर देनेको तैयार हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-७-१९२१

१७५. टिप्पणियाँ

सीमा-प्रान्तके मित्र

मैंने सीमा-प्रान्तके मित्रोंसे जो अपील की है उसके बारेमें बन्नूके मुहम्मद नवाजखाँ साहब, बी० ए०, एलएल० बी० ने मुझे एक लम्बा पत्र भेजा है। 'यंग इंडिया' में उसे उद्धृत करना सम्भव नहीं है, इसलिए मैं उसका सारांश यहाँ दे रहा हूँ। उनका विचार है कि जो कबायली सन्देशको समझ जायेंगे वे प्रसन्नतापूर्वक इसे स्वीकार करेंगे। उन्होंने कबायलियोंकी भूमि हथियाये जानेका इतिहास बतलाते हुए यह सिद्ध किया है कि इस भूमिके हथियाये जानेसे पहले हमले बिलकुल नहीं होते थे। और चूंकि सभीके पास हथियार होते थे, इसलिए जिनपर हमला होता था वे अपनी रक्षा कर सकते थे। किन्तु इस इलाकेके हड़प कर लिये जानेके बाद जिन कबायलियोंकी भूमि उनसे जबरदस्ती छीन ली गई थी वे हथियाये गये इलाकेके हिन्दू और मुसलमान

दोनोको अपना दुश्मन समझने लगे। खासकर इसलिए कि इन लोगोने कवायलियोको दवानेमे अग्रेजोकी मदद की थी। पत्र-लेखकका, जो स्थितिको बहुत नजदीकसे जानने-का दावा करते है, विचार है कि कबायली लोग धर्मोकी परवाह नही करते और वे हिन्दुओ और मुसलमानो दोनोको विना कोई फर्क किये लूटते रहे है। वे यह भी कहते है कि मुसलमानोने कवायली हमलोके खिलाफ हिन्दुओकी कभी सहायता नही की। कबायलियोकी तटस्थताके सबूतमें पत्र-लेखकने उस सौहार्दपूर्ण व्यवहारका हवाला दिया है जो कवायली सीमा-प्रान्तके स्वतन्त्र इलाकेमे रहनेवाले अपने साथी हिन्दुओके साथ करते है। उनका कहना है कि वहाँ हिन्दुओको ब्रिटिश राज्यसे अधिक धार्मिक स्वतन्त्रता है। ब्रिटिश राज्यकी तुलनामें वहाँ हिन्दुओकी सामाजिक प्रतिष्ठा कही अच्छी है। वहाँके मलिक[1] अपनी समस्त शक्तिके साथ अपनी छत्रछायामे रहनेवाले हिन्दू भाइयोकी रक्षा-के लिए तैयार रहते है। पत्र-लेखकके मतमे ब्रिटिश सरकारने लज्जाजनक रूपसे वहाँ-के उन निवासियोकी सुरक्षाके अपने कर्त्तव्यको तिलाजलि दे दी है, जो दुर्भाग्यवश ब्रिटिश साम्राज्यके सरक्षणमे आ गये है। अपने पत्रको समाप्त करते हुए वे कहते है कि सीमान्तमे लागू विधियाँ पढने लायक है। वहाँ न्याय-प्रक्रियामे मनमानी चलती है और जनताका जीवन और धन उन सैनिक अफसरोकी दयापर निर्भर है जिनमे कानूनी फैसले देनेकी योग्यता नही है। उनका कहना है कि एक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर अपन पदका दुरुपयोग करते है एव अन्याय और दमनके साधन वन जाते है। उन्हे किसी भी भले आदमीको जरा-से भी शकपर हवालातमे वन्द कर देनेका अधिकार है।

भारतीय लोकतन्त्र

एक आदरणीय महानुभाव लिखते है

> मौलाना मुहम्मद अली और शौकत अलीने जो वक्तव्य दिये हैं उनकी ओर आपका ध्यान गया होगा। उन्होंने कहा है कि हमारे आन्दोलनके सम्बन्धमें बड़े दिनसे पहले कोई समझौता नहीं हो जाता तो कांग्रेसके अहमदाबाद अधि-वेशनमें एक भारतीय लोकतन्त्रकी घोषणा कर दी जायेगी। इस वक्तव्यका विशेष महत्व है, क्योंकि यह किसी गैर जिम्मेदार व्यक्तिने नहीं वल्कि मौलाना बन्धुओं-जैसे जिम्मेदार लोगोंने दिया है। किन्तु लगता है कि यह वक्तव्य अनुचित और असामयिक भी है; कांग्रेसने देशके सामने जो कार्यक्रम रखा है यह उसकी पूर्तिमें बाधक होगा। समूचे देशने कांग्रेसकी अपीलका शानदार समर्थन किया है और कुछ हिस्सोंको छोड़कर सारा देश स्वराज्य-प्राप्तिके लिए काम करनेको तैयार है। मेरा निवेदन है कि आप मौलाना बन्धुओके वक्तव्यपर अपनी सम्मति दें और जनताको आश्वासन दें कि कांग्रेसने जो अहिंसात्मक असहयोगका सिद्धान्त स्वीकार किया है उससे वह नहीं भटकेगी।

मुझे दु खके साथ स्वीकार करना पडता है कि मैंने मौलाना वन्धुओका उक्त वक्तव्य नही देखा। किन्तु यह आश्वासन देनेमे मुझे कोई हिचक नही है कि देशने

१ कबीलेके मुखिया।

बहुत सोच-समझकर अहिंसात्मक असहयोगका मार्ग चुना है, मैं उससे उसे तनिक भी न हटने देनेमें कोई प्रयत्न उठा नहीं रखूंगा। अली बन्धुओंके भी इस मार्गसे हटनेकी मुझे कोई आशंका नहीं है। किन्तु मुझे उनके मनको समझनेमें कठिनाई नहीं है। वे यह जरूर कह सकते हैं कि यदि भारतको पंजाब और खिलाफतके मामलोंमें वह राहत नहीं मिलती जिसकी माँग की गई है, तो कांग्रेस अपने अगले अधिवेशनमें स्वतन्त्रताकी घोषणा कर देगी। साम्राज्यके अन्दर स्वराज्य तभी सम्भव है जब इंग्लैंड खिलाफत सम्बन्धी विश्वासघात और जलियाँवाला बागके हत्याकाण्डसे उसपर जो धब्बा लगा है उसे धो दे। कांग्रेसका सिद्धान्त जान-बूझकर ऐसा लचीला बनाया गया है कि स्वराज्यकी माँगके लिए उसमें जगह रहे। बहुत न कहकर इतना तो कह ही सकते हैं कि मौलानाओंने अधिकसे-अधिक वही मत दुहरा दिया है जो श्री एन्ड्रयूज द्वारा प्रकट किया गया था। मेरी रायसे भिन्न, श्री एन्ड्रयूजकी यह धारणा है कि स्वशासित और आत्मसम्मानी भारतके लिए ब्रिटिश साम्राज्यमें बने रहनेकी गुंजाइश नहीं। वे यह आशा भी करते हैं कि एक-न-एक दिन मैं भी इसी नतीजेपर पहुँचूंगा। किन्तु मेरा मानसिक गठन दूसरी तरहका है। जबतक थोड़ी भी गुंजाइश हो, मैं आशा नहीं छोड़ता। ब्रिटिश जनतापर मेरा इतना विश्वास अवश्य है कि वे भले ही अन्ततक हमारे निश्चय और शक्तिकी परीक्षा ले लें किन्तु ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं होने देंगे कि बात इतनी बिगड़ जाये कि फिर सुधर न सके। उनमें इतना विवेक तो है ही कि वे डायरशाही और ओ'डायरशाहीके लिए और यूनानसे मैत्रीके अस्पष्ट लाभके लिए जाग्रत और सशक्त भारतको हाथसे नहीं जाने देंगे। हम देखेंगे कि लीक-लीक न चलनेवाली उनकी आत्मामें बहादुर तुर्कोंकी न्यायसंगत आकांक्षाओंके प्रति अज्ञानवश द्वेषभाव है। भारतके दिनों-दिन बढ़ते दबावके आगे वह अवश्य झुकेगी। कांग्रेस अधिवेशनसे बहुत पहले ही, यदि भारत अपनी सच्चाईपर टिका रहता है, तो मैं स्वतन्त्रताकी घोषणाकी नहीं बल्कि एक सम्मानपूर्ण समझौतेकी आशा रखता हूँ — ऐसे समझौतेकी जो पंजाब और खिलाफत सम्बन्धी भारतकी माँगोंको पूरा करेगा और जो तुरन्त भारतको उसके चुने हुए प्रतिनिधियोंकी इच्छाके अनुरूप स्वराज्य देनेके लिए आश्वासन देगा। किन्तु पाठक इससे यह न समझ बैठें कि मेरी यह भविष्यवाणी उस कार्रवाईकी जानकारीपर आधारित है, जो शिमलामें वाइसरायकी कोठी या इंग्लैंडके सरकारी हल्कोंमें हो रही है। इस भविष्यवाणीका आधार मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि भारतमें अगले तीन महीनोंमें अपनी शक्ति दिखानेकी योग्यता है, यानी यह योग्यता है कि वह विदेशी कपड़ेका पूर्ण बहिष्कार कर दे और दिखा दे कि इससे भी बड़े आत्मसंयमके साथ वह एक कठोर प्रकारकी सविनय अवज्ञाका कार्यक्रम अपना सकता है।

मार्गकी कठिनाइयाँ

किन्तु हमारे मार्गमें जो कठिनाइयाँ हैं उनके प्रति मैं आँखें नहीं मूँदे हूँ। अलीगढ़से प्राप्त समाचार चिन्ताजनक[1] है, घटनाका सरकारी विवरण और दूसरा विवरण मैंने 'इंडिपेन्डेन्ट' में देखा है। यदि मैं गलतीपर हुआ तो मैं अलीगढ़की जनतासे क्षमा-

१. देखिए "सन्देश : अलीगढ़की जनताको", १६-७-१९२१।

याचना कर लूंगा; किन्तु 'इंडिपेन्डेन्ट' के संवाददाताका विवरण तथ्योंसे मेल नहीं खाता और तथ्योंसे जितना निष्कर्ष निकल सकता है उससे कहीं अधिक निष्कर्ष निकालनेकी कोशिश करता है। वह इस बातसे इनकार नहीं करता कि भीड़ने आगजनी की, और फिर भी भीड़को दोषी न माननेका प्रयत्न करता है। यह विश्वास करनेके लिए कि अलीगढ़में अधिकारियोंने क्षोभका कोई कारण उत्पन्न हुए बिना ही द्वेषपूर्ण ढंगसे ज्यादती की है, मुझे बहुत स्पष्ट प्रमाणकी जरूरत होगी। मुझे यह सम्भव लगता है कि पुलिस भीड़ द्वारा एक आक्रामक प्रदर्शनको रोकना चाहती थी और ऐसा करते हुए वह आत्म-संयम खो बैठी और उसने गोली चला दी। मेरा कहना यह है कि हमारी ओरसे कोई आक्रामक कार्रवाई होनी ही नहीं चाहिए। असहयोगियोंको किसीको सताना या धमकाना नहीं चाहिए। हमारे अन्दर एक अदम्य उत्साह बढ़ रहा है जो केवल भगवान्पर भरोसा रखने — यानी अपने लक्ष्यकी न्यायपूर्णतापर विश्वास — का परिणाम है। यदि हम चाहते हैं कि अपने कार्यक्रमको सफल बनायें — और वह भी इसी सालके अन्दर — तो हमारे लिए धमकी देने या शक्तिप्रदर्शन करनेका अवसर ही नहीं है। हमें अपने संकल्पके प्रति पूरी दृढ़ताके साथ सच्चे रहना चाहिए। हम आशातीत रूपसे तभी सफल हो सकते हैं जब हम विचार, वाणी और कर्ममें अहिंसा बरतें। अहिंसा चाहे हमारा सर्वोपरि जीवन-सिद्धान्त न हो, किन्तु अपने लक्ष्यतक पहुँचनेके लिए हमारा मौजूदा सिद्धान्त तो होना ही चाहिए। इसमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि हमने जिस तरह अपने प्रतिद्वन्द्वियोंके प्रति बुरा बरताव न करना तय किया है उसी प्रकार हम उनके प्रति बुरा न सोचें, बुरा न कहें। अहिंसा और सत्यकी प्रतिज्ञाका उपयोग हमें हिंसा और असत्य — अतिशयोक्तिको छिपानेके लिए भी नहीं करना चाहिए, न हमें अपने अच्छेसे-अच्छे साथियोंके जेल चले जानेसे डरना चाहिए। मैं इस विश्वासपर कायम हूँ — जो मैंने अक्सर प्रकट किया है — कि पण्डित सुन्दरलाल और पण्डित माखनलाल[1] अपनी आत्माकी शान्तिके लिए जेल जाकर वहाँ राष्ट्रकी उससे अच्छी सेवा कर रहे हैं जितनी वे स्वतन्त्र रहनेपर करते। जो ऐसा नहीं सोचते वे असहयोगकी गतिशीलताको नहीं समझते। इस महान् आन्दोलनकी प्रेरक शक्ति मौखिक प्रचार नहीं, बल्कि वह मौन प्रचार है जो इस पागल सरकारके शिकार बननेवाले निर्दोष लोगोंको यातना देता है।

एक पीड़ितका पत्र

अपनी गिरफ्तारीसे कुछ ही दिन पूर्व पण्डित सुन्दरलालने मुझे एक लम्बा पत्र लिखा था। मैं उसके सम्बन्धित भागका भावानुवाद दे रहा हूँ। पूरा पत्र मुझे स्वाभाविक और साफ लगा। यह कहना आवश्यक नहीं कि वह केवल मेरी सूचनाके लिए लिखा गया था।

> स्वराज्य-प्राप्तिके लिए अहिंसापर मेरा विश्वास दृढ़ हो गया है, मेरी बुद्धिने यह सिद्धान्त पक्की तरहसे ग्रहण कर लिया है। मैं अब उसे केवल

१. माखनलाल चतुर्वेदी, हिन्दीके जाने-माने कवि और देशभक्त; कर्मवीरके सम्पादक।

> निर्बलका अस्त्र ही नहीं, अपितु बलवानका अस्त्र भी मानने लगा हूँ। किन्तु मै यह स्वीकार करना चाहता हूँ कि कई वर्षोतक मेरा विश्वास इसके विरोधी और गलत सिद्धान्त, हिंसापर रहा है, इसलिए मै बड़ी लगनके साथ इस नये सिद्धान्तके अनुसार अपने जीवनको ढाल रहा हूँ। यदि मै अपने जेल भेजे जानेके बारेमें, जो सम्भावित लगता है, चिन्तित हूँ तो यह चिन्ता उस कामको लेकर ही है जो मैंने मध्य-भारतमें शुरू किया है। यदि लापरवाहीसे मेरे मुँहसे निकली किसी बातसे इस काममें बाधा पड़ेगी, तो मुझे दुःख होगा। किन्तु जो प्रसन्नता और सन्तोष मुझे इस समय है वह इस विचारसे है कि शायद ब्रिटिश जेलके कठोर अनुशासनसे मेरा जीवन अधिक अच्छी तरह गठित हो सकेगा। जेलमें प्राण दे देना मुझे उतना ही प्रिय है जितना (नये ढंगसे) ठोक-पीटकर मानवताकी सेवाके लिए ठीक तरह गढ़ा जाना। इसलिए मै आगामी गिरफ्तारीके लिए पूरी तरह तैयार हूँ।

मुझे विश्वास है कि सैकडो असहयोगी जो जेलकी सजा भोग रहे है इसी भावनासे प्रेरित है जो पण्डित सुन्दरलालने दिखाई है। अलीगढके लोगोको प्रसन्नतासे अपने साथीको पकड़े जाने देना चाहिए था और उसका स्थान लेकर उसका काम करना चाहिए था। हमे सिर्फ इतना ही करना है कि हम अपने साथियोके जेल जानेसे खाली होनेवाली जगहोको भरते चले जायें। हमारा कार्यक्रम बिलकुल स्पष्ट है। उसे पूरा करनेका अर्थ वह-सब प्राप्त कर लेना है जिसकी हमे कामना है।

'जमींदार' के विरुद्ध धमकी

मुझे मालूम हुआ है कि लाहौरसे निकलनेवाली पत्रिका 'जमीदार' पर, जिसका सम्पादन अपनी गिरफ्तारीतक श्री जफर अली खाँ करते थे और अब उनके सुपुत्र कर रहे है, मुकदमा चलाये जानेकी धमकी दी गई है। सम्पादकसे कहा गया है कि यदि वे इस मुकदमेसे बचना चाहते है तो, अपने मनके खिलाफ, क्षमा-याचना करे। उनसे कहा गया है कि दिये गये वे वक्तव्य, जिनको वे सही मानते है, वापस ले लिये जाये। इनमे से एक वक्तव्य नाजिफपर तथाकथित बमबारी है। यह सूचना उन्होने दूसरे समाचारपत्रोसे ली है। हजारों मुसलमानोको विश्वास है कि यह सच बात है। उन्होने सरकारको आश्वासन दिया है कि यदि स्वतन्त्र जिम्मेदार मुसलमान उस जगह जाकर जाँच करे और यदि वे कह दे कि यह बमबारी नही हुई तो वे अपना वक्तव्य वापस ले लेगे। यह प्रस्ताव काफी सम्मानजनक है। उन्होने एक जोशीली कविता प्रकाशित की है जिसकी कुछ पक्तियोका ऐसा अर्थ निकाला जा सकता है कि उनसे हिंसाको प्रोत्साहन मिलता है। उन्होने एक असहयोगीके नाते इन पक्तियोके लिए क्षमा-याचना करना स्वीकार किया है, वह इसलिए नही कि वे मुकदमेसे डरते है बल्कि इसलिए कि अहिंसाके अपने सिद्धान्तके सम्बन्धमे वे अपनेको एक गलत स्थितिमे नही पड़ने देना चाहते। तीसरा वक्तव्य जिसपर सरकारको ऐतराज है बगालमे एक मुकदमेकी रिपोर्ट और उसपर टिप्पणीसे सम्बन्धित है, जिसमें एक

यूरोपीय द्वारा एक खानसामाके मारे जाने और अदालत द्वारा उसपर ३००) रु० जुर्माना किये जानेका जिक्र था। टिप्पणी, जिसपर ऐतराज किया गया है, सचमुच कडी है। उसमे कहा गया है कि ब्रिटिश अदालते यूरोपीयोको ३००) रु० जुर्माना-भर कर भारतीयोकी हत्या करनेकी छूट देती है। किन्तु उसमें हिंसाको कोई उकसावा नही है, और अखबारोमे छपनेवाली उन कई घटनाओसे जिनमे न्यायपर कुठाराघात हुआ है, वह उचित ठहरती है। सरकारको कोई भान नही है कि यूरोपीयो और भारतीयोके बीच समान रूपसे न्याय एक असम्भव-सी बात माननेकी भावना भारतीयोके दिलमे कितनी गहरी बैठ गई है। 'जमीदार' के विरुद्ध चौथा इलजाम मौलाना मुहम्मद अलीके उस वक्तव्यको छापनेका है जिसमे अफगानिस्तानके हौएका जिक्र है। सम्पादको और सार्वजनिक नेताओसे क्षमा-याचना के लिए कहनेका यह विचार अली भाइयोकी क्षमा-याचनाका मजाक बनाना है, क्योकि सयुक्त प्रान्तकी सरकार भी 'इडिपेन्डेन्ट' पत्र और दूसरे लोगोसे इसी प्रकार क्षमा-याचनाकी माँग कर रही है। मुझे मालूम नही कि सरकार द्वारा आत्मसम्मानी असहयोगियोसे क्षमा-याचनाकी माँगका इलाहावादमे क्या परिणाम हुआ। ज्यादा ईमानदार और सम्मानजनक तरीका यह होता कि सरकार जिन असहयोगियोको पसन्द नही करती, उन्हे जेल भेज देती। पजावमें सरकारने हमारी बेइज्जती करनेका जो ढग अपनाया था, उससे हटकर अब क्षमा-याचनाकी माँग करनेका यह घुमावदार तरीका उसे नही अपनाना चाहिए।

सहयोग और असहयोगकी परिभाषा

देशके लिए यह कोई छोटी बात नही कि श्री द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर जिन्हे उनके मित्र प्यारसे 'बडो दादा' कहते है, अपनी वृद्धावस्था और शान्तिनिकेतनके अपने एकान्तमे भी, देशमे जो-कुछ हो रहा है उसपर बारीकीसे निगाह रखते है। श्री एन्ड्रचूजने असहयोगपर प्रकट किये उनके हालके विचारोका स्वतन्त्र अनुवाद जगह-जगह भेजा है। यद्यपि यह अनुवाद पूराका-पूरा अखबारोमे छपा है, मै श्री ठाकुर द्वारा की गई सहयोग और असहयोगकी परिभाषाओको, जो इतनी ही सच्ची और प्रभावपूर्ण है, प्रकाशित करनेका लोभ सवरण नही कर सकता। सहयोगके बारेमे लिखते हुए वे कहते है:

> हमारे शासकोंने अपने निरंकुश कृत्योंको दुनियासे छिपानेके लिए विधान-मण्डलोंके रूपमें एक कठपुतलीका तमाशा खड़ा किया है जिनमें सहयोग देनेके लिए कुछ पेशेवर भाषण-शूरोंको आमन्त्रित किया गया है। हमारे शासकोंका विचार है कि ऐसा करके उन्होंने हमें हमेशाके लिए अपने अहसानसे दबा दिया है। दरअसल उन्होंने जलेपर नमक छिड़का है। ये विधान-मण्डल हमारे गले पड़ गये हैं और डर यह है कि सिन्दबाद नाविककी कहानीमें वर्णित बूढ़ेकी भाँति वे हमारा दम घोट देंगे। बड़ो दादा आगे कहते हैं: यदि हमारे अंग्रेज शासकोंके अनुसार सहयोगका यही अर्थ है, तो यह समझ पाना बहुत कठिन नहीं कि असहयोगका हमारे लिए क्या अर्थ है। हम कोई भी ऐसी चीज, जो

देशके लिए घातक हो, कभी स्वीकार नहीं करेंगे, चाहे उसे अस्वीकार करनेमें हमारी जान ही क्यों न चली जाये। यही असहयोग है।

अनुकरणीय

श्री विट्ठलभाई पटेलको नगरपालिका या विधान-मण्डलोसे जूझनेमे जो सुख मिलता है वह और किसी काममे नही मिलता। ६ तारीखको थानाके जिला बोर्डमें निम्नलिखित प्रस्ताव रखते हुए वे पूरे जोशमे थे:

(१) यह बोर्ड इस बातपर दुःख प्रकट करता है कि शराबकी बिक्री बढ़ रही है और उसके फलस्वरूप जनताके चरित्र, स्वास्थ्य और सम्पत्तिका नाश हो रहा है।

(२) यह बोर्ड इस अभिशापको दूर करनेके लिए आरम्भ किये गये आन्दोलनका स्वागत करता है और इस आन्दोलनके संगठनकर्त्ताओंने जनसेवाकी जो भावना दिखाई है उसके लिए बधाई देता है।

(३) यह बोर्ड इस बातपर दुःख प्रकट करता है कि उसके पास इस तरहका कोई अधिकार नहीं है, जिसके बलपर वह शराबकी बिक्री रोक सके। इसलिए बोर्डकी सम्मति है कि जो अधिकार उसे प्राप्त है, अपने दायित्वपर वह उनका उपयोग धरना और कांग्रेस कमेटियोंको सहायता देनेमें करे, ताकि वह उन शराब बेचनेवालो को, जो स्वेच्छासे अपनी दूकानें बन्द कर दें, मुआवजा दे सके।

(४) ऊपर लिखे उद्देश्यको पूरा करनेके लिए यह बोर्ड एक समिति नियुक्त करता है जिसके प्रधान और उपप्रधान — प्रस्तावक — तथा श्री आचार्य सदस्य होंगे। यह समिति धरना देनेके कामको नियोजित करेगी और पूरी तरह मद्य-निषेधको सफल बनायेगी।

(५) बोर्ड इस समितिको अधिकार देता है कि शुरूमें वह ३,०००) रु० तक खर्च कर सकती है; और आगे चलकर इससे भी अधिक धन खर्च कर सकेगी।

यह स्पष्ट ही एक साहसपूर्ण कदम है। यदि बोर्ड अन्ततक अपने प्रस्तावको कार्यान्वित करनेके लिए कटिबद्ध रहता है और अपने शासन-क्षेत्रमे पूरी तरह शराबकी दूकाने बन्द करनेमे सफल होता है, तो वह अपनेको गौरवान्वित करेगा और देशकी महत्त्वपूर्ण सेवा करेगा। आशा है कि सारे भारतमे स्थानीय बोर्ड और नगरपालिकाओके सदस्य श्री पटेलका अनुकरण करेंगे। यदि सारे भारतमे स्थानीय बोर्ड और नगरपालिकाएँ इस सम्बन्धमे एक साथ कदम उठायें तो यह समाज-सुधारकोको बल देगा और सरकारको मजबूत करेगा तथा इस तरह हिंसाका वह खतरा भी दूर होगा जो धरना देनेवालो, पुलिस और जनताके झगड़ोसे पैदा हो सकता है।

शस्त्र अधिनियम

स्वामी श्रद्धानन्द एक घटना प्रकाशमें लाये है कि बिजनौर जिलेके एक मजिस्ट्रेट-ने गुरुकुल कांगडीके सहायक प्रबन्धककी बन्दूकके लाइसेंसका नवीकरण करनेसे इनकार कर दिया। यह सुधारोकी निरर्थकताका खुला प्रदर्शन है। यदि स्वामी श्रद्धानन्दका यह अनुमान ठीक है कि लाइसेंसका नवीकरण न किये जानेका कारण असहयोग आन्दोलनसे उनका सम्बन्ध है तो इससे यह जाहिर होता है कि जनताके दैनिक जीवनसे सम्बन्ध रखनेवाली बातोके प्रति सरकारका रवैया और शासनका तरीका बिलकुल नही बदला है, जो-कुछ थोडा परिवर्तन हुआ है वह असहयोगके प्रभावके कारण। लेकिन स्वामी श्रद्धानन्द-जैसे जाने-माने नागरिकके प्रति बिजनौरके जिला मजिस्ट्रेटके ऐसे हृदयहीन व्यवहारके लिए जनता तैयार नही थी। मैंने इस व्यवहारको हृदयहीन कहा है, क्योकि जिस बन्दूकके लिए लाइसेंस लेना था उसकी जरूरत शिकारके लिए नही बल्कि एक घने जगलमे जगली जानवरोसे बचावके लिए थी।

बहाना

मै पण्डित माखनलाल चतुर्वेदीपर चलाये गये मुकदमे और उनको दिये दण्डका पहले ही जिक्र कर चुका हूँ। मुझे अदालतमे दिये उनके बयानकी एक प्रति अभी मिली है। उन्होने गवाह पेश करने या दूसरी तरहसे अपना बयान देनेसे इनकार कर दिया। केवल अदालतके सामने एक वक्तव्य दिया जिसमे उन्होने अहिंसाके सिद्धान्तपर अपना विश्वास दुहराया। इसलिए मेरी तरह पाठकोको भी यह जानकर अचम्भा होगा कि यदि पण्डित माखनलालके वक्तव्यको सच माना जाये तो उनपर मुकदमा उस कसूरके लिए नही चलाया गया जिसके लिए सरकार उन्हे दोषी समझती थी, बल्कि एक निर्दोष भाषणके लिए चलाया गया। मेरा मतलब वक्तव्यके निम्नलिखित भागसे स्पष्ट हो जायेगा कि जब पण्डित माखनलालपर मुकदमा चलानेका निश्चय किया गया, उस समयतक उन्होने कोई भाषण नही दिया था।

> मै जबलपुरसे निकलनेवाले 'कर्मवीर' का सम्पादक रहा हूँ। पत्रकारिताका अपना कर्त्तव्य निभाते हुए मुझे जनताकी कई कठिनाइयोंको प्रकाशमें लाने और प्रान्तमें प्रशासन सम्बन्धी कार्योकी आलोचना करनेके अवसर आते रहे हैं। नरसिंहपुर जिलेका प्रशासन बहुत बदनाम हो गया था और यह जरूरी हो गया था कि डिप्टी कमिश्नर श्री जे० सी० बोर्नके प्रशासनसे सम्बन्धित गोलमालका मेरे पत्र द्वारा निर्भयतापूर्वक भण्डाफोड़ किया जाये। वहाँके स्थानीय अधिकारी लगातार जनतापर अत्याचार करते थे। इसके बारेमें विधान-मण्डलमें कहा गया था, "पुलिसकी एक टुकड़ीने एक गाँवपर धावा बोला, लोगोंको यातनाएँ दीं, उनके मुँहपर थूका, ठोकरे मारीं, उन्हे गिरफ्तार करके उनके साथ दुर्व्य-वहार किया, कई दिनतक उनको भूखा रखा और अन्तमें स्त्रियोंकी इज्जत खराब की।" सरकारकी कारगुजारियोंका इस तरह पर्दाफाश होनके बादसे ही मै उसका कोपभाजन हो गया। और इससे मुझे जरा भी आश्चर्य नहीं होता कि

> मध्यप्रान्तकी सरकार मुझपर एक भाषणके लिए मुकदमा चला रही है जो मैंने १२ मार्च, १९२१ को बिलासपुर सम्मेलनमें दिया था, जबकि सरकारके गृह-सदस्यने ४ मार्चको ही मध्य-प्रान्तकी विधान-परिषद्में खुल्लमखुल्ला यह कहा था कि मुझपर मुकदमा चलाया जाना निश्चित है और सरकारकी स्वीकृतिकी प्रतीक्षा की जा रही है। मैं कह सकता हूँ कि यदि मैंने नरसिंहपुरमें बोर्नके शासनके भ्रष्टाचारका पर्दाफाश न किया होता तो यह मुकदमा हरगिज न चलाया जाता। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैंने १२ मार्चको बिलासपुर जिला सम्मेलनमें भाषण दिया था, किन्तु मैं यह कहना चाहता हूँ कि सरकारके खुफिया विभाग द्वारा भेजी गई उसकी रिपोर्ट न मेरे विचारोंका प्रतिनिधित्व करती है न वह जो-कुछ मैंने कहा उसका एक ईमानदाराना और सच्चा विवरण है। मैं भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अहिंसात्मक असहयोगके सिद्धान्तका एक वफादार समर्थक हूँ और नागपुर अधिवेशनमें जो प्रस्ताव पास हुआ था मैंने ईमानदारीसे उसका अक्षरशः पालन किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सरकारने यह मुकदमा चलानेका निश्चय ४ मार्चको ही कर लिया था, जब कि मुकदमा एक ऐसे भाषणके लिए चलाया गया जो १२ मार्चको दिया गया था। नरसिंहपुरके प्रशासनके कार्योका उन्होंने जो भण्डाफोड़ किया उसके लिए उनपर मुकदमा क्यों नहीं चलाया गया? मुझे यह मालूम नहीं कि नरसिंहपुरके प्रशासनपर लगाये आरोपमें कुछ सचाई है या नहीं। किन्तु कहीं-न-कहीं कुछ बड़ी गड़बड़ जरूर है।

भगवान्‌का अपमान

एक सज्जन लिखते हैं

> मुझे यह सूचना देते हुए दुःख होता है कि ऐसे अनेको चित्र देखनेको मिलते हैं जिनमें आपको और दूसरे नेताओंको श्रीकृष्ण और पाण्डवोंके रूपमें दिखाया जाता है। क्या आप इसे रोकनेके लिए अपने प्रभावका उपयोग नहीं करेंगे, क्योंकि इससे मेरी तरहके बहुतसे लोगोंकी धार्मिक भावनाको चोट पहुँचती है जो श्रीकृष्णको केवल एक महापुरुष नहीं अपितु भगवान्‌का अवतार मानते हैं?

पत्र-लेखकसे मेरी पूरी सहानुभूति है। मैंने ये चित्र नहीं देखे किन्तु मुझे श्रीकृष्णके रूपमें दिखाना मुझे भगवान्‌का अपमान लगता है। मैं अपनेको उन अनेक कार्यकर्त्ताओंमें से एक तुच्छ कार्यकर्त्ता मानता हूँ जो एक महान् उद्देश्यके लिए काम कर रहे हैं। नेताओंको बढ़ा-चढ़ाकर दिखानेसे इस लक्ष्यको लाभकी अपेक्षा हानि ही होगी। किसी भी लक्ष्यकी सफलताकी सबसे अधिक सम्भावना तभी होती है जब उसकी विवेचना हो और उसके औचित्यके कारण लोग उसके लिए काम करें। एक प्रगतिशील समाजमें कर्मको हमेशा व्यक्तियोंसे अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए,

क्योकि व्यक्ति कर्मके निमित्त-मात्र है। इसलिए मै पूरा जोर लगाकर कहूँगा कि जोशीले लोग और साहसी व्यापारी उचित-अनुचितका विचार करे, और इस प्रकारके चित्र हटा ले जो उक्त भाई जैसे व्यक्तियोकी धार्मिक भावनाओको निस्सन्देह ठेस पहुँचाते है।

कराचीके स्कूल

श्री जगतियानीने अपने स्कूलके बारेमे जो महत्त्वपूर्ण सफाई दी है, उसे इससे पहले प्रकाशित न करनेके लिए मुझे उनसे क्षमा माँगनी चाहिए। सच बात यह है कि लगातार यात्रापर रहनेके कारण मुझे अपने सभी पत्रोका उत्तर देनेका समय नही मिला। बम्बईमे मुझे जरा साँस लेनेका मौका मिला है और मै जमा कामको निपटानेका प्रयत्न कर रहा हूँ। उनका पत्र मै अभी-अभी देख पाया हूँ। उसका सम्बन्धित भाग इस प्रकार है:

> स्कूलोंके हिसाब-किताबकी गड़बड़के सम्बन्धमें एक पत्र 'यंग इंडिया' में पहले ही प्रकाशित हो चुका है। मैं लेखकसे सहमत हूँ। मैं 'तिलकालय' का प्रिंसिपल हूँ, जिसके बारेमें मेरे कुछ विरोधियोंने अफवाहें फैला रखी हैं। स्कूल मैंने पिछले नवम्बर अर्थात् अपने असहयोगमें भाग लेनेके एक महीने बाद शुरू किया था। चूँकि खिलाफत समितिसे मुझे कोई सहायता नहीं मिल सकी, इसलिए मुझे व्यक्तिगत सहायतापर ही निर्भर रहना पड़ा। एक नये स्कूलको जमनेमें कुछ समय लगता है। किन्तु मेरे स्कूलके शुरूके ही दिनोंमें मेरी "मोटी तनख्वाह" के बारेमें अफवाहें शुरू हो गई थी। जब कि सचाई यह है कि मैंने कोई तनख्वाह नहीं ली; बल्कि ३१ मई, १९२१ तक स्कूलको १,२०० रुपयेका घाटा हुआ है। जहाँतक धनका प्रश्न है, स्कूलका एक वित्त-बोर्ड है जिसके प्रधान श्री दुर्गादास बी० अडवानी हैं। बोर्डकी बैठक हुई और हिसाब-किताब, जिसकी जाँच समिति द्वारा नियुक्त एक पेशेवर मुनीमने की, पास किया गया। रिपोर्टमें हिसाब-किताबका विवरण भी दिया जायेगा। साधारण रूपसे यही विधि अपनाई भी जानी चाहिए थी। सार्वजनिक सहायतासे चलनेवाली सभी शालाएँ इसी पद्धतिका अनुसरण करती हैं। उनसे यही अपेक्षा की जाती है कि वे समय-समयपर अपना आय-व्ययका लेखा प्रकाशित किया करें। इससे उन समाचारोंमें निहित अन्याय स्पष्ट हो जायेगा जिनपर आपके लेख आधारित हैं। वे समाचार स्पष्टतः व्यक्तिगत द्वेषका परिणाम हैं।

मैं पत्रका शेष भाग प्रकाशित नही कर रहा हूँ। उसका सम्बन्ध केवल स्थानीय और व्यक्तिगत मामलोसे है। मै नही समझता कि ऐसे मामलोकी सार्वजनिक चर्चासे कोई लाभ है। हमे अपने अन्दर ऐसी क्षमता बढानी चाहिए कि हम इस तरहकी छोटी-छोटी परेशानियोको बरदाश्त कर सके और जल्दी ही अपने प्रतिद्वन्द्वियोसे सहमत हो सके।

लॉर्ड सिन्हाकी भूमिमें

शायद उड़ीसा भारतमें सबसे गरीब प्रान्त है। वहाँके निवासी बहुत ही सीधे और भोले हैं। 'समाज' उत्कलका एक समाचारपत्र है। किओझर नामकी एक छोटी-सी रियासतमें होनेवाली सरकारी मनमानीके बारेमें एक सम्वाददाताने 'समाज' में लिखा है:

> आपको किओंझरके विषयमें सूचनाएँ अवश्य ही मिल रही होंगी; किन्तु शायद आप वहाँकी अन्दरूनी हालत न जानते हों। रियासतके अधिकारी इस भीतरी हालतको दबानेका यत्न कर रहे हैं, और इस प्रकार जनताको असहाय और निरुपाय कर देना चाहते हैं। डाकखानोंको बन्द जैसा ही समझना चाहिए। किसीको कोई समाचारपत्र पढ़नेको नहीं मिलता। चिट्ठियाँ न भेजी जाती हैं, न मिलती हैं। पहले उन्हें अधिकारियोंके पास देखनेको भेजा जाता है और फिर जो-कुछ उनमें लिखा होता है उसको देखते हुए जो ठीक समझा जाता है सो होता है। एक परिपत्र द्वारा 'समाज' पर पाबन्दी लगा दी गई है। इसलिए यह अखबार यहाँ देखनेको नहीं मिलता। दूसरे, लोगोंको एक स्थानसे दूसरे स्थानपर जानेकी स्वतन्त्रता नहीं है। सड़कोंपर पहरेदार तैनात हैं। थोड़ासा भी शक होते ही राहगीरोंकी तलाशी ली जाती है कि उनके पास कहीं कोई सूचना तो नहीं है। यदि किसीपर यह सन्देह हो कि उसके पास कोई सूचना है तो उसे आगे जानेसे रोक दिया जाता है। इस प्रकार सर्वथा असहाय जनताको दबानेमें कोई कसर नहीं छोड़ी जाती। सुना जाता है कि निशाकर मिश्र नामके एक व्यक्ति-को इतना पीटा गया कि वह मर गया। यह समाचार दबा दिया गया है। एक दूसरे जगद्बन्धु चक्रवर्ती नामके सज्जन मरणासन्न हैं; उनके बचनेकी आशा नहीं। कहा जाता है कि उन्हें एक कोठरीमें अकेला बन्द रखा गया है। किन्तु कोई नहीं जानता कि वे हैं कहाँ। लोगोंमें यह धारणा पक्की हो गई है कि लोगोंके मरनेके समाचारोंको अधिकारी दबानेका पूरा यत्न कर रहे हैं।

मुझे कुछ और भी पत्र मिले हैं, जो इस विवरणकी पुष्टि करते हैं। पाठकको यह नही समझ लेना चाहिए कि यह रियासत पश्चिमी भारतकी रियासतो जैसी ही है। उत्कलकी रियासतोमे अंग्रेज पोलिटिकल एजेंट सर्वेसर्वा है, और वह जो चाहता है करता है। ऊपर जिस जुल्मका वर्णन है, वह इसलिए हो रहा है कि लोगोने असह-योग आन्दोलनके कार्यकर्त्ताओको जगह दी। मैं उनसे यही कह सकता हूँ कि जबतक भारत गुलामीकी जजीरमे जकडा है, उन्हे ये यातनाएँ भोगनी पडेगी। मैं असहयोगियो-को यही सलाह दूंगा कि उन्हे ऐसे स्थानोमे आन्दोलन नही करना चाहिए जहाँ दमन शुरू होनेपर वे जनताकी किसी प्रकारकी सहायता न कर सके। यदि उत्कलकी जनता शक्तिशाली और सुसगठित होती तो मैं बिना हिचक उनसे कहता कि वे इन तथा-कथित रियासतोमे जाये, वहाँके प्रत्येक अमानुषिक प्रतिबन्धको तोड़े और प्रत्येक कानूनी

दण्ड स्वीकार करे। किन्तु मेरी समझमे वह समय अभी नही आया है। जितना आत्म-सयम इस समयतक हममे है, उससे बहुत अधिक आत्मसयम हमें सीखना होगा। हमने जितना सीखा है उससे आशा तो बँधती है, किन्तु निस्सन्देह हमें उससे अधिक आत्मसयम सीखनेकी जरूरत है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १३–७–१९२१

१७६. रिसता हुआ घाव

सयुक्त-प्रान्तके उदार सघ (लिबरल लीग)के शिष्टमण्डलको उत्तर देते हुए परम-श्रेष्ठ वाइसरायने जो भाषण दिया, वह उस भाषणकी अपेक्षा कही अधिक सतर्कतापूर्ण था जो उन्होने अहमदिया शिष्टमण्डलको उत्तर देते हुए दिया था। फिर भी परम-श्रेष्ठको यह याद दिलाना आवश्यक है कि उन्होने इस भाषणमे भारतसे असम्भव कार्य करनेको कहा है। उदारदलीय तथा राष्ट्रवादी, सहयोगी तथा असहयोगी, हिन्दू, मुसलमान, सिख, जैन, पारसी, ईसाई, यहूदी सभी जो अपनेको भारतीय कहते है, अपने तरीकेसे जोर देकर कहते है कि पजाब तथा खिलाफतके प्रति किये गये अत्याचारोका प्रतिकार होना चाहिए। परमश्रेष्ठ अब भी खिलाफतके दावेपर जोर दे रहे है। यह आशाजनक बात है। इस सम्बन्धमे वे यह नही कहते कि भारतके मुसलमान और हिन्दू तथा अन्य देशवासी खिलाफतके प्रति किये गये अत्याचारोको भूल जाये। किन्तु वे हमसे यह साफ-साफ कहते है कि हम पजाबके प्रति किये गये अत्याचारोको भूल जाये। यह काम उतना ही असम्भव है जितना कि किसी वैद्यके कहने मात्रसे रोगी-का अपने कष्टदायक रोगको भूल जाना। केवल सज्ञाहीन करनेवाली औषधके उप-योगसे वह कुछ देरके लिए कष्ट भूल सकता है। पजाबके प्रति किये गये अत्याचार तो ऐसे हैं जैसे कि रिसता हुआ कोई घाव। जिस प्रकार रिसता हुआ घाव सारा जहर बाहर निकाल दिये जानेतक अच्छा नही हो सकता, उसी प्रकार पजाबके प्रति किये गये अत्याचार बेईमान तथा पश्चात्तापहीन सरकारी अधिकारियोकी पेंशनो तथा नौकरियोके समाप्त कर दिये जानेके पहले न तो भूले जा सकते है, न उन्हे क्षमा ही किया जा सकता है। क्या लॉर्ड रीडिंगका अनुमान है कि श्री थॉमसनको उच्चतर पदपर प्रतिष्ठित करनेमें भारतकी सहमति है? वे हमसे कहते है कि हम उद्देश्यके प्रति ईमानदारी तथा सचाईके लिए उन्हे तथा उनकी सरकारको श्रेय दे। वे चाहे तो श्रेय ले ले, किन्तु श्रेय देते समय यह विचार मनमे आता है कि महत्त्वपूर्ण मामलोपर सरकार तथा जनताके दृष्टिकोणमे मौलिक भेद है। जबतक लॉर्ड रीडिंग और उनकी सरकार भारतसे यह कहती है कि वह पेंशन तथा नौकरीकी सूचियोमें उन अधि-कारियोंके नाम बहाल रखनेपर सहमत हो जाये जो भारतीय दृष्टिकोणसे अपने उत्तर-दायित्वके प्रति अयोग्य सिद्ध हुए हैं तबतक सरकार और जनतामें एकमत होनेका प्रश्न ही नही उठता। यदि हमे लेशमात्र भी उत्तरदायित्व दिया गया होता तो निश्चित रूपसे हमे उन लोगोंको बरखास्त करनेका अधिकार मिल जाता, जिन्होंने हमपर नृशस

अत्याचार किये है। मेरे लेखे तो इन दोनो अत्याचारोका प्रतिकार करना उत्तरदायित्वकी सबसे बडी कसौटी है। खिलाफतके प्रति जो अन्याय हुआ है उसे स्वीकार किया गया है। पजावपर किये गये अत्याचार खूनके अक्षरोमे लिखे गये है। हम मानते है कि हमने अमृतसर, कसूर, जलियाँवाला तथा गुजराँवालामे गलतियाँ की। किन्तु इसके लिए हमे भारी कीमत चुकानेके लिए मजबूर किया गया। हमारा अपमान किया गया, हमें ठोकरे मारी गई। अपराधी और निर्दोष, सभी फाँसीपर चढाये गये। हमने स्वय कई स्थानोपर स्पष्ट एव मुक्त-रूपसे अपना अपराध स्वीकार किया है। हम यह नही चाहते कि अन्याय करनेवाले अधिकारियोको अपमानित किया जाये। हम तो केवल यह माँग करते है कि वे हमपर मालिक वनाकर न लादे जाये। एक अग्रेज अधिकारीने एक वार मुझसे स्पष्ट कहा कि माइकेल ओ'डायर या जनरल डायरका नाम पेंशनकी सूचीसे हटानेकी वातपर सहमति देनेके वजाय मै नौकरी छोड देना अधिक अच्छा समझूँगा। मैंने उससे कहा कि मै आपके इस प्रकारके रुखसे सहानुभूति रख सकता हूँ; किन्तु आप भी मुझसे इस विचारसे सहमत होनेकी आशा न रखे और उसने ऐसी आशा नही की। हजारो न सही सैकडो अग्रेज पुरुष तथा महिलाएँ माइकेल ओ'डायर तथा जनरल डायरको साम्राज्योद्धारक और अपने गौरवका सरक्षक समझते है। यह भी सम्भव है कि यदि मै भी, चाहे जिस मूल्यपर, भारतको अधीन रखनेके लिए कृतसकल्प अग्रेजोमे से एक होता तो मै भी शायद उन्हीके जैसा महसूस करता। किन्तु मेरा विचार है, जवतक इस प्रकारका रुख वना रहेगा तवतक सरकार और जनताके वीच सहयोग नही हो सकता। हमारे द्वारा असहयोग होनेपर अग्रेज इस तथ्यको समझ जायेंगे कि देशके प्रशासनमे उनके साथ सहयोग करनेका अर्थ हम लोग उनके इस रुखके साथ सहमति प्रकट करना मानते है। यह मित्रो और साथियो जैसा रुख नही है और तलवारके वलपर उनका भारतमे बने रहना अव सम्भव नही है। वे यहाँ केवल हमारी सद्भावनाके वलपर रह सकते है। यदि हमे अव कोई चीज जोडे रह सकती है तो वह केवल सद्भावनाकी कड़ी ही हो सकती है। मुँहसे समानताका दम भरना और वास्तवमे अलगावकी खाइयाँ खोदकर अपने वड़प्पनको अक्षुण्ण रखना तो हमारा मजाक उड़ाना ही है। लॉर्ड रीडिंग ससारके वुद्धिमान् व्यक्तियोमे से है, इस-लिए मुझे आशा है, वे इस बातको जल्दी ही समझ जायेंगे कि दो विरुद्ध रुखोमे सगति वनाये रखना सम्भव नही है। यदि कोई बीचका मार्ग होता तो असहयोगियोने उसे कभीका अपना लिया होता। यह विशाल जनसमुदायकी घृणा या दुर्भावनाका प्रश्न नही है। मै उन्हे आमन्त्रित करता हूँ कि वे गहरे पैठकर देखे तो उन्हे मालूम हो जायेगा कि हम कमजोर होनेपर भी गोरी जातिकी श्रेष्ठताको अव किसी प्रकार भी स्वीकार करनेके लिए तैयार नही है। जबानी जमा-खर्चका चाहे कितना ही अच्छा मतलव क्यो न हो और चाहे कितनी ही सचाईसे वह क्यो न किया गया हो, उससे कोई उपयोगी उद्देश्य सिद्ध नही हो सकता। हम भारतके लोग इतने मूर्तिपूजक तो है कि जिस समानता की वात कही जाती है हमे उसका साक्षात् प्रमाण चाहिए। गोरे सैनिकोका अस्तित्व अग्रेज जातिकी रक्षाके लिए आवश्यक हो सकता है, किन्तु क्या वे यह नही जानते कि भारतकी सीमाकी रक्षाके लिए उनकी विलकुल आवश्यकता

नही है? अंग्रेजोको सर्वथा उन्ही शर्तोपर यहाँ रहनेके लिए तैयार रहना चाहिए जिन शर्तोपर पारसी रहते हैं। पारसी सख्यामे मुट्ठी-भर होनेपर भी एक हजार वर्षसे प्रतिष्ठित मित्र एव साझीदारोकी हैसियतसे यहाँ रह रहे है। उन्हे विशेष सुरक्षाकी आवश्यकता नही पडी, क्रुद्ध हिन्दुओ या मुसलमानोसे होनेवाले खतरेके समय उन्हे किसी किलेकी शरण लेनेके लिए नही जाना पडा। क्या मूसा और ईसाके अनुयायियोके पास पारसियो जैसा विश्वास नही है? वास्तविक तथ्य तो यह है कि अंग्रेज भारतमे लाखो हिन्दुओ और मुसलमानोके साथ सद्भावनाके साथ रहनेके लिए तैयार नही है। हिन्दू और मुसलमान भी अंग्रेजोको इस डरसे कोई विशेषाधिकार देनेके लिए तैयार नही हो सकते कि आदमीकी बुद्धि अधिकसे-अधिक खतरनाक जिन हथियारोकी खोज कर सकती है वैसे हथियार अंग्रेजोके पास हैं। हिन्दुओं-मुसलमानोके पास इसके सिवा और कोई चारा नही कि वे उनका भय छोडकर, अर्थात् अप्रतिरोधके जरिये अधिकसे-अधिक प्रयत्न करके उन सव शस्त्रोके प्रभावको बेकार कर दे। हो सकता है कि यह बात उद्दण्डतापूर्ण या काल्पनिक लगे। किन्तु मुझे आशा है कि लॉर्ड रीडिंगको शीघ्र ही किसी-न-किसी प्रकार यह मालूम हो जायेगा कि मैंने भारतके मनकी बात सही तौरपर कही है। और जितनी जल्दी इस मौलिक सत्यका ज्ञान होगा उतनी ही जल्दी अंग्रेजो और भारतीयोके बीच वास्तविक तथा हार्दिक सहयोग होगा। मै ऐसे सहयोगकी लालसा रखता हूँ, और यही लालसा मुझे किसी प्रकारकी क्षमा-याचना स्वीकार करनेसे रोकती है, फिर चाहे वह सहयोगके लिए कितनी ही प्रलोभनकारी क्यो न हो। असहयोगका जन्म अज्ञान तथा दुर्भावनासे नही हुआ, बल्कि इसका जन्म ज्ञान और प्रेमसे होता है और इसलिए सहयोगकी ओर बढनेके लिए यही प्रभावशाली कदम है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-७-१९२१

१७७. पत्र : भारतके अंग्रेजोंके नाम

प्रिय मित्रो,

आज दूसरी बार मै आपको पत्र लिखनेका साहस कर रहा हूँ।[1] मै जानता हूँ आपमेसे अधिकतर असहयोगको नापसन्द करते हैं। यदि आप मुझे ईमानदारीका श्रेय देते है तो मै आपसे निवेदन करूँगा कि आप मेरे दो कार्यक्रमोको[2] मेरी अन्य गति-विधियोसे अलग करके देखे।

यदि आपको मेरी ईमानदारीका एहसास नही होता तो मै उसे सावित नही कर सकता। जव मै यह कहता हूँ कि हम अंग्रेजोसे घृणा किये विना उनके द्वारा स्थापित

१. इससे पहले गाधीजीने २७ अक्तूबर, १९२० को अंग्रेजोंके नाम एक पत्र लिखा था, देखिए खण्ड १८।

२. विदेशी वस्त्र-बहिष्कार और मद्यनिषेध आन्दोलन।

शासन प्रणालीसे घृणा कर सकते है, तब मेरे कुछ भारतीय मित्र मुझपर कपटाचारका दोष मढते है। मै उन्हे यह बतानेकी कोशिश कर रहा हूँ कि किसी भी व्यक्तिके लिए अपने भाईकी दुष्टतासे घृणा करनेपर भी अपने भाईसे घृणा न करना सम्भव है। ईसाने स्क्राइब्स[1] और फैरिसियोकी[2] दुष्टतासे घृणा करनेपर भी उनसे घृणा नही की थी। उन्होने व्यक्तिके प्रति प्रेम और उसकी बुराईके प्रति घृणाका कानून केवल अपने लिए नही बनाया, बल्कि यह सिखाया कि इसका सार्वजनिक व्यवहारमें उपयोग करे। वस्तुत. ससारके सभी धर्म-ग्रथोमे मैंने इसका उल्लेख पाया है।

मै दावा करता हूँ कि मुझे मानवीय स्वभाव तथा अपनी कमजोरियोका काफी हदतक सही ज्ञान है। अनुभवसे मैंने यह जाना है कि अपने ही द्वारा प्रस्तुत प्रणालीकी अपेक्षा आदमी स्वय अच्छा होता है। और इसलिए मै अनुभव करता हूँ कि वैयक्तिक रूपमें आप उस प्रणालीसे बहुत अच्छे है जिसे आपने सघके रूपमें विकसित किया है। १० अप्रैलके दिन अमृतसरमें मेरा प्रत्येक देशभाई जिस भीड़में शामिल था उससे अच्छा था। वह एक व्यक्तिके रूपमे उन निर्दोष अग्रेज बैंक मैनेजरोकी हत्या करनेसे इनकार कर देता। किन्तु उस भीडमे बहुतसे आदमी अपनेको भूल गये। इसीलिए दफ्तरमे बैठा अग्रेज उससे बाहरके अग्रेजसे भिन्न है। इसी प्रकार भारतमे रहनेवाला अग्रेज, इग्लैडमे रहनेवाले अग्रेजसे भिन्न है। यहाँ भारतमे आप जिस प्रणालीसे सम्बन्धित हैं वह इतनी निकृष्ट है कि उसका वर्णन ही नही हो सकता। अत मेरे लिए यह सम्भव हैं कि मैं आपको बुरा समझे बिना तथा प्रत्येक अग्रेजपर बुरे उद्देश्यका दोष मढे बिना कठोरसे-कठोर शब्दोमे उक्त प्रणालीकी निन्दा कर सकूँ। इस प्रणालीके आप भी उतने ही गुलाम हैं जितने कि हम। इसीलिए मै चाहता हूँ कि आप भी मेरे प्रति ऐसा ही व्यवहार करे और मुझपर उन इरादोका दोप न मढे जो आपको मेरे लिखित शब्दोमें उपलब्ध न हो। मै जब यह कहता हूँ कि मै उस प्रणालीको विनष्ट करने या सुधारनेके लिए अधीर हूँ जिसने भारतको आपके मुट्ठी-भर देश-वासियोका गुलाम बनाया है और जिसके कारण अग्रेज भारतमे अपनेको किलो तथा उन तोपोकी छायामे ही सुरक्षित अनुभव करते हैं जो यहाँ इस देशमे जहाँ-तहाँ दर्शकोका ध्यान अपनी ओर बरबस खीचती है तो आप समझ लीजिए कि अपने इस कथनमे मैं पूरी तरह अपना इरादा आपके सामने रख चुका। यह आपके और हमारे लिए एक अपमानजनक दृश्य है। राजविधि द्वारा गठित हमारा जीवन पारस्परिक अविश्वास और भयपर आधारित है। आप स्वीकार करेंगे कि यह इन्सानियत नही है। जिसके कारण यह स्थिति उत्पन्न हुई है। उस प्रणालीको राक्षसी ही कहना होगा। आप भारतीयोका अखण्ड भाग बनकर भारतमे रह सकते है, विदेशी शोषक बनकर सदा नही रह सकते। एक अग्रेजकी जानके बदले १,००० भारतीयोकी जाने! यह एक अत्यन्त निराशाजनक सिद्धान्त है, लेकिन आप मुझपर

१. ईसाके समयके यहूदी पुरोहित।

२. एक यहूदी जाति।

विश्वास कीजिए, भारतमे आपके उच्चतम अधिकारियोने १९१९ मे इस सिद्धान्तकी घोषणा की थी।

मै आपसे यह कहनेके लिए लालायित हूँ कि आप आगे बढे और इस प्रणालीको विनष्ट करनेमे मेरा हाथ बँटाये, जिसने हमे और आपको नीचे गिरा दिया है। किन्तु मै अनुभव करता हूँ कि अभी ऐसा सम्भव नही है। हमने स्वय उसे समाप्त करनेके लिए पर्याप्त तत्परता, आत्मत्याग और आत्मसयम नही दिखाया है।

किन्तु मै आपसे इतना जरूर कहता हूँ कि आप विदेशी वस्त्रोके बहिष्कार तथा मद्यनिषेध आन्दोलनमे हमारी सहायता करे।

लकाशायरका कपड़ा जैसा कि ब्रिटिश इतिहासकारोने बताया है, भारतपर जबरदस्ती लादा गया और जान-बूझकर व्यवस्थित रूपसे उसके विश्व प्रसिद्ध उत्पादकोको नष्ट कर दिया गया। इसलिए भारत न केवल लकाशायर बल्कि जापान, फ्रास और अमरीकाकी दयापर भी निर्भर है। हम कपडेके लिए प्रतिवर्ष (न्यूनाधिक रूपमें) ६० करोड रुपये भारतसे बाहर भेजते है। हम अपने कपडोके लिए काफी मात्रामे रुई पैदा करते है। क्या यह पागलपन नही है कि रुई भारतसे बाहर भेजी जाये और वहाँ उससे कपडा तैयार करके फिर जहाज द्वारा हमारे पास वापस ले आया जाये? क्या भारतका इस नि सहाय अवस्थातक पहुँचाना सही था?

डेढ सौ साल पहले हम अपना सारा कपडा तैयार करते थे। हमारी महिलाएँ अपनी झोपडियोमे बारीक सूत कातती थी और अपने पतियोकी कमाईमे वृद्धि करती थी। गाँवके जुलाहे उस सूतसे कपडे बुनते थे। हमारे जैसे विशाल कृषिप्रधान देशमे यह राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्थाका अपरिहार्य अग था। इसके कारण हम अपने खाली समयका स्वाभाविक ढगसे उपयोग कर सकते थे। आज हमारी महिलाएँ अपने हाथोकी कुशलता खो बैठी है और लाखो लोगोपर जबरदस्ती थोपी गई इस निष्क्रियताने देशको गरीब बना दिया है। बहुतसे जुलाहोने भगीका काम सँभाल लिया है। कुछने किरायेके सिपाही बननेका पेशा अपना लिया है। कलाकार जुलाहोकी आधी जाति नेस्तनाबूद हो गई है और आधे बचे-खुचे जुलाहे हाथ-कता बारीक सूत न मिलनेके कारण आयात किये गये विदेशी सूतसे कपडे बुन रहे है।

अब शायद आप समझेगे कि भारतके लिए विदेशी कपडेके बहिष्कारका क्या अर्थ है। इसकी योजना बदला लेनेकी दृष्टिसे नही बनाई गई है। यदि सरकार आज खिलाफत तथा पजाबके साथ किये गये अत्याचारोका प्रतिकार कर दे और भारतको तुरन्त स्वराज्य देनेकी अनुमति दे दे, फिर भी बहिष्कार आन्दोलन निश्चित रूपसे चलता रहेगा। स्वराज्यका अर्थ है कमसे-कम इतना अधिकार प्राप्त करना जिससे राष्ट्रके आर्थिक अस्तित्वके लिए महत्त्वपूर्ण भारतीय उद्योगोकी रक्षा हो सके और आर्थिक अस्तित्वको खतरा पहुँचानेवाले आयातोको बन्द किया जा सके। कृषि और चरखा राष्ट्र रूपी शरीरके दो फेफडे है। किसी भी कीमतपर उनके क्षयको बचाना नितान्त आवश्यक है।

इस मामलेपर अब लिखनेकी आवश्यकता नही। जब कृषिके सहायक विशाल परिमाणमे उत्पादन करनेवाले एक ऐसे व्यवसायके अभावमे सारा राष्ट्र भूखसे मर

रहा हो तब विदेशी निर्माताओ तथा भारतीय आयातकोके हितोपर विचार नही किया जा सकता।

आप इसे विदेशी मालका आम बहिष्कार करनेवाला आन्दोलन न समझे। भारत अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारसे अपनेको अलग नही रखना चाहता। कपडेके अलावा जो वस्तुएँ भारतके बाहर अधिक अच्छी बन सकती है उन्हे वह व्यापार-सन्धि करनेवाले दोनो पक्षोके लिए सुविधाजनक शर्तोपर कृतज्ञताके साथ ग्रहण करेगा। भारतपर जबरदस्ती कुछ भी नही लादा जा सकता। किन्तु मै भविष्यकी ओर नही झाँकना चाहता। मै निश्चित रूपसे आशा करता हूँ कि जल्दी ही भारतके लिए बराबरीकी शर्तोपर इग्लैड-के साथ सहयोग करना सम्भव हो जायेगा। तब व्यापारिक सम्बन्धोकी जाँच करनेका अवसर मिलेगा। इस समय तो मै आपसे कहूँगा कि आप विदेशी कपडोके बहिष्कारको पूरा करनेमे हमारे सहायक बनें।

उसी तरहका और उतना ही महत्त्वपूर्ण आन्दोलन शराबबन्दी है। शराबकी दूकानें समाजपर लादा गया घोर अभिशाप है। इस प्रश्नके सम्बन्धमे आज जैसी चेतना लोगोमे पहले कभी नही थी। मै स्वीकार करता हूँ कि इस सम्बन्धमें आपकी अपेक्षा भारतीय मन्त्री ज्यादा सहायता कर सकते है। लेकिन मै चाहूँगा कि आप इस प्रश्न-पर अपने विचार स्पष्ट रूपसे व्यक्त करे। जहाँतक मै समझता हूँ पूर्ण मद्य निषेध किसी प्रकारके प्रशासनके अन्तर्गत तो राष्ट्रके आग्रहपर ही किया जा सकता है। आप राष्ट्रके पक्षमे अपना प्रभाव डालकर निरन्तर बढ़ते हुए आन्दोलनकी प्रगतिमे सहायता पहुँचा सकते है।

आपका विश्वस्त मित्र,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-७-१९२१

१७८. श्रद्धाका स्वरूप

मुझे एक अजीब-सा गुमनाम पत्र मिला है। जिसमे इस बातके लिए मेरी प्रशंसा की गई है कि मैंने वह लक्ष्य हाथमे लिया है जिससे लोकमान्यको सबसे अधिक प्रेम था और मुझसे कहा गया है कि लोकमान्यकी आत्मा मेरे अन्दर निवास कर रही है और मुझे अपनेको उनका एक योग्य अनुगामी सिद्ध करना चाहिए। पत्रमे आगे कहा गया है कि स्वराज्यके सघर्षमे हिम्मत न हारूँ? और अन्तमे मुझपर आरोप लगाया गया है कि अपनेको राजनीतिक रूपसे गोखलेका शिष्य बताकर मै लोगोको धोखा देता हूँ। मै चाहता हूँ लोग गुलामोकी तरह नाम छिपाकर पत्र लिखनेकी प्रवृत्ति छोड दे। हम लोग अपने अन्दर स्वराज्यकी भावना बढा रहे है, इसलिए हममे निर्भयतापूर्वक अपनी बात कहनेका साहस होना चाहिए। चूँकि इस पत्रका विषय सार्वजनिक महत्त्वका

है, इसलिए इसका उत्तर अपेक्षित है। मैं यह नही कह सकता कि मुझे स्वर्गीय लोकमान्यका अनुयायी होनेका गौरव प्राप्त है। मै अपने करोड़ो दूसरे देशवासियोकी भाँति, लोकमान्यकी अदम्य इच्छाशक्ति, उनकी अपार विद्वत्ता, उनके देशप्रेम और सबसे अधिक उनके व्यक्तिगत जीवनकी पवित्रता और उनके महान् त्यागके कारण उनका प्रशसक हूँ। उन्होने आधुनिक कालके दूसरे सभी लोगोसे अधिक जनताके मनको प्रभावित किया है, उन्होने हमारे अन्दर स्वराज्यकी भावना फूंकी है। मौजूदा शासनतन्त्रकी बुराइयोको जितना श्री तिलकने समझा था उतना शायद किसी दूसरेने नही समझा। और मै पूरी नम्रताके साथ यह दावा भी करता हूँ कि मै उनके सन्देशको जनतातक पहुँचानेके लिए उतनी ही सचाईसे काम करता हूँ जितना उनका अच्छेसे-अच्छा शिष्य कर सकता है। किन्तु मै यह भी जानता हूँ कि मेरा तरीका श्री तिलकका तरीका नही है। और इसी कारण अभीतक महाराष्ट्रके नेताओसे मेरी जैसी चाहिए वैसी पटरी नही बैठी, किन्तु मै ईमानदारीसे महसूस करता हूँ कि मेरे तरीकेपर श्री तिलक अविश्वास नही करते थे। मुझे उनका विश्वासपात्र होनेका सौभाग्य प्राप्त था। उन्होने कई मित्रोके सामने अपनी मृत्युसे केवल १५ दिन पहले मुझसे जो अन्तिम बात कही थी वह यह थी कि यदि जनता द्वारा उसे स्वीकार कराया जा सके तो मेरा तरीका बहुत उत्तम सिद्ध होगा। उन्होने यह भी कहा था कि उन्हे इसमे शक अवश्य है। पर मेरे पास कोई दूसरा तरीका नही है। मै यही आशा कर सकता हूँ कि जब अन्तिम परीक्षाका समय आयेगा तब यह सिद्ध हो जायेगा कि देशने अहिंसात्मक असहयोगका तरीका पूरी तौरपर सीख लिया है। मै अपनी अन्य मर्यादाओको भूला नही हूँ। मै किसी प्रकारकी विद्वत्ताका दावा नही कर सकता। मुझमे तिलक-जैसी सगठन-शक्ति भी नही है। मेरे साथ कोई ऐसा सुगठित, अनुशासित दल भी नही है जिसको मै अपने नेतृत्वमे चला सकूँ, और २३ सालतक देशसे बाहर रहनेके कारण मुझे भारतका उतना अनुभव नही है जितना कि लोकमान्यको था। हम दोनोमे दो चीजे बिलकुल ही समान रही है — देशके लिए प्रेम और स्वराज्यके लिए सतत प्रयास। इसलिए मै गुमनाम पत्र-लेखकको आश्वस्त कर देना चाहता हूँ कि लोकमान्यकी स्मृतिके प्रति श्रद्धामे मै किसीसे कम नही रहूँगा और स्वराज्य-प्राप्तिके लिए लोकमान्यके सबसे अग्रणी शिष्योके कन्धेसे-कन्धा मिलाकर आगे बढता रहूँगा। मै जानता हूँ कि तिलकको एक ही प्रकारकी श्रद्धाजलि सबसे ज्यादा पसद होगी और वह है कमसे-कम समयमे भारत द्वारा स्वराज्य-प्राप्ति। इसके अतिरिक्त और कोई भी चीज उनकी आत्माको शान्ति नही दे सकती।

जहाँतक शिष्यत्वका प्रश्न है वह एक पवित्र व्यक्तिगत मामला है। मैने सन् १८८८ मे[1] दादाभाईके चरणोमे सिर रखा था, किन्तु वे मुझे अपनेसे बहुत दूर लगे। मै उनका पुत्र बन सकता था, शिष्य नही। शिष्यका दर्जा पुत्रसे ऊँचा है। शिष्यत्व एक नया जन्म होता है। वह स्वैच्छिक आत्मसमर्पण होता है। सन् १८९६ मे अपने

१. जिन दिनों गाधीजी लन्दनमें वकालत पढ रहे थे; देखिए आत्मकथा, भाग १, अध्याय २५।

दक्षिण आफ्रिकाके कामके[1] सम्बन्धमे मै भारतके लगभग सभी जाने-माने नेताओसे मिला। जस्टिस रानडेका मुझपर रोब गालिब हो गया था। उनकी उपस्थितिमें मुझे बात करनेका साहस नही होता था। बदरुद्दीन तैयबजीने मुझे पुत्रके समान समझा और मुझे रानडे और फीरोजशाहके कहनेपर चलनेकी सलाह दी। फीरोजशाह एक प्रकारसे मेरे सरक्षक बन गये। उनकी इच्छा मेरे लिए ब्रह्मवाक्य थी। "तुम्हे २६ सितम्बरको एक सार्वजनिक सभामे भाषण देना है और तुम्हे वहाँ ठीक समयपर पहुँच जाना चाहिए।" मैंने आज्ञा-पालन किया। २५ तारीखकी शामको मुझे उनसे मिलना था। मै मिलने गया।

"तुमने अपना भाषण लिख डाला?"—उन्होने पूछा।

"जी नही।"

"इस तरह नही चलेगा, युवक। क्या आज रातको लिख सकते हो?—मुशी, तुम श्री गाधीके पास जाकर भाषणकी पाण्डुलिपि ले आना। रातो-रात ही यह छप जाये और उसकी एक प्रति मुझे भेज दी जाये।" मेरी ओर मुडकर उन्होने आगे कहा. "गाधी, बहुत लम्बा भाषण न लिखना। तुम नही जानते बम्बईके श्रोता बहुत लम्बा भाषण पसन्द नही करते।" मैंने सिर झुका दिया।

बम्बई-केसरीने मुझे आदेशका पालन करना सिखाया। उन्होने मुझे अपना शिष्य नही बनाया। उन्होने इसके लिए कोशिश भी नही की।

उसके बाद मै पूना गया। मै वहाँ बिलकुल अजनबी था। मेरे मेजबान मुझे पहले श्री तिलकके पास ले गये। जब मै उनसे मिला तो वे अपने सहयोगियोसे घिरे हुए थे। उन्होने मेरी बात सुनी और कहा "हमे तुम्हारे लिए एक सभा आयोजित करनी होगी। लेकिन शायद तुम्हे पता नही कि दुर्भाग्यवश यहाँ दो दल है। तुम सभापतित्व करनेके लिए, कहीसे कोई निर्दलीय व्यक्ति जुटाओ। तुम डा० भाण्डारकरसे मिलोगे?" मैंने बात मान ली और वापस आ गया। मेरे मनमे श्री तिलककी बहुत स्पष्ट स्मृति नही है। बस इतना ही याद है कि उन्होने अपने प्रेम और अपनी बेतकल्लुफीसे मेरी घबराहट दूर कर दी थी। वहाँसे, मुझे ऐसा याद है, मै गोखलेके पास गया और फिर डा० भाण्डारकरके पास। डा० भाण्डारकरने मेरे अभिवादनका उत्तर कुछ उस भावसे दिया जैसा कि कोई अध्यापक अपने किसी विद्यार्थीको देता है।

"तुम एक ईमानदार और जोशीले युवक लगते हो। दोपहरकी ऐसी गरमीमें मुझसे मिलने बिरला ही आता। आजकल मै सार्वजनिक सभाओमें कभी नही जाता किन्तु तुमने एक ऐसी दयनीय परिस्थिति सामने रखी है कि मै अपना नियम-भग कर दूँगा।"

श्रद्धेय डाक्टर और उनके बुद्धिमत्तापूर्ण चेहरेके लिए मेरे मनमें श्रद्धा पैदा हो गई थी। किन्तु अपने हृदयके छोटेसे सिंहासनपर मै उनको नही बैठा सका। वह अभीतक खाली था। मै कई व्यक्तियोको अनुकरणीय मानता था, पर मुझे अपने आदेशोपर चलानेवाला हृदय-सम्राट् अभीतक नही मिल सका था।

१. देखिए आत्मकथा, भाग २।

गोखलेकी वात कुछ दूसरी थी। कह नही सकता क्यो। कालेजके[1] अहातेमें उनके मकानपर मैं उनसे मिला था। ऐसा लगा जैसे कोई पुराना मित्र मिल गया हो, वल्कि यो कहिए जैसे लम्बी जुदाईके बाद माँ मिल गई हो। उनका सौम्य चेहरा देखकर मैं एकदम आश्वस्त हो गया। उन्होने मेरे व्यक्तिगत जीवनके वारेमें, आफ्रिकामे मेरे कामके वारेमे, बड़ी बारीकीसे छोटीसे-छोटी बाते पूछनी शुरू की, इस प्रकार उन्होने मेरे हृदयमे घर कर लिया। उनसे जुदा होते समय मैंने अपने मनमे कहा — "तुम्ही हो वह, जिसकी मुझे तलाश थी।" तबसे गोखलेने मुझे अपनी आँखोसे ओझल नही होने दिया। १९०१ में जब मैं[2] दुबारा दक्षिण आफ्रिकासे आया, तो हम एक-दूसरेके और भी नजदीक आये। उन्होने जैसे मुझे अपने हाथमें लेकर गढना शुरू कर दिया। उन्हे इसका बहुत खयाल रहता था कि मैं कैसे बोलता हूँ, कैसे कपडे पहनता हूँ, कैसे चलता हूँ, क्या खाता हूँ इत्यादि। मेरी माँ भी मेरा इतना खयाल नही रखती होगी, जितना गोखले रखते थे। जहाँतक मुझे याद है, हम एक-दूसरेसे कुछ नही छिपाते थे। वह सचमुच पहली नजरमे प्रेम हो जानेका मामला था; यह प्रेम १९१३ की[3] कठोर तनावपूर्ण स्थितिमे भी टिका रहा। उनमें मुझे वे सारी बाते दिखी जिनकी मैं एक राजनीतिक कार्यकर्तासे अपेक्षा करता था। वे स्फटिकके समान शुद्ध, मेमनेकी भाँति विनम्र और सिहके समान शूर थे। उनमें उदारता तो इतनी थी कि वह एक दोष बन गई थी। हो सकता है उनमे इनमे से एक भी गुण न रहा हो, लेकिन मेरे लिए इसका कोई महत्त्व नही। मेरे लिए इतना ही काफी है कि मुझे उनमे कोई दोष नही दिखाई पडा, जिसको लेकर मैं उनकी भर्त्सना कर सकूं। मेरे लिए वे राजनीतिक क्षेत्रमे सबसे दोषरहित व्यक्ति थे और हैं। यह नही कि हममे मतभेद नही थे। सामाजिक प्रथाओके बारेमें अपने विचारोमे १९०१मे भी हममे मतभेद था — उदाहरणके लिए विधवा-विवाहके प्रश्नपर। पश्चिमी सभ्यताके मूल्याकनके सवालपर भी हमने देखा कि हमारे विचार भिन्न-भिन्न हैं। अहिंसापर मेरे कट्टर विचारोसे उन्होने स्पष्ट ही मतभेद प्रकट किया था। किन्तु इन मतभेदोका न उनके लिए कोई महत्त्व था, न मेरे लिए। हमे दुनियाकी कोई चीज एक-दूसरेसे अलग नही कर सकती थी। यह अटकल लगाना कि यदि वे आज जीवित होते तो क्या होता, उनकी आत्माका अपमान करना है। मैं जानता हूँ कि मैं उनके नेतृत्वमे काम करता होता। मैंने यह-सब स्पष्टीकरण इसलिए किया है कि उस गुमनाम पत्रसे मुझे चोट पहुँची है, क्योकि उसमे यह कहा गया है कि मैं अपने राजनीतिक शिष्यत्वके सम्बन्धमे धोखा देता हूँ। क्या मैंने उस दिवगत आत्माका ऋण स्वीकार करनेमें कोताही की है? मैंने सोचा मुझे गोखलेके प्रति अपनी वफादारीकी घोषणा कर

१. फर्ग्युसन कालेज, पूना।

२. गांधीजी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके कलकत्ता अधिवेशनके समय, गोखलेके साथ एक महीनेतक ठहरे थे; देखिए आत्मकथा, भाग ३, अध्याय १७, १८ और १९।

३. बात उन दिनोंकी है जब गांधीजीने सत्याग्रह छेड़नेका निश्चय किया था; देखिए खण्ड १२।

देनी चाहिए, खासकर तब जब मैं एक ऐसे खेमेमें हूँ जिसको भारतीय जनता विरोधी दल मानती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-७-१९२१

१७९. पत्र-लेखकोंसे

एक प्रशंसक : अली बन्धु खिलाफतके कोषसे निर्वाह नही करते।

आर० जे० वर्मा : जहाँ-जहाँ ताल्लुके, जिले या प्रान्तका पूरा भाग इकट्ठा नही किया जा सका है, वहाँ निश्चय ही कांग्रेस महासमितिकी बैठक के बाद भी चदा इकट्ठा करना जारी रहना चाहिए। और जो व्यक्ति अपना चंदा लिखा चुका है वह सौजन्यपूर्वक यह कहकर तो इनकार कर ही नहीं सकता कि पूरा भाग तो इकट्ठा किया ही जा चुका है। जिन वकीलोने कांग्रेसके प्रस्तावके अनुसार वकालत बन्द कर दी थी, वे यदि फिर वकालत आरम्भ करे तो शिष्टाचारका तकाजा तो यह होगा कि वे किसी कांग्रेस कमेटीमे पद-ग्रहण न करे।

'स्वराज्य' : यदि कोई स्वदेशी भण्डार जापानी कपडेको स्वदेशी कपडेके नामसे बेच रहा है, तो निश्चय ही उसका भडा-फोड़ किया जाना चाहिए और उसका बहिष्कार किया जाना चाहिए। इस तरहकी धोखाधड़ीके विरुद्ध विवेकपूर्ण सक्रिय लोकमत तैयार करना अत्यन्त अचूक उपाय होता है। इसके अतिरिक्त लोगोको सब तरहका बारीक कपड़ा त्याग देना चाहिए। हाथ-कते सूतके और हाथ-बुने कपडेमें भ्रमकी गुजाइश ही नही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-७-१९२१

१८०. सन्देश : धारवाड़की जनताको

[१४ जुलाई, १९२१ के पूर्व]

धारवाडमे गवर्नमेंटकी कार्रवाइयोको मैं अत्यन्त ध्यानपूर्वक देख रहा हूँ। जो लोग सरकारी जुल्मके शिकार हुए है उनके सम्बन्धियोको मैं बधाई देता हूँ और जनताको भी उसके धैर्य और सहनशीलताके लिए बधाई देता हूँ। मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि धारवाड़के निवासियोका उत्साह गिरफ्तारियोके बावजूद मन्द नही पडा। मुझे विश्वास है कि यदि हम लोग अपने धैर्य और अहिंसाके सिद्धान्तके अनुसार काम करते रहे तो धारवाड़ जैसी घटनाएँ स्वराज्य-सिद्धिमे बहुत सहायक होगी। ज्ञानपूर्वक बदला न लेना जनताके साहसको दूना कर देता है और

उनके उद्देश्यकी पवित्रता बढ जाती है। इस कारण सरकारी दमनसे भयभीत हुए बिना हमको अपने लक्ष्यकी ओर बढते रहना चाहिए। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि स्थानीय दलबन्दी और झगडोके कारण धारवाडका मामला कुछ ज्यादा उलझ गया है। मेरा सभीसे यह अनुरोध है कि इस समय जो खतरा हम सबके सामने खड़ा है उसे ध्यानमे रखते हुए हमे अपने आपसी मतभेदोको भूल जाना चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि यदि सब नही तो कमसे-कम असहयोगी अवश्य ऐसा करेगे। आपसके लोग यदि कुछ ज्यादती भी करे तो उसकी परवाह न की जाये, तो विरोधियोका वैमनस्य स्वत शान्त हो जायेगा। 'विरोधको दूर करनेका प्रेम और औदार्यसे बढकर अन्य कोई उपाय नही है'।

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १४–७–१९२१

१८१. पत्र : एक संवाददाताको[१]

लैबर्नम रोड
बम्बई
१४ जुलाई, १९२१

प्रिय महोदय,

आपने जो-कुछ पूछा है उसके सम्बन्धमे मेरा उत्तर यह है कि यदि कोई सनातनी हिन्दू कुछ निश्चित स्थितियोमे स्वच्छताके साथ पकाया गया विशुद्ध निरामिष भोजन किसी मुसलमान या किसी दूसरे व्यक्तिके साथ खाता है तो उसके लिए ऐसा करना अवैध नही है।

मौलाना शौकत अलीने स्वर्गीय लोकमान्य तिलककी अर्थीको कन्धा देनेपर खेद प्रकट किया है इसके सम्बन्धमे मुझे यह कहना है कि उन्होने स्वत इस कार्यपर खेद प्रकट नही किया है, बल्कि एक हिन्दूकी अर्थीको कन्धा देकर उन्होने इस्लामकी परम्पराका अनजानेमें जो भग किया है, उसके लिए उपस्थित मौलानाओंसे क्षमा माँगी है।

उनकी यह क्षमा-याचना दिवगत आत्माके प्रति उनके अक्षुण्ण आदरभावसे सर्वथा मेल खाती है।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

अग्रेजी पत्र (एस० एन० ७५७१)की फोटो-नकलसे।

१. पत्र पानेवाले का नाम ज्ञात नही है।

१८२. पत्र : मणिबेन पटेलको

बम्बई
शुक्रवार, १५ जुलाई, १९२१

चि० मणि,

तुम्हारे पत्रका लम्बा उत्तर देनेको जी करता है। परन्तु उतना समय नहीं है। अब रातके ११ बजेंगे। परन्तु सवालका जवाब दे दूं। जो [विदेशी] कपड़ा व्यापारके लिए रखा गया हो उसे जलाने या दे देनेका सवाल ही नहीं है।

पत्रिकाएँ[1] तो मैं अभी पढ़ भी नहीं सका। शराब बेचनेवालों के हमले हम जितने अधिक सहन करेंगे उतना अधिक हमारा काम बढ़ेगा।

बापूके आशीर्वाद

मणिबेन
द्वारा/श्री वल्लभभाई झवेरभाई पटेल
भद्र, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो: मणिबहेन पटेलने

१८३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

शुक्रवार [१५ जुलाई, १९२१ या उसके पश्चात्][2]

भाईश्री वल्लभभाई,

भाई गिडवानीसे खूब बातें हुईं। वे परेशान हैं। काका और आश्रमवासियोंके खिलाफ कुछ शिकायत है। आप सबको जमा करके निपटारा कर दें। काकाकी तरफसे परेशानी कैसे होगी, यह समझमें नहीं आता। काकाने इस बार तो कोई बातचीत नहीं की। सारा असन्तोष मिट जाये तो अच्छा।

अनसूयाबेनके अनुदानका[3] निपटारा कर डालें। उनके पास जाइये और जो रकम चाहिए उसका चैक दे दीजिये।

१. शराबबन्दी आन्दोलन-सम्बन्धी पत्रिकाएँ।

२. यह पत्र ११ जुलाई, १९२१ को मणिबेन पटेलको लिखे पत्रके बाद लिखा गया होगा जिसमें गांधीजीने विट्ठलभाईसे खादीके सम्बन्धमें बात करनेका उल्लेख किया है।

३. स्कूलोंके लिए।

विट्ठलभाईके साथ फिरसे खूब बातें हुईं, यह मणिबेन या डाह्याभाईसे कहिये। मैं मानता हूँ कि विट्ठलभाई अब चरखेका महत्त्व कुछ अधिक समझते हैं। मुझे यह जरूर लगता है कि उनका सही क्षेत्र कौंसिल है। वे लोगोंमें पैठकर, उनमें घुलमिल-कर सेवा नहीं कर सकते। ऐसा नहीं है कि वे सेवा नहीं करना चाहते। परन्तु इस चीजको उन्होंने अपनेमें बढ़ाया नहीं है। कौंसिलोंमें जाकर काम करनेकी योग्यताको बढ़ाया है। मेरे खयालसे दोनोंके लिए अलग-अलग गुण चाहिए। बम्बईमें विट्ठलभाईकी कोई निन्दा करता हो, सो तो मैंने देखा ही नहीं।

मोहनदासके वन्देमातरम्

भाईश्री वल्लभभाई पटेल, बैरिस्टर
भद्र, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो : सरदार वल्लभभाईने

१८४. सन्देश : जनताके नाम[1]

[१६ जुलाई, १९२१ के पूर्व][2]

आप अपने घरसे आज ही विदेशी कपड़े हटा दें, उनको पटणी भवन या किसी निकटतम स्थानवाली कांग्रेस कमेटीको दे दें और उससे रसीद ले लें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१. भूलेश्वर जिला कांग्रेस कमेटी द्वारा जारी किये गये एक पर्चेमें गांधीजीका यह सन्देश छापा गया था।

२. इस सन्देशकी तिथि उपलब्ध नहीं है; किन्तु सम्भवतः यह और इसके बादका शीर्षक १६ जुलाई, १९२१ के "बहिष्कारके उपाय" लेखसे पहले लिखे गये होंगे।

१८५. स्वदेशी व्रत[1]

[१६ जुलाई, १९२१ के पूर्व][2]

मैं, निम्न हस्ताक्षरकर्त्ता, अन्त करणपूर्वक तथा ईश्वरको साक्षी करके प्रतिज्ञा करता हूँ कि १ अगस्त, १९२१; सम्वत् १९७७, आषाढ वदी १२, सोमवारके दिनसे निम्नलिखित तीन व्रतोमें से एकका पालन करूँगा:

१. मैं शुद्ध स्वदेशी वस्त्र पहनूंगा।

२. मैं मिलके कते सूतसे हाथकरघेपर बुने वस्त्रका प्रयोग करूँगा।

३. मैं भारतकी मिलोंमे कते और बुने वस्त्रोका प्रयोग करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१८६. बहिष्कारके उपाय

बम्बई

१६ जुलाई, १९२१

बहिष्कारका काम चुपचाप हो रहा है और खद्दरकी माँग बहुत बढ गई है। यद्यपि विदेशी कपड़ा न मँगानेके प्रतिज्ञा-पत्रपर ७ व्यापारियोंने ही अबतक हस्ताक्षर किये है, तथापि बहुतोंने उसके लिए ऑर्डर देना बन्द कर दिया है और दिये हुए ऑर्डर रद कर रहे हैं। दु खकी बात है कि कलकत्ताने इस सम्बन्धमे बहुत ही कम कर्त्तव्य-पालन किया है। सभी व्यापार-केन्द्रोमे सगठित रूपसे और जोर-शोरसे बहिष्कारकी कोशिश होनी चाहिए। मारवाड़ी व्यापारियोको उचित है कि इस समय अपनी स्वदेश-भक्तिका प्रमाण दे। देशके सब स्त्री-पुरुषोको चाहिए कि वे किसी भी दलके पक्षपाती क्यों न हो, लेकिन विदेशी कपड़ेको सदाके लिए त्याग देनेमें अपनी शक्तिभर कुछ उठा न रखे।

१ अगस्तको, जो लोकमान्य तिलकके वार्षिक श्राद्धका दिन है उस दिन भारतमें कही भी हडताल न होनी चाहिए। जनताको यह सोचकर कि हमारा बल बढ रहा

१. 'बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स' के अनुसार बम्बई प्रेसीडेन्सीकी भिन्न-भिन्न स्वदेशी सभाओंको इस प्रतिज्ञापर लोगोंसे हस्ताक्षर करानेके आदेश दिये गये थे।

२. ऐसा लगता है कि इस प्रतिज्ञाका मसविदा स्वय गाधीजीने तैयार किया था। इसकी सही तिथि मालूम नही है तथापि अनुमान है कि यह विदेशी वस्त्रके बहिष्कार सम्बन्धी निर्देश-पत्रके थोड़ा आगे-पीछे ही प्रचारित किया गया होगा। देखिए अगला शीर्षक।

है और लक्ष्यकी ओर हमारी गतिका वेग वढ रहा है, उस दिन तो खुशी मनानी चाहिए। स्वर्गवासी देशभक्त (लोकमान्य)की स्मृतिमे उस दिन शोक मनाना उचित नही है। . .

काग्रेस कार्यकर्त्ताओको जनतामे स्वदेशीके प्रति अनुराग अवश्य उत्पन्न करना चाहिए। जवतक विदेशी कपडेका वहिष्कार पूर्ण रूपसे न हो जाये तवतक वहिष्कारके लिए लोगोको उत्साहित करना और खद्दर तैयार करना उनका प्रधान कर्त्तव्य होना चाहिए। इस सक्रमणकालमे हमे आधेसे कम कपडेपर गुजारा करना चाहिए। नही तो उसकी कीमत बहुत ज्यादा वढ जायेगी और वस्त्रके पूर्ण अकालका कष्ट सहना पडेगा। जवतक हर घरमे चरखा न चलने लगे और हरएक जुलाहा हाथका सूत न बुनने लगे, हमे कपडेको वडी कजूसीसे वरतना चाहिए।[1]

आज, १८-७-१९२१

१८७. सन्देश : अलीगढ़की जनताको

१६ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने इस आशयका एक सन्देश भेजा है कि अलीगढ़-काण्डसे उनको मार्मिक व्यथा हुई है। उन्होंने आशा व्यक्त की है कि मंजिलके इतने निकट पहुँचनेपर अब अलीगढ़की जनता उत्तेजना दिखाकर या हिंसाका सहारा लेकर या असहयोगियो अथवा अन्य किन्हीं लोगों द्वारा की गई हिंसाकी जिम्मेदारी लेनेसे इनकार करके कोई कमजोरी नहीं दिखायेगी और इस तरह घड़ीकी सुई पीछेकी ओर घुमानेकी कोशिश नहीं करेगी।[2]

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १७-७-१९२१

१. मूल हिन्दीमें लिखे इस लेखका आजमें उपलब्ध यह पाठ भाषाके साधारण सुधारोंके साथ यहाँ दिया गया है।

२. यह सन्देश उर्दू और हिन्दी, दोनोंमें प्रचारित किया गया था और स्थानीय नेताओंने अलीगढ-काण्डकी सचाईका पता लगानेकी वड़ी मुस्तैदीसे कोशिश की थी।

१८८. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

१६ जुलाई, १९२१

श्री गांधीने कहा : हमने जिन बड़े-बड़े कामोंका बीड़ा उठाया था उनमें से एक पूरा हो गया है, लेकिन अभी एक बड़ा और कहीं मुश्किल काम, जो हमें स्वराज्य हासिल करनेसे पहले पूरा करना है, बच रहा है। जिन लोगोंने एक करोड़ रुपये इकट्ठे करनेका काम हाथमें लिया है वे लगातार मेहनत और कोशिश करके उसे पूरा कर सकते हैं, इनके बिना दुनियामें कुछ भी हासिल करना मुमकिन नहीं होता। इस काममें बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ हैं और इसमें जो त्याग करना पड़ेगा वह पैसा कमानेके श्रमसे अधिक ही है। यदि हम स्वराज्य हासिल करना चाहते हैं, यदि हम चाहते हैं कि खिलाफत और पंजाबके उन अन्यायोंका प्रतिकार हो जिन्हें अब वाइसराय तक हमसे भूलने और माफ करनेके लिए कह रहे हैं, तो हमें अपने देशके लिए यह त्याग करना ही पड़ेगा; इसके सिवा कोई चारा नहीं है। हम कमसे-कम समयमें स्वराज्य चाहते हैं। बिना जी-तोड़ मेहनतके उसे हासिल नहीं किया जा सकता। और यदि मुझे सच-मुच लगता कि यह कर्त्तव्य पूरा करने लायक शक्ति हमारे अन्दर नहीं है, तो मैं आपसे कभी स्वराज्यकी बात ही न करता। लेकिन आपके अन्दर शक्ति मौजूद है, आपको सिर्फ उसको पहचानना है, महसूस करना है। हृदयकी विशालतासे प्रेरित होकर एक बहनने मेरे पास इस कोषमें एक साड़ी भेजी है, जिसकी कीमत करीब ९०० रुपये बैठती है। उसका वजन करीब १२ से १५ पौंड है। मुझे अचम्भा तो इस बातका है कि वे इतनी भारी साड़ी पहनती कैसे होंगी। उसमें जरीका काफी काम है। इसमें रत्ती-भर भी शक नहीं कि यह साड़ी देते वक्त उनका दिल भारी हो आया होगा। वे इस साड़ीको पहनकर काफी खुशी महसूस करती होंगी। आप जितनी बहनें यहाँ मौजूद हैं, आपको अपने देशकी खातिर खद्दरकी साड़ियाँ ही पहननी चाहिए; वे इतनी भारी भी नहीं होतीं।

बहनोंने खुशी-खुशी धन और अपने आभूषण दिये हैं। मैं जानता हूँ कि अपने बढ़िया वस्त्रोंको इस तरह दे देना कोई आसान काम नहीं है। पर मुझे उम्मीद है कि आप यदि इस राष्ट्रीय प्रयत्नमें अपना पूरा-पूरा योग देना चाहती हैं तो यह त्याग अवश्य करेंगी। एक करोड़ रुपयेका योगदान काफी अच्छा योगदान है। इससे ज्ञात होता है कि लोग स्वराज्य हासिल करनेकी जरूरत कितनी गहराईसे महसूस करते हैं, लेकिन यह त्याग नहीं है। विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारमें अपने सुख और अपनी रुचिको भी छोड़ना पड़ेगा। स्त्री-पुरुष दोनोंसे यह त्याग अपेक्षित है। आज मेरे पास लन्दनसे हाल

१. यह सभा परेलके मोरारजी गोकुलदास हॉलमें हुई थी।

ही में लौटे दो भारतीय नवयुवक आये थे। उनमें एक बंगाली था और दूसरा पारसी। दोनों बड़े सच्चे दिलसे बातें कर रहे थे। मैंने उनके कई सवालोंके जवाब दिये और उनसे सिर्फ एक सवाल पूछा: क्या वे अपने विदेशी वस्त्र छोड़नेके लिए तैयार हैं? उनकी बातोंमें कोई भी दुराव-छिपाव नहीं था और दोनों ही अपने देशसे प्रेम करते थे। दोनोंने स्वीकार किया कि विदेशी वस्त्रोंका त्याग ही उचित है। लेकिन उनमेंसे एकने कहा कि वह अपने-आपमें इतनी शक्ति महसूस नहीं करता कि विदेशी वस्त्र त्याग सके। पर इस बातको भी वह पूरी तरह मानता था कि यदि लोग विदेशी वस्त्रों-तकका त्याग नहीं कर सकते, तो इसका मतलब होगा कि वे स्वराज्यके लिए तैयार नहीं हैं।

मैंने स्वराज्य लेनेके लिए एक सालकी अवधि निश्चित की है। मैं उसका पूरा महत्त्व और उसका अर्थ समझता हूँ। मैंने उसके लिए कुछ निश्चित शर्तें रखी हैं। कांग्रेसने उनको अपने प्रस्तावमें शामिल कर लिया है। भारतकी बुराइयोंकी क्या दवा होनी चाहिए, इसे मैं उतनी ही अच्छी तरह जानता हूँ जितना कि एक डाक्टर अपने मरीजके रोगके बारेमें जानता है। लेकिन यदि मरीज डाक्टरकी बतलाई दवा न करे और इसलिए चंगा न हो पाये, तो उसमें डाक्टरका क्या दोष? मैंने एक दवा बताई है, जिसे मैं समझता हूँ कि भारत बिना-किसी ज्यादा कठिनाई के सेवन कर सकता है और उसे पचा सकता है। कांग्रेसने देशके सामने जो कार्यक्रम रखा है वह अपने आपमें सचमुच त्रुटि रहित है। उस कार्यक्रममें स्वदेशी भी शामिल है। स्वदेशीको आधे मनसे अपनाकर काम नहीं चलेगा, उसे पूरी तौरपर, हर क्षेत्रमें स्वीकार करना पड़ेगा।

इस विषयमें अपनी पूरी रजामंदी जाहिर करनेका शानदार मौका आपके सामने है। पहली अगस्त आ रही है। क्या हमने अपने-आपको इस योग्य बना लिया है कि हम लोकमान्यकी पुण्य-तिथि मना सकें? क्या हम इस योग्य बन पाये हैं कि लोकमान्यके दिये हुए मन्त्रका उच्चार कर सकें? जिस तरह हर हिन्दूको गायत्री-पाठ करनेसे पहले आचमन आदि करके शुद्ध होना पड़ता है, और मुसलमानोंको नमाज पढ़नेसे पहले वजू करनी पड़ती है, तभी उसमें असर पैदा होता है। इसी तरह श्री तिलक द्वारा दिये गये स्वराज्य-मन्त्रका उच्चार करने योग्य बननेके लिए पहली अगस्तको आपको खादी पहननी पड़ेगी। मेरा खयाल है कि भारतको आर्थिक रूपसे स्वाधीन बनाने और उसके जरिये स्वराज्य हासिल करनेके लिए हर भारतीय द्वारा विदेशी वस्त्रोंका त्याग करना एक सबसे जरूरी शर्त है। इसके अनुरूप अपने-आपको बनाना भारतकी सामर्थ्यसे बाहर नहीं है। आशा है कि लोग इसके इच्छुक भी हैं।

मैं आप लोगोंका ध्यान मेसर्स शॉ वैलेस ऐंड कम्पनी द्वारा श्री कशालकरको कोई जवाब देनेका अवसर दिये बिना बरखास्त किये जानेकी ओर भी दिलाना चाहता हूँ। उनका कसूर सिर्फ इतना था कि उन्होंने हाथकी कती खादीकी टोपी पहननेका

साहस किया था। कम्पनीका मैनेजर इसको बरदाश्त नहीं कर पाया और चूँकि नवयुवक कशालकर झुकनेके लिए तैयार नहीं हुआ, इसलिए उसे बरखास्त कर दिया गया। अपने साहसके लिए वह हमारी बधाईका पात्र है। क्या यह घटना भारतकी गुलामीकी द्योतक नहीं है? दूसरे किसी देशमें यदि किसी मैनेजरने इतने मनमाने ढंगसे निजी भूषाके बारेमें अपने किसी कर्मचारीकी स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप किया होता, तो उसे या तो क्षमा-याचना करनी पड़ती या खुद बरखास्त होना पड़ता। अब भी समय है यदि मेसर्स शॉ वैलेस ऐंड कम्पनीके सभी कर्मचारी पारस्परिक सहयोग और आत्म-सम्मान-की भावना महसूस करते हों तो वे सभी, विरोधस्वरूप ही सही, खादीके वस्त्र और टोपियाँ पहनना शुरू कर दें और श्री कशालकरको बहाल करनेकी माँग करें।

मैं इस बरखास्तगीका बड़ा महत्त्व मानता हूँ। मैनेजरने एक असहाय भारतीय कर्मचारीको बरखास्त करके पूरे मामलेको एक राजनीतिक पुट दे दिया है और श्री कशालकर द्वारा किये गये एक राष्ट्रीय कार्यके प्रति रोष प्रकट करके सारे राष्ट्रका अपमान किया है। और इस बरखास्तगीसे यहाँ मौजूद सभी श्रोताओंका सम्बन्ध है। यदि अन्य कोई कारण न भी माना जाये, तो श्री कशालकर-जैसे एक नवयुवकको अपमानसे बचानेके लिए ही क्यों न हो, कर्मचारियोंको खादीके वस्त्र और टोपियाँ पहनना अवश्य शुरू कर देना चाहिए। इसी प्रकारकी घटनाओंसे आँका जायेगा कि आपकी राष्ट्रीय भावना कितनी बलवती है। श्री कशालकर-जैसे सभी अन्याय-पीड़ित व्यक्तियोंकी रक्षा करनेकी हमारी क्षमताका अर्थ स्वराज्य हासिल करनेकी हमारी योग्यता है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १७–७–१९२१

१८९. असहयोग समितिका प्रतिवेदन

केन्द्रीय खिलाफत समितिकी असहयोग समितिका प्रतिवेदन इस प्रकार है:

अंकाराकी टर्की सरकारके सम्बन्धमें उत्पन्न खतरनाक परिस्थितिको देखते हुए, केन्द्रीय खिलाफत समितिने हमसे सामना करनेका सबसे अच्छा तरीका क्या होगा यह पूछा है।

चूँकि हमारी समिति केवल असहयोग सम्बन्धी विषयोंपर विचार करनेके लिए नियुक्त की गई थी, इसलिए असहयोगके अलावा दूसरे साधनोंपर विचार करनेका हमें कोई अधिकार नहीं है। लेकिन हम समझते हैं कि अहिंसक असहयोग आन्दोलनने जो सफलता अबतक प्राप्त कर ली है उसे देखते हुए असहयोगके अलावा दूसरे किन्हीं साधनोंपर विचार करना अनावश्यक भी हो गया है। इस महीनेके अन्तमें जब कांग्रेस-के बेजवाड़ा कार्यक्रमके पालन किये जानेके परिणामोंका लेखा-जोखा किया जायेगा,

तब हम असहयोगकी सफलताओको और ज्यादा अच्छी तरह आँक सकेंगे और तभी हम अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी सलाहसे परिस्थितिका सामना करनेके लिए उपयुक्त कदम उठा सकेंगे। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक २२ जुलाईको लखनऊमें होने जा रही है।

सविनय अवज्ञा

असहयोगके सम्बन्धमे तो यह स्पष्ट है कि हमें अपना हर कदम भारतीय जनता-की तैयारीको देखकर ही निश्चित करना चाहिए। यह सुझाव दिया ही जा चुका है कि पिछले तीन महीनोंके दौरान जो प्रगति हुई है उसे देखते हुए सविनय अवज्ञा शुरू करना बिलकुल उचित जान पडता है। टर्कीके लोगोंके बारेमें ब्रिटेनकी सरकारने एक बार फिर ऐसा रुख अपनाया है जिससे मुसलमानो और भारतीयोंके मतके प्रति घोर अवहेलना प्रकट होती है। साथ ही ब्रिटिश सरकारने भारतमें असहयोग आन्दो-लनके पूर्णत अहिंसक होनेपर भी उसके दमनके लिए कानूनका जो घोर दुरुपयोग किया है, जान पडता है, उसके कारण हमे जल्दी ही सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू करनेपर विवश होना पड़ेगा। जो भी हो, चूँकि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी लखनऊकी अपनी बैठकमें इस प्रस्तावपर विचार करनेवाली है, इसलिए उसके निर्णयोंतक रुके रहना ही ठीक होगा।

फिर भी हम यह बतला देना चाहते है कि यूरोपकी परिस्थितिसे लोगोका उत्साह बढना चाहिए, खास तौरसे मुसलमानोका। उनको देशके सामने प्रस्तुत कार्य-क्रमके सिलसिलेमें — अर्थात् खिताबो, परिषदो, स्कूलो-कालेजो, न्यायालयों और रग-रूटोकी भरतीसे सम्बन्धित कार्यक्रमकी ओर — और अधिक जोरसे काम करनेके लिए उत्साहित होना चाहिए। हमारी राय है कि जो लोग सेनामे भरती होते है उन्हे अब भरतीसे पहलेसे अधिक बचना चाहिए। हम समझते है कि यदि ब्रिटिश सरकार टर्कीके खिलाफ लडनेके लिए कहे तो उसे सहायता देनेसे इनकार करना भारतीय सैनिकोंका कर्त्तव्य है। मुसलमान उलेमाओको पूरी-पूरी कोशिश करनी चाहिए कि मुसलमान सैनिकोको इस सम्बन्धमे इस्लामके धार्मिक आदेश भली-भाँति समझाये जायें, और अब सारे असहयोगियोको भी चाहिए कि वे टर्कीसे लडाई शुरू होनेकी सूरतमें कांग्रेस कार्य-समिति द्वारा भारतीय सैनिकोके कर्त्तव्यके बारेमे दी गई रायपर खास जोर दें।

असहयोग कार्यक्रमकी मुख्य बातें

सबसे पहले तो लिखित रूपमे हम अपना यह विश्वास प्रकट करना चाहते है कि बेजवाड़ा कार्यक्रमपर ज्यादा मुस्तैदीसे अमल करना नितान्त आवश्यक है क्यो कि टर्की और इस्लामके बारेमे ब्रिटिश सरकारका रवैया नि सन्देह वैमनस्यपूर्ण मालूम पडता है उससे हमे सफलतापूर्वक जूझना है। किसी भी बालिग भारतीय युवक या युवतीको कांग्रेसके रजिस्टरमे अपना नाम लिखाने या तिलक स्वराज्य-कोषमे चन्दा देनेमें तनिक भी विलम्ब नही करना चाहिए। हम अपने उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए हर घरमे चरखा चलवाना, सर्वत्र खादीका इस्तेमाल करना और विदेशी वस्त्रोका पूर्ण बहिष्कार करना नितान्त आवश्यक मानते है। साथ ही सभी लोगो, खासकर मुसलमानोको

खिलाफत समितिका सदस्य बनना चाहिए और स्मरनाके पीड़ित लोगोकी सहायताके लिए खुले हाथो चन्दा देना चाहिए, अन्यथा अंकाराकी टर्की सरकारको उनपर काफी खर्च करना पड़ेगा। उसका हाथ पहले ही काफी तग है।

इसलिए हमारा कहना है कि इन दिशाओमे दूने उत्साहसे प्रयास किया जाना चाहिए। हमे आशा है कि जनता परिस्थितिकी गम्भीरता और अविलम्बनीयताके अनुरूप ही तत्परता दिखायेगी। सारी जनता यह समाचार पाकर बहुत क्षुब्ध हो उठी है कि ब्रिटेन टर्कीके खिलाफ और भी वैमनस्यपूर्ण कदम उठानेकी बात सोच रहा है और हम इस विरोध-भावनाको ऐसा रूप देना अपना कर्त्तव्य समझते है कि वह अधिक-से-अधिक हितकारी हो, जिससे कि भारत खिलाफत और पजाबके अन्यायोका प्रतिकार करानेके अपने महान् उद्देश्य और स्वराज्य लेनेके अपने महानतम उद्देश्यको शीघ्रतासे प्राप्त कर सके। मजिल दूर नही है, लेकिन टर्कीके सर्वथा अशक्त बननेसे पहले उसकी सहायतार्थ पहुँचनेके लिए अधिकसे-अधिक प्रयत्न करना जरूरी है। हर मुसलमान-को इस आशकाको देखकर असहयोग कार्यक्रमको पूरा करनेकी दिशामे जी-जानसे जुट जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-७-१९२१

१९०. जलायें किसलिए?

खम्भातसे एक बहनने लिखा है और अन्य स्थानोसे भी पत्र आये है, उनमे पत्र-लेखक लिखते है कि विदेशी कपडोको जलानेके बदले उन्हे गरीबोको दे देना चाहिए अथवा बाहर, विदेशोको भेज देना चाहिए। अच्छी तरह से सोच-विचार करने पर भी मुझे यही लगता है कि विदेशी वस्त्रको जला ही देना चाहिए। यदि हम मानते हो कि विदेशी कपडा पहनना पाप है, इसीसे देश कगाल हुआ है, इससे अनेक बहनोको अपना घरबार तजना पडा है तो हमे विदेशी कपडेको मैल समझना चाहिए तथा जिस तरह हम अपना मैल दूसरोको नही देते उसी तरह विदेशी कपड़े रूपी इस मैलको भी हमे औरोको देनेकी बात नही सोचनी चाहिए। हमने यदि विदेशी कपड़ोको त्यागनेका निश्चय न किया होता तो हम खुद ही उन कपड़ोको पहनकर फाड देते। अब अगर हमने उनका त्याग करनेका निश्चय किया है तो हमे उनका पूर्णतया त्याग करना चाहिए। उन्हे किसीको पहननेके लिए देना तो उनका उपयोग करनेके समान है, क्योकि उन्हे किसीको देकर हम उसका पुण्य लूटना चाहते है। मुझे लगता है कि हमे वैसे फलका अधिकार नही है। हम जैसे सडे हुए अनाजको फेंक देते हैं वैसे ही हमे विदेशी कपड़ोको भी फेंक देना चाहिए। हिन्दू, मुसलमान, पारसी सबके लिए विदेशी कपडा हराम होना चाहिए। और यदि हम ऐसा मानें तो उन कपडोका कतई उपयोग न करे। यह भावना उत्पन्न करनेके लिए मैं अपने पास पडे विदेशी कपड़ोंका त्याग करना और उन्हे जला डालना आवश्यक समझता हूँ। उससे जो भावना उत्पन्न होगी उसे मैं मूल्यवान मानता हूँ। मैं लोगोमे इस हदतक जोश फैलानेकी जरूरत महसूस करता

हूँ कि विदेशी कपड़ेके सम्बन्धमे हमे धोखा देनेकी किसीकी हिम्मत न हो। इसीसे अगर हम पहली अगस्तको पहनने योग्य सभी विदेशी कपडोको जला डाले तो मैं समझूँगा कि हमने आत्मशुद्धि कर ली है।

विदेशी कपड़ेके प्रति अरुचि पैदा करनेकी हमे जरूरत है। कोई-कोई मुझसे पूछते है कि क्या इससे विदेशियोके विरुद्ध अरुचिका भाव उत्पन्न नही हो जायेगा। यह सघर्ष दुष्टताकी निन्दा करते हुए भी दुष्टके प्रति प्रेमभाव रखनेका पाठ सिखानेका सघर्ष है। मनुष्य जितनी दुष्टता करता है उतना दुष्ट होता नही। हम सब भूलसे भरे हुए है, तो फिर एक-दूसरेका तिरस्कार क्यो करे? दुष्टकी भी सेवा करना, सब धर्मोकी शिक्षा है। धर्मीकी परीक्षा उसके राग-द्वेषादिको रोकनेमे ही है। क्रोधका कारण मिलनेपर भी जो क्रोध नही करता उसी व्यक्तिने प्रभुको जाना है। मनुष्य-मात्रका कार्य प्रभुको जान लेना है। क्रोधको रोकना केवल सन्यासीका ही धर्म नही है। सन्यासीको तो अन्य अनेक कठोर व्रतोका पालन करना होता है। अतएव हम कपड़े तो जलाये लेकिन कपडा बनानेवालो पर क्रोध न करे। मैनचेस्टर और जापान कपड़ा भले बनाये किन्तु यदि हम न ले तो वे क्या कर सकते है? हम मद्यपान न करे तो मद्य-विक्रेता क्या करेगे? विवेकपूर्वक विचार करे तो स्वराज्यकी चाबी हमारी अपनी ही जेबमे है। हमे शराबकी लत लगी हुई है, उसे जला डालना चाहिए, रेशमी बारीक कपड़ेका शौक है, उसे भस्म कर देना चाहिए, अनेक तरहके पकवान खानेका शौक है, उसे छोड देना चाहिए। जबतक हम सब स्त्रियोको बहनके समान मानना नही सीखते तबतक हमे आँखोपर पट्टी बाँध लेनी चाहिए। शास्त्रकारोने जिस-जिस वस्तुके सम्बन्धमे अरुचि उत्पन्न करनी चाही है उस-उस वस्तुका इतना स्पष्ट चित्रण किया है कि उसपर मनन करनेवाले व्यक्तिके मनमे उसके प्रति अरुचि उत्पन्न हुए बिना नही रहती। लेकिन क्या उसके कर्त्ताके सम्बन्धमे अरुचि उत्पन्न करना उचित है? क्या हमे शराब बनानेवालो, विदेशी रेशम बनानेवालो, पकवान पकाने-वालो और सौन्दर्यमयी स्त्रीको जला डालना चाहिए अथवा हमें अपने विषयोको और उनकी ओर प्रलोभित करनेवाली चीजोको जलाना चाहिए। स्वराज्य कौन पायेगा? शराब छोडनेवाला अथवा शराब बनानेवाले को जलानेवाला व्यक्ति?

लेकिन जो कपड़े जलाकर कपडा छोडना न सीखे बल्कि कपडा बनानेवाले को गाली देना सीखे तो उसे कपडे जलाने ही नही चाहिए, उसे वैसा करनेका अधिकार नही है।

इतना कहनेके बाद भी जो लोग कपडे जलानेकी अपेक्षा उन्हे बाहर भेजनेका विचार रखते है, वह भी प्रशसनीय है। हमारे मुसलमान भाई स्मरना कपडा भेज रहे है, वहाँ भेजनेके लिए अगर हम विदेशी कपडा दे तो भी हमारा उद्देश्य पूर्ण हो जायेगा। परदेशी कपडेका त्याग करते है अर्थात् हम अपना प्रथम कार्य पूरा करते है। त्याग किये गये कपडोके सम्बन्धमे अगर मतभेद हो तो जिसे जैसा रुचे वैसा वह कर सकता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-७-१९२१

१९१. व्यापारी क्या करें ?

जो व्यापारी विदेशी माल बेचते है वे उसे कहाँ फेंक दे ? वे भिखारी बन जाये तो देशका क्या होगा ? क्या उन्हे नोटिस नही मिलना चाहिए ?

विदेशी मालका व्यापार करना तो सदा ही बुरा काम था। उसी व्यापारके लालचमें पड़कर तो हम फँसे, गुलाम बने, किसानोको बिना कामके चार महीने रहना पडा और अकालके लिए जरा भी पूंजी न रही। विदेशी व्यापारसे हिन्दुस्तानका सत्यानाश हो गया। ऐसा व्यापार करनेवाले क्या करे, यह प्रश्न पूछा ही नही जाना चाहिए। उन्हे शूरवीर बनना चाहिए। सभीका देशहितको समझना और उसकी खातिर स्वार्थत्याग करनेके लिए तैयार होना, इसीका नाम स्वराज्य-शक्ति है। उन्हे इस बातपर विचार करना चाहिए कि उन्होने इतने दिन व्यापार कैसे किया, और अब अपने सिरपर आनेवाली मुसीबतको झेल लेना चाहिए।

इसके अतिरिक्त विदेशी कपडेको निकालना कोई बहुत बडी बात नही है। उनका माल बाहरके देशोमे भी खप सकता है। थोड़ा-बहुत माल सामान्य रूपसे बाहरके देशोके कामका नही होता, लेकिन उसका कुछ-न-कुछ उपयोग हो सकता है, यह बात व्यापारियोको बतानेकी जरूरत नही है।

व्यापारी भिखारी हो जायेगे ऐसी बात नही, पैसा तो हाथका मैल माना गया है। व्यापारी आज कमाता है और कल गँवाता है। पैसा कमानेकी शक्तिमे ही व्यापारीकी रक्षा और निर्भयता समाहित है। पैसा तो आनी-जानी वस्तु है किन्तु व्यापार करनेकी शक्ति स्थिर रहनेवाली वस्तु है। एक व्यापारमे नुकसान उठानेवाला व्यापारी दूसरेकी तलाश कर लेता है। 'व्यापारी-बच्चा कभी भीख नही माँगेगा' ऐसे बहादुरीपूर्ण वचन मैने अनेक व्यापारियोके मुँहसे सुने है।

व्यापारी विदेशी मालके व्यापारको त्यागकर खादीका व्यापार क्यो नही कर सकता ? साठ करोड रुपयेका नया माल तैयार करना है, क्या इस उद्योगसे हजारो व्यापारी अपनी आजीविका प्राप्त नही कर सकते ? 'क्या करेगे' यह वाक्य तो आलस्यका परिचायक है।

सच तो यह है कि विदेशी कपडेके बहिष्कारमे हमे स्वराज्यकी बात सूझी ही नही है और जबतक जनताकी नस-नसमे स्वदेशीकी उत्कट भावना व्याप्त नही हो जाती तबतक बहिष्कार सफल नही होगा और तबतक स्वराज्य भी नही मिलेगा। इसलिए देशकी खातिर व्यापारी-वर्गमे कपडेके व्यापारकी आहुति देनेका जोश आना चाहिए।

व्यापारियोको बहिष्कारका नोटिस नही मिला, यह कहना अज्ञानका परिचायक है। नोटिस तो गत सितम्बरसे मिल चुका है। उसकी चर्चा भी तभीसे चली है। लेकिन व्यापारी सावधान नही हुए। कांग्रेस प्रस्ताव पास करती रहती है और वे प्रस्ताव विस्मृतिके गर्तमें विलीन हो जाते है, इसलिए उनकी कौन परवाह करता है ? समय बदल गया है, इसका ज्ञान व्यापारियोंको नही हुआ। इसमे किसका दोष है ?

सितम्बरसे मैंने लगभग प्रत्येक सभामे विदेशी कपडेके त्यागकी बात कही है। जो अनुचित धधा करते है, जो व्यसनी है, जो व्यभिचारी है, जो अन्त्यजो आदिसे द्वेष करनेवाले हैं उन्हे जबसे असहयोग, आत्मशुद्धिका यज्ञ शुरू हुआ तभीसे नोटिस मिल चुका है। उनमे से जिस-जिस बातकी जरूरत जान पडेगी उस-उस बातपर समयानुसार अधिक जोर दिया जायेगा। लेकिन सबको यह समझ लेना चाहिए कि दुराचार, लोककल्याणके विरुद्ध अर्थसग्रह, छोड दिया जाना चाहिए ऐसा नोटिस तो सबको मिल गया है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७–७–१९२१

१९२. टिप्पणियाँ

अनुकरणीय

वराड गाँवमे जो घटना घटी और जिसका हाल समाचारपत्रोमे श्री कुँवरजी विट्ठलभाईने प्रकाशित कराया है उसको पढकर किस असहयोगीको हर्ष नही होगा? अध्यापक मकनजीको उनके धैर्य और क्षमाशील स्वभावपर धन्यवाद देना उचित है। जब हम सब लोग इसी प्रकार धैर्यपूर्वक मार खाना सीख जायेंगे तब स्वराज्य मिलनेमें विलम्ब न होगा। जिस भाईने अज्ञानके कारण अध्यापक मकनजीपर अत्याचार किया उसको बराड गाँवके लोग सुगमतासे दण्ड दे सकते थे, किन्तु फिर भी उन्होने अपने रोषपर अकुश रखा इससे उनकी शुद्ध वीरता प्रकट होती है। अध्यापकके साथी पिटनेके डरसे उनको छोडकर भाग गये, उनके सम्बन्धमे चेतावनी देनेकी जरूरत है। हमे चाहे पिटनेका डर भी हो, फिर भी हमे अपने साथीको छोडकर नही भागना चाहिए, बल्कि अपने शरीरको जोखिममे डालकर भी उसकी रक्षा करनी चाहिए। रक्षा करनेमे मारनेकी बजाय मरनेके साहसकी जरूरत होती है। युद्धमे 'अपलायन' शूरवीरका — क्षत्रियका — गुण माना गया है। चारो वर्णोके लोगोमे से प्रत्येकमे कम या अधिक मात्रामे चारो वर्णोके ही गुण होने चाहिए। ब्राह्मणो और वैश्योके लिए वीरताकी आवश्यकता नही है अथवा उनमे वीरता नही हो सकती, ऐसा मानना केवल अज्ञान है। हममे से प्रत्येक व्यक्तिमे अपनी और अपने साथियोकी रक्षा करनेकी शक्ति अवश्य होनी चाहिए। जो दूसरोपर प्रहार करके अपनी रक्षा करते हैं उसके सम्मुख स्वय मरनेका जोखिम भी होता है और वीरता इस जोखिमके अनुपातसे ही नापी जाती है। इतनी आलोचना करनेका मेरा अभिप्राय यह नही है कि मैं अध्यापकके साथीके दोष बताना चाहता हूँ। हमको ये सब नये अनुभव होते रहते है। जबतक हमारे हृदयमे इतना साहस नही आता तबतक ऐसी भूले तो होगी ही। हम दूसरेको मारनेका दोष करके अपनी अहिंसाकी प्रतिज्ञाको भग न करे तो हमारे ऊपर किसी प्रकारका जोखिम नही आयेगा।

अली भाइयोंपर आरोप

एक भाई लिखते है कि वे जब जूनके महीनेमे [तिलक स्वराज्य-कोषके लिए] रुपया इकट्ठा कर रहे थे तब उन्होने अली भाइयोके सम्बन्धमें यह आरोप सुना था कि वे लोग खिलाफत समितिके रुपयोमे से अपने खर्चके लिए हर महीने छ-सात हजार रुपये लेते है। एक अन्य सज्जन लिखते है कि उनका प्रतिदिनका खर्च नब्बे रुपये आता है और यह खर्च खिलाफत समिति उठाती है। इस तरहकी आलोचना मैंने बहुतसे लोगोके मुँहसे सुनी है, इसलिए मै इन दो पत्रोका उल्लेख कर रहा हूँ। मुझे मालूम है कि यह बात बिलकुल झूठ है। अली भाई अपना खर्च खिलाफत समितिसे लेते ही नही। उन दोनोका खर्च उनके निजी मित्र चलाते है और वह खर्च होता भी कम है। इसकी अपेक्षा यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि इन दोनो भाइयोने देशके लिए और इस्लामके लिए फकीरी ले ली है। चार वर्ष पहले उनका जितना खर्च था और वे जिस तरह रहते थे उससे उनकी आजकी खादीकी पोशाक और आजके सादा खानपानकी क्या तुलना!

'स्वदेशी' टोपी

देशद्रोही अथवा निरे स्वार्थी लोगोके कारण हम लोग गुलाम हुए और स्वार्थका त्याग न कर सकनेके कारण इस समय भी गुलाम बने हुए है। जिस समय स्वदेशीके प्रचारका काम जोरसे चल रहा है उस समय धोखेबाज लोगोने अपनी सरगर्मी बढा दी है। मेरे पास तीन शिकायते आई है। बम्बईमे कुछ लोग गली हुई विदेशी बनात, विदेशी साटन और विदेशी धागेका प्रयोग करके टोपियाँ बना रहे है और स्वदेशी बताकर मेरे नामका उपयोग करके बेच रहे है। ये टोपियाँ काली है। जो लोग स्वदेशी टोपियाँ पहनते है उनको मेरी सलाह है कि वे सफेद और खादीकी बनी हुई टोपियाँ ही पहनें। सफेद टोपी जितनी सुन्दर, साफ-सुथरी और सुविधाजनक होती है उतनी रंगीन टोपी नही होती। यह टोपी रोज धोई जा सकती है। काली टोपीमे मैल खपता है और बदबू आने लगती है। जिन टोपियोमे सदा पसीना बसा रहता है उन टोपियोको सफाई-पसन्द लोग कभी नही पहनेंगे। जिस टोपीमे चमड़ा लगा होता है वह दिमागके लिए भी ठीक नही होती। हिन्दुओको तो चमड़ा लगी हुई टोपी सुहा ही कैसे सकती है? अग्रेज चमड़ा लगी टोपी पहनते है, किन्तु वे तो जब बाहर जाते है तभी उसको लगाते है और थोडे-थोड़े दिन बाद उसे बदलते भी है। हम लोग तो एक ही पगडी या टोपी वर्षो पहनते है और उसे हर समय सिरपर लगाये रहते है, इस कारण हमारे लिए चमडा लगी पगडी या टोपी अवश्य ही असह्य होगी। खादीकी टोपी साफ-सुथरी और हलकी होनेसे बिलकुल हानिरहित होती है। फिर यदि खादी बहुत मोटी हो तो उसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग टोपियाँ बनानेमें ही होता है, उसका इससे अच्छा उपयोग और क्या किया जा सकता है? जिन लोगोको सिरसे लेकर पैरतक खादी पहननेका शौक हो गया है वे खादीका व्यवहार सिरसे ही आरम्भ करे। इस खादीकी टोपीको अमीर और गरीब सभी पहन सकते है। अमीर अपनी खादीकी टोपीको रोज धोयेगा, उसमें दर्जी बेलबूटे बना देगा और उसमे कई तहे बना देगा। टोपीमे इस तरहका

फेरफार भले ही हो, किन्तु सभीके सिरोंपर टोपी एक ही तरहकी हो इस बातका ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिए। अन्तमे निर्णय एक ही होना चाहिए कि केवल खादीकी ही टोपी स्वदेशी मानी जाये। जिस टोपीपर कोई छाप लगानेकी जरूरत न हो, जिसे बालक भी पहचान सके, स्वदेशी टोपी ऐसी ही होनी चाहिए। जिस तरह हम लोग अपने मस्तिष्कमे से छल-कपट और आडम्बर निकालकर स्वराज्यवादी बन सकते हैं उसी तरह हमे टोपीमे से भी छल-कपट और आडम्बरको निकाल देना चाहिए। जो लोग स्वदेशीके नामपर विदेशी टोपियाँ बेचते है उनसे मेरा निवेदन है कि यदि वे अपना धन्धा ईमानदारीसे कर ही न सकते हो तो अपनी बेईमानीका प्रयोग इस देशके अहितके काममे तो न करे। चोरोकी भी कोई निश्चित नीति होती है। चोर चोरका माल नही चुराता। गरीबोके घर भी चोरी न करनेवाले चोर होते है। समस्त देशमे यह जो महायज्ञ चल रहा है ऐसेमें क्या हम स्वार्थ-सिद्धिके नीचतापूर्ण विचारको छोड़कर ऊँचे नही उठ सकते? मै जनतासे साफ-साफ कहना चाहता हूँ जो लोग इस तरह जनसाधारणको ठगते हैं उनकी दुकानोका सर्वथा बहिष्कार करना ही उचित है।

'स्वदेशी लट्ठा'

जो बात टोपीके सम्बन्धमे कही जा सकती है वही लट्ठेके सम्बन्धमें भी कही जा सकती है। शिमलासे पत्र मिला है कि वहाँ लोग जापानी लट्ठेपर से जापानकी छाप मिटाकर, उसे फिरसे धोकर, उसपर बम्बईकी छाप लगाकर विदेशी मालको स्वदेशी-के नामसे बेच रहे हैं और इसमे कुछ मिल भी हिस्सा ले रहे हैं। मुझ आशा है कि इस मौकेपर कमसे-कम मिल-मालिक तो देशको धोखा देनेमे भाग नही लेगे। इस शुद्ध प्रवृत्तिके समय देश उनसे सहायताकी ही आशा करता है।

खरीददारोको भी सावधान रहनेकी जरूरत है। यदि लोग बारीक कपडेका मोह छोड दे तो उनके ठगे जानेकी सम्भावना कम हो जायेगी। लोग तरह-तरहकी माँडी लगे हुए मालका त्याग करके स्वदेशी कपडेको परख सकेगे। इन सब परेशानियोसे बचनेका उपाय बिना धुली खादी खरीदना है। परन्तु हर गाँवके लोग यदि अपनी आवश्यकताकी खादी स्वय बना ले तो कोई किसीको ठग ही नही सकेगा।

मिल-मालिक स्वदेशी आन्दोलनमे जितनी सहायता कर सकते है उतनी सहायता करना किसी दूसरेके लिए सम्भव नही। अहमदाबादके मिल-मालिकोने तिलक स्वराज्य-कोषमे रुपया देकर अपना नाम उज्ज्वल किया है। श्री अम्बालाल सारा-भाईने निश्चय किया है कि वे कपडेके दाम नही बढायेगे और दुकान खोलकर फुटकर ग्राहकोको थोकके भावमे कपडा देगे। उन्होने इस प्रकार स्वदेशीके आन्दोलनमें भाग लेनेका विचार प्रकट करके कारखानोके मालिकोका यश बढाया है। चूंकि उन्हे असहयोगसे भय लगता है इसलिए वे हमें अपनी पूरी सहायता नही दे सके हैं। मै आशा करता हूँ कि जब असहयोगी अपने सयमसे सबको निर्भय बना देगे तब वे असहयोगमे भी पूरी तरह भाग लेगे। इस बीच उनका वह पत्र, जिसमे उन्होने भाव न बढानेका निश्चय किया है, हमारे लिए नि.सन्देह बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।

मुझे आशा है कि अन्य मिल-मालिक भी श्री अम्बालालका अनुकरण कर स्वदेशी आन्दोलनमें सहायक होंगे।

कपड़ेके व्यापारियोंने तो मुझे यहाँतक बताया है कि कपड़ेके वर्तमान भाव न बढाये जायें [वे घटाये जाने चाहिए]। वे आज तो जापानी मिलोंके मालके भावोंकी अपेक्षा भी ऊँचे है। मिल-मालिकोंको इस सम्बन्धमे सलाह करके कोई निर्णय अवश्य करना चाहिए।

उनको यह जाँच करनी चाहिए कि देशमें कितने कपडेकी जरूरत है। उसको देखकर ही उन्हे दूसरे देशोसे कपड़ेके आर्डर लेने चाहिए। यहाँसे दूसरे देशोंको सूत भी बहुत जाता है। उसके निर्यातमे भी आवश्यक फेरफारकी जरूरत होगी। सम्भव है कि इस मामलेमे और भी अधिक विचार करनेकी जरूरत हो। कुछ लोगोंको ऐसा लगेगा कि दूसरे देशोके लोगोंको हमारे कपडेकी जबतक माँग है तबतक जितना कपडा हम आजतक उनको देते आये हैं उतना तो हमे उनको देना ही पडेगा। हमारी स्थिति इग्लैंडकी स्थितिसे भिन्न है। इग्लैंड और हमारे बीचके व्यापारमें एक तरहकी जबरदस्ती है। शायद दूसरे देशोंके साथ हमारे व्यापारमे यह जबरदस्ती न हो। दूसरे देशोके साथ हमारे व्यापारिक सम्बन्धोंका मामला एक भिन्न और नाजुक मामला है। तीन बातोंके बारेमें कोई सन्देह नही है। अफीमका व्यापार नितान्त अनीतियुक्त है। इस सम्बन्धमे भारत सरकारने जो अन्याय किया है उसमें हम पूरी तरह शामिल रहे हैं। इसमे हमने चीनको नुकसान पहुँचाकर जो पाप किया है वह तो सदा हमारे सिर रहेगा ही। जबतक हिन्दुस्तानकी आवश्यकता पूरी नही होती तब-तक यहाँसे अन्न और कपास बाहर भेजना ही नही चाहिए। इसके विपरीत हमारे देशसे बहुत-सा अन्न लड़ाईके समय बाहर भेजा गया। कपासके सम्बन्धमें हमने कितना बडा अपराध किया है उसका ज्ञान तो हमे आगे चलकर होगा।

मिल-मालिकोंसे हमे जो आखिरी मदद माँगनी है वह है मालकी शुद्धताके सम्बन्ध-मे। उन्हे विदेशी सूतका बना माल देशी कहकर नही बेचना चाहिए और कपडेमें बेहद माँडी नही लगानी चाहिए। मुझे आशा है कि मालिक आपसमे सलाह करके इन बातोंके सम्बन्धमें ऐसा निर्णय करेंगे जिससे देशके हितकी रक्षा हो।

किसका फायदा?

असहयोगसे धनी लोगोंके सिवा और किसको लाभ पहुँचेगा। असहयोगमे दगे-फसाद या लडाई-झगडे हुए तो उनमे कौन-कौनसे लोग शामिल होंगे?

इस तरहके दो प्रश्न एक पत्र-लेखकने पूछे हैं। यदि असहयोगसे गरीबोंको फायदा न पहुँचा तो उससे किसीको भी फायदा नही पहुँच सकता। असहयोगसे किसी भी योग्य सस्था अथवा व्यक्तिको हानि नही पहुँचेगी, बल्कि उससे सभीको लाभ पहुँचेगा। यह शस्त्र ऐसा है जिससे गरीबसे-गरीब आदमीके अधिकारकी रक्षा होगी।

असहयोगमे दगे-फसाद या लड़ाई-झगड़े होते ही नही, इसलिए उनमें कौन भाग लेगा यह प्रश्न ही नही उठता। यदि असहयोगमे दगे-फसाद या लडाई-झगड़े हो तो वह असहयोग नही रह जाता। वहाँ असहयोग समाप्त हो जाता है। यदि देशमे दगे-फसाद

हो जाये तो समझना चाहिए कि देशने असहयोगका त्याग कर दिया है। ये दोनों परस्पर विरोधी बाते है। यदि दगे-फसाद होगे तो बदमाश लोग एक क्षणके लिए ऐसा सोच सकते है कि उनसे उन्हे फायदा पहुँचेगा। ससारमे सदा ऐसा होता आया है। जिस पत्र-लेखकने उक्त दो सवाल पूछे है वह इस बातको भूल गया है कि यह लड़ाई धर्मकी है, आत्मशुद्धिकी है, ईश्वरसे डरनेकी है और मनुष्यसे निर्भय रहनेकी है।

सरौतेके बीच सुपारी

एक सहानुभूति रखनेवाले पारसी भाईने पारसियोकी सभाके बाद कुछ शकाएँ उठाई थी। ये शकाएँ विचारणीय है इसलिए मै उनके सम्बन्धमें यहाँ सक्षेपमे विचार करता हूँ। ये भाई कहते है

> (१) आपके जैसे विचार सब नेताओंके नहीं हैं; क्या आप यह जानते हैं? कदाचित् आप यह नहीं जानते कि बम्बईमें पारसियोके सम्बन्धमें जो सामान्य विचार प्रकट किये जाते हैं उनमें द्वेष-भावना होती है। इसको रोकनेके लिए आप क्या उपाय कर रहे हैं और आगे क्या उपाय करेंगे?
>
> (२) पारसियोंकी स्थिति ऐसी ही है जैसे "सरौतेके बीच सुपारी" की होती है। उनमें पूरी देशभक्ति है, इसलिए वे देशका कार्य करना नहीं छोड़ सकते। उसी तरह वे अबतक जिस सुरक्षित व्यवस्थामें रहते आये हैं उसको खतरेमें डालना भी उन्हें कठिन लगता है। यदि आपके हाथसे देशकी बागडोर निकल जाये अथवा आपकी मृत्युके बाद देशमें इस महान् जागृतिके परिणाम-स्वरूप लोगोंमें समभाव न रहे तो पारसी लोग अवश्य ही कुचले जायेंगे।

ये दोनो शकाएँ ऐसी नही है जिन्हे यो ही छोड़ दिया जाये। मैंने पारसियोके सम्बन्धमे जो विचार व्यक्त किये है वे विचार यदि समस्त समाजके न हो, मेरे अपने ही हो तो लेखकने ऊपर जो भय प्रकट किया है वह विचारणीय माना जाना चाहिए। यह बात तो सच है कि किसी-किसी क्षेत्रमे पारसियोकी जो आलोचना की जाती है उसमे द्वेषभाव होता है। पारसियोकी जाति बहुत छोटी जाति है इसलिए उनका दोप आसानीसे निगाहके सामने आ जाता है और उनके गुणोपर परदा पड़ जाता है। इस कारण हमे सदा उनके गुणोपर ही दृष्टि रखनी चाहिए। जब हम लोगोके गुणोको ही देखेगे तभी उनपर हमारा प्रेम बढ़ेगा। पारसी लोग हमारे भाई है, यह समझकर हमे उनकी उदारता, धैर्यशीलता, विनय, बुद्धिमत्ता, आस्तिकता और भारी सादगीको अवश्य देखना चाहिए और उनके किसी भी ऐसे दोषको न देखना चाहिए जो हममे भी न हो। पारसी लोग भारतमे रहते है इससे भारतकी कोई हानि हुई है ऐसी कोई बात खयालमे आ ही नही सकती। उनके भारतमे आनेसे भारतको लाभ पहुँचा है, यह बात हम आसानीसे देख सकते है। पारसी लोगोपर सबसे बडा आरोप तो यह है कि वे पाश्चात्य सभ्यताकी कोरी नकल कर रहे है और भारतीय सभ्यताको दिनपर-दिन छोडते जा रहे है। यदि हम गहराईसे सोचें तो हमें मालूम होगा कि यह बात भी सही नही है। उनपर पाश्चात्य सभ्यताका बहुत अवाछनीय असर हुआ है,

यह मैं स्वीकार करता हूँ। किन्तु यह असर जितना हिन्दुओ और मुसलमानोंपर हुआ है उतना ही पारसियोपर भी हुआ है। किन्तु उन्होने जो फेरफार किया है वह इस कारण स्पष्ट दिखाई देता है कि उनकी सख्या अधिक नही है और वे प्राय बम्बईमे ही रहते है। इसके विपरीत जो हिन्दू और मुसलमान बिलकुल अग्रेज बन गये है, जहाँ-तहाँ बिखरे होनेसे निगाहमे कम आते है। मै जो बात कह रहा हूँ उसको वे लोग पूरी तरह समझ जायेंगे जो इग्लैंड हो आय है। वहाँ मैने पारसियो, हिन्दुओ और मुसलमानोमे कोई भी अन्तर नही देखा। वहाँ मुझे सभी पूरे अग्रेज जान पडे।

किन्तु अब ?

जैसा हिन्दुओ और मुसलमानोमें परिवर्तन हुआ है वैसा ही परिवर्तन पारसियोमें भी आरम्भ हुआ है। पारसी नवयुवक सादगीके मन्त्रको समझ गये है। पारसी लड़कियाँ खादी पहनने लगी है। खादी पहननेकी जिनकी हिम्मत नही होती, वे देशी मिलोके कपड़े पहनने लगी है। मेरी मान्यता यह है कि जब पारसी लोगोके मनके प्रवाहकी दशा बदलेगी तब क्षणभरमें महत्त्वपूर्ण फेरफार हो जायेगा। मेरे मनपर ऐसी छाप पड़ी है कि पारसी जाति कभी नमक-हराम नही हो सकेगी। यह सम्भव है कि वह अल्प-सख्यक होनेसे हिन्दुओ और मुसलमानोके समान मैदानमें आती हुई न जान पडे; किन्तु मेरे मनसे यह बात नही निकलती कि उनके हाड-माँसमे भी भारतीयता है और उन्हे भारतसे प्रेम है। पारसी लोग किसी मामलेमें पीछे रहे हों यह मै तो जानता ही नही। इसलिए हिन्दुओ और मुसलमानोको यह उचित है कि वे पारसियोसे प्रेम करे और उनके दोष न निकाले और न उनकी ओर सकेत ही करे।

पारसी भाइयोको डरनेकी कोई जरूरत नही है। जिन्होनें दूसरे लोगोका कुछ नही बिगाड़ा है उनको किसी तरहका डर नही होना चाहिए। पैगम्बर जरतुश्तने यह शिक्षा दी है कि भलाईका बदला सदा भलाई होता है। एक छोटी जातिके मनमे जैसे भय होता है वैसे ही निडरता भी होती है। पारसियोको यह जानकर कि उन्होने भारतका कुछ बिगाडा नही है यह मान लेना चाहिए कि भारत उनका कोई अहित न करेगा। जिस जाति या मनुष्यने भारतके हितके विरुद्ध अपना स्वार्थ सिद्ध किया हो उसीको डरनेकी जरूरत है। निर्दोष मनुष्य अकेला भी हो तो भी उसे डरनेकी जरूरत नही। फिर यह लड़ाई आत्मशुद्धिकी लडाई है ऐसा मानकर मै पारसी भाई-बहनोको विनयपूर्वक यह सलाह देता हूँ कि वे इस लडाईमे पूरे मनसे शामिल हो जायें। इस लड़ाईमे हमें एक-दूसरेपर विश्वास करना चाहिए। इस तरहका विश्वास उत्पन्न करनेका उपाय है अपने मनमे आत्मविश्वास पैदा करना और आत्मविश्वास ही स्वराज्य है।

मर्यादाका उल्लंघन

कोई सज्जन मेरे चित्र कृष्णके रूपमे छापकर बेच रहे है। एक भाईने मेरा ध्यान इस ओर खीचा है और इसमे मर्यादाका जो उल्लघन होता है उसे रोकनेके लिए मुझे लिखा है। मैने ऐसा कोई चित्र नही देखा है। उसे देखनेकी मेरी इच्छा

भी नही है। मै मानता हूँ कि ऐसे कार्योसे मर्यादा भग होती है। हम भगवान् श्रीकृष्णको पूर्ण पुरुषोत्तमके रूपमे देखते हैं। हम उनको ईश्वरका अवतार मानते है। हम उन्हे 'श्रीमद्‌भगवद्‌गीता'का पूर्ण योगी मानते हैं। हम लक्ष्मीजीको सामान्य सासारिक नारी नही मानते। इसके विपरीत हम उन्हे भगवान्‌की सम्पूर्ण माया और ससारकी धात्रीके रूपमे देखते हैं। मुझे विष्णुका और मेरी पत्नीको लक्ष्मीका रूप दिया जाये तो इससे हम दोनो ही लज्जा अनुभव करते है। यदि हम इस तरहका रूप दिये जानेसे भ्रममे पड जाये तो हम पापके भागी होगे। मुझमे क्या-क्या अपूर्णताएँ हैं इसका मुझे पूरी तरह भान है। मै परिपूर्णताका अभिलापी एक तुच्छ मुमुक्षु प्राणी हूँ। मेरी पत्नी अनेक विडम्बनाओको सहती हुई मेरे साथ-साथ चलनेका प्रयत्न करती है और वह केवल एक साधारण स्त्री है। मै मानता हूँ कि हमारा गार्हस्थ्य जीवन सुखमय है, किन्तु मै चाहता हूँ कि मेरी आँखे सेवा धर्मका पालन करते-करते ही वन्द हो, इसके अतिरिक्त मेरी अन्य कोई अभिलाषा नही है। लोकमे यश पानेका मुझे तनिक भी मोह नही। मेरी प्रवृत्ति ही लोकयश कमानेकी नही है। मेरी समस्त प्रवृत्ति श्रेय प्राप्तिके निमित्त ही है। मै जो-कुछ भी करता हूँ, धर्म मानकर ही करता हूँ, मुझे अपनी अन्तरात्मामे इस बातका निश्चय है। और जहाँ कोई भी कार्य धर्म मानकर किया जाता है वहाँ सम्मानरूपी पुरस्कार पानेकी आशा होती ही नही। लोक-सम्मान प्राप्त करनेमे एक क्षण भी गँवाना मुझे अखरता है। इसलिए मुझे तो अपने चित्रका बेचा जाना भी पसन्द नही है, तव मुझे पूर्ण पुरुपके रूपमे चित्रित किया जाये अथवा मेरी पत्नीको लक्ष्मीका रूप दिया जाये यह बात मुझे केवल असह्य ही हो सकती है। और जो लोग मेरा सम्मान करना चाहते है वे मैंने जो सिद्धान्त लोगोके सम्मुख रखे है उनको पूरी तरह कार्यान्वित करके ही ऐसा कर सकते है। जो लोग मुँहसे मेरा सम्मान करते है अथवा मेरा चित्र अपने पास रखते हैं, किन्तु मेरे सिद्धान्तोका अनादर करते हैं, वे मेरा अपमान करते है और धार्मिक पुरुषोकी मूर्तियोके रूपमे मुझे चित्रित करके मर्यादाका उल्लघन करते है। पुराने जमानेके एक मनुष्यने कहा है कि हम किसी भी मनुष्यको उसकी मृत्युसे पहले भला नही मान सकते। जो मृत्यु सामने खडी होनेपर भी ईश्वरको न भूले उसीको मोक्ष मिलता है। जो जीवन-पर्यंत भलाई करना न छोडे वही भला माना जा सकता है।

एक शंका

भावनगरसे दो भाइयोने पत्र लिखकर मुझसे पूछा है कि महासभाका प्रतिनिधि कौन हो सकता है।

जो असहयोगी नहीं है क्या वह प्रतिनिधि नहीं हो सकता? महासभा तो राष्ट्रीय संस्था है।

यह बात बिलकुल सच है। जहाँ मतदाता असहयोगी ही हो वहाँ सहयोगी प्रतिनिधि नही चुना जा सकता। किन्तु यदि महासभामे सहयोगी मतदाता हो और उनके मत अधिक आये अथवा एक सहयोगीको चुनने योग्य मत इकट्ठे किये जा सके तो सहयोगी अवश्य चुना जा सकता है और उसका चुनाव बिलकुल नियमानुसार माना जायेगा।

एक दूसरी शंका

बम्बईके एक भाई पूछते हैं :

यदि ढेढ़ और भंगी पढ़-लिख जायेंगे तो वे नौकरी करना अथवा व्यापारमें भाग लेना चाहेंगे। तब उनका काम कौन करेगा?

इस पत्रमे दूसरे प्रश्न भी है किन्तु उनका उत्तर इस प्रश्नके उत्तरमें आ जाता है; इसलिए मै उन्हे अलग नही देता। उक्त प्रश्न हम अस्पृश्यताको जिस रूपमे जानते है उसकी भयकरता बताता है। अन्त्यजोके साथ हम सामान्यत. जो बरताव करते है उनमें केवल द्वेष ही होता है। वे पढें इसका अर्थ है वे भगीका काम न करे, मुझे तो यह खयाल ही अनुचित लगता है, किन्तु इस खयालके पीछे भी कारण हम ही है। हम भगीके कामको नीचा मानते हैं; किन्तु ठीक सोचे तो यह तो सफाईका काम है और इसलिए पवित्र है। माँ अपने बच्चेका मैला उठाती है, इससे वह और भी अधिक पवित्र मानी जाती है। रोगीकी सेवा-शुश्रूषा करनेवाली नर्स बदबूदार चीजोको उठाती है किन्तु हम उसका सम्मान करते है। जो मनुष्य हमारे पाखानोको साफ रखकर हमे तन्दुरुस्त रखनेमे मदद देता है हम उसका आदर क्यो न करे? उसको नीचे गिराकर हम खुद नीचे गिरते है। जो दूसरोको कुएँमे गिराता है वह स्वय भी कुएँमें गिरता है। इसलिए हमें भगी और उनकी जैसी अन्य जातियोको नीचा समझनेका कोई अधिकार नही है।

भोजा भगत मोची थे, फिर भी हम उनके भजनोको बड़े आदरसे गाते है और उनको पूज्य भावसे देखते है। जो 'रामायण' पढ़ते है उनमें से ऐसा कौन होगा जिसके मनमें निषादकी राम-भक्ति देखकर उसके प्रति आदरका भाव पैदा न हुआ हो? फिर भंगी और उनकी जैसी अन्य जातियाँ अपने धन्धे छोडे तो हमारे लिए उनका विरोध करने या घबरानेका कोई कारण नही है। हम जबतक किसीसे भी जबरदस्ती कोई काम कराना चाहेगे तबतक हम स्वराज्यके योग्य नही होगे। हमे अपने-अपने पाखानोको खूब साफ रखना सीख लेना चाहिए। हमे जब अपने पाखानोको गन्दा रखनेमे शर्म मालूम होने लगेगी तब हम उन्हे वाचनालयकी तरह साफ रखेंगे। हमारे पाखानोमें जो दुर्गन्ध या उससे उत्पन्न दूषित वायु रहती है वह हमारी सभ्यताको कलकित करती है और यह बताती है कि हममें स्वास्थ्यके नियमोका अज्ञान कितना गहरा है। हमारे पाखानोकी खराब हालत अन्त्यजोंके प्रति हमारे दूषित दृष्टिकोणका प्रमाण है और हम जिन अनेक रोगोके शिकार होते है उनका कारण है। दूसरी जातियोके ससर्गसे हम जाति-च्युत हो जायेंगे या भ्रष्ट हो जायेगे, यह सोचना हमारी दुर्बलताका सूचक है। हम जबतक ससारमे है तबतक दूसरोका ससर्ग तो रहेगा ही। हमारे धर्मकी कसौटी यही है कि हम इस ससर्गके होनेपर भी निर्दोष रह सके। भगी और ऐसी अन्य जातियोको स्वच्छता सिखाना, आगे बढ़ाना और उनका सम्मान करना दयाधर्म है। ऐसा करनेका अर्थ यह नही है कि हम उनके साथ खानपानका सम्बन्ध भी रखे; किन्तु यह तो आवश्यक है कि हम अपने हृदयके भावोको शुद्ध करें।

बुढ़ापेका दोष?

एक पाठकने 'नवजीवन-अभ्यासी' के नामसे यह लिखा है

> गुजरातके दो प्रमुख विद्वानोंने वृद्ध होते हुए भी देशकी इस विषम स्थितिमें सरकारी कालेजोंमें गुजरातीके प्राध्यापकोंका स्थान स्वीकार कर लिया है। इस प्रकारकी उद्वेगकारी घटनापर आप अवश्य कोई टिप्पणी करेंगे, मुझे ऐसी आशा थी। किन्तु वह व्यर्थ गई; 'नवजीवन' के एकके बाद एक निकलनेवाले दो अंकोंके पन्ने उलटनेके बाद मैं निराश हो गया हूँ और इस सम्बन्धमें आपके मौनसे मुझे आश्चर्य हुआ है। मुझे विश्वास है कि आपने इस सम्बन्धमें विचार अवश्य किया होगा और विचार करके ही कोई टीका न करनेका निर्णय किया होगा। आपने किस कारणसे प्रेरित होकर ऐसा किया, यदि आप इसका स्पष्टीकरण कर देंगे तो मुझे और कदाचित् मेरे जैसे बहुतसे लोगोंको इस विषयमें जो आश्चर्य हो रहा है वह न होगा।

'अभ्यासी' का यह अनुमान सच है। मैंने सोच-समझकर ही कोई टीका नही की है। हमारे दो वृद्ध विद्वानोने सरकारी नौकरी स्वीकार की, इससे दुख तो मुझे भी हुआ। किन्तु उनके कार्यकी टीका कैसे की जाये? बुढापा आनेपर कोई प्राध्यापक नही हो सकता यह तो कोई कारण नही है। फिर सभी बूढे असहयोगी होने चाहिए ऐसा भी आवश्यक नही है। और फिर विद्वान् लोग सहयोगी नही हो सकते यह भी नही कहा जा सकता। और यदि बूढो अथवा विद्वानोको सहयोग करनेका अधिकार है तो फिर हम टीका किसकी करे? बूढे और विद्वान् मनुष्योको सरकारकी नौकरी स्वीकार करनेमे कोई बुराई दिखाई नही देती, यह बात असहयोगियोको चौकानेवाली और विचारमे डालनेवाली अवश्य है। मेरी मान्यता है कि असहयोगियोमें भी कुछ लोग बूढे और विद्वान् है। इसका अर्थ यह है कि हमारे लिए इस सम्बन्धमें विचारने योग्य कुछ अधिक नही रह जाता। मै तो यह मानता हूँ कि इन दोनो विद्वानोने लालचसे डॉवाँडोल होकर नही बल्कि उचित विचार करके सरकारी नौकरी स्वीकार की है। अत 'अभ्यासी' और उसके जैसे दूसरे लोगोके लिए इन दोनो वयोवृद्धोको दोष देने योग्य कोई बात नही रहती। 'अभ्यासी' को जो आश्चर्य हुआ है उसमे मुझे असहिष्णुताका आभास मिलता है, किन्तु हमे अन्य लोगोको भी विचार और कार्य, दोनोकी उतनी ही स्वतन्त्रता देनी चाहिए जितनी हम अपने लिए चाहते है, और वयोवृद्धोको तो विशेष रूपसे देनी चाहिए।

मित्र रूपमें शत्रु

'प्रजामित्र' के सम्पादकको एक कार्ड मिला है, उसे मैने पढा है। पत्र अहमदाबादसे भेजा गया है। उसमे भेजनेवाले के दस्तखत तो है, किन्तु जगहका नाम नही है। दस्तखत एक मुसलमान भाईके है। उसकी भाषा यहाँ दी जाने योग्य, शिष्ट नही है। उसमे सम्पादकको मेरे विचारोकी आलोचना करनेपर गालियाँ दी गई है। मुझे

आशा है कि इस पत्रका लेखक, चाहे वह कोई भी हो और कहीका भी हो, मेरी इस टिप्पणीको देख लेगा। लेखकने दिखाई तो मित्रता है; किन्तु काम शत्रुताका किया है। इस तरह गालियाँ देकर या धमकियाँ देकर हम खिलाफत या स्वराज्यके आन्दोलनको गति नही दे सकते। यदि हम खिलाफत या स्वराज्यके आन्दोलनको गति देना चाहते है तो हमें सभ्यता और नम्रता सीखनी चाहिए। 'प्रजामित्र' के सम्पादक हमारे मतका चाहे जितना विरोध करे, इसमे उनको कुछ भी दोष कैसे दिया जा सकता है? यदि अखबारोको आलोचनाका अधिकार न हो तो उनकी कोई कीमत नही रहती। सरकारने अखबारोपर जो प्रतिबन्ध लगा रखे हैं, जब हम उनको भी हटानेकी माँग करते है तब यदि लोग धमकाकर जो दबाव डालना चाहते है, उसे हम बरदाश्त कर सकेगे? हम किसी भी मनुष्यके मतको या मनको प्रेमसे, तर्कसे और अपने उदाहरणसे बदलनेका प्रयत्न कर सकते है। हम किसीके भी मनको धमकियाँ देकर कभी नही बदल सकते। इसलिए प्रत्येक मनुष्यको और विशेष रूपसे असहयोगियोको अपनी जीभको और अपने विचारोको सुधारना चाहिए और उन्हे नरम बनाना चाहिए। जिसकी जीभपर खुदा या ईश्वरका नाम शोभित हुआ है, जिसके हृदयमे ईश्वरका वास रहा है, उसकी जीभपर या उसके हृदयमे मलिन भाव एक घडी या पल-भर भी कैसे टिक सकता है? जो व्यक्ति असहयोगियोके दलमें मैली जीभ या मलिन हृदय लेकर प्रविष्ट होता है, वह मित्र होनेका दावा करनेपर भी राष्ट्रके और मेरे प्रति शत्रुका काम करता है।

अस्पृश्यताकी मर्यादा[1]

इस लेखके सम्बन्धमे मेरा एक शब्द भी लिखना आवश्यक नही है। शास्त्रीजीने अस्पृश्यताकी जो व्याख्या की है उस व्याख्याके विरुद्ध मैंने कुछ नही कहा। गन्दे लोगोका स्पर्श करके हम सदा स्नान करते हैं। मैंने कठोर भाषाका जो प्रयोग किया है वह केवल इस प्रचलित अस्पृश्यताके विरुद्ध किया है जिसके मूलमें द्वेषके अतिरिक्त अन्य कुछ नही है। यदि शास्त्रीजीके जैसे विचार सभी वैष्णवोके हो तो ऐसे वैष्णवोसे तो मुझे कुछ भी कहनेकी जरूरत न होगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-७-१९२१

१. यह टिप्पणी वसन्तराम शास्त्रीके इस सम्बन्धमें लिखे गये लेखके साथ दी गई थी।

१९३. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

१७ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने कहा : मैं इसके पहले भी मदनपुरा आ चुका हूँ। दो साल पहले मैं यहाँ आपका काम देखने आया था। लेकिन यह सभा एक बिलकुल दूसरे ही उद्देश्यसे बुलाई गई है। पिछली बार जब मैं यहाँ आया था, तब खिलाफतके सवाल-को लेकर कोई आशंका नहीं थी और हमें अपने शासकोंसे न्याय पानेका पक्का भरोसा था; क्योंकि ग्रेट ब्रिटेनके प्रधान मन्त्रीने न्याय करनेका वायदा किया था। लेकिन बाव-जूद उसके ब्रिटिश सरकारने मुसलमानोंको काफी नुकसान पहुँचाया। और अब जबतक मुसलमानोंकी शिकायतें दूर नहीं हो जातीं तबतक हमारे दिमागको चैन नहीं मिल सकता। सरकारने पंजाबके साथ जो-कुछ किया है, उसको लेकर भी जनता बहुत चिन्तित है। भारतीय जनता जबतक अपने सैनिकोंको ब्रिटेन की ओरसे लड़नेके लिए विदेश जानेसे नहीं रोक सकती तबतक यह नहीं कहा जा सकेगा कि असली ताकत जनताके हाथोंमें आ गई है। अब हमें एक शक्तिशाली अस्त्र मिल गया है, असहयोगका अस्त्र; और कांग्रेसने बड़े निश्चित शब्दोंमें बता दिया है कि इस दिशामें जनताको क्या करना चाहिए। लेकिन अभी जनताने इस दिशामें बहुत बड़े पैमानेपर पहल नहीं की है। लोगोंने अपने खिताब वापस नहीं किये हैं और उन्होंने स्कूलों या न्यायालयों-का त्याग नहीं किया है। इस तरह लोगोंने अपना फर्ज पूरा नहीं किया है। किन्तु फिर भी सरकारकी प्रतिष्ठा गिरी है; लोग अब सरकारी खिताबोंको उतनी इज्जत-की नजरसे नहीं देखते; लोग कचहरियोंमें तो जाते हैं पर यह समझकर नहीं कि वे अच्छी हैं या वहाँ उनको न्याय मिल जायेगा, बल्कि इसलिए कि वे उनके पतनकी निशानी हैं।

बुनकरोंके सामने उनका फर्ज साफ है —— उनको स्वदेशी आन्दोलनकी भरसक सहायता करनी चाहिए। अगर बुनकर इस आन्दोलनमें हाथ बँटायें तो वे देशको फिरसे खुशहाल बना सकते हैं। सबसे बड़ा दुर्भाग्य तो यह है कि बुनकर लोग विदेशी सूत इस्तेमाल करते हैं। श्री गांधीने बुनकरोंसे कहा कि आपको विदेशी सूतका इस्तेमाल छोड़ देना चाहिए, सिर्फ स्वदेशी और हाथका कता सूत ही इस्तेमाल करना चाहिए। आपको महीन सूत ही नहीं हाथका कता मोटा सूत भी इस्तेमाल करना चाहिए। और किसी भी देशके बुनकर मिलका तैयार किया हुआ सूत इस्तेमाल नहीं करते। वे हाथका कता महीन सूत इस्तेमाल करते हैं, लेकिन साथ ही मोटा सूत भी इस्ते-

१. गांधीजीने बम्बईमें भायखला कांग्रेस कमेटीके तत्त्वावधानमें इतवारकी रातको मदनपुरामें बुनकरोंकी एक सभामें भाषण किया था।

माल करते हैं। दुनियाके किसी भी देशमें, जापान तकमें, इतने कुशल बुनकर नहीं हैं जितने कि हमारे पास हैं। मैं खुद एक बुनकर हूँ और मुझे इसपर गर्व है, क्योंकि बुनकरोंपर ही देशकी खुशहालीका दारोमदार है। लोग जब भी मुझसे पूछते हैं कि मेरा पेशा क्या है, तो मैं गर्वसे यही जवाब देता हूँ कि मैं किसान और बुनकर हूँ, बैरिस्टर नहीं हूँ। बुनकर हाथका कता सूत इस्तेमाल करके इस देशको खुशहाल बना सकते हैं। यह नहीं सोचना चाहिए कि यदि आप हाथका कता सूत इस्तेमाल करेंगे तो बरबाद हो जायेंगे। आज आपके लिए अपना हुनर दिखाने या लोगोंके लिए बढ़िया कपड़े पहनकर निकलनेका अवसर नहीं है। स्वराज्य मिलनेतक और खिलाफत तथा पंजाबके अन्यायोंका प्रतिकार होनेतक हमें मोटे कपड़े पहनने चाहिए। यदि आप कोशिश करें तो आसानीसे हाथके कते सूतसे कपड़ा बुन सकते हैं। मुझे उम्मीद है कि आपको जबतक हाथका कता सूत मिलता रहेगा तबतक आप यह खयाल अपने दिमागमें नहीं लायेंगे कि हाथका कता सूत इस्तेमाल करनेसे आपको कम मजूरी मिलेगी। मैं आपको भरोसा दिलाना चाहता हूँ कि आपकी कमाई इतनी ही बनी रहेगी जितनी कि आज है। आपके पास अभी जितना भी विदेशी सूत हो उसे आपको त्याग देना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि पहली अगस्तको[1] कोई भी विदेशी वस्त्र पहने न दिखाई पड़े, और मैं कहूँगा कि उस दिन किसीको भी विदेशी वस्त्र पहनकर चौपाटी-पर नहीं आना चाहिए। बुनकर लोगोंको श्री मुहम्मद अली और श्री खत्रीसे मिलकर उनके साथ अपनी कठिनाइयोंके बारेमें बात करनी चाहिए। अगर आप १ अगस्ततक विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार कर सकें तो आप आसानीसे स्वराज्य प्राप्त करने योग्य हो जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १९–७–१९२१

१९४. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

बम्बई

१८ जुलाई [१९२१]

प्रिय चार्ली,

यदि तुमको पत्र न लिखना कर्त्तव्यकी उपेक्षा करना कहा जा सकता है तो मैं कर्त्तव्यकी उपेक्षा करनेका दोषी हूँ। तुम्हारी आत्मा तो सदा ही मेरे साथ रहती है। मैं समझता था कि तुम शिमलामें हो। मैंने स्टोक्सकी[2] खुली चिट्ठी नहीं देखी।

१. विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारका आन्दोलन आरम्भ करनेके लिए यही तिथि निश्चित की गई थी।

२. सैम्युल स्टोक्स, सार्वजनिक कार्यकर्ता और गांधीजीके सहयोगी।

लेकिन इस हफ्तेके 'यंग इंडिया'में बेगार[1] और स्त्रियोंकी स्थितिके[2] सम्बन्धमें अग्रलेख रहेंगे। मैंने इस मामलेमें बंगालके नाम तुम्हारे सन्देशके बारेमें विचार व्यक्त किये हैं।

जल्दी अच्छे हो जाओ। गुरुदेवके प्रति मेरा प्रेम निवेदन करना और उनके स्वास्थ्यके बारेमें मुझे लिखना।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मोहन

[पुनश्च .]

पोलककी बहन सैली नहीं रही।

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० १३०९ और जी० एन० २६३९) की फोटो-नकलसे।

१९५. भाषण : बम्बईकी मुसलमान महिलाओंके समक्ष[3]

१९ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने कहा : मुसलमानोंके साथ मेरे पुराने सम्बन्ध हैं। जो सज्जन मुझे पहली बार आफ्रिका ले गये थे वे भी एक मुसलमान मित्र ही थे। यहाँ मौजूद आप सभी महिलाएँ मेरी बहनें हैं। स्वराज्यके लिए हम जितनी भी कोशिशें कर रहे हैं वे सब आपके मजहबपर कोई आँच न आने देनेके लिए हैं। मेरे दिमागमें हिन्दू और मुसलमानके बीच कोई फर्क नहीं है।

मेरी रायमें तो सभी मजहब अच्छे हैं। कभी-कभी कुछ गुमराह लोगोंकी वजहसे मजहबमें कुछ गलत बातें शामिल हो जाती हैं। 'कुरान शरीफ'में जो भी कुछ है सब अच्छा है। सभी मजहबोंमें सचाई मौजूद है। हम सभी इस्लामकी बहबूदी चाहते हैं। हम बिलकुल नहीं चाहते कि दुनियामें शैतानका राज हो।

शैतानके राजमें मैं कोई भी अच्छा काम नहीं कर सकता। आज ही शामको मेरे पास अलीगढ़से एक तार आया है, जिसमें कहा गया है कि श्री शेरवानीको जेल भेज दिया गया है, हालाँकि वे शान्तिके लिए काम कर रहे थे। ऐसा भी मौका आ सकता है जब सभी अच्छे आदमियोंको जेलोंमें डाल दिया जाये। हममें से हर एकको उसके लिए तैयार रहना चाहिए। आफ्रिकामें हिन्दुओं और मुसलमानोंने मर्द-औरतका कोई फर्क माने बिना जेल जानेमें कोई कोताही नहीं की थी और इस तरह अपने

१. देखिए "शिमलाकी छाया", २१-७-१९२१।

२. देखिए "स्त्रियोंकी स्थिति", २१-७-१९२१।

३. नेपियन सी रोडपर ५०० से अधिक मुसलमान महिलाओंकी एक सभा हुई थी। गांधीजीने स्वदेशीके बारेमें हिन्दुस्तानीमें भाषण किया था। मूल हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है।

देशकी इज्जतको महफूज रखा था। ऐश-आरामकी जिन्दगी बसर करनेवाले लोग जेलकी जिन्दगी बरदाश्त नहीं कर पायेंगे, क्योंकि उनको वहाँ दिनमें दस बार चाय और बढ़िया कपड़े मिलनेवाले नहीं है।

आपको अपने मजहबकी खातिर सभी ऐश-आराम छोड़ देने चाहिए और खादी पहनना शुरू कर देना चाहिए। भारतको जबतक स्वराज्य नही मिल जाता और खिलाफत तथा पजाबके अन्यायोका प्रतिकार नही हो जाता, तबतक हर एकको विलायती कपडोसे दूर रहना चाहिए। स्वराज्य मिल जानेपर हम सभी तरहका स्वदेशी कपड़ा तैयार करने लगेगे। इसलिए आपको छ महीनेके लिए सभी ऐश-आराम छोड देने पडेगे।

मुझे यह सुनकर बड़ी खुशी हुई है कि श्रीमती हाजी यूसुफ सोबानीने कातना शुरू कर दिया है। आप सबको अपने पास उसी तरह चरखा रखना चाहिए जैसे आप अपनी गोदमें बच्चेको रखती है। आपको स्वराज्य और खिलाफतकी खातिर हर दिन कमसे-कम कुछ घंटे तो जरूर ही भगवान्‌का नाम लेते हुए कताई करनी चाहिए। चरखेके जरिये भारतीय नारीत्वकी प्रतिष्ठाकी रक्षा ही नहीं होगी, आप अपने घरोंमें ही बैठकर स्वतन्त्र रूपसे अपनी आमदनी भी बढ़ा सकेंगी। चरखेके जरिये आप अपने मुल्कके लिए जितना कर सकती हैं, उतना तलवारके जोरपर नहीं किया जा सकता। बहुतसे भारतीयोंकी महीने-भरकी आमदनी आठसे पन्द्रह रुपयेतक है। जो उनके परिवारोंके लिए पूरी नहीं पड़ती। गंगाबेनने बीजापुरके गरीब भारतीयोंके घरोंमें दो हजार चरखे चलवाये हैं; इसका नतीजा यह हुआ है कि उनको वहाँसे बढ़िया किस्मका हाथका कता सूत मिल जाता है और वहांके लोगोंको जीविकाका एक स्वतन्त्र साधन मिल गया है।

महात्मा गांधीने भाषण जारी रखते हुए कहा: पहले हम ढाकाकी उम्दा मलमल तैयार कर लेते थे, लेकिन मौजूदा सरकारकी वजहसे वहांके बुनकर बड़ी खराब हालतमें है और वे अपना धन्धा करनेमें असमर्थ है। हमें बढ़िया कपड़ेके लिए मैनचेस्टर नहीं जाना चाहिए। एक भारतीय महिलाने मुझे जरीके कामकी एक साड़ी दी है। उसका वजन करीब बारह सेर[1] है। अगर आप लोग इतनी भारी साड़ियाँ पहन सकती है, तो खादीकी साड़ियाँ क्यों नहीं पहन सकतीं? स्त्रियाँ पुरुषोंकी अपेक्षा कहीं ज्यादा तकलीफ और मुसीबत बरदाश्त कर सकती है; इसलिए खादीका पूरा-पूरा इस्तेमाल करनेमें उनके लिए कोई रुकावट नहीं है। श्रीमती मजहरुल हकने मुझे हीरेकी चार चूड़ियाँ दी है। स्त्रियोंको अपने आभूषणोंसे बहुत मोह होता है, इसलिए इस तरहका त्याग बतलाता है कि स्वराज्य नजदीक आ रहा है। सुन्दर स्त्री वही है जिसके दिलमें भगवान्‌का खयाल है। बाहरी सुन्दरताके सभी उपकरण उनको छोड़ देने

१. स्पष्टतया यह भूल है यहाँ सेरकी जगह पौंड होना चाहिए। देखिए "भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर", १६-७-१९२१ ।

चाहिए। बढ़िया महीन कपड़ोंके लिए आपको जापान, फ्रांस और चीनकी तरफ नहीं देखना चाहिए। आप सभीको हिन्दुओं और मुसलमानोंकी कामयाबीके लिए भगवान्से प्रार्थना करनी चाहिए, लेकिन आपकी प्रार्थनामें असर तभी पैदा होगा जब आपके दिल पवित्र हों और बदनपर स्वदेशी कपड़े हों। यह एक बड़ा मुश्किल-सा अहद है। लेकिन एक बार ऐसा अहद कर लेनेपर उसपर चलना सचमुच आसान हो जाता है।

अन्तमें महात्मा गांधीने वहाँ मौजूद सभी महिलाओंसे कहा कि वे या तो अपने विलायती कपड़े आगमें झोक दें या उनको स्मरना भेज दें। उन्होंने बोलनेकी दावत देने और पूरे ध्यानसे उनकी बात सुननेके लिए सभीको धन्यवाद दिया।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-७-१९२१

१९६. भाषण : बम्बईमें शराबके ठेकेदारोंके समक्ष[1]

१९ जुलाई, १९२१

श्री गांधीने कहा : मैंने पिछली बार आप लोगोंको बतलाया था कि धरनेका सारा काम कांग्रेस कमेटीके हाथमें है और मैं तो आपको सलाह-भर दे सकता हूँ कि आपको क्या करना चाहिए। लेकिन आप लोगोंको मेरी सलाहका नतीजा मालूम ही है। कुछ ठेकेदारोंने सरकारके पास भेजा जानेवाला प्रार्थनापत्र देख ही लिया है; और चूँकि आप असहयोगी नहीं हैं, इसलिए आपके ऐसा करनेपर किसीको कोई एत-राज नहीं हो सकता। यदि आप असहयोगी होते तो शराबके ठेके न रखते। ठेकेदारोंको सरकारके पास प्रार्थनापत्र भेजनेका पूरा अधिकार है। कहा गया है कि ठेकेदार सेवक है। अगर सेवक है, तो भी सरकारको अदा की गई फीसकी वापसीके लिए अपनी सरकारसे कहना कोई गलत बात नहीं है। सरकार आपके ठेके जबरन बन्द नहीं कर सकती। इसके लिए उसे एक नया कानून पास करना पड़ेगा। लेकिन ठेकेदार लोग अपनी अदा की गई फीस वापस लेकर अपने ठेके बन्द कर सकते हैं।

धारवाड़ और अलीगढ़की दुःखद घटनाओंके बारेमें आपको मालूम ही है। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि इतने सारे लोगोंके मरनेकी सबसे ज्यादा जिम्मेदारी शराब-के ठेकोंपर ही है। श्री शेरवानी अलीगढ़के एक बहुत ही जाने-माने प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। वे एक मुसलमान जमींदार परिवारके हैं और कैम्ब्रिजके ग्रेजुएट हैं। अलीगढ़से मिले एक तारमें मुझे बतलाया गया है कि कल श्री शेरवानीको भी गिरफ्तार कर लिया गया। श्री शेरवानीने भीड़को शान्त करनेकी भरसक कोशिश की, उन्होंने भीड़को

1. पारसी राजकीय सभाके तत्वावधानमें मारवाड़ी विद्यालय हॉलमें एक सभा आयोजित की गई थी, जिसमें गांधीजीने शहरके शराबके हिन्दू और पारसी ठेकेदारोंके सामने भाषण दिया था।

शान्त बनाये रखनेके लिए हर कोशिश की थी; अलबत्ता उन्होंने 'नाक रगड़ने' से इनकार कर दिया था और लोगोंमें उत्साह बनाये रखनेका प्रयत्न किया था। अब उनको भी गिरफ्तार कर लिया गया है। सारी गड़बड़ीकी जिम्मेदारी किसपर है? गड़बड़ी धरनेके समय शुरू हुई थी। श्री गंगाधरराव देशपाण्डेने मुझे बेलगाँवसे तार भेजकर सूचित किया है कि उनको और उनके मित्रोंको आदेश दिया गया है कि वे वहाँ छावनीके हलकेमें शराबके ठेकोंपर धरना न दें। श्री देशपाण्डेने पूछा है कि वे इस आदेशका पालन करें या न करें। मैंने श्री देशपाण्डेको यही सलाह दी है कि आदेश गैर-कानूनी तो है पर उसका पालन किया जाना चाहिए और सविनय अवज्ञा भी संयत ढंगसे करना ही ठीक होगा। शराब-विक्रेताओंका फर्ज है कि वे अपने करोड़ों देशवासियोंकी इच्छाका आदर करें। अपने ठेके बन्द करके, आप अपने देश-को लाभ पहुँचायेंगे और जो चीज पूरे देशके हितमें है वह आपके भी हितकी चीज है। मैं पक्की तौरपर जानता हूँ कि शराबके कुछ ठेकेदारोंकी माली हालत अच्छी नहीं है। देशकी जनताका फर्ज है कि वह इन लोगोंकी सहायताके लिए जो भी कर सकती हो, करे। लेकिन आप लोगोंको भी यह स्वीकार करना चाहिए कि आप अपने ठेके चालू रखकर देशको नुकसान पहुँचा रहे हैं।

श्री गांधीने शराबके ठेकेदारोंको चेतावनी दी कि अगर आपने अगस्तके अन्ततक कुछ नहीं किया तो बड़ी गड़बड़ी मच जायेगी। दुबारा जब धरना देना शुरू किया जायेगा तो वह काफी संजीदगीसे किया जायेगा। धरना देनेवाले लोग धरना छोड़ने-की अपेक्षा जेल जाना और यहाँतक कि गोली खाना ही ज्यादा पसन्द करेंगे। मैं महसूस करता हूँ कि ठेके बन्द हो जाने चाहिए, चाहे फिर सरकारी आदेशपर धरना देना बन्द न करनेपर खूनकी नदियाँ ही बह चलें। मैं आपसे यह वायदा नहीं कर सकता कि अगस्तके महीनेमें फिरसे धरना देना शुरू नहीं किया जायेगा। क्योंकि धरना देनेवालों ने जिस बातका अहद किया है वह उन्हें कामयाबीके साथ पूरा करना ही चाहिए, फिर उनको चाहे जितनी बड़ी कीमत क्यों न चुकानी पड़े। मेरे पास कई पत्र आ चुके हैं जिनमें कहा गया है कि धरने बन्द करके मैंने ठीक नहीं किया। मुझपर दोष लगाया गया है कि मैंने अली भाइयोंको कमजोर सलाह दी और मुझे इस बातके लिए भी दोषी ठहराया गया है कि मैंने पहले सत्याग्रह आन्दोलन बन्द करवा दिया था और अब धरने भी बन्द करा दिये हैं। मैंने अली भाइयोंको जो सलाह दी थी वह कमजोरीकी सलाह नहीं थी, वह मजबूती पैदा करनेवाली सलाह थी और सत्याग्रह तथा धरनोंके मामलेमें भी यही बात है। इसीलिए मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप देशकी आवाजपर कान दें और देशको आसन्न बलिदानसे बचायें। मैं किसी रोगसे पीड़ित होकर मरनेकी बजाय धरना देते हुए मरना ही ज्यादा पसन्द करूँगा। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि और भी बहुतसे लोग ऐसा ही करनेके लिए तैयार हैं।

श्री गांधीने अपने भाषणके अन्तमें शराबके ठेकेदारोंसे अपील की कि उनको ऐसे समयमें देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करना चाहिए, और कहा कि उपस्थित लोगोंमें से जो लोग प्रश्न करना चाहते हों, वे प्रश्न करें।

श्री मानेकजी बारियाने कहा कि बेईमानी शराब-विक्रेताओंमें ही नहीं सभी पेशोंमें चल रही है। हमारे सामने सवाल यह है कि ठेके कौन लोग और कब बन्द करें? शराबका रोजगार हजारों सालसे चलता आ रहा है और उसे एकबारगी बन्द नहीं किया जा सकता। ठेके धीरे-धीरे एक-एक करके बन्द किये जाने चाहिए। कोई भी पेशा हो, यदि उसे ईमानदारीसे चलाया जाये तो फिर उसमें शर्म या बेईमानीकी बात नहीं है। हर एकको अपने-अपने हितोंका ध्यान रखना पड़ता है। और यहाँतक कि स्वदेशीके प्राण, श्री गांधीको भी यदि कोलाबा जाना हो तो वे बैलगाड़ीमें नहीं जायेंगे, बल्कि तेज चलनेवाली विदेशी विक्टोरियामें ही जाना पसन्द करेंगे। शराबबन्दी तो शराब पीनेवालोंकी आदत छुड़ाकर ही की जा सकती है; उसका दूसरा कोई रास्ता नहीं है। ठेकेदारोंने सरकारको फीसकी वापसीके लिए लिखा है और उसके वापस होते ही वे अपने ठेके बन्द कर देंगे। सरकार उनको होनेवाले घाटेका हिसाब पूरे सालकी उनकी बिक्री को देखकर ही लगा सकती है, कुछ महीनोंकी बिक्रीको देखकर नहीं। मैं श्री गांधीसे पूछता हूँ, आप कहते हैं कि हमें सितम्बरतक स्वराज्य मिल जायेगा; तो क्या उस समय हम एक कानून पास करके शराबकी बिक्री बन्द नहीं कर सकते? श्री गांधी किस तारीखसे शराबकी बिक्री बन्द करना चाहते हैं?

श्री गांधी : आज ही से। (हँसी और हर्ष-ध्वनि)

इसपर श्री बारियाने कहा कि यदि श्री गांधी इसी दिनसे बिक्री बन्द कराना चाहते हैं, तो यह तो भगवान् चाहे तभी हो सकता है।

श्री गांधीने कहा कि मैं तो चाहता हूँ कि आज ही से बन्द हो जाये, लेकिन सवाल यह है कि क्या मैं ऐसा कर सकता हूँ? मैं तो बहुत-सी चीजें करना चाहता हूँ, लेकिन हो सकता है कि मैं न कर पाऊँ!

श्री गांधीने [श्रोताओंके प्रश्नोंका] उत्तर देते हुए कहा कि मुझे आशा है कि हम इस सभासे एक कदम आगे बढ़े हैं। मैं चाहता हूँ कि आप इस मसविदेपर तभी दस्तखत करें जब आप इस दिशामें कदम आगे बढ़ाना चाहते हों। सितम्बर महीनेमें खूनकी नदियाँ बहनेके बारेमें मैं कहना चाहता हूँ कि श्री शेरवानी, श्री मुहम्मद अली और मेरी तरह धरना देनेवाले बहुत सारे लोग होंगे और यदि उनको गिरफ्तार कर लिया जायेगा तो उनकी जगह लेनेके लिए सैकड़ों और लोग खड़े हो जायेंगे। और यदि उनको भी गिरफ्तार कर लिया गया तो हजारों देशवासी अपनी जान कुर्बान करनेको आगे आ जायेंगे और तब सरकारके सामने यही एक चारा रह जायेगा कि उनको गोली मारकर उनका खून कर दे। धारवाड़ और अलीगढ़में क्या हुआ था? शायद धारवाड़में भीड़ने पथराव किया था। उसका जवाब दिया गया गोलियोंसे।

भारतमें यही चलन रहा है। और जब जनता सरकार, ठेकेदारो तथा पियक्कड़ोंके चंगुलमें पड़ जाये तो परिस्थिति विषम तो होनी ही है; इसे टाला नहीं जा सकता। इसीलिए मैंने कहा है कि यदि ठेके बन्द नहीं किये गये तो सितम्बरमें खूनकी नदियाँ बहेंगी। अन्तमें श्री गांधीने ठेकेदारोसे कहा कि वे ज्ञापनके सिलसिलेमें श्री भरूचासे मिलें और उनसे सलाह-मशविरा करें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-७-१९२१

१९७. पत्र : के० पी० जगासिया ब्रदर्सको[1]

बम्बई

[१९ जुलाई, १९२१के बाद]

प्रिय महोदय,

आपके गत १९ जुलाईके पत्रके सिलसिलेमे मैं सिर्फ इतनी सलाह दे सकता हूँ कि आपको वही करना चाहिए जो हर एक व्यवसायी कर रहा है। लाटरीका सुझाव मुझे उचित नही जान पडता।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ७५८०)की फोटो-नकलसे।

१९८. तार : बेलगाँवके धरनेदारोंको

२० जुलाई, १९२१

धरनेके खिलाफ गैरकानूनी आदेशोका भी पालन करे, क्योंकि उससे आगे चलकर सविनय अवज्ञा आन्दोलनको निश्चय ही बल मिलेगा। विदेशी वस्त्रोके बहिष्कारकी जी तोड कोशिश करे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१. कराचीके आयात-निर्यात व्यापारी जगासिया ब्रदर्सने स्वदेशी आन्दोलनकी शिकायत करते हुए गांधीजीको लिखा था कि इसके कारण उनको व्यवसायमें खासा घाटा उठाना पड़ा है और उनके गोदामोंमें विदेशी वस्त्रोंका स्टॉक बेकार पड़ा है। उन्होंने गांधीजीसे सलाह मांगी थी कि वे अपने सिरपर पड़े भुगतानको कैसे चुकायें और पूछा था कि क्या वे अनबिके मालको खपानेके लिए लाटरीका तरीका अपनानेकी अनुमति देंगे।

१९९. भाषण : पूनाकी सार्वजनिक सभामें[1]

२० जुलाई, १९२१

कैम्पकी एक आम सभामें बोलते हुए महात्मा गांधीने कहा कि विदेशसे अंगुल-भर कपड़ेका आयात नहीं होना चाहिए। कुछ जमाना हुआ भारत अपनी जरूरतसे भी ज्यादा कपड़ा तैयार किया करता था। भारतीय सूत उद्योगको ईस्ट इंडिया कम्पनीके कर्मचारियोंने नष्ट कर दिया। आयातित कपड़ेके लिए हमें प्रतिवर्ष ६०,००,००,००० रु० बाहर भेजने पड़ते हैं। हमें चाहिए कि हम स्वयं खादी पहनने और सूत कातनेके लिए तैयार हों और, बुनकरोंको कपड़ा बुननेके लिए हाथका कता सूत अपनानेके लिए प्रोत्साहित करें। स्वदेशी एक धर्म है। इस धर्मका पालन दृढ़ताके साथ किये बिना स्वराज्य पाना असम्भव है।

धरनेकी चर्चा करते हुए गांधीजीने कहा कि धरना एक बड़ा और अच्छा आन्दोलन है, परन्तु मदिरापान करनेवालों को हरगिज मारना-पीटना नहीं चाहिए। उन्हे गालियाँ भी नहीं देनी चाहिए। [धरना देते समय] स्वयंसेवकोंको पूर्णतः अहिंसात्मक रहना चाहिए। शराबके व्यापारियोंको अपनी दूकानें बन्द कर देनी चाहिए। देश शराबसे छुटकारा पाना चाहता है; शराबने पीनेवालों को हैवान बना दिया है। अपना भाषण समाप्त करते हुए गांधीजीने श्रोताओंसे अपील की कि स्वदेशीको पूरे दिलसे अपनायें।[2]

श्री गांधीने कहा कि विदेशी सूतसे बुना हुआ कपड़ा भी विदेशी ही माना जायेगा। मैं चाहता हूँ कि आप इस विषयमें बहुत ही सतर्क व सावधान रहें। स्वतंत्रता प्राप्तिके लिए लोकमान्यने जो त्याग किये उन्हें आप सब याद करें और उनके विचारोंको अपने जीवनमें उतारें। मुझे इस बातकी परवाह नहीं है कि स्कूलों व अदालतोंका बहिष्कार होता है या नहीं। उसका उद्देश्य तो सिद्ध हो ही गया है। लेकिन मैं हिन्दू-मुस्लिम एकता, अहिंसा और विशेष रूपसे विदेशी वस्त्रका बहिष्कार जरूर चाहता हूँ; उसका पूरा आग्रह करता हूँ। यदि अगस्तके अन्ततक हम यह बहिष्कार सफलतापूर्वक कर सके तो स्वराज्य हमें मिल गया समझिए। उन्होंने महाराष्ट्रकी प्रशंसा की और [इस कार्यक्रममें] अधिक आस्था रखनेको कहा।

शनिवार वाड़ाके मैदानमें एक विशाल सार्वजनिक सभामें भाषण देते हुए गांधीजीने कहा कि आजका दिन एक पवित्र दिन है। हम लोग यहाँ तिलक महाराजकी

१ भाषणके पूर्व गांधीजीने लोकमान्यके चित्रका अनावरण किया और उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। उन्होंने स्त्रियों तथा खिलाफत-कार्यकर्त्ताओंकी सभाओंमें भी भाषण दिये थे।

२. इसके आगेका अंश उसी दिनकी एक दूसरी सार्वजनिक सभामें गांधीजी द्वारा दिये गये भाषणका विवरण है।

बरसी मनानेको इकट्ठे हुए हैं। उन्होंने हमें स्वराज्यके महामन्त्रकी दीक्षा दी थी। स्वराज्य पानेके लिए सबसे आसान और सम्भव उपाय स्वदेशी ही है। उससे नंगोंको वस्त्र और भूखोंको भोजन मिलेगा। २ करोड़ भारतीय आधा पेट खाकर बसर कर रहे हैं। महाराष्ट्र बुद्धिमान है, महाराष्ट्रमें विद्या है, महाराष्ट्र हर प्रकारका त्याग करनेको तैयार रहता है परन्तु उसमें विश्वासकी कमी है। यदि महाराष्ट्र स्वदेशी धर्मको अविचल विश्वाससे अपनाये तो साल-भरके अन्दर स्वराज्य मिलना निश्चित है। भाषण समाप्त करते हुए गांधीजीने आशा व्यक्त की कि महाराष्ट्र तिलक महाराजके योग्य साबित होगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २४-७-१९२१

२००. भाषण : तिलक महाविद्यालयके उद्घाटनपर[1]

२० जुलाई, १९२१

तिलक महाविद्यालयके भवनका उद्घाटन करते हुए विद्यालयके मन्त्री प्रोफेसर धारपुरे द्वारा परिचयात्मक भाषण दिये जानेके बाद महात्मा गांधीने कहा कि देशमें सभी जगह राष्ट्रीय स्कूल और कालेज खोले गये हैं। उन्होंने बिहारकी विशेष रूपसे प्रशंसा की, क्योंकि वह आलस्य और निद्राको एकदम त्यागकर असहयोग कार्यक्रमके लगभग सभी अंगोंको पूरा करनेमें सफल हुआ है। श्री चित्तरंजन दासने बंगालके असहयोगी विद्यार्थियोंके लिए व्यवस्था कर दी है। इस दिशामें उनका त्याग निश्चय ही अद्वितीय है। गुजरातमें भी एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय है। परन्तु विश्वविद्यालय तो हमारी शिक्षा-प्रणाली कैसी हो यह सामने रखनेके लिए खोले गये हैं। मुझे यह देखकर खुशी हुई है कि तिलक महाविद्यालयमें औद्योगिक और व्यावसायिक प्रशिक्षणके लिए भी व्यवस्था की गई है। निःसन्देह यह इस संस्थाकी एक विशेषता है। इसलिए यह तथ्य कि ये महाविद्यालय सरकारी संस्थाओंकी कोरी नकल-भर नहीं हैं, भविष्यमें 'टाइम्स ऑफ इंडिया' की नुक्ताचीनी बन्द कर देनेके लिए काफी होगा। गांधीजीने अन्तमें कहा, मैं आशा करता हूँ कि विद्यालय ऐसे विद्यार्थी तैयार करेगा जो उस महापुरुषके नामको उज्ज्वल करेंगे, जिसके नामपर यह खोला गया है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २४-७-१९२१

१ पूना में।

२०१. टिप्पणियाँ

इन स्थितियोंमें आप क्या करें?

यदि आप बुनकर है और अपने देश, खिलाफत और पंजाबके बारेमें सोचते है तो —

(१) आपको केवल हाथ-कते सूतका ही कपड़ा बुनना चाहिए, और उसका उतना ही पैसा लेना चाहिए जितने से कि आपकी जीविका चल जाये। आपको मोटा सूत बुननेकी दृष्टिसे अपने करघेमें आवश्यक परिवर्तन करनेसे सम्बन्धित सभी कठिनाइयोका हल निकालना चाहिए।

(२) यदि आपको तानेके लिए हाथका कता सूत काममे लानेमे कोई कठिनाई हो तो आपको उसके लिए भारतीय मिलो द्वारा काते गये सूतको और बानेके लिए हाथका कता सूत काममे लाना चाहिए।

(३) जहाँ यह भी सम्भव न हो, वहाँ आप ताने और बाने दोनोके लिए मिलका [देशी] सूत काममे लाये।

पर आपको अबसे रेशमी या सूती सभी प्रकारका विदेशी सूत काममे लाना बन्द कर देना चाहिए।

यदि आप कांग्रेसके अधिकारी या कार्यकर्त्ता है तो आप अपने कार्यक्षेत्रके बुनकरोके सामने ऊपर बताये गये सुझाव रखकर उन्हे इस ढंगको अपनानेके लिए समझाये-बुझाये और उनकी भरसक सहायता करे।

यदि आप खरीददार हैं तो केवल सबसे अच्छी किस्मका कपड़ा खरीदनेका आग्रह कीजिए। पर यदि आपको कपड़ेकी वैसी पहचान न हो या उतना मँहगा खरीदनेकी सामर्थ्य न हो तो उससे हलके दर्जेका — दूसरे या तीसरे दर्जेका — कपड़ा खरीदिए, पर किसी भी हालतमे विदेशी कपड़ा या विदेशी सूतसे भारतमे बुना कपड़ा न खरीदिए।

यदि आप गृहस्थ है तो —

(१) आपको अबसे किसी भी प्रकारका विदेशी कपड़ा न खरीदनेका दृढ़ निश्चय कर लेना चाहिए।

(२) आपको अपने पड़ोसके बुनकरसे मिलना चाहिए और घरके कते सूतसे और उसके अभावमे भारतीय मिलके कते सूतसे अपने लिए पर्याप्त खादी तैयार करवा लेनी चाहिए।

(३) आपको अपना सारा विदेशी कपड़ा कांग्रेस कमेटीको दे देना चाहिए। वह उसे नष्ट कर देगी या स्मरना या उसे भारतसे बाहर और कही भेज दिया जायेगा।[1]

१. देखिए "जलायें किसलिए?", १७-७-१९२१।

(४) यदि आपको अपने विदेशी कपडे छोड़ देनेकी हिम्मत न हो तो आप उन्हे घरपर छोटे-मोटे काम करते समय पहनकर फाड़ डाले, पर घरसे बाहर कभी विदेशी कपड़े पहनकर न जायें।

(५) यदि आपको थोड़ा भी अवकाश हो तो आप उसको राष्ट्रके लिए सम और ठीक बटदार सूत कातनेका काम सीखनेमें लगायें।

यदि आप छात्र या छात्रा है तो स्वराज्यकी स्थापना होनेतक आपको कमसे-कम चार घटे प्रतिदिन सूत कातना, रुई पीजना या कपड़ा बुनना चाहिए। आप इतना किये बिना पढ़ने-लिखनेको पाप समझे।

कांग्रेस कमेटियाँ

लोग मुझसे पूछते है कि क्या काग्रेसके रजिस्टरमें एक करोड़ सदस्य दर्ज हो गये है। मेरे सामने ठीक-ठीक आँकड़े तो नही है पर यदि हमे केवल औपचारिक पजीयनसे ही सन्तोष होता हो तो यह मै अवश्य जानता हूँ कि हमारी सदस्य-सख्या लगभग उतनी हो गई है। पर हमे उसका ठीक-ठीक अर्थ समझ लेना चाहिए। वह यह कि हमारे पास ऐसे एक करोड़ पुरुष और स्त्रियाँ है जो काग्रेसके सिद्धान्त-मे विश्वास करते है और उसके लिए काम करना चाहते है। विदेशी कपड़ेका बहिष्कार उसकी सच्ची कसौटी है। यदि हमारे साथ एक-से विचार रखनेवाले एक करोड़ पुरुष और स्त्रियाँ हो तो हमे उसका प्रत्यक्ष प्रमाण सडको और गाँवोमें दिखाई देना चाहिए। क्या हमे चलते समय ऐसा दिखाई देता है कि हर तीस स्त्री-पुरुषोमे से एकने खादीके या कमसे-कम स्वदेशी कपड़े पहन रखे है? क्या हमे दिखाई देनेवाले अधिकांश व्यक्तियोके पहनावे आदिमे स्वदेशीपन दिखाई देता है? इसका उत्तर अनिच्छासे ही सही किन्तु होगा नकारात्मक ही। इसलिए मै काग्रेसके सभी सगठनोको यह सलाह दूंगा कि जबतक हम विदेशी वस्त्रोका पूर्ण बहिष्कार न कर दें तबतक हमे स्वदेशीके अतिरिक्त और किसी बातपर ध्यान ही नही देना चाहिए। इसके लिए यही उपयुक्त समय है। हर एक काग्रेसी कार्यकर्त्ताको खद्दरके कपडे पहनने चाहिए। यह तो स्वराज्यके सैनिककी पोशाक ही बन जानी चाहिए। मै अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी आगामी बैठककी ओर इस आशासे दृष्टि लगाये हूँ कि सभी सदस्य वहाँ सैनिककी इस पोशाकसे सुसज्जित हो कर आयेगे। यदि हमे ३१ अगस्ततक विदेशी कपडेका पूर्ण बहिष्कार कर देना है तो काग्रेसी सगठनोको पीजने, कातने और बुननेवाली सस्थाओका रूप ले लेना चाहिए। काग्रेसी कार्यकर्त्ताओको पीजने, कातने और बुननेके काममे प्रवीण हो जाना चाहिए। उन्हे लाचारीके भावसे साबरमती आश्रमको सूचना और मार्गदर्शन प्राप्त करनेके लिए नही लिखना चाहिए। ईश्वरकी कृपासे अब हर एक प्रान्तमे इससे सम्बन्धित प्रक्रियाओका थोड़ा-बहुत ज्ञान हो गया है। हर एक प्रान्तमे कार्यकर्त्ताओको पिंजारो, कतियो और बुनकरोका सहयोगी बनना चाहिए, उनके धन्धेको सीखना चाहिए ताकि स्वयं कार्यकर्त्तागण उस धन्धेको सरक्षण दे सके; उन्हे उनके साथ किसी प्रकार-की होड़ नही करनी है। उन्हें चरखो और तकलियोके लिए बढइयो और लुहारोके सहयोगीके रूपमें भी काम करना चाहिए। इस तरह पर्याप्त खादीका भण्डार बनाकर

उसे लागत दामपर बेचना चाहिए, इस लागतमें भण्डार चलानेका खर्च शामिल होना चाहिए। दूसरे शब्दोमे फिलहाल हर एक काग्रेस कार्यालयको शान्तिपूर्ण अस्त्रोंके सग्रह और निर्माणका आगार बन जाना चाहिए। क्या यह असगत या असम्भव माँग है? क्या युद्धके समय इग्लैंड, फ्रास और जर्मनीमे प्रत्येक काम कर सकनेवाला व्यक्ति युद्धके उद्देश्योको आगे बढानेके लिए काम नही करता था? यदि हम यह विश्वास करते है कि स्वराज्य स्वदेशीके बिना प्राप्त नही किया जा सकता तो क्या उसका निष्कर्ष यह नही निकलता कि हमें सतत और बुद्धिमत्तापूर्वक अपना ध्यान अन्य सभी बातोकी ओरसे हटाकर केवल बहिष्कार करने, विनिर्माण करने और वितरण करनेकी ओर लगाना चाहिए। सभाएँ और सभाओमे होनेवाले भावुकतापूर्ण ओजस्वी भाषण बन्द कर दिये जाने चाहिए। हमें शासकोके विषयमे सोचनेकी अपेक्षा अपनी कमजोरियो और कमियोके विषयमे सोचना चाहिए। शासकोके विषयमे सोचनेसे तो केवल घृणा, दुर्बलता और विवशता ही उत्पन्न होगी। अपनी कमजोरियो और कमियोके विषयमें सोचने और तदनुसार कार्य करनेसे हममे साहस, शक्ति और आशा जागेगी। इसलिए यदि हम सभाएँ या बैठके करे तो वे बहिष्कार और विनिर्माणकी आवश्यकताको प्रदर्शित करने, तथा उसके लिए मार्ग दिखानेके लिए केवल कार्रवाई सम्बन्धी बैठके होनी चाहिए।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी आगामी बैठक

अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी होनेवाली बैठकपर बहुत-कुछ निर्भर है। वाद-विवाद या व्यर्थकी बातचीतके लिए हमारे पास समय नही है। हमे यह कहनेमें समर्थ होना चाहिए कि क्या भारतको अगले कुछ महीनोमे स्वराज्यकी स्थापना और खिलाफत तथा पजाबमें हुए गलत कामोके प्रतिकारके लिए सगठित किया जा सकता है, क्या हम सफलता सम्बन्धी आवश्यक बातोके लिए एकमत है, और क्या हम उसके लिए अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर काम करनेके लिए तैयार है? आशा है कि उत्तरदायी अधिकारी अपने-अपने प्रान्तोके विषयमे निम्नलिखित आँकडे लेकर आयेंगे:

(क) तिलक स्वराज्य-कोषकी राशि,

(ख) काग्रेस-रजिस्टरमें दर्ज सदस्योकी सख्या,

(ग) चालू चरखोकी सख्या और उनसे आजतक हुआ उत्पादन,

(घ) पीजनेवालो की सख्या,

(ङ) (१) हाथसे कते सूत, (२) भारतीय मिलोमे कते सूत, और (३) विदेशी सूतके बुनकरोकी संख्या,

(च) विदेशी वस्त्रोका आयात करनेवालो की संख्या।

साथ ही वे नागरिक सविनय अवज्ञा और करबन्दी आन्दोलनकी सम्भावनाओके सम्बन्धमे आवश्यक सूचना देनेकी तैयारीसे भी आयेंगे।

मुझे आशा है कि कमेटीकी यह बैठक कार्रवाई पूरी करनेके लिए होगी और इसमे निरर्थक वाद-विवादके द्वारा राष्ट्रीय समयका एक भी क्षण नष्ट न होने देनेकी सावधानी रखी जायेगी।

मिलोंमें बनी खादी

एक संवाददाताने इस तथ्यकी ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया है कि बाजारमे अब हमारे यहाँके मिलोमे बनी हुई और जापानसे खरीदी हुई खादी मिल रही है। इसपर विश्वास करनेको जी नही होता। क्या वाणिज्य-व्यापारका स्तर इतना गिर गया है कि इस अनुल्लघनीय क्षेत्रका ऐसा उल्लघन करे। हमारी मिलोके पास अपनी मशीनोके लिए निश्चय ही इतना काम है कि उन्हे झोपडियोमें रहनेवाले गरीब कामगारोके मुँहसे उनकी रोटी छीननेकी जरूरत नही पडनी चाहिए। फिर भी उपभोक्ताको तो सावधान हो ही जाना चाहिए। हाथसे कते सूतके बने कपडेको पहचाननेमे कभी गलती नही होती, विशेष रूपसे जब वह बिना कलफ लगा हुआ और बिना धुला हो। जो कपडा मिलका बना हुआ दिखाई देता हो और फिर भी जिसे हाथसे कता और हाथसे बुना हुआ कहा जाता हो उसके बारेमें सतर्क हो जाना चाहिए। सच तो यह है कि हाथसे कते और बुने कपडेकी अपनी विशेषता होती है, होनी भी चाहिए। तैयार होनेपर उसमे एक विशेष प्रकारका निखार होना चाहिए, और उसमे मिलके बने हुए कपडेकी बेजान बाहरी चमक-दमक नही होनी चाहिए। हाथकी कती खादीमे एक खुरदरापन होता है जो तापहर होता है। हाथसे बनी खादी पसीना सोखनेवाली, हलकी, देखनेमे अच्छी लगनेवाली होती है, और बुननेवाले और कातनेवाले दोनोके पसीना बहाये बिना यह चार आने प्रति गजके हिसाबसे तैयार नही की जा सकती। यह इससे कममे केवल तभी तैयार की जा सकती है जब यह केवल बेकार सूतसे बनाई जाये, पर तब जल्दी जीर्ण हो जायेगी और कुछ ही बार धोनेसे फट जायेगी। जिन भण्डारोसे हम परिचित है केवल वहीसे खादी खरीदना ठीक होगा। बम्बई और अहमदाबादकी काग्रेस समितियोने ऐसे प्रामाणिक भण्डार बना दिये है जहाँ शुद्ध खादी उचित दामोपर मिल सकती है। खादी केवल वही है जिसका ताना-बाना हाथका कता हो और जो हाथसे बुनी हो।

कृपाण

'सिख यंग मैंस एसोसिएशन'के मन्त्रीके अनुसार कृपाणका सिखोके लिए वही महत्त्व है जो ब्राह्मणोके लिए यज्ञोपवीतका होता है। और अब पजाब सरकार कृपाणकी लम्बाई और चौडाई निश्चित करके सिखोको अपने पवित्र अधिकारसे वचित करनेका प्रयत्न कर रही है। जिस प्रकार मैं शस्त्र रखने या उनका उपयोग करनेको घृणित समझता हूँ, उसपर जबरदस्ती रोक लगानेकी बातको मैं उससे भी अधिक घृणित मानता हूँ। जैसा कि मैंने तीन वर्ष पहले कहा था, किसी जातिको जबरदस्ती नि शस्त्र करनेके कामको इतिहासमें ब्रिटिश सरकार द्वारा भारतके प्रति किये गये जघन्य कृत्यके रूपमें माना जायेगा। यदि लोग शस्त्र रखना चाहते है तो उन्हे बिना किसी बाधाके शस्त्र रखने देना चाहिए। अबतक तो सिखोके पास कृपाण बिना किसी रोक-टोकके रही है; इसलिए अब उसपर रोक लगाना उनके प्रति और भी घोर अन्याय होगा। मन्त्रीको यह सिद्ध करनेमे कोई कठिनाई नही है कि कृपाणके विरुद्ध छेडे गये इस सघर्षके साथ-साथ इस बहादुर जातिके दमनके प्रयत्न किये जा रहे है। इसका कारण भी

स्पष्ट है। सिखोंमें राजनीतिक जागृति आ गई है। वे केवल अपने अधिकारियोंके कहनेपर मार-काटके कामसे ही सन्तुष्ट नहीं हो जाते। जिस कारणसे उन्हें लड़नेके लिए कहा जाता है उसके सब पहलुओंपर वे विचार करना चाहते हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वे यह जानना चाहते हैं कि उनकी 'स्थिति क्या है।' वे हर एक काममें बराबरीके भागीदार बनना चाहते हैं। सरकारको यह असहनीय है, और इसलिए वह उनको दबा देनेपर तुली हुई है। सरकारके विचारमें जो उनमें सबसे अधिक वीर हैं, उनकी जबानपर ताला डाल दिया गया है। मैं केवल यह आशा कर सकता हूँ कि सिख अपने पवित्र शस्त्रको छोड देनेकी अपेक्षा सत्याग्रहका मार्ग अपनायेंगे। हम जोर-जबरदस्तीसे अनुशासन नहीं सीख सकते। शस्त्र रखनेका अधिकार होते हुए भी हम उनका प्रयोग न करने या दायित्व तथा आत्मसंयमके साथ उनका प्रयोग करना सीखें।

कितना सुन्दर!

प० मोतीलाल नेहरूकी अनुमतिसे मैं रामगढमें, जहाँ वे इन दिनों स्वास्थ्य-लाभ कर रहे हैं, व्यतीत किये हुए उनके जीवनका निम्नलिखित शिक्षाप्रद और मनोरंजक वर्णन शब्दशः उद्धृत कर रहा हूँ :—

> जिस छोटी पहाड़ीपर मैं अकेला केवल अपने एक नौकरके साथ आराम कर रहा हूँ, वहाँका जलवायु और वातावरण मेरे लिए बहुत अनुकूल सिद्ध हो रहा है। कुछ दमा और खांसी अब भी शेष है, पर स्वास्थ्य और शक्ति प्राप्त होनेके साथ-साथ वह अवश्य ही दूर हो जायेगी। दुःखकी बात केवल यही है कि बीमारीके बादकी देखभालके लिए मेरे पास पर्याप्त समय नहीं है; और यह व्यावसायिक जीवनकी पिछली बुराइयोंके कारण है जो अब भी मेरे पीछे पड़ी हुई हैं। जब मैंने वकालत छोड़ी तब मेरे पास जो सैकड़ों मुकदमे थे उनमें से दो को मैं छोड़ नहीं सका था। इनमें से एक मामला सरूपके[1] विवाहके ठीक पहले आया था, और कुछ सीमातक मेरे स्वास्थ्यके खराब होनेका कारण यह भी था, और अब यह दूसरा मामला मेरे स्वास्थ्यके लिए आवश्यक आराममें आड़े आ रहा है। यह एक लम्बा और नया मुकदमा है और ५ जुलाईको शुरू होगा, जिसके लिए पहलेसे तीन या चार दिनका अध्ययन आवश्यक होगा। मैं इसे लखनऊमें होनेवाली अखिल भारतीय बैठकके बाद लेनेका प्रयत्न कर रहा हूँ, पर मैंने फिलहाल रामगढ़से रवाना होनेकी तारीख ३० जून निश्चित कर ली है। यदि मुझे केवल कुछ ही सप्ताहोंका समय और मिल जाये तो मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि मेरे अन्दर एक बैल-जितनी शक्ति आ जायेगी। पर अहिंसावादी असहयोगी व्यक्तिके लिए शारीरिक दृष्टिसे इतना अधिक शक्तिशाली होना शायद निरापद नहीं है।
>
> मैं जिस प्रकारका जीवन यहाँ व्यतीत कर रहा हूँ, आप उसके बारेमें जानना चाहेंगे। अतीतके उन सुखद (?) दिनोंमें जब मैं पहाड़ोंपर आया करता

१. विजयलक्ष्मी, उनकी बड़ी पुत्री।

था, तब मेरे साथ दो प्रकारका भोजन बनानेकी व्यवस्था रहा करती थी — एक अंग्रेजी और दूसरी भारतीय। शिविरमें छोटी हाजरीके बाद, हम जंगलकी ओर रवाना होते और हमारे साथ राइफलों, छोटी बन्दूकों और कारतूसोंका पूरा इन्तजाम रहता, और कभी-कभी तो हमारे साथ हाँका करनेवालो की एक छोटी-सी फौज ही रहती थी। हम दिन ढलेतक अपने रास्तेमें आनेवाले भोले-भाले जानवरोंको मारते रहते थे। इस बीच हमें जंगलमें घरके समान ही बिलकुल समयपर बाकायदा खाना और चाय मिल जाती थी। शिविरमें लौटनेपर हमारे लिए बढ़िया भोजन तैयार मिलता; हम डटकर भोजन करते और निश्चिन्ततासे गाढ़ी नींद सोते थे। शान्त रूपसे चलनेवाले जीवन-क्रममें अव्यवस्था उत्पन्न करनेवाली कोई बात नहीं होती थी; हाँ, असावधानीसे निशाना चूक जानेपर किसी गरीब जानवरकी जान बच जाती थी तो जरूर नाराज होनेका प्रसंग उपस्थित हो जाता था! और अब पीतलके कुकरने (जिसे हमने तिब्बिया कालेजके उद्घाटनके समय खरीदा था) उक्त दो भोजन-व्यवस्थाओंकी जगह ले ली है; परिचारकोंके दलके बदले अब केवल एक ही नौकर रह गया है जिसे बहुत होशियार नहीं कहा जा सकता। पहले जहाँ हम अपना सामान खच्चरोंपर लादकर ले जाते थे वहाँ अब चावल, दाल और मसालेके तीन छोटे-छोटे थैले — जिन्हें खादीके बदले विदेशी कपड़ेका बनानेके लिए मैं कमलाको[1] कभी क्षमा न करूँगा — ही रह गये हैं। जहाँ पहले अंग्रेजोंकी तरह नाश्ता, दोपहरका और रातका भोजन करते और साथ ही सुबह-शामकी चायके साथ बहुत-सारे फल लेते थे और कभी-कभी उपलब्ध होनेपर एक या दो अंडे मिल जाते थे, वहाँ अब दोपहरमें मुख्य भोजनके रूपमें केवल चावल, दाल और सब्जी ही लेते हैं, अलबत्ता कभी-कभी खीर भी होती है। शिकारकी जगह लम्बे सैर-सपाटोंने ले ली है और राइफलोंकी जगह पुस्तकों, पत्रिकाओं और समाचार-पत्रोंने (पुस्तकोंमें मेरी प्रिय पुस्तक है एडविन अर्नाल्डकी "सांग सिलेस्चियल",[2] जिसे अब मैं तीसरी बार पढ़ रहा हूँ)। जब जोरकी वर्षा होती है, जैसी कि इस समय हो रही है, तब इस प्रकारके ऊल-जलूल पत्र लिखनेके अतिरिक्त और कोई काम नहीं रह जाता। [शेक्सपियरके शब्दोंमें कहूँ तो] "क्यासे क्या हो गया?" पर वास्तवमें जीवनका जितना रस मुझे इसमें मिल रहा है उतना पहले कभी नहीं मिला। केवल चावल समाप्त हो गये हैं, और मैंने ब्राह्मणके समान इस समय पासमें विद्यमान जगतनारायणके[3] राजसी भण्डारसे चावलके धर्मार्थ दानके लिए प्रार्थना की है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २१–७–१९२१

१. जवाहरलाल नेहरूकी पत्नी।
२. भगवद्गीताका अंग्रेजी अनुवाद।
३. प्रमुख वकील, हंटर कमेटीके सदस्य; देखिए खण्ड १६।

२०२. शिमलाकी छाया

यह बात बिलकुल साफ है कि असहयोग आन्दोलन न ब्रिटिश-विरोधी है और न ईसाई-विरोधी, लेकिन यदि इसका प्रमाण ही चाहिए तो श्री स्टोक्सका उदाहरण हमारे सामने है। वे अंग्रेज हैं और भारतमें बस गये हैं। वे कट्टर ईसाई हैं। उन्होंने अपना सर्वस्व बेगारीकी कुप्रथाको दूर करनेमें लगा दिया है। ये श्री स्टोक्स पक्के असहयोगी और कांग्रेसी हैं। मेरे विचारमें मेरा यह कहना ठीक है कि वे धीरे-धीरे विचारपूर्वक उसके अनुयायी बने हैं। श्री स्टोक्स सरकारसे जितना संघर्ष कर रहे हैं, उतना कोई भारतीय भी नहीं कर रहा है। वे पर्वतीय लोगोंके सच्चे मार्गदर्शक, दार्शनिक और मित्र बन गये हैं। पाठकको यह जानना चाहिए कि बेगार शिमलामें ही, कहा जाये तो वाइसरायकी नाकके बिलकुल नीचे, चल रही है, और लॉर्ड रीडिंग फिर भी इस बुराईको दूर करनेमें असमर्थ हैं। मुझे इस बातमें सन्देह नहीं कि उनके मनमें इसे दूर करनेकी पर्याप्त इच्छा तो है, पर वे जिला अधिकारियों और अन्य अधिकारियोंको अपनी इच्छाके मुताबिक नहीं चला पाते। कुछ अधिकारी इतने निर्लज्ज हैं कि यदि वे ब्रिटिश सरकारके सीधे प्रशासनमें रहनेवाले प्रदेशोंमें मनमानी नहीं कर पाते हैं तो देशी रियासतोंके द्वारा करा लेते हैं। शिमलाके पासके पहाड़ी भागोंमें छोटी-छोटी देशी रियासतें हैं जिनमें ब्रिटिश अधिकारी ही सर्वशक्तिमान् होता है। वह अपने अधिकार-क्षेत्रमें वाइसरायसे भी अधिक शक्ति-सम्पन्न होता है। वह रियासतोंसे अपनी इच्छाके अनुसार काम करवा सकता है, और इतने पर भी कह सकता है कि उन रियासतों-के कामोंमें उसका कोई हाथ नहीं है। प्रतिपालक अधिकरण (कोर्ट ऑफ वार्ड्स) के अन्तर्गत एक ऐसी रियासत है जहाँ शिमलाके उप-आयुक्त (डिप्टी कमिश्नर) के इशारेपर बेगार-आन्दोलनको दबानेका प्रयत्न चल रहा है। मेरे एक पारसी मित्रने मेरी बातको सुधारते हुए ठीक ही कहा है कि यह समस्या ब्रिटिश शासनके समयसे नहीं, आदिकालसे, मानव-इतिहासके आरम्भसे ही चली आ रही है। और दमन करने-वालों का विशेष प्रिय तरीका यही है कि आन्दोलनके मुख्य-मुख्य व्यक्तियोंको जनताके बीचसे हटा दिया जाये। जड़पर ही कुठाराघात होना चाहिए और इसीलिए गरीब पर्वतीय लोगोंके सबसे अधिक कार्यक्षम और सुसंस्कृत व्यक्ति कपूरसिंहको बन्द कर दिया गया है। सबूत किस ढंगसे इकट्ठा किया गया था, इसका एक विशद वर्णन इस प्रकार है

> जनताको पूरी तौरपर आतंकित कर दिया गया था। शिमलासे पुलिस बुलाई गई और कई लोग गिरफ्तार कर लिये गये। सभी लोगोंको मशीनगनोंसे उड़ाने और कालापानी भेज देनेकी धमकियाँ देकर डराया गया . . .ऐसे वाता-वरणमें मुकदमेके लिए सबूत इकट्ठा किया गया।

इससे पंजाबके मार्शल लॉके दिनोंकी याद हो आती है।

पर्वतीय लोगोको अपने विश्वसनीय नेतापर किये गये इस अत्याचारके विषयमे बुरा लगना स्वाभाविक है। आशा है कि जबतक उनके नेताको छोड़ नही दिया जायेगा तबतक वे श्री स्टोक्सके नेतृत्वमे चलकर किसी भी तरहकी बेगार करनेसे दृढतापूर्वक इनकार कर देगे, फिर उसके लिए उनको पूरे पैसे भी क्यो न मिले? उन्हे कमजोर नही पडना चाहिए, बल्कि एक सकल्प करके स्वय ही अधिकारियोके क्रोधका सामना करनेके लिए डट जाना चाहिए और अपने नेताके समान जेलकी सजाका सामना करना चाहिए।

बेगार कायम रखनेके लिए यह हठ क्यो किया जाता है? अधिकारियोकी सत्ता, शान और सुविधाके लिए। और इसलिए कि अधिकारियोका काम बेगारसे ही चलता है। बेगारके बिना वे हिमालयके जगलोमे शिकार नही खेल सकते। यदि बेगार बन्द हो गई होती तो ड्यूकको पहाडी किलोमें शिकारके लिए नही ले जाया जा सकता था। यदि इसे लुत्फ माना जाये तो शेरो और भोले-भाले जानवरोके शिकार करनेका लुत्फ उठानेके लिए हजारो अनिच्छुक गाँववालो के परिश्रमके बलपर वहाँतक एक नया रास्ता तैयार कराना पडा था। यदि पशुओके पास हमारी समझमें आने लायक वाणी होती तो वे अपना पक्ष ऐसे शब्दोमें प्रस्तुत करते कि मानवता स्तब्ध रह जाती। जो जगली जानवर हमे परेशान करने आते है, उनको मारनेकी बात तो मै समझ सकता हूँ, पर मनुष्यकी रक्त-पिपासा शान्त करनेके लिए किये जानेवाले आयोजनोपर बहुत पैसा लुटानेके पक्षमे जो तर्क दिये जाते है उनमे से कोई भी मुझे ठीक नही जँचता। यदि बेगार-प्रथा न होती तो अधिकारियो या पर्यटकोके मनोरजनके लिए शिकारके आयोजन भी न हो पाते। मुझे भारतीय राजाओके रीति-रिवाज और महाभारतके दृष्टान्त बतलानेकी कोई जरूरत नही है। जिन दृष्टान्तो या रीति-रिवाजोको मै ठीक नही समझता या जिनका नैतिक आधारपर समर्थन नही कर सकता, मै उनका दास बननेके लिए तैयार नही हूँ।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-७-१९२१

२०३. स्त्रियोंकी स्थिति

कटककी श्रीमती सरलादेवी लिखती है. —

क्या आप यह नहीं मानते कि स्त्रियोंके प्रति किया जानेवाला दुर्व्यवहार भी अस्पृश्यताकी तरह व्यापक रोग है। मैं जिन तरुण 'राष्ट्रवादियों' के सम्पर्कमें आई हूँ उनमें से नब्बे प्रतिशतका दृष्टिकोण मैंने इस मामलेमें पशुवत् पाया है। भारतमें कितने असहयोगी है जो स्त्रियोंको केवल भोगकी वस्तु नहीं समझते? क्या स्त्रियोंके प्रति अपने दृष्टिकोणमें परिवर्तन किये बिना भी सफलताकी आवश्यक शर्त — आत्मशुद्धि — सम्भव है?

मैं इस मतसे सहमत नहीं हो सकता कि स्त्रियोंके साथ किया जानेवाला दुर्व्यवहार अस्पृश्यता-जितना व्यापक रोग है। श्रीमती सरलादेवीने इस बुराईको बहुत बढ़ा-चढ़ाकर कहा है। और न ही असहयोगियोंके विरुद्ध लगाये गये इस आरोपको सिद्ध किया जा सकता है कि स्त्रियोंके प्रति उनका दृष्टिकोण मात्र वासना-पूर्तिका है। उद्देश्य कोई भी हो, नमक-मिर्च मिलाकर पेश करनेसे बात कमजोर हो जाती है। पर साथ ही, मुझे इस बातको स्वीकार करनेमें जरा भी हिचक नहीं है कि अपने-आपको सच्चे स्वराज्यके योग्य बनानेके लिए पुरुषोंको अपने मनमें स्त्रियों और उनकी पवित्रता-के प्रति कहीं अधिक सम्मानकी भावना पैदा करनी चाहिए। श्री एन्ड्रचूजने इस सम्बन्धमें जो बात कही है उसमें इन महिलाकी बातकी अपेक्षा कहीं अधिक सचाई है। उन्होंने बहुत तीखे शब्दोंमें कहा है कि हमारी पतिता बहनोंकी लज्जाजनक स्थिति हमारे लिए दुःखकी ही बात हो सकती है, हम किसी भी तरह अपने अहंकारके पोषणके लिए उसका उपयोग करें, यह बहुत गलत है। कोई असहयोगी आनन्द और उत्साहके साथ यह कहे कि इन गुमराह बहनोंमें से कुछ ऐसी हैं जो अपना शरीर सिर्फ असहयोगियोंको ही देती हैं, तो यह बहुत ही गिरानेवाला विचार है। हमारे नैतिक कल्याणके विषय अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं और इस मामलेमें असहयोगियों और सहयोगियोंमें कोई भेद नहीं किया जा सकता। जबतक एक भी ऐसी स्त्री मौजूद है जिसे हम अपनी वासना-तृप्तिके लिए रखते हैं, हम सभी पुरुषोंके मस्तक लज्जासे झुक जाने चाहिए। हम ईश्वरकी सर्वश्रेष्ठ कृतिको अपनी वासना-तृप्तिका साधन बनाकर स्वयंको पशुवत् बनायें, इसकी अपेक्षा तो मैं यही पसन्द करूँगा कि समूची मानवजाति ही नष्ट हो जाये। पर यह समस्या केवल भारतकी नहीं है। यह तो संसार-भरकी समस्या है। मैं शारीरिक सुखोंके पीछे दौड़नेवाले आधुनिक कृत्रिम जीवनको त्यागनेका प्रचार इसीलिए करता हूँ और स्त्री-पुरुषोंसे सादगीका जीवन अपनानेके लिए इसीलिए कहता हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि पशुताके स्तरसे नीचे उतरनेसे अपनेको बचानेका केवल यही एक मार्ग रह गया है कि हम समझ-बूझकर सादगीकी ओर लौट चलें। चरखा इस सादगीका ही प्रतीक है। मेरी उत्कट इच्छा है कि भारतीय नारियोंको अधिकसे-अधिक स्वतन्त्रता मिले। मैं बाल-विवाहोंसे घृणा करता हूँ। मैं बाल-विधवाको देखकर सहम जाता हूँ, और जब मैं किसी पतिको अपनी पत्नीके मरते ही एक बर्बर उदासीन भावसे दूसरा विवाह रचाते देखता हूँ तो क्रोधसे काँपने लगता हूँ। मैं उन माता-पिताओंकी अपराध-पूर्ण उदासीनताकी निन्दा करता हूँ जो अपनी पुत्रियोंको बिलकुल अज्ञानी और निरक्षर रखते हैं और किसी सम्पन्न युवकसे विवाह कर देने मात्रके उद्देश्यसे ही उनको पालते-पोसते हैं। इस दुःख और क्रोधके होते हुए भी मैं इस समस्याकी कठिनाईको समझता हूँ। स्त्रियोंको मतदानका अधिकार होना चाहिए और कानूनी तौरपर उनका दर्जा पुरुषोंके बराबर होना चाहिए। पर समस्या यहीं समाप्त नहीं हो जाती। यह तो शुरू ही तब होती है जब नारियाँ देशकी राजनीतिक गति-विधियोंमें हाथ बँटाने लगती हैं।

मेरे एक बड़े अच्छे मुसलमान मित्रने लन्दनमें नारी-आन्दोलनके प्रमुख कार्यकर्ताके साथ हुई अपनी बातचीतका वर्णन बड़े सुन्दर ढंगसे किया था। उसको मैं यहाँ अपना आशय स्पष्ट करनेके लिए प्रस्तुत करता हूँ। वे मित्र नारी स्वातन्त्र्य आन्दोलनकी एक

बैठकमें भाग ले रहे थे। वहाँ एक महिला मित्रको बैठकमें एक मुसलमानको देखकर आश्चर्य हुआ। उसने उनसे पूछा कि वे बैठकमें कैसे पहुँच गये? मेरे मित्रने उनको बतलाया कि बैठकमें उपस्थित होनेके दो बड़े-बड़े और दो छोटे-छोटे कारण थे। बहुत छोटी आयुमें ही उनके पिता मर गये थे और वे जो-कुछ भी बन पाये हैं वह सब अपनी माताके कारण ही। फिर उनका विवाह भी ऐसी स्त्रीसे हुआ जो जीवनमें उनकी वास्तविक सहभागिनी सिद्ध हुई। और उनके कोई पुत्र नहीं था, केवल चार पुत्रियाँ हैं और वे सभी छोटी-छोटी हैं और वे स्वयं एक पिताके नाते चाहते हैं कि वे अधिक-से-अधिक उन्नति करें। ऐसी स्थितिमें नारी-आन्दोलनमें उनके भाग लेनेपर किसीको कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। आगे उन्होंने कहा कि मुसलमानोंपर यह दोषारोपण किया जाता है कि वे स्त्रियोंके प्रति उदासीन रहते हैं। इससे अधिक गलत और अपमान-पूर्ण कथन हो ही नहीं सकता। इस्लामी कानूनमें स्त्रियोंको समान अधिकार दिये गये थे। पर उनके खयालसे पुरुषने ही अपनी वासनाके लिए स्त्रीको पतिता बना दिया है। उसने स्त्रीकी आत्माकी प्रशस्ति करनेके बजाय उसके शरीरकी प्रशस्ति आरम्भ कर दी, और वह अपनी इस चालमें इतना ज्यादा सफल रहा कि आज स्वयं स्त्री यह महसूस नहीं कर पाती कि वह भी मात्र शारीरिक शृंगारसे प्रेम करने लगी है जो एक तरहसे उसकी दासताकी ही निशानी है। और यह कहते-कहते उनका गला रुँध गया कि यदि ऐसा नहीं तो क्यों बहनोंको अपने शरीरका साज-शृंगार करनेमें ही सबसे अधिक आनन्द आता है? क्या हम पुरुषोंने उन स्त्रियोंकी आत्माको ही बिलकुल कुचल नहीं दिया है? नहीं, उन्होंने अपने ऊपर काबू पाते हुए कहा कि वे सिर्फ इतना ही नहीं चाहते कि नारियाँ औपचारिक स्वतन्त्रता प्राप्त करके ही रह जायें, बल्कि उन्हें अपने बन्धनोंको भी तोड़नेमें समर्थ होना चाहिए, जिनमें उन्होंने स्वयंको अपनी इच्छासे जकड़ लिया है और इसीलिए उन्होंने तय कर लिया है कि वे अपनी पुत्रियोंको बड़ी होनेके बाद स्वतन्त्र रूपसे कोई काम करने योग्य बनायेंगे।

इस सुविचारपूर्ण वार्ताका और अधिक ब्यौरा देनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं पत्र-लेखिकासे यही कहूँगा कि वे मुसलमान मित्रकी इस वार्ताके मुख्य विचारके विषय-में मनन करें और इस समस्याको हल करनेकी कोशिश करें। स्त्रीको स्वयंको पुरुषकी वासना-तृप्तिका साधन समझना बन्द कर देना चाहिए। इसका इलाज उसके अपने ही हाथमें ज्यादा है। यदि वह पुरुषके समान उसकी सहभागिनी बनना चाहती है तो उसे पुरुषके लिए और अपने पतिके लिए भी अपने शरीरका साज-शृंगार करनेसे इनकार कर देना चाहिए। मैं सीताके विषयमें इस प्रकार कभी सोच भी नहीं सकता कि उन्होंने रामको रिझानेके लिए शारीरिक साज-शृंगारपर एक क्षण भी नष्ट किया होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-७-१९२१

२०४. पत्र-लेखकोंसे

पी० सिन्हा: वकीलोंसे सम्बन्धित कांग्रेसके प्रस्तावका[1] उद्देश्य यह था कि जिन न्यायालयोंके द्वारा सरकार अपनी सत्ताको मजबूत करती है उन न्यायालयोंकी प्रतिष्ठा कम हो जाये।

एन० एच० मोदी: संविधानका विचार किये बिना जो लोग रसद और बेगार लेते हैं, उनको निश्चय ही कांग्रेस समितियोंमें पदाधिकारी नहीं बनना चाहिए। मेरी रायमें, कांग्रेसके प्रस्तावसे नामजद सदस्योंके पदाधिकारी बननेपर रोक लगती है। साथ ही कोई अवैतनिक मजिस्ट्रेट भी पदाधिकारी नहीं बन सकता। इक्कीस वर्षसे कम आयुके लोग निश्चय ही सदस्य नहीं बन सकते, भले ही वे कितने भी पढ़े-लिखे क्यों न हों। निजी रूपसे मैं इस बातमें विश्वास नहीं कर सकता कि सहयोगी असहयोगका कार्य सफलतासे चला सकते हैं। इसलिए मैं चाहता हूँ कि जहाँ कार्य संगठित करनेके लिए कोई असहयोगी नहीं मिल सकता, वहाँ कार्य आरम्भ ही न किया जाये। असहयोगी मुसलमानको अवश्य ही विदेशमें बनी तुर्की टोपी नहीं पहननी चाहिए। जो व्यक्ति कांग्रेस समितियोंके चुनावमें अपने लिए मत माँगनेके लिए पैसे लेकर काम करनेवाले लोग नियुक्त करता है, मैं उसे अयोग्य उम्मीदवार समझता हूँ। मैं इस पत्र-लेखकसे और दूसरे लोगोंसे यह कहता हूँ कि अन्ततः इस बातका चुनाव करना तो मतदाताओंके हाथमें है। यदि असहयोगी मतदाता सहयोगियोंको या संदिग्ध चरित्रके लोगोंको चुनना तय करते हैं तो कोई भी संविधान उन्हें सार्वजनिक जीवनमें प्रवेश करनेसे नहीं रोक सकता। और चूँकि सहयोगियोंको भी कांग्रेसमें सम्मिलित होनेका अधिकार है, इसलिए यदि वे कांग्रेसमें आते हैं तो जहाँ उनका बहुमत होगा वहाँ वे निःसन्देह अपनी पसन्दके उम्मीदवारोंको चुनेंगे। कांग्रेसके संविधानमें दलोंका खयाल नहीं रखा गया है। हाँ, कांग्रेसके असहयोग-सम्बन्धी प्रस्तावमें, जो लगभग निर्विरोध पारित किया गया था, यह आवश्यक रखा गया है कि असहयोगी उन लोगोंको ही चुनें जो कांग्रेस कार्यक्रमका अधिकसे-अधिक दृढ़तासे पालन करते हों, जिससे प्रस्ताव ठीक तरह अमलमें लाया जा सके।

के० बी० लाल गुप्त: इस बातका कभी भी दावा नहीं किया गया है कि चरखेसे किसी परिवारका निर्वाह हो सकता है। दावा केवल यही किया जाता है कि चरखेसे गरीबको भोजन मिल सकता है। किन्तु उसका सबसे बड़ा दावा तो यह है कि वह राष्ट्रको समृद्ध बनानेके लिए अनिवार्य है।

बी० एस० एम०: फौजदारी या दीवानीके झूठे मुकदमोंमें गवाही देनेके सम्बन्धमें आपसे मेरा कहना है कि आप कार्यकारिणी समितिके स्पष्टीकरण को देखें। जहाँ नगरपालिकाएँ स्कूलोंका राष्ट्रीयकरण कर दें, वहाँ भी यह अच्छा होगा कि कांग्रेसके

१. इसमें वकीलोंसे अदालतोंका बहिष्कार करनेको कहा गया था।

विशेषज्ञ उपलब्ध हो तो वे उन स्कूलोको उनके नियन्त्रण एव देखरेखमे रहने दे। खिलाफत और पजाबके अन्यायोका परिमार्जन हो जाये तो भी जबतक स्वराज्य नही मिलता, असहयोग बन्द नही किया जा सकता। मैंने अपनी शिमलाकी भेंट जनताको विस्तारसे नही बताई, यह गोपनीयता मेरी रायमें पाप नही है। जब कोई व्यक्ति अपने किसी मित्रकी विश्वास करके कही हुई बातको बतानेसे इनकार करता है तब वह पाप नही करता। विश्वासको कायम रखने और गोपनीयता न रखनेमे पूरी सगति है। हम दण्ड-भयसे या भावी अनिष्ट-भयसे किसी बातको गुप्त रखे, यह सम्भव है।

तेजसिंह वर्मा : फीजी और असमके लोगोको लेनेका आपका कृपापूर्ण प्रस्ताव श्री एन्ड्रयूजके पास भेज दिया गया है। उनका पता है—शान्तिनिकेतन, बोलपुर, पूर्व भारत रेलवे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-७-१९२१

२०५. सभ्यताका उपहास

यद्यपि मैं साहित्य पढनेका प्रेमी हूँ, किन्तु मुझे किसी साहित्यिक कृतिको पढनेका अवसर कठिनाईसे ही मिलता है। 'नेशन' साप्ताहिकका पिछले बड़े दिनपर निकाला गया अक मेरे पास महीनोसे पडा है। उसमें 'लॉ ऐंड गॉस्पेल'[1] शीर्षकसे एक विचारपूर्ण निबन्ध है। यह निबन्ध वर्तमान आन्दोलनपर इतना अधिक लागू होता है कि 'यग इडिया'के जो अनेक पाठक उसे देख नही सके है उनके लाभके लिए मैं उसे किसी तरहका बहाना बताये बिना ज्योका-त्यो पूरा उद्धृत करता हूँ। उस निबन्धके योग्य लेखकने विश्व-विद्रोहको तत्त्वत धार्मिक आन्दोलन बताया है। पाठकोको इस बातका निर्णय करना चाहिए कि क्या भारतीय असहयोग आन्दोलन, जो अहिंसाकी स्पष्ट मान्यतापर आधारित है (भले ही हम उस अहिंसाको व्यवहारमे लानेमे बहुत सफल न भी हो), उन सभी आन्दोलनोमे सबसे अधिक धार्मिक नही है जो विश्वके विभिन्न भागोमे मनुष्यको ऐसी प्रणालीकी दासतासे मुक्त करनेके लिए चलाये जा रहे है, जिसे हम झूठ-मूठ ही सभ्यता कहते है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-७-१९२१

१. मूल अंग्रेजी निबन्धके लिए देखिए अंग्रेजी खण्ड २०, परिशिष्ट ५।

२०६. त्याग और उत्पादन

पुरातनका त्याग और निर्माण — नाश और रचना — असहयोगके ये दो अग है। हम इन दोनोमे से एकके बिना भी काम नही चला सकते। हमने जो कदम उठा लिया है और जिस स्थानपर हम आ खड़े हुए है उसके अन्तर्गत ये दोनो अग पूरी तरह आ जाते है और मेरी समझसे तो इनके बिना हम आगे बढ ही नही सकते। मैं किसी अन्य प्रकारसे अहिंसात्मक असहयोगके आन्दोलनको चलाना असम्भव समझता हूँ।

हम स्वदेशीके बिना एक डग भी आगे नही बढ सकते, मुझे यह भासित होता ही रहता है। हमारी शक्तिका पूर्ण विकास इसी तरह हो सकता है। ज्ञानपूर्वक नाश और ज्ञानपूर्वक निर्माण इसके अन्तर्गत आ जाता है। इसीमे राष्ट्रके सब अगोका व्यायाम और उनकी शक्तिका परीक्षण हो जाता है। राष्ट्र अबतक किसी भी कार्यमे पूरे मनसे नही लगा है। स्वदेशीका सफल प्रयोग जी-जानसे जुटे बिना असम्भव है। जो राष्ट्र पूरे मनसे प्रयत्न करता है उसके लिए स्वराज्य हस्तामलकवत् है, और स्वदेशीके बिना स्वराज्यको आकाश कुसुमके समान समझना चाहिए।

स्वदेशीकी सफलताके लिए हमे विदेशी कपडेका पूरा त्याग करना है और उसकी कमी नया देशी कपडा बनाकर पूरी करनी है। हम अभीतक तो नाश करनेसे डरते थे। अब हमे चरखेके रूपमे रत्नचिन्तामणि मिल गया है। इसका अर्थ यह है कि हमे उत्पादनका अचूक उपाय मालूम हो गया है। किन्तु हमें त्यागके सम्बन्धमें बहुत ध्यान देनेकी जरूरत है। उत्पादनकी गति एक निश्चित सीमातक ही बढ़ सकती है। बादमे तो वह सहज रूपसे बढती रहेगी। नाशका कार्य एक क्षणमे किया जा सकता है। नाश करनेके लिए भी विशेष भावनाकी आवश्यकता होती है। जब हमारे मन बदल जाये तब समझना चाहिए कि अब हम नाश करनेके लिए तैयार हो गये है।

त्याग वैराग्यके बिना नही टिकता यह बात बहुत अनुभवके आधारपर कही गई है। हमे विदेशी कपडेके प्रति इतनी विरक्ति, इतनी अप्रीति हो जानी चाहिए जितनी किसी मलिन वस्तुके प्रति होती है। जबतक हमारे मनमे इतनी विरक्ति उत्पन्न नही होती तबतक हमारा मन जापानकी साड़ी या मैनचेस्टरकी मलमलकी तरफ जाता रहेगा। और तबतक हम इस तरहकी चीजोकी माँग करते रहेगे एव तबतक ऐसी चीजोके बेचनेवाले हमे धोखा देकर इन चीजोको हमारे सिर मढते रहेगे। इसलिए अभी तो हमे वैसी दिखनेवाली चीजोको छूना भी नही चाहिए। कही हम धोखा न खा जाये, यह भय तो हमे लगता रहना चाहिए। इस तरहकी विरक्ति उत्पन्न करनेके लिए हमे यह भी स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि हमारी दासताका मूल विदेशी कपड़ा है। दूसरी सब चीजे उसके बाद ही आई है। ईस्ट इडिया कम्पनीकी कोठी विदेशी कपड़ेके पीछे और उसीके लिए बनाई गई थी।

पहली अगस्त हमारे लिए एक महान् स्मृति-दिवस होना चाहिए। हमारे युगके लोकमान्यकी पहली पुण्यतिथि उसी दिन पड़ती है। उस दिन हम ससारको कौन-सा चमत्कार करके दिखायेगे?

हमारे मनमे लोकमान्यके प्रति जो पूज्यभाव है उसको हम किस प्रकार व्यक्त करे? उसका केवल एक उपाय है, हम उस दिन सब तरहके विदेशी कपड़ेका पूरा बहिष्कार करे। हम सब उस दिन प्रत्येक शहर या गाँवमे एक ही स्थानपर इकट्ठे हो और अपने सब विदेशी कपडे लेकर उनका वहाँ सदाके लिए त्याग करे। इसमे लोकमान्यका अधिकतम सम्मान आ जाता है और इस एक कामको पूरा करनेसे ही हमारे लिए एक वर्षमे स्वराज्य लेना सर्वथा सम्भव हो जाता है। इसलिए पहली अगस्ततक तो खाते-पीते, बैठते-उठते यही विचार करते रहे कि हम स्वय विदेशी कपड़ेका त्याग कैसे कर सकते है और दूसरोसे कैसे करा सकते है। हमने धन-सग्रहके लिए जितना प्रयत्न किया था उससे अधिक प्रयत्न हमे विदेशी कपड़ेके त्यागके लिए करना है। परन्तु प्रत्येक जातिको अपना इन्तजाम खुद कर लेना चाहिए। प्रत्येक जातिको विदेशी कपड़ा इकट्ठा करके काग्रेसकी [बहिष्कार] समितिको दे देना चाहिए और उसकी रसीद ले लेनी चाहिए। यह कार्य स्त्रियोको अधिक कठिन लगेगा। उनके लिए रुपया देना आसान था जेवर देना भी आसान था, किन्तु विदेशी कपड़ेकी सुन्दर लगनेवाली साड़ियोको निकालकर दे देना तो उन्हे बहुत कठिन लगेगा। फिर भी उन्हे इतना कड़वा घूंट पीना ही है। समस्त राष्ट्रके लिए यह घूंट अन्तिम घूंट है। उसके बाद तो थोडेसे स्त्री-पुरुषोको जेल जानेके लिए तैयार रहना होगा। ईश्वर गुजरातके स्त्री-पुरुषोको इतनी त्याग-वृत्ति दे।

हमारे पास समय थोड़ा है किन्तु इसीमे हमे अपना यह-सब काम कर लेना है।

दूसरा अंग है उत्पादन। जो लोग खादी पहनने लगे है उन्हे खादीके उत्पादनमे जुट जाना चाहिए। इस कार्यमे शिथिलता करना पाप माना जायेगा। यदि राष्ट्र विदेशी कपडेको सर्वथा त्याग देगा तो हमे बहुत अधिक खादीकी जरूरत होगी। हम विदेशी कपडेको इसलिए नष्ट करते है कि हमे खादीका उपयोग बढाना है; खादीका उपयोग इसलिए बढाना है कि हमे उसके द्वारा चरखेकी प्रवृत्ति बढ़ानी है और राष्ट्रको उद्योगी बनाना है, एव लोगोकी झोपडियोमे समृद्धिका प्रवेश कराना है। प्रत्येक भारतीयकी औसत वार्षिक आय छब्बीस रुपये है, इसे दूना करनेका यह एक आसान तरीका है। करोडो लोगोकी आय-वृद्धिका कोई दूसरा तरीका नही है। इसलिए गुजरातके हर घरमें चरखा चलाया जाना चाहिए और गुजरातके हर गाँवमे हाथके सूतकी खादीका उत्पादन होना चाहिए। इस समय काग्रेसकी [बहिष्कार] समितिकी ओरसे यही प्रवृत्ति प्रधानत. चलाई जानी चाहिए। विदेशीके त्याग और स्वदेशीके उत्पादनसे ही हमारी कार्य-दक्षताका परिचय मिलेगा।

जो लोग कांग्रेसके उद्देश्यको समझते है और उसका सम्मान करते है वे मिलके बने कपडोका व्यवहार कर ही नही सकते। यदि वे करेगे तो मिलोंका कपडा गरीबो-को नही मिलेगा और उसके भाव चढ जायेगे। यदि हमें खादीकी प्रतिष्ठा बढानी हो और जुलाहोको अधिक मजूरी देनी हो तो भी हमे खादीको शिष्ट वेश बनाना

चाहिए। खादीका व्यवहार किये विना भारतको वास्तविक गौरव मिलना और उसकी कलाका उत्थान होना असम्भव है। जब स्वराज्य मिल जाये तब भले ही हमारे धनी-मानी लोग बहुत वारीक सूत कतवाकर और उससे ढाकाकी मलमल-जैसा कपड़ा बनवाकर पहनें। अभी तो उन्हे भी [मोटी] खादी पहनना ही शोभा देता है।

गुजरातके व्यापारी विदेशी कपडा तो निश्चय ही नही मँगवायेंगे; उनसे इतनी आशा रखना कुछ अधिक नही है। जहाँ विदेशी कपडा बिकता है ऐसे प्रत्येक शहरमे काग्रेसके नेताओको जाना चाहिए और विदेशी कपडेके व्यापारियोसे निवेदन करना चाहिए कि वे विदेशी कपडेका व्यापार बन्द कर दें। इस प्रकार काग्रेसके सदस्योका यह मुख्य कर्त्तव्य है कि वे राष्ट्रके प्रत्येक अगसे स्वदेशीका व्यवहार करवानेके काममे जुट जायें।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २१-७-१९२१

२०७. भाषण: बैंकके उद्घाटनपर[1]

बम्बई
२१ जुलाई, १९२१

मै बैंक-व्यवसाय और लेन-देनसे ताल्लुक रखनेवाली सस्थाओसे सम्बन्धित नही हूँ। उसकी प्रबन्ध-विषयक बातोसे भी मैं बहुत ही कम परिचित हूँ, मित्रोंने मुझे यहाँ आनेको प्रेरित किया और मैं उनके प्रेमके कारण यहाँ आ पहुँचा हूँ। मै यहाँ कभी-कभी मातृभूमिके लिए धन माँगने आया करता हूँ। विदेशी कपडा न पहननेके लिए आपको राजी करनेके सम्बन्धमे भी मैं आपसे कुछ निवेदन करना चाहता हूँ और आपसे यह भी कहना चाहता हूँ कि आप स्वदेशीको प्रोत्साहन दे, क्योंकि उसमे स्वराज्यकी कुजी छिपी हुई है। हममे एक बडे बैंकका कारोबार चलानेकी और अपने राष्ट्रीय कार्योंके दौरान करोडो रुपयोकी व्यवस्था करनेकी योग्यता होनी चाहिए। हमारे देशमे अधिक बैंक नही है, इसका यह अर्थ नही कि हममे करोड़ो और अरबो रुपयोका ठीकसे प्रबन्ध करनेकी क्षमता नही है। हमारे देशमे पिछले कई सौ वर्षोंसे बैंक-व्यवसाय होता आ रहा है। हमारे मारवाडी लोग जन्मजात बैंकर है और वे यदि भारतके अलावा किसी भी अन्य देशमे जन्मे होते तो कुछ करोड ही नही सैकडो करोड़ रुपयोंका प्रबन्ध कर चुके होते। परन्तु चूँकि वे इस निर्धन देशमें जन्मे है इसलिए उनकी योग्यताका मूल्य कम आँका जाता है। एक लेखकने लिखा है कि हालके अधिकाश युद्ध आर्थिक कारणोसे ही हुए है, किन्तु यह कहना भी अनुचित न होगा

१. गांधीजीने शामके चार बजे यूनियन बैंक ऑफ इंडिया लिमिटेडके भवनका उद्घाटन किया। सेठ रतनसी धरमसी मोरारजीने सभाकी अध्यक्षता की।

कि अमीर लोगो द्वारा पीड़ित मानवताका बड़ा हित-साधन किया जा सकता है। मुझे आशा है कि इस बैंकका सचालन ऊँचे नैतिक सिद्धान्तोपर किया जायेगा। मैं इसकी सब प्रकारकी समृद्धिकी कामना करता हूँ। इन शब्दोके साथ मै इसका उद्घाटन करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३–७–१९२१

२०८. सन्देश : जनताको

[२१ जुलाई, १९२१][1]

पहली अगस्तको विदेशी वस्त्रोका त्याग करके और खद्दर पहनकर "लोकमान्यके" पवित्र नामका स्मरण कीजिए। बहिष्कार स्वराज्य-प्राप्ति तथा सार्वजनिक और खिलाफत सम्बन्धी अन्यायोका निराकरण करानेकी अपरिहार्य शर्त है।

पहली अगस्तको लाखो पुरुषों और स्त्रियो — हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई तथा यहूदी — सभीको लाखोकी सख्यामें लोकमान्यकी स्मृतिका सम्मान करनेके लिए एकत्रित होना चाहिए।

जो लोग खादी, या कमसे-कम [स्वदेशी] मिलका बना कपडा नही पहनना चाहते, उन्हे शरीक होनेकी जरूरत नही है। विदेशी वस्त्र पहनकर आना स्वर्गीय लोकमान्यकी स्मृतिका अपमान करना है। विदेशी वस्त्र स्वयसेवकोके हवाले कीजिये या प्रिन्सेस स्ट्रीटमें[2] स्थित अशोक बिल्डिंगमे खोले गये स्टोरमे भेज दीजिये। सबसे अच्छी बात तो यह होगी कि उन कपड़ोकी होली जला दी जाये। किन्तु यदि आप चाहेगे तो वे स्मरना या किसी अन्य देशको भेज दिये जायेगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१. साधन-सूत्रके अनुसार 'सन्देश' के पत्रक इसी तारीखको वितरित किये गये थे।

२. बम्बईमें।

२०९. भाषण: बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

२१ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधी जब बोलनेके लिए उठे तो उनके स्वागतमें जोरकी हर्षध्वनि हुई। उन्होंने कहा कि बहुत थोड़ा-सा ही अरसा बीतनेपर आज हम दुबारा इकट्ठे हुए हैं। पिछली बार तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा करनेके लिए मिले थे। उस अवसरपर सभामें कुछ स्त्रियाँ भी उपस्थित थीं। आज मुझे स्वदेशीके सम्बन्धमें कुछ कहना है। मैं निश्चित रूपसे नहीं कह सकता कि हम इस सालके अन्ततक विदेशी कपड़ेका पूर्ण बहिष्कार कर पायेंगे या नहीं। यदि आप सबने इस काममें मदद की तो सम्भव है कि हम शीघ्र ही अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकें। मैं गत सितम्बर माससे लोगोंसे कहता आ रहा हूँ कि यदि भारतके लोगोंने राष्ट्रीय कार्यमें मदद की तो हम आगामी सितम्बरतक स्वराज्य पानेमें सफल हो जायेंगे। स्वदेशी आन्दोलन एक ऐसा आन्दोलन है जिसमें अमीर-गरीब दोनों ही खुशीसे भाग ले सकते हैं। यहाँ-तक कि सरकारी कर्मचारी भी निःसंकोच शुद्ध स्वदेशी वस्त्र पहन सकते हैं। मेरा विचार है कि यदि आप देशकी पुकारका अनुकूल उत्तर दे सकें तो मैं समझूँगा कि मेरा उद्देश्य पूरा हो गया। मैं आप लोगोंसे साफ-साफ कह दूँ कि ३१ जुलाईके बाद मैं आपसे स्वदेशीके बारेमें कुछ नहीं कहूँगा क्योंकि उससे पहले हर विदेशी चीजका पूर्ण बहिष्कार हो चुकेगा।

... आगे बोलते हुए गांधीजीने कहा, जब कोई व्यक्ति यह मानने लगता है कि असत्य बोलना बुरा है तभी वह समझ पाता है कि वह क्या कर रहा है। इसलिए मैं आप लोगोंसे कह रहा हूँ कि कुछ स्वदेशी और कुछ विदेशी वस्त्र पहनकर आप अपनेको धोखा न दें। सभी धर्मोंके अनुसार यह मिथ्याचार कहा जायेगा। मैं गत ६ अप्रैलसे आपको बताता आ रहा हूँ कि जबतक हिन्दू यह नहीं समझ लेते कि मुसल-मानोंका साथ देकर ही वे खिलाफतकी गलतियाँ सुधरवा सकते हैं, और जबतक मुसलमान यह नहीं समझते कि हिन्दुओंका साथ देकर ही वे अपने उद्देश्यकी पूर्तिमें सफल हो सकते हैं तबतक आप स्वराज्यके लक्ष्यको प्राप्त करनेमें सफल नहीं हो सकते। कल मैं अपने भाई मौलाना और बहन नायडूके साथ पूनामें एक जगहसे दूसरी जगह फिरता रहा और लोकमान्य तिलककी बरसी मनानेमें मदद करता रहा। स्वर्गीय लोकमान्यकी खातिर मैंने वहाँ सुबहसे लेकर राततक काम किया और जिन लोगोंके सामने भाषण दिया उन्हें विदेशोंमें बने सभी वस्त्रोंका बहिष्कार करनेके लिए समझाया।

१. यह सभा माडवीमें जिला कांग्रेस कमेटीके तत्वावधानमें रातको ९ बजे हुई थी। सभामें गांधीजीके अलावा श्रीमती सरोजिनी नायडूने भी भाषण दिया था।

. . . गांधीजीने अपना भाषण जारी रखते हुए कहा कि मिलोंमें तैयार किये गये कपड़े पहननेमें आपको काफी सावधान रहना चाहिए। राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे मशीनका बना कपड़ा वांछनीय नहीं है। वही पुरुष या स्त्रियाँ सुन्दर हैं जो अपना काम अपने लिए और देशके लिए सन्तोषजनक ढंगसे करते हैं। मेरे सामने जो स्त्रियाँ बैठी हुई हैं, उनसे मैं प्रार्थना करूँगा कि वे बिना किसी शंकाके खादी पहनें, क्योंकि जबतक वे विदेशी वस्त्रका बहिष्कार नहीं करतीं, वे स्वराज्यका दावा नहीं कर सकतीं।

भाषण समाप्त करते हुए गांधीजीने कहा कि जो लोग विदेशोंमें तैयार किये गये वस्त्रका बहिष्कार करनेको राजी हैं वे उन कपड़ोंको या तो गरीबोंकी मददके लिए स्मरना भेज दें या भारतसे बाहर कहीं और भेज दें या पहली अगस्तको जलवा दें। जैसे बने वैसे विदेशी वस्त्रोंको पूरी तरह नष्ट कर देना चाहिए। अलबत्ता हर व्यक्ति अपने उन पुराने विदेशी वस्त्रोंको सँजोकर रखना चाहेगा जो उसे उसके प्रिय मित्रों या सम्बन्धियोंने प्रेमोपहारके रूपमें दिये हैं, परन्तु देशकी पुकारको सुनकर इस तरहके वस्त्र भी नष्ट कर देने चाहिए; या कहीं और भेज देने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २२–७–१९२१

२१०. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

२२ जुलाई, १९२१

जब महात्मा गांधी बोलनेके लिए उठे तब जोरकी हर्षध्वनि हुई। उन्होंने कहा कि मैं शहरमें जगह-जगह स्त्री-पुरुषोंके सामने भाषण देता रहा हूँ और मैं समझता हूँ कि आपसे स्वदेशीके सम्बन्धमें कुछ नई बात कहना सम्भव न होगा। मेरे पास लखनऊसे एक सज्जन आये थे। उन्होंने मुझे बताया कि संयुक्त प्रान्तमें कुछ गड़बड़ी चल रही है। सरकारने एक व्यक्तिको मामूली अपराधके कारण एक बहुत अँधेरी कोठरीमें बन्द कर दिया और वह व्यक्ति अभी कैदमें ही है। उक्त सज्जनने मुझसे प्रश्न किया कि ऐसी स्थितिमें मनुष्यको क्या करना चाहिए। मैंने उन्हें सभी कष्ट धैर्यपूर्वक सहनेकी सलाह दी। आप सबको अपने हृदयोंमें धैर्य नामक सद्‌गुण लाना चाहिए। मुझे पक्का पता नहीं कि उक्त सज्जनने जो बातें कही हैं वे सच हैं या नहीं, क्योंकि तीन दिनतक लगातार अँधेरी कोठरीमें बन्द रहना बहुत ही कठिन है। निस्सन्देह ऐसी ही घटनाका अनुभव मुझे भी है, क्योंकि अभीतक हम पंजाबमें विदेशियों

१. मोरारजी गोकुलदास हॉलमें 'ओ' वार्ड कांग्रेस कमेटीके तत्त्वावधानमें गांधीजीने रातके ९ बजे यह भाषण दिया था।

द्वारा भारतीयोंपर की गयी नृशंसताएँ भूल नहीं सके हैं। इसलिए मुझे जो कहानी सुनाई गई है, वह सच भी हो सकती है।

मैं आपसे फिर कहता हूँ कि यदि आप देशके प्रति अपना कर्त्तव्य नहीं समझते तो आपका आजादी माँगना मुनासिब नहीं है। आज मैं इस सभामें आपसे स्वदेशीके सम्बन्धमें कुछ कहूँगा। मुझे किसीने और भी कहानियाँ सुनाई हैं, मसलन यह कि सरकारने तीन व्यक्तियोंको गिरफ्तार किया, उनमेंसे एक व्यक्ति कांग्रेसका मन्त्री है। उसने गिरफ्तार होनेपर सरकारसे माफी माँग ली और बाकी दोनोंने भी माफी माँगी है। उन तीनों आदमियोंने अब राष्ट्रीय कार्योंमें भाग लेना त्याग दिया है और आन्दोलनसे अलग हो गये हैं। उन्हें ऐसे कार्योंके लिए शर्म आनी चाहिए। मैं उपस्थित लोगोंसे अनुरोध करूँगा कि जहाँतक हो सके निर्भय रहे, क्योंकि जब आपका उद्देश्य श्लाघनीय है तो आपको सरकारकी परवाह क्यों करनी चाहिए? यदि आप कठिनाइयाँ और मुसीबतें झेलनेको तैयार नहीं हैं तो आपको आन्दोलनमें भाग लेना इसी समय छोड़ देना चाहिए। इसलिए मैं यहाँ इस सभा-भवनमें उपस्थित हर स्त्री-पुरुषसे अपील करता हूँ कि वह हर घड़ी देशकी खातिर दुःख सहनेको तैयार रहे।

विदेशी कपड़ोंके लिए हमने एक 'डिपो' खोला है जहाँ आप बिना-किसी हिचकिचाहटके अपने कपड़े दे सकते हैं। यदि आप ३१ जुलाई तक विदेशी-वस्त्रका बहिष्कार करनेमें सफल नहीं होते तो आपको अपने साथियोंकी निगाहोंमें और सारे संसारके सामने बहुत शर्मिन्दा होना पड़ेगा।

गांधीजीने उनसे प्रश्न किया कि क्या आप लोगोंने पहली अगस्तके लिए कुछ तैयारियाँ की हैं। उन विदेशी वस्त्रोंको जमा करनेके लिए खोले गये डिपोमें अपने कपड़े भेजनेमें जरा भी शर्मकी बात नहीं है। कुछ बहनोंने, जब उनसे अपनी विदेशी साड़ियोंका बहिष्कार करनेको कहा गया, उत्तर दिया कि वे ऐसा करनेको राजी नहीं हैं। हाँ, कुछ ऐसी भी स्त्रियाँ हैं जो खादीके कपड़े पहननेको सदैव तैयार रहती हैं। आज किसी भी महिलाके पास यदि विदेशी कपड़ा है तो वह सबका-सब राष्ट्रकी पुकारपर त्याग दिया जाना चाहिए। सभामें उपस्थित स्त्री-पुरुष यदि अपने विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार करनेको राजी नहीं हैं तो उन्हें स्वराज्य पानेका कोई अधिकार नहीं है।

मुझे आज इस सभामें जो-कुछ कहना है वह मैं कई बार पहले भी कह चुका हूँ और अब मैं उन लोगोंसे, जो मेरी बात माननेको तैयार हैं, अपने हाथ उठानेको कहूँगा। परन्तु उनसे हाथ उठवानेके पहले मैं उन्हें बता दूँ कि तथाकथित स्वदेशी वस्त्र, जो मिलका तैयार किया हुआ है, हरगिज न अपनाया जाये, क्योंकि मैं आपको यही राय देता हूँ कि मशीनके बने सभी प्रकारके कपड़ोंका त्याग किया जाये। खादी-की सर्वोत्तम खासियत यह है कि वह हाथकी कती और हाथकी बुनी होती है।

गांधीजीने आगे कहा कि बेजवाड़ाकी खादीकी साड़ियाँ अब बड़ी संख्यामें उपलब्ध नहीं हैं, परन्तु उनके अभावमें आप खादीकी साड़ियाँ बहुत आसानीसे पहन सकती हैं और पहली अगस्तको बहुतसी स्त्रियाँ खादीकी साड़ी पहने दिखाई देंगी। मैं आपसे फिर कहूँगा कि इस पोशाकको अपनानेमें कोई शर्मकी बात तो है ही नहीं क्योंकि यह आपकी राष्ट्रीय पोशाक है। आपको अपने मनमें निराशाका पोषण नहीं करना चाहिए बल्कि भारतीय राष्ट्रवादका संग्राम लड़नेके लिए साहसी बनना चाहिए।

इसके बाद उन्होंने उन स्त्री-पुरुषोंसे हाथ उठानेको कहा जो पहली अगस्तको और उसके बाद अपनी पोशाक खादीकी ही रखनेको राजी हैं। इस अनुरोधपर भवनमें उपस्थित लगभग सभी लोगोंने अपने हाथ उठाये। कुछ स्त्रियोंको थोड़ी-बहुत अनिच्छासे हाथ उठाते देखा गया।

इसके बाद गांधीजीने उनसे विदेशोंमें बने कपड़ोंका बहिष्कार करनेका अनुरोध किया और कहा कि वे किसी शंका या अनुग्रहका खयाल किये बिना खादी पहनें और उनसे यह भी कहा कि आप लोग किसी भी प्रकारकी धमकी से विचलित न हों। . . .

अपना भाषण समाप्त करते हुए गांधीजीने कहा कि स्वदेशी आन्दोलनके सम्बन्धमें मुझे और कुछ नहीं कहना है, क्योंकि पिछले बहुत दिनोंसे मैं बराबर इसी विषयपर बोलता आया हूँ। मुझे अपने देशवासियोंपर बहुत विश्वास है और इसलिए मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि जिस महत्त्वपूर्ण आन्दोलनका मैंने श्रीगणेश किया है उसका परिणाम अच्छा ही निकले। (हर्षध्वनि)

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३–७–१९२१

२११. भाषण: बम्बईमें[1]

२३ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने सभाकी कार्रवाई शुरू करनेसे पहले कहा कि मैं श्री जयकरका[2] एक पत्र पढ़कर सुना रहा हूँ; उन्हें बुखार आ गया है इसलिए उन्होंने सभामें शरीक होने और लोकमान्यकी स्मृतिमें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करनेमें असमर्थता व्यक्त की

१. गांधीजीने एम्पायर थियेटरमें पारसी राजकीय सभाके तत्त्वावधानमें आयोजित एक सभामें भाषण दिया। उपस्थित लोगोंमें मार्माड्यूक पिक्थॉल, मौलाना अली और सरोजिनी नायडू भी थे। श्रोतृवर्गमें काफी स्त्रियाँ खादी पहने हुए थीं, जिनमें दादाभाई नौरोजीकी पौत्री कुमारी मेरीन कैप्टेन भी थीं। जल्सेमें आनेके लिए जो टिकट रखे गये थे उनकी बिक्रीसे मिले धनको लोकमान्य तिलककी सर्वोत्तम जीवनीके निमित्त अलग रख दिया गया था।

२. मुकन्दराव रामराव जयकर (१८७३–१९५९), प्रसिद्ध वकील तथा बम्बई विधान परिषद्के सदस्य; पंजाबके उपद्रवोंकी जाँचमें गांधीजीको सहायता की। १९३७-३९ में संघीय न्यायालय (फेडरल कोर्ट) के न्यायाधीश।

है। इसके बाद उन्होंने श्री ललितसे स्वर्गीय लोकमान्यके सम्बन्धमें अपना गीत गानेकी प्रार्थना की।

सभामें भाषण देते हुए गांधीजीने कहा कि जिस कामके लिए हम यहाँ एकत्र हुए हैं वह पवित्र है। आज शामका हमारा कार्यक्रम काफी लम्बा है। [इसलिए] मैं आपका अधिक समय नहीं लूँगा।

श्री तिलक लम्बे भाषण देनेके लिए प्रसिद्ध नहीं थे। वे बहादुरीके कामोंके लिए प्रसिद्ध थे। देश उनकी वक्तृत्व शक्तिके कारण उनको प्यार नहीं करता था। उनके समकालीन कुछ ऐसे व्यक्तियोंके नाम लिये जा सकते हैं जो भाषण-सज्जाकी दृष्टिसे अधिक अच्छे वक्ता माने जाते थे। इसलिए मैं आप लोगोंके सम्मुख लम्बा भाषण देकर आपका अधिक समय लेनेकी जरूरत नहीं समझता। मैं आपका ध्यान उनके कुछ उन अत्यन्त विशिष्ट गुणोंकी ओर दिलाऊँगा जिनकी बदौलत वे जनताके आदर्श बन गये थे — वे गुण जिनकी ऐसे राष्ट्रके लिए उस समय बहुत जरूरत है, जो एक ही सालके भीतर स्वराज्य पानेका बहुत जोरदार प्रयत्न कर रहा हो। आप उनके गुणोंका अनुकरण करके और उन्हें अपने जीवनमें गूँथकर दिवंगत नेताकी स्मृतिमें सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित कर सकते हैं। एक महान् गुण जो देशने लोकमान्यमें देखा वह था उनकी निडरता। उनमे यह गुण इतना साफ झलकता था कि कुछ लोग तो उन्हें अशिष्ट कहने लगे थे। हम जानते हैं कि वे नौकरशाहीकी कड़ी आलोचना करनेसे कभी नहीं चूके। इसलिए नौकरशाहीका क्रोध भड़क उठा और उनपर अंग्रेजोंके खिलाफ नफरत पैदा करनेका आरोप लगाया गया। किन्तु मैं जानता हूँ कि यदि श्री तिलक नौकरशाहीकी आलोचना करनेमें कुछ उठा नहीं रखते थे तो वे उसके सदस्योंकी प्रशंसा करनेको भी, जब कभी वे मुनासिब समझते, तैयार रहते थे। मुझे याद है कि कलकत्ताके पिछले अधिवेशनके अवसरपर जिसमें तिलक महाराज उपस्थित थे, उन्होंने एक हिन्दी सम्मेलनकी अध्यक्षता की। वे वहाँ कांग्रेसमें छिड़े हुए गम्भीर वाद-विवादसे उठकर आये थे। परन्तु सम्मेलनके सामने उन्होंने बिना लिखा विद्वत्तापूर्ण धाराप्रवाहिक भाषण दिया। उन्होंने देशी भाषाओंकी सेवाओंके सम्बन्धमें अंग्रेजीके विद्वानोंकी प्रशंसा की। उन्होंने कहा कि भविष्यके इतिहास-लेखक उनकी सेवाओंकी कद्र करेंगे। तथापि इसका यह अर्थ नहीं कि अंग्रेज देशी भाषाओंको लाभ पहुँचानेके लिए ही भारत आये थे, परन्तु फिर भी, जिन अनेक अंग्रेजोंने भारतीयोंकी अपनी भाषाओंकी कद्र करनेमें मदद की उनके प्रति भारत ऋणी है और उसे न मानना अनुचित होगा।

उनका दूसरा महान् गुण, जिसकी देशको बहुत जरूरत थी, उनका आत्मबलिदान था। वे अपने देशकी सेवामें कभी पीछे नहीं रहे। इसके लिए उन्होंने कभी सौदा नहीं किया। उनके लिए आत्मत्याग हर्षका विषय था। गांधीजीने कहा कि मुझे उदाहरण देनेकी जरूरत नहीं है क्योंकि श्रोतागण उनके बलिदानोंके उदाहरण मुझसे अच्छी तरह जानते हैं। तीसरा महान् गुण उनकी असीम सादगी था। श्री तिलकने

हमेशा स्वदेशी-व्रतका पालन किया। यदि उनके रहते खादी बनाई जाती तो वे उसे बिना हिचकिचाहटके पहनते। मैं तो विश्वास ही नहीं कर सकता कि साज-सज्जाकी अभिलाषा उन्हे छू भी सकती थी। आप लोगोंसे मेरी अपील है कि श्री तिलककी स्वदेशी भावनाका अनुकरण करें। परन्तु यह अनुकरण अनमने भावसे न करें। मैंने सुना है कि जिन स्त्रियोंने जूनमें अपने स्वदेशी प्रेमका इतना अच्छा परिचय दिया था वही अब अपनी विदेशी साड़ियोंको दे डालनेमें संकोच कर रही हैं। मैं उन गहनोंको नहीं भूल सकता जो एक पारसी बहनने पारसी सभामें मेरे पास भेजे थे। मैं चाहता हूँ कि स्त्रियाँ स्वदेशीका काम इसी भावनासे जारी रखें। यदि यह काम उन्हें कठिन लगता हो तो श्री तिलकका उदाहरण सामने रखें। अपने वस्त्रोंकी खाली अलमारियोंको देख-देखकर आँसू बहानेका समय नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि बम्बईके नागरिक अपना समस्त विदेशी कपड़ा त्याग देंगे और खादी पहनकर पहली अगस्तका दिन मनायेंगे। इसके बाद उन्होंने श्रीमती सरोजिनी नायडूसे भाषण देनेके लिए कहा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २४–७–१९२१

२१२. टिप्पणियाँ

चोर और डाकुओंका भय

खेडा जिलेमे चोर और डाकुओका भय हमेशा बना रहता है। इनका थोड़ा-बहुत डर तो दूसरी जगहोमे भी है। स्वराज्य लेनेका अर्थ आत्मरक्षा करना भी है। दूसरे लोग हमारी रक्षा करे और हम स्वराज्यका उपभोग करे, ऐसा नही हो सकता। लोगोमे आत्मरक्षाकी शक्ति होनी ही चाहिए। यह शक्ति दो प्रकारसे आती है। एक तो हम चोरो और डाकुओको चोरी करने और माल लूटने दें, इसका अर्थ है हम कोई सम्पत्ति ही न रखे। दूसरे हम चोरो और डाकुओको दण्ड दे। सभी लोग अपनी सम्पत्ति गँवानेके लिए अथवा कोई सम्पत्ति न रखनेके लिए तैयार नही होते। इसीलिए वे चोरो और डाकुओको दण्ड देकर रोकनेका उपाय करते है। कोई चौकीदार रखता है और कोई स्वय ही उनसे लडाई करता है। चोरो और डाकुओसे लोगोकी रक्षा करना राजाका एक मुख्य कार्य होता है। लोग जब अपनी रक्षा आप करना सीख लेगे तभी स्वराज्य होगा। इसलिए हममे यह शक्ति आनी चाहिए। यह काम कुछ कठिन नही है। गाँवो और शहरोमे लोग अपने स्वयसेवक तैयार कर सकते है और पहरा दे सकते है। हर गाँवमे रोशनीका इन्तजाम होना चाहिए। यदि हम इतना ही कर लें तो भी चोरोका भय बहुत-कुछ दूर हो जायेगा।

किन्तु इस कामके साथ-साथ और इससे भी ज्यादा जोरसे तो सुधारका काम किया जाना चाहिए। चोरोसे बचाव करना जितना जरूरी है उसकी अपेक्षा चोरोको

चोरीके धन्धेसे निकालना बहुत जरूरी है। चोरी करना और डाका डालना यह एक तरहका नैतिक रोग है। इस रोगको दूर करनेका उपाय हमारे पास अवश्य होना चाहिए। इन लोगोको हमे राष्ट्रका अग मानना चाहिए और इनको सुधारनेका प्रयत्न करना चाहिए। ये लोग मिलने-जुलनेसे, समझाने-बुझानेसे और पढाने-लिखानेसे हमारी बात नही समझेगे, ऐसा माननेका कोई कारण नही है। उन्हे सुधारनेमे हमे धीरजसे काम लेना चाहिए और उनके प्रति प्रेमभाव रखना चाहिए। हमारे लिए इन दोनो कामोको हाथमे लेना बहुत जरूरी है।

रेलोंमें चोरी

रेलोमें चोरी होने और रेल-कर्मचारियो द्वारा रिश्वत लिये जानेकी इतनी खबरे आ रही है कि यदि ये सब शिकायते सच्ची हो तो हमे लज्जित होना चाहिए। समस्त देशमे आत्मशुद्धिकी प्रवृत्ति चल रही है। ऐसे समय किसी जगहसे चोरीकी या रिश्वत लेनेकी शिकायत आती है तो दु ख हुए बिना नही रहता। रेलोमे चोरी होती है, इसमे सरकारका हाथ तो अवश्य ही नही है। इसके लिए तो केवल हम ही जिम्मेदार है। मैंने तो यहाँतक सुना है कि अकालके दिनोमे घास ले जानेके लिए डिब्बे चाहिए तो उसके लिए भी रेल-कर्मचारियोको रिश्वत देनी पडती है, यदि हम रेलसे कोई पार्सल भेजते है और उसमे से चीज निकालनेकी जरा भी गुजाइश होती है तो पार्सल तोड दिया जाता है और माल चुरा लिया जाता है। अभी हालमें बम्बईमे एक व्यापारी-का खादीका पार्सल आया था, उसमेंसे खादी चुरा ली गई। यदि रेल-कर्मचारियोको मेरी इस टिप्पणीको देखनेका अवसर मिले तो उनसे मेरा निवेदन है कि वे जनताका ध्यान रखे और यदि इस तनख्वाहसे पूरा न पडता हो तो कमाईका कोई दूसरा ईमान-दारीका साधन खोजे। रेल कर्मचारी सघोके सचालकोको मेरी सलाह है कि वे रेल कर्मचारियोसे अपने कर्त्तव्योका पालन करानेका उतना ही प्रयत्न करे जितना प्रयत्न उनके अधिकारोकी रक्षा करनेका करते है। यदि हमे स्वराज्य मिला और यह शिका-यत दूर नही हुई तो हमारा शासन उतना ही मँहगा रहेगा जितना मँहगा आज है। स्वराज्यकी रक्षा तभी की जा सकती है जब सच्चे और देशभक्त अर्थात् लोगोके हितमे अपना हित समझनेवाले लोग अधिक हो और लालची, स्वार्थी और बेईमान लोग कम हो। स्वराज्यका एक अर्थ है 'अधिक लोगोका राज्य', और यदि ये अधिक लोग अन्यायी और स्वार्थी हो तो राज्यमे अन्धाधुन्धी ही होगी, यह स्पष्ट है। मै इस आन्दो-लनमे यह मानकर सम्मिलित हुआ हूँ कि इसमे अधिकतर लोग सच्चे और अच्छे है, किन्तु वे भीरु, लापरवाह और अज्ञानी हो गये है और अपनी शक्तिको नही पहचानते। ये लोग जब अपनी शक्तिको पहचान जायेगे तो वे अपने सच्चे बल अर्थात् आत्म-बलको काममे लेगे और सफल होगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४–७–१९२१

२१३. भाषण : सान्ता क्रूज, बम्बईमें

२४ जुलाई, १९२१

भाइयो और बहनो,

मै आज यहाँ बहुत बडा लालच लेकर आया हूँ। मुझसे कल भाई विट्ठलदासने कहा था कि बम्बईमे जितनी तेजीसे पैसा इकट्ठा हुआ था, उतनी तेजीसे विदेशी कपड़ा इकट्ठा करनेका काम नही चल रहा। यदि किसी जगहसे इस कामकी अच्छी शुरुआत हो सके तो बहुत उत्साहसे काम चलेगा; फिर और लोग भी अच्छा उत्साह दिखायेंगे। रुपया इकट्ठा करनेके सम्बन्धमे कामकी शुरुआत माटुंगासे की गई थी। परन्तु विदेशी कपडा इकट्ठा करनेके सम्बन्धमे आमन्त्रणकी भिक्षा माँगनेका काम मैंने सान्ता क्रूजसे शुरू किया है और यह आमन्त्रण मुझे भिक्षामें मिला है।

स्वदेशीके प्रचारका काम सितम्बरसे आरम्भ हुआ है; फिर लोगोको यह काम नया शुरू हुआ क्यो लगता है? कांग्रेसने स्वदेशीके प्रचारका प्रस्ताव सितम्बरमे पास किया था। इसे खिलाफत समितिने तो पहले ही स्वीकार कर लिया है। मौलाना मुहम्मद अलीके साथ मैं तभीसे स्वदेशीका प्रचार कर रहा हूँ। मैं जहाँ-जहाँ घूमा हूँ वहाँ-वहाँ मैंने इस सम्बन्धमे अपने विचार प्रकट किये है। यदि हम खिलाफतके सम्बन्धमे कोई निर्णय करा सकेंगे तो हममे स्वराज्य लेनेकी शक्ति आ जायेगी। किन्तु स्वदेशीको पूरी तरह स्वीकार किये बिना यह शक्ति नही आयेगी।

चरखा हर घरमे होना चाहिए। स्वदेशीके दो अग है — (१) विदेशी कपडेका बहिष्कार और (२) उसके स्थानमें देशी कपड़ेका उत्पादन। यदि इस समय सारा कपडा मिल ही तैयार करे तो स्वराज्य नही मिल सकेगा। तो हम उसे कायम नही सकेंगे, ऐसी मेरी मान्यता है। जबतक भारतमे घर-घर चरखा न चलेगा तबतक स्वराज्य नही मिलेगा।

हमारे आन्दोलनके तीन मुख्य अग है — स्वदेशी, हिन्दू-मुस्लिम एकता और शान्ति। इन तीनो कामोमे से पहला अर्थात् स्वदेशी हिन्दू, मुसलमान और पारसी सभीके लिए है।

भारतमें ईस्ट इडिया कम्पनी जब व्यापार करनेके लिए आई थी यदि हमने तब स्वदेशी कपडेका त्याग न किया होता और इग्लैंडसे आनेवाली मलमल और छीटपर न ललचाये होते तो उसके बादका हमारे देशका इतिहास आज दूसरी तरह ही लिखा गया होता। इस समय तो हम फिर स्वदेशीको ग्रहण करनेपर ही स्वराज्य ले सकते है। और यदि हम हिन्दुओं और मुसलमानोमें ऐक्य न रख सके अथवा देशकी शान्तिको भंग कर दे तो हम स्वराज्य भी खो देंगे। हमारी मनोरचना ही ऐसी हुई है कि हम हमेशा शान्तिकी कामना करते है। स्वराज्य मिलनेपर कोई किसीको हानि नही पहुँचायेगा, यही नही बल्कि स्वराज्य लेने और उसे कायम रखनेकी ये जरूरी शर्तें है।

मेरे विचारसे अन्य राष्ट्र तलवारके जोरसे हिन्दुस्तानको जीतनेकी इच्छा करे तो यह भिन्न बात होगी। परन्तु इतना तो सच है कि हिन्दू और मुसलमानोमे दिन-प्रति-दिन कटुता कम होती जाती है। इसलिए यह काम तो चल ही रहा है, इस सम्बन्धमे कोई नया कदम उठानेकी जरूरत नही है। अभी शान्ति-स्थापनाके सम्बन्धमे भी कोई कदम उठानेकी जरूरत नही है। इन दोनो कार्योके सम्बन्धमे हमे कोई त्याग नही करना पडता। किन्तु स्वदेशीके सम्बन्धमे तो त्याग करना है। हमे अपने समाजके समस्त अगोको एक-सा रखना है। हम मोची, बढई या लुहारके बिना अपना काम नही चला सकते। इनकी सेवाएँ आवश्यक है। यदि हम इन समस्त शक्तियोका विकास नही करेगे तो हमे स्वराज्य नही मिलेगा। स्वदेशीके कार्यक्रमको एक मनुष्य पूरा नही कर सकता। रुपया तो एक मनुष्य भी दे सकता है, परन्तु काग्रेसके एक करोड सदस्य बनाने हो तो हमे एक करोड़ स्त्री-पुरुषोकी जरूरत होगी। इसी प्रकार यदि भारतमे स्वदेशीका प्रचार करना है तो उसमे हर एक भारतीयको भाग लेना चाहिए। इस कार्यमे तो ३० करोड लोगोको आहुति देनी चाहिए। सब लोगोको भली-भाँति समझकर स्वदेशी कपडेका बहिष्कार करना चाहिए। यह बहिष्कार एक वर्ष पहले असम्भव था। परन्तु यदि हम निश्चय कर ले तो इस अगस्तमे विदेशी कपडेका पूरा बहिष्कार किया जा सकता है। मैने कहा है कि विदेशी कपडेके बहिष्कारके बाद एक महीनेके भीतर स्वराज्य लिया जा सकता है। इसका अर्थ यह है कि यदि हम इस कार्यको पूरा कर दिखाये तो हम सरकारको अन्तिम चुनौती दे सकते हैं। कपड़ा तैयार करनेकी शक्ति हमारे भीतर मौजूद है, किन्तु हममे श्रद्धा नही है। यह बात भोजन जैसी ही है। घरमे चूल्हा हो तो भोजन बनाना आसान है। इसी तरह यदि घरका चरखा हो तो उससे काम भी जरूर लिया जायेगा और वह काम आसान भी हो जायेगा। चरखेकी रचना इतनी सादी है कि वह बडी आसानीसे बनाया जा सकता है। मै मानता हूँ कि हम विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करनेके लिए तैयार है। चरखेमे जादू है, परन्तु वह जादू तभी काम करेगा जब भारतीयोमे श्रद्धा हो। किन्तु मै मानता हूँ कि भारतीयोमे इतनी श्रद्धा आ गई है।

भारतके लोगोको महीन कपडेका मोह हो गया है। अभी उनका यह मोह गया नही है। कठिन व्रत धारण करनेवाली भारतीय स्त्रियोको भी खादीकी साडी पहनना भारी पड़ता है। जब स्त्री और पुरुष दोनो ही कहते है, 'हम बारीक कपडा नही छोड सकते', तब मुझे उनपर दया आती है। यदि लोग मुझसे ऐसी बात कहेगे तो मैं उनसे यही कहूँगा कि स्वराज्य नही मिलेगा; और यदि कोई स्वराज्य देने आयेगा तो मै उससे ना कह दूँगा। मैं उस समय उससे पूछूँगा कि वह किन लोगोको स्वराज्य दे रहा है? इन लोगोको तो अजीर्ण हो गया है। हम क्षयग्रस्त हो गये है। हमारे मुखोपर जो लाली है वह दिखावटी है। हमे अपने देशकी बनी चीजे अच्छी नही लगती और विदेशी चीजे अच्छी लगती हैं, यह कहाँकी बुद्धिमानी है। आपने आज जो कपडा दिया है वह कितना-सा है? मुझे तो वह कपड़ा चाहिए जो आपने अपने बक्सोमे रख छोडा है। आप अपना धर्म समझकर विदेशी कपडेका बहिष्कार करे। आपने ससारमे क्या सुख देखा है? जिस राजमे उलटा न्याय होता है क्या उसमे

रहना हम सहन कर सकते है? हमें तो स्वदेशी व्रतधारी बनना चाहिए। स्वदेशी साधन और साध्य दोनो है। यदि आप विदेशी कपडेको त्याज्य समझते हो तो उसे मुझे दे दें। यह बहिष्कार ऐसा नही है कि आप बादमे विदेशी कपडा खरीद सके। इसका कारण यह है कि स्वराज्य इस बहिष्कारपर ही निर्भर है। स्वराज्य मिलनेपर हम व्यवस्थापिका सभाओमे, न्यायालयोमें जा सकते है, किन्तु विदेशी कपडा तो तब भी नही पहना जा सकता। इसके विपरीत आचरण करना अपने मनको धोखा देनेके समान है। यह कार्य करोड़ो लोगो द्वारा किया जाना चाहिए।

आप स्वदेशीके व्रतका पूर्ण पालन करे। आपके पास जितना विदेशी कपड़ा हो सबका-सब निकालकर दे दें।

[गुजरातीसे]

गुजराती, ३१–७–१९२१

२१४. भाषण: मारवाड़ी विद्यालयमे[1]

२६ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने कहा कि पहली अगस्त आनेवाली है और आपको उससे पहले ही अपने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा कर लेना है। आपके कर्त्तव्यका सबूत आपके अपने शरीर होंगे, आपके कर्त्तव्य-पालनका तथा आपके त्यागका प्रमाण आपके शरीर-से ही मिल जायेगा। तब किसी से यह पूछनेकी जरूरत नहीं रहेगी कि क्या उसने अपना कर्त्तव्य पूरा किया है, क्योंकि उसका चिह्न प्रत्येक व्यक्ति प्रत्यक्ष देख सकेगा। कुछ लोग ऐसा खयाल करते है कि जो एक करोड़ रुपया चन्देमें आया है उसमें अपना हिस्सा देकर हम तो अपना कर्त्तव्य पहले ही पूरा कर चुके है। उनका ऐसा सोचना ठीक नहीं है। वह चन्दा तो तिलक स्मारक स्वराज्य-कोषके लिए है, और जबतक आपको स्वराज्य नहीं मिल जाता तबतक यह कहना ठीक न होगा कि आपने उस महान् दिवंगत नेताके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन किया है। चन्दा इकट्ठा कर लेना ही काफी नहीं है, आपको स्वराज्य प्राप्त करना है। जब इस देशमें स्वदेशीका पूर्ण रूपसे प्रचलन हो जायेगा तब आप यह कह सकेंगे कि स्वराज्य मिल गया है। ऐसा कहनेसे मेरा यह मतलब नहीं है कि जिस दिन आप स्वदेशीको पूर्णतः अपना लेंगे उसी दिन स्वराज्य मिला हुआ समझें। जिस दिन आप पूर्ण स्वदेशी अपना लेंगे, उस दिनसे मैं एक महीनेका समय स्वराज्य पानेके लिए माँगूंगा। स्वदेशी अपनाकर आप स्वराज्य-की नींव रखेंगे और एक महीनेकी अवधिमें ही स्वराज्य प्राप्त कर सकेंगे।

१. गांधीजीने यह भाषण मारवाडी विद्यालय हॉलमें गिरगाँव कॉंग्रेस कमेटीके तत्त्वावधानमें हुई एक सार्वजनिक सभामें विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारके सम्बन्धमें दिया था। इस सभामें सरोजिनी नायडू और मुहम्मद अलीने भी भाषण दिये थे। उस समय वर्षा होनेके बावजूद लोग बडी संख्यामें उपस्थित हुए थे।

लाला लाजपतरायने मुझे इत्मीनान दिलाया है कि केवल पंजाबमें ४० लाख चरखे हैं। आप तो सारे भारतमें २० लाख ही चलवाना चाहते हैं। वहाँ तो हर घरमें उतने चरखे हैं जितनी उस घरमें स्त्रियाँ हैं और यदि किसी पंजाबी स्त्रीसे यह पूछा जाये कि क्या आप सूत कात सकती हैं तो वह इसमें अपना अपमान मानेगी। औरतें सूत कातना पसन्द करती हैं, परन्तु इस देशमें पुरुष मैनचेस्टरकी धोतियाँ पहनते हैं इसलिए चरखेपर सूत कातनेकी प्रथा उठ जानेकी जिम्मेवारी उन्हींकी है। अब चूँकि स्वदेशीको अपनाया जा रहा है, इसलिए चरखेका प्रचलन सारे देशमें हो गया है। देशमें काफी कपास है; कातनेवाले भी काफी हैं। कमी केवल इस बातकी है कि इन चीजोंका उपयोग करनेकी आपकी इच्छा नहीं होती। जिस तरह स्वराज्य पानेके लिए सब लोगोंका, चाहे वे हिन्दू हों, मुसलमान हो, पारसी, ईसाई या यहूदी हों, एक राष्ट्रके रूपमें संगठित हो जाना जरूरी है उसी तरह यह बहुत जरूरी है कि स्वराज्य पानेके उद्देश्यसे आप लोग पूर्ण स्वदेशी अपनाएँ। सच्चा स्वदेशी वस्त्र भारतमें काते गये सूतका बना हुआ ही माना जायेगा? उसमें विदेशी सूतका जरा भी अंश नहीं होना चाहिए। जो साड़ियाँ विदेशी सूतसे बनी हुई हों, वे अवश्य त्याग दी जायें। कुछ स्त्री-पुरुष अपने सब कपड़े एकदम त्यागना पसन्द नहीं करेंगे; वे कुछको बचा रखना चाहते हैं। परन्तु यदि वे इस मार्गका अनुसरण करते हैं तो वे स्वराज्यकी योग्यता प्राप्त नहीं कर सकेंगे। विदेशी कपड़ा खरीदकर उन्होंने या तो अपने धनका अपव्यय किया है या अपने बहुतेरे देशवासियोंको भुखमरीकी हालतमें रखा है। उन्हें चाहिए कि वे उन कलुषित वस्त्रोंको तुरन्त फेंक दें। सफेद खद्दर न केवल पहली अगस्तको बल्कि उसके बाद भी पहनना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-७-१९२१

२१५. भाषण: बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

२६ जुलाई, १९२१

महात्माजीने स्वदेशीपर व्याख्यान देते हुए कहा कि खादी पहनना अविलम्ब शुरू कर देना चाहिए और यह भी कहा कि खादीके द्वारा ही हमें निकट भविष्यमें स्वराज्य-प्राप्तिका अनुष्ठान पूरा करना है यह समय आपके मौन बैठे रहनेका नहीं बल्कि हम सबके लिए जागरूक रहनेका और अपने देशको विदेशियोंके कब्जेसे मुक्त करनेका है। लगभग ६० करोड़ रुपया प्रतिवर्ष हमारे देशके बाहर चला जाया करता है।

१. यह सार्वजनिक सभा भायखला जिला कांग्रेस कमेटीके तत्त्वावधानमें भायखला उपनगरमें हुई थी। गांधीजीने इसी सभामें अपना यह भाषण दिया था।

उन्होंने श्रोताओंसे पूछा कि उस रकमका कितना भाग हमारे देशवासियोंके हितमें खर्च किया जाता है? यदि दो आनेका विलायती कपड़ा खरीदा जाता है तो उसमें से सात पैसे विदेशी व्यापारियोंकी जेबोंमें चले जाते हैं। परन्तु यदि हम दो आनेकी खादी मोल लेते हैं तो एक या दो पैसे ही भारतीय व्यापारियोंकी जेबोंमें जाते हैं और बाकी पैसे हमारे कार्यकर्त्ताओंको मिलते हैं। जब ऐसी स्थिति है तो आप सबको पहली अगस्तको अपने वे सारे विदेशी कपड़े जला देनेको तैयार रहना चाहिए, जिन्हें पहनना, फिर कहूँगा कि पाप ही है। हमें इस पापका प्रक्षालन, उन कपड़ोंको उस पवित्र-स्थानपर जलाकर जहाँ हमारे महान् नेता लोकमान्य तिलकका दाह-संस्कार किया गया था, करना चाहिए। यदि आपमेंसे कुछ लोग उन्हें जला डालनेको तैयार नहीं हैं, तो वे उनको स्मरना भेज सकते हैं। यदि आप इस कामको पूरा नहीं कर सकते तो आप अपने दिवंगत नेता लोकमान्यके प्रति कर्त्तव्यसे च्युत होंगे। पहली अगस्तको चौपाटीकी रेतपर मैं आप सबको अपने देशके प्रति अपना पवित्र कर्त्तव्य निभाते हुए देखनेकी आशा रखता हूँ।

इस सम्बन्धमें मैं भायखलाके बढ़ई भाइयोंको कुछ सलाह देना नहीं भूलूँगा। मैं यहाँ उनसे थैली लेने नहीं आया हूँ, वरन् उन्हें साफ-साफ यह बताने आया हूँ कि स्वदेशीकी सफलता उनके कर्त्तव्यका अंग है। उनका कर्त्तव्य है कि अच्छे और सस्ते चरखे, जितने भी बना सकें बनायें, जो हर भारतीय घरकी शोभा बनें। मैं अपने बढ़ई दोस्तोंके बारेमें यह अच्छी तरह जानता हूँ कि वे आकर्षक अलमारियाँ तथा लकड़ीकी अन्य चीजें बनानेमें कुशल हैं। परन्तु अब उन्हें ऐसी चीजें बनानेमें समय नष्ट नहीं करना चाहिए। गांधीजीने बढ़ई भाइयोंसे सानुरोध कहा कि आप लोग हजारोंकी संख्यामें चरखे तैयार करें, क्योंकि वे स्वराज्यकी सीढ़ियाँ हैं। उन्हें मिल-जुलकर कलसे ही चरखे बनाना शुरू कर देना चाहिए। मुझे आशा है कि वे मेरी बातपर अमल करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २८-७-१९२१

२१६. तार: हकीम अजमल खाँको

[२८ जुलाई, १९२१ के पूर्व][1]

हकीमजी अजमल खाँ
दिल्ली

बहुत खेद हुआ। अखिल भारतीय कमेटीकी बैठक २८को बम्बईमे हो रही है। पहली अगस्तके बाद अलीगढ जा सकता हूँ। विदेशी कपडेका बहिष्कार सगठित कर रहा हूँ। यदि आप मुझे इसी महीने अलीगढ बुलाना चाहते है तो उस काममे रुकावट पड़ेगी। जवाब दीजिए।

अग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५७४) की फोटो-नकलसे।

२१७. टिप्पणियाँ

सफेद टोपी

'ब्रिटिश इडिया स्टीम नैविगेशन कम्पनी' का एक कर्मचारी खादीकी टोपी पहलनेकी गुस्ताखी करनेपर नौकरीसे निकाल दिया गया है। इस तरहकी कार्रवाई पहले 'शॉ वैलेस ऐड कम्पनी' ने की थी। यह तो अपमान है और यह अपमान कितना बडा है इसे हमने अभी अनुभव नही किया है। हम इतने अधिक गिर गये है कि हमे अपनी इस गिरावटकी हद दिखाई नही देती। फिर भी राष्ट्रोके लिए इस प्रकारके अपमान जान-बूझकर या रोषके आवेशमे किये गए प्रहारोसे अधिक अप्रतिष्ठाजनक होते है। जमीनपर पेटके बल रेंगने और नाक रगड़नेसे शरीरको कोडे लगाये जानेकी[2] अपेक्षा भले ही कम कष्ट होता हो, परन्तु इस बारेमे कोई सन्देह नही कि पेटके बल रेंगने और नाक रगडनेसे कोडे लगाये जानेकी अपेक्षा भारतका अधिक अपमान हुआ है। किसीको सलाम करनेमे क्या बुराई है? परन्तु फिर भी एक महाराजाकी गद्दी इसलिए खतरेमे पड गई थी[3] कि उन्होने वाइसरायके सामने कायदेसे सलामी देने और सलीकेसे पीछे हटनेका खयाल नही रखा था। वह सलामी राजभक्तिकी सलामी थी, जो राजभक्ति कायम रखनेके लिए जबरदस्ती अपमानपूर्वक ली जाती थी। इसी तरह इन दोनो पेढियोने अपने इन गरीब क्लर्कोंको इसलिए नौकरीसे निकाल दिया है कि

१. लगता है कि यह तार अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी २८-७-१९२१ को बम्बईमें होनेवाली बैठकसे पहले भेजा गया था।

२. यह उल्लेख अप्रैल १९१९ में पजाबमें मार्शल लॉके दिनोंमें दी गई सजाओंका है।

३. बड़ौदा-नरेश महाराजा सयाजीराव गायकवाडकी, सन् १९११ के दिल्ली-दरबारमें किये गये आचरणके कारण।

उनमे अपनी राष्ट्रीय पोशाक पहननेकी हिम्मत थी, जिसे आप चाहें तो उनकी श्रद्धाका प्रतीक भी कह सकते है। ये घमडी पेढियाँ यह सहन नही कर सकी कि उनके क्लर्क ऐसी हिम्मत दिखाये। जिस समय भारतकी नारियाँ अपने नारीत्वको और भारतके पुरुष अपने पुरुषत्वको अनुभव करने लग जायेगे, उसी समय भारत स्वतन्त्र हो जायेगा। तब दुनियाकी कोई ताकत उसे स्वतन्त्र होनेसे नही रोक सकती। इसलिए इन दोनो व्यक्तियोको नौकरीसे निकाल दिये जानेका हमारे लिए बहुत बडा अर्थ होना चाहिए। और मुझे स्वीकार करना चाहिए कि इन पेढियोके अन्य कर्मचारियोकी निष्क्रियतासे मुझे दु.खजनक निराशा हुई है। उन्हे कमसे-कम साधारण मजदूरोका-सा साहस तो दिखाना ही था। भारतमे एक पीडित भाईके लिए बडी भारी हडताल होनेके उदाहरण अनेक मिल सकते हैं। क्या इन पेढ़ियोके क्लर्कोंके मनमे अपने भाईके लिए कोई दर्द नही है? क्या वे समूचे भारतसे अपने निकट सम्बन्धका दावा कर सकते है? यदि उनके किसी सगे भाईके साथ वैसा ही व्यवहार किया गया होता, जैसा कि इन दो बहादुर नौजवानोके साथ किया गया, तो वे क्या करते? पर इन पेढ़ियोके कर्मचारी अब भी अपनी गलती सुधार सकते है। वे विरोधस्वरूप अब भी खादीकी सफेद टोपियाँ पहन सकते है और अपने उन क्लर्क भाइयोको उनके पदोपर फिरसे नियुक्त करनेकी माँग कर सकते है।

मै इन दोनो बडी पेढियोके मैनेजरोको भी नम्रतापूर्वक सावधान करता हूँ। असहयोगी जातिवादसे बचे हुए है। वे अपनी पूरी ताकतसे एक दूषित प्रणालीसे लड रहे है। व्यक्तिश. अग्रेजोसे उनका कोई झगडा नही है। परन्तु यदि अग्रेज इन पेढियोके मैनेजरोकी तरह पक्षपात करेगे तो जाति विस्फोटको रोकना मुश्किल होगा। यदि यूरोपीय व्यापारी इस मामलेको बहुत जरूरी मानकर इन पेढ़ियोकी भयकर गलतियोको फौरन ठीक न करेगे तो यूरोपीय पेढ़ियोका बहिष्कार किये जानेका भय है।

क्षमा मँगवानेका प्रयत्न

'इडिपेडेट' मे प्रकाशित सर्वश्री जवाहरलाल नेहरू, जोजेफ और रगा अय्यर तथा सयुक्त प्रान्तकी सरकारके बीच हुए पत्र-व्यवहारसे यह सिद्ध होता है कि मेरा वाइसरायके पास जाना और अली भाइयोको अपने कुछ भाषणोके लिए क्षमा माँगनेकी राय देना, राजनीतिक दृष्टिसे बहुत बडी भूल थी। अब यह अधिकाधिक स्पष्ट होता जा रहा है, जैसा कि मौलाना अब्दुल बारीने कहा है, कि जहाँ मेरे वाइसरायके पास जानेसे और अली भाइयो द्वारा क्षमा-याचना करनेसे हुई हानि प्रत्यक्ष है, वहाँ इनसे कदाचित् कुछ लाभ हुआ है तो वह इतना अस्पष्ट है कि जनता उसे नही देख सकती। सौभाग्यसे मै राजनीतिज्ञ नही हूँ। और सयुक्त प्रान्तकी सरकारने जवाहरलाल नेहरू तथा उनके साथियोको फँसानेके लिए अली भाइयोकी क्षमा-याचनाका जो निन्दनीय उपयोग किया है, उसके पीछे छिपी भलाईको मै देखता हूँ। सरकारने तो अली भाइयोकी क्षमा-याचनाकी शब्दावलीका अनुकरण तक किया है। लोग प्राय. गलत जगहपर रखी हुई वस्तुको गन्दगी कहते है और यह ठीक ही है। ठीक इसी तरह जहाँ मै यह मानता हूँ कि अली भाइयोकी क्षमा-याचना ठीक जगहपर होनेके कारण एक सम्मानजनक बात

थी, वहाँ गलत जगहपर होनेके कारण सयुक्त प्रान्तकी सरकार द्वारा अपेक्षित क्षमा-याचना असम्मानजनक बात होती। परन्तु उस सरकारका पाला जबरदस्त लोगोसे पडा है। वे न तो झूठे उदाहरणोसे धोखा खानेवाले है और न जेलकी धमकियोसे डरनेवाले है। इसलिए सरकारके सामने यही मार्ग रह गया है कि वह इन तीनो जन-सेवकोके विरुद्ध उनके भाषणो और लेखोके आधारपर, जिन्हे जनता और वे स्वय भूल चुकी है, अभियोग चलाकर अपनी अयोग्यता और असहनशीलताका अतिरिक्त प्रमाण दे। यदि वह 'अपराधियो'पर मुकदमा चलायेगी तो अशान्तिके मूल कारणको दूर करनेमे अपनी अयोग्यता सिद्ध करेगी और इससे उसकी समुचित विरोधी आलोचनाको सहन करनेकी अक्षमता भी प्रमाणित होगी। कानेको काना कहे तो उसे यह बात कड़ी लग सकती है; परन्तु सीधा-सादा सत्य जितनी अच्छी तरह समझमे आता है, उतनी अच्छी तरह कोई दूसरी चीज समझमे नही आ सकती। यदि कोई सरकार कठोर कार्य करती है तो कोमल शब्दोमे उसका सच्चा वर्णन नही किया जा सकता। इसलिए इन पत्रोके प्रकाशनसे स्वराज्यके उद्देश्यकी बहुत बडी सेवा हुई है। इससे वातावरण साफ हो गया है और इससे उन सभी लोगोका मार्ग-निर्देशन होगा जिनकी स्थिति इन तीनो मित्रो जैसी है। कोई भी असहयोगी मुकदमेसे बचनेके लिए न तो क्षमा माँग सकता है और न कोई आश्वासन दे सकता है। साथ ही, जब उसका ध्यान उसकी कही हुई ऐसी बातकी ओर आकर्षित किया जाये जो हिंसा भडकानेवाली मानी जाती हो, तो उसे अपनी गलती तुरन्त सुधार लेनी चाहिए और अपने सिद्धान्तके प्रति ईमानदार रहना चाहिए। यदि सरकार असहयोगियोसे ईमानदारीका बरताव करना चाहती हो और उन्हे इसलिए जेलमे रखना चाहती हो कि वह असहयोग आन्दोलनको उसके अहिंसात्मक होने और बने रहनेके बावजूद नापसन्द करती हो तो उसे उनपर सिर्फ धारा १२४ क के अन्तर्गत मुकदमा चलाना चाहिए। उस अवस्थामें हममे से हरएक अवश्य ही अपना अपराध स्वीकार कर लेगा क्योकि एक तन्त्रके रूपमे सरकारके प्रति अपने मनमें असन्तोष रखना और फैलाना हमारा सिद्धान्त है। हम इस तन्त्रको समाप्त करने-पर तुले है, और मुझे बताया गया है कि ऐसा करना उक्त धाराकी दृष्टिसे राजद्रोह है। यदि कानूनमे इस तन्त्रकी समाप्तिकी बात सोचनेकी अनुमति है तो हर असह-योगी वचनबद्ध देशभक्त है।

पत्रकारिताका दुरुपयोग

यह कुछ महत्त्वपूर्ण बात है कि 'डिचर'ने जो-कुछ कहा है और जिसका उल्लेख इन स्तम्भोमे किया जा चुका है उसके लिए 'कैपिटल' ने श्री गणेश दामोदर सावरकरसे क्षमा-याचना कर ली है। इसमे 'डिचर' ने जो आरोप लगाया था वह इतना गम्भीर था कि उससे अली भाई गम्भीर सकटमे पड गये थे। क्या किसी उत्तरदायी समाचारपत्र-का सम्पादक चुनौती दिये जानेपर इस तथ्यकी आड़ लेकर दोषमुक्त होनेका दावा कर सकता है कि उसने अपने पत्रमे केवल अफवाह ही प्रचारित की है? क्या वह किसी ऐसी अफवाहको जिसमे दी गई विगत लगभग तथ्योके विवरण जैसी हो, विशद चर्चाका आधार बना सकता है? उदाहरणके लिए, ये सब अफवाहपर आधारित है पहले ऐसा

कहकर क्या मैं सम्राट्के विरुद्ध सभी प्रकारके आरोप लगा सकता हूँ? क्या मैं ऐसे आरोप लगानेके बाद उनसे ऐसे स्पष्ट निष्कर्ष निकाल सकता हूँ जिनसे महामहिम सम्राट्को बहुत अधिक क्षति पहुँचती हो? मैंने इस बातको इस प्रकार मोटे तौरपर केवल यही दिखानेके लिए रखा है कि मैं ब्रिटिश साम्राज्यके सर्वोच्च भद्र पुरुषकी प्रसिद्धिको कायरतापूर्वक कलुषित करनेके कारण अभद्र व्यवहार करनेका दोषी होऊँगा और कानूनके अनुसार सभ्य समाजसे तत्काल निकाला जा सकूँगा। इस मामलेमें इन हानिकर आरोपोके शिकार सयोगसे दो सभ्य और वीर भारतीय है, और आरोपकर्त्ता एक यूरोपीय पत्रकार है, क्या इससे कुछ अन्तर पड जाता है? श्री गणेश सावरकरने अपने सम्मानपर लगाये गए इन दूषित आरोपोपर क्षमा-याचना कर लेने मात्रसे सन्तोष कर लिया है, यद्यपि वह क्षमा-याचना भी सच्चे मनसे की गई नही जान पडती है, और मुकदमा चलानेका अपना अधिकार उदारतापूर्वक छोड़ दिया है। ऐसा करके वे देशके लोगोकी दृष्टिमे और भी ऊँचे उठ गये है। श्री सावरकरके वकीलोको दिये गये उत्तरमे इस पूर्णत अक्षम्य आचरणके सम्बन्धमे बहाना प्रस्तुत किया गया है। जबतक सम्पादक अफवाहोकी बारीकीसे छानबीन न कर ले और उनके सचाईपर आधारित होनेका विश्वास न कर ले तबतक न्याय और ईमानदारीका थोड़ा-सा भी खयाल रखनेवाला समाचारपत्र अफवाहोको प्रचारित नही कर सकता। मुझे आशा है कि अग्रेजी और हिन्दीके समाचारपत्र इस बातपर गम्भीरतासे विचार करेगे और 'कैपिटल'के सम्पादकको यह अनुभव करा देगे कि उन्होने एक सम्मानित पत्रकारके अयोग्य आचरण करनेका अपराध किया है।

विदेशी कपड़े क्यों जलाएँ?

आलोचकोने विदेशी कपडे जलानेके सम्बन्धमे मुझे बेहद झिडकियाँ दी है। विदेशी कपड़े जलानेके विरुद्ध प्रस्तुत किये गये प्रत्येक तर्कपर विचार करनेके बाद मैं यह कहे बिना नही रह सकता कि विदेशी कपडेसे छुटकारा पानेका सबसे अच्छा तरीका उसको नष्ट कर देना ही है। प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने यह बात विदेशी कपडा देनेवाले व्यक्तियोकी इच्छापर छोड दी है कि वे विदेशी कपडेको नष्ट कर दें या भारतसे बाहर स्मरना या कही अन्यत्र भेज दे। इसलिए यदि विदेशी कपडेसे छुटकारा पानेका एकमात्र तरीका उनको नष्ट करना ही बताया गया होता तो इस प्रश्नका जितना महत्त्व होता उसका उतना महत्त्व अब नही रहता। विदेशी कपडेको नष्ट करनेका औचित्य इस बातपर निर्भर करता है कि किसी व्यक्तिका विदेशी कपडेको छोड देनेकी आवश्यकतामे कितना तीव्र विश्वास है। जिस प्रकार शराब न पीनेवाला मनुष्य अपने शराबके गोदामकी शराब अपने जरूरतमद पड़ोसीको नही दे देता, उसी प्रकार यदि कोई स्वदेशीका भक्त उस शराब न पीनेवाले मनुष्यके समान ही बहुत उत्कट भावना रखता है तो वह अपने बक्समे रखे विदेशी कपडे गरीबोको नही देगा। मेरा विचार है कि भारतमे विदेशी कपडे पहनना लगभग शराब पीनेके समान ही बुरा है। मैं इस बारेमे निश्चित कुछ नही कह सकता कि वह कुछ मानीमे शराब पीनेसे भी अधिक बुरा नही है। पिछले डेढ़ सौ वर्षोसे भारतमे विदेशी कपड़ा आ रहा है और उससे कताईके हमारे महान्

कुटीर उद्योगको हानि पहुँच रही है। जैसा कि श्री रमेशचन्द्र दत्तने[1] अपनी भारतके कताई और बुनाई उद्योगोके विचारपूर्ण और सुनियोजित विनाशके इतिहासका अध्ययन पुस्तकमे बताया है, जो विहार भारतका अत्यन्त समृद्ध प्रान्त था, वह अब अपने बुनाई और कताईके समृद्ध उद्योगके आयोजित और क्रूरतापूर्ण विनाशके कारण निर्धन हो गया है। यदि हम यह अनुभव ही कर ले कि ईस्ट इडिया कम्पनीने कितनी हानि पहुँचाई है और हमने कम्पनीके गुमाश्तोके अत्याचारोके सामने या अपने आगे रखे गये प्रलोभनोके सामने झुककर कितना बडा पाप किया है तो हमारे सिर लज्जाके कारण नीचे हो जायेंगे। यदि हम स्वदेशी वस्तुओका व्यवहार करते रहते तो हमारा महान् राष्ट्रीय उद्योग नष्ट ही न होता, हमारी स्त्रियोको विवश होकर सार्वजनिक सडकोपर मजदूरी न करनी पडती और हमारे लाखो करोडो लोगोको विवश होकर वर्षमे कुछ समय बेकार न बैठना पड़ता। मेरा यह विनम्र मत है कि जिस कपड़ेसे ऐसी दुःखजनक स्मृतियाँ जाग उठती हैं और जो हमारे लिए लज्जा और पतनका चिह्न हैं उसे नष्ट कर देना ही ठीक है। वह निश्चय ही गरीबोको नही दिया जा सकता। जो वस्तु हमारे लिए दासताका चिह्न है उसे उनको देकर हम उनकी सहायता कर रहे हैं, ऐसा सोचनेकी अपेक्षा हमे उनकी भावनाओ और उनकी राष्ट्रीय शिक्षा-दीक्षाका अधिक खयाल करना चाहिए। क्या भारतके गरीब लोगोमे देशभक्तिकी भावना नही होनी चाहिए? क्या उनमे हमारे ही समान आत्मगौरव और आत्मसम्मानकी भावनाएँ नही होनी चाहिए? मै यह नही चाहता कि हममे से कोई तुच्छसे-तुच्छ मनुष्य भी ऐसा हो जिसमे सच्ची देशभक्तिकी भावना न हो। हम उन्हे सडा-गला भोजन या ऐसा भोजन जिसे हम नही खाना चाहते, देते हुए भयसे सहमते हैं या हमे सहमना चाहिए, ठीक वैसे ही भावका अनुभव हमे उन्हे विदेशी कपडा देते समय भी करना चाहिए। एक क्षण विचार करे तो यह भी स्पष्ट हो जायेगा कि हम जिन बारीक कपडोको फेक रहे है उनमे से ज्यादातर गरीबोके लिए बिलकुल बेकार हैं। वे पसीनेकी बदबूसे भरी हुई हमारी गन्दी टोपियोको और हमारी छोडी हुई कीमती रेशमी साड़ियो और अत्यन्त बारीक मलमलका क्या उपयोग कर सकते हैं? जो लोग इन्हे पहनते थे वे इनसे प्रेम करते थे, उनके अतिरिक्त अन्य लोगोके लिए इनका कोई मूल्य नही है। उनसे अकाल-पीड़ित लोगोके शरीर नही ढँके जा सकते। इनमे उनके उपयोगकी वस्तुएँ तो वास्तवमे बहुत ही कम हैं। परन्तु जब मै यह तर्क देता हूँ कि विदेशी कपडा नष्ट कर देना चाहिए तब मेरे इस तर्कका आधार यह नही होता कि जो कपडा फेका गया है वह बेकार है। मेरा तर्क तो इससे भी अधिक गहरा जाता है क्योकि वह उस एकमात्र भावनापर आधारित है जो हमारी श्रेष्ठतम भावनाको बल देती है और दे सकती है। एक अग्रेजको जीर्ण-शीर्ण झडेके प्रति किये गये अपमानपर क्यो रोष प्रकट करना चाहिए? परन्तु वह उसपर रोष प्रकट करता है, और वह यह ठीक ही सोचता है कि उसे ऐसा करना चाहिए। मै एक क्षणके

१. १८४८–१९०९; भारतीय शासन-सेवाके सदस्य; इकनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया सिंस द एडवैन्ट ऑफ द ईस्ट इंडिया कम्पनीके लेखक; १८९९ में लखनऊ कांग्रेसके अध्यक्ष।

लिए अपने विश्वासको छिपा लूं और उससे लाखोका लाभ उठा लूं तो उसमे क्या हानि है? परन्तु मुझे सारी दुनियाका साम्राज्य मिले तो भी मैं ऐसा नही कर सकता। बिलकुल इन्ही कारणोसे हम भारतके गरीब लोगोके लिए विदेशी कपडा काममें नही ले सकते। और आखिर इस प्रकार छोडे हुए कपड़ेको स्मरना और अन्य किसी विदेशी स्थानमें भेज देना त्यागके कार्यको सुविधाजनक बनाना ही है। परन्तु विदेशी कपड़ेको दूसरे देशोमे भेजनेमे उतनी प्रबल नैतिक आपत्ति नही है जितनी प्रबल नैतिक आपत्ति उस कपडेको अपने देशमे ही काममे लेनेमे है।

विदेशी सूत

'इडियन सोशल रिफॉर्मर' ने विदेशी सूतको स्वदेशीकी परिभाषामें से निकाल देनेपर आपत्ति की है। कुछ विनाश किये बिना और कही किसीको चोट पहुँचाये बिना, उठाये हुए कदमको वापस लेना, सुधार करना और शुद्धि करना असम्भव है। बुनकरोका खयाल ऐसा नही है कि यदि वे विदेशी सूतका कपड़ा नही बुनेंगे तो उन्हे बेकार बैठना पडेगा। यदि हम सिर्फ फिलहाल कम बारीक कपड़ेसे सन्तोष करनेकी बात मान जाये तो वे बिना कठिनाईके देशी कारखानोमे कते सूतका कपडा बुन सकते है और उसमे अपनी कलात्मक प्रतिभाका पूरा उपयोग कर सकते है। जब भारतीय बाजारमे विदेशी कपडा और विदेशी सूत नही मिलेंगे, तब भारतमे पुराने जमाने जैसे सुन्दर कपड़े फिर बनाये जा सकते हैं। भारतमें यह योग्यता है इसमे मुझे कोई बाधा दिखाई नही देती। सच्ची कला तो समाप्त हो गई है, और धनी लोगोके घरोमे कलात्मक वस्तुओके नामपर दिखावटी वस्तुएँ आ घुसी हैं, क्योकि अब सच्ची कलाके आश्रयदाता नही रहे है। मै उस समयकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ जब सामान्य अवस्था आते ही धनी लोग अपने व्यवसाय-स्थानोसे लगे हुए विशेष कातनेवालो और बुननेवालो के मकान बनवायेंगे और उन लोगोका काम होगा अपने आश्रयदाताओके लाभार्थ कलापूर्ण वस्त्र तैयार करना।

धरना देनेवाली स्त्रियाँ

एक पारसी बहन लिखती है, बम्बईमें धरना आरम्भ किया जायेगा तब मैं जो भी दल तैयार किया जाये उसमें सम्मिलित होनेके लिए बिलकुल तैयार हूँ और मुझे आशा है कि अन्य अनेक बहने इसके लिए आगे आयेंगी। उनका यह मत है कि यदि स्त्रियाँ बडी सख्यामें आगे आयें तो उनकी उपस्थितिसे हिंसापर प्रभावकारी रोक लग जायेगी। मै उनकी बातका पूरी तरहसे समर्थन करता हूँ और आशा करता हूँ कि अन्य बहुत-सी बहने बम्बईकी समितिको अपने नाम उम्मीदवारोके रूपमे भेजेंगी।

कब्रोंको अपवित्र करना

आगराके एक मित्रने मेरा ध्यान अजमेरके भारतीय प्रैस्बिटेरियन कब्रिस्तानमें ईसाइयोकी कब्रोके अपवित्र किये जानेके सम्बन्धमे समाचारपत्रोको भेजे गये श्री डेविडके पत्रकी ओर आकृष्ट किया है। मुझे इस बातका अफसोस है कि वह पत्र मेरे देखनेमें नही आया है। श्री डेविडने यह ठीक ही कहा है कि कट्टरपन और धर्मान्धतासे भारतीय

राष्ट्रका सामजस्यपूर्ण विकास रुक जायेगा और ये एकताके विकासके लिए घातक है। जैसा कि मैंने प्राय कहा है, हिन्दू-मुस्लिम एकताका अर्थ है उन सभी लोगोकी एकता जो विभिन्न धर्मो व पथोंके अनुयायी होनेपर भी भारतको अपना देश मानते हैं। कब्रोको अपवित्र करना विशेष रूपसे कायरतापूर्ण अपराध है। युद्धके नियमो तकमें कब्रोकी पवित्रता मानी जाती है। केवल पतित स्वभावका मनुष्य ही कब्रोको अपवित्र करनेकी दुष्टता करके प्रसन्न हो सकता है। परन्तु जब हम इस बातका खयाल करते हैं कि इस समय राष्ट्र अपने सभी विसगत तत्त्वोमे सामजस्य स्थापित करनेका प्रयत्न कर रहा है तब ऐसा अपराध और भी दुष्टतापूर्ण हो जाता है। हमारे सघर्षके प्रति सहानुभूति रखनेवाले बहुतसे लोग ईसाई हैं। श्री एन्ड्रयूज पक्के ईसाई है, भारतमे उनसे अधिक सच्चा कोई दूसरा कार्यकर्त्ता नही हो सकता। वे दीन-बन्धु कहे जाते है और यह ठीक ही है। मुझे आशा है कि अजमेरकी काग्रेस कमेटी इस मामलेकी ओर ध्यान देगी और इन ईसाई देशभाइयोकी सभी प्रकारसे सहायता करेगी।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-७-१९२१

२१८. उचित पश्चात्ताप और उससे शिक्षा

मुझे अभी-अभी श्री याकूब हसनका निम्न करुण पत्र प्राप्त हुआ है:

> मैं अब अनुभव करता हूँ कि मैंने दुर्बलताके क्षणमें एक गम्भीर अविवेकपूर्ण कार्य कर डाला है। जबसे मुझे अपनी भूलकी महत्ताका भान हुआ है तबसे मेरे हृदयमें ऐसी गहरी पीड़ा हो रही है कि उससे मै पागल ही हुआ जा रहा हूँ। मुझे आपसे आन्दोलनके मुखियाके रूपमें क्षमा माँगनी चाहिए, और मै बहुत ही नम्रतापूर्वक क्षमा माँग रहा हूँ। आप मुझे मेरे मार्गदर्शक और नेताके रूपमें जितना बुरा-भला कहा जाना चाहिए उतना बुरा-भला कहें और इस भूलकी जितनी कड़ी सजा दी जानी चाहिए उतनी कड़ी सजा दें; परन्तु मुझे आशा है कि आप भगवान्‌के नामपर मेरे इस पाप-कर्मके लिए मुझे क्षमा कर देंगे। मै इससे पहले तक जिस पवित्र कार्यको अपने विवेकके अनुसार ईमानदारी और सचाईसे करनेका प्रयत्न करता रहा हूँ यदि उसे मेरे इस कार्यसे कोई क्षति पहुँची हो तो मै उसका प्रायश्चित्त करूँगा और इस प्रकार उस क्षतिको पूरा करूँगा और ईश्वरके सम्मुख अपना मुख उज्ज्वल करूँगा।

इस पत्रमें सचाईकी झलक है, और इससे सभी आलोचना व्यर्थ हो जाती है। मैंने श्री याकूब हसनको यह लिख दिया है कि उनको क्षमा करना मेरा काम नही है। कौन जानता है, किसी सकटकी घडीमे मैं उनसे भी अधिक दुर्बल सिद्ध होऊँ? उनको केवल ईश्वर ही क्षमा कर सकता है, क्योकि केवल वही हमें अच्छी तरह

जानता है। अनेक देशोमे और अनेक जातियोकी मार्फत ईश्वरने अपनी वाणीमे हमें यह आश्वासन दिया है, 'जब मनुष्य मेरे सामने शुद्ध और विनम्र हृदयसे अपनी दुर्बलताको स्वीकार कर लेता है तब मै उसे क्षमा कर देता हूँ।' हम स्वय दुर्बल है और इसलिए जिसने अपनी दुर्बलता स्वीकार कर ली है हमे ऐसे भाईपर पत्थर नही चलाना चाहिए।

परन्तु श्री याकूब हसनकी दुर्दशासे हम सभीको सकटके प्रति सचेत हो जाना चाहिए, क्योकि यद्यपि विजय निकट दिखाई देने लगी है तथापि उसके पूर्व सघर्षका जो अन्तिम दौर आयेगा, और वह आयेगा अवश्य, उसको सहन न कर सकनेका भय होता है। हमे यह निश्चय कर लेना चाहिए कि यह सरकार वास्तवमे लोगोके सकल्पके सामने झुकनेसे पहले हमे बार-बार अच्छी तरह परखेगी। हमें हजारोकी सख्यामें भारतकी जेलोको भरनेके लिए तैयार हो जाना चाहिए। उनके भीतर हैजा फैले तो भी हम चिन्ता न करे, हमे ऐसी तैयारी रखनी चाहिए। परन्तु दासताके जिस पुराने नैतिक हैजेसे हम पीडित है उसकी तुलनामे वास्तविक हैजा एक साधारण बात है। यदि शेरवानीके अभियोगकी हास्यास्पद कार्रवाईकी खबर सही है तो उन्हे बिलकुल निर्दोष होनेके बावजूद सजा दी गई है। सयुक्त प्रान्तमे कोई-न-कोई रोज ही जेल जा रहा है। अभी आन्ध्रसे इस आशयका तार आया है कि गुन्टूरमे दो कार्यकर्त्ताओको एक-एक वर्षकी सजा हो गई है। उनमे से एक बैरिस्टर है। इस तारको भेजनेवाले श्री वेंकटप्पैयाका कहना है कि अभी दमन बढनेकी आशंका है। आगे-पीछे यह तो होना ही था। यदि हम इस प्रहारका सामना दृढतासे करेगे तो इस वर्ष स्वराज्य निश्चय ही मिल जायेगा।

परन्तु केवल दुर्बलताका ही भय नही है। भय यह भी है कि लोग उत्तेजित किये जानेपर और बदलेकी कार्रवाई करनेमें कही भड़क न जाये। लोगोकी कष्ट-सहन करनेकी अयोग्यता या अनिच्छाकी अपेक्षा उनके पागल हो जानेका भय अधिक गम्भीर है। भारत-भरमें प्रत्येक कार्यकर्त्ताका यह कर्त्तव्य है कि वह हिंसाको रोकनेका प्रयत्न करे, भले ही इस प्रयत्नमे उसकी जान ही क्यो न चली जाये।

भारत भविष्यमे किये जानेवाले व्यापक दमनका जो सबसे अच्छा उत्तर दे सकता है वह यह कि बुद्धिमान अर्थशास्त्री हमारे सामने जिन आँकडोको प्रस्तुत करे हम उनकी बिलकुल चिन्ता न करे और सभी प्रकारके विदेशी कपड़ेका त्याग कर दें। यदि हम कृतसकल्प हो जायें तो हम अपने लिए आवश्यक पूरा कपडा तीन महीनेमे ही हाथसे सूत कातकर और उसे हाथसे बुनकर तैयार कर सकते है। क्या हममे स्वराज्य प्राप्त होने तक, खादीसे सन्तोष कर लेनेका सकल्प-बल है?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-७-१९२१

२११. हिन्दू-मुस्लिम एकता

यह बात अब सबको विदित है कि जबतक हिन्दुओ तथा मुसलमानोमें एकता स्थापित नही हो जाती, देश तबतक कोई निश्चित प्रगति नही कर सकता। इसमे भी कोई सन्देह नही है कि जिस सीमेटसे ये दोनो जुडे है वह अभी नर्म और गीला है। उनमे अभीतक पारस्परिक अविश्वास बना हुआ है। राष्ट्रके नेता इस बातको भली-भाँति मान गये है कि जबतक दोनो जातियाँ एक-दूसरीपर विश्वास करनेकी और मिलकर काम करनेकी आवश्यकता अनुभव नही करती तबतक भारत उन्नति नही कर सकता। यद्यपि जनसाधारणमे बहुत परिवर्तन हो गया है, परन्तु परिवर्तन अभीतक स्थायी नही है। अभीतक मुसलमान जनसाधारण स्वराज्यकी उतनी आवश्यकता नही मानते जितनी हिन्दू मानते है। सार्वजनिक सभाओमे मुसलमान उतने नही आते जितने हिन्दू आते है। इसमे जबरदस्ती तो कुछ की नही जा सकती। मुसलमानोमे राजनीतिक अभि-रुचि जगानेके लिए जितने समयकी आवश्यकता है [शायद] अभी उतना समय नही बीता। केवल एक वर्ष पूर्व ही मुसलमान काग्रेसके कार्यमे सामूहिक रूपसे कोई भाग ही नही लेते थे। वस्तुत यह एक आश्चर्यकी बात है कि अब देशमे हजारो मुसलमान काग्रेसके सदस्य बन गये है। यह इतना कार्य ही भारी सफलताका सूचक है।

परन्तु अभी तो बहुत काम करना है और मुख्यत हिन्दुओको करना है। अबतक जहाँ-कही भी मुसलमान उदासीन दिखाई देते हो वही वे उन्हे शामिल होनेका निमन्त्रण दे। हिन्दुओकी ओरसे बहुधा इस बातकी शिकायत सुननेमे आती है कि मुसलमान न तो काग्रेस-सगठनमे सम्मिलित होते है और न तिलक स्वराज्य-कोषमे चन्दा देते है। स्वाभाविक प्रश्न यह है कि क्या उन्हे शामिल होनेकी दावत दी जाती है? प्रत्येक जिलेमे हिन्दुओको चाहिए कि वे अपने मुसलमान पडोसियोको इस क्षेत्रमे लानेका विशेष प्रयत्न करे। जबतक हम एक-दूसरेको हीन या श्रेष्ठ समझेगे तबतक हम लोगोमें सच्ची समानता कभी कायम नही हो सकती। बराबरीके लोगोमे किसीको हीन माननेकी गुजाइश नही रहती। जहाँ मुसलमानोकी सख्या कम हो वहाँ उन्हे अपनी अल्प-संख्याका या अपने भीतर शिक्षाकी कमीका खयाल नही करना चाहिए। शिक्षाकी कमी शिक्षा प्राप्त करके पूरी की जानी चाहिए। अल्पसख्यामे होना कई बार एक वरदान होता है। बहुसख्या प्राय प्रगतिमे बाधक सिद्ध हुई है। अन्तत मुख्य प्रभाव चरित्रका ही पडता है। किन्तु मैंने यह लेख यह बतानेके लिए नही लिखा है कि मुसलमान अपनी कमियाँ कैसे पूरी कर सकते है या उन्हे भविष्यमे क्या करना चाहिए।

मेरा मुख्य उद्देश्य हमारे सामने इस समय जो प्रश्न उपस्थित है उसपर विचार करना है। बकरीद जल्दी ही आ रही है। इस अवसरपर हिन्दुओ और मुसलमानोमे झगडे करानेके जो प्रयत्न किये जायेगे; उनको व्यर्थ करनेके लिए हमें क्या करना चाहिए? यद्यपि बिहारमे स्थिति बहुत-कुछ सुधर गई है, किन्तु फिर भी हम अभी उसकी ओरसे निश्चिन्त नही हो सकते। अति उत्साही और अधीर हिन्दू कुछ मामलोमे

जोर-जबरदस्ती कर रहे है। वे शरारती लोगोके षड्यन्त्रोमे आसानीसे फँस जाते है और इन षड्यन्त्रोके पीछे सदा सरकारका हाथ नही होता। गोरक्षा हिन्दुओंको अत्यन्त प्रिय है। इसलिए हम इस प्रश्नपर प्राय. उत्तेजनाके शिकार हो जाते है और इस प्रकार अनजाने अपने प्रिय उद्देश्यको हानि पहुँचानेके साधन बन जाते है। हमे यह मान लेना चाहिए कि हमारे मुसलमान भाइयोने अपने हिन्दू भाइयोकी खातिर गायकी जान बचानेके लिए बहुत उद्योग किया है। उसका मूल्य कम आँकना गम्भीर भूल होगी। हमारा अपनी बातपर जोर देना उनके समस्त उद्योगको व्यर्थ कर देना है। हमने पिछले कुछ सालोमे गोवधको या तो बिना किसी आपत्तिके ही सहन किया है; या आपत्ति की है तो वह केवल प्रभावहीन और हिंसात्मक आपत्ति रही है। हमने अपनी ओरसे अपने देशमें रहनेवाले मुसलमान भाइयोसे अपने सम्बन्ध प्रेमपूर्ण बनानेका कोई प्रयत्न नही किया है और इस बातकी पात्रता प्राप्त नही की है कि हमारे ये भाई इस बारेमे अपने ऊपर स्वय अकुश लगा ले। हमने प्राय अकारण ही यह मान लिया है कि यह कार्य असम्भव है।

किन्तु हम अब उनके इस सकट-कालमे सोच-समझकर उनकी सहायता करनेका विचारपूर्ण प्रयत्न कर रहे है। हमने यह कार्य अपनी इच्छासे किया है। इसके सत्-प्रभावको हमे सौदेबाजी करके नष्ट नही कर देना चाहिए। मित्रता कदापि सौदेकी वस्तु नही हो सकती। वह तो एक ऐसी स्थिति होती है जिसमे किसी भी बदलेका खयाल नही किया जाता। सेवा करना कर्त्तव्य है और कर्त्तव्य एक ऋण है। इस ऋणको चुकता न करना पाप है। यदि हम मुसलमानोसे अपना मित्रभाव सिद्ध करना चाहते है तो हमारे ये भाई गायकी रक्षा करे चाहे न करे हमे उनकी सहायता करनी चाहिए। हमारे प्रति उनका जो व्यवहार है हम उसकी जिम्मेदारी उन्हींपर डालते हैं। हम उनसे यह कहनेकी धृष्टता नही करते कि हमारी सहायताके बदलेमे उन्हे क्या करना चाहिए। वह तो खरीदी हुई सहायता होगी। यदि मुसलमान इसको स्वीकार करनेसे इनकार कर दे तो हम इसके लिए उन्हे दोष नही दे सकते। इसलिए मुझे आशा है कि मुसलमान बकरीदपर चाहे कुछ भी करे, बिहारके वस्तुत' समस्त भारतके, हिन्दू पूरी सहिष्णुता दिखानेकी आवश्यकताको अनुभव करेंगे। वे कौन-सा मार्ग पसन्द करते है, यह बात हमे उन्हींपर छोड़ देनी चाहिए। अमृतसरमें जो काम हकीम अजमल खाँने एक घटेमें कर दिया उसे हिन्दू वर्षो प्रयत्न करते तो भी नही कर सकते थे। पिछली बकरीदपर श्री छोटानी और श्री खत्रीने जिन गायोकी रक्षा की उनकी रक्षा बम्बईके करोड़पति अपनी समस्त सम्पत्ति दे देते तो भी नही कर सकते थे। मुसलमानोंपर जितना अधिक दबाव डाला जायेगा, गोवध उतना ही अधिक होगा। हमे इस मामलेको उनकी सचाईकी भावना और कर्त्तव्य-बुद्धिपर छोड देना चाहिए। इस प्रकार हम गायकी बडीसे-बड़ी सेवा करेंगे।

गोरक्षाका उपाय मुसलमानोको मारना या उनसे झगड़ा करना नही है। उसका उपाय यह है कि हिन्दू खिलाफतकी रक्षामे अपनी जान दे दे और गायका कोई उल्लेख न करे। गोरक्षा एक शुद्धिकी प्रक्रिया है। यह एक तपस्या है। हम जब स्वेच्छापूर्वक

कष्ट सहन करते है और किसी पुरस्कारकी अपेक्षा नही रखते, तब हमारी दु खभरी पुकार ऊँची उठती है और ईश्वर उसे सुनता एव उसका उत्तर देता है। धर्मका पथ यही है और यदि उसपर एक भी मनुष्य पूरे मनसे चलता है तो उसे उसका फल मिलता है। मै तो यहाँतक कहता हूँ और मेरी इस बातका खण्डन नही किया जा सकता कि गायकी जान बचानेके लिए भी, अपने ही साथी, मनुष्यकी हत्या करना हिन्दू धर्म नहीं है। हिन्दू धर्म एक सच्चे हिन्दूको स्वधर्मकी खातिर अर्थात् गोरक्षाके निमित्त स्वय कष्ट सहनेका आदेश देता है। क्या हिन्दू मुसलमानोसे सौदा करनेके बजाय उनकी खातिर और उनके धर्मकी खातिर मरनेके लिए तैयार है? यदि हिन्दू इस प्रश्नका उत्तर धर्म-भावसे देंगे तो वे सदाके लिए मुसलमानोको अपना मित्र बना लेंगे और सदाके लिए गायकी रक्षा भी कर लेंगे। हमें इन मुसलमान भाइयोके बडेसे-बडे नेताओसे भी कोई बड़ी आशा नही करनी चाहिए। वे हमारी थोडी सहायता करनेके अलावा और क्या कर सकते हैं। जो लोग दीर्घकालसे गोवध करते आ रहे है और ऐसा करते हुए जिन्होने हिन्दुओके मनोभावोंका तनिक भी खयाल नही किया है, ये नेता उनके हृदयोको एकाएक बदल देनेका जिम्मा नही ले सकते। परन्तु ईश्वर सर्वशक्तिमान् है; वह क्षणमे उनकी चित्तवृत्ति बदल सकता है और उसमे दया-भावका सचार कर सकता है। यदि प्रार्थनाके साथ-साथ कष्टसहन भी हो तो वह प्रार्थना हृदयकी प्रार्थना हो जाती है। ईश्वर केवल उसी प्रार्थनाको सुनता है। अव मैं अपने मुसलमान भाइयोसे दो शब्द कहना चाहता हूँ। उन्हे अनुत्तरदायी या अज्ञानी किन्तु धर्मान्ध हिन्दुओके कामोसे चिढ नही जाना चाहिए। जो उत्तेजित किये जानेपर सयम रखता है, विजय उसीकी होती है। उन्हे यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि जिन हिन्दुओमे जरा भी दायित्वकी भावना है वे इस समय मुसलमानोका साथ किसी लाभके भावसे प्रेरित होकर नही दे रहे हैं। उनका यह विश्वास है कि खिलाफतके बारेमे मुसलमानोकी माँग न्यायोचित है, और इस अच्छे काममे मुसलमानोकी सहायता करना भारतकी सेवा करना है, क्योकि मुसलमान भी इसी भारत-भूमिसे पैदा हुए है और परस्पर भाई-भाई है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-७-१९२१

२२०. अहिंसा

मेरा विश्वास है कि हम अपने उद्देश्यके निकट पहुँच गये है, परन्तु जब विजय बहुत निकट दिखाई देती है तभी अधिकतम जोखम रहता है। किसीको जब भी कोई उल्लेखनीय विजय मिलती है उसे उससे पहले समस्त पूर्व प्रयत्नोसे बडा एक अन्तिम प्रयत्न और करना पडता है। ईश्वर जो अन्तिम परीक्षा लेता है वह सदा कठिनतम होती है। शैतानका अन्तिम प्रलोभन सर्वाधिक मोहक प्रलोभन होता है। यदि हम स्वतन्त्र होना चाहते है तो हमें ईश्वरकी अन्तिम परीक्षामे उत्तीर्ण होना पडेगा और शैतानके अन्तिम प्रलोभनको अमान्य करना पडेगा।

अहिंसा असहयोगका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और अभिन्न अग है। यदि हम अहिंसक बने रहे तो हम अन्य सब बातोको छोड देनेपर भी अपना स्वतन्त्रता सग्राम चलाते रह सकते है। परन्तु यदि हम अहिंसापर कायम नही रहेगे तो हम बुरी तरह हारेगे। हमें यह याद रखना चाहिए कि हिंसा तो वह आधारशिला है जिसपर सत्ताकी इमारत टिकी है। चूँकि हिंसा सरकारका अन्तिम सहारा है, और उसका अन्तिम आश्रय है, इसलिए उसने लोगोके सभी प्रकारके हिंसात्मक प्रयत्नोको व्यर्थ करनेकी तैयारी कर ली है और इस प्रकार यदि हम हिंसा करे तो उसने अपने-आपको उससे पूर्ण सुरक्षित रखनेका प्रबन्ध कर लिया है। इसलिए हिंसाका आश्रय लेना अत्यन्त सक्रिय रूपसे सरकारके साथ सहयोग करना है। यदि हमने किसी भी प्रकारकी हिंसा की तो वह हमारी मूर्खता और दुर्बलताभरी नाराजीकी निशानी होगी। गम्भीरतम उत्तेजनाके बीच भी सयम बनाये रखना योद्धापनकी सबसे सच्ची निशानी है। युद्ध-कलामें सर्वथा नौसिखुआ मनुष्य भी यह जानता है कि उसे उन स्थानोसे बचना चाहिए जहाँ शत्रु घात लगाये हो। क्योकि खरे सैनिककी तो यह कसौटी ही है कि वह हर तरहकी उत्तेजनासे अपनेको बचाये रखनेकी सावधानी बरते।

अलीगढकी घटना इस बातका उदाहरण है। यह बात बहुत साफ दिखाई देती है कि वहाँ पुलिसने लोगोको उत्तेजनाका काफी कारण दिया था। हम यह बात बहुत पहले ही जान चुके है कि ऐसा करना उसका काम है। अलीगढके लोग अपने लिए बिछाये गये जालमे फँसकर उत्तेजित हो गये और उन्होने आगजनी की। अभीतक यह ठीक-ठीक मालूम नही हुआ है कि बिना वर्दीके सिपाहीको मारा किसने। यह साबित करनेकी जिम्मेदारी लोगोकी है कि यह काम उन्होने नही किया है।

हमें अपने प्रति कठोर होना चाहिए। यदि हम सीधे और तग रास्तेसे जाना चाहते है (जो अवश्य ही सबसे छोटा रास्ता है), तो हमे अपने प्रति दयालु नही होना चाहिए। हम किसी भी दुर्घटनाका दोष बदमाशोपर नही डाल सकते। उनके कामोके लिए हमें जिम्मेदार होना चाहिए। यदि यह असम्भव हो तो हमे कह देना चाहिए कि हम स्वराज्यके अयोग्य है। हमे उनपर भी नियन्त्रण रख सकना चाहिए

और उनको भी अनुभव करना चाहिए कि जिस राष्ट्रीय और धार्मिक कार्यमे हम लोग लगे है उसमे उनका हस्तक्षेप न करना आवश्यक है। शुद्धीकरणके आन्दोलनमे पूरा देश ही ऊपर उठता है और उसमे दुष्ट और पतित लोग भी आ जाते है। यह हमारा समझ-बूझकर किया गया दावा है, इसके सम्बन्धमे किसीको कोई भ्रम नही रहना चाहिए। यदि हमारा यह दावा सिर्फ जबानी दावा ही हो तो हम जिस तन्त्रको शैतानी तन्त्र कहकर बुरा बताते है उससे भी अधिक शैतानी तन्त्रकी स्थापना करनेके दोषी सिद्ध होगे।

इसलिए जब हम अहिंसात्मक असहयोगके मार्गपर चल रहे है तो हम नैतिक दृष्टिसे कर्त्तव्यबद्ध हो जाते है कि हम उसपर मन, वचन और कर्मसे आचरण करे। यदि हम इतने कमजोर या सदेहशील है कि अपने सिद्धान्तपर नही चल सकते तो हमे यह बात साफ-साफ स्वीकार कर लेनी चाहिए।

पाठकोको इससे यह विचार न बना लेना चाहिए कि मुझे लगता है हम परीक्षामे खरे नही उतर रहे है। इसके विपरीत मेरा यह विश्वास है कि हमने लोगोपर अपूर्व नियन्त्रण प्राप्त कर लिया है, और उन्होने अहिसाकी आवश्यकता इतनी पहले कभी नही समझी थी जितनी अब समझ ली है।

परन्तु जिस रास्तेको हमने सोच-समझकर चुना है उससे जरा-सा भी हटनेसे हमे जो उचित चेतावनी मिलती है उसको न समझना हमारे लिए अनुचित होगा।

मुझे सावधानीके तौरपर कुछ कहना भी आवश्यक मालूम होता है, क्योकि सरकारकी ओरसे दी जानेवाली उत्तेजना बढती जा रही है। ऐसा सयुक्त प्रान्तमे सबसे अधिक हो रहा है। श्री शेरवानीका सवेरे पाँच बजे गिरफ्तार किया जाना, उनपर शीघ्रतासे मुकदमा चलाया जाना, उनका अपराधी ठहराया जाना, उनको सजाका दिया जाना और उसी दिन वहाँसे अन्यत्र ले जाया जाना — ये सब बाते अत्यन्त विचारशील मनुष्यको भी चिढा देनेके लिए काफी है। मुकदमेके ब्यौरेसे यह पता लगता है कि न्यायाधीशको कानूनका ज्ञान नही था और उनको इसकी अधिक परवाह भी नही थी। यदि उनके सामने सिर्फ वे ही सबूत थे जो समाचारपत्रोमें प्रकाशित हुए है तो वे सजा देनेके लिए काफी नही थे। यह मालूम होता है कि उनको अपराधी ठहराने और दण्ड देनेके बारेमे सब बाते पहले ही तय कर ली गई थी। इस मामलेमे गवाही लेनेकी कार्रवाई एक बहुत बडा झूठ-मूठका दिखावा थी। हमारे यहाँ सर्वसाधारण कानूनके अधीन मुकदमोके नाटककी तालीम चल रही है। प्रशासनके आदेश और अदालती अभियोगमे अन्तर ही कहाँ है? अदालती अभियोग तो और भी घातक होता है क्योकि उसकी आलोचना करना अधिक कठिन होता है। 'मुकदमा झूठा दिखावा था', कहनेकी अपेक्षा 'मुकदमा चलाया ही नही गया', यह कहनेमें अन्यायकी अधिक प्रतीति होती है। दमनकारी कानून रद किये जा सकते है, परन्तु इससे यह निष्कर्ष तो नही निकलता कि दमन समाप्त हो जायेगा। स्वरूप बदल जानेपर भी वस्तु तो वही रहेगी। हम चाहते है कि वस्तु, आत्मा अथवा हृदय बदल जाये।

और यदि हम ऐसा परिवर्तन चाहते है तो हमे पहले अपने आपमे परिवर्तन करना चाहिए, अर्थात् हमारे ऊपर दमनका कोई प्रभाव नही पडना चाहिए। जिस

प्रकार हम हिंसात्मक प्रतिकार नही कर सकते, उसी प्रकार हम दमन किये जानेपर कमजोर न हो, भले ही वह दमन कितना ही कठोर या कष्टकर क्यो न हो।

सयुक्त प्रान्तकी एक विश्वसनीय अफवाह है कि तीन या चार प्रसिद्ध कार्य-कर्त्ताओने जेल-जीवनको बहुत अधिक कष्टप्रद पाया, अत कुछ कामोको न करनेका वचन दे दिया और जेलसे छूट गये। यदि यह बात सच है तो यह खेदजनक है। हमे चट्टानकी तरह दृढ होना चाहिए। हमे पीछे नही हटना चाहिए। भारतकी जेलोमे हमे जो भी कष्ट उठाने पडे हममे उनको खुशीसे सहन करनेकी सामर्थ्य होनी चाहिए। हमे सरकारसे कोई आशा नही करनी चाहिए। हमे उससे यही आशा करनी चाहिए कि वह बुरासे-बुरा जितना कर सकती है करेगी, फिर चाहे वह कानूनके अनुसार हो, चाहे उसके खिलाफ। उसका एकमात्र उद्देश्य हमको झुकाना है, क्योकि वह अपने आपमे सुधार करना नही चाहती।

मै सरकारके बारेमे कठोर मत नही दे रहा हूँ। धारवाड और अलीगढकी घटनाएँ सरकार द्वारा शिष्टताका उल्लघन किये जानेकी सबसे ताजी मिसाले है। यदि मै विश्वास करूँ तो एक दूसरी अफवाह यह है कि सयुक्त प्रान्तकी एक जेलमे एक बहादुर मुसलमान कैदीको एक अँधेरी कोठरीमे बन्द कर दिया गया और तीन दिन-तक तेज बदबूमे रखा गया। जिस मनुष्यने मुझे सूचना दी उसने मुझसे पूछा कि जो व्यक्ति इस तेज बदबूको सहन न कर सके उसे क्या करना चाहिए। मैने कठोरतासे किन्तु विचारपूर्वक उत्तर दिया कि फिर भी उसे क्षमा नही माँगनी चाहिए, उसे अत्या-चारीकी इच्छाके सामने झुक जानेकी अपेक्षा अपना सिर जेलकी दीवारोसे मारकर फोड लेना चाहिए। यह मेरा कोई ऐसा मत नही है जिसे मै व्यर्थ ही प्रकट कर रहा हूँ, बल्कि ये मेरे दक्षिण आफ्रिकाके दिलचस्प छुटपुट अनुभव है। दक्षिण आफ्रिकामे जेलका जीवन सुख-सुविधापूर्ण नही था। बहुत-से कैदियोको तनहाईकी सजा भुगतनी पडती थी। सैकडोको सफाईका काम करना पडता था। अनेक लोगोने उपवास किये। एक स्त्री जब जेलसे छोडी गई तब वह हड्डियोका ढाँचा ही रह गई थी, क्योकि जो-कुछ भी वह खा सकती थी वह जेलके अधिकारी उसे देते नही थे। परन्तु वह स्वाभिमानिनी और दृढ थी। दक्षिण आफ्रिकामे जिन हजारो लोगोने सजा भोगी, उनमे से शुरूमे एक या दो अपवादोको छोडकर मुझे ऐसे एक भी कैदीका उदाहरण याद नही आता जिसने जेलसे छूटनेके लिए किसी प्रकारकी कमजोरी दिखाकर माफी माँगी हो। पारसी रुस्तमजी, इमाम अब्दुल कादिर बावजीर, थम्बी नायडू और अन्य बहुतसे लोगोने जिनके नाम मै बता सकता हूँ, कभी पीछे पाँव नही हटाया। बल्कि वे बार-बार जेल गये। तपस्वियोके रक्तदानके बिना स्वतन्त्रताके मन्दिरका निर्माण नही हो सकता। अहिसाकी पद्धति सबसे त्वरित, निश्चित और सर्वोत्तम है। हमे काग्रेसके और खिलाफतके सम्मेलनोमे की गई अपनी प्रतिज्ञाके प्रति सच्चे बने रहना चाहिए, और विजय बिलकुल पास है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-७-१९२१

२२१. टिप्पणी

मऊमें झगड़ा

इन्दौरके पास मऊ एक बडी सरकारी छावनी है जहाँ हिन्दू और मुसलमान दोनो ही रहते है। कुछ दिन पहले अखबारोमे इधर-उधर कही एक खबर छपी देखी थी कि वहाँ बोहरा और सुन्नी मुसलमानोमे मारपीट हो गई है। कहा जाता है कि इसमे एक बोहरा मारा गया और कई लोग घायल हो गये। कहा जाता है कि बोहरा भाइयोने स्वराज्य-कोषमे रुपया देनेसे इनकार किया था, इसी बातको लेकर वहाँ झगडा हो गया। कुछ भी हो, बोहरा और सुन्नी मुसलमानोमे अनबन दिखाई देती है। गोधरामे भी यह बात देखनेमें आई है। रतलाममे भी ऐसी ही घटना हुई है। बोहरा लोग भारत-भरमे कुल मिलाकर केवल तीन लाख है। जिनकी सख्या इतनी कम है ऐसे लोगोको प्रश्रय देना बडी जातियोका धर्म है। यदि बोहरा भाई खिलाफत या स्वराज्य आन्दोलनमे भाग न ले तो भी हमे उनको परेशान नही करना चाहिए। सम्भव है, कोई छोटी जाति डरके कारण अथवा परिणामका खयाल करके मैदानमे न भी आये। ऐसी स्थितिमे किसी बातके सम्बन्धमे उसपर जोर डालना उचित नही माना जा सकता। मुझे यह भी बताया गया है कि मऊमे हिन्दुओने बोहरोके विरोधियोका पक्ष लिया था। मै अनुभव करता हूँ कि जब एक धर्मके लोगोमे कोई झगडा हो तो दूसरे धर्मके लोगोको तटस्थ ही रहना चाहिए। उनका कर्त्तव्य है कि वे उन दोनोको समझाने और उनमे मेल करवानेका उद्योग करे। जैसे हिन्दू-हिन्दूकी लडाईमे मुसलमानोका किसी एक या दूसरे पक्षका साथ देना अनुचित है वैसे ही मुसलमान-मुसलमानके झगडेमे हिन्दुओका पक्ष लेना भी अनुचित है। खिलाफतके हरेक कार्यकर्त्ताका कर्त्तव्य है कि वह जहाँ-कही भी झगडा होनेका डर हो, वहाँ उसे रोकनेका प्रयत्न करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-७-१९२१

२२२. तार : हैदराबादके एक असहयोगीको

२९ जुलाई, १९२१

असहयोगी गवाही नही दे सकते।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

२२३. अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें बहिष्कारपर बहस

[३० जुलाई, १९२१ के पूर्व][1]

गाधीजी जूनके महीनेमें जब हमने एक करोड रुपया इकट्ठा किया उस समय हममे जो उत्साह और स्फूर्ति थी वह अब कहाँ है? आज हम इस बातको लेकर सशकित है कि कौन जाने हम विदेशी कपडेका बहिष्कार कर सकेंगे या नही। लेकिन हमारी दुर्बलता ही हमारे इस भयका कारण है। हम शान्तिसे विचार करे तो मालूम होगा कि बहिष्कारके बाद हमारे लिए कुछ और करनेको नही रह जायेगा। मै जैसे-जैसे विचार करता हूँ वैसे-वैसे मुझे लगता है कि हमे सिपाहियोको हथियार छोड देनेकी तथा करदाताओको कर न देनेकी सलाह देनेकी भी जरूरत नही रहेगी। हम यदि सम्पूर्ण रूपसे बहिष्कार कर सके तो थोडेसे ही लोगोको कानूनका सविनय भग करके जेल जानेकी जरूरत होगी और थोडेसे लोगोको ही आत्मत्याग करना होगा। अतएव हमे गमगीन, हताश अथवा पस्त-हिम्मत नही होना चाहिए।

लोगोने स्वदेशी और बहिष्कारसे सम्बन्धित कुछ-एक प्रश्न मुझसे पूछे है। मै अब उनका उत्तर दूंगा।

प्रश्न: हम अगर आजसे नये विदेशी कपड़े न लेनेका व्रत लें और हमारे पास जो विदेशी कपड़े हे उन्हें पहनकर फाड़ डालें तो इसमें क्या बुराई है?

उत्तर मेरी समझमे नही आता कि जिस वस्तुको हमने एक बार कलुषित मान लिया हम उसे अपने पास सँजोकर कैसे रख सकते है? विदेशी कपडा पहनना अगर हमारे लिए अधर्म है तो फिर हम क्षण-भरके लिए भी कैसे उसे अपने पास रख सकते है? किसीके घरमे प्रवेश करके अगर मै जबरदस्ती उसका चूल्हा तोड डालूँ तो यह घोर पाप माना जायेगा। विदेशी कपडेके व्यापारने हमारे गरीब-वर्गका चूल्हा तोड़ डाला है, हमारे उद्योगको प्राय समाप्त कर दिया है और अनेक लोगोको भुखमरीकी स्थिति-में डाल दिया है। इस व्यापारके मोहमे हमने स्वय अपने पेटपर लात मारी है; यह भी घोर पाप हुआ है। यदि कोई हमारे पाँवकी बेडियोको तोड डाले तो क्या उसके टुकडोको हम सँभालकर रखेंगे? मै जानता हूँ कि जैसे दीर्घ कालतक पहनी गई बेडियोसे गुलामको मोह हो जाता है उसी तरह हमारे मनमे भी विदेशी कपडेके प्रति मोह पैदा हो गया है और इसीसे हमारे मनमे ऐसे प्रश्न उठते है।

हम स्वयं भले ही अपने विदेशी कपड़ोंका त्याग कर दें; किन्तु हम वे कपड़े अपने देशके गरीबोंको और अर्ध-नग्नावस्थामें घूमनेवाले बहनों और भाइयोंको क्यों न दे दें? उन्हें कपड़े देकर उनकी आत्माको क्यों न शीतल करें? हम ये कपड़े विदेशों-में — हिन्दसे बाहर — किसलिए भेजें?

१. अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी बैठक २८ से ३० जुलाईतक बम्बईमें हुई थी।

हमारे घरमे अगर किसीने गोमास फेक दिया हो तो हम उसे निकाल फेकेगे अथवा उसे किसी गरीबको दे देगे? सम्भव है वह किसी गरीबके कामका हो, लेकिन जिस वस्तुको इस्तेमाल करनेमे हम पाप मानते है वह दूसरोको कैसे दे? हम अपना सडा-गला भोजन किसी अन्यको खानेके लिए देगे अथवा उसे नष्ट कर डालेगे? समाज-की स्थिति आज इतनी विषम है कि कुछ लोग सडे हुए भोजनसे भी पेट भरनेके लिए तैयार है। लेकिन उन्हे सडा हुआ भोजन देनेमे हमारी सज्जनता अथवा कुलीनता निहित नही है, इतना तो आप कबूल करेगे ही। हमने निश्चय किया है कि हम पहली अगस्तको खादी नही तो कमसे-कम स्वदेशी कपडा पहनकर चौपाटीपर इकट्ठे होगे। हमारी इच्छा है कि एक भी व्यक्ति खादी अथवा स्वदेशी वस्त्र पहने बिना चौपाटी-पर न आये। क्या आप यह चाहते है कि गरीब वहाँ न आये? आपके उतारे हुए विदेशी वस्त्र पहनकर वे सभामे कैसे आ सकते है? हम बडे जबरदस्त अन्नदानी है लेकिन अपनी दयामे हम विवेक खो बैठते है। हमारी उतारन गरीबोका शृगार क्यो होनी चाहिए? गरीबोको दान दिया ही क्यो जाये? हम गरीबको स्वावलम्बी बनाये यही हमारा दान हो सकता है। हमारा आन्दोलन ही गरीबोको अपने जैसा बनानेका है। अपने जैसेका अर्थ गरीबोको धनवान बनाना नही परन्तु यह है कि वे नगे-भूखे न रहे। हमे जैसे श्वासोच्छ्वास लेनेका हक है वैसे ही पापीसे-पापी व्यक्तिको भी यह अधिकार है। ऐसा किसी भी शास्त्रमे नही लिखा कि उन्हे खाने-पीने अथवा पहनने-ओढनेका हक नही है। भीख माँगनेका अधिकार किसे है? जो व्यक्ति साधु है, जिसने हमें ज्ञानका दान दिया है और देता है उसके अतिरिक्त किसी दूसरेको भिक्षा माँगनेका अधिकार नही है। हम भिक्षा देकर भूल करते है, पाप करते है। हमारे अनेक सदा-व्रत आलस्य और पापकी निशानी है, ऐसी मेरी मान्यता है। हिन्दुस्तानमे ऐसी स्थिति होनी चाहिए कि किसी भी व्यक्तिको हाथ पसारनेकी जरूरत ही न रहे। हमे अगर गरीबोको स्वावलम्बी बनाना है तो उन्हे उद्यम सिखाना ही पडेगा। मेरे पास आज ही एक अग्रेज इस विषयपर बातचीत करनेके लिए आया था। उसे मै समझा रहा था कि क्या तुम किसी गरीबको अपना हैट या अपना सूट देना उचित समझोगे? इस समय आप जितने लोग यहाँ उपस्थित है आपके सिरोपर मुझे ऐसी पगडी अथवा टोपी दिखाई नही देती जिसका गरीबके लिए कुछ उपयोग हो। बहनोकी रग-बिरगी साडियो-का गरीब क्या करेगे? उन्हे वे पहनेगे ही नही। अगर हमने सोच-विचार किया होता तो हमारा पहरावा गरीबोके पहरावेसे कुछ मिलता-जुलता होता। काठियावाडकी अहीरिनोको मै जानता हूँ। वे आपकी दी हुई साडियोको फेक ही देगी। क्या किसी भी गरीब स्त्रीको आपकी रेशमी साडीकी जरूरत है? क्या अकाल-ग्रस्त लोगोको हम रेशमी साडियाँ भेजेगे? क्या उनमे हम बुद्धिभेद उत्पन्न करेगे? गीतामे बुद्धिभेद करनेकी मनाही की गई है। हम अपनी त्यक्त वस्तुएँ अगर गरीबोको देगे तो उससे उनकी आत्मा शीतल होगी, ऐसा आप क्यो मानते है? जब वे यह समझ जायेगे कि हमने उन्हे वे वस्तुएँ दी है जिन्हे काममे लाना हम पाप मानते है तो वे हमे बद्दुआ देगे? अगर आपको अकाल-पीड़ितोसे सहानुभूति है तो आप उन्हे उन्ही वस्तुओमे से दे जो

आपके अपने इस्तेमालके लिए है। आप जो खादी पहनने जा रहे है उसमे से थोडी खादी आप गरीबोको क्यो नही दे देते? पुण्य कोई सहल वस्तु नही है।

अपने पास पड़े विदेशी कपड़ेको हम विदेशोंको भेज सकते है, फिर उनकी होली किसलिए करें? इस कपड़ेको तैयार करनेमें मानव-जातिने जो श्रम किया है उसे नाहक ही पानीमें क्यों फेंकें?

मै तो विदेशके प्रति भी सभ्य व्यवहार करनेवाला व्यक्ति हूँ। हम क्यो न मिलका कपड़ा खरीदकर उन लोगोको भेजे? मै इतना तो मानता हूँ कि इस कपडेको यहाँ [गरीब लोगोको] दे देनेमे जितना दोष है उतना स्मरना भेजनेमे नही है। कुछ-एक वस्तुएँ अमुक स्थानपर ही पापमय होती है, सदा और सब स्थानोपर पापमय नही होती। विदेशी कपडेपर भी यही बात लागू होती है। यूरोपके देशोके लिए अथवा जो देश अधिकतर विदेशी कपड़ेपर निर्भर करते है और जहाँ कपास पैदा ही नही होती उनके लिए विदेशी कपडा पापमय नही होता। यूरोपमे बने किन्तु हमारे देशमे आये हुए कपडेको हम वापस यूरोप भेज सकते है। इस सम्बन्धमे मुसलमान भाइयोसे मेरा बहस करना उपयोगी नही हो सकता इसलिए मै झुक गया और मैंने विदेशी कपडेके स्मरना भेजे जानेकी छूट दे दी, लेकिन हमारा प्रथम कर्त्तव्य तो उसकी होली करना ही है।

अब प्रश्न यह है कि जिस वस्तुपर मनुष्य जातिने परिश्रम किया है उसको कैसे नष्ट किया जा सकता है? लेकिन जगत्मे ऐसी कौन-सी वस्तु है जिसपर परिश्रम किया गया हो और फिर जिसका नाश न हुआ हो? मेरी पगड़ी सुन्दर बँधी हुई है — और मेरे भाई तो पगडी बाँधनेका धन्धा करते है — लेकिन अगर मेरी पगड़ीमें प्लेगके कीटाणु भर जाये तो चूँकि यह पगडी मेरे भाईने बाँधी है इसलिए क्या मुझे उसको नष्ट नही करना चाहिए? मेरा फर्ज तो उसे नष्ट करना ही है। मनुष्य-देहको हम ससार-सागरको पार करनेकी नौका मानते है। ईश्वरने ऐसी महत्त्वपूर्ण वस्तुओके नाशकी भी व्यवस्था की है। वह तो अनेक वस्तुओका नाश करता है। क्या हम उसकी अपेक्षा अधिक समझदार है? अपनी गढी हुई वस्तुओको नष्ट करनेका हमे अधिकार है।

जिन कपड़ोंको हमने स्वदेशी समझ लिया है और जिनके बारेमें हमें यह समझाया गया है कि वे स्वदेशी है, उनका त्याग करनेकी हमसे किसलिए अपेक्षा की जाती है? स्वदेशीका अर्थ आजतक एक ही था, अब दूसरा अर्थ किया जाता है, और थोड़े समय बाद क्या कुछ और ही अर्थ नहीं किया जायेगा? तो क्या हर बार हमें अपने वस्त्र निकालकर देते रहना चाहिए?

हमे अगर कोई चिरायता समझकर सखिया देगा तो क्या हम उसे खा लेगे? यह प्रश्न पूछने योग्य ही नही है। मुझे अगर कोई पारा चढा हुआ पैसा देता है और उसे अगर मै अठन्नीके रूपमे बाजारमें चलाने जाता हूँ तो क्या पुलिस मुझे नही पकडेगी? जो वस्तु हमे खोटी लगे उसको हमे उसी क्षण त्याग देना चाहिए। वैसे मैंने १९१९ में स्वदेशीकी जो व्याख्या की थी उसकी वही व्याख्या आज भी है। जिस दिन मैंने यह

व्याख्या की थी उस दिन मेरे तनपर खद्दर भी नही था। जिसका कोई अस्तित्व ही न था उसे मै हिन्दुस्तानके आगे किस तरह पेश कर सकता था? आज तो सूत और खादीका ढेर लगा है। और अब तो हमें सिर्फ आत्मविश्वासकी जरूरत है। स्वदेशी-की व्याख्याका रूपान्तर तो हमने अपनी सुविधानुसार किया है। मनुष्य हर तरहकी गुलामीसे छूट सकता है लेकिन उसे अपने साथियोका गुलाम तो बनना ही पड़ता है। मुझे भी उस समय भाई उमर सोबानी और भाई शकरलाल बैंकरके कथनको मान्यता प्रदान करनी पड़ी और मैंने उनकी खातिर एक नये व्रतकी[1] सृष्टि की जिसके अनुसार यहाँकी रुईसे यहाँकी मिलमे कते सूतके बुने हुए-कपडेका प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन बात इतनेपर ही रुकी नही। बहन रामीबाई कामदारको इसमे भी मुश्किल दिखाई दी, इसलिए मैने फिर तीसरे व्रतकी रचना की। लेकिन खरी स्वदेशी तो एक ही है। मै आज सबसे यही व्रत लेनेके लिए कह रहा हूँ।

कपड़ोंकी होली जलानेसे क्या अहिंसा-व्रत भंग नहीं होता?

मैल धोनेमे हिंसा नही होती। जिससे आत्माका पतन होता है वह पाप है। कुछ-एक मामलोमे हिंसा अनिवार्य है। शास्त्रोका कहना है कि श्वासोच्छ्वासमें हिंसा है। इसके अतिरिक्त वनस्पतिमे भी प्राण है और हम वनस्पति खाते है; लेकिन उसे खानेमे हिंसा है, ऐसा हम नही मानते। सूक्ष्मदर्शक यन्त्रसे देखे तो पता चलेगा कि पानीमे भी कीटाणु भरे हुए होते हैं। दूधमे भी कीटाणु बिलबिलाते हुए दिखाई देते हैं, तिसपर भी हम पानी पीनेमे दोष नही देखते और दूध तो बहुत पुष्टिकारक खुराक मानी गई है। मै इस समय आपके सम्मुख जो बोल रहा हूँ उसमे भी कुछ हदतक हिंसा निहित है। लेकिन ऐसी हिंसा अनिवार्य है और उसमे हम पाप नही मानते। जहाँ एक कौरसे निवाह हो सके वहाँ अगर हम दो खाते है तो वह पाप है। 'गीता' में कहा गया है, अगर हम अल्पाहारी नही बनते तो हम चोर है। तिसपर भी हम भारी भोज देते हैं, पग-पगपर 'गीता' के वचनोको भग करते है। अतएव ऐसा प्रश्न कैसे पूछा जा सकता है?

अश्रद्धा होते हुए भी लज्जा, भय आदि कारणोसे कोई अपने विदेशी कपड़ोंमें से थोड़े-बहुत कपड़े निकालकर दे दे और बादमें वैसे ही विदेशी कपड़े खरीद ले तो उससे देशको लाभके बदले हानि ही होगी। इसलिए विदेशी कपड़े क्यों इकट्ठे किये जायें? विदेशी कपड़ोंमें निहित गुलामीके बारेमें लोगोंको बताकर 'यथेच्छसि तथा कुरु' क्यों न कहें?

हम किसीपर अश्रद्धा अथवा अविश्वास कैसे रख सकते है? हम दूसरोको पाखण्डी क्यो माने? हम यह कैसे माने कि किसीने अपने मनमे मैल रखकर हमे कपड़े दिये हैं? तथापि व्यक्ति किसी भी वृत्तिसे सत्कार्य क्यो न करे, उससे लाभ ही होता है। अगर कोई व्यक्ति डरके मारे सच बोलता है तो उतनेसे भी उसके झूठ बोलनेपर जगत्की जो हानि होती वह न होगी। अशुभ भावसे यदि कोई व्यक्ति अच्छा कार्य करेगा तो इससे स्वय उसीकी हानि होगी, उसे उस कार्यका पुण्यफल

१. देखिए खण्ड १५, पृष्ठ २०२-४।

नही मिलेगा; लेकिन जगत्‌को उसके कार्यमे निहित अच्छाईका लाभ अवश्य मिलेगा। भयवश विदेशी कपड़ा देनेवाले और स्वदेशी पहननेवाले को स्वदेशी-व्रत पालन करनेका पुण्यफल भले ही न मिले लेकिन उसके स्वदेशी पहननेसे देशके कारीगरको रोजी मिलेगी और उसके कार्यसे इतना हित तो होगा ही। लेकिन हमे तो यही मानना चाहिए कि हर किसीने जो-कुछ दिया है सो शुद्ध निष्ठासे दिया है।

'यथेच्छसि तथा कुरु'[1] इस वाक्यका प्रयोग भी भूलसे भरा हुआ जान पड़ता है। श्रीकृष्णने यह वाक्य कब कहा? अर्जुनको पूरी तरह अपने वशमे कर लेनेके बाद ही। उन्होने अर्जुनको उसके कर्त्तव्यके बारेमे बताया, खूब अनुनय-विनय की और अन्तमें कहा कि "जो तेरी इच्छा हो सो कर"। हमे भी लोगोको समझाना चाहिए, उनके आत्म-सम्मानकी भावनाको जगाना चाहिए और अगर तब भी वे न माने तो हम उनसे कहे कि आपकी जो इच्छा हो सो करे।

हमे किसीको मारनेकी इच्छा नही करनी चाहिए। बल्कि खुद मरनेके लिए तैयार होना चाहिए। हम इसके लिए भी तैयार नही तो कमसे-कम हमें विदेशी कपड़े-का बहिष्कार तो करना ही चाहिए। कुछ किये बिना शान्त बैठे रहनेमें धर्म नही है। मैं अगस्तकी पहली तारीखतक ऐसी सभाओमें जाऊँगा। लेकिन बादमे तो जाना भी बन्द कर दूँगा। ३१ अगस्ततक मैं स्वदेशीकी बात करूँगा और बादमें वह भी छोड़ दूँगा। मैं तो व्यावहारिक बनिया हूँ। जबतक मुझे यह लगेगा कि इन तिलोमें तेल है तबतक मैं उन्हे पेरूँगा, लेकिन बादमे उन्हे छोड़ दूँगा। मुझे और बहुत-सा दूसरा व्यापार करना है।

प्रतिदिन ८-१० आने कमानेवाले लोग किस तरह विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करेंगे, १०० से १५० रुपये वेतन पानेवाले विदेशी कपड़े निकाल बाहर कर नये स्वदेशी अथवा खादीके वस्त्र कैसे बनवा सकते हैं? वे *क्या कर्ज लें? क्या भिक्षा* माँगे? अथवा अबसे विदेशी कपड़ा न लेनेका व्रत लेकर सन्तोष मानें?

ऐसे गरीब व्यक्ति भी विदेशी कपडे रूपी मैलको निकालेगे ही, बादमे भले खादीकी भीख माँगे, मित्रोसे उधार माँगे अथवा मजूरी करे, और इस बीच लगोटी-भर कपडेसे निर्वाह करें। दृढ संकल्प हमे अनेक कठिनाइयोसे उबार लेगा। सकल्प एक तरहकी ईश्वर-प्रार्थना है और यह अवश्य फलीभूत होता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ११-९-१९२१

१. भगवद्गीता, १८-६३।

२२४. भाषण: बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

३० जुलाई, १९२१

श्री गांधीने कहा कि ३० जूनको भारतीयोंने अपने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा किया है और उन्हें इसका गर्व होना चाहिए, क्योंकि उन्होंने समझ लिया है कि वे किसी कामको सरकारी मदद या संरक्षणके बिना कर सकते हैं। धनाभावके सम्बन्धमें हमारा भय अब दूर हो गया है और अब भी मुझे बिना माँगे ही पारसी, मुसलमान और हिन्दू मित्र तिलक स्वराज्य-कोषके लिए धन भेजते जा रहे हैं। इससे जाहिर होता है कि भारतीय अपनी मातृभूमिके प्रति अपना कर्त्तव्य पहचान रहे हैं। मुझे विश्वास है कि यदि इकट्ठा किया गया यह धन ठीकसे खर्च किया जायेगा तो एक करोड़ रुपया तो क्या चार करोड़ भी इकट्ठा हो जायेगा। परन्तु मैं साल पूरा होनेसे पहले ही स्वराज्य चाहता हूँ। इसका अर्थ यह हुआ कि हमें और रुपया इकट्ठा नहीं करना होगा। परन्तु मनुष्यकी चेती कब होती है? होती तो ईश्वरकी चेती ही है। इसलिए सम्भव है मेरी इच्छाएँ पूरी न हों। यदि सभी भारतीय — पुरुष और स्त्री — अपने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करें तो सफलता मिले बिना नहीं रह सकती। अब अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने निर्णय किया है कि हमें अपनी शक्ति अधिकसे-अधिक खादी तैयार करनेमें लगानी चाहिए। स्वदेशीके बिना हमें स्वराज्य नहीं मिल सकता। जो कपड़ा इस देशमें तैयार किया जाता है उसे पहनना भारतीय पसन्द नहीं करते। वे तो सिर्फ वही कपड़ा पसन्द करते हैं जो इंग्लैंड, फ्रांस या जापानसे आता है। क्योंकि उनका खयाल है कि देशमें बना कपड़ा इतना सुन्दर और कलात्मक नहीं होता जितना कि उसे होना चाहिए। यदि वे ऐसा सोच सकते हैं तो स्वराज्य कैसे प्राप्त कर सकते हैं? अन्न और वस्त्र भारतके दो फेफड़े हैं और यदि वे रोगी हुए तो देश अधिक दिनतक जिन्दा नहीं रहेगा। इस देशमें कितने ही करोड़ लोग किसी भी दिन भरपेट भोजन नहीं पाते। यदि आप उनके बारेमें सोचें तो आपको मालूम हो जायेगा कि भूखों मरते उन भारतीयोंके लिए अन्न मुहैया करना आपका कर्त्तव्य है। यदि आप इस देशका इतिहास पढ़ें तो आपको विदित होगा कि जबसे भारतने कातना-बुनना छोड़कर विदेशी कपड़ा अपनाया तबसे भारत गरीबी भोग रहा है। और जबतक आप लोग इन बातोंका हल नहीं निकालेंगे तबतक आपके कष्ट बने रहेंगे। अगर करोड़पती पारसी लोग अपनी सारीकी-सारी दौलत इस देशके निर्धन व्यक्तियोंको दे डालें तो भी उनका संकट दूर न होगा। क्या हमें इन करोड़ों

१. गांधीजीने यह भाषण एक्सेल्सियर थियेटरमें पारसी राजकीय सभाके तत्त्वावधानमें आयोजित पारसियोंकी एक भारी सभामें दिया था।

लोगोंको सदावर्तके सहारे रखना है? या वे उन्हें स्वावलम्बी बनाना चाहते हैं? इन लोगोंको तो अपने ही प्रयाससे, अपने ही उद्योगसे अपनी जीविका कमानी चाहिए और अपने लिए वस्त्र प्राप्त करना चाहिए। उन्हें अपनी जरूरतें पूरी करनेके लिए दूसरोंके आश्रित रहना कदापि नहीं सिखाना चाहिए। इस देशमें गरीबोंको काम देनेका एक ही मार्ग है और वह है भारतीयोंका खद्दर पहनने लगना। कुछ लोग शायद मुझसे यह प्रश्न करें कि ये सब गरीब लोग अहमदाबाद और बम्बई-जैसे शहरोंमें जहाँ मज-दूरोंकी इतनी कमी है क्यों नहीं आ जाते। मैं नहीं समझता कि भारतके गरीब अपने घर छोड़कर मिलोंमें काम करनेके लिए शहरोंमें जा बसेंगे। मान लीजिए कि वे ऐसा करते भी हैं तो परिणाम क्या होगा? उस हालतमें भारतको भूखे रहना होगा, क्योंकि तब हल कौन चलायेगा और आपके लिए गेहूँ तथा अन्य खाद्यान्न कौन पैदा करेगा। तब भारत एक जंगल जैसा हो जायेगा और जनता भूखों मरने लगेगी। इसलिए सारी आबादीका शहरोंमें बसना सम्भव नहीं है। जबतक इस देशमें एक भी व्यक्तिको भूखा रहना पड़ता है तबतक भारतीयोंका कर्त्तव्य है कि मितव्ययितासे काम लें और व्यर्थका ऐश-आराम त्याग दें। इसीलिए मैं अपने मित्रोंसे कहा करता हूँ कि वे चाहे जैसे भी सुधार प्राप्त कर लें, कौंसिलोंमें चाहे जैसे भी प्रस्ताव क्यों न पास करा लें जबतक वे इस देशसे गरीबी नहीं दूर कर सकते तबतक उनके सारे प्रयत्न व्यर्थ जायेंगे। मैं अपने पारसी मित्रोंसे अपील करूँगा कि वे भारतकी सच्ची स्थितिका ज्ञान प्राप्त करके उस रोगको पहचानें जिससे देश पीड़ित है और तब स्वदेशी अपना-कर उसे दूर करनेका प्रयत्न करें। पारसी सारे देशको दिखा दें कि वे चाहे जितने ऐशोआराममें क्यों न डूबे हों, कीमती चीजों और कपड़ोंको इस्तेमाल करना वे चाहे जितना क्यों न पसन्द करते हों, किन्तु एक बार इस देशकी गम्भीर स्थितिको पहचान लेनेके पश्चात् वे मातृभूमिके प्रति अपना कर्त्तव्य निभानेको तैयार हैं। वे केवल अन्य जातियोंके साथ कतारमें खड़े न होकर अन्य पिछड़ी जातियोंको स्वराज्यके लक्ष्यकी ओर ले जानेमें अगुआ होंगे। कमसे-कम मुझे तो इस बातका पूरा विश्वास है कि जो जाति देशके अनेक मामलोंमें अगुआ रही है वह इस बार भी देशमें अग्रणी बनेगी और पीछे नहीं रहेगी। सभी विभिन्न जातियोंको साथ लेकर चले बिना देश आगे नहीं बढ़ सकता और भारत एक भी जातिको पीछे नहीं छोड़ सकता। पारसी लोग जो अनेकों मामलोंमें प्रमुख हिस्सा लेते रहे हैं, इस मामलेमें भी लेंगे, इसके बारेमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं है। पारसियोंको यह नहीं कहना चाहिए कि चूँकि उनके पास अभी ३० सितम्बरतक दो महीनेका समय है इसलिए वे इस बीच कुछ न त्यागकर अन्तिम दिन ही सब चीजें त्यागेंगे। आगामी सोमवारको[1] पारसी समाजकी परीक्षा होने जा रही है और मैं जानता हूँ कि वे खरे उतरेंगे, क्योंकि मैं अपने पारसी दोस्तों-

१. इस दिन, पहली अगस्तको बहिष्कार आन्दोलन प्रारम्भ होना था।

को अच्छी तरह जानता हूँ। मैं जिस समाजके साथ इतने वर्ष रह चुका हूँ उसे कैसे नहीं जानूँगा? जिन स्त्री-पुरुषोंने तिलक स्वराज्य-कोषके लिए इतना धन दिया है, जिन महिलाओंने अपने जेवर त्याग दिये हैं, उन्हें अब पहली अगस्तको अपने कर्त्तव्यमें नहीं चूकना चाहिए। इस तारीखसे उन सबको अपने विदेशी वस्त्र छोड़ देने चाहिए। जिसे पहनना वे पाप समझते हैं उसे एक क्षण भी अपने पास नहीं रखना चाहिए। उन्हें यह अवश्य जान लेना चाहिए कि इन विदेशी वस्त्रोंको पहनकर वे अपने करोड़ों देशभाइयोंको भूखा रख रहे हैं। वे विदेशी वस्त्र नष्ट कर दिये जाने चाहिए और अपने पास कतई नहीं रखने चाहिए, क्योंकि वे पापसे रँगे हुए हैं। उनकी दृष्टिमें जिसे पहनना पापपूर्ण है वह गरीबोंके लिए भी पहनना पापपूर्ण है और इसलिए मैं उनके कपड़ोंको गरीबोंको दे दिये जानेके पक्षमें नहीं हूँ। परन्तु यदि वे चाहें तो उन कपड़ोंको भारतसे बाहर स्मरना भेजा जा सकता है।

मैं आप लोगोंसे खादी पहननेको कहता हूँ; गरीब लोगोंको मिलोंका बना कपड़ा पहनने दीजिए। जो-कुछ हाथका बना है वह अधिक कलात्मक, अधिक सुन्दर और कुल मिलाकर मशीनकी बनी चीजसे बेहतर है। मशीनपर जो-कुछ बनाया जाता है वह गरीबोंके लिए है। अमीर लोगोंको अपना सूत स्वयं कातना और उसे अपने बुनकरोंके पास भेजना चाहिए, ताकि वे उनकी पसन्दका कपड़ा तैयार कर दें। पहले, जब विदेशी कपड़ा पहनना शुरू नहीं हुआ था, ऐसा ही होता था। हम देशमें प्रचलित सभी प्रकारकी कलात्मक कारीगरीको भूल गये हैं और मिलोंमें तैयार की गई विदेशी चीजोंका प्रयोग करने लगे हैं, केवल इसलिए कि वे फ्रांस या इंग्लैंडसे आती हैं। क्या आप अपनेमें किसी प्रकारकी मौलिकता नहीं ला सकते? हर चीजके लिए विदेशोंका मुँह ताकना क्या अच्छी बात है? क्या आप लोग अपनी सब कारीगरी भूल बैठे हैं और अपनी जरूरतोंको पूरा करनेके लिए विदेशोंके मुहताज बन गये हैं? मैं उनसे अपील करता हूँ कि अपनी विदेशी चीजें त्याग दें और अपने देशके लिए कुछ त्याग करें। जो-कुछ आप करेंगे वह वास्तवमें आपका त्याग कहा जायेगा, आप तो केवल देशसेवा कर रहे हैं। मुझे खुशी है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सभी सदस्य जिनकी संख्या लगभग ३०० है, शुद्ध श्वेत खादी पहनकर बम्बई आये हैं। मुझे अक्सर याद आ जाया करता है कि इसके बारेमें श्री पिक्थॉलने क्या कहा था। उन्होंने कहा था कि यदि आप अपनेको किसी नये रंगमें रँगना चाहते हैं तो पहले आपको अपनी सारी गन्दगी धोकर उजले बनना होगा — आपको कोई अन्य रंगीन कपड़ा अपनानेसे पहले शुद्ध सफेद खादी धारण करनी चाहिए। खादीमें पवित्रता है, शुद्धता है और सौन्दर्य है और उसे पहननेवालों को कोई असुविधा भी नहीं होती। वह हमारी भारतीय राष्ट्रीयताका ध्वज है और अब उसे अवश्य पहनने लगना चाहिए। इसके बाद गांधीजीने लोगोंसे कहा कि आप लोगोंके बीच जो शपथ प्रचारित की गई है, उसपर खूब सोच-विचार कीजिए और उसपर अपने हस्ताक्षर कीजिए। ऐसा खूब अच्छी तरह विचार

करनेके बाद ही कीजियेगा। क्योंकि मैं आप लोगोंको लज्जित करके आपसे हस्ताक्षर कराना नहीं चाहता। यह पूर्णतः ऐच्छिक हो; इसमें किसी तरहका भी दबाव नहीं होना चाहिए।

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-७-१९२१

२२५. टिप्पणियाँ

श्वेत वस्त्र-सज्जित हिन्दुस्तान

तिलक जयन्तीके दिन 'क्रॉनिकल' के सम्पादक श्री पिक्थॉल[1] खादीकी पोशाक और खादीकी टोपी पहने सभामे आये, यह देख मै चकित रह गया और उनके छोटे परन्तु शुद्ध विचारोसे युक्त भाषणको सुन मुझे और भी अधिक खुशी हुई। उन्होने कहा: "यह सघर्ष आत्मशुद्धिका सघर्ष है। थोड़े समयके लिए अगर हिन्दुस्तान सिर्फ श्वेत वस्त्र पहने तो इससे वह कुछ खोयेगा नही। एक बार श्वेत वस्त्र धारण कर अपने उद्देश्यको प्राप्त करनेके बाद भले ही हिन्दुस्तान रग-बिरगे कपडे पहने।" हम सफेद खादी पहनते है क्योकि रँगनेका हमारे पास समय ही नही है। इसके अतिरिक्त रग विदेशी होनेके कारण हममे से बहुतोको पसन्द नही आते। श्री पिक्थॉलको खादीकी शुभ्रतामें हमारे सघर्षकी उज्ज्वलता दिखाई दी; यह विचार मुझे बहुत सुन्दर लगा। और यह सच भी है। अभी तो हम जो रग जहाँसे भी आये उसे ही सुन्दर मान लेते है। हकीकतमें यह मैल है। जो रग समय देखकर और उसके उद्गम स्रोतकी जाँच करनेके बाद वस्त्रमे दिया जाता है उसीमे कला और सौन्दर्य होता है। बालक द्वारा कागजपर तूलिका फेरनेमे और चित्रकार द्वारा अपनी तूलिकासे रेखाएँ खीचकर चित्रको आत्मा प्रदान करनेमें कितना अन्तर होता है? अभी तो रगोके प्रति हमारा मोह बालक द्वारा तूलिका फेरनेसे पड़े धब्बोके मोहके समान है। जबतक हिन्दुस्तानके लोग अधिकतर श्वेत वस्त्र धारण नही करते तबतक चित्रकारका जन्म नही होगा और हमारे बाजारोमें चित्र दिखाई नही देगे। जिस तरह चित्रपटके अभावमे बेलबूटे नही बनते उसी तरह जबतक हम शुद्ध सफेद खादीकी शुरुआत नही करते तबतक आँख और मनको जो भा सके ऐसे सुन्दर डिजाइनवाली खादी भी तैयार नही हो सकती। आजके रग तो धुली-पुती कब्रके समान है। हिन्दुस्तानकी कलाका विकास चाहनेवाले व्यक्तियोको विदेशसे आये हुए कपडेके कचरेको हटाकर शुभ्र भूमिका तैयार करनी ही होगी। आँगनमे रग पूरनेसे पहले जैसे हम आँगन साफ करते है वैसे ही हमें हिन्दुस्तानके आँगनमे पडे विदेशी कपडेके कचरेको तुरन्त निकाल देना चाहिए।

एक पारसी बहन

पारसी भाई और बहने राष्ट्रीय आन्दोलनमे खूब भाग लेने लगे है। भाई गोदरेजने तो तिजोरी बनानेके अपने धन्धेको सिर्फ देशके लिए ही चलानेका निश्चय कर

१. मार्माड्यूक पिक्थॉल।

लिया जान पडता है। पारसी नौजवान शराबकी दुकानोपर धरना देनेके लिए निकल पड़े है। पारसी सज्जन खादी पहनने लगे है। भारतके पितामहकी पौत्री बहन पेरीनने सिरसे पैरतक मोटी खादीकी पोशाक धारण की है। पारसी बहनोने अपने जवाहरात तिलक स्वराज्य-कोषमे दे दिये है। पारसी राजकीय सभाने एम्पायर थियेटरमे तिलक जयन्ती मनाई है। अब बम्बईकी एक पारसी बहनने शराबकी दुकानपर धरना देनेकी इच्छा प्रकट की है और अन्य बहनोसे भी वैसा करनेके लिए कहा है। उस बहनका कहना है कि अगर अन्य बहने भी इस कार्यमे शामिल हो जाये तो इस समय धरना देनेसे हिंसाका जो भय बना रहता है वह बहुत अशोमें दूर हो जायेगा। और अभी हाल ही मे हमपर जो यह आरोप लगाया गया है कि धरना देनेवालो में अवाछनीय व्यक्ति भी आ जाते है उस आरोपसे भी हम मुक्त हो जायेगे। इस बहनको मै बधाई देता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३१-७-१९२१

२२६. प्रस्ताव : चुनावके सम्बन्धमें[1]

[बम्बई
३१ जुलाई, १९२१]

महात्मा गांधीने निम्नलिखित प्रस्ताव पेश किया :

१७ पिछले महीने बगाल और मद्रासमे हुए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके चुनावोसे सम्बन्धित सवैधानिक प्रश्नोपर किसी पूर्वग्रहके बिना और उनके गुण-दोषोपर नजर डाले बगैर, और इस तथ्यको देखते हुए कि समस्त भारतमें नये चुनाव अगले नवम्बरमे या उससे पहले अवश्य होगे और इस बातको भी ध्यानमे रखते हुए कि समस्त भारतके काग्रेस-सगठनोके सामने इस समय एक व्यस्त और भारी कार्यक्रम प्रस्तुत है, यह समिति देश-हितके खयालसे इन चुनावोमे किसी प्रकारका हस्तक्षेप करना या खलल पहुँचाना ठीक नही समझती है और बगाल तथा मद्रासके उन लोगोको, जिनके दिलोमे क्षोभ है, सलाह देती है कि वे अपने-अपने प्रान्तोमे प्रान्तीय सगठनोको अपना सहयोग दे जिससे कार्यक्रम सुचारु रूपसे चलाया जा सके और वह सफल हो।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१. मणिभवन, लैबर्नम रोड, बम्बईमें कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक सुबह साढे आठ बजे हुई। गांधीजी द्वारा पेश किये गये इस प्रस्तावका मौलाना मुहम्मद अलीने अनुमोदन किया। प्रस्ताव बहुमतसे पास हो गया।

२२७. भाषण : बम्बईमें खादी-प्रदर्शनीके उद्घाटनपर[1]

३१ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने प्रदर्शनीके उद्घाटनकी घोषणा करते हुए कहा कि मैं अध्यक्षा तथा अतिया बेगमका कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इसके लिए इतना परिश्रम किया। अतिया बेगमने इसे सफल बनानेके लिए रात-दिन काम किया है। मैं जानता हूँ कि उनके साथ और भी कार्यकर्त्ता थे। मैं उनकी भी प्रशंसा करता हूँ। किन्तु इस पूरी प्रदर्शनीके कामको गति प्रदान करनेवाली शक्ति अतिया बेगम ही थीं। मुझे इस बातकी प्रसन्नता है कि इस देशमें इस प्रकारकी महिलाएँ हैं जिनमें संगठनकी इतनी महान् क्षमता है। इस सम्बन्धमें अध्यक्षा तथा उनकी बहनने जो-कुछ किया है उसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। मुझे इससे और भी अधिक प्रसन्नता होती है कि संगठन करनेवाली बहन मुसलमान है।

यह दुर्भाग्यकी बात है कि इतने समय बाद लोगोंको खद्दरसे बहुत-सी चीजें तैयार होनेकी बात बताई जा रही है। मुझे आशा है कि लोग इस प्रदर्शनीका लाभ उठायेंगे। खद्दरकी परिभाषा करते हुए उन्होंने बताया कि देशमें ही विशुद्ध रूपसे हाथकते सूतका हाथबुना कपड़ा खादी है। मुझे इस बातसे हर्ष होता है कि यह देश महीनसे-महीन वस्त्र बनानेमें समर्थ है, विशेषकर बेजवाड़ा और गंजाम जिलोंमें ऐसा कपड़ा बनाया जाता है। इस सभामें मौजूद बहनोंमें से बहुत-सी बहनें मद्रास अहातेके उन भागोंमें बनी साड़ियाँ अवश्यमेव पहने हुए होंगी। उन्हें इस बातपर गर्व होना चाहिए कि यह देश ऐसी महीन साड़ियाँ तैयार करनेमें समर्थ है। किन्तु जिस व्यक्तिको इस काम अर्थात् इस प्रकारके महीन वस्त्रके उत्पादनका प्रमुख श्रेय है वह भी यहाँ मौजूद है। किन्तु उसने अपने प्रान्तमें खद्दरको लोकप्रिय बनाया और वहाँ उसके उत्पादनको प्रोत्साहन दिया, इसके लिए उसे अपराधी माना गया है। मैं यह नहीं कहता कि वह खादीका लोगोंमें प्रचार कर रहा था, केवल इसीलिए उसे जेल भेजा गया।

किन्तु जहाँतक मैं जानता हूँ उसका इसके अतिरिक्त और कोई अपराध नहीं था कि उसने लोगोंके बीच खादीका बहुत प्रचार किया। सरकार अब उस जैसे लोगोंसे डरती है। इसलिए वह कुछ-न-कुछ स्याह-सफेद करके ऐसे लोगोंको जेल भेजनेकी कोशिश कर रही है।

इसलिए यह हमारा कर्त्तव्य है कि हम आन्ध्र-केसरी तथा कांग्रेस व स्वदेशीके जबरदस्त कार्यकर्त्ता वेंकटप्पैयाके समान सफेद खादी पहनकर जेल जायें। सरकार यह

१. गांधीजीने रामबाग, सी० पी० टैंकमें राष्ट्रीय स्त्री-सभा द्वारा आयोजित प्रदर्शनीका उद्घाटन किया था।

समझ गई है कि लोगोंने ३० सितम्बरके पूर्व जो-कुछ करनेके लिए कहा है उसे वे अवश्य करेंगे, इसलिए वह दमनका सहारा ले रही है। हमने अपना कार्य आरम्भ करते ही वाइसरायको चेतावनी दे दी थी। मैं श्री शेरवानी तथा आन्ध्र-निवासी श्री वेंकटप्पैयाको उस साहसके लिए बधाई देता हूँ जो उन्होंने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पालन करनेके लिए जेल जाकर दिखाया है। लोगोंको ऐसे दमनसे भयभीत नहीं होना चाहिए; जबतक वे अपना कर्त्तव्य-पालन कर रहे हैं तबतक उन्हें इस दुनियामें डरनेका कोई कारण नहीं। मैं आप लोगोंसे अपील करता हूँ कि आप अपनी व्यक्तिगत सुविधा तथा विलासिताको छोड़कर खादी पहनें। जब मैं पुरी गया था तब मैंने देखा कि लोग भूखों मर रहे हैं। हमारे देशमें ऐसे तीन करोड़ लोग हैं। जब हमारे किसान अपने खाली समयमें चरखा कातते थे, तब वे अपनी आयमें अभिवृद्धि कर लेते थे, इस प्रकार वे भुखमरीको अपने पास नहीं फटकने देते थे। किन्तु अब लोग मैनचेस्टरके वस्त्र पहननेके आदी हो गये हैं, किसानोंका वह पेशा मारा गया है और वे भूखों मर रहे हैं। जगन्नाथके मन्दिरमें स्वयं भगवान्‌की प्रतिमा विदेशी वस्त्रोंसे सजाई गई थी, इसलिए मैंने पुजारीसे पूछा कि क्या वह विदेशी वस्त्र पहनाकर स्वयं भगवान्‌को ही शर्मिन्दा नहीं कर रहा है?

लोग शिकायत कर रहे हैं कि मेरे मित्र विट्ठलदास जेराजाणी तथा नारणदास पुरुषोत्तमने खादीकी कीमतें बढ़ा दी हैं। मेरा निवेदन है कि इस कामपर होनेवाले खर्चको पूरा करनेके लिए ही वे ऐसा कर रहे हैं; उनका उद्देश्य इस व्यापारसे किसी प्रकारका लाभ उठाना नहीं है। कुछ लोगोंकी शिकायत है कि बुनकर खादी बुननेकी अधिक मजदूरी माँग रहे हैं। आप ही बतायें कि इसमें उनका क्या अपराध है। क्या कभी यह शिकायत भी की गई है कि वकीलों तथा डाक्टरोंने अपनी फीस बढ़ा दी है? उनमें से कुछ तो १,००० रु० प्रतिदिनके हिसाबसे फीस लेते हैं, इसलिए यदि बुनकर कुछ आने और माँगते है तो इसमें क्या हानि है? क्या उन्हें अपने परिवारका पालन-पोषण नहीं करना है? कुछ आने और प्राप्त कर लेनेपर वे अपने परिवारकी उन जरूरतोंको पूरा करेंगे जिन्हें वे बहुत दिनोंसे पूरा करनेमें असमर्थ थे। लोगोंको इसके लिए शिकायत क्यों होनी चाहिए? यदि बुनकर खादीकी कीमत जितनी उन्होंने बढ़ाई है उससे भी अधिक बढ़ा दें तो भी लोगोंको कोई आपत्ति नहीं उठानी चाहिए।

मैं चाहता हूँ कि इस देशका प्रत्येक घर सूत कातनेकी तथा प्रत्येक गली कपड़ा बुननेकी मिल बन जाये ताकि इस देशका पुनरुत्थान हो। यदि हमारी महिलाएँ अपने उस खाली समयको जिसे वे अब सिनेमा जाने आदिमें बर्बाद करती हैं, कपड़ा बुननेमें लगायें तो जहाँतक वस्त्रका प्रश्न है, भारत आत्मनिर्भर बन सकता है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १–८–१९२१

२२८. भाषण: बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

३१ जुलाई, १९२१

मै इस दिनको बम्बईके लिए एक पवित्र दिन मानता हूँ। आज हम अपने शरीरोसे गन्दगी हटा रहे हैं। हम विदेशी वस्त्रको, जो हमारी गुलामीका चिह्न है, त्यागकर अपना शुद्धीकरण कर रहे है। आज हम स्वतन्त्रताके (स्वराज्य) मन्दिरमे प्रवेश पानेकी योग्यता प्राप्त कर रहे है।

कुछ लोग कहते है कि बहिष्कृत वस्त्रोको नष्ट करना क्रोध और द्वेष-भावनाका सूचक है। वह द्वेष-भावका सूचक है या नही यह तो इसपर निर्भर करता है कि हम किस भावनासे इन कपड़ोको जला रहे हैं।

हम अग्रेजो, अमेरिकियो, जापानियो या फ्रासीसियोके प्रति दुर्भावना क्यो रखे? वे हमारे यहाँ अपना कपडा तबतक पाटते रहेंगे जबतक हम उसे खरीदना पसन्द करेंगे। इसलिए यदि हमे क्रोध आये तो हमे अपना क्रोध अपने ही ऊपर उतारना चाहिए। जब हम विदेशी सुन्दर चीजोसे लुब्ध होना बन्द कर देंगे तब हम विदेशी राष्ट्रोके प्रति दुर्भाव रखना भी छोड देंगे।

मै देखता हूँ कि टर्कीमे हो रही घटनाएँ हमारे देशके मुसलमानोको सन्ताप पहुँचा रही हैं। वे खिलाफतके सम्बन्धमे किये गये अन्यायसे अधीर हो उठे हैं। मै उनसे विनयपूर्वक कहना चाहता हूँ कि खिलाफतकी मदद करनेका सबसे छोटा और सीधा तरीका स्वदेशी है। क्योकि स्वदेशीको अपनाकर हम भारतको शक्तिशाली बनाते हैं। और भारतकी ताकत बढानेका अर्थ है खिलाफतकी रक्षा करनेकी हमारी ताकतका बढ जाना।

परन्तु आज हमारे दिलोमे सबसे पहला खयाल यही होना चाहिए कि कल लोकमान्यकी बरसी मनानेके लिए हम अपनेको शुद्ध करे। जबतक हम स्वदेशीकी शपथ नही लेते, तबतक हम अपनेको शुद्ध नही कर सकते। इसलिए मै आशा करता हूँ कि जिन लोगोने अपने कपड़े बाँटनेके लिए या बाहर भेजनेके लिए दे दिये है, वे इस बातका दृढ निश्चय करेंगे कि भविष्यमे कभी विदेशी वस्त्र नही पहनेंगे। मुझे विश्वास है कि लोकमान्यकी स्मृतिको अमर बनानेका सबसे अच्छा तरीका स्वराज्यकी प्राप्ति है। और स्वदेशीके बिना स्वराज्य असम्भव है। और स्वदेशीका श्रीगणेश तभी हुआ माना जायेगा जब विदेशी वस्त्रोका पूर्ण और स्थायी रूपसे बहिष्कार हो। इसलिए मै होली जलानेकी इस रस्मको एक पुनीत यज्ञ मानता हूँ। और यह पवित्र रस्म मेरे द्वारा सम्पन्न होने जा रही है इसलिए मै अपने-आपको सौभाग्यशाली मानता हूँ। ईश्वर

१. बम्बईके परेल नामक स्थानमें एलफिन्स्टन मिल्सके समीप विदेशी कपड़ोंकी होली जलाकर स्वदेशी आन्दोलन शुरू करनेके लिए एक ऐतिहासिक सभा हुई थी। गांधीजीके जिस भाषणकी छपी हुई प्रतियाँ सभामें पहलेसे बाँटी गई थीं उसीका यह अंग्रेजी अनुवाद समाचारपत्रोंमें छपा था।

हमारे भीतर और बाहरकी सारी अपवित्रता दूर करे। ईश्वर करे भारतको ऐसी शक्ति प्राप्त हो कि वह अगले ३० सितम्बरतक विदेशी वस्त्रोंके पूर्ण बहिष्कारको सफल बना सके और इस प्रकार अपने पवित्र निश्चयको पूरा कर सके।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १–८–१९२१

२२९. भाषण: बम्बईकी सार्वजनिक सभामें[1]

३१ जुलाई, १९२१

अपने भाषणके दौरान महात्मा गांधीने कहा: चरखा आपकी तलवार है। इसी शस्त्रसे आपको स्वराज्यका युद्ध लड़कर अपने देशके लिए विजय प्राप्त करनी चाहिए। चरखा ही एक ऐसा शस्त्र है जिससे आप अपने धर्मकी रक्षा कर सकते हैं; इसलिए आपका कर्त्तव्य है कि आप देशमें खद्दरके उपयोगको आम बना दें। आपकी मुक्ति केवल स्वदेशीमें है, इसलिए यह आपका कर्त्तव्य हो जाता है कि आप विदेशी वस्त्रोंका उपयोग सदैवके लिए छोड़ दें। जो विदेशी वस्त्र आप इस समय पहनते हैं, वे आपको विदेशियोंके साथ जकड़ रखनेवाले बन्धन हैं। यदि आप चाहते हैं कि देश हमेशाके लिए मुक्त हो जाये तो आपको विदेशी वस्त्रोंका उपयोग छोड़ना ही होगा। यह प्रत्येक भारतीयका निश्चित कर्त्तव्य है कि वह अपने उन भाइयोंके बारेमें सोचे जो भुखमरीके किनारेपर खड़े हुए हैं; इसका कारण यह है कि लोग स्वदेशी वस्त्रोंका उपयोग करना छोड़कर विदेशी वस्त्रोंके आदी हो गये हैं। अब चूंकि आप समझ गये हैं कि हमारे गरीब देशवासी किस हालतमें हैं, तो क्या आप उन्हें हमेशाके लिए इसी हालतमें रहने देंगे? मुझे आशा है कि आप ऐसा नहीं करेंगे। मुझे जरा भी सन्देह नहीं कि जिन लोगोंने अभीतक विदेशी वस्त्रोंका उपयोग नहीं छोड़ा है वे तुरन्त उसे छोड़ देंगे। जो बहनें यहाँपर उपस्थित हैं, मैं उनसे भी अपील करूँगा कि वे देशकी खातिर महीन विदेशी वस्त्रोंका परित्याग करके खद्दर पहनें। पूर्ण रूपसे स्वदेशीका उपयोग करके ही आप देशको गुलामीकी उन जंजीरोंसे छुड़ानेकी आशा कर सकते हैं जिनमें वह इस समय जकड़ा हुआ है। क्योंकि सच्ची स्वदेशीका अर्थ है सच्चा स्वराज्य। आपको अपने देशकी खातिर स्वराज्य तो प्राप्त करना ही है। मैं आप लोगोंसे अपील करता हूँ कि आप इस संकट-कालमें देशके प्रति अपना कर्त्तव्य निभायें और हमेशाके लिए स्वराज्य प्राप्त कर लें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १–८–१९२१

१. मोतीशाहके मंदिर, परेलकी सभामें।

२३०. पत्र: ज० बो० पेटिटको

[जुलाई १९२१ के अन्तमे]

प्रिय श्री पेटिट,

१८ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद स्वीकार करे। मेरा खयाल था कि रुक्का २,००० का था। मै याददाश्तसे लिख रहा हूँ। कृपया २,००० मे से ५०० रुपये भेज दीजिए।

हृदयसे आपका,

अग्रेजी पत्र (जी० एन० ८२३१) की फोटो-नकलसे।

२३१. सन्देश: खेड़ा जिलेकी जनताको

[१ अगस्त, १९२१ के पूर्व]

खेड़ाके भाइयो और बहनो,

मैने आप लोगोसे सदा बहुत आशाएँ रखी है, और अब आपने अपने हृदयोमे भाई अब्बास तैयबजीको स्थान दिया है; इससे मेरी ये आशाएँ और बढ गई है। आपने तिलक स्वराज्य-कोषमे अपेक्षासे अधिक रकम दी। अब भारतकी यह दूसरी प्रतिज्ञा अधिक कठिन है, किन्तु वह आपके लिए कठिन नही हो सकती। किसानोको विदेशी कपड़ेका मोह नही हो सकता। किसान लोग महीन कपडे पहननेमे सकोच करेगे। चरखा खेडाके सारे भयको दूर करनेवाली प्रधान वस्तु है। हमने चरखेके प्रभावको समझ लिया है। अब हमे सर्वथा उसीका आश्रय ले लेना चाहिए। ऐसा करनेवाले लोगोको विदेशी कपडेका पूर्ण बहिष्कार करना ही चाहिए। इस कार्यको आरम्भ करनेके लिए जितना पुनीत दिवस लोकमान्य तिलककी सवत्सरीका दिन हो सकता है उतना कोई दूसरा नही। उस दिन आप विदेशी कपड़ेकी होली जलाकर अपना मैल धो डाले और फिर आपको कितना ही कम कपड़ा क्यो न मिले, उसीसे काम चलायें एवं खेड़ामे ही अपनी जरूरतके लायक खादी तैयार करनेका दृढ सकल्प कर ले। मेरी कामना है, प्रभु इस कार्यमे आपकी सहायता करे।

मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]

गुजराती, ७-८-१९२१

२३२. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर

१ अगस्त, १९२१

महात्मा गांधीने कहा : आप लोग इतनी बड़ी संख्यामें यहाँ भाषण सुनने नहीं बल्कि लोकमान्य तिलककी पूजा करने आये हैं। आप यहाँपर तिलक महाराजको श्रद्धांजलि चढ़ाने आये हैं। मेरा सन्देश तो अखबारोंमें छप जायेगा, आप उसे वहाँ पढ़ सकते हैं। ऐसे लोगोंको जो एक वर्षके भीतर ही स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए कृत-निश्चय हैं, यहाँ इतनी बड़ी संख्यामें देखकर मेरा हृदय फूला नहीं समा रहा है। हमें इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए अधिकसे-अधिक काम करना है। इसीके लिए हमने ३० जूनसे पहले सभी प्रकारके विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार करनेकी शपथ ली है। यह देखना हमारा कर्त्तव्य है कि हमने अपनी शपथको निष्ठापूर्वक निभाया है कि नहीं। मैं इससे अधिक और कुछ नहीं कहना चाहता क्योंकि ज्वार आ गया है और तेजीके साथ आगे बढ़ता चला आ रहा है। जिस धैर्यके साथ आप डटे हुए हैं उससे मालूम पड़ता है कि आप अहिंसक और असहयोगी हैं। मुझे आशा है कि हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सिख, ईसाई और यहूदी सभी ली हुई शपथको निभायेंगे। तिलकने आप लोगोंको सिखाया है कि स्वराज्य आपका जन्मसिद्ध अधिकार है, इसलिए केवल स्वतन्त्रता प्राप्त करके ही आप अपने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य निभा सकेंगे। मेरी आप लोगोंसे अपील है कि आप चुपचाप यहाँसे घर जायें और स्वदेशी-व्रतका न केवल इस समय बल्कि सदैव पालन करते रहें। मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप स्व-राज्य प्राप्त करनेपर भी स्वदेशीको न छोड़ें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २–८–१९२१

२३३. पूजाका अधिकार

जिसपर हमारा अधिकार न हो यदि हम ऐसा कार्य करें तो वह फलीभूत नहीं होता। धोबी हजामत करने बैठे तो खून निकाल दे। वकील इलाज करने लगे तो बटा ढार हो जाये। अगर धूर्त मन्दिर जाये तो उसे देवीका प्रसाद अवश्य मिल जायेगा किन्तु भक्ति-भावनासे विहीन प्रार्थनाको प्रभु स्वीकार नहीं करता।

उसी तरह अगर हम अधिकार बिना तिलक महाराजकी पूजा करेंगे तो वह कदापि स्वीकृत नहीं होगी। जिसे हिन्दुस्तान अच्छा ही नहीं लगता, जो हिन्दुस्तानकी आबोहवासे अकुलाता है, जिसे हिन्दुस्तानके रीति-रिवाज जंगली लगते हैं, हिन्दुस्तानी ढंगके भोजनको देखकर जो मुँह बिचकाता है, हिन्दुस्तानकी पोशाक जिसे काटनेको

दौड़ती है वह तिलक महाराजकी पूजा क्या करेगा? ऐसी पूजाको क्या तिलक महाराजकी आत्मा स्वीकार करेगी? जो व्यक्ति देवताको भक्तिपूर्वक 'पत्रंपुष्पंफलंतोयम' चढ़ाता है उसपर देवता प्रसन्न होते हैं। और भक्तिका अर्थ है भावपूर्वक अनुकरण।

पुजारीकी परीक्षाकी घड़ी आ पहुँची है। आज लोकमान्यकी पुण्यतिथि हम किस तरह मनायेंगे? क्या हम इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करनेका दृढ़ निश्चय करेंगे? क्या हम विदेशी कपड़ेके श्रृंगारको उतार फेंकेंगे?

जो अपना कर्त्तव्य नहीं जानता, उसे अधिकार नहीं मिलता। जो अपना कर्त्तव्य अदा नहीं करता वह मुक्ति-पत्र कैसे माँग सकता है? जिस तरह स्वराज्य जन्मसिद्ध अधिकार है उसी तरह स्वदेशी भी जन्मजात कर्त्तव्य है। स्वदेशी बिना स्वराज्य नहीं होता। स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है — यह 'तिलक गीता' का पूर्वार्द्ध है; स्वदेशी हमारा जन्मजात कर्त्तव्य है — यह उत्तरार्द्ध है।

इसलिए लोकमान्यकी पुण्य-तिथि अगर हम अच्छी तरहसे मनाना चाहते हों तो वह स्वदेशी व्रतको धारण करके ही मना सकते हैं। विदेशी कपड़ेका पूर्णतया त्याग किये बिना स्वदेशी-मन्त्रका जाप नहीं हो सकता। विदेशी कपड़ा मैल है। इस मैलको निकाले बिना हम स्वच्छ नहीं हो सकते और स्वच्छ हुए बिना स्वराज्य-मन्दिरमें प्रवेश करनेका हमें अधिकार नहीं है। जैसा कि मौलाना मुहम्मद अलीने कहा है, शान्तिसे स्वराज्य प्राप्त करनेका अर्थ स्वच्छन्दता नहीं है। हम कुछ भी त्याग न करें और केवल शान्ति-पाठ ही करते रहें तो यह मात्र मन्दता अथवा आलस्य कहलायेगा। त्याग और उद्यमविहीन शान्ति तो मृत्यु है। शव-जैसी शान्तिसे क्या लाभ है? ऐसी शान्तिका क्या उपयोग हो सकता है? कायर व्यक्ति भय देखकर घरमें छिपकर बैठ जाता है। ऐसीशान्तिसे घरका नाश ही हो जाता है। हमने जिस शान्तिकी प्रतिज्ञा ली है वह वीरताकी सूचक है। विदेशी कपड़ोंका त्याग करनेकी भी अगर हममें शक्ति नहीं है, बहादुरी नहीं है, इच्छा नहीं है तो हमारी यह शान्ति केवल दम्भ है। दम्भ तो एक नाटक है। नाटक में बहाये गये आँसुओंसे क्या ज्ञानोपलब्धि होती है?

इसलिए जो व्यक्ति तिलक महाराजकी पूजाका इच्छुक है, उसे तो सम्पूर्ण स्वदेशी-व्रत लेना ही पड़ेगा। स्वदेशी वस्त्र धारण किये बिना यदि कोई लोकमान्यका स्मरण करता भी है तो उसका फल तोतेकी तरह रटी हुई 'भागवत' जितना होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–८–१९२१

२३४. भाषण: चौपाटीकी सभा, बम्बईमें[1]

१ अगस्त, १९२१

यह लोकमान्य तिलकके नामका ही जादू था कि कल श्री सोवानीके मैदानमे दो लाख स्त्री-पुरुषोकी भीड एकत्र हुई। उस दृश्यने मेरी आत्माको अभिभूत कर दिया। कल बम्बईने जो अग्नि-शिखा प्रज्ज्वलित की वह पारसी मन्दिरकी अग्निके समान अखण्ड रूपसे जलती रहेगी और हमारे सारे कलुषको उसी प्रकार क्षार बनाती रहेगी जिस प्रकार कि हमने कल अपने भीषणतम बाहरी कलुष अर्थात् विदेशी वस्त्रोको क्षार किया। यह हमारे विदेशी वस्त्रोका स्पर्श न करनेके निश्चयका प्रतीक बने! हिन्दू, मुसलमान, जैन, सिख, पारसी, ईसाई, यहूदी तथा भारतको अपना घर माननेवाले अन्य धर्मावलम्बी सभी समाज, विदेशी वस्त्रोकी अस्पृश्यताको अपना कर्त्तव्य समझे। यह सभी भारतीय सम्प्रदायोके लिए समान रूपसे आवश्यक धर्म हो। जिस प्रकार विदेशी वस्त्रोकी अस्पृश्यता हम सबके लिए पुण्य है उसी प्रकार दलित जातियोकी अस्पृश्यता प्रत्येक धर्मनिष्ठ हिन्दूके लिए पाप होनी चाहिए। इसलिए कल हमने एक प्रशसनीय कुर्बानी की। लोकमान्य तिलककी यादगार मनानेके लिए बम्बईने अपनेको उपयुक्त सिद्ध कर दिखाया है। हम उनके आत्म-बलिदान, निर्भीक साहस तथा सादगीकी यादगारको निधिके समान सुरक्षित रखे। उन्होने देशभक्तिको अपना धर्म बना लिया था। इसलिए हम अपनेको उनके स्वराज्यके स्वप्नको साकार बनानेमे लगा दे। स्वराज्यसे कम कोई भी स्मारक उनकी यादगारको समुचित रूपसे स्थायी नही बना सकता।

और जैसा कि मैंने कल कहा था, सच्ची स्वदेशीके बिना भारतकी मुक्ति नही। जिस अग्निको हमने कल प्रज्ज्वलित किया वही सच्ची और आवश्यक बलिदानकी ज्वाला है।

बाहरी अग्निपर जो बात लागू होती है वही आन्तरिक अग्निके सम्बन्धमे भी है। कल की बाहरी अग्नि मेरे लिए अन्त स्थित अग्निका प्रतीक है। वह हमारे मस्तिष्क तथा हृदयकी सारी दुर्बलताओको भस्मीभूत कर दे। इस प्रकार परिष्कृत विवेक हमे स्वदेशीकी सच्ची आर्थिक उपयोगिता बताये। इस प्रकार परिष्कृत किये गये हमारे हृदय विदेशी वस्त्रके आकर्षणके प्रलोभनसे बचनेके लिए हमे बल प्रदान करे। विदेशी वस्त्र भारतके बाहर चाहे कितना ही उपयोगी क्यो न हो, किन्तु वह भारतके लिए अधिक उपयोगी नही है।

यदि वह अग्नि जिसे हमने कल जलाया था सच्ची है, वह श्रद्धाजलि जिसे लोकमान्यकी स्मृतिमे चढानेके लिए आज हम एकत्र हुए है, सच्ची है तो हम अपनेको अथवा राष्ट्रको धोखा न देनेकी पूरी सावधानी बरतेगे। खादीकी राष्ट्रीय पोशाक

१. इस भाषणका पाठ छापकर श्रोताओंमें वितरित किया गया था।

निश्चित करनेका यह अच्छा अवसर है। इसके बाद शुभ अवसरोपर विदेशी मलमल नही बल्कि पवित्र खादी हमारे शरीरोको सुशोभित करेगी। यह खादी लाखो भारतीयोके किसी कठिन परिश्रम या जबरन लादी गई निष्क्रियता तथा अकिंचनताका प्रतीक न होकर घरेलू जीवनको पुनरुज्जीवित करनेवाली कविता तथा गरीबसे-गरीब मेहनतकश-की भावी समृद्धिका प्रतीक है। और यदि बारह मास पूर्व स्वर्गवासी महान् देशबन्धु [लोकमान्य तिलक] की पवित्र अस्थियाँ जहाँ जलाई गई थी वहाँपर किये गये कलके पवित्र समारोह तथा आजके प्रदर्शनका यही आशय है तो हमे अपने प्रस्तावसे पीछे नही हटना चाहिए, न इसके लिए कोई बहाना ही बनाना चाहिए। हमे बिना कोई प्रदर्शन किये सदैवके लिए विदेशी वस्त्रोका उपयोग छोड देना चाहिए। हमे यह समझ लेना चाहिए कि जिस प्रकार उस मक्खन-मलाईवाले दूधका जिसके बारेमे यह मालूम हो जाये कि वह दूषित है, कोई मूल्य नही होता उसी प्रकार हमारे पास जो विदेशी वस्त्र है, उनका कोई मूल्य नही। उन्हे फेंक देनेके सिवा और कोई चारा नही। यदि हमे अब विदेशी वस्त्र नही पहनने है, तो उन्हे अपने ट्रकमे ताला लगाकर बन्द कर रखना क्या एक निरर्थक बड़ा बोझ ही नही है? क्या यूरोपमे लोग उन मूल्यवान वस्तुओको छोड़ नही देते जिनका चलन बन्द हो गया है? मै इस प्रारम्भिक अवस्थामे सावधानीके ये शब्द इसलिए कहता हूँ, क्योकि मै जानता हूँ बहुतसे लोगोने अपने विदेशी वस्त्रोका केवल एक भाग ही दिया है और शेष स्पष्टत. इस आशासे अपने पास रख लिये है कि शायद समय आनेपर वे उन्हे पहन सके। विदेशी वस्त्रोका सग्रह, द्रव्य या गहनोका सग्रह नही है जिसमे से केवल अशमात्र देनेसे काम चल सकता है। विदेशी वस्त्रोका सग्रह तो उस कूडे-करकटके ढेरके समान है जिसके एक-एक कणको मेहनती तथा कुशल गृहिणी घूरेपर फेंक देती है। यदि हमारे बाजारोमे विदेशी वस्त्रोकी दुकाने रह भी जाये तो उधर आकर्षित न होनेका दारमदार हमारी तड़क-भड़क और चमक-दमककी ओर जानेवाली रुचिमे क्रान्तिकारी परिवर्तन करनेकी योग्यतापर निर्भर करेगा। हमे नकलके पीछे दीवाना नही बनना चाहिए। यदि हम ऐसा करते है तो सम्भव है कि धोखाधड़ीसे विदेशी बाजारोसे हमारे यहाँ नकली खादी आने लगे। फिलहाल सक्राति कालमे हमारे लिए मोटी-झोटी बिना धुली खादी ही सर्वोत्तम है।

मै खादीकी प्रतिज्ञा इसलिए करता हूँ कि यह हमे अपनी सभी शक्तियोका उपयोग करनेका अवसर देती है और लाखो स्त्री-पुरुषोमे से प्रत्येककी, चाहे वह बूढा हो या जवान, परीक्षा लेती है। इसमे सफलताकी आशा केवल तभी की जा सकती है जब कि भारत एक मत होकर कार्य करे। यदि भारत इसे स्वदेशीके सम्बन्धमे चरितार्थ कर सकता है तो समझ लेना चाहिए कि उसे स्वराज्यका रहस्य मालूम हो गया है। तब वह वैज्ञानिक ढगसे विनाश और निर्माणकी कलामे प्रवीण हो जायेगा।

कल जिस स्थानपर[1] हमने अपने पापोके एक अशको जलाया वह हमारे लिए तीर्थस्थान बन गया है। मुझे आशा है कि श्री सोबानी जिन्होने इस आन्दोलनमे पहले

१. देखिए "भाषण: बम्बईमें स्वदेशीपर", ३१-७-१९२१।

ही उदारतापूर्वक योगदान दिया है और जो अपने लड़के तकको इसके लिए समर्पित कर चुके हैं, उस स्थानको जहाँ बलिदानकी आग जलाई गई थी, राष्ट्रको समर्पित कर देंगे जिससे कि वहाँ इस घटनाकी यादगार-स्वरूप किसी उपयुक्त स्मारकका निर्माण किया जा सके। इसी प्रकार हमे यह स्थान भी, जहाँ हम आज एकत्र हुए है और जहाँ हमने लोकमान्यके अवशेष जलाये थे, प्राप्त कर लेना चाहिए, यही उनकी भस्मीसे असहयोगकी शक्ति उत्पन्न हुई है। पिछले अगस्तकी पहली तारीखको असहयोगका जन्म हुआ था और कल परेल स्थित श्री सोवानीके मैदानमे राष्ट्रने वह कार्य प्रारम्भ किया जो, मेरे विचारमें, स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए प्राय. अन्तिम मजिल है। ईश्वर करेगा तो आगामी ३० सितम्बरतक भारत अपने उद्देश्यकी प्राप्तिके अयोग्य नही रहेगा।

स्वयसेवकोके सम्बन्धमे दो शब्द कहकर मैं अपनी बात समाप्त करना चाहता हूँ। अकसर हमपर दोष मढा जाता है कि हम सगठन-कार्यके अयोग्य हैं। फिर भी कल पुलिसकी बिलकुल जरूरत नही पडी और न कोई दुर्घटना ही हुई। विदेशी वस्त्र सग्रह करलेसे लेकर जलाने तकके सारे कार्यकी व्यवस्था स्वयसेवकोने ही की। इसका सारा श्रेय उन्हे और हमारे अन्य सहायकोको है। इसी प्रकार धैर्ययुक्त, मौन तथा शान्तिपूर्ण प्रयत्नोसे हम स्वतन्त्रता-सग्रामको भी जीतनेकी आशा करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-८-१९२१

२३५. टिप्पणियाँ

आन्ध्रका गौरव

आखिरकार कोण्डा वेकटप्पैया और उनके बैरिस्टर और वकील-मित्र गिरफ्तार हो गये। एक प्रसिद्ध बैरिस्टर और एक वकीलकी गिरफ्तारीका समाचार पानेपर यदि यह भी सुननेको मिलता कि श्री वेकटप्पैयाको गोली मार दी गई है तो आश्चर्य न होता। उन्होने कमेटीकी मजूरी मिलनेसे पहले इन गिरफ्तारियोपर एक सप्ताहकी हड़ताल घोषित कर दी थी। मुझे हड़ताल करना एक गलत कदम मालूम पड़ा था। अभीतक मेरा यही विचार है। किन्तु फिर उनका तार आया कि हडताल शान्तिपूर्वक चल रही है। फिर उनके चार सहयोगियोकी और स्वयं उनकी गिरफ्तारीकी सूचना तारसे मिली। मैं कोण्डा वेकटप्पैयाको आन्ध्रका गौरव समझता हूँ। इस महान् प्रान्तमे जब और सब सुप्त थे वे जाग उठे। उनमे जबरदस्त चरित्रबल है। उन्होने अहिंसाको अपना सिद्धान्त मान लिया है और वे उसका पूरी तरहसे पालन कर रहे हैं। अन्य बहुतसे देशभक्तोके साथ वे बरसोसे देशसेवामें लगे हुए हैं। और जब कि वे गिरफ्तार कर लिये गये है तब मुझे लगता है कि सरकार बिलकुल पागल हो गई है। उसका यह कार्य पागलपनकी पक्की निशानी है। यह मेरे लिए भविष्यमें शीघ्र विजय मिलनेका चिह्न भी है। बस, आन्ध्रके मित्रोको शान्त और अनुद्विग्न रहना चाहिए। वे वीर और धार्मिक वृत्तिके लोग हैं। उनमे दृढ सकल्प है। वे कर्मठ कार्य-

कर्त्ता हैं। वे इन कुछ महीनोमें कड़ा उद्यम करके अपनी तेजस्विता दिखा सकते है। वे स्वय नेता वनकर स्वदेशीकी व्यवस्था करके ही अपने वन्दी नेताओको सच्चा मान दे सकते है। उन्हे विदेशी कपडेका त्याग करना चाहिए। हमारे देशमें केवल इतना ही कपड़ा है कि हम अपने नंगेपनको ढक सकें। आन्ध्रमे इस समय इतनी दस्तकारी है कि वह भारत-भरमे सवसे महीन हाथके कते सूतका उत्पादन कर सकता है। चाहे किसीको कुछ भी हो जाये, आन्ध्रके सब नर-नारी अगले दो महीने इसी महान् कार्यमे व्यस्त रहे। हमारे नेताओकी गिरफ्तारीसे हमारे कामकी प्रगतिमे अवरोध न आना चाहिए; बल्कि उलटे उसकी गति बढनी चाहिए।

भारतीय सैनिक और शासकवर्ग

शासकवर्गसे तात्पर्य केवल अग्रेजोसे नही है, वल्कि उनके द्वारा प्रशिक्षित किये गये हजारो भारतीयोसे भी है। यह एक दूषित प्रणाली है, इसके अन्तर्गत जो भी कर्मचारी आते है वे सभी दूषित हो जाते हैं। और अब सयोगसे ऐसी स्थिति आ गई है कि भारतीय सैनिको और शासकोका उपयोग इस प्रणालीकी उत्तरोत्तर वृद्धिके लिए किया जा रहा है। गुन्टूरकी गिरफ्तारियोके लिए कौन जिम्मेदार है? हिन्दुस्तानी। मटियारीमे गोली चलानेकी आज्ञा किसने दी? एक हिन्दुस्तानीने। असमके निरीह श्रमिकोपर किसने प्रहार किया? हिन्दुस्तानियोने। मौलाना शेरवानीके मुकदमेका झूठा दिखावा किसने किया? हिन्दुस्तानीने। प्रहार करनेवाले गोरखोमे इतना साहस नही था कि निर्दोष स्त्री-पुरुषोपर प्रहार करनेकी आज्ञाकी अवज्ञा करते। विभिन्न स्थानोपर भारतीय पदाधिकारियो और न्यायाधीशोमे इतनी दिलेरी नही है कि वे निर्दोष लोगोपर गोली चलाने या उन्हे दण्ड देनेसे इनकार करे। हम स्वेच्छासे अत्याचारीके हाथका खिलौना वन जाते है यह हमारा पूरा-पूरा नैतिक पतन है। यदि हम यह देखे कि भावी जलियाँवाला-काण्डकी व्यवस्था भारतीय कर रहे है और वह उन्हीके मार्ग-दर्शनमे कार्यान्वित की जा रही है तो इससे मुझे कोई आश्चर्य न होगा। और हमारे वंशजोके लिए यह स्वराज्यका प्रशिक्षण होगा। एक ऐसी शासन प्रणालीके अन्तर्गत, जो कि लम्वीसे-लम्वी अवधितक लाखो मनुष्योको दासत्वके वन्धनमे जकडे रखनेके निमित्त वनाई गई हो, सैनिक या न्यायाधीशका पेशा मानप्रद नही हो सकता। परन्तु हमे विदेशियोके अत्याचारके समान ही अपने सगे भाई-वन्दोका अत्याचार भी सहना पड़ेगा। हम भीरुतावश यह कल्पना न कर ले कि हम उन्हे डराकर उनसे उनकी नौकरी छुडवा सकते है। वे उसे तभी छोडेंगे जब वे उससे तंग आ जायेंगे, हम उनका जीना दूभर करके उनसे उनका धन्धा नही छुड़वा सकते। हमे अग्रेज अफसरके समान उन्हे भी चुनौती देनी होगी कि वे हमारे साथ वुरेसे-वुरा व्यवहार कर ले। सच तो यह है कि वे केवल दयाके पात्र हैं। और गैर-जिम्मेदार होनेके कारण शायद अग्रेज अफसरोसे भी अधिक घातक चूके कर सकते है। अग्रेज जानते है कि वे शासक जातिके सदस्य है, इस कारण वे वहुधा अपने ऊपर कुछ सयम रखते है जब कि हिन्दुस्तानीको वहुतसे-बहुत अपना पद छिननेका खतरा होता है। इस कारण अपने देशमे दमन जो निश्चित रूप ले रहा है वह दमनके अवतकके रूपकी अपेक्षा बहुत अधिक खतरनाक है।

सिखोंका रंग

प्रस्तावित राष्ट्र-ध्वजके रगोके प्रश्नपर सिख भाई अनावश्यक रूपसे क्षुब्ध हो रहे है। वे अपने सैनिक महत्त्वके कारण यह चाहते है कि उनका काला रग भी राष्ट्र-ध्वजमे रखा जाये। इसके औचित्य या अनौचित्यकी बात छोड़ दे तो उनका क्षोभ अकारण है, क्योकि यह प्रश्न अभी तो अ० भा० काग्रेस कमेटीमे भी विचार या निर्णयके लिए नही रखा गया है। और उनकी इस आपत्तिको ध्यानमे रखते हुए, जब-तक मै उनको यह विश्वास नही करा देता कि उनकी माँग अनुचित है तबतक, मेरा विचार इसे समितिके सम्मुख रखनेका नही है। इसके औचित्य या अनौचित्यपर विचार करे तो मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि उन्हे अपनी आपत्ति वापस ले लेनी चाहिए। सफेद रगमे अन्य सब रग आ जाते है। विशेष महत्त्वकी माँग करनेका अर्थ यह है कि वे सख्यामे बडी दोनो जातियोमे मिलना नही चाहते। यदि हिन्दुओ और मुसलमानोमे कोई झगडा न होता तो मै तो एक ही रग रखना पसन्द करता। सिखो और हिन्दुओमे कभी कोई मतभेद नही रहा। और मुसलमानोसे उनका झगडा वैसा ही है जैसा हिन्दुओका है। मतभेदो या विशेषताओपर जोर देना खतरनाक बात है। हमे यह देखना चाहिए कि समानता किन बातोमे है। प्रमुख मुसलमान मित्रोने सिखो-की माँगकी बात सुनकर मुझे सलाह दी कि सफेद या लाल एक ही रग रखा जाये। किन्तु यह भी ठीक नही है। लाल और हरे दो रग तो रहने ही चाहिए जिससे सदा बोध होता रहे कि हमारी एकता बढ रही है। राष्ट्रवादी सिखोके सम्मुख क्या-क्या कठिनाइयाँ है, यह मै जानता हूँ। सिखोके दलमे सरकारके गुर्गे है वे उनमे फूट डालनेके लिए धूर्ततापूर्ण सुझाव दे रहे है और सिख स्वभावत शकित है। सर्वोत्तम यही है कि हम कोई चिन्ता न करे। यदि वे हिन्दुओ या मुसलमानोके विरुद्ध या सामान्यत असहयोग आन्दोलनके विरुद्ध कृत्रिम रूपसे खडी की गई हर शिकायतके विरोधके लिए कटिबद्ध हो जाये तो उनके लिए कोई भी मंच बाकी न बच रहेगा। राष्ट्रवादी सिखोको चाहे वे कम हो चाहे ज्यादा, अपना विचार स्थिर कर लेना चाहिए और उनकी प्रतिष्ठा कम करनेवाले लोग चाहे कुछ भी कहते रहे, उससे विचलित न होना चाहिए।

सिखोंका प्रतिनिधित्व

अत राष्ट्रीय रगोके विषयमे सिखोकी शिकायतको व्यर्थ समझते हुए भी मै इस स्थितिमे प्रतिनिधित्वके विषयमे उनके भयको उचित मानता हूँ। उन्हे काग्रेसने यह आश्वासन दे दिया है कि यदि मुसलमान लखनऊ-समझौतेपर हठ पकडेगे तो उस दशामे उनको साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व दे दिया जायेगा। कार्यकारिणी समितिने मुसल-मानोमे फूट डालनेके प्रयासोके कारण केवल परामर्श रूपमे निर्देश दिये है। अतः सिखो-को भी ऐसे ही आश्वासन प्राप्त करनेका अधिकार है। हमे उनको ऐसे आश्वासन देनेमे कोई कठिनाई नही होनी चाहिए। यह प्रश्न प्रधानत पजाबके तीनों सम्प्र-दायोके आपसी समझौतेका है। समिति तो केवल सहायक निर्देश दे सकती है।

सम्मत वक्तव्य

वाइसरायने अपने साथ मेरी मुलाकातोके सम्बन्धमें एक वक्तव्य[1] निकाला है जो मुझे भी मान्य है। उस वक्तव्यमे जनताके जानने योग्य सब आवश्यक ब्यौरा है। मै उसका विवेचन करना नही चाहता। मेरे विचारमे उससे इस बातका स्पष्टीकरण हो जाता है कि जिस पश्चात्तापके वक्तव्यको मैंने 'क्षमा-प्रार्थना' कहा है उसका उद्भव केवल मुझसे है। उसकी बात मैंने यह जानकारी मिलनेसे पहले ही सोच ली थी कि मुझे जो भाषण दिखाये गये है उनके आधारपर अली भाइयोपर मुकदमा चलाया जायेगा। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि मैंने उसका सुझाव अली भाइयोपर मुकदमा चलाये जानेकी आशकासे नही दिया था; और उनको कैदसे बचानेके खयालसे तो हर्गिज नही दिया था। मेरा यह पक्का विश्वास है कि दोनो भाइयोने यह वक्तव्य देकर अपने ध्येयकी बहुत बडी सेवा की है। उन्हे ऐसी सलाह देनेपर मुझे कोई पछतावा नही है। लॉर्ड रीडिंगने एक सम्मत वक्तव्य प्रकाशित करनेके सम्बन्धमे मेरे अनुरोधको मान लिया, मै इसकी भी सराहना करना चाहता हूँ। वक्तव्यकी भाषा और स्वरूपके निर्धारणके विषयमे जो हमारा लम्बा पत्र-व्यवहार[2] चला उसमें मुझे लॉर्ड महोदयका ऐसा कोई दु ख दिखाई नही दिया कि मै किसी प्रासगिक विगतका उल्लेख न करूँ। मैंने अपनी ओरसे उन्हे सूचना दे दी थी कि किसी भी बातको छिपानेका मेरा विचार नही है। अत. जनताके सामने दोनों पक्षोका पूर्ण वक्तव्य मौजूद है।

कराचीमें भीड़का दुर्व्यवहार

हालाँकि मैंने अभी स्वामी कृष्णानन्दके कारावास-दण्डके कारण उत्तेजित भीड द्वारा यूरोपीयोपर पत्थर फेंकनेका विवरण अखबारोमे नही पढा है, तो भी मैंने अपने सिन्धी मित्रोसे जो-कुछ सुना है उससे मुझे यही कहना पडता है कि पत्थर फेंकनेवालोने अपने मान्य पवित्र ध्येयका अहित ही किया है। अहिंसाकी प्रतिज्ञाको तोडकर उन्होने स्वामीजीका भी अनादर किया है। स्वामीजी नि सन्देह एक लोकप्रिय और निर्भीक कार्यकर्त्ता हैं। उनके व्यवस्थित धरनेका शराबके व्यापारियोकी बिक्रीपर निश्चित प्रभाव पड रहा था। मैंने यह भी सुना है कि उनपर किसीसे मारपीट करनेका झूठा अभियोग लगाया गया था। यह-सब मानते हुए भी जनताका यह सीधा कर्त्तव्य था कि वह पूर्ण सयम रखती। पुलिसने स्वामीजीपर अन्यायपूर्वक मुकदमा चलाया और न्यायाधीशने उन्हे अन्यायपूर्वक दण्ड दिया। इस कारण कुछ निर्दोष यूरोपीयोसे मारपीट करना अत्यन्त अविचारपूर्ण कार्य है। ऐसी घटनाएँ सविनय अवज्ञाको असम्भव नही तो कठिन अवश्य बना देती है। जिस भीडने कराचीमे ऐसा दुर्व्यवहार किया उसे स्वामीजीका मान विदेशी कपड़ेके बहिष्कार, चरखा कातने और कपडा बुननेके द्वारा करना चाहिए।

१. देखिए परिशिष्ट ३।
२. यह उपलब्ध नहीं है।

समयका प्रतीक

बम्बईमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी सभामें एक सुखद घटना यह घटी कि एक तेलुगु-भाषी सदस्यने हिन्दुस्तानी जाननेवाले सदस्योंसे हिन्दुस्तानकी भाषामें ही बोलनेका आग्रह किया और तमिल-भाषी सभापतिने इस सुझावका अनुमोदन करते हुए उसी समय अगले वक्तासे हिन्दुस्तानीमें बोलनेका निवेदन किया। यह सुझाव बहुत लोगोंको पसन्द आया और कई वक्ताओंने उसपर अमल किया। द्रविड प्रान्तमें अब हिन्दुस्तानी सिखानेवाली बहुत-सी पाठशालाएँ हैं। फिर भी अभी तो बहुत-कुछ करना बाकी है। मुझे आशा है कि जब कमेटीकी अगली बैठक होगी तबतक द्रविड़ सदस्य हिन्दुस्तानी सीखनेमें काफी प्रगति कर लेंगे। कांग्रेसके भावी प्रतिनिधि भी इसका ध्यान रखें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४–८–१९२१

२३६. सविनय अवज्ञा

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सभी सदस्योंके मुँहपर 'सविनय अवज्ञा' की चर्चा थी। असलमें यह अवज्ञा कभी आजमाई तो गई नहीं, इस कारण सभी इसे भ्रमवश वर्तमान कालकी व्याधियोंकी रामबाण ओषधि समझकर इसपर रीझे हुए जान पड़ते थे। मुझे विश्वास है कि यदि हम उचित वातावरण बना सकें तो यह रामबाण ओषधि बन सकती है। मनुष्यके लिए व्यक्तिगत रूपसे वैसा वातावरण सदा मौजूद रहता है। इसमें अपवाद यह एक ही स्थिति है जब उनकी सविनय अवज्ञाके फलस्वरूप रक्तपात आवश्यक हो जाये। मुझे इस अपवादका पता सत्याग्रहके दिनोंमें लगा। फिर भी अन्तरात्माकी ऐसी पुकार हो सकती है कि उसकी अवहेलना करनेका साहस हो, चाहे कुछ भी कीमत क्यों न चुकानी पड़े। मुझे वह समय आता साफ दीख रहा है जब मेरे लिए सरकारके बनाये प्रत्येक कानूनकी अवज्ञा करना आवश्यक हो जायेगा, फिर चाहे उससे रक्तपात ही क्यों न हो। जब इस प्रकारकी अवज्ञा भगवान्‌की अवज्ञा जँचे तब सविनय अवज्ञा अपरिहार्य कर्त्तव्य बन जाती है।

जन-समूहकी सविनय अवज्ञाका आधार दूसरा ही होता है। उसको केवल शान्त वातावरणमें आजमाया जा सकता है। वातावरणकी यह शान्त शक्ति ज्ञानपर आधारित होनी चाहिए, दुर्बलता और अज्ञानपर नहीं। व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा दूसरोंके हितार्थ हो सकती है और बहुधा होती भी है। जन-समूहकी सविनय अवज्ञा स्वार्थके निमित्त हो सकती है और बहुधा होती भी है, क्योंकि व्यक्ति अपनी सविनय अवज्ञासे व्यक्तिगत लाभकी आशा रखते हैं। इस प्रकार दक्षिण आफ्रिकामें कैलेनबैक[1] और पोलकने[2]

१. हरमान कैलेनबैक, एक जर्मन वास्तुकार और दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके सहयोगी।

२. एच० एस० एल० पोलक, दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके एक निकटतम साथी। इंडियन ओपिनियनके सम्पादक। देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४७।

दूसरोके हितार्थ सविनय अवज्ञा की थी। उन्हे उससे स्वय कोई लाभ न था। हजारो लोगोने स्वार्थ-भावसे सविनय अवज्ञा की, क्योकि उन्हे गिरमिट-मुक्त पुरुषो, उनकी पत्नियो और उनकी वयस्क सन्तानोपर लगे करके निराकरणकी आशा थी। यदि सत्याग्रही इस सिद्धान्तकी कार्यान्वितिको समझ ले तो जन-समूहकी सविनय अवज्ञामें इतना काफी है।

दक्षिण आफ्रिकामे दो-तीन हजार पुरुषो और कुछ स्त्रियोके साथ निषिद्ध क्षेत्रमें प्रवेश करते हुए जहाँ मैं गिरफ्तार किया गया था,[1] वह प्रदेश प्रायः उजाड़ था। हमारे दलमें कई पठान और तगड़े लोग थे। हमारे आन्दोलनको दक्षिण आफ्रिकी सरकारसे योग्यताका यही सबसे बड़ा प्रमाणपत्र मिला था। वह जानती थी कि हम जितने कृत-सकल्प है उतने ही निरापद भी है। मुझे गिरफ्तार करनेवाले लोगोके टुकडे-टुकड़े कर डालना उस जन-समुदायके लिए बिलकुल आसान था किन्तु ऐसा करना उन लोगोके लिए घोर भीरुताका काम होता, यही नही बल्कि उससे उनकी ही प्रतिज्ञा झूठी हो जाती और टूट जाती और इसका यह अर्थ होता कि स्वतन्त्रताका वह आन्दोलन छिन्न-भिन्न हो जाता और एक-एक हिन्दुस्तानीको दक्षिण आफ्रिकासे बलात् निष्कासित कर दिया जाता। परन्तु वे लोग साधारण अव्यवस्थित भीडके लोगोकी तरह नही थे। वे अनुशासित सैनिक थे और उनकी खूबी निहत्थे होनेके कारण और भी बढ गई थी। मैं उनसे अलग कर दिया गया था, परन्तु वे तितर-बितर नही हुए और न वापस मुड़े। वे अपने गन्तव्य स्थानकी ओर तबतक बढ़ते चले गये जबतक उनमे से हर एकको गिरफ्तार करके जेलमें नही डाल दिया गया। जहाँतक मुझे ज्ञान है अनुशासन और अहिंसाका यह एक ऐसा उदाहरण है जिसका इतिहासमे कोई जोड नही। मुझे ऐसे सयमके बिना भारतमें जन-समूहकी सफल सविनय अवज्ञाकी कोई आशा नही बँधती।

हमे यह विचार अपने मनमे से निकाल देना चाहिए कि हम हर गिरफ्तारीपर बड़े-बडे प्रदर्शन करके सरकारको डरा सकेगे। इसके विपरीत हमे गिरफ्तारीको असहयोगीके जीवनकी सामान्य शर्त मानकर चलना होगा। क्योकि हमे गिरफ्तारी और कारावासको वैसे ही अगीकार करना पडेगा जैसे सग्राममे जानेवाला सैनिक मृत्युको अगीकार करता है। हम सरकारके विरोधको गिरफ्तारीसे बचकर नही, बल्कि उसको अपनाकर समाप्त करनेकी आशा करते है, भले ही इसके लिए हमे यह दिखाना पड़े कि हम सामूहिक रूपसे गिरफ्तार होने और जेल जानेके लिए तैयार है और माना भी यह जाता है कि हम इसके लिए तैयार होगे। तब सविनय अवज्ञाका निश्चित अर्थ होगा एक निहत्थे पुलिसके सिपाहीके सामने भी आत्मसमर्पण करनेकी इच्छा। हमारी विजय इसीमे है कि हमे हजारोकी सख्यामे उसी प्रकार जेल ले जाया जाये जैसे मेमने कसाईखानेमे ले जाये जाते है। यदि ससारके मेमने स्वेच्छासे कसाईखाने गये होते तो वे कबके कसाईकी छुरीसे बच गये होते। इसके अतिरिक्त सर्वथा निर-

१. गांधीजी ६ नवम्बर, १९१३ को पामफोर्डके पास उस 'महान् कूच' में भारतीय स्त्री-पुरुषों और बच्चोंको लेकर ट्रान्सवालमें प्रवेश करते हुए गिरफ्तार किये गये थे। देखिए खण्ड १२।

पराध गिरफ्तार होनेमे हमारी विजय है। हम जितने अधिक निर्दोष होगे हमारी शक्ति उतनी ही बडी होगी और हमे विजय उतनी ही तीव्र गतिसे मिलेगी।

असल बात यह है कि यह सरकार भीरु है और हम कारावाससे डरते है। सरकार हमारे जेलके डरका लाभ उठाती है। यदि हमारे स्त्री-पुरुष जेलको आरोग्य-स्थल समझकर उसका स्वागत करे तो हम जेलमे पडे हुए अपने प्रियजनोकी चिन्ता करना छोड देगे, इन जेलोको हमारे दक्षिण आफ्रिकी देशभाइयोने तो 'सम्राट्के होटल' उपनाम दिया था।

हम लोग बड़े अरसेसे मनमे सरकारके नियमोकी अवहेलना करते रहे है, और बहुधा लुके-छिपे उनको माननेसे बचते रहे है, इस कारण हम अचानक ही सविनय अवज्ञा करनेके योग्य नही बन सकते। अवज्ञा सविनय बने इसलिए हमे उसपर अहिंसात्मक ढगसे और खुल्लमखुल्ला आचरण करना होगा।

पूर्ण सविनय अवज्ञा एक शान्त विद्रोहकी दशा है — वह सभी सरकारी कानूनोको माननेसे इनकार करनेकी दशा है। यह निश्चय ही सशस्त्र विद्रोहसे अधिक खतरनाक है। क्योकि सत्याग्रहियोकी घोर कष्ट सहन करनेकी तत्परताकी दशामे इसका दमन सर्वथा असम्भव है। इसका आधार है यह पूर्ण आस्था कि हममे निर्दोष होनेपर भी कष्ट-सहनकी पूरी क्षमता है। सत्याग्रही बिना शोर-गुल मचाये जेल जाता है तो वह अवश्य ही वातावरणको शान्त बनाता है। प्रतिरोधकी अनुपस्थितिमे अन्यायकारी अन्याय करते-करते थक जाता है। जब पीडित व्यक्ति कोई प्रतिरोध नही करता तो अन्यायकारीका सारा आनन्द चला जाता है। इतने बडे पैमानेपर एक आन्दोलन चलानेसे पहले कमसे-कम जनताके प्रतिनिधियोको सफल सविनय अवज्ञाकी सब शर्तोका पूरा ज्ञान कर लेना आवश्यक है। जल्दीसे-जल्दी लाभ पहुँचानेवाली ओषधियोमे हमेशा ज्यादा-से-ज्यादा खतरा होता है और उनको बडी चतुराईसे काममे लाना पडता है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि हम विदेशी कपडेका सफल बहिष्कार कर ले तो ऐसा वातावरण तैयार हो जायेगा जिसमे हम इतने बडे पैमानेपर सविनय अवज्ञा शुरू करनेमे समर्थ हो सकेगे जिसका विरोध कोई सरकार नही कर सकती। अत मै उनसे, जो सामूहिक रूपसे सविनय अवज्ञा आरम्भ करनेके लिए आतुर है, धीरज रखने और स्वदेशीके प्रचारपर अपना ध्यान कृतसकल्प होकर केन्द्रित करनेका अनुरोध करना चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-८-१९२१

२३७. पत्र : महादेव देसाईको

अलीगढ
५ अगस्त, १९२१

भाईश्री महादेव,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम मुझसे मिले नही, इससे कोई हानि नही। मेरी शुभेच्छामें आशीर्वाद तो मिला ही हुआ था। तुम्हे वहाँ कोई कष्ट न होगा और कोई कठिनाई नही होगी। मथुरादास[1] और दुर्गाकी स्थिति तो मै समझता हूँ। उन दोनोसे मिलनेकी मेरी प्रबल इच्छा थी। किन्तु बम्बईमे यह कैसे हो सकता था? बम्बईने जो-कुछ किया है उसमे प्रयत्नकी तो कोई कमी नही रही न?

हम १० तारीखको तो मिलेगे ही; इसलिए अधिक कुछ नही लिखता।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

प्रभुदास[2] आ गया है। स्टोक्स भी साथ है।

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१६) की फोटो-नकलसे।

२३८. भाषण : मुरादाबादकी सार्वजनिक सभामें[3]

६ अगस्त, १९२१

सज्जनो,

युक्त-प्रान्तमें सरकारकी ओरसे जगह-जगह जो अमन सभाएँ स्थापित की जा रही है, मेरी समझमें अबतक नही आया कि उनका उद्देश्य क्या है। यदि इनका उद्देश्य वास्तवमें अमन कायम रखना है, तो ये सभाएँ हमारे साथ मिलकर क्यों काम नहीं करती? हमारे असहयोग आन्दोलनका वास्तविक उद्देश्य भी तो अमन कायम रखते हुए अपने अभीष्ट स्वराज्यको प्राप्त करना है। जब दोनोका अभिप्राय एक है तब फिर उक्त सभाओके अलग अस्तित्वकी क्या आवश्यकता रह जाती है। इसको आप ही विचारकर स्थिर करे। किन्तु हाँ, यदि यह अमन सभाके नामसे लोगोंमें बदअमनी फैलाती हो, लोगोको अनुचित तैश दिलाती हो और लोग झगड़ा-

१. मथुरादास त्रिकमजी (१८९४–१९५१); गांधीजीकी बहनके पौत्र और उनके अनुयायी।

२. छगनलाल गांधीके पुत्र।

३ मुरादाबादमें गांधीजीने महिला-मण्डल तथा महाराजा थियेटरमें आयोजित सभाओंमें भी भाषण दिये थे।

फसाद बरपा करनेको उद्यत होते हो, और ये सभाएँ अपने नामका दुरुपयोग करके कलंकित होती हो, तो मैं आपसे कहूँगा कि ऐसी अमन सभाओको दूरसे ही नमस्कार कीजिए। मृगतृष्णाके पीछे मत दौडिये, जिससे पीछे पछताना न पडे। कहना मेरा काम है, इतनेपर भी जो सज्जन न समझे, वे स्वतन्त्र हैं। वे अपनी इच्छानुसार काम करे।

आगे गांधीजीने विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार तथा स्वदेशी पहननेपर जोर दिया और कहा :

यद्यपि खादी अभी मँहगे दामोमे मिलेगी, तो भी मलमलके मुकाबले उसमें किफायत ही रहेगी, क्योकि जहाँ एक वर्षमे मलमलके आप आठ कुरते फाडेंगे वहाँ खादीके चार कुरते भी मुश्किलसे फटेंगे। कई बरससे अनवरत खादी पहननेके कारण यह मेरा पक्का अनुभव है। यदि आप लोगोने मेरे कथनानुसार सच्चे मनसे स्वदेशी वस्त्र अपनाया, चरखा काता, विदेशी कपडोको शवपर पडे वस्त्रकी नाईं त्याग दिया तो दयामय जगदीश कभी हमारे प्रति अप्रसन्न न रह सकेंगे, शीघ्र ही उनका आसन चलित होगा और स्वराज्य प्राप्त करानेमे वे हमारे सहायक होगे।

आज, १५–८–१९२१

२३९. नई प्रतिज्ञा

अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी द्वारा बेजवाड़ामे की गई प्रतिज्ञा पूरी हुई कही जा सकती है। प्रतिज्ञामे एक करोड़ रुपया इकट्ठा किये जानेकी बात निश्चित्त की गई थी, ईश्वरने हमारी उस प्रतिज्ञाको पूरा किया और हिन्दुस्तानकी प्रतिष्ठाको बचा लिया। अब जो दूसरी प्रतिज्ञा ली गई है वह अपेक्षाकृत अधिक कठिन है। ऐसा ही होना चाहिए। हमे ३० सितम्बरसे पहले-पहल विदेशी कपड़ेका सर्वथा त्याग कर देना चाहिए।

इसमे गुजरातका कितना हिस्सा होगा, गुजरातके लिए इसका निश्चय करने जैसी कोई बात नही है। सबको विदेशी कपडेका पूर्ण बहिष्कार करना होगा। इसलिए इस काममे परस्पर एक-दूसरेसे ज्यादा अथवा कम करनेकी कोई बात नही है। विदेशी कपड़ेके आयातको रोकनेका कार्य तभी हो सकता है जब सभी उसका त्याग कर दे। अतएव इसमे गुजरातका योगदान यही है कि प्रत्येक गुजराती विदेशी कपडेका त्याग करे।

इस त्यागके लिए हमे गुजराती बोलनेवाले और गुजरातमे रहनेवाले प्रत्येक व्यक्तिके पास पहुँचना चाहिए और उसे प्रभावित करनेका प्रयत्न करना चाहिए। लोगोको इतना समझाना भी कितना कठिन कार्य है इसका हम अन्दाज लगा सकते है। लेकिन इससे क्या हम हार मान ले? विदेशी कपडेका त्याग करना हमारे लिए क्या सचमुच बहुत भारी काम है? अपने देशकी अपेक्षा क्या हमे रेशमी और झीने

वस्त्र अधिक प्रिय है? हमे स्वदेशीकी स्वराज्य दिलानेकी शक्तिके विषयमें सन्देह भले ही हो फिर भी स्वदेशीके पालनके सम्बन्धमे तो कतई कोई शका नही हो सकती।

इस दृष्टिसे विचार करते हुए हमारा काम बहुत आसान है। पैसा देनेमें हमें सकोच होता था, वकालत छोडते समय आजीविकाका प्रश्न उठ खडा होता था, सरकारी स्कूलोको छोडनेसे शिक्षाके पिछड़ जानेका भय था, लेकिन विदेशी कपडेके त्यागमे क्या भय हो सकता है? इससे नुकसान तो हो ही नही सकता। जिसका उपयोग नही उसे किसलिए इकट्ठा करे? रोग-मुक्त होनेपर दवाईकी बोतल चाहे कितनी ही महँगी क्यो न खरीदी हो, फेक दी जाती है। मोह मिटनेपर बड़ेसे-बड़े शृगारको भी हम पल-भरमें तज देते है। विदेशी कपडेका मोह क्या इतना ज्यादा है कि हम उसे छोड ही नही सकते? मै आशा करता हूँ कि विदेशी कपडेको खरीदनेमे खर्च किये गये पैसोका विचार कोई नही करेगा। उसकी कीमतका विचार करेगे तो हम कजूसीका पाप करेगे। कजूस माँ बालकसे बर्तनमे बची खुराकको खा जानेका आग्रह करके उसे बीमार कर देती है। असली किफायत खुराकको फेंक देनेमे ही है। उसी तरह असली किफायत विदेशी कपड़ेको त्याग देनेमे ही है।

विदेशी कपडा त्यागते ही झूठी शान खत्म हो जाती है और सादगी आ जाती है। खादीके कपडे टिकाऊ होनेके कारण बहुत दिन चलते हैं। जिसका हर महीने सौ रुपया खर्च होता था उसका अब पूरे सालमे इतना खर्च नही होता। तब उनके लिए अपनी हजारोकी पोशाक फेक देनेमे कोई तकलीफकी बात नही है। विदेशी कपडेका आज ही त्याग करके हम देशका करोडो रुपया बचा सकते है, अतः लाखो अथवा करोड़ो रुपयोके कपडेको फेंक देना दूरन्देशीकी निशानी है।

स्वदेशी हमारी अन्तिम मजिल है। उसमे अगर हम हार गये तो हमे इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त करनेकी उम्मीद छोड़ देनी होगी। इसलिए मुझे आशा है कि गुजरात अब स्वदेशीके कार्यको तुरन्त हाथमे लेकर अपने कर्त्तव्यको पूरा करेगा।

यद्यपि विदेशी कपड़ेका त्याग करनेका सबका कर्त्तव्य एक समान है तो भी कपड़ा तैयार करनेमें गुजरात सबसे आगे जा सकता है। प्रत्येक स्कूल और घर अगर कातने-बुननेके काममे जुट जाये तो हमें कपडेकी कभी तगी नही होगी। गुजरात खादीमय नही बनता तो हम जीती हुई बाजी हार जायेंगे।

आइये, हम स्वदेशीका मतलब समझ ले। उससे हम विदेशोको जानेवाली साठ करोड रुपयेकी राशिको बचाना चाहते हैं। इतना ही नही बल्कि करोडो स्त्री-पुरुषो द्वारा उतने रुपयेका कपडा तैयार करवाकर हम उनके घरोमे करोड़ो रुपया भरना चाहते हैं। ऐसा करके हम हिन्दुस्तानसे भुखमरीका बहिष्कार करना चाहते है। इसीसे विदेशी कपडेके पूर्ण बहिष्कारको मै भुखमरीका बहिष्कार मानता हूँ। इसके अतिरिक्त हमारे यहाँ सदाव्रतकी प्रथा बढती जा रही है। लाखो व्यक्ति आलसी बनकर केवल भिक्षापर रहकर भगवेको लजाते है। समर्थ व्यक्ति अगर काम नही करता तो उसे खानेका भी अधिकार नही है। आज हमारे पास ऐसा कोई काम नही है जो प्रत्येक भिक्षुकको सौपा जा सके। जब देशमे चरखे और करघेकी प्रतिष्ठा हो जायेगी तब केवल प्रजाको ज्ञान देनेवाले ब्राह्मण और फकीर ही भीख मांगेंगे। प्रत्येक असमर्थ

और अपगको जनता प्रेमपूर्वक भोजन करायेगी, तब धूर्त लोग साधुके वेशमे घूम-घूमकर भिक्षा नही माँग सकेगे। इस तरह स्वदेशीका अर्थ है ढोंगका नाश और साधुताका प्रभाव।

मैं आशा करता हूँ कि इतना समझ लेनेके बाद गुजरात हर घरमे चरखे, करघे और रुई पीजनेकी प्रवृत्तिको तुरन्त बढावा देगा और इस तरह अपनी तथा हिन्दुस्तानकी सेवा करेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-८-१९२१

२४०. टिप्पणियाँ

बम्बईने कमाल कर दिया

बम्बईने तिलक महाराजको सुन्दर ढगसे श्रद्धाजलि अर्पित की है। रविवार, ३१ जुलाईको सेठ हाजी यूसुफ सोबानीकी जमीनपर एक यज्ञ हुआ जिसमे लगभग दो लाख व्यक्तियोने अपनी मलिनताको जला डाला। कपडोकी होली करनेके सम्बन्धमें जिन व्यक्तियोके दिलोमे शका थी, ऐसे असख्य व्यक्तियोकी शका दूर हो गई। कमसे-कम लगभग डेढ लाख पोशाके जलाई गईं। जब यज्ञ शुरू हुआ तब जो लोग विदेशी काली टोपियाँ पहनकर आये हुए थे उन्हे शर्म आई और टोपियोकी बौछार होने लगी।

उस दिन लोगोमे जो उत्साह था वह अवर्णनीय है। ऐसा लगता था मानो सारा बम्बई इस मैदानमे सिमट आया है। सफेद खादीकी टोपियो और खादीके कपड़ोसे सज्जित स्त्री-पुरुषोसे मैदान खचाखच भर गया था। उस दिन जो अग्नि प्रगट हुई थी वह हिन्दुस्तानके हृदयमे आज जो आग सुलग रही है उसकी परिचायक थी। जबतक हमारे घरोमे एक अगुल भी विदेशी कपडा है तबतक यह अग्नि पूरी तरह शान्त नही होगी। मेरी कामना है कि सिर्फ इस पवित्र मैदानमे ही नही वरन हिन्दुस्तानके हर गाँव और हर रास्तेमे यह अग्नि प्रगट हो और उसमें विदेशी कपडे रूपी हमारी मलिनता भस्म हो जाये। विदेशी कपडे त्यागकर और इस तरह पवित्र होकर बम्बईके स्त्री-पुरुष और बच्चे पवित्र खादी पहनकर चौपाटीके मैदानमे जिस स्थानपर तिलक महाराजका अग्नि-सस्कार किया गया था, वहाँ गये और उन्होने उस पवित्र आत्माकी पूजा की तथा उन्हे श्रद्धाजलि अर्पित की। इतने सारे लोग इतनी पवित्रतासे कभी किसी चक्रवर्तीकी पुण्य-तिथिपर भी इकट्ठे नही हुए होगे।

बम्बईने जूनमे हिन्दुस्तानकी प्रतिज्ञाको पूरा करनेके निमित्त भारी दान देकर अपनी मनोरमता सिद्ध की थी और इस एक महीनेमे अगले कदमके लिए पृष्ठभूमि तैयार करके वह और भी मनोरम बन गई है।

लेकिन अभी बहुत-कुछ करना बाकी है। बम्बईने विदेशी कपडे रूपी कचरेको पूरी तरह साफ नही किया है। विदेशी कपडा देनेवाले बहनो और भाइयोने आधे मनसे कपड़ा दिया है। जबतक सारे मैलको निकाल बाहर नही किया जाता तबतक

पूरी शुद्धि नही होगी; और जिस तरह थोडा-सा मैल भी जहरीली हवा पैदा कर सकता है उसी तरह थोड़ा-सा बचा हुआ विदेशी कपडा भी भारी नुकसान पहुँचा सकता है। इसलिए मुझे उम्मीद है कि क्या बम्बई और क्या अन्य शहर, सभी जगहोसे विदेशी कपड़े रूपी मैलको झाड-पोछकर निकाल दिया जायेगा। हमारे घरोसे यह मैल जबतक पूरी तरह साफ नही हो जाता तबतक विदेशी कपड़े रूपी महामारीके फिरसे फैलनेका भय बना रहेगा। यदि हम स्वराज्य प्राप्त करना ही चाहते है तो विदेशी कपडा हमे हमेशाके लिए असह्य होना चाहिए। और यह बात कपडेको जान-बूझकर जलानेसे ही उत्पन्न हो सकती है।

जय अथवा पराजय

बहुत समय पहले एक पत्र-लेखकने मुझसे पूछा था कि दक्षिण आफ्रिकामे जैसी विजय मिली थी, क्या यहाँकी विजय भी वैसी ही होगी। मुझे इस प्रश्नमे जितनी कटुता दिखाई दी उतना ही अज्ञान भी दिखाई पडा। दक्षिण आफ्रिकाका सवाल क्या था, इसकी पत्र-लेखकको कोई जानकारी ही न थी। दक्षिण आफ्रिकामें लड़ाई अमुक कानूनके विरुद्ध थी। उसमे हमने सम्पूर्ण विजय पाई। एशियाई अधिनियम रद्द करो, प्रवास सम्बन्धी अधिनियममें से रगभेद निकालो, हिन्दू और मुस्लिम विवाहोको मान्यता प्रदान करो, और तीन पौंडी करको रद्द करो — दक्षिण आफ्रिकी सरकारके सम्मुख हमारी एकके-बाद एक उपर्युक्त माँग थी और वहाँकी सरकारको ये सब माँगें स्वीकार करनी पड़ी।[1]

इसे मै पूरी विजय मानता हूँ। लेकिन सबसे बडी विजय तो यह हुई कि सत्याग्रह-के कारण ही भारतीय जनता दक्षिण आफ्रिकामें अपने पैर जमा सकी। इसीसे अन्य उपनिवेशोमें भारतीयोपर होनेवाला आक्रमण कुछ धीमा पड़ गया। इसीसे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोको समस्त संसारने जाना। एशियाई अधिनियम भारतीयोका समूल नाश करनेकी दिशामे पहला कदम था। उसके अस्तित्वमे आते ही हमने उसे उखाड़ फेंका। ठीक यही बात यहाँकी लडाईके सम्बन्धमें समझनी चाहिए। खिलाफतकी माँग स्वीकृत हो जानेके बाद खिलाफतपर कभी कोई सकट नही आयेगा, सो बात नही है। स्वराज्य मिलनेके बाद हम फिर कभी उसे नही खोयेंगे, ऐसी बात नही है। अमुक वस्तुको हम तबतक अपने पास रख सकते है जबतक उस वस्तुको प्राप्त करनेमे सहायक साधन हमारे पास मौजूद है। आत्मबलसे प्राप्त की हुई वस्तुको हम आत्मबलके क्षीण हो जानेपर अवश्य खो बैठेंगे। सयमसे प्राप्त आरोग्य नियमोका उल्लघन करने और मनमाना भोजन करनेसे तुरन्त नष्ट हो जायेगा।

सत्याग्रह और उसकी शाखा असहयोग ऐसे शस्त्र है जिनके उपयोगसे पराजयकी कोई गुजाइश ही नही है। जो मृत्यु-पर्यंत लड़ते है उनकी पराजय कैसी? जीवित व्यक्तिका 'पराजित' कहलाना उसकी पराजय है। रणक्षेत्रमें काम आये योद्धाको पराजित कौन कह सकता है? जो सत्याग्रही अपने आग्रहको छोड़ता ही नही उसे

१. देखिए खण्ड १२।

पराजित करनेवाला इस जगत्‌मे कोई है ही नही। स्वय आत्मा ही अपना मित्र और शत्रु दोनो है।

कराचीमें शान्तिभंग

कराचीमे स्वामी कृष्णानन्दको गिरफ्तार करके जेलमे ठूँस दिया गया। स्वामी कृष्णानन्द लोकप्रिय थे। उन्होने मद्यनिपेधकी दिशामे अच्छा काम किया था। मुझे बताया गया है कि उनपर झूठा आरोप लगाया गया था। इसमे सन्देह नही कि यह सब लोगोके रोष और दु खका कारण था, लेकिन असहयोगने हमे अपने रोषका सदुपयोग करना सिखाया है। यदि लोगोके दिलोमे स्वामी कृष्णानन्दके प्रति सच्चा प्रम है तो उन्हे शराब छोड़ देनी चाहिए, शराबकी दुकानोपर शान्तिपूर्वक धरना देना चाहिए, विदेशी कपडोको जला देना चाहिए, चरखा और करघा चलाना चाहिए तथा खादीका उत्पादन करना चाहिए। ऐसा करके स्वराज्य प्राप्त करे और स्वामीको छुडवायें अथवा स्वामीके समान कार्य करके जेल-महलमें जा विराजे। लेकिन कुछ-एक लोगोने इसके विपरीत किया और रास्तेसे गुजरते हुए अग्रेजोपर पत्थर फेंके। उससे स्वामी तो नही छूटे अलबत्ता स्वराज्य कुछ दूर चला गया। स्वराज्य तो आज ही मिलना चाहिए लेकिन नही मिलता; क्योकि हम अपने क्रोधको नही रोक पाते। स्वराज्य मिलनेकी सबसे बड़ी शर्तको हम भग करे और स्वराज्यकी उम्मीद करे, यह कैसे हो सकता है? कराचीकी काग्रेसको और खिलाफतके कार्यकर्त्ताओको मेरी सलाह है कि अपराधियोको ढूंढ निकाले और उनसे पश्चात्ताप करवाये। इस तरहके शान्तिभगके कारण कानूनकी सविनय अवज्ञाको आरम्भ करनेकी बात भी दूर होती चली जाती है। या तो हममे मार-धाड़को रोकनेकी शक्ति आनी चाहिए अन्यथा उसे सरकार रोकेगी। मार-धाडको रोकनेके लिए जबतक हमे सरकारपर निर्भर रहना पड़ता है तबतक समाजका शान्तिप्रिय वर्ग स्वतन्त्रताकी कामना ही नही करेगा, यह बात एक अनुभवहीन व्यक्तिको भी समझ लेनी चाहिए। और जबतक आम जनतामे स्वतन्त्रताकी तीव्र भावना उत्पन्न नही होती तबतक स्वराज्य असम्भव है।

हिन्दू-मुसलमान

आतरसुम्बाके बनिये और मुसलमान छोटी-सी बातपर लड पडे। वहाँ एक मुस्लिम महिलाका घर हिन्दुओके मन्दिरके पास है। वह महिला बेचारी शान्तिके साथ अपने घरमे रहती थी। धीरे-धीरे मन्दिरके न्यासी बनियोने उसकी जमीनपर कब्जा करना चाहा। महिला बेचारी कुछ खीज उठी, उसने कुछ कह दिया। इसपर बनिये क्रोधित हो उठे। उन्होने उस महिलाको गालियाँ दी और इस तरह उसका अपमान किया। महिलाने वहाँ रहनेवाले मुसलमानोसे फरियाद की, मुसलमान खीज उठे। उन्होने बनियोको चुन-चुनकर मारा। श्री अब्बास तैयबजीको इसकी खबर लगी। उन्होने श्री मोहनलाल पण्डयाको शान्ति स्थापित करनेके लिए भेजा। दोनो पक्षोने उनकी बात सुनी और इस तरह झगडा शान्त हुआ। मुसलमानोने जब बनियोपर हमला किया तब उनमे अपना बचाव करनेकी शक्ति भी न थी इससे वे सब घरोमे घुस गये। इस घटनाके बारेमे मैने जैसा सुना ठीक वैसा ही लिखा है। लेकिन दोनो कौमोके बीच

वैर इसी तरह पनपा और बढ़ा। उपर्युक्त महिलाको सताने, उसकी जमीनपर कब्जा जमानेमे अपराध बनियोका था। महिलाने अगर कोई भूल की भी थी तो बनियोका फर्ज था कि वे उसे बरदाश्त करते, इसके विपरीत उन्होने एक चीटीके विरुद्ध सेना लेकर चढाई कर दी। मुसलमानोके दोषको मै समझ सकता हूँ। लेकिन उन्होने गम्भीर भूल की। उनका फर्ज था कि जिन बनियोने अपराध किया था उन्हे ढूंढ निकालते और पचोके सामने ले जाते। पच न मिलते तो उन्हे पड़ोसकी काग्रेस कमेटी अथवा खिलाफत समितिके सम्मुख पेश करना चाहिए था और राहत प्राप्त करनी चाहिए थी। वैसा न करके उन्होने समस्त बनियोको सजा देनेका अन्याय किया और जो अपराध बनियोने महिलाके प्रति किया था वही अपराध मुसलमानोने बनियोके प्रति किया। सौभाग्यसे श्री मोहनलाल पण्ड्या वहाँ पहुँच गये और झगडा निपट गया। इसमें दोनो पक्षके अपराधियोने दुर्बलको दबाने-की नीतिको पसन्द किया। जबतक एक भी पक्ष ऐसी हरकत करता है तबतक झगडेको जड़मूलसे नष्ट नही किया जा सकता। स्वराज्यका असली अर्थ यही है कि निर्बलकी रक्षा करे और बलवानसे न डरे। बनियोको चाहिए था कि वे भूलको स्वीकार करते और तिसपर भी अगर मुसलमान उन्हे मारते तो मारको सहन कर लेते। घरोमे घुस जानेका मतलब यह हुआ कि वे दुर्बल है और स्वराज्यके अयोग्य है। इसमे सन्देह नही कि किसी समय हमे मार खानी पडेगी। हर बार भयके कारण घरोंमें घुस जाना, यह कोई स्वराज्यका लक्षण नही है। शान्तिमय असहयोग जडी-बूटी है। उन्हे मुसलमान भाइयोको शान्तिसे समझानेकी नीति अपनानी चाहिए थी। शान्ति अर्थात् कायरता नही, शान्ति अर्थात् मार पडनेपर भी निर्भय हो उसका विरोध न कर उसे सहन करनेकी शक्ति। शान्तिमे जो बल है वह तलवारमे नही है, यह सत्य बात ऐसी है जिसे प्रत्येक व्यक्ति सोच-विचार करनेपर भली-भाँति समझ सकता है।

भोजा भगत मोची थे?

मास्टर भोजाजी और एक अन्य सज्जनने पत्र लिखकर मुझे बताया है कि भोजा भगत लेऊवा कणबी होने चाहिए। एक भाईने निश्चयपूर्वक कहा है कि वे कणबी ही थे। अपनी इस मान्यताके लिए कि वे मोची थे मेरे पास सिवाय इसके कोई प्रमाण नही है कि बचपनमें शिक्षाके दौरान उनके एक सम्बन्धी किसी व्यक्तिको मेरे पास लाये थे। उनके उस सम्बन्धीसे मैंने यह भी पूछा था कि 'क्या आप अब भी मोचीका धन्धा करते है?' जहाँतक मुझे ध्यान है उन्होने इसका उत्तर नकारात्मक दिया था। लेकिन भोजा भगत मोची न थे, ऐसा उन्होने नही कहा। अगर मैंने भूल की है तो पाठक मुझे क्षमा करेगे। मुझे विश्वास है, मैंने उनपर मोची होनेका जो आरोप लगाया है उससे उनकी आत्मा दुःखी नही होगी। मेरा लेख लिखनेका जो आशय था, वह इस भूलके बावजूद कायम है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-८-१९२१

२४१. पत्र : महादेव देसाईको

लखनऊ जाते हुए
रविवार [७ अगस्त, १९२१][1]

भाईश्री महादेव,

लखनऊ पहुँचनेसे पहले यह पत्र लिख रहा हूँ। वहाँ[2] बुधवारके प्रात: पहुँचकर उसी रातको आरा रवाना हो जाना है।

मैं जोजेफकी गिरफ्तारीकी खबर मिलनेकी राह देख रहा हूँ। मुझे लग रहा है कि रगा अय्यर अकेले नही रहने चाहिए।

लोगोकी जय-जयकारसे तग आ रहा हूँ।

मेरे लिए पेडे, सोडा पडी पूडियाँ और मीठी टिकियाँ (गोल पापडी) बन सके तो बनवा लेना। इस बार यात्रामे मेरे पास पेडे ही है और उनके भी समाप्त होनेकी सम्भावना है। और सफर लम्बा है। सम्भव है, वहाँ बकरीके दूधसे बनाया हुआ घी सुगमतासे न मिल सके। पेड़े ही बन सके तो भी ठीक है। हर जगहसे टोपियाँ खूब मिल रही हैं।

वालजीको[3] तुम्हे 'यग इडिया' के प्रूफ भेजनेके लिए लिख दिया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२१) की फोटो-नकलसे।

२४२. भाषण : लखनऊमें[4]

७ अगस्त, १९२१

महात्माजीने अपने भाषणमें अहिंसात्मक असहयोग तथा हिन्दू मुसलमानोंकी एकता-पर अधिक जोर दिया। उन्होंने कहा कि मैं आप लोगोसे इतना ही कहता हूँ कि किसी प्रकारका असन्तोष तथा उद्दण्डता हम लोगोंके मन्तव्यमें बाधक होगी। विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार ही खिलाफतकी बुराइयोंको हटाने तथा अंकाराकी मददके लिए एकमात्र

१. गांधीजी अलीगढ़से इसी दिन लखनऊ पहुँचे थे और उस दिन रविवार था।

२. इलाहाबाद।

३. वालजी गोविन्दजी देसाई, कुछ समयतक गुजरात कालेज, अहमदाबादमें अंग्रेजीके प्राध्यापक; नौकरीसे त्यागपत्र देकर गाधीजीके साथ हो गये। गाधीजीकी अनेक पुस्तकोंके अनुवादक।

४. अमीनुद्दौला पार्कमें आयोजित सार्वजनिक सभामें। सभामें लगभग एक लाख लोग थे। मौलाना मुहम्मद अली भी उपस्थित थे।

उपाय है। आप लोग संयुक्त प्रान्तकी सरकारकी ज्यादतियोंको देखिए। यह सूबा इस दमन नीतिमें अन्य सूबोंसे बढ़ा-चढ़ा है। किन्तु फिर भी मैं शान्तिपूर्वक रहनेके लिए ही आप लोगोंसे कहूँगा। यदि आप लोग पचास हजार ऐसे काम करनेवालोंकी एक फौज तैयार कर लें जो स्वतन्त्रताकी रक्षाका फाटक बननेको तैयार रहे तो मैं आशा करता हूँ कि संसारकी कोई फौज इसे न हरा सकेगी, और तीन ही महीनेके अन्तमें या तो इस सरकारको सुधार देगी या समाप्त कर देगी। मेरा फिरसे यही कहना है कि हिन्दू मुसलमानोंकी एकतापर बड़ा ध्यान रखना चाहिए। दोनोंसे मेरा यही कहना है कि एक दूसरेके साथ सहानुभूति रखें। आनेवाली बकरीदपर कोई दंगा न होने पाये। हिन्दुओंसे मेरा यह कहना है कि यदि वे गाँओंको बचाना चाहते है तो उन्हें चाहिए कि बिना किसी विचार या लालचके खिलाफतके मामलेमें मुसलमानोंकी मदद करें।

आज, १०-८-१९२१

२४३. काठियावाड़के राजा-महाराजाओंसे

लखनऊ
सोमवार, श्रावण [८ अगस्त, १९२१]

महोदय,

मैंने कई बार आपको दो शब्द लिखनेका विचार किया, किन्तु लिखा नही। किन्तु कुछ बातें सुनकर और जानकर अब मैं अपने विचार आपके सामने रखना अपना धर्म समझता हूँ।

कदाचित् आपसे यह कहना कि काठियावाड़से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध है, अनावश्यक है। किन्तु वहाँ जन्म लेनेके कारण ही मैं काठियावाडसे बँधा हुआ नही हूँ। वहाँके तीन-तीन राज्योमे मेरे पिताश्रीने मुख्य मन्त्रीकी तरह काम किया था। मेरे चाचाने एक राज्यमे और दूसरेमे मेरे पितामहने भी यही पद सँभाला था। गाधी-परिवारके अनेक व्यक्तियोने काठियावाड़के राज्योमे नौकरी करके निर्वाह किया है। इसलिए मेरा आपसे विशेष नाता है। आपके प्रति मेरा विशेष कर्त्तव्य है।

अतएव मैं जब काठियावाड़के किसी भी राज्यकी स्वेच्छाचारिताके विषयमे कुछ सुनता हूँ, तब मेरे हृदयको बडा दु:ख होता है। काठियावाडको मै शूरवीरोकी भूमि समझता हूँ और मैं यह आशा लगाये हूँ कि स्वराज्य-यज्ञमे काठियावाड़ अपना पूरा हिस्सा अदा कर अपना तथा भारत-भूमिका मुख उज्ज्वल करेगा।

'स्वराज्य' शब्दको सुनकर आप चौंकिए नही। मै चाहता हूँ कि 'स्वराज्य' और 'असहयोग' इन नामोसे आप न चौके। जो लोग यह कहते हैं कि यह आन्दोलन तो अराजकता और राजद्रोह फैलानेवाला है, इससे देशका सत्यानाश हो जायेगा, उन्हें ऐसा कहने दीजिए। परन्तु यह मानकर कि वे अज्ञानवश ऐसा कहते है अपने मित्रोके सामने भी मेरी स्थिति स्पष्ट कीजिए।

हमारे शास्त्र यह सिखाते है कि अपने प्राणोकी आहुति देकर भी अन्यायका सामना करना चाहिए। मेरे पूज्य पिताजीने अपने चरित्र द्वारा मुझे यही शिक्षा दी है। लोग साहस-सम्पन्न हो तो इससे देशकी हानि नही होगी।

किन्तु मैंने यह पत्र स्वराज्यके विषयमे लिखनेके उद्देश्यसे शुरू नही किया है। मेरे स्वराज्य विषयक विचार आपकी दृष्टिसे ओझल न रह जाये इसलिए ऊपरके वाक्य लिख दिये है।

आपके राज्योके विषयमे अनेक लेख मेरे पास आये हैं। कितनी ही शिकायतें मैंने जबानी भी सुनी है। परन्तु अबतक मैंने उनमे से कुछ भी प्रकाशित करना उचित न समझा। मैं यही आशा लगाये रहा कि अन्तमे सब ठीक हो जायेगा, और अब भी मेरा यही खयाल है। बड़े साम्राज्यकी स्वेच्छाचारिता जहाँ एक बार नष्ट हुई कि छोटे-छोटे राज्योंकी मनमानी भी उसके साथ बन्द हो जायेगी। आत्म-शुद्धि एक ऐसी वस्तु है जिसकी जड जमनेमे कुछ समय लगता है। परन्तु जड़ जम जानेपर उसके फैलनेमे विलम्ब नही लगता।

पर, अब तो मैं सुनता हूँ कि कोई-कोई राज्य चरखेका उपहास करता है, कोई उसे एक रोग समझकर मिटानेकी इच्छा रखता है, कोई 'स्वदेशी' जैसे शाश्वत आन्दोलनको रोकनेके लिए लोगोको अनुचित रीतिसे दबाता है, कोई खादी पहननेके खिलाफ उठ खडा होता है और खादीकी टोपी पहननेको 'जुर्म' मानता है। इन बातोपर विश्वास करते हुए मुझे क्षोभ होता है। परन्तु मेरे पास इसके इतने प्रमाण मौजूद है कि ये सारी बाते झूठ नही हो सकती।

काठियावाड़की धरती ऐसी [उपजाऊ] है कि वहाँके किसी भी आदमीको बाहर जानेकी जरूरत नही पडनी चाहिए। कोई व्यक्ति बडा व्यापार शुरू करनेकी हिम्मत करे, तो वह स्तुत्य है। किन्तु ऐसे सैकडो बल्कि हजारो काठियावाडी मेरे सम्पर्कमे आये है जिन्हे केवल आजीविकाके अभावमे काठियावाड़ छोड़ना पड़ा है। यह बात मुझे सालती है और चाहता हूँ कि आपको भी साले। काठियावाड़के मजबूत काठीवाले खूबसूरत ग्रामीणोके घरोमे पहले जो तेज दिखाई देता था वह तेज मुझे अपनी इस बारकी यात्रामे दिखाई नही दिया। मुझे सवत् ३५ के[1] अकालके पहले गाँवोमे दूध-घीकी बहुलता देखनेकी याद है। पलीसे घी परसना तो कजूसी मानी जाती थी। मुझे बचपनमे काठियावाड़ी ऊँची-पूरी देहाती बहनोके हाथो चमचम करते हुए कटोरोमें गाढ़ा मठा पीनेका स्मरण है।

आज तो मठेके नाम सफेद पानी दिखता है, घीकी कुप्पियाँ अब नही दिखती; चम्मच दो चम्मच घी दिख जाये तो गनीमत है। समृद्धिके समाप्त होनेसे लोग दीनताका अनुभव करने लगे है और प्रान्त छोड़कर बाहर भागने लगे हैं।

यह निश्चय जानिए कि यदि राजा-महाराजा मदद करें तो चरखो और करघोके द्वारा काठियावाड़मे पहलेसे भी अधिक जान आ जाये। काठियावाडकी आबादी छब्बीस लाख गिनी जाती है। वहाँ पाँच लाख चरखे आसानीसे चल सकते है। इससे प्रति

१. विक्रम संवत् १९३५ अर्थात् ईसवी सन् १८७९-८०।

वर्ष कमसे-कम साढ़े सात लाखकी आमदनी हो सकती है। यदि काठियावाड़की बहनें केवल आठ ही महीने भजन गाते हुए चरखा कातें तो हर साल साठ लाख रुपये पैदा कर सकती हैं। इसके लिए आपको एक पाई भी खर्च नही करनी पड़ेगी। ऐसे आसान उपायसे यदि काठियावाड़के लोग धन कमा सकें तो क्या आप उसको बुरा मानेंगे? क्या इसका मजाक उड़ायेंगे?

यदि शरीरपर मोटी खादीकी बंडी और सिरपर बड़ी पगड़ी बाँधनेवाले काठियावाड़की मेघवाल जातिके लोगोमें से एक लाख व्यक्ति भी करघे चलाने लगें तो वे हर महीने कमसे-कम बीस लाख रुपया कमा सकते हैं। यदि इस तरह आठ महीने बुनें तो साल-भरमें एक करोड़ साठ लाख रुपया घरमें आये। क्या आप दीर्घदृष्टिसे देख समझकर इतनी बरकत देनेवाले उद्योगको पूरा-पूरा प्रोत्साहन नही देंगे?

आपसे तो मैं यह आशा करता हूँ कि आप अपने दरबारमें भी दीन-हीन लोगो द्वारा बुनी हुई खादीकी प्रतिष्ठा करेंगे। दरबारी पोशाक खादीकी हो और आप स्वयं भी अपनी प्रजाकी बनाई खादी पहनकर भूषित हों।

काठियावाड़की प्रजा तो भूखों मरे और मैंनचेस्टर अथवा जापानके लोग आपके पैसोंपर गुलछर्रे उड़ायें, यह राज-न्याय नही है। आपके शास्त्रवेत्ता लोग आपको यह बात समझायेंगे। यदि आपको मलमल चाहिए तो अच्छी रुई पैदा कराइए, महीन सूत कतवाइए और कपड़ा बुननेवालों को प्रोत्साहन दीजिए।

काठियावाड़के पहाड़ोंमें रहनेवाले राजाओंको आमोद-प्रमोदकी क्या आवश्यकता है? कुत्तोंके झुण्ड वे अपने पास किसलिए रखें? वे तो प्रजाके लिए अपने प्राण दें। प्रजाके दु:खसे दुखी हों और प्रजाको खिलाकर ही आप खायें। राजा बनिया बन जाये और ब्राह्मण नाटक करते फिरें तो धर्मकी शिक्षा कौन दे और रक्षा कौन करे?

मैं यह नही चाहता कि काठियावाड़के लोग आपके राज्योंमें रहते हुए अंग्रेजी राज्यके खिलाफ आन्दोलन करें और आपकी स्थितिको नाजुक बनायें। आपकी नाजुक स्थिति मेरे ध्यानमें है। आपके प्रति मेरी सहानुभूति है। आप भले ही असहयोगी न हों, परन्तु मैं आपसे नम्रतापूर्वक अनुरोध करता हूँ कि आप स्वदेशीको एक विशेष अंग ही समझिए और प्रजाको सहायता देकर स्वतन्त्रतापूर्वक उसका उत्कर्ष कीजिए।

और भी एक निवेदन है। काठियावाड़में शराबकी दुकानोंका होना कैसे सहन हो सकता है? क्या आपको भी शराबके द्वारा कुछ आमदनी करनेकी आवश्यकता है? जब प्रजा खुद ही शराबखोरी छोड़नेके लिए प्रयत्न कर रही है तब मैं तो आपके दरबारसे भी शराबकी बोतलोंके बहिष्कारकी आशा रखता हूँ। श्री रामचन्द्रने एक धोबीकी बात सुनकर सती सीताका त्याग कर दिया था, तब अपनी प्रजाकी इच्छाको जानकर क्या आप शराबको काठियावाड़से नही निकाल सकते?

और आपकी ट्रेनोंमें अन्त्यजोंके लिए अलग डिब्बे हों, उन्हें टिकट मिलनेमें कठिनाई हो, वे धक्के खायें, यह भी कैसे सहन हो सकता है? लोगोंको एकत्र करके आप उनके साथ विचार कीजिए और उन्हें समझाइए कि भंगी-चमारोंके साथ जो

दुर्व्यवहार हो रहा है वह दया-धर्म नही है, वह तो अत्याचार है। इस तरह आप उन बेचारोको सुखी कीजिए और उनके दिलसे निकलनेवाली दुआ लीजिए।

और भी बहुत-सी बाते सुनी है। पर उन बातोंको मै आज नही उखाडना चाहता। वे पुरानी बाते है। मैने तो सिर्फ यही प्रार्थना करनेके लिए यह पत्र लिखा है कि आजकल जो शुद्ध प्राण-वायु बह रहा है उसकी गतिको न रोकिए। मैने प्रेम-भावसे जो-कुछ लिखा है आप समझिए और प्रेमपूर्वक पढकर मेरे विनम्र सुझावोको कार्यरूपमें परिणत कीजिए; बस यही निवेदन है। ईश्वरसे प्रार्थना है कि वह आपको न्यायवृत्ति दे और काठियावाड़के राजा-प्रजा नीति-मार्गपर चलते हुए सुखी रहे।

आपका सेवक,
मोहनदास करमचन्द गाधी

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १४-८-१९२१

२४४. सम्पादकके प्रश्नोंके उत्तर[1]

८ अगस्त, १९२१

'इंडियन डेली टेलीग्राफ' के सम्पादक श्री मैकेंजीने श्री गांधीको उत्तर देनेके लिए पाँच प्रश्न भेजे हैं:

(१) आपके विचारों और लॉर्ड रीडिंगके विचारोंमें जो अन्तर है वह समय बीतनेके साथ-साथ बढ़ेगा या कम होगा, इस सम्बन्धमें आपका क्या खयाल है?

(२) आप स्वराज्यकी स्थापना कबतक करनेकी आशा करते हैं?

(३) क्या आप समझते हैं कि प्रधान मन्त्रीका कार्य पहलेकी अपेक्षा अब अधिक राक्षसी या दुष्टतापूर्ण है?

(४) आप अपने देशमें उत्पन्न और शिक्षित मन्त्रियोंको, जो सुधारोंके अन्तर्गत बनी परिषदोंके द्वारा भारतमें पूर्ण उत्तरदायी शासनकी स्थापनाका प्रयत्न कर रहे हैं, प्रोत्साहित क्यों नहीं करते?

(५) क्या आप जीवनमें विनोद-वृत्तिको आवश्यक समझते हैं?

श्री गांधीने निम्नलिखित उत्तर दिये हैं:

(१) यह अन्तर जितना कम होना सम्भव है उतना ही बढना भी सम्भव है।

(२) मै खुद अपने ऊपर यथासम्भव शीघ्र स्वराज्यकी स्थापनाका प्रयत्न कर रहा हूँ। मै भारतमे स्वराज्यकी स्थापना नही कर सकता। किन्तु मै निश्चय ही उससे इसी वर्षमे स्वराज्यकी स्थापना करनेकी अपेक्षा रखता हूँ।

१. इसका मिलान १८-८-१९२१ के यंग इंडियामें प्रकाशित पाठसे कर लिया गया है।

(३) मुझे स्वीकार करना चाहिए कि प्रधान मन्त्री मेरे लिए एक समस्या हैं। वे निश्चय ही अभीतक भारतीय मुसलमानोके ऋणी है और उनसे उऋण नही हुए है।

(४) ये मन्त्री जबतक इस प्रणालीसे, जो इनका अनुचित उपयोग भारतको पतित बनानेके लिए कर रही है, सर्वथा मुक्त नही हो जाते तबतक मुझे उनको प्रोत्साहन देनेसे आदरपूर्वक इनकार ही करना चाहिए। (सयुक्त प्रान्तमें जो-कुछ हो रहा है वह मेरे इस कथनकी पुष्टि करता है)

(५) यदि मुझमे विनोद-वृत्ति न होती तो मैंने कभीकी आत्महत्या कर ली होती।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, १०-८-१९२१

२४५. भाषण: कानपुरमें[1]

९ अगस्त, १९२१

महात्माजीने आरम्भमें सबको धन्यवाद देते हुए कहा कि आप लोगोंके अभिनन्दन-पत्रमें एक त्रुटि है। आप लोगोंने मौलाना मुहम्मद अलीका नाम इसमें नहीं लिया है, इससे ऐक्यमें फर्क पड़ता है। इस समय हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यकी परम आवश्यकता है। इसी ऐक्यपर खिलाफत तथा पंजाबके अन्यायोंका निपटारा और अन्तमें स्वराज्यकी सिद्धि निर्भर है। गोरक्षाका प्रश्न भी खिलाफतपर ही निर्भर है। हिन्दुओंको बिना किसी बदलेके खिलाफतके वास्ते आत्मत्याग करनेके लिए प्रस्तुत रहना चाहिए। मै नित्य प्रातःकाल गौओंकी रक्षाके लिए प्रार्थना करता हूँ। गोवध हिन्दुओंके पापका फल है और इन्हीं पापोंके कारण हमारे साथ हमारे भाइयोंकी सहानुभूति नहीं है। हम लोगोंको अपने पापोंका प्रायश्चित्त करना चाहिए। हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यकी अत्यन्त आवश्यकता है ताकि खिलाफत प्रश्नका सन्तोषजनक निर्णय हो। खिलाफत ही हिन्दू-मुसलमानोंको एक करेगी।

इसके साथ-साथ शान्ति और अहिंसाकी भी बड़ी आवश्यकता है। हम लोगोंको अपने क्रोधको जीतना चाहिए और ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए कि हम लोगोंमें से क्रोधका लोप हो जाये।

स्वदेशीके बिना स्वराज्य नहीं मिल सकता। महिलाओंका धर्म है कि वे खादी ही पहनें। उनको महीन वस्त्रोंका त्याग कर देना चाहिए। मुझे पूर्ण आशा है कि पहली जनवरीतक स्वराज्य अवश्य मिलेगा। यदि उस समयतक स्वराज्य न मिला

१. कानपुरके नागरिकों द्वारा दिये गये अभिनन्दनपत्रके उत्तरमें। इससे पहले गांधीजीने महिलाओंकी सभामें स्वदेशीपर और मारवाड़ी विद्यालयमें आयोजित कपड़ेके व्यापारियोंकी सभामें विदेशी वस्त्रके बहिष्कार-पर भाषण दिये थे।

तो जीवन भारी हो जायेगा। हम लोग स्वावलम्बन भूल गये हैं, हम लोगोंको यह सीखना है कि मरना किस तरह चाहिए। यदि गोली चले तो उसे हमें अपनी छाती-पर रोकना चाहिए न कि उसे पीठ देनी चाहिए। यदि अंग्रेज हमारे देशमें रहना चाहते हैं तो उन्हें सहयोगी तथा सेवकोंकी तरह रहना सीखना पड़ेगा। वे अब मालिक-की हैसियतसे यहाँ नहीं रह सकते। महिलाओंको विदेशीका बहिष्कार तथा चरखा चलाना अपना धर्म समझना चाहिए, ताकि यदि मैं जेलमें रहूँ या फाँसी चढ़ा दिया जाऊँ, तब भी स्वराज्य अवश्य मिले।

आज, ११-८-१९२१

२४६. भेंट: 'आज' के प्रतिनिधिसे

९ अगस्त, १९२१

प्रश्न: यदि स्वदेशी वस्त्रका मूल्य बढ़ता जाये और विदेशीका घटता जाये तो उस हालतमें हमारा धर्म क्या है?

उत्तर: स्वदेशी व्रतके माने यही है कि यदि विदेशी हमें मुफ्त भी मिले तो भी हम नही ले सकते। जैसे रोटी बहुत मँहगी भी हो तो भी हिन्दू गोमास नही खा सकता।

यदि विदेशी सूतसे भारतमें कपड़ा तैयार किया जाये तो वह विदेशी होगा कि स्वदेशी?

वह विदेशी है।

यदि किसी मिलमें धन भारतीयोंका लगा हो परन्तु उसके मैनेजर और उसका प्रबन्ध विदेशियोंके हाथमें हो तो वह स्वदेशी कही जायेगी या विदेशी?

वह विदेशी कही जायेगी। स्वदेशी वही है जिसमे धन और प्रबन्ध दोनो भार-तीयोंका हो। स्वदेशी मिलोके बने कपड़े गरीबोके वास्ते छोड दिये जाने चाहिए। कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओको शुद्ध खादी पहननी चाहिए।

पहली अगस्तको बनारसकी सभामें पुलिसकी तरफसे जो ज्यादती हुई थी उसके सम्बन्धमें महात्माजीने कहा कि उनको क्षमा करना चाहिए नहीं तो हम स्वराज्यके योग्य नहीं हैं।

आज, १०-८-१९२१

२४७. पत्र : मणिलाल कोठारी और फूलचन्द शाहको

[कानपुर
९ अगस्त, १९२१][1]

भाईश्री मणिलाल और फूलचन्द,

बढवानमे काठियावाड़ राजनैतिक सम्मेलन करनेके सम्बन्धमें मेरा कहना यह है कि मै इस सम्बन्धमें अपना मत अभी व्यक्त नही कर सकता। जब सितम्बरके महीनेमे मेरा दौरा खत्म होगा तब यदि आप पूछेंगे तो मै निश्चित उत्तर दूंगा। यदि मै उसकी अध्यक्षता करनेका निर्णय करूँगा तो मै कार्यको अधूरा नही छोड सकता। यह नही हो सकता कि मै सविनय अवज्ञा करनेके बारेमें सलाह तो दे दूँ और बैठ जाऊँ। इस कारण मै सम्मेलनकी अध्यक्षता करनेके सम्बन्धमें पहलेसे कोई निश्चय नही कर सकता।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
गुजराती, १४–८–१९२१

२४८. भाषण : इलाहाबादकी सभामें[2]

१० अगस्त, १९२१

श्री गांधीने अपना भाषण प्रारम्भ करते हुए कहा कि संयुक्त प्रान्तमें इस समय जो दमन हो रहा है मै उसके बारेमें कुछ कहना चाहता था, किन्तु अब उसके विषयमें कुछ कहे बिना केवल उन साथी कार्यकर्त्ताओंको बधाई देता हूँ जो जेल गए है। आपको यह समझ लेना चाहिए कि यदि आपमें से कोई जेल चला जाये तो भी स्वराज्यके कार्यमें ढील नहीं होनी चाहिए। जबतक आप ऐसा अनुभव नहीं करते तबतक आप न तो स्वराज्यके योग्य है और न जेलके ही। यदि आप इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना चाहते है तो आपको जेल और मृत्युका भय छोड़ देना चाहिए। बल्कि आपको तो यह सोचना चाहिए कि निर्दोष व्यक्तिकी हर जेलयात्रा और मृत्यु स्वराज्यको अधिकाधिक निकट ले आती है। जबतक आप ऐसा अनुभव नहीं करते तबतक मै समझूंगा कि

१. साधन-सूत्रमें यही तारीख है।

२. यह सभा स्वराज्य सभाके मैदानमें साँझको हुई थी। इसमें १०,००० से अधिक लोग शामिल हुए थे और इसकी अध्यक्षता पण्डित मोतीलाल नेहरूने की थी। इस सभामें मुहम्मद अली और स्टोक्सने भी भाषण दिये थे।

आप अहिंसा और असहयोगके अर्थको भली-भाँति नहीं समझ सके हैं। असहयोगका अर्थ निष्क्रिय बैठे रहना नहीं है। इसका अर्थ है अपनी शक्तिको संगठित करना, क्योंकि असहयोगके लिए महान् शक्तिकी आवश्यकता है। मैं ब्रिटिश झंडे यूनियन जैक के सामने, जिसके सामने फौजी कानूनके दिनोंमें पंजाबके बालकोंको अपना सिर झुकाना पड़ता था, तबतक सिर नहीं झुकाऊँगा जबतक सरकार अपने पिछले अत्याचारोंके लिए पश्चात्ताप प्रकट करके क्षमा नहीं माँगती।

आगे बोलते हुए गांधीजीने संयुक्त प्रान्तकी स्थितिका उल्लेख किया और कहा: छोटे-छोटे बालक जेल भेजे जा रहे हैं और तिसपर भी यह घोषित किया जा रहा है कि संयुक्त प्रान्तमें कहीं कोई दमन नहीं हो रहा है। संयुक्त प्रान्तकी सरकार पंजाब सरकारसे कहीं अधिक चालाक है। उसने बड़े-बड़े नेताओंको नहीं छुआ; क्योंकि उसे डर था कि उनकी गिरफ्तारीसे प्रान्तमें अशान्ति फैल जायेगी, किन्तु वह छोटे बालकोंको कालकोठरीमें बन्द करनेकी सजा दे रही है। यह दमनका भयानक तरीका है। दमनकी प्रणालीमें लोगोंको भयभीत करना तथा उन्हें नैतिक रूपसे गिरा देना भी आता है। किसानोंपर भी इसी प्रकारका दबाव डाला जा रहा है। उन्हें अमन-सभाका सदस्य बनने तथा असहयोग आन्दोलनसे अलग रहनेको मजबूर किया जा रहा है। इसके लिए मैं उच्च अधिकारियोंको दोषी ठहरानेको तैयार नहीं, क्योंकि गवर्नर और उनके सहकारी यह बात जानते हैं या नहीं, इसका मुझे अभीतक निश्चय नहीं है। मैं तो अब भी महमूदाबादके राजा और श्री चिन्तामणि[1] तथा अन्य लोगोंका सम्मान करता हूँ। किन्तु उनके हाथ भी पापसे पंकिल हो गए हैं; भले ही उन्होंने वे पाप जान-बूझकर या स्वेच्छासे न किये हों। अब वे सरकारी सदस्य बन गये हैं, इसलिए उनके दिमाग बदल गए हैं। उन्होंने घोषित किया है कि स्वयं असहयोगी ही अपने विरोधियोंके खिलाफ हिंसाका प्रयोग कर रहे हैं। मैं इस आरोपसे एकदम इनकार नहीं करता; और इसीलिए मैंने अलीगढ़ तथा मालेगाँवकी घटनाओंपर पश्चात्ताप व्यक्त किया है और हिंसक कार्योंकी निन्दा की है। फिर भी मेरा विचार है कि कुल मिलाकर असहयोगका कार्य शान्तिपूर्ण ढंगसे हो रहा है।

श्री गांधीने आगे कहा: मैं चाहता हूँ कि शान्तिकी यह भावना प्रगति करे। सरकार आप लोगोंको जेलमें डाले या गोलीसे मारे तब भी आपको सरकारी अधिकारियोंको बुरा-भला नहीं कहना चाहिए और न उनका सामाजिक रूपसे बहिष्कार ही करना चाहिए। जब आप अपने ऊपर इतना नियन्त्रण प्राप्त कर लेंगे तब समझिए कि स्वराज्य आपका है और तभी पंजाब और खिलाफतके सम्बन्धमें आप न्याय प्राप्त कर सकेंगे। किन्तु ऐसा तबतक सम्भव नहीं जबतक कि हिन्दू और मुसलमान एक नहीं हो जाते। बकरीद आ रही है। यदि हिन्दू गायको बचाना चाहते

१. सर चिरावुरी यज्ञेश्वर चिन्तामणि (१८८०–१९४१); प्रसिद्ध पत्रकार, लेखक तथा राजनीतिज्ञ; इलाहाबादके प्रसिद्ध दैनिक लीडरके सम्पादक।

हैं तो वे खिलाफतकी पवित्र अग्निमें अपनी बलि दे दें, किन्तु वे सौदेबाजीकी भावनासे ऐसा न करें। वे मुसलमान भाइयोंसे गोवध न करनेका आग्रह भी न करें।

स्वदेशीके प्रश्नपर आते हुए उन्होंने कहा: स्वदेशीकी वकालत करनेका अर्थ है प्रतिवर्ष ६० करोड़ रुपयेकी बचत, भुखमरीसे पीड़ित अपने देशवासियोंके लिए भोजन तथा अपनी स्त्रियोंकी पवित्रताकी रक्षा। किन्तु इन सबसे बढ़कर इसका उद्देश्य है सविनय अवज्ञाके लिए तैयारी करना। यदि आप स्वदेशीके मुद्देको सितम्बरतक सफल बना देते हैं तो मैं समझूँगा कि आप सरकारको अन्तिम चेतावनी देनेके लिए पर्याप्त समर्थ हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त इसका अर्थ दुनियाको यह बतला देना भी होगा कि भारतने अपनी शक्तिको संगठित कर लिया है। मैं चाहता हूँ कि आप अपने विदेशी वस्त्रोंको जला दें। यदि आप स्मरनाकी सहायता करना चाहते हैं तो आप अपने उतारे कपड़े न भेजकर, वहाँ नकद या नये कपड़े भेजें। किन्तु यदि आप अपने काममें लाये हुए कपड़े ही भेजना चाहते हैं तो भी मैं आपत्ति नहीं करूँगा। किन्तु आपको तो अपने सभी विदेशी वस्त्रोंका त्याग करना ही होगा। आप अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके निर्णयानुसार काम करें और करघे तथा चरखेको अपनायें। अर्थात् आपको उन कपड़ोंपर निर्भर रहना चाहिए जो आपके अपने जिलेमें तैयार होते हों। दूसरे स्थानोंसे कपड़ेका आयात नहीं करना चाहिए, चाहे आपको अर्धनग्न ही क्यों न रहना पड़े। इससे आपपर स्वदेशी वस्त्रोंका नाम लेकर विदेशी वस्त्र थोपनेका खतरा मिट जायेगा।

भाषणको समाप्त करते हुए उन्होंने कहा: अब मैं यहाँ एकत्र विदेशी वस्त्रोंके ढेरमें आग लगाने जा रहा हूँ। इसमें किसीके भी प्रति दुर्भावनाकी कोई बात मेरे मनमें नहीं है। प्रेम, अहिंसा और शान्ति मेरा धर्म है। अन्तमें मैं आशा करता हूँ कि पुरुषोंकी अपेक्षा महिलाएँ इस दिशामें अधिक कार्य करेंगी इसलिए मैं उनसे अपील करता हूँ कि वे इस कार्यमें हाथ बटाएँ।[1]

[अंग्रेजीसे]

लीडर, १२-८-१९२१

१. अपने भाषणके बाद गांधीजीने विदेशी वस्त्रोंके विशाल ढेरकी होली जलाई।

२४९. टिप्पणियाँ

बम्बईमें होली

विदेशी कपडोकी होली जलानेके बारेमें अगर किसीको कोई शक रह भी गया था, तो परेलमे श्री सोबानीके अहातेमे जलाई गई होलीको अपनी आँखोसे देखनेवाले सभी लोगोका वह शक दूर हो गया होगा। हजारो दर्शकोने वह प्रेरणादायक दृश्य देखा था। जैसे ही आगकी लपटे ऊँची उठ-उठकर कपड़ोके अम्बारको अपने आगोश-मे भरने लगी, उपस्थित दर्शकोकी हर्ष-ध्वनिसे आकाश गूँज उठा। लगता था जैसे हमारी जजीरे टूक-टूक हो रही हो। सभीके चेहरोपर स्वतन्त्रताकी आभा दमक उठी। यह शानदार काम बडे शानदार ढगसे सम्पन्न हुआ। मुझे पूरा भरोसा है कि लोगोके दिमागोपर किसी भी और चीजकी इतनी गहरी छाप न पडी जितनी स्वदेशीकी पड़ी है। होलीमे जलाये जानेवाले कपडे फटे-पुराने भी नही थे, उनमें बढियासे-बढ़िया किस्मकी साडियाँ, कमीजे और जाकिटें थी। मै जानता हूँ कि कुछ माताओने अपनी बेटियोकी शादीके लिए सहेजकर रखे गये रेशमी वस्त्र भी जलानेके लिए दे दिये थे। इतने कीमती कपडोको जला देना काफ़ी महत्त्व रखता है। लपटोमें झोके गये कपड़ोकी तादाद किसी कद्र डेढ लाखसे कम नही थी। उनमे ऐसे-ऐसे कपडे भी शामिल थे जिनमे से एक-एककी कीमत कई सौ रुपये बैठती। मुझे पूरा यकीन है कि यह सब देशके भलेके लिए ही हुआ। ऐसी चीजे गरीबोको बाँटना पाप होता। जरा सोचिये इन बेशकीमती कपडोमे गरीब लोग कैसे लगते। अधिक न कहा जाये तो भी इतना तो कहना ही पडेगा कि वह दृश्य बडा ही बेतुका और अभिरुचिहीन लगता। सच तो यह है कि जलाये गये अधिकतर कपडे ऐसे थे जो गरीबोकी जिन्दगीके साथ जरा भी मेल नही खाते। मध्यम-वर्गके लोगोके पहनावेमे इतनी बडी तब्दीली आ गई है कि गरीबोको वे कपडे देना बिलकुल उचित न होता। वह तो ऐसा ही होता जैसे इस्तेमालशुदा कीमती दाँतका ब्रश किसी गरीबको देना। इसलिए मुझे आशा है कि ऐसे होली-काण्ड होते रहेगे और वे भारतके एक छोरसे दूसरे छोरतक फैल जायेगे और वे तबतक बन्द नही होगे जबतक कि एक-एक विदेशी कपडा भस्म नही कर दिया जाता या देशसे बाहर नही भेज दिया जाता।

तमिल नारियाँ

तिरुपतिसे एक मित्र लिखते हैं:

मद्रासमें हमारे आन्दोलनकी सफलताके मार्गमें सबसे बड़ी बाधा है मद्रासकी नारी। उनमें से कुछ तो बड़ी ही प्रतिक्रियावादी हैं और ऊँचे ब्राह्मण घरानोंकी स्त्रियोंमें से बहुत-सी ऐसी हैं जिन्हें पाश्चात्य बुराइयोंकी आदत हो गई है। वे दिनमें तीन बारसे कम काफी नहीं पीतीं; इससे और ज्यादा बार पीना 'फैशन' मानती हैं। भूषामें भी उनका यही हाल है। उन्होंने घरेलू तौरपर तैयार होने-

वाला सस्ता कपड़ा त्याग दिया है और वे मँहगे विदेशी वस्त्रोंके पीछे पागल हैं। आभूषणोंके मामलेमें ब्राह्मण घरोंकी स्त्रियाँ सबसे आगे रहती हैं और उनमें भी श्री वैष्णव घरानोंकी स्त्रियाँ। पुरुष तो सादगीका अच्छा जीवन अपना रहे हैं, पर हमारी महिलाएँ फिजूलखर्च बनती जा रही हैं। मन्दिरोंमें ईश्वराधनाके लिए जाते समय भी उनको सादगीका पहनावा अपनानेकी बात नहीं सूझती। वे कीमतीसे-कीमती जवाहरात और ज्यादासे-ज्यादा कीमती जरी इत्यादि पहनकर मन्दिरोंमें जाना चाहती हैं। मैं ऐसी कई ईमानदार महिलाओंको जानता हूँ जो सिर्फ इसीलिए मन्दिर नहीं जातीं कि उनके पास कीमती वस्त्र और आभूषण नहीं हैं।

मेरे ये वैष्णव मित्र जो-जो कहते हैं उस सबकी सचाईपर विश्वास करनेका मेरा मन नही होता। ये सज्जन असहयोगी हैं और वकील हैं। मैं उनके इस कथनपर अविश्वास करना चाहता हूँ कि तड़क-भड़क और दिखावेके मामलेमे तमिल बहनें अन्य सभी प्रदेशोकी महिलाओसे आगे हैं। फिर भी उनके पत्रसे तमिल बहनोको अपने बारेमे कुछ सोचनेकी प्रेरणा तो मिलनी चाहिए। उनको फिरसे अपनी पहलेकी सादगी अपनानी चाहिए। ईश्वर निश्चय ही उन स्त्रियोसे कही ज्यादा प्रसन्न होगा जो अपने हृदयकी शुचिताके प्रतीकस्वरूप बिलकुल साफ धुली खादी पहनती हैं। हमारे मन्दिर शान-शौकत और दिखावेके लिए नही हैं; वे तो आराधकोंकी मन:स्थितिके अनुकूल विनम्रता और सादगीकी अभिव्यक्तिके लिए हैं। मद्रास अहातेकी महिलाओमे इस बुराईके खिलाफ निरन्तर प्रचार होता रहना चाहिए।

मध्य प्रान्तमें खादी-टोपी

मध्य प्रान्तमें सरकारी कर्मचारियो द्वारा खादीकी टोपियाँ पहनना अधिकृत रूपसे गैरकानूनी माना जाने लगा है। मध्य प्रान्त परिषद्ने सार्वजनिक रूपसे इस निर्णयका समर्थन कर दिया है। मध्य प्रान्त सरकार द्वारा निर्धारित यह नियम परले दर्जेकी गुलाम मनोवृत्तिका सूचक है और खतरनाक है। यदि खादीकी टोपी असहयोग दलकी निशानी है, तो फिर खादीका इस्तेमाल भी गैर-कानूनी माना जा सकता है और इसके लिए सजा दी जा सकती है। और इस तरह तो सरकारी शब्द-कोषमें स्वदेशीको भी जुर्म माना जा सकता है। विदेशी वस्त्र आजसे दो सदी पहले भारतपर जबरन लादे गये थे। और अब भारतको फिरसे स्वदेशी अपनानेसे रोकनेमे जबरदस्ती की जा रही है। आम जनताकी रायका खयाल रखनेवाली किसी भी नेकनीयत सरकारको सरकारी कर्मचारियो द्वारा खादीके इस्तेमालको बढावा देना चाहिए था। मैं यह नही मानता कि खादीकी टोपी असहयोगकी निशानी है। मैं ऐसे कई लोगोको जानता हूँ जो असहयोगको ठीक नही समझते पर उन्होंने सुविधा और स्वदेशीकी निशानीके तौरपर खादीकी टोपीको अपना लिया है। कांग्रेसने अभीतक सरकारी कर्मचारियोसे नौकरियाँ छोड़नेके लिए नही कहा है, लेकिन मैं उनसे इतनी उम्मीद जरूर करता हूँ कि वे अपनी पसन्दका पहनावा बरकरार रखनेकी हिम्मत दिखायेंगे और इस तरह

अपने आचरणकी स्वतन्त्रताको बरकरार रखेंगे, चाहे फिर इसमे उनकी नौकरियोपर भी क्यो न बन आये। यदि सभी सरकारी कर्मचारी मिलकर यह काम करे तो वे देखेगे कि सरकार उनका कुछ भी नही बिगाड सकती। यह मुमकिन हो या न हो, पर मुझे उनसे इतनी उम्मीद जरूर है कि व्यक्तिगत रूपसे कुछ ऐसे सरकारी कर्मचारी अवश्य निकल आयेंगे जो खादीकी टोपी पहननेसे नही हिचकिचायेंगे।

ग्वालियरमें अन्धकार

ग्वालियर स्टेशनसे गुजरते हुए, मुझे यह देखकर ताज्जुब हुआ कि लोग हमारे डिब्बेके पास आनेमे भय खाते थे। प्लेटफार्मपर स्वदेशीका नाम-निशानतक नही था। दूसरे स्टेशनोकी तरह एकने भी आकर हमे अपनी विदेशी टोपी नही सौपी। इसके कारणका मुझे जल्द ही पता चल गया। उस राज्यमे असहयोग आन्दोलनपर करीब-करीब प्रतिबन्ध ही लगा दिया गया है। खादीकी टोपी पहनना और घरमे चरखा रखना अगर जुर्म नही तो नापसन्द तो किया ही जाता है। यह तो सोचा भी नही जा सकता कि महाराजाके विचार भी इतने प्रतिक्रियावादी होगे। महाराजाके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। वैसे सरकारका विषैला प्रभाव रजवाडोमे ही सबसे ज्यादा दिखाई पड़ता है, क्योकि रजवाड़ोके पास कोई भी ठोस किस्मका सुधार करनेकी शक्ति ही नही है और उनको अक्सर ही उनकी प्रजाकी स्वतन्त्रता सीमित करनेका साधन बननेपर विवश किया जाता है। इतना ही नही, प्रभुता सम्पन्न सत्ताके सरक्षणने शेष भारतकी भाँति उनको भी पुसत्वहीन और अनुत्तरदायी बना दिया है। इसलिए जब भी कोई राजा मनमानी और दमन करनेपर तुल जाता है, तो अपने राज्यमे जुल्म ढानेकी उसकी शक्ति वाइसरायसे भी कही ज्यादा होती है। सरकारकी वर्तमान व्यवस्थामें यह एक बहुत ही बडी बुराई है। फिर भी, आशा है कि ग्वालियर स्टेशनपर मुझे जो खबर दी गई उसमें काफी नमक-मिर्च लगाया गया होगा और जितना मुझे बतलाया गया है राज्यमे दमनका रूप उतना नृशस नही होगा।

लाहौरका अनुकरण कीजिये

लाहौर नगरपालिकामे असहयोगियोका बहुमत है। उसने प्रस्ताव स्वीकार किया है कि वहाँके सभी कोचवान और ऐसे ही अन्य कर्मचारी खादीकी टोपियाँ पहनेंगे और नगरपालिकाके सभी विभाग खादीका यथासम्भव अधिकतम उपयोग करेंगे। कहा जाता है कि अमृतसरके वकीलोने अपनी पोशाकके लिए खादीको अपना लिया है। आशा है कि अन्य नगरपालिकाएँ लाहौरका अनुकरण करेगी और देश-भरके वकील अमृतसरके वकीलोके मार्गपर चलेगे। देश और स्वदेशीकी खातिर वे कमसे-कम इतना तो कर ही सकते हैं।

श्रमिकोंका योगदान

जनताको इसका कोई अन्दाज नही है कि श्रमिकोने तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा देनेमे कहाँतक हाथ बँटाया है। अहमदाबादके २१ हजार मिल-मजदूरोने इस कोषमे करीब ५४,००० रुपये दिये हैं। यह चन्दा उन्होने निर्धारित दर, अर्थात्

अपनी माहवारी मजदूरीके दसवे भागके हिसावसे दिया था। सात हजार मजदूर सदस्य बन चुके है। इसी तरह बम्बईके मजदूरोने भी बिना माँगे चन्दा भेजा है। हालांकि उन्होंने अहमदाबादके मजदूरोकी तरह किसी निश्चित हिसावसे और उतना ज्यादा नही दिया है। मजदूरोंका यह योगदान बतलाता है कि हवाका रुख किस तरफ है। मजदूर जितने ही अधिक संगठित होते जायेंगे और अपने हितके साथ-साथ देशके हितोका भी खयाल करते जायेंगे, उतना ही अपनी मेहनतसे तैयार होनेवाली चीजोंकी कीमतें निर्धारित करानेके लिए उनका सघर्ष तीव्रतर होता जायेगा। तब फिर मिल-मालिको द्वारा मजदूरों और उपभोक्ताओके हितोकी परवाह किये विना अपने भागीदारोंका लाभांश बढ़ानेकी गरजसे वेहिसाव कीमतें वसूल करनेका सवाल ही नही रहेगा। एक ऐसा वक्त जरूर आयेगा — और वह जितनी जल्दी आये उतना अच्छा होगा — जब भागीदारोके लाभांश, मजदूरोंकी मजूरी और उपभोक्ताओ द्वारा अदा की जानेवाली कीमतोके वीच समुचित सामजस्य स्थापित हो जायेगा।

अनुशासनहीनता

मैंने दुबारा जो दौरा शुरू किया है उसका तजुर्वा पहलेके मुकावले अच्छा नही रहा है। मैंने तो सोचा था कि मै अनुशासनके बारेमें इतना लिख और बोल चुका हूँ और चूंकि हम अनुशासनके एक दौरसे गुजर ही चुके है, इसलिए अव इस दौरेमे मुझे काफी अनुशासित और सन्तुलित किस्मके प्रदर्शन देखनेको मिलेगे। लेकिन मुझे यह देखकर ताज्जुब ही हुआ कि स्टेशनोंपर लोगोंका हुजूम ठेला-ठेली और शोर-गुल करते हुए मिलता है। आगरा और टूंडलामे भीड़ उत्तेजित थी और लोग किसीकी वात सुननेको तैयार नही थे। टूंडलामे तो भीड़के कारण स्टेशनसे वाहर निकलना तक कठिन हो गया था। जाहिर है कि उनसे जो भी कुछ कहा जा रहा था वह उनको सुनाई नही देता था। उनसे कोई चुप रहनेको कहता तो वे जोर-जोरसे चीखने लगते थे। और मुझे जैसे-तैसे जब भोजन-कक्षमें पहुँचाया गया तो भीड़ वहाँ भी घिर आई। अन्दर झाँकनेके लिए उत्सुक लोगोने दरवाजेके काँच तोड़-फोड़ डाले। लोग तवतक सन्तुष्ट नहीं हुए जबतक मै उन्हे लेकर स्टेशनसे वाहर नही निकल आया। लेकिन मेरे भाषणके बाद काफी फर्क पड़ा। लोग हिदायतोपर कान देने लगे। शोर-गुल भी पहलेसे कम हो गया। फिर लोग मेरे डिब्बेकी ओर वेतहाशा नही भागे और हम लोगोंको गुजरनेके लिए रास्ता भी दे दिया। मै टूंडलासे कई बार गुजर चुका हूँ, पर मैंने पहले कभी इतनी भीड़ वहाँ नही देखी थी। पूछताछ करनेपर मुझे पता चला कि इस बार आसपासके गाँवोंके लोग सिर्फ दर्शनोके लिए सिमट आये थे। यह 'दर्शन' तो एक परेशानी बन गई है, और इसमे काफी कीमती समय वेकार चला जाता है। इससे मुझे सचमुच बड़ी परेशानी होती है और यात्राके दौरान अपने लेखन-कार्यके लिए मुझे जिस शान्तिकी जरूरत है वह भी नही मिल पाती। इस सारी कठिनाईकी जड़में यही बात है कि हम पहलेसे कोई योजना नहीं बनाते और हम अच्छी तरहसे संगठित भी नही है। कार्यकर्त्ताओंको या तो इन प्रदर्शनोंको सर्वथा व्यवस्थित ढंगसे संगठित करना चाहिए या फिर इनका विचार ही त्याग देना चाहिए। गनीमत समझिए कि

ये प्रदर्शन मैत्रीपूर्ण प्रदर्शन हैं और इसलिए कोई झझट खड़ी नही होती। किन्तु सोचिए अगर हम विरोधमे कोई प्रदर्शन करे तो कैसी अधाधुधी मच जाये। अगर हमे गोली-बारीके समय या लोगोके उत्तेजित रहते हुए भीड़की व्यवस्था करनी पड़े तो क्या हो? मैने टूँडलामे देख लिया है कि ऐसी भीड़को लेकर सार्वजनिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाना असम्भव है। जबतक हम भीडके लोगोको आदेश देने और उनका पालन करानेकी स्थितिमे नही आ जाते, तबतक हम किसी भी कामको कारगर ढगसे अजाम नही दे सकते। इसलिए हमारे स्वयसेवकोको भीड़को नियन्त्रित रखनेका प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। भारतीय लोगोकी भीड़को नियन्त्रणमें रखना और व्यवस्थित बनाना अत्यन्त ही सरल कार्य है। यह संसारके अन्य सभी देशोके लोगोको नियन्त्रणमें रखनेसे कही आसान है। हाँ, इसके लिए पहलेसे तैयारी की जानी चाहिए। और यदि पहलेसे तैयारी न हो तो समझदारी इसीमे होगी कि भीडका जमाव ही न होने दिया जाये।

प्रदर्शन

अब यह समझना काफी आसान हो गया है कि मालेगाँवमें और यहाँ तक कि अलीगढ़में भी आगजनीकी घटनाएँ कैसे हुई होगी। अनुशासनहीन भीड़ वहाँ इकट्ठी हो गई थी। ऐसी भीड़मे कुछ ऐसे शरारती लोग रहते ही है जो सिर्फ मौकेका इन्त-जार करते रहते है। जब समूची भीड़ उत्तेजित हो जाती है तो वह आँख मूँदकर उनके पीछे चलने लगती है, अर्थात् वह भीड क्षणिक आवेशमे बह जाती है। इसी-लिए जब हम ऐसे प्रदर्शनोका आयोजन करते है जिनको हम नियन्त्रित नही कर सकते, तो हम 'शत्रुओ' के हाथोमें खेलते है। आज हमारा उद्देश्य एक ऐसा वातावरण बनाना है जो शान्त और अहिंसापूर्ण होते हुए भी दृढ निश्चयसे प्रेरित हो। जब पूर्णतया अनु-शासित सैनिकोकी ओरसे एकाएक गोलीबार शुरू हो जाता है, तो हमारा दृढ निश्चय काफूर हो जाता है। इसीलिए हमे गिरफ्तारियोके विरुद्ध प्रदर्शनोका आयोजन करना जान-बूझकर छोड़ देना चाहिए। सरकार जिनको भी गिरफ्तार करना चाहती है, उनको बिना किसी शोर-गुलके गिरफ्तार हो जाने देना चाहिए। जब हम अपने-आपपर पर्याप्त आत्म-नियन्त्रण प्राप्त कर लेगे, तब हम स्वराज्य और सविनय अवज्ञाके लिए तैयार हो जायेगे। यह आत्म-नियन्त्रण पूर्ण रूपसे स्वदेशीका पालन करनेसे ही पैदा होगा। विदेशी वस्त्रोका बहिष्कार करने और अपनी जरूरतके लायक खादी तैयार करनेकी कोशिशसे हमारे अन्दर जितना आत्मविश्वास पैदा होगा, उतना अन्य किसी भी चीजसे पैदा नही हो सकता।

रिहाईका दुःख

श्री वैंकटप्पैयाने एक तार द्वारा खेद प्रकट किया है कि वे स्वय रिहा कर दिये गये है और उनके दूसरे साथी अब भी हिरासतमे है। मुझे भी इसका दु.ख है। आज-कल तो जेल ही हर आत्म-सम्मानी भारतीयके लिए सबसे उपयुक्त स्थान है। आज अलीगढ़का हर आदमी मौलाना शेरवानी और उनके भाग्यसे ईर्षा करता है। बेगम ख्वाजाने मुझे लिखा है कि उनके शौहरके साथीके जेलमे रहते उन्हे अपने पतिकी

रिहाईसे बड़ा दुःख पहुँचा है। यही सच्ची भावना है। और इस वर्ष स्वराज्य मिलना तभी सम्भव होगा जब हमारे देशके स्त्री-पुरुष स्वतन्त्रताके लिए सघर्ष करते हुए जेल जाना अपना सौभाग्य मानेंगे। स्पष्ट है कि गुण्टूरके लोगोमें इसी तरहकी सही भावना मौजूद है। गिरफ्तारियोकी खबर सुनकर श्री प्रकाशम् तुरन्त ही गुण्टूर गये और उन्होने वहाँसे तार भेजा है कि वहाँ कई वकीलोने अपनी वकालत मुल्तवी कर दी है और अब जनता कांग्रेसके असहयोग कार्यक्रमपर और भी दृढ़ताके साथ अमल करनेकी कोशिश कर रही है। हम लोग जब जेलोसे बाहर उत्तरदायित्वपूर्ण ढगसे स्वतन्त्रचेता व्यक्तियों-की तरह काम करने लगेंगे, तो सरकार हमे जेल भेजनेमे देर नही करेगी, और हम जितने दिन जेलसे बाहर रहेंगे, उतने दिन हमें भी यह विश्वास रहेगा कि हम अपना समय यो ही बरबाद नही कर रहे हैं।

पहली अगस्तको ताकतका प्रदर्शन

किसी पत्र-लेखकने बड़े रोषके साथ पूछा है कि पहली अगस्तका मेरा अनुभव क्या है। पहली अगस्तका मेरा अनुभव यह है कि मैंने उससे अधिक व्यवस्थित भीड़ इससे पहले नही देखी थी। मै पत्र-लेखककी इस बातपर यकीन करता हूँ कि कुछ लोगोको विदेशी टोपियाँ उतारनेके लिए मजबूर किया गया था। लेकिन मुझे पक्का भरोसा है कि ऐसे उदाहरण बिरले ही थे। स्वदेशीके प्रचारमें ताकतके इस्तेमालकी कोई गुंजाइश ही नही है, और मुझे इसमे किंचित् भी सदेह नही कि जोर-जबरदस्तीका इस्तेमाल हमारे अपने उद्देश्यको ही विफल बनानेवाला सिद्ध होगा। हम भारतको जबरन खादी पहननेपर मजबूर नही कर सकते। खादी पहनना तो स्वतन्त्रता और सम्मानका सूचक बन जाना चाहिए, लेकिन यदि उसके प्रचारमे जोर-जबरदस्तीसे काम लिया गया तो ऐसा नही हो सकता।

बंगाल और मद्रासके चुनाव

इसमे सन्देह नही कि बंगाल और मद्रासके चुनावोके सम्बन्धमे लिये गये कार्य-समितिके निर्णयसे कुछ नाराजगी बढ़ेगी। इसलिए और भी कि यह निर्णय अध्यक्षके इस निर्देशके बावजूद किया गया था, कि सविधानकी व्यवस्थाके अनुसार चुनाव नही किये जा सकते। इससे जिन लोगोको हानि पहुँची है; मुझे उनसे हमदर्दी है। पर मैं उनसे यही कहूँगा कि वे समितिके निर्णयके पीछे काम करनेवाले कारणोको समुचित महत्त्व दें। मेरी अपनी राय यह है कि समितिके लिए सभी सम्बन्धित पक्षोंकी बात सुने बिना केवल कुछ मुद्दोको ध्यानमे रखकर ऐसा निर्णय देना सम्भव नही था। लेकिन अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा निर्धारित कार्यक्रम पूरा करना था और सभी सम्बन्धित पक्षोकी बात सुननेका समय कार्य-समितिके पास रह ही नही गया था। यदि ऐसी जाँच-पडताल की जाती तो सारी प्रक्रिया पूरी होनेतक सदस्य उसी स्थितिमे बने रहते जिसमें वे आज है। इसलिए दूसरे पक्षके लोगोके नवम्बरतक रुके रहनेसे कोई हानि नही होगी। और फिर ऐसे मामले अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सामने तभी पेश करने चाहिए जब उनका स्थानीय तौरपर निबटारा करनेका यथासम्भव पूरा प्रयास कर लिया गया हो। इसके बिना उन्हे वहाँ पेश करना गलत होगा।

हम यही तो चाहते हैं कि स्थानीय लोकमतकी ताकतके बलपर ही अनियमितताओंको रोका और ठीक किया जा सके। प्रबुद्ध लोकमतके विरुद्ध क्या बगाल और क्या मद्रास, कहीकी भी काग्रेस कमेटी खडी नही रह सकती। यदि यह मान लिया जाये कि जनता वर्तमान चन्द नेताओका अन्धानुसरण करती है तो फिर अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके फैसलेसे भी शिकायत करनेवालो को कोई सन्तोष नही हो सकता। काग्रेसका अपना एक लोकतान्त्रिक सविधान है, लेकिन जबतक उसपर अमल करनेवाले कार्यकर्त्ता लोकतात्रिकताको अपनाकर न चले, और लोकमतको अपना पथ-प्रदर्शक मानकर चलनेके लिए तैयार न हो तबतक सविधानका इस्तेमाल निश्चय ही गैर-लोकतात्रिक उद्देश्योके लिए ही होगा। केन्द्रकी ओरसे जल्दबाजीमे अगर कोई हस्तक्षेप किया जायेगा तो उसका नतीजा यही होगा कि दलमें कटुता और फूट बढेगी। इसीलिए कार्य-समिति जान-बूझकर इसके वैधानिक पक्षको बचाती रही। उसने गुण-दोषोका विवेचन नही किया और दोनो पक्षोसे अनुरोध किया कि वे स्थानीय तौरपर प्रयास करके सारा मामला निबटा ले। शास्त्रीय बहस या कानूनी बारीकियोमे पड़नेका समय हमारे पास नही है। हमें पदोकी बात कम और सेवाकी बात अधिक सोचनी चाहिए।

एक अंग्रेज मित्रकी चेतावनी

नीचे मैं एक अग्रेज मित्रके पत्रके कुछ प्रासगिक अश उद्धृत कर रहा हूँ। मैं इन अग्रेज मित्रको कई वर्षसे जानता हूँ। वे बड़ी सत्यान्वेषी हैं। इनका कहना है:

> आपके कुछ वाक्य बड़े ही सुन्दर लगे, पर कुछ वाक्य ऐसे लगे जैसे आपके न हों, और इससे मुझे उलझन महसूस हुई। मैं आलोचना क्यो करूँ? मुझे तो इस पेचीदा परिस्थितिकी जानकारी तक नहीं है। फिर मैं कैसे फतवा दे सकती हूँ कि आप जिस उग्र किस्मकी उथल-पुथलके लिए कोशिश कर रहे हैं उसका कोई औचित्य है या नही? जब मैं पीछेकी ओर मुड़कर देखती हूँ कि मेरी आपपर कितनी श्रद्धा थी, आप मेरे तईं किस तरह एक आदर्शके प्रतीक बन गये थे, तब यही इच्छा होती है कि परिस्थिति ज्योंकी-त्यों बनी रहती, उसमें कोई परिवर्तन न होता। और कुछ भी ऐसा घटित न होता कि मुझे यह सोचना पड़ता कि मैंने कही गलती तो नही की है। वैसे यह एक बड़ा कमजोर-सा खयाल है और वर्तमान परिस्थितिके कठोर यथार्थका सामना करनेका साहस मुझे अपने-आपमे बटोरनेमें सफल होना ही चाहिए। आप जिस हदतक सही रास्तेपर है, उस हदतक मैं अब भी आपके प्रति अपनी श्रद्धा बरकरार रख सकती हूँ। लेकिन मैं यही तो तय नही कर पाती कि आप किस हदतक सही रास्तेपर हैं। पर यह एक बात मुझे बिलकुल निश्चित लगती है, कि अगर आप गलतीपर होंगे तो आप अपनी सफलताकी कामना भी नहीं करेंगे; क्योंकि सर्वोपरि सत्य आपको अपने प्रयासोसे कही अधिक प्रिय है। कैसी विचित्र बात है कि हम लोग यह न जानते हुए भी कि सत्य क्या है, इसीके लिए सबसे अधिक चिन्तित रहते हैं कि सत्यकी ही विजय होनी चाहिए। हमारी अपनी योजनाओंके मुकाबले उसीको सफलता मिलनी चाहिए।

मैं अच्छी तरह समझता हूँ कि मेरी इस मित्रकी तरह ही अन्य मित्र भी महसूस करते है। एक अन्य अंग्रेज पत्र-लेखकने इसी विचारको ज्यादा दो टूक शब्दोमे व्यक्त किया है। उनका कहना है कि मै बुराईको शायद इसीलिए बरदाश्त करता हूँ कि उससे भलाई पैदा हो सके। मै दोनों ही पत्र-लेखकोंको यकीन दिलाता हूँ कि मैं यदि कुछ चाहता हूँ तो केवल सत्यकी विजय चाहता हूँ। मैंने कभी भी इसपर विश्वास नही किया और आज भी नही करता कि लक्ष्य ही सब-कुछ है। उसे प्राप्त करनेके लिए शुद्ध-अशुद्ध कैसे भी साधन अपनाये जा सकते है। बल्कि इसके विपरीत मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि लक्ष्य और उसे प्राप्त करनेके साधनोंमें एक अन्तरग सम्बन्ध रहता है, इतना कि आप भले लक्ष्यको बुरे साधनोंके जरिये प्राप्त नही कर सकते। और कमसे-कम मुझे तो इसकी बिलकुल जानकारी नही कि मैंने सत्य और न्यायकी अपनी मान्यताओमें किंचित् भी कभी कोई कसर आने दी हो। मै तो समझता हूँ कि अगर मै कभी क्षण-भरके लिए भी सत्यके पथसे विचलित हुआ होता तो बहुत पहले ही लोगोकी नजरोमे गिर चुका होता। मै बहुत अच्छी तरह जानता हूँ कि मै एक बहुत ही खतरनाक और कठिन परीक्षण कर रहा हूँ। हजारों मुसलमानोको और यो हिन्दुओंको भी, अहिंसा अपनाने और सर्वथा अहिंसक आचरण करनेके लिए तैयार करना सचमुच एक बड़ा खतरनाक प्रयोग है, क्योकि उनकी धार्मिक आस्था उनको परिस्थिति विशेषमे हिंसात्मक आचरण करनेकी अनुमति देती है। मेरा यही दुर्भाग्य रहा है कि मैंने जब भी किसी नये कामका बीड़ा उठाया है, लोगोने मुझे पहले गलत ही समझा है। मेरे मित्र और शत्रु दोनो ही नये उद्देश्यकी बातपर चौक उठते है (उनके लिए वह नया ही होता है)। इस सनातन सत्यको चरितार्थ करनेकी बात उनको अजीब और नई मालूम पड़ती है। दक्षिण आफ्रिकामें गड़बडी पैदा करनेका आरोप तो मेरे ऊपर इतने जोर-शोरसे लगाया गया था कि अक्सर यही लगता था कि मुझे अपने अच्छेसे-अच्छे मित्र भी खो देने पड़ेंगे। बादमे मेरे अधिकांश मित्र और शत्रु भी मानने लगे थे कि मै सही रास्तेपर चल रहा हूँ। मैं जिस सिद्धान्तको व्यावहारिक जीवनमे चरितार्थ करनेकी कोशिश कर रहा था उसे उन्होने समझा नही था। इसीलिए मैं महसूस करता हूँ कि असहयोगका भी वही हाल हुआ है। मैं तो असहयोगको नैतिक आचरणका सबसे अधिक शिष्ट और सौम्यतापूर्ण तरीका मानता हूँ। केवल असहयोगके जरिये ही अंग्रेजों और भारतीयोके बीच सही किस्मकी सच्ची समझदारी और सहयोग पैदा किया जा सकता है। केवल इसी एक मार्गसे पूर्व और पश्चिममे सच्ची मित्रता स्थापित की जा सकती है। असहयोगके मार्गपर चलकर ही भारत अपनी उत्कृष्ट संस्कृतिकी ऊँचाइयोतक उठ सकता है। ऊपरसे लक्षण कुछ भी क्यों न मालूम पड़ते हो, उन सबके बावजूद, मुझे वह दिन निकटतर आता दीख रहा है जब अंग्रेज और भारतीय एक-दूसरेको परस्पर मित्र और सहयोगी मानने लगेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-८-१९२१

२५०. सफलताकी शर्तें

विदेशी वस्त्रोके बहिष्कारका कार्यक्रम ३० सितम्बरसे पहले ही समाप्त कर लेना हो तो निस्सन्देह हमे अपनी रुचिको सुधारना, सादगीको अपनाना और अपनी आवश्यकताओको घटाकर कमसे-कम करना आवश्यक है। किसी भी असहयोगीके लिए तीनसे अधिक वस्त्र पहनना अनुचित है। हमे बेजवाड़ाके महीन वस्त्रोके लिए लालायित नही होना चाहिए, बल्कि मामूलीसे-मामूली खादी पहनकर सन्तोष कर लेना चाहिए। किन्तु यह भी केवल प्राथमिक बात हुई। बिना व्यावसायिक रीतिको अपनाये स्वदेशीमे सफलता नही मिल सकेगी। अबतक हम छात्रोमे काम करनेका प्रयत्न करते रहे और उन्होने अपने ज्ञान तथा योग्यताके अनुसार हमारा साथ दिया। बहुत-से असहयोगी छात्र धरना देनेवालो तथा प्रचारकोके रूपमे साहसपूर्ण कार्य कर रहे है। एक असहयोगी स्कूलमे सभी सार्वजनिक कार्य हो रहा है। किन्तु हम केवल स्कूलके जरिये स्वदेशीमे सफलता नही प्राप्त कर सकते। हमे तो भारतके बुनकरोके हृदयोको छूना होगा। हमे उन्हे सगठित करना होगा। जिन बुनकरोने गुंजाइश न होनेके कारण अपना पेशा छोड़ दिया है उन्हे फिरसे अपना पेशा अपनानेके लिए प्रेरित करना होगा। हमे उनकी सभा बुलानी होगी और उन्हे बताना होगा कि उनको क्यो हाथकता सूत बुनना चाहिए। चाहे हाथका कता सूत अ-सम ही क्यो न हो फिर भी विदेशी सूतको छूना वे क्यो पाप माने यह भी उन्हे समझाया जाना चाहिए। इसी प्रकार हमे धुनियोको प्रेरित करना होगा कि वे कातनेके लिए पूनियाँ तैयार करे। हमें कपड़ेके व्यापारियोको भी प्रेरित करना होगा कि वे अपने व्यापारमे देशभक्तिका खयाल रखकर हाथ-बुना कपड़ा बेचें और विदेशी कपड़ा बेचना छोड़ दे। हमें स्वदेशी दूकानोके लिए ऐसे निरीक्षक रखने होगे जो विदेशी तथा स्वदेशी वस्त्रो एव हाथ-बुने तथा मशीन-बुने वस्त्रोका भेद समझनेमें प्रवीण हो। जबतक विशाल परिमाणमे हम अपनेको सगठित नही करते तबतक यह बड़ा भारी काम सम्पन्न नही हो सकता। और इस प्रकारका सगठन तबतक सर्वथा असम्भव है जबतक कि काग्रेसकी प्रत्येक सस्था स्वदेशीपर पूर्ण रूपसे ध्यान नही देती, अर्थात् अन्य सब काम छोड़कर विदेशीका बहिष्कार तथा स्वदेशीका उत्पादन नही करती।

इसमे कोई सन्देह नही कि प्रत्येक गाँवका आदर्श है कि अपने लिए उसी प्रकार सूत काते और बुने जिस प्रकार कि आज बहुतसे गाँव अपनी जरूरतके लिए अन्न स्वयमेव उगा लेते है। अपने लिए पूरा अन्न उगानेकी अपेक्षा सूत कातना और बुनना कही सरल है। प्रत्येक गाँव गेहूँ या चावल नही उगा सकता, किन्तु प्रत्येक गाँव पर्याप्त रुई पैदा कर सकता है और बिना किसी कठिनाईके उसे कात और बुन सकता है। अलबत्ता इस शुभ वस्तु-स्थितितक पहुँचनेमे हमे कुछ समय तो अवश्य लगेगा। इस बीच वे प्रान्त जो इस कार्यके लिए पूर्ण रूपसे सगठित है, जैसे कि पंजाब, न केवल अपने बाजारसे सारा विदेशी कपड़ा तुरन्त निकाल बाहर फेंके बल्कि वे

अपनी अतिरिक्त खादीको भारतके उन भागोमे निर्यात करे जहाँ उसकी जरूरत है। प्रान्तोमें खादीके उत्पादनकी दृष्टिसे पंजाब, आन्ध्र, बिहार तथा गुजरात सबसे अधिक सगठित प्रतीत होते है। उन्हे खादीकी आवश्यकताका पूर्वानुमान लगाकर इस काममे जुट जाना चाहिए।

यदि हमे इस बड़े तथा शानदार कामको अजाम देना है तो हमे बाते बनाना छोड़ देना चाहिए; या हम बाते करे भी तो वे व्यावसायिक होनी चाहिए। हमे प्रत्येक बातपर तू-तू मैं-मैं करना तथा व्यर्थकी आपत्ति उठाना छोड देना चाहिए। साथ ही यदि कोई इन बातोमे पड़नेपर जोर देता हो तो हमें उससे भी किनारा काट लेना चाहिए। काग्रेसको उन प्रतिभावान वकीलोके लिए वादविवादकी गोष्ठी नही बने रहना है जो अपनी वकालत नही छोड़ना चाहते, बल्कि अब उसमें उत्पादक, निर्माता तथा वे लोग आने चाहिए जो इन बातोको समझ सके, इनमे सहायता पहुँचा सकें तथा अपनी तत्सम्बन्धी भावनाओको व्यक्त कर सके। वकालत करनेवाले वकील मौन कार्यकर्त्ता बनकर तथा चन्दा देकर सहायता कर सकते है। प्रकाशमें आनेकी उनकी इच्छाके साथ मेरी सहानुभूति है। किन्तु मै उनसे अर्ज करूँगा कि वे अपनी सीमाओको पहचानें। उनका दिन उस समय आयेगा जब कि राष्ट्र पुन· ऐसी स्थितिमे आ जाये कि वह न्याय और विधानके लिए कानूनी अदालतो तथा विधान सभाओमे जा सके। आज इनमे से किसीपर भी उसका विश्वास नही है क्योकि वे इतनी भ्रष्ट हैं कि उसका वर्णन नही हो सकता। जब सरकार और जनताके बीचका सवाल उठता है तब कानून तथा कानूनी अदालते दोनों न्याय नही कर पाते। उनकी उपयोगिताकी परीक्षा इन्ही दोनोंके बीच प्रश्न उठनेपर ठीक-ठीक न्याय करनेकी उनकी योग्यतापर निर्भर करती है न कि इस बातपर कि वे लोगोके ही विभिन्न दलोमे कानूनका ठीक उपयोग कैसे करती हैं। दूसरे प्रकारका न्याय तो ऐसा ही है जैसे शेर मध्यस्थ बनकर मेमनोको एक दूसरेको खा जानेसे या बीमारीके कारण मरनेसे इस उद्देश्यसे बचा ले कि वह उन सबका भक्षण कर सके।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-८-१९२१

२५१. भारतीय महिलाओंसे

प्रिय बहनो,

अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीने विदेशी वस्त्रोके पूर्ण बहिष्कारके लिए आगामी ३० सितम्बर अन्तिम तारीख निश्चित की है। यह बहिष्कार बम्बईमे ३१ जुलाईको लोकमान्य तिलककी स्मृतिमे प्रज्ज्वलित बलिदानकी अग्निसे प्रारम्भ किया गया था। जिन मूल्यवान साडियो तथा पोशाकोको आप अबतक बढ़िया और सुन्दर समझती रही हैं, उनके विशाल ढेरमे आग लगानेका श्रेय मुझे दिया गया था। मेरा विचार है कि जिन बहनोने उसके लिए अपने कीमती कपडे दे दिये थे उन्होने ठीक और समझदारीका काम किया था। जिस प्रकार प्लेगके कीटाणुओसे युक्त वस्तुओको नष्ट कर देना ही उनका सर्वोत्तम उपयोग है उसी प्रकार विदेशी वस्त्रोका सर्वोत्तम उपयोग उन्हे नष्ट कर देना ही है। राजनीतिके शरीरको और भी भयानक रोगोसे बचानेके लिए की गई यह एक शल्यक्रिया है।

भारतीय महिलाओने पिछले बारह महीनोमे मातृभूमिके लिए जबरदस्त काम किया है। आप लोग दयाके देवदूतोकी तरह चुपचाप कार्य करती रही। आपने नकद राशि और कीमती आभूषण दिये। आप चन्दा एकत्र करनेके लिए घर-घर घूमी। आपमेसे कुछने तो धरना देनेमे भी सहायता की। आपमे से कुछ जो रग-बिरगी बढिया पोशाके पहनती थी और दिनमे कई बार अपनी पोशाके बदलती थी, अब सफेद और निष्कलक किन्तु मोटी खादीकी साड़ियाँ पहनने लगी हैं। ये साड़ियाँ स्त्रीकी सहज पवित्रताकी याद दिलाती हैं। आपने यह-सब भारतके लिए, खिलाफतके लिए और पंजाबके लिए किया है। आपकी वाणी और कार्यमे किसी प्रकारका छल नही है। आपका बलिदान सर्वथा शुद्ध है; उसमे क्रोध या घृणाका लेश भी नही है। मै आपके सामने यह स्वीकार करना चाहता हूँ कि भारत-भरमे आपने स्वत. प्रेरित होकर प्रेमपूर्वक आन्दोलनके प्रति जो अनुकूल प्रतिक्रिया दिखाई उससे मुझे विश्वास हो गया है कि ईश्वर हमारे साथ है। हमारा सघर्ष आत्मशुद्धिका संघर्ष है, यह इसी बातसे प्रमाणित हो जाता है कि भारतकी लाखो महिलाएँ सक्रिय रूपसे इसकी सहायता कर रही हैं।

आपने काफी दिया है, किन्तु अभी और भी देना आवश्यक है। तिलक स्वराज्य-कोषमे पुरुषोने अधिक चन्दा दिया है। किन्तु स्वदेशीका कार्यक्रम तभी पूरा हो सकता है जब कि आप उसमे प्रमुख रूपसे भाग ले। "जबतक आप अपने सारे विदेशी कपड़े नही दे डालती" तबतक बहिष्कार असम्भव है। जबतक उनमें आपकी रुचि रहेगी तबतक उन्हे आप छोड़ नहीं सकेगी, उनका बहिष्कार नही कर सकेगी। बहिष्कारका अर्थ है सम्पूर्ण परित्याग। भगवान् जो बच्चे हमे देता है हम उन्हे पाकर खुश रहते है और उसे भगवान्की कृपा मानते है, उसी प्रकार जो कपड़ा देशमे ही बन सकता है उससे हमें सन्तुष्ट रहना सीख लेना चाहिए। मै तो ऐसी किसी माँको नही जानता जिसने किसी बाहरी व्यक्तिके कुरूप कहनेपर अपने बच्चेको फेंक दिया हो। भारतमें

निर्मित वस्तुओके प्रति देशभक्त महिलाओका भाव ऐसा ही होना चाहिए। आपके लिए तो भारतीय वस्त्रका मतलब हाथ-कता और हाथ-बुना वस्त्र ही हो सकता है, और इस सक्रान्ति-कालमे बहुतायतसे केवल मोटी खादी ही मिल सकती है। आप अपनी रुचिके अनुरूप आवश्यक कला-कौशलका प्रयोग करके उसे जितना बने सुन्दर बना लें। यदि आप कुछ महीनोतक मोटी खादीसे ही सन्तुष्ट हो जायें तो हम आशा कर सकते है कि आगे चलकर फिर देशमे पुराने जमानेकी तरह वैसा महीन, मूल्यवान् और सुन्दर कपड़ा बनने लगेगा, जिसे एक समय संसार ईर्ष्यासे देखता रह जाता था। मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि छ. महीने भी यदि आपने इतना आत्म-त्याग किया तो यह बात आपकी समझमे आ जायेगी कि जिसे आज हम कला कहते है वह बनावटी कला है; सच्ची कला केवल बाहरी आकारको नही देखती बल्कि जो-कुछ उसके पीछे है उसे भी देखती है। एक कला वह है जो नाश करती है और दूसरी वह है जो जीवन देती है। जो महीन कपडा हम पश्चिम या सुदूर पूर्वसे मँगाते है, वास्तवमे उसने हमारे लाखो भाई-बहनोको खत्म कर दिया और हमारी हजारो बहनोंको शर्मनाक जिन्दगी बितानेके लिए मजबूर किया है। सच्ची कला कलाकारकी प्रसन्नता, परितृप्ति तथा पवित्रताकी द्योतक होती है और यदि आप हमारे बीच इस प्रकारकी कलाको पुनरुज्जीवित करना चाहती है तो आपमें जो श्रेष्ठ है उनके लिए फिलहाल खादीका उपयोग करना कर्त्तव्यरूप है।

स्वदेशीके कार्यक्रमकी सफलताके लिए न केवल खादीका उपयोग वरन् यह भी आवश्यक है कि आपमे से प्रत्येक अपनी फुरसतके समय चरखा काते। मैंने बालको और पुरुषोके लिए भी यही सुझाव दिया है। आज उनमें से हजारो रोजाना चरखा कात भी रहे है। किन्तु जैसा पहले होता था चरखा कातनेका काम प्रमुख रूपसे आप लोगोको उठाना चाहिए। दो सौ वर्ष पूर्व भारतकी महिलाएँ न केवल घरकी बल्कि विदेशोकी माँगको पूरा करनेके लिए भी कातती थीं। वे केवल मोटा सूत ही नही, दुनियामे किसी भी समय जो महीनसे-महीन सूत काता गया है वैसा महीन सूत भी कातती थी। हमारे पूर्वज जितना महीन सूत कातते थे उतना महीन सूत आजतक कोई मशीन भी नही कात सकी। इसलिए यदि हमें इन दो महीनोमे और उसके बाद खादीकी माँग पूरी करनी है तो आपको कताई-मण्डल बनाकर तथा कताईकी प्रतियोगिताएँ चलाकर भारतीय बाजारको हाथकते सूतसे पाट देना चाहिए। इस उद्देश्यके लिए आपमें से कुछको कातने, धुनने तथा चरखोको दुरुस्त करनेमे सिद्धहस्त होना चाहिए। इसका अर्थ है निरन्तर परिश्रम करते रहना। आप सूत कातनेको आजीविकाका साधन न समझेंगी। मध्य-वर्गके परिवारकी आय उससे बढ़ेगी। अलबत्ता बहुत ही गरीब स्त्रियोके लिए यह आजीविकाका साधन है। चरखेको पहलेकी तरह विधवाओका सहारा बनना है। किन्तु जो इस अपीलको पढ़ेंगी उनके सामने तो मै चरखा यही कहकर पेश करना चाहता हूँ कि उसे चलाना आपका कर्त्तव्य और धर्म है। यदि भारतकी सभी सम्पन्न महिलाएँ प्रतिदिन एक निश्चित मात्रामें सूत कातने लगें तो उससे सूत सस्ता हो जायेगा और उसमे इतनी जल्दी आवश्यक सुन्दरता ले आयेंगी जितनी जल्दी कि अन्य उपायोसे सम्भव नही।

इसलिए भारतकी नैतिक और आर्थिक मुक्ति प्रमुख रूपसे आपपर निर्भर करती है। भारतका भविष्य आपपर ही निर्भर है, क्योंकि भावी पीढ़ीका लालन-पालन आपके ही हाथमें है। आप चाहें तो भारतके बच्चोंका इस प्रकार लालन-पालन कर सकती हैं जिससे वे सादगी-पसन्द, ईश्वरप्रेमी और वीर स्त्री-पुरुष बनें; और आप चाहें तो वे कमजोर, जीवनकी आँधी झेलनेके लिए अनुपयुक्त तथा उन महीन विदेशी वस्त्रोंका उपयोग करनेवाले भी बन सकते हैं जिन्हें छोड़ने में फिर वे कठिनाई महसूस करेंगे। आगामी कुछ सप्ताहोंमें मालूम हो जायेगा कि भारतकी महिलाएँ किस मिट्टीकी बनी हैं। मुझे इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं कि आप क्या चुनेंगी। भारतका भाग्य जितना आपपर निर्भर करता है उतना उस सरकारपर नहीं, जिसने भारतका इतना शोषण किया है कि उसका खुद अपनेपर ही विश्वास नहीं रहा। महिलाओंकी प्रत्येक सभामें मैंने राष्ट्रीय प्रयत्नोंकी सफलताके लिए आपके आशीर्वाद-की माँग की है और मैंने ऐसा इस विश्वासके साथ किया है कि आप पवित्र हैं, आपको सादगी पसन्द है और आपमें आशीर्वाद देने योग्य धर्मपरायणता है। विदेशी वस्त्रोंका उपयोग छोड़कर और अपनी फुरसतके समय राष्ट्रके लिए नियमित रूपसे चरखा कातकर आप अपने आशीर्वादको निश्चय ही सफल बना सकती हैं।

आपका स्नेही भाई,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११–८–१९२१

२५२. भाषण : गयामें[1]

१२ अगस्त, १९२१

महात्मा गांधीने श्रोताओंको सम्बोधित करते हुए कहा कि मुझे इस बातपर शर्म महसूस हो रही है कि मैं गो-रक्षाके प्रश्नपर भाषण देनेके लिए इलाहाबादसे यहाँ आया हूँ। दो मौलानाओंने[2] आपको बताया कि उस विषयपर उनका धर्म क्या कहता है। कोई व्यक्ति गायत्री न जपने तथा सन्ध्या और गायकी रक्षा न करनेपर भी हिन्दू कहला सकता है। साथ ही हिन्दू धर्म आपको मुसलमानों या अंग्रेजोंको मारनेके लिए भी नहीं कहता। आपको गायकी कुर्बानीसे होनेवाले दुःखको सहनेके लिए तैयार रहना चाहिए।

१. गांधीजीने ९–३० बजे रातको एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया था जिसमें लगभग २०,००० व्यक्ति उपस्थित थे। उनके साथ मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना आजाद सुभानी भी थे।

२. मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना आजाद सुभानी जिन्होंने उनसे पहले भाषण दिये थे।

मैं दीर्घकालसे इस तथ्यपर जोर देता आ रहा हूँ कि मुसलमानोंके प्रति हिन्दुओंके वैरके कारण गोवध होता है। मान लो यदि गयाकी ६५,००० आबादी १०,००० मुस्लिमोंसे बलपूर्वक गोवध बन्द कराना चाहे तो जरूर मुसलमानोंमें से कोई आगे आकर कहेगा: "मैं तुम्हारे सामने ही गोवध करूँगा।"

मुसलमानोंके हाथोंसे गायको छीन लेना हिन्दुत्वके अनुकूल नहीं है। 'गीता' में कहा है कि जबरदस्ती करना धर्मानुकूल नहीं है और बलप्रयोगमें भी धर्म नहीं है। 'रामायण' और 'गीता' दोनोंसे यही निष्कर्ष निकलता है। धर्मका रहस्य शान्ति बनाये रखनेमें है न कि भाइयोंको बुरा-भला कहनेमें। आप प्रार्थना कर सकते हैं किन्तु बलप्रयोग नहीं कर सकते। यदि कोई हिन्दू इन सिद्धान्तोंके विरुद्ध चलता है तो उसके बारेमें कहा जा सकता है कि उसने 'महाभारत' और 'मनुस्मृति' दोनों ही नहीं पढ़े। हिन्दुओंको खिलाफतकी रक्षा करनी चाहिए। यदि आप शान्ति और एकताके साथ कार्य करते हैं तो भारतीयोंके प्रति प्रेमकी भावना उत्पन्न होगी। यदि आप खिलाफतका समर्थन करेंगे तो गोवध अपने आप समाप्त हो जायेगा। हिन्दुओंको ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि मुसलमान उनके दुश्मन हैं। बम्बईमें सर्वश्री छोटानी तथा खत्रीने सैकड़ों गायोंको बचाया। यदि आप गौओंको मुसलमान भाइयोंके विवेकपर छोड़ दें तो गोरक्षा हो जायेगी।

यदि सरकारी कर्मचारी आपका साथ नहीं देते तो आप उनपर न तो आक्रमण करें और न उन्हें गाली ही दें। आपका कर्त्तव्य है कि आप उन्हें प्यार करें।

तीसरा मुद्दा जिसपर मैं जोर देना चाहता हूँ, वह स्वदेशी है। बिहार एक सुन्दर और पवित्र स्थान है। एक समय था जब यहाँ बहुत व्यापार होता था। बिहारके बहुतसे लोगोंने ईस्ट इंडिया कम्पनीकी नौकरियाँ स्वीकार कर ली थीं। पहले-पहल मुझे यहाँ स्वदेशीका उपक्रम करनेमें बड़ी कठिनाई हुई थी। चम्पारनमें जिन बालकोंने स्वदेशीका अनुसरण किया उनका मजाक उड़ाया गया। यह ईश्वरकी महिमा है कि धीरे-धीरे इसकी आवश्यकता अनुभव की जा रही है। मैंने देखा कि एक (गयावाल) पण्डेका लड़का सिरसे पाँवतक विदेशी वस्त्र पहने है। मुझे इससे बड़ा दुःख हुआ। यह जानकर मेरे हृदयको बड़ा दुःख हुआ कि पण्डे लोग इतने नासमझ हो गए हैं। पण्डे तो धर्मके संरक्षक और संन्यासी हैं। उन्होंने आगे कहा: आप लोगोंको वेश्या-गमन और जुआ खेलना छोड़ देना चाहिए अन्यथा आपको स्वराज्यकी आशा नहीं करनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, २१-८-१९२१

२५३. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

बिहार शरीफ
१३ अगस्त [१९२१][1]

प्रिय चार्ली,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। मैं जानता हूँ, सारे आन्दोलनकी योजना गरीबोके प्रति सेवा-भावनाको लेकर बनाई गई है, इसलिए मेरा विदेशी वस्त्रोकी होली जलाना गलत हो ही नही सकता। चूंकि विदेशी वस्त्रोंका अब हमारे लिए कोई उपयोग नही रहा है, इसलिए उन्हे गरीबोमे बाँट देना मुझे नितान्त अपमानजनक लगता है। यह तो वही वस्त्र है, जिसने देशमे गरीबी फैलाई और हजारो स्त्रियोको शर्मनाक जिंदगी बितानेपर मजबूर किया। हजारों सडी-गली टोपियोकी बात तो दूर रही, यदि रेशमी रूमालो, महीन साड़ियो और उनसे भी महीन कमीजोको गरीबोमे बाँट दिया जाये तो स्वय गरीब ही यह नही समझ सकेगे कि अचानक उनपर यह दया क्यो हो रही है। विदेशी वस्त्रोको जलानेका प्रमुख उद्देश्य यह है कि हमने विचारपूर्वक गरीबोको हानि पहुँचाकर अपनेको जो विदेशी वस्त्रोसे सुसज्जित किया है, उनके प्रति हमारे हृदयमे अत्यन्त घृणा उत्पन्न हो। हाँ, मुझे उन विदेशी वस्त्रोको पहनना पाप समझनेमे कोई बुराई नजर नही आती जिनका उद्देश्य भारतका अपमान करना और उसे गुलाम बनाना है। मैं इस समय इस प्रयत्नमें हूँ कि शल्यक्रिया हाथको दृढ रखकर की जाये जिससे वह सुचारु रूपसे हो सके। मैं उस वस्त्रका आदर करूँगा जिसे किसी यूरोपीय बहनने प्रेमके साथ तैयार किया हो, किन्तु फिर भी मैं उस निषिद्ध वस्त्रका उपयोग करनेको राजी नही हो सकता क्योकि किसी व्यक्तिको माँके हाथसे भी ऐसा अपाच्य भोजन स्वीकार करनेके लिए तैयार नही होना चाहिए जिसे वह प्रेमके कारण अज्ञानवश दे रही हो। श्रीमती रॉबर्ट्सने मेरे लिए एक ऐसी चीज भेजी थी जिसमें उनकी दृष्टिसे, दूधके सब गुण मौजूद थे किन्तु जो गायके दूधसे नही बनाई गई थी। किन्तु जब मुझे मालूम हुआ कि वह दूधसे बनाई गई है तब मैंने तुरन्त उन्हे यह बात बताई और उसका उपयोग न करनेकी छूट माँगी। उन्होने न केवल मेरे दृष्टि-कोणको समझा बल्कि गलतीके लिए क्षमा-याचना भी की। तथ्य यह है कि मैं जीवनमे अनुशासन और सयम चाहता हूँ। तथाकथित योगियो द्वारा अपने शरीरको दी जानेवाली यातनामे अक्सर उक्त गुण विकृतिके रूपमे दिखाई देते हैं। किन्तु उनके मूलतत्त्व अत्यधिक जाँच-पड़तालमे भी खरे उतरेगे। तुम इसका ठीक अनुमान नही लगा सकते कि वे लोग जो पापीसे घृणा करते थे किस प्रकार चुपचाप अनजाने ही पापीके बजाय पापसे घृणा करने लगे हैं। पहली अगस्तको बम्बईकी अंग्रेज महिलाओको [भारतीयोसे सावधान रहनेको] चेताया गया था! किन्तु उस दिन स्टोक्स और एक

१. गांधीजी १९२१ में इन्हीं दिनों बिहार शरीफमें थे।

अंग्रेज नर्स प्लेटफार्मपर लगभग तीन लाख भारतीय स्त्री-पुरुषोके बीचमे खड़े थे। भगवान् ही जानता है कि यह सब अन्तमे क्या रग लायेगा। मै तो इतना ही जानता हूँ कि आज बहुतसे लोग ऐसे है जो यह सब मानव-प्रेमके कारण कर रहे हैं।

हाँ, पेटिटके पास जो पैसा है वह मेरा ही है किन्तु मेरा उसपर नियन्त्रण नही है। अच्छा होता कि तुम उनकी इनकारीके बारेमे मुझे पहले सूचना दे देते। मै प्रयत्न करूँगा। कृपया मुझे बताओ कि मालवीयजीने क्या कहा है। यदि वास्तवमें तुम्हे कोई कठिनाई महसूस होती हो तो मेरी सहायता ले सकते हो। तुम्हारे प्रस्थानकी अन्तिम तारीख क्या है?

मैंने स्टोक्सके साथ अच्छा समय बिताया है। हम सयुक्त-प्रान्तका दौरा करते समय छ. दिनतक साथ-साथ रहे।

मै तुमसे सहमत हूँ कि हमे अफीमके विरुद्ध भी उसी तरह कार्य करना चाहिए जिस प्रकार हम मद्यपानके विरुद्ध कर रहे हैं। मै यह निश्चित रूपसे अनुभव कर रहा हूँ कि यदि स्वदेशीका कार्यक्रम उचित रूपसे आगे बढता रहा और शान्ति तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता कायम रही तो हम जरूर इस वर्षके अन्दर स्वराज्य प्राप्त कर लेगे। तब नई जिन्दगीकी शुरुआतके साथ-साथ अफीम तथा इसी प्रकारकी अन्य घृणित वस्तुएँ भी समाप्त हो जायेंगी।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मोहन

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ९६२) की फोटो-नकलसे।

२५४. पत्र : महादेव देसाईको

गया
शनिवार [१३ अगस्त, १९२१][1]

भाईश्री महादेव,

तुम्हारा पत्र मिला। आत्मार्पणमें मौलिक सृजनकी शक्तिका लोप नही होता और न ही होना चाहिए। आत्मार्पणका अर्थ इतना ही है कि मनुष्य अपनी लघुताको समझता है और जिसका भरोसा करता है, उसका अवलम्ब लेता है। जब किसी विषयमे शका होती है तो वह अपनी बातपर आग्रह नही रखता; प्रत्युत अपने साथीके आग्रहको ठीक मान लेता है। अर्जुनने कृष्णके सम्मुख जिज्ञासा करनेमे कमी नही रखी। कच्छप

१. प्रोफेसर कृपलानीने गांधीजीको अपने साथ किसी बंगालीको रखनेका सुझाव इसी दिन दिया था और उसका उल्लेख इस पत्रमें है। उनके इस सुझावके तत्काल बाद कृष्णदास गांधीजीके साथ रहने लग गये थे।

प्रभु-भक्त था। कच्छपीने अन्ततक ईश्वरका नाम लिया। यद्यपि . . . ने[1] अपने मन्त्रियोंका तिरस्कार किया और उनको राज्यसे निकाल दिया, किन्तु वह ईश्वरसे द्रोह तो करता ही रहा। आत्मार्पणका अर्थ यह नही है कि मनुष्य स्वय अपनी विचार-शक्तिको ही गँवा बैठे। शुद्ध आत्मार्पणका परिणाम विचार-शक्तिका कुण्ठित हो जाना नही, उसका तीव्र होना है। ऐसा मनुष्य यह समझकर कि उसका एक अन्तिम अवलम्ब तो है ही, अपनी मर्यादाके भीतर रहता हुआ सहस्रो प्रयोग करता रहता है। किन्तु उन सबके मूलमे उसकी विनम्रता रहती है, उसका ज्ञान और विवेक रहता है। मै मानता हूँ कि मेरे प्रति मगनलालकी आत्मार्पण-बुद्धि बहुत अधिक है, किन्तु फिर भी उसने स्वय विचार करना कभी नही छोडा, मेरी ऐसी मान्यता है। तुम्हारा आचरण उससे भिन्न है। तुममे साहसकी कमी है, जब भी सहारा मिलता है तुम साहस खो देते हो। बहु-पठित होनेसे तुम्हारी अपनी सृजनकी शक्ति कुण्ठित हो गई है; इसी कारण तुम सहकारी होना चाहते हो। मनुष्य स्वतन्त्र कार्य करनेकी इच्छा रखते हुए भी अति विनम्र हो सकता है।

तुम जिस दृष्टिसे मेरे साथ रहना चाह रहे हो, वह शुद्ध है, किन्तु वह भ्रमयुक्त है। तुम तो केवल पश्चिमका अनुकरण करना चाहते हो। यदि मै किसी मनुष्यको अपने कार्यका लेखा रखनेके उद्देश्यसे ही सदा अपने साथ रखूँ तो स्वय मेरा यह व्यवहार अस्वाभाविक हो जायेगा। कोई सामान्यत. मेरे साथ रहे और मेरे कार्यका लेखा अदृश्य रूपसे रखे, यह एक बात है और कोई इसी इरादेसे साथ रहकर लेखा रखे, यह बिलकुल दूसरी बात है। रामके कार्यका लेखा किसने रखा था? उसका लेखा नही रखा गया, इससे कोई हानि तो नही हुई। जॉन्सनके कार्यका लेखा पूरा रखा गया उससे दुनियाको कोई अनुपम लाभ हुआ हो ऐसा मुझे नही दीखता। हम इस बातपर केवल साहित्यिक दृष्टिसे ही तो विचार नही करते। किन्तु मै यह तो चाहता ही हूँ कि तुम मेरे साथ हर वक्त रहो। तुम्हारी ग्रहणशक्ति और तैयारी अच्छी है, इसलिए मै चाहता हूँ कि तुम मेरी सभी बाते जान लो। मेरे मस्तिष्कमे विचार बहुत है, किन्तु वे प्रसंग आनेपर ही व्यक्त होते है। उनमे कई सूक्ष्मताएँ होती है, जो किसीको दिखाई नही दे सकती। वसन्तराम शास्त्रीके पत्रपर[2] की गई मेरी शुद्ध टीका न काका[3] समझे और न स्वामी।[4] उसे उनसे कुछ अधिक तुमने समझा। उस टीकामें निहित मेरी मृदुलता किसीको दिखाई नही दी। यदि तुम जैसा कोई मनुष्य मेरे साथ रहे तो वह अन्तमे मेरे कामको हाथमे ले सकता है, यह लोभ मेरे मनमे रहता है। मेरी अभी तुमको किसी एक काममे लगा देनेकी इच्छा नही होती, प्रत्युत मै तुमको अनुभव कराना चाहता हूँ। फिर जिन लोगोको मै जानता हूँ उन सबसे तुम्हारा सम्पर्क हो जाये तो भविष्यमे इस प्रवृत्तिको चलानेमे सुविधा रहेगी।

१. साधन-सूत्रमें यह अंश अस्पष्ट है।
२. देखिए "टिप्पणियाँ", १७-७-१९२१।
३. काका कालेलकर।
४. स्वामी आनन्द।

वालजी[1] और स्वामीका तार मिला है कि अगले अंकोमे भूल नही होगी। प्रोफेसरने[2] फिर यह इच्छा प्रकट की है कि मै अपने साथ किसी बगालीको रखूं। इसलिए तुम जब वहाँसे निवृत्त हो जाओ तब यहाँ मेरे पास आ जाओ, यह ठीक रहेगा। यदि तुम स्वय 'यग इडिया'के कार्यको हाथमे लेकर उसको स्वतन्त्र रूपसे चलाना चाहो तो इसमें मुझे कोई आपत्ति नही है। किन्तु मै तो यही ठीक मानता हूँ। मेरे जानेपर 'यग इडिया' अनावश्यक हो जायेगा। यदि तुममे से कुछ लोगोको यह विश्वास हो कि तुम मेरे जानेपर मेरे सन्देशको पहुँचाते रहोगे तो तुम इसे चलाओगे। किन्तु इसके लिए भी मुझे तुम्हारा उसमें रहना जरूरी नही जान पडता। इससे पहले मुझे यह जरूरत जान पड़ती है कि तुम विविध अनुभव प्राप्त करके परिपक्व हो जाओ। तब तुम 'यग इडिया'को अधिक कुशलतासे चला सकोगे। 'इंडिपेंडेंट'के सम्बन्धमें जवाहरलालसे बात कर लो। उन्हे सयुक्त-प्रान्तके ही किसी व्यक्तिको ढूंढना चाहिए। हिन्दुस्तानीके इतने बड़े क्षेत्रमें से क्या कोई न मिलेगा। कपिलदेव मालवीय[3] कैसे है? जो भी हो, इन सब बातोपर जवाहरलालसे बातचीत कर लो।

तुमने २५,००० रुपयेकी अच्छी याद दिलाई। मै इस सम्बन्धमे सब व्यवस्था किये दे रहा हूँ। छपाई सुधरनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

मैं देवदासको अभी वहीं रहनेके लिए लिख रहा हूँ। पत्रको लिखकर पढनेका समय नही मिला हैं।

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१७) की फोटो-नकलसे।

२५५. पत्र: मथुरादास त्रिकमजीको

शनिवार [१३ अगस्त, १९२१][4]

आप इतने सख्त बीमार हो गये थे, इसका मुझे अनुमान नही था। फिर भी आपसे आकर मिलनेकी आशा तो अन्ततक किये रहा। किन्तु आ कैसे सकता था? मैं बोरीबन्दर समयसे पाँच ही मिनट पहले पहुँचा था। फिर एकके बाद दूसरा काम निकलता चला गया। आप जो आशा करते हैं उसे मैं समझता हूँ; किन्तु मुझे अपने अत्यन्त प्रियजनों [से मिलने]की इच्छा छोड़नी भी पड़ती है। मेरे सम्मुख ऐसे अनेक

१. वालजी गोविन्दजी देसाई।

२. आचार्य जीवतराम बी० कृपलानी (जन्म १८८८); शिक्षाविद्, राजनीतिज्ञ और १९४६ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष।

३. उत्तर प्रदेशके एक राजनैतिक कार्यकर्ता।

४. साधन-सूत्रमें यही तारीख दी गई है।

प्रसग आ चुके है। और मेरे लिए यही उचित है। इसलिए आप मुझसे आशा करते है, यह मानते हुए मैं यह भी कहता हूँ कि यदि आपकी आशा नही फली तो आप निराश भी न हो। और भविष्यमे जब आपका बहुत मन हो तो मुझे यह कहला भी भेजे कि अब तो आये बिना गुजर नही है। यदि आप सभी ऐसा करे तो मैं निश्शक हो सकता हूँ। स्टेशन पास आ रहा है, इसलिए इस पत्रको यही समाप्त करता हूँ।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

२५६. भाषण : बिहार शरीफकी सार्वजनिक सभामें[1]

१३ अगस्त, १९२१

. . . गांधीजीने उन्हें और उनके भाई मौलाना मुहम्मद अलीको दिये गये मान-पत्रके लिए नगरपालिकाके सदस्योंको धन्यवाद देते हुए कहा : आप लोग देशमें फैली विभिन्न बुराइयाँ दूर करनेके लिए चलाये गये वर्तमान संघर्षमें समुचित रूपसे योगदान करें। गोवधका उल्लेख करते हुए उन्होंने हिन्दुओंसे कहा : यदि आप गोवधके सवालको उचित ढंगसे हल करना चाहते हैं तो आप खिलाफतके सवालपर मुसलमानोंका साथ दें और रोज सुबह गो-रक्षाके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करें। भाषण समाप्त करते हुए उन्होंने सभामें उपस्थित प्रत्येक व्यक्तिसे अपील की : आप चरखेको अपनायें और ३० सितम्बरसे पहले विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार करनेके लिए कटिबद्ध हो जायें। उनके भाषणोंको सारी जनता शान्तिसे सुनती रही। ८ बजे रातको सभा समाप्त होनेके बाद गांधीजी परदानशीन महिलाओंकी सभामें शामिल हुए जहाँ उन्हें नकदी और गहने भेंटमें मिले।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, २१-८-१९२१

१. यह सभा देवीसराय मैदानमें ६ बजे शामको हुई थी। गांधीजीको नगरपालिकाकी ओरसे मान-पत्र भेंट किया गया था। वे मौलाना मुहम्मद अलीके बाद बोले थे।

२५७. मृत्युका भय

मैं स्वराज्यकी व्याख्याएँ एकत्र कर रहा हूँ। उनमे एक व्याख्या यह भी है— मृत्युके भयका त्याग। जिस देशके लोग मृत्युके भयसे भीत रहते है वे न तो स्वराज्य प्राप्त कर सकते है और न उसे सँभाल ही सकते है। अंग्रेज लोग तो मौतको जेबमे लिये घूमते है, अरब और काबुली भी मरणको एक मामूली अलामत समझते है। जब उनके यहाँ कोई मर जाता है तब वे रोते-पीटते नही। बोअर-स्त्रियाँ तो जानती ही नही थी कि मरणका भय क्या चीज है। बोअर-युद्धके समय हजारो बोअर-युवतियाँ विधवा हो गई। पर उन्होने इसकी कुछ परवाह न की। उन्होने अपने दिलको समझाया कि मेरे पति या पुत्र मर गये तो क्या हुआ, मेरे देशकी इज्जत तो कायम रही। यदि देश गुलाम हो जाता तो पतिके रहनेसे भी क्या होता? अपने गुलाम बेटेकी परवरिश करनेकी अपेक्षा तो उसकी लाशको कब्रमे दफना देना और उसकी आत्माको याद करते रहना ही अच्छा है। इस तरह धीरज रखकर असख्य बोअर-रमणियोने अपने प्रियजनोका बिछोह सहा।

ये उन लोगोके उदाहरण है जो खुद तो मरते ही है और दूसरोको भी मारते है। परन्तु जो लोग मारते नही सिर्फ मरते-भर है, उनका क्या पूछना? ऐसोकी तो संसार पूजा करता है। ऐसोकी बदौलत देशका उत्कर्ष होता है। अग्रेज और जर्मन दोनो आपसमें लड़े। दोनोने मार मारी और मार खाई। फल यह हुआ कि शत्रुता बढ गई, अशान्ति बढ़ गई और आज यूरोपकी दशा दयनीय हो गई है; पाखण्डकी वृद्धि हुई है और वे एक-दूसरेको फाँसनेका प्रयत्न कर रहे है। परन्तु जिस मृत्यु-भयको छोडनेका अथक प्रयत्न हम कर रहे है वह तो एक शुद्ध यज्ञ है और उसके द्वारा हम, थोड़े ही समयमे, बडी भारी विजय प्राप्त करनेकी आशा रखते है।

जब हमें स्वराज्य मिल जायेगा तब या तो हममे से अधिकतर लोगो ने मौतका डर छोड़ दिया होगा अथवा हमें स्वराज्य ही न मिला होगा। अभी तक तो देशके ज्यादातर नौजवान ही मरे है। अलीगढ़मे जितने लोगोकी जाने गई है वे सब २१ वर्षसे कम अवस्थावाले थे। उन्हे तो कोई जानता भी नही था। पर अब भी यदि सरकार खून-खराबी करनेपर तुली ही हो तो मै यह विश्वास किये बैठा हूँ कि उस समय देशके प्रथम श्रेणीके किसी व्यक्तिकी बलि होगी।

बालक, जवान या बूढे मरे, हम इससे भयभीत क्यो हो? कोई पल ऐसा नही जाता जब इस जगत्मे कही किसीका जन्म और कही किसीकी मृत्यु न होती हो। पैदा होनेपर खुशियाँ मनाना और मौतसे डरना बड़ी मूर्खता है, यह बात हमे सदा ही अनुभव करनी चाहिए। जो लोग आत्मवादी है—और हममे कौन ऐसा हिन्दू, मुसलमान या पारसी होगा जो आत्माके अस्तित्वको न मानता हो—वे जानते है कि आत्मा कभी मरती नही। यही नही बल्कि जीवित और मृत, समस्त प्राणी एक ही है, उनके गुण भी एक ही है। इस दशामे, जब कि जगत्मे उत्पत्ति और लय

पल-पलपर होती ही रहती है, हम क्यो खुशियाँ मनाये और क्यो शोक करे? सारे देशको यदि हम अपना परिवार मानें—यदि हमारी भावना इतनी व्यापक हो—और देशमे जहाँ-कही किसीका जन्म हुआ हो उसे हम अपने ही यहाँ हुआ मानें तो फिर आप कितने जन्मोत्सव मनायेंगे? देशमे जहाँ-जहाँ मृत्यु हो उन सबके लिए यदि हम रोते रहे तो हमारी आँखोके आँसू कभी सूखेंगे ही नही यह सोचकर हमें मृत्युका डर छोड़ ही देना चाहिए।

प्रत्येक भारतवासी अधिक ज्ञानी, अधिक आत्मवादी होनेका दावा करता है। तिसपर भी मौतके सामने जितने दीन हम हो जाते हैं उतने और लोग शायद ही होते हो। और उसमें भी मेरा खयाल है कि हिन्दू लोग जितने अधीर हो जाते हैं उतने भारतके दूसरे लोग नही होते। अपने यहाँ किसीका जन्म होते ही हमारे घरोमें आनन्द-मगल उमड़ पड़ता है और जब कोई मर जाता है तब इतना रोना-पीटना मचता है कि आसपासके लोग हैरान हो जाते हैं। यदि हम स्वराज्य लेना चाहते हैं और अपनेको उसके योग्य सिद्ध करना चाहते हैं तो हमें मृत्युका भय बिलकुल छोड़ ही देना चाहिए।

और जो मनुष्य मृत्युका भय छोड देगा उसे जेलका भय क्योकर होगा? पाठक यदि विचार करेंगे तो उन्हे मालूम हो जायेगा कि स्वराज्य-प्राप्तिमे हमें जो विलम्ब हो रहा है उसका एकमात्र कारण है—हम लोगोमे मृत्यु तथा उससे हलके दु खोको सहनेकी शक्तिका अभाव।

ज्यो-ज्यो अधिकाधिक निरपराध मनुष्य जान-बूझकर मौतको गले लगानेके लिए तैयार होते जायेंगे त्यो-त्यो दूसरे लोगोका बचाव होता जायेगा और दु ख भी कम होता चला जायेगा। जो दु ख खुशीके साथ सहन किया जाता है वह दु.ख नही रहता, बल्कि सुख हो जाता है। जो दु.खसे जी चुराता है वह बहुत कष्ट उठाता है और सकटके उपस्थित होनेपर निर्जीव-सा हो जाता है। जो आनन्दके साथ दु:खका स्वागत करनेके लिए पैर बढ़ाता है उसे वह आरम्भिक दु ख, जो केवल दु.खकी कल्पनासे ही उत्पन्न होता है, कैसे हो सकता है? आनन्द पीड़ापर क्लोरोफार्मका काम करता है।

इस विषयपर इस समय जो मुझे इतना लिखना पडा सो इसलिए कि यदि "हमें इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना हो तो मृत्युका विचार भी कर लेना होगा।" जो लोग पहलेसे तैयारी कर रखते हैं वे आपत्तिसे बच जाते हैं, हमारे विषयमे भी ऐसा हो सकता है। मेरा दृढ विश्वास है कि स्वदेशी-आन्दोलन हमारी ऐसी ही पेशबदी है। यदि इसमे हमारी फतह हो गई तो मैं समझता हूँ, सरकारको अथवा और किसीको हमारी अग्नि-परीक्षाकी आवश्यकता ही न रहेगी।

परन्तु इतना होनेपर भी, यह आवश्यक है कि हम गफलतमें न रहें। सत्ता अन्धी और बहरी होती है। वह अपने बिलकुल पासकी घटनाओंको भी नही देख पाती। अपने कानके पासका कोलाहल भी वह नही सुन सकती। अतएव यह नही कहा जा सकता कि जो सरकार मदोन्मत्त है वह क्या नही कर बैठेगी। इसलिए मेरे मनमे यह खयाल उठा कि अब देश-सेवकोको मृत्यु, जेल अथवा दूसरी आपत्तियोका एक मित्रकी तरह स्वागत करनेकी तैयारी कर रखनी चाहिए।

एक शूरवीर जिस प्रकार हँसते हुए मृत्युका स्वागत करता है उसी प्रकार वह सावधान भी रहता है। शान्तिमय संग्राममें तो गफलतके लिए गुंजाइश ही नही है। जो नीति और सदाचारके विरुद्ध हैं, हम ऐसे अपराध करके न तो जेल जाना चाहते है और न फाँसीपर ही लटकना चाहते है। हमें तो सरकारके अन्यायपूर्ण कानूनोका सामना करते हुए बलिदान होना है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-८-१९२१

२५८. स्वराज्यकी व्याख्या

स्वराज्यकी व्याख्याओके सम्बन्धमें मै अपने मनमे तो विचार किया ही करता हूँ। अब उन्हे पाठकोके सामने भी उपस्थित करता हूँ:

(१) स्वराज्यका अर्थ है—स्वयं अपने ऊपर प्राप्त किया हुआ राज्य। इसे जो मनुष्य प्राप्त कर चुका है वह अपनी व्यक्तिगत प्रतिज्ञाका पालन कर चुका।

(२) परन्तु हमने तो उसके कुछ लक्षणो, और स्वरूपकी कल्पना की है। अतएव स्वराज्यका अर्थ है—देशके आयात और निर्यातपर, सेना और अदालतोपर जनताका पूरा नियन्त्रण। दिसम्बरकी प्रतिज्ञाका यह अर्थ है। इसमे अंग्रेजी साम्राज्यके साथ सम्बन्ध रखनेके लिए जगह है भी और नही भी है। यदि खिलाफत और पंजाब-काण्डका निपटारा न हो तो जगह नही है।

(३) परन्तु व्यक्तिगत स्वराज्यका उपभोग तो साधु लोग आज भी करते होंगे, और हमारी पार्लियामेंट स्थापित हो जानेपर भी, सम्भव है लोगोकी दृष्टिमें स्वराज्य न आये। इसलिए स्वराज्यका अर्थ है—अन्न-वस्त्रकी बहुतायत। परन्तु वह इतनी होनी चाहिए कि किसीको भी उसके बिना भूखा और नंगा न रहना पड़े।

(४) ऐसी स्थिति हो जानेपर भी एक जाति या एक श्रेणीके लोग दूसरोको दबा सकते हैं। अतएव स्वराज्यका अर्थ है—ऐसी स्थिति जिसमे एक बालिका भी घोर अन्धकारमे निर्भयताके साथ घूम-फिर सके।

(५) उपर्युक्त चार व्याख्याओंमें कितनी ही बातोका समावेश दिखाई देगा। तथापि राष्ट्रीय स्वराज्यमे प्रत्येक अंग सजीव और उन्नत हो जाये और होना चाहिए तो उस दशामें स्वराज्यका अर्थ होगा अन्त्यजोके प्रति अस्पृश्यताकी भावनाका सर्वथा लोप।

(६) ब्राह्मणो और अब्राह्मणोके झगड़ेकी समाप्ति।

(७) हिन्दू-मुसलमानोके मनोमालिन्यका सर्वथा नाश। इसका अर्थ है कि हिन्दू मुसलमानोकी भावनाओका ध्यान रखे और इसके लिए जानतक दे दे। इसी तरह मुसलमान हिन्दुओकी भावनाओका ध्यान रखे। मुसलमान गो-हत्या करके हिन्दुओका दिल न दुखायें, बल्कि स्वयं ही गो-वध बन्द कर दे और अपने हिन्दू भाईके चित्तको चोट न पहुँचने दे तथा हिन्दू, बिना किसी तरहका बदला चाहे, मसजिदोके सामने बाजे न

बजाये और मुसलमानोका जी न दुखाये, बल्कि मसजिदोके पाससे गुजरते हुए बाजे बन्द रखनेमे बड़प्पन समझें।

(८) स्वराज्यका अर्थ है — हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई, यहूदी, सभी धर्मोके लोग अपने-अपने धर्मका पालन कर सके और ऐसा करते हुए एक-दूसरेकी रक्षा और एक-दूसरेके धर्मका आदर करें।

(९) स्वराज्यका अर्थ है कि प्रत्येक ग्राम चोरो और डाकुओके भयसे अपनी रक्षा करनेमे समर्थ हो जाये और प्रत्येक ग्राम अपने लिए आवश्यक अन्न-वस्त्र पैदा करे।

(१०) स्वराज्यका अर्थ है — देशी राज्यो, जमीदारो और प्रजामे मित्रभाव रहे, देशी राज्य अथवा जमीदार प्रजाको परेशान न करे और रियाया, राजा अथवा जमीदारको तंग न करे।

(११) स्वराज्यका अर्थ है — धनवान् और श्रमजीवियोमें परस्पर मित्रता। मजदूर उचित मजदूरी लेकर धनवान्के यहाँ खुशीसे मजूरी करे।

(१२) स्वराज्य वह है जिसमे स्त्रियाँ माता और बहने समझी जायें और उनका मान-आदर हो तथा ऊँच-नीचका भेदभाव दूर होकर सब परस्पर भाई-बहनकी भावनासे बरताव करें।

इन व्याख्याओसे सिद्ध होता है कि

(१) स्वराज्यमें राज्यसत्ता, शराब, अफीम इत्यादि [मादक पदार्थों]का व्यापार न करे।

(२) स्वराज्यमे अनाज और रुईका सट्टा न हो।

(३) स्वराज्यमें कोई कानूनको भग न करे।

(४) स्वराज्यमे स्वेच्छाचारके लिए बिलकुल स्थान न रहे, जिससे कोई अपने ही खिलाफ की गई शिकायतका फैसला खुद ही काजी बनकर न करे बल्कि देशकी बनाई अदालतमे अपने खिलाफ की गई फरियादका फैसला होने दे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-८-१९२१

२५९. अस्पृश्यता और राष्ट्रीयता

अकलेश्वरसे एक सज्जनने बहुत लम्बा पत्र लिखा है। उनका कहना है कि राष्ट्रीय आन्दोलनमे अस्पृश्यताको दाखिल करके मैंने हिन्दुस्तानको भारी नुकसान पहुँचाया है। मैंने उस सवालकी चर्चा करनेमें अति की है और व्यर्थ ही हम लोगोमे अनबनका कारण उत्पन्न कर दिया है। इस भाईके पत्रमे लगाये गये अन्य आक्षेपोका कोई हिसाब नही है। उनका मै यहाँ उत्तर नही दे रहा हूँ, [मुझे उम्मीद है] इसके लिए वे मुझे क्षमा करेंगे।

कुछ-एक सामाजिक प्रश्न इतने व्यापक होते है कि उन्हे राजनैतिक बनाये बिना काम ही नही चल सकता। हिन्दू-मुस्लिम एकताके प्रश्नको अगर सामाजिक मानकर निकाल दें तो हमारी गाड़ी पहली मजिलपर ही अटक जायेगी। दक्षिणमे ब्राह्मण और ब्राह्मणेतर प्रश्न इतना उग्र हो गया है कि जो राजनैतिक पक्ष उसे छोड देगा वही मृत्युको प्राप्त होगा। अमुक प्रश्नको राष्ट्रीय आन्दोलनमे शामिल किया जाना चाहिए अथवा नही, इसका निर्णय करना आसान है। जिसका निर्णय किये बिना हमारा काम रुक जाये उसका निर्णय करना ही चाहिए। मेरा यह निश्चित मत है कि यदि मैंने अस्पृश्यताके प्रश्नको न उठाया होता तो हमारा आन्दोलन आगे बढ ही नही सकता था। हम घोर अज्ञानवश जिन लोगोको अस्पृश्य मानकर अपमानित कर रहे है उन छः करोड़ लोगोको छोड़कर हम स्वर्गके विमानमे कदापि नही बैठ सकते। वे लोग भूमिपर होनेके कारण उस विमानको पकड़े रहेंगे और वह उड़ान नही भर सकेगा। विमानको पकड़कर, जैसे-तैसे लटके रहकर भी वे उड सकते है— ऐसा अगर मुझे लगता तो मै इस प्रश्नको न उठाता। पत्र-लेखकके पत्रसे मुझे ऐसा लगता है कि वह वर्तमान राज्यतन्त्रसे परिचित ही नही है।

इस राज्य-व्यवस्थाका महल हमारी दुर्बलताओकी नीवपर ही उठाया गया है। आज हिन्दू-मुसलमानका प्रश्न, तो कल ब्राह्मण-ब्राह्मणेतरका प्रश्न, और फिर अस्पृश्यता तथा राजा और प्रजाका प्रश्न, धनवान और मजदूरका प्रश्न, हमारे मद्यपान आदिके शौकसे — इस राज्य-व्यवस्थाने हमारी इन दुर्बलताओका हमेशा लाभ उठाया है, इसीसे अपनी लडाईको हमने आत्म-शुद्धिकी लड़ाई माना है। मैंने अस्पृश्यताको सबसे बड़ा कलक माना है, क्योकि हिन्दू-संसारने इस वर्गपर डायरशाही चलाई है।

मै शास्त्रजालमे पडकर भरमनेवाला व्यक्ति नही हूँ। मेरी आँखोने जो देखा है उसे मै ऐसे ही दरगुजर नही कर सकता। जहाँ भी देखता हूँ वहाँ मैं अन्त्यजोको तिरस्कृत होते हुए देखता हूँ। एक पत्र-लेखक अभिमानके साथ लिखता है कि हिन्दू समाजने अन्त्यजोका यदि सचमुच तिरस्कार किया होता तो अन्त्यज कभीके नष्ट हो गये होते। मुझे तो लगता है कि हमने ही उनका नाश नही किया क्योकि उनसे हमे अपनी गन्दगी उठवानी थी। गुलामोका नाश कौन करता है? जिसे भार उठवाना है, वह अपने जानवरका नाश नही करता। हमने अन्त्यजोसे कितना भार उठवाया है और

उन्हे किस तरह गुलाम बनाया है, इसका जब मै विचार करता हूँ तब मुझे अपना जीवन भार लगने लगता है। लेकिन मेरी समझमे तो हमारे अत्याचारोमे अज्ञान है, इरादा नही, इसीलिए शब्द-प्रहारोके बावजूद मै अत्यन्त प्रेम और विनयसे हिन्दू-ससारको जाग्रत कर रहा हूँ और जी रहा हूँ। अन्त्यजोके प्रति आज हमारा जो व्यवहार है उसके लिए हमारे पास एक भी नैतिक कारण नही है।

किसी मैली चीजसे छू जानेपर नहानेकी बात मुझे अच्छी लगती है। मै स्वय भी नहाता हूँ। दूसरोको भी वैसा करनेकी सलाह देता हूँ। लेकिन जो मेरे जैसे ही शरीरसे शुद्ध जान पड़ते है उनकी जात पूछकर अगर वे अन्त्यज हो तो उनको त्यागने-का न्याय तो मुझे असह्य है।

स्वराज्यमे दुर्बलकी रक्षा प्रधान है। यदि हम उनकी रक्षा करनेके लिए तैयार न हो, अपने कुओसे उन्हे पानी न भरने दे, उन्हे गन्देसे-गन्दे मुहल्लोमे रखे, उन्हे अपने स्कूलोमे न आने दे, और आने भी दे तो उन्हे अलग आसन दें, हमसे भी ज्यादा साफ होकर आनेपर भी उनसे छू जानेपर हम नहायें तो यह हिन्दू-शास्त्र नही है, अपितु शास्त्रोकी ज्यादती है और डायरशाही है।

अन्त्यजोके पक्षके एक भाई मुझे लिखते है कि लॉर्ड क्लाइवने[1] अन्त्यजोकी सहायता लेकर अन्य लोगोका दमन किया था। मैने इस बातकी जाँच नही की है, लेकिन उसकी सचाईके सम्बन्धमे मुझे कोई सन्देह नही है। आज भी अगर अन्त्यज भुलावेमे पड जाये तो ऐसे अनेक क्लाइव पड़े है जो उसका मनमाना लाभ उठाकर सिर उठानेवालो को कुचलनेके लिए तैयार है। गोरखोमें हमारा ही खून है, चाँदपुरमे निर्दोष मजदूरोपर उनका उपयोग किसने किया? अब सिखोकी आँखे खुली है। लेकिन इस राज्य-व्यवस्थामे हमे दबानेके लिए क्या इस बहादुर कौमका कम उपयोग किया गया है?

अपनी दुर्बलताओको छिपानेसे, सबलता कहकर उनका वर्णन करनेसे, उनमे सुधार करनेकी बातको मुल्तवी रखनेसे हम अपने ही गलेमे फन्दा डालते है।

जिस धर्ममे गरीबका भाग निकालकर खानेका रिवाज है उसी धर्मके अनुयायी अगर दूरसे ही अन्त्यजोकी झोलीमे अपनी थालीकी बची हुई जूठन और सड़ा हुआ अनाज फेंके तो उनके इस अकृत्यको डायरशाही न कहकर और क्या कहा जायेगा?

प्रस्तुत पत्र-लेखक कहते है कि भडौच परिषद्मे जब अन्त्यजोको दाखिल किया गया उस समय सब लोग वहाँ बैठे रहे सो केवल सकोचवश; लेकिन उनके दिलोको ठेस पहुँची थी। यदि ऐसी बात है तो इसका मुझे दु ख है। अगर हम स्वराज्य प्राप्त करना चाहते है तो हम एक-दो व्यक्ति ही क्यो न हो, हमे अपने विचारोको प्रकट करना चाहिए और उनपर अमल करना चाहिए।

मैं जानता हूँ कि अस्पृश्यताके सम्बन्धमे लेख लिखकर अथवा भाषण देकर मैने अनेक भावुक हिन्दुओके दिलोको दुखाया है। लेकिन साथ ही मै यह भी जानता हूँ कि इसमे द्वेष नही है और न कभी था। वैद्य जब रोगीको चिरायता देता है तब

१. लॉर्ड रॉबर्ट क्लाइव (१७२५-१७७४)।

रोगी बुरा मुँह बनाते हुए भी जानता है कि यह चिरायता उसके लिए सबसे अच्छी औषध है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४–८–१९२१

२६०. समझौता?

इस तरहके मिले हुए पत्रोमे यह कोई अकेला पत्र[1] नही है। मैंने भी वसन्त-राम शास्त्रीके लेखको पसन्द किया, इसके लिए मुझे कितने ही मित्रोने उलाहना दिया है; तथापि इस सम्बन्धमे व्यक्त किये गये विचारोपर मै दृढ हूँ। उपर्युक्त पत्र और इस तरहकी टीकाएँ मुझे प्रिय है। यह एक सन्तोषजनक बात है कि अब बहुत सारे लोग अस्पृश्यताके दोषको देखने लगे हैं और उनका यह सुझाव है कि इसमे समझौतेको कोई स्थान नही है। शास्त्रीजीके लेखको आलोचक अपनी दृष्टिसे देखते है। मैंने शास्त्रीजीकी दृष्टिसे ही उसका अवलोकन किया और जब यह देखा कि शास्त्रीजी अस्पृश्यताको एक शौच-क्रियाके रूपमे मानते है तब मुझे प्रसन्नता हुई। रजस्वला माताको न छूने जितनी अस्पृश्यता अगर अन्त्यजोके सम्बन्धमें भी बरती जाये तो उसे मैं समझ सकता हूँ। 'चाडाल'को न छूनेकी प्रथा कैसे पड़ी होगी, इस बातको मैं बिना किसी अडचनके समझ सकता हूँ।

जो सुधारक स्वयं अपना स्थान न छोड़कर अपने समीप आनेवाले लोगोका स्वागत करता है — क्योकि उसे पूरी आशा होती है कि वे लोग कभी-न-कभी सुधारोके स्वरूपसे अवगत हो जायेंगे — वही सच्चा सुधारक है। मैंने शास्त्रके नामसे प्रचलित अस्पृश्यताकी निन्दा की है और इसमे मै कोई परिवर्तन नही करना चाहता। लेकिन जो अन्त्यजोसे छू जानेपर नहानेके बावजूद अन्त्यजोके प्रति प्रेमभाव रखेंगे, उनके लिए जलाशय बनवायेंगे, उन्हे पढायेंगे, उनके दु खमे दु.खी होंगे, उन्हे खिलाकर खायेंगे, उन्हे आदरसहित ट्रेनमें बिठायेंगे, उनके बीमार पडनेपर उनकी सेवा-शुश्रूषा करेंगे उनकी मैं वदना करूँगा। जो अन्त्यजोके स्पर्शसे अपनी आत्माको कलुषित हुआ मानेगा उसके लिए मैं भगवान्से प्रार्थना करूँगा कि वह उसे क्षमा कर दे। मैं अपनी मान्यतामें, अपनी पद्धतिमें अथवा अपने व्यवहारमे कोई परिवर्तन नही करनेवाला हूँ। लेकिन जो लोग इस आदर्शको जितना ज्यादा अपनायेंगे, मैं उतना ही उनका सम्मान करूँगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४–८–१९२१

१. उक्त पत्र यहाँ उद्धृत नहीं किया गया। यह पत्र एक सनातनी हिन्दूने लिखा था जिसमें उसने शास्त्री वसन्तरामके लेखपर गांधीजीने जो आलोचना की थी उसके विरुद्ध शिकायत की थी; देखिए "टिप्पणियाँ", १७–७–१९२१।

२६१. टिप्पणियाँ

टोपियोंकी आहुति

बम्बईने उत्साहपूर्वक जो कार्य आरम्भ किया था वह खूब जोर-शोरसे चल रहा है। हमारी यात्रामे प्रत्येक स्थानपर मलमल, मखमल और फेल्टकी टोपियोका ढेर लग जाता है। मुसलमान अपनी तुर्की और अस्तरखानी टोपियाँ फेकते है तो कोई अपनी पगड़ी फेकता है। एक मित्रने कहा कि हिन्दुस्तानके आन्तरिक तारके आगे टेलीफोन अथवा टेलीग्राफ किसी कामके नही है। पवनवेगसे हिन्दुस्ताननें जान लिया है कि विदेशी कपडा पहनना अथवा घरमे रखना पाप है। मुझे आश्चर्य तो यह देखकर होता है कि अपने कपड़े जलानेके लिए देते समय कदाचित् ही कोई हिचकिचाता है।

हमारा दल

इस बारकी यात्रामे हमारे दलमे केवल अली भाई और मैं ही नही है बल्कि कानपुरके मौलाना आजाद सोबानी तथा शिमलेके पास कोटगढमे रहनेवाले श्री स्टोक्स भी है। श्री स्टोक्स कांग्रेसके सदस्य है। और पहाड़ोमे बेगार लेनेका जो रिवाज है इन्होने अपना सारा समय उसे दूर करनेके कार्यमे दे दिया है। श्री स्टोक्सने एक भारतीय ईसाई महिलासे विवाह किया है और उनके छ पुत्र है। लड़कोको उन्होने अभीतक अंग्रेजीका एक अक्षर भी नही सिखाया है। वे सिर्फ पहाडी और हिन्दी, यही दो भाषाएँ जानते है। उन्होने भी ३१ जुलाईके यज्ञमे अपने कपड़ोकी आहुति दी। इनकी पोशाक अब धोती, कुर्ता और टोपी है और ये सब चीजे खादीकी होती है। फिलहाल अवकाश होनेसे हमारी यात्राके अनुभवोको ग्रहण करनेके विचारसे वे हमारे साथ है। श्री स्टोक्सने अनेक वर्षोसे अपना रहन-सहन सर्वथा भारतीय ही रखा है। पोशाकमें परिवर्तन इन्होने अभी-अभी किया है।

जयघोष और चरण-स्पर्श

जयघोष और चरण-स्पर्शकी व्याधि अभीतक गई नही है। मुझे उम्मीद थी कि इनके सम्बन्धमें मेरे लेखोके बाद परिवर्तन हो गया होगा। लेकिन मैंने जबसे सयुक्त-प्रान्तमे प्रवेश किया है तबसे जयघोष और चरण-स्पर्शसे मै घबरा गया हूँ। लोगोके उत्साहकी कोई सीमा नही है। लेकिन यह सारा उत्साह जयघोष और चरण-स्पर्शमें ही बह जाता दिखाई देता है। मेरे कान भी अब इतने मजबूत नही रह गये है कि मै बहुत ज्यादा शोर सहन कर सकूँ। हजारोकी भीड़मे चरण-स्पर्श इतनी अधिक अव्यवस्था फैलाता है कि प्रतिक्षण गिर जानेका भय बना रहता है।

स्वयंसेवक

स्वयसेवक तो बहुत सारे लोग बन गये है लेकिन उन्हे अभीतक अपने कर्त्तव्यका पूरा भान नही हुआ है। उनमे शिक्षाकी कमी है। यदि हमे कानूनका सविनय भग

करना है तो स्वयसेवकोको सम्पूर्ण बनना चाहिए। उनमे शोर बन्द करनेकी, चरण-स्पर्श रोकनेकी और लोगोतक अपनी आवाज पहुँचानेकी शक्ति होनी ही चाहिए। वैसा न हो तो दिक्कतके समय स्वयसेवक सेवा करनेमे असमर्थ सिद्ध होगे। अतएव हमें अपनी लड़ाईमें स्वयसेवकोकी तालीमको एक महत्त्वपूर्ण अग मानना चाहिए।

जाँच-पड़ताल

हम स्वदेशीका पालन करते है अथवा नही इसकी जाँच कैसे हो सकेगी, लोग प्रायः यह बात मुझसे पूछते रहते है। यह जाँच दो प्रकारसे की जा सकती है। इस समय तो बाजारोमे हमे अपने देशके स्त्री-पुरुषोके शरीरपर विदेशी कपड़ोके अलावा कदाचित् ही कोई और वस्त्र दिखाई देता है। हमे तोरणो और सजावट आदिमे भी मैनचेस्टरका कपड़ा ही चाहिए। हमारे झडे और चपरासके परतले आदि भी विदेशी कपड़ेके ही होते है। मन्दिरोमे, मस्जिदोमें यही देखनेमे आता है। इसके बदले जब हम सब स्थानोपर खादीका उपयोग करने लगेगे तब हम समझेगे कि खादीका जमाना आया। इससे भी पक्का सबूत हमारी कपडेकी दुकाने और बुनकरोकी बस्ती हमे देगी। यदि हमारी दुकानोमें विदेशी कपड़ा आसानीसे न मिल सके और सिर्फ खादी ही नजर आये तथा बुनकरोके करघोपर विदेशी सूत न हो तो हमे समझ जाना चाहिए कि अब स्वदेशीका युग आ गया है। यदि विदेशी माल माँगनेवाला कोई होगा ही नही तो विदेशी मालकी दुकानें कहाँसे होगी? इस महत्त्वपूर्ण उपलब्धिको हिन्दू-मुसलमान दोनो समझ जायें तभी सफलता मिलेगी। करोडो हिन्दू अगर बारीक मलमलके शौकको न छोडे तो अकेले मुसलमान क्या कर सकते है? करोडो मुसलमान वैसा न करे तो हिन्दू अकेले क्या कर सकते है?

अपने कियेका फल

हमने जनताके अन्य अगोकी उपेक्षा की, इसीसे अब हमपर मुश्किल आई है। मै जहाँ कही जाता हूँ वही मुझे व्यापारियो तथा बुनकरोमे सहयोगका अभाव दिखाई देता है। व्यापारी तो कुछ हदतक प्रवृत्तिमें शामिल हो गये है, लेकिन बुनकरोमे तो हमने अभीतक प्रवेश ही नही किया। अतएव हमे अब उन्हे शिक्षा देनी चाहिए। जबतक हम उन्हें शिक्षित नही करते तबतक हमारी दिक्कते बढती ही चली जायेगी। व्यापारी विदेशी माल लाते रहेगे और बुनकर विदेशी सूत कातते रहेगे और हाथकते सूतको छुएँगे भी नही। फिर हमारा क्या हाल होगा? काग्रेस कमेटीके प्रत्येक अधिकारीको अब बुनकरो और व्यापारियोसे मिलना चाहिए, उन्हे सदस्य बनाना चाहिए और उन्हे उनके धन्धेमे उचित परिवर्तन करनेके लिए समझाना चाहिए। मुरादाबादमे ऐसा प्रयत्न सफल हुआ। वहाँकी कमेटीने कार्य करनेवालो और व्यापारियो, दोनोको इकट्ठा किया था। उन्होने बात समझने और अपनी गुत्थियोको सुलझानेके बाद खुशी-खुशी विदेशी कपड़ा न खरीदनेकी प्रतिज्ञा की। मै जहाँ-जहाँ जाता हूँ वहाँ-वहाँ गुजरातियोकी एक अच्छी सख्या दिखाई देती है। उनमें से अनेक तो सौ-सौ, दो-दो सौ वर्षोसे अमुक-अमुक प्रान्तोमें रहते आये है। वे लोग अब सभी स्थानोपर बड़ी स्पर्धासे काम कर रहे है और जहाँ रहते है वहाँके लोगोसे मिल-जुलकर रहते है। किसी-किसी

स्थानपर तो उनकी मेहनतसे काग्रेसका कार्य अच्छी तरह जमा हुआ दिखाई देता है। काग्रेसके कार्यमे भाग लेते हुए भी वे स्वय निरभिमानी है। इस तरह गुजरातसे बाहर गुजराती अपने गुणोको प्रगट कर रहे है, यह देखकर मुझे बहुत सन्तोप होता है। अगर हम हर तरहके भयसे मुक्त हो जायें तो अभी और भी ज्यादा देशसेवा कर सकते है।

शान्तिका बल

प्रत्येक स्थानपर मै यह देखता हूँ कि जहाँ लोग शान्तिके पाठको अच्छी तरह समझ गये है वहाँ उन्होने ज्यादासे-ज्यादा तरक्की की है। भय अथवा दुर्बलताके मारे जिस शान्तिका पालन किया जाता है वह सच्ची शान्ति नही है। सच्ची शान्ति वही हो सकती है जिसमें बल और तेज हो। अग्रेजोके प्रति अपने सम्बन्धोमे जैसे हमने शान्ति नही खोई उसी तरह हमें अपने ही अधिकारियो, सिपाहियो और पुलिस आदिके प्रति भी नही खोनी है। एक भाई मुझसे पूछते है कि हमे परस्पर शान्ति बनाये रखनी चाहिए अथवा सिर्फ अग्रेजोके प्रति। इस प्रश्नके लिए तो कोई गुजाइश ही नही हो सकती। हम अपने लोगोके प्रति शान्तिका पालन नही करेगे तो भी हार जायेगे। असहयोगी सबके प्रति विनयी रहता है, सबके प्रति शान्त और नम्र रहता है। व्यक्ति जितना शूरवीर हो उसे उतना ही शान्त होना चाहिए, वह जितना बड़ा हो उसे उतना ही नम्र होना चाहिए। उद्धत व्यक्ति, जो बात-बातमें मारने और गाली देनेके लिए तैयार रहता है, अपना बल खो बैठता है। शान्ति भी सूक्ष्म वीर्य है, उसको सचित करनेवाला भी प्रौढ ब्रह्मचारी और तेजस्वी बनता है। हमने ब्रह्मचर्यकी व्याख्याको स्थूल स्वरूप प्रदान करके जो व्यक्ति प्रतिक्षण क्रोधसे भडक उठते है उन्हे दोषी मानना छोड़ दिया है। शरीर-सुखके लिए जिस तरह स्थूल ब्रह्मचर्यका पालन आवश्यक है उसी तरह आध्यात्मिक ब्रह्मचर्यकी भी आवश्यकता है। मेरा तो विश्वास है कि हमने सहयोगियोपर क्रोध करके, पुलिसको गाली देकर अपनी लड़ाईको लम्बा कर दिया है। यदि हम मन, वचन और कर्मसे सब विरोधियोके प्रति शान्त, विनम्र और विनयी रहे होते तो अभीतक समस्त सत्ताको अपने हाथमे लेकर बैठ गये होते।

पारसी बहनोंसे

मै जानता हूँ कि एक अच्छी सख्यामें पारसी बहने 'नवजीवन' पढती है। उन्हे 'नवजीवन' की भाषाको समझनेमे जरा कठिनाई होती होगी। मै जहाँतक बने सरल भाषा लिखने और सयुक्ताक्षरोको न आने देनेका प्रयत्न करता हूँ, लेकिन भाषाके नियमोकी एकदम उपेक्षा नही की जा सकती। पारसियोने गुजरातीको इतना ज्यादा बिगाड़ दिया है कि उनके साथ प्रतिस्पर्धा करना भाषाका खून करनेके समान होगा। इसलिए बहनोसे मेरी प्रार्थना है कि उन्हे जो शब्द कठिन लगें उन्हे जाननेके लिए मेहनत करे, किसीसे पूछ ले। थोडेसे अकोको इस तरह प्रयत्नपूर्वक पढनेके बाद उन्हे फिर बिलकुल अड़चन नही होगी।

पारसी भाइयो और बहनोको यही शोभा देता है कि वे भाषाको सुधारनेका प्रयत्न करे। अब तो पारसी गुजराती, मुसलमान गुजराती और हिन्दू गुजराती —

भाषाके ये तीन वर्ग हो गये जान पड़ते हैं। फिर मुसलमान भाई गुजरातीको पारसियो जितना नही विगाड़ते और उन्हे 'नवजीवन' की गुजरातीको समझनेमे भी कोई दिक्कत नही आती। खबरदार,[1] मलवारी[2] आदि लेखकोने वता दिया है कि पारसी चाहे तो अच्छी गुजराती लिख अवश्य सकते हैं। मेरे पास कितने ही पारसियोके पत्र आते हैं; उनमे मैं शुद्ध गुजराती पाता हूँ। केवल भाषाके प्रति थोड़ेसे अभिमानकी जरूरत है। इतना होनेपर पारसियोकी गुजराती धीरे-धीरे सामान्य स्तरपर पहुँच जायेगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-८-१९२१

२६२. पत्र : ओंकारनाथ पुरोहितको

पटना जाते हुए
१५ अगस्त, १९२१

भाई ओकारनाथ,

आपका पत्र मीला। छपेला पत्र मैं भेजता हु। उस पत्रमे ऐसी कोई अनीतिमय बात र्नहिं देखता हु जिसलीये आपको अनीति प्रकट करनेके कारन खतको छापना चाहिये। उस खतको न प्रकट करनेकी प्रतिज्ञाका पालन करना हि चाहिये। उसमे दीइ हुई सलाहका पालन न करना या करना आपका हि हृदयपर निर्भर रहता है।

मोहनदास गांधी

ओकारनाथ पुरोहित
द्वारा/लाला चन्दूलाल
राजाका बाजार
आगरा

गांधीजीके स्वाक्षरोमे मूल पत्र (जी० एन० ६०८८) की फोटो-नकलसे।

१ व २. पारसी कवि।

२६३. सन्देश : शिमला-पहाड़ियोंकी जनताके नाम

१५ अगस्त, १९२१

भाइयो,

मुंशी कपूरसिंह और उनके साथी आपके लिए कष्ट भोग रहे है। उनका उद्देश्य है कि आप उन सब अन्यायोसे बचे जो आप बहुत दिनोसे भोग रहे है। क्या आप अपने इन साथियोके लिए कोई यत्न करेगे? मुझे विश्वास है कि जबतक आपके साथी जेलमें है आप सरकार और रियासतको बेगार न देंगे। इस मामलेमे श्री स्टोक्सका कहना आपको मानना चाहिए। आप कोई उपद्रव न करे। जबतक आपके भाई जेल-खानेमे है आप अपने दिलसे क्रोध हटा दे। आपके लिए तकलीफ उठाना और जेल जाना अच्छा है पर किसी अफसरको बेगार नही देना चाहिए। याद रखिए यदि इस अवसरपर आप पीछे हटे तो आप अपनी दासता और दृढ करेंगे और सदाके लिए दास बने रहेंगे। इस बारेमे मैं पूरी तरह आपके साथ हूँ।

आज, १७–८–१९२१

२६४. पत्र : महादेव देसाईको

कलकत्ता जाते हुए
[१७ अगस्त, १९२१ के पूर्व][1]

भाईश्री ५ महादेव,

तुम्हारा पत्र मिला। मोतीलालजी तो यही चाहते है कि तुम रहो, किन्तु मुख्य बात तो तुम्हारी इच्छा ही है — यदि वहाँ बहुत मेहनत पडे या तुम्हारी तबीयत ही अच्छी न रहे तो निश्चय ही चले आना। किसी आदमीका दाहिना हाथ बननेसे अधिक महत्त्वपूर्ण और क्या हो सकता है? यह वाक्य कि "यदि मैं दाहिना हाथ बन सकता" केवल दु:खमे अथवा ज्ञानपूर्वक लिखा जा सकता है। यदि दु:खमे लिखा हो, तो फिर तुमने मुझे नही समझा है। यदि ज्ञानपूर्वक लिखा है, तब तो कुशल है। दो दिमाग एक-दूसरेसे विलग रह सकते है, किन्तु हाथ दिमागसे विलग होकर क्या कर सकता है? मै तुम्हे दिमाग मानकर शिक्षित कर रहा हूँ। सन्तराम तो "पर्मनेंट अंडर-सेक्रेटरी" है, इसलिए वह तो खिसक नही सकता।

१. गांधीजी १७ अगस्त, १९२१ को कलकत्तामें थे।

मैं चाहता हूँ कि तुम अपनी सही परिस्थितिको समझो। मैं प्यारेलालको[1] क्यों रखे हुए हूँ, यह भेद तुम नहीं समझोगे। मेरी जिन्दगीके इस भागको तुम समझ नहीं सकोगे। बाका और मेरा स्वभाव एक नहीं है। बा मुझे नहीं समझती। आश्रममें अभी तक तो मुझे जैसी चाहिए वैसी एक भी स्त्री नहीं मिली। रसोई-घरके काम-काजको सँभालना [विकट] काम है। विरला ही उसे सँभाल सकता है। मैं उसे तुम्हारी शक्तिके बाहर मानता हूँ। उसके लिए तो फिलहाल मगनलाल, विनोबा, छोटेलाल[2], मैं और कुछ अंशमें भुँवरजीने[3] अपनेको सिद्ध किया है। हमारा भोजन तो एक शास्त्रके अनुसार है। गोकीबेनको[4] लेकर काफी परेशानियाँ थीं। हमें एक प्रौढ़ मनुष्यकी निश्चय ही आवश्यकता है। मैं अपनी समझमें प्यारेलालका अच्छेसे-अच्छा उपयोग कर रहा हूँ। वक्त आनेपर मैं उसे अन्यत्र रख सकूँगा।

जोजेफके बाहर रहते हुए तुम्हारा देवदास अथवा प्यारेलालको माँगना तो ज्यादती जान पड़ती है। तुम्हें इन दोनोंसे कुछ हलके दर्जेके व्यक्तिसे सन्तोष करना चाहिए। तुम प्रभुदासको रख सकते हो।

दुर्गाके अच्छे हो जानेपर क्या तुम जोजेफके साथ रह सकते हो? लेकिन यह तो दूरकी बात हुई। पहले तो मुझे तुम्हारी इच्छा ही जाननी है। मैं तुम्हें अभी 'यंग इंडिया' में नहीं भेजूँगा। क्या तुम्हें मेरा पिछला पत्र मिला था? फिलहाल तो मैं इसी तरह सोचता हूँ कि या तो तुम वहीं रहो या फिर मेरे साथ।

तुम्हारे लेख पढ़े। सभी अच्छे हैं यानी उनपर कोई टीका-टिप्पणी जरूरी नहीं है। विपिनचन्द्रको[5] ठीक जवाब दिया गया है।

मुझे गौहाटी लिखना। मैं २५ तक गौहाटीके आसपास रहूँगा। क्रिस्टोदास[6] 'यंग इंडिया' के विचारसे साथ है। उसके आनेकी बात थी और वह आ गया है। वह मेरे साथ ही है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१३) की फोटो-नकलसे।

१. प्यारेलाल नय्यर, १९२० में गांधीजीके साथ हुए और महादेव देसाईकी मृत्युके बाद उनके मुख्य सचिव बने।

२. छोटेलाल जैन, सत्याग्रह आश्रमवासी।

३. सत्याग्रह आश्रमवासी।

४. गांधीजीकी बहन।

५. विपिनचन्द्र पाल।

६. कृष्णदास।

२६५. भाषण: कलकत्तेके मिर्जापुर पार्कमें[1]

१७ अगस्त, १९२१

महात्मा गांधीने भाषणके प्रारम्भमें कहा कि मैं ५ मिनटसे ज्यादा नहीं बोलूंगा, क्योंकि मुझे आज शामको ही दार्जिलिंग मेलसे असमके लिए रवाना होना है, इसलिए मैं आशा करता हूँ, सब लोग मेरी बात धैर्यसे सुनेंगे।

मुझे विश्वास है आप सबने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका प्रस्ताव पढ़ा होगा। उसमें कहा गया है कि आगामी ३० सितम्बरसे पहले विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण रूपसे बहिष्कार हो जाना चाहिए। इसलिए मैं आप लोगोंसे जोर देकर कहता हूँ कि आप प्रस्तावको अमलमें लायें। मैं आपसे अपील करता हूँ कि आप स्वदेशी वस्त्रोंका उपयोग करें और जिन विदेशी वस्त्रोंको आप अब भी पहने हुए हैं उन्हें जला दें या स्मरना भेज दें। अपने खादीके कपड़े और 'स्वराजी टोपी' की ओर संकेत करते हुए उन्होंने कहा: यद्यपि खादी कुछ खुरदरी होती है फिर भी आप हतोत्साहित न हों। मैं आपको याद दिलाता हूँ कि यदि आप प्रस्तावपर पूर्ण रूपसे अमल करनेके लिए कृतसंकल्प हैं तो मैं आपको आगामी अक्तूबरमें स्वराज्य दिला दूंगा और खिलाफत तथा पंजाबपर किये गये अत्याचारोंका प्रतिकार भी हो जायेगा। मैं आपको सलाह देता हूँ कि आप हिन्दू और मुसलमान, दोनों एक माँके दो बेटोंके समान मिलकर कार्य करें और अपने संघर्षमें शान्तिके साथ जूझनेके लिए तैयार रहें। स्वतन्त्रताके संघर्षमें साहसके साथ मोर्चा लें और अहिंसक साधनोंको अपनायें।

भाषण समाप्त करते हुए महात्मा गांधीने श्रोताओंसे पुनः अपील की कि वे अपने सब विदेशी कपड़ोंको उतारकर फेंक दें और यदि जरूरत हो तो उन्हें जला दें। उन्होने यह भी कहा कि वे कुछ दिनोंमें ही असमके दौरेसे कलकत्ता लौटेंगे और तब उनके बीच अधिक समयतक भाषण दे सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १८-८-१९२१

१. यह सभा साढ़े चार बजे शामको हुई थी। इसमें १५,००० से ऊपर हिन्दू-मुसलमान उपस्थित थे। उपस्थित लोगोंमें मौलाना अबुल कलाम आजाद और मुहम्मद अली भी थे।

२६६. पत्र : ख्वाजाको

[१७ अगस्त, १९२१ के बाद][1]

प्रिय ख्वाजा साहब,[2]

मैं गोवधके सम्बन्धमें आपके तारका जवाब पहले नहीं भेज सका इसके लिए आप कृपया मुझे क्षमा करेंगे। मैं जानता हूँ, भारतके बहुतसे भागोमें सचमुच बहुत ही अच्छा कार्य हुआ है। आप अन्नकी कमीके बारेमें तार चाहते थे। अब तार देनेका कोई उपयोग नहीं बचा है। मैं ४ तारीखको[3] आपसे मिलनेकी आशा करता हूँ। यदि स्थितिपर फिर भी विचार करनेकी जरूरत हो तो उस समय आप इसका उल्लेख करे।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ७५९९) की फोटो-नकलसे।

२६७. संयुक्त-प्रान्तमें दमन

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने मेरे लिए आजसे दो मास पूर्व निम्नलिखित टिप्पणी[4] तैयार की थी। इसमें उन्होंने ३० मईतक सयुक्त-प्रान्तमे होनेवाले दमनके तरीकोकी समीक्षा की है। दूसरे मामलोमे व्यस्त रहनेके कारण मैं पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी इन टिप्पणियोपर ध्यान नही दे सका। किन्तु वे आज भी उतनी ही ताजी लगती है जितनी जूनमे थी। सरकारकी ओरसे उत्पीड़नके आरोपका जो निराकरण किया गया है उसका लगभग पूरा जवाब पाठकको इन टिप्पणियोमे पढनेको मिलेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-८-१९२१

१. यह पत्र ख्वाजाके १६ तारीखके उस तारके जवाबमें लिखा गया था जो गांधीजीको १७ अगस्तको मुंगेरमें मिला था। तार इस प्रकार है: "पिछले वर्षकी ६ गौओंके मुकाबले इस वर्ष कुल २ की कुर्बानी की गयी।... स्वदेशीके सम्बन्धमें प्रतिक्रिया अत्यन्त आशाजनक। रुपयेका ४ सेर गेहूँ। अधिक महँगा होनेकी अफवाह। इससे नगरमें महान् विक्षोभ। खतरनाक स्थिति उत्पन्न होनेकी आशंका। कृपया तारसे सलाह दें।"

२. अनुमानतः अलीगढ़के राष्ट्रीय मुस्लिम विश्वविद्यालयके उप-कुलपति ख्वाजा अब्दुल मजीद।

३. गांधीजीको ६ सितम्बरको होनेवाली कार्यकारिणीकी बैठकमें शामिल होनेके लिए ४ तारीखको कलकत्ता पहुँचना था।

४. टिप्पणीके पाठके लिए देखिए परिशिष्ट ५।

२६८. टिप्पणियाँ

'हिन्दी नवजीवन'

बहुतसे हिन्दी-भाषी मित्र इस बातके लिए उत्सुक थे कि मै 'नवजीवन'के हिन्दी सस्करणके प्रकाशनका दायित्व अपने ऊपर ले लूँ। मै स्वय भी उसके लिए उत्सुक था। किन्तु यह अबतक सम्भव नही हो सका। 'नवजीवन' और 'यग इडिया'के सम्पादनका काम सँभालना काफी कठिन होता है। किन्तु इसमे कोई सन्देह नही कि मै अपने विचारो और सिद्धान्तोको पसन्द करता हूँ। मेरी पक्की राय है कि वे भारतके लिए हितकर है और यदि मुझे पूर्ण विनम्रतासे इतना कहनेकी अनुमति हो तो वे सभीके लिए हितकर है। इस कारण मै मित्रो और कार्यकर्त्ताओके हिन्दी सस्करण निकालनेके दबावके आगे झुक रहा हूँ। मै जानता हूँ कि भारतके विभिन्न भागोमे मेरे लेखोके अनेक हिन्दी अनुवाद छपते है। किन्तु सभी चाहते थे कि 'नवजीवन' और 'यग इडिया'के चुने हुए लेखोका एक अधिकृत स्वतन्त्र अनुवाद एक जगह छपे। यह कार्य अब किया जा रहा है। इस सस्करणकी हिन्दी वस्तुत हिन्दुस्तानी होगी जो ऐसे हिन्दी और उर्दू सरल शब्दोसे बनी मिली-जुली भाषा होगी जिन्हे हिन्दू और मुसलमान दोनो समझते है। प्रयत्न यह किया जायेगा कि इसमे कोई सजावट न की जाये। असल बात तो यह है कि मै चाहता था कि इसका उर्दू रूप भी साथ ही निकले। किन्तु अभी यह नही निकाला जा सकता। मै पाठकोसे यह भेद भी छिपाना नही चाहता कि 'हिन्दी नवजीवन'के प्रकाशनमे जो यह जल्दी की गई है उसके पीछे मेरा अपने मारवाड़ी भाइयो और खास तौरसे जमनालालजीके प्रति आदरभाव है। जमनालालजीने प्रकाशकके रूपमे और श्री शकरलाल बैंकरने मुद्रकके रूपमे अपने नामकी सूचना अदालतमे दे दी है। गुजराती और अग्रेजी सस्करणोकी तरह 'हिन्दी नवजीवन'मे भी विज्ञापन नही रहेगे। इसे उन दोनोकी तरह स्वावलम्बी भी बनाना होगा; इसलिए इसे जो सहायता मिलेगी, इसका अस्तित्व उसीपर कायम रहेगा। हिन्दी संस्करणका चन्दा ४ रुपये वार्षिक होगा और ६ मासका २ रुपये होगा। जो लोग ग्राहक बनना चाहते है उनको मेरी सलाह है कि वे अभी आधे सालका चन्दा भेजें। 'हिन्दी नव-जीवन'का प्रकाशन अभी परीक्षणके रूपमे किया जा रहा है। मेरे पास कार्यकर्त्ता सीमित है। यदि मुझे स्वामी आनन्दानन्दकी अथक शक्ति और सूझबूझका सहारा न मिलता तो मै इस जिम्मेवारीको उठानेसे इनकार कर देता। हमने यह देख लिया है कि सबसे अच्छा काम वे लोग ही करते है जो स्वेच्छासे काम करते है। और इस प्रकारका शारीरिक या मानसिक श्रम करनेवाले लोगोको ढूंढना आसान नही है। इसलिए मै उन हिन्दी-प्रेमियोका, जिन्होने असहयोगको जीवनका सिद्धान्त बना लिया है, आह्वान करता हूँ कि वे 'नवजीवन'को परीक्षणके रूपमे छ. मासतक अपना सरक्षण दे। यह कहनेकी जरूरत नही कि ये पत्र मुनाफा कमानेके लिए नही निकाले गये है। इसलिए

यदि कोई बचत होगी तो वह तीनो सस्करणोके विकासमे लगाई जायेगी। पाठकोंकी दिलचस्पी यह जाननेमे भी होगी और उन्हे इससे प्रसन्नता होगी कि मौलाना मुहम्मद अलीने अपनी 'कामरेड' की मशीने, टाइप और अन्य सामग्री बिना कुछ लिये हमे दे दी है। इस प्रकार अशुभ शक्तियोसे असहयोगकी लडाई शुभ शक्तियोके निकटतम सहयोगपर निर्भर है। मै सरकारकी शक्तियोको अशुभ शक्तियाँ और असहयोगकी शक्तियोको असहयोगियोकी समस्त त्रुटियो और सीमाओके बावजूद शुभ मानता हूँ।

नकली माल

एक मित्र मद्राससे लिखते है —

> इसके साथ मै कपड़ेका एक नमूना भेजता हूँ। यह मद्रासमें बॉम्बे स्वदेशी स्टोर द्वारा १०–१५ आने गजके भाव, शुद्ध खादी — अर्थात् हाथकती और हाथबुनी खादीके नामसे बेचा जा रहा है। ऐसी धोखेबाजीसे लोगोंका बचाव किस तरह किया जाये? मुझे इसमें शक नहीं कि नमूनेका यह कपड़ा विदेशका बना है।

मैंने नमूनेके कपडेको देखा है। इसमें तो जरा भी सन्देह नही कि वह न तो हाथके कते सूतका बना है और न हाथसे बुना हुआ है। मुमकिन है कि वह हिन्दुस्तानकी मिलोमे तैयार हुआ हो। परन्तु मुझे तो उसकी चमक-दमक और सफाई हिन्दुस्तानकी अपेक्षा जापानी अधिक मालूम होती है। दु खकी बात तो यह है कि ऐसा माल स्वदेशी भण्डारो द्वारा बेचा जाता है। परन्तु ऐसी कुछ-न-कुछ धोखेबाजी तो होती ही रहेगी। हमे उसका सामना करनेके लिए सदा तैयार रहना चाहिए। वे इस बातके जीते-जागते प्रमाण है कि स्वदेशीका जोश बढता जा रहा है। परन्तु सवाल यह है कि इस धोखेबाजीको किस तरह पहचाना और रोका जाये। इसका अचूक उपाय तो यही है कि हम अपने लिए खुद ही सूत काते और उसे जुलाहोसे, अपनी ही देखरेखमे बुनवा ले। निस्सन्देह ऐसा समय आ रहा है। जब हम खुद कात न सके तब हमे सारे देशमे जो हजारो कातनेवाले तैयार हो रहे है उनसे सूत कतवा लेना चाहिए। यदि हमसे यह भी न हो सके तो जब हम खादी खरीदने लगें तब जो कपडा किसी भी तरह मिलका बना जैसा मालूम हो उसे न खरीदे। मोटे सूतके कपड़ोमें यह पहचान करना बड़ा ही कठिन है कि कौन-सा विदेशसे आया है और कौन-सा यहाँकी मिलोका बना है। हाथ-कते सूतकी खादीमे मिलकी-सी निस्तेज चमक नही रहती, बल्कि वह देखनेमें मोटी, झिरझिरी बुनावटकी, हलकी और छूनेमें मुलायम मालूम होती है। वह चिकनी और चमकदार तो होती ही नही। बचावका एक दूसरा उपाय यह है कि कपडा पाउडरसे सफेद किया हुआ न होना चाहिए। तीसरी एक और बात है परन्तु वह धोखेसे खाली नही। प्रत्येक काग्रेस जिलेमे ऐसी स्वदेशी दूकाने होनी चाहिए जिन्हे काग्रेसकी ओरसे प्रमाणित किया जाये। अच्छे जानकार निरीक्षक रखे जाये जो लगातार ऐसी दूकानोके मालकी जाँच किया करे। मुमकिन हो तो हरएक चीजपर मुहर लगी रहे। मै जानता हूँ कि अभी हममे इतना सगठन नही

हुआ है और हमे इतनी तालीम नही मिली है कि हम बहुत बडे पैमानपर इस कामको उठा सके। परन्तु जबतक हरएक जिला अपने लिए आवश्यक खादी तैयार न करने लगे तबतक ऐसी निगरानीकी तो निश्चय ही आवश्यकता है और सच्चे दिलसे जो-कुछ इसके लिए किया जा सकता है वह किया जाना चाहिए।

लखनऊके पाप-स्थान

एक अंग्रेज मित्रने मुझे लखनऊसे लिखा है:

> मैं यह पत्र आपसे यह अनुरोध करते हुए लिख रहा हूँ कि आप यहाँसे जानेके पहले लखनऊके वेश्यागृहोंके सम्बन्धमें यहाँके किसी अधिकारीको, जो आपके मतका समर्थक हो, कुछ लिख दें। आज सुबह मैं अमीनाबादमें फौजी पुलिसके सिपाहीसे बातचीत कर रहा था। उससे मालूम होता है कि उस तरफकी बस्तीमें ऐसे कोई पचास मुकाम हैं, जहाँ यूरोपीय और एंग्लो-इंडियन सिपाही अक्सर जाया करते हैं। (इनमें से कुछ लोग फौजी अदालतोंमें पेश भी किये जा चुके हैं, क्योंकि उस बस्तीमें फौजियोंका जाना मना है)। उसने हिन्दुस्तानियोंके विषयमें कुछ नहीं कहा; परन्तु मुझे बादमें किसीने बताया कि वे भी उन स्त्रियोंके यहाँ जाते हैं। मनुष्यके इस अधःपतन और असंयमके सम्बन्धमें आप यदि कुछ शब्द लिख देंगे तो वह इस बुराईको दूर करनेमें अन्य सब बातोंसे अधिक कारगर होगा। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि इस काममें जितनी सहायता मुझसे हो सकती है, मैं करूँगा।

मैं चाहता हूँ कि मैं भी इन अंग्रेज मित्रकी तरह विश्वास कर सकता कि मेरे शब्दोमे वह प्रभाव है, जो उन्होने बताया है। इन पंक्तियोको लिखते समय बार-बार मेरी आँखोके सामने उन प्यारी बहनोका चित्र आता है जो मुझसे रातके समय कोकोनाडामे मिली थी। जब मुझे उनकी लज्जाजनक स्थितिका हाल मालूम हुआ तब वे तो मुझे और भी प्यारी लगने लगी। वे केवल संकेतसे मुझे अपने जीवनकी दशा बता सकी थी। जो स्त्री उनकी तरफसे मुझसे बात कर रही थी उसकी आँखोमें लज्जा और दु.ख अंकित था। मैं उन्हे दोषी कहनेके लिए तैयार न हो सका। इस मुलाकातके बाद मैंने 'व्यक्तिगत चरित्र-शुद्धि' की आवश्यकतापर ही भाषण दिया। इसलिए आज मेरे हृदयमे लखनऊकी इन पतित बहनोके प्रति सहानुभूति उत्पन्न होती है। वे ऐसा लज्जाजनक जीवन बितानेके लिए मजबूर की गई है। मुझे यकीन हो गया है कि वे अपनी खुशीसे ऐसा जीवन स्वीकार नही करती। यह तो मनुष्यकी पशुवृत्ति है जिसने इस घृणित कुकर्मको एक 'धन कमानेका धन्धा' बना दिया है। लखनऊ अपनी आराम-तलबीके लिए मशहूर है। परन्तु वह एक मुसलमान औलियाका भी स्थान है। इस्लाममे जो-कुछ भी उत्कृष्ट व महान् है वह सब लखनऊमे है। हिन्दुओके लिए तो लखनऊ उस प्रान्तका सदर-मुकाम है जो सती सीता और रामकी पुण्यभूमि थी। वह हिन्दुओंकी पवित्रता, उदात्तता, शौर्य और सत्यपरायणताके श्रेष्ठ युगकी याद दिलाता है।

असहयोग आत्मशुद्धि है, और मैं सभी असहयोगियों तथा अन्य लोगोंसे भी कहता हूँ कि वे लखनऊकी इस नैतिक व्याधिको दूर करनेका उपाय करें। मैं आशा करता हूँ कि लखनऊकी शोहरतका हिमायती कोई भी व्यक्ति मुझसे यह नहीं कहेगा कि लखनऊ भारतके दूसरे शहरोंसे तो बुरा नहीं है। लखनऊका जिक्र तो यहाँ उदाहरणके तौरपर संयोगसे आ गया है। हम तो सारे भारतमें स्त्री जातिकी सुरक्षा और पवित्रताके लिए उत्तरदायी हैं। लखनऊ इसमें अगुआ क्यों न हो?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८–८–१९२१

२६९. मुसलमानोंकी बेचैनी

मैंने लखनऊमें मुसलमानोंको खिलाफतके मामलेमें बेचैन पाया। उनकी बेचैनी स्वाभाविक है। मौलवी सलामतुल्लाने कहा कि अंग्रेजोंका रुख तो अब असह्य होता जाता है। यह कहकर उन्होंने सौम्य भाषामें अंकारा सरकारकी स्थितिके विषयमें लोगोंकी जो भावनाएँ हैं उन्हींको व्यक्त किया है। इसमें कोई शक नहीं कि तुर्कोंके साथ मित्र-भाव रखनेके सम्बन्धमें अंग्रेजोंने जो आश्वासन दिये हैं उनके प्रति अविश्वास बढ़ता जा रहा है। अब इन दोमें से किसी बातपर कोई विश्वास नहीं करता कि अंग्रेजोंके आश्वासन बिलकुल सच्चे हैं या ब्रिटिश सरकार तुर्कोंकी मदद करनेमें असमर्थ है, अतएव अधीर और क्रोधित होकर मुसलमान तुरन्त कांग्रेस और खिलाफत कमेटीकी ओरसे कोई कड़ी और जोरदार कार्रवाईकी माँग करते हैं। मुसलमान तो स्वराज्यका अर्थ यह समझते हैं, और उनका ऐसा समझना ठीक है कि हिन्दुस्तान खिलाफतके मामलेका निपटारा पक्के तौरपर करनेके लायक हो जाये। इसलिए वे कहते हैं कि अगर स्वराज्यके मिलनेमें काफी देरी है या उसके लिए प्रयत्न करते हुए मुसलमानोंको कायरोंकी तरह लाचार भूमध्य सागरमें टर्कीकी बरबादी देखते रहना पड़े तो मुसलमान उसके लिए तैयार नहीं है।

यह नामुमकिन बात है कि ऐसी हालतमें मुसलमानोंके लिए हमदर्दी न पैदा हो। यदि कोई कारगर इलाज मेरे खयालमें आया होता तो मैं जरूर खुशीसे कोई फौरी कार्रवाई करनेकी सिफारिश करता। अगर मैं देखता कि स्वराज्यकी हलचलको मुल्तवी कर देनेसे हम खिलाफतको ज्यादा फायदा पहुँचा सकेंगे तो मैं खुशीसे ऐसी सलाह देता। करोड़ों मुसलमानोंका दिल हलका करनेके लिए अगर असहयोगके अलावा भी मुझे कोई उपाय नजर आता तो मैं खुशीसे उसमें लग जाता।

मगर मेरी नाकिस रायमें तो खिलाफतके अन्यायको जल्दीसे-जल्दी मिटानेका अगर कोई साधन है तो वह स्वराज्य ही है। और यही कारण है कि मेरे लिए तो स्वराज्यका पाना ही खिलाफतके सवालका हल होना है और खिलाफतके सवाल-का हल होना ही स्वराज्य पाना है। मुसीबतके मारे हुए तुर्कोंको मदद पहुँचानेका सिर्फ एक ही उपाय हिन्दुस्तानके लिए है और वह है खुद अपने अन्दर इतनी ताकत

पैदा कर लेना, जिससे वह अपने स्वत्वको प्रदर्शित कर सके। यदि वह एक मियादके भीतर इतनी शक्ति नही बढा सकता तो फिर हिन्दुस्तानके लिए दैवाधीन होनेके सिवा बाहर निकलनेका दूसरा कोई रास्ता नही है। जिसे खुद लकवा मार गया है वह अगर दूसरेकी मददके लिए हाथ बढाना चाहे तो वह पहले खुद लकवेसे अपना पीछा छुड़ानेके सिवा और क्या कर सकता है? इसके बजाय अगर हम केवल नासमझी, नादानी और गुस्सेमे आकर खून-खराबी कर बैठे तो इससे अन्दरकी आग भले ही बाहर आकर धधक उठे, टर्कीका दुःख दूर नही हो सकता। और न इससे हिन्दुस्तानमें ऐसी ताकत ही आ सकती है कि वह अपने स्वत्वको प्रदर्शित कर सके। और इसके अलावा उस दंगे-फसादको दबानेके लिए जो उपाय काममे लाये जायेगे उनसे सम्भव है हमारा वह वेग, जिसके साथ आज हम अपने लक्ष्यकी ओर दौडे चले जा रहे है, बहुत मन्द पड जाये।

तो भी हमें किसी तरह निराश होनेका कोई कारण नही। कांग्रेसका सारा कार्यक्रम ऐसा ही बनाया गया है और ऐसे ही उपाय किये जा रहे है जिनसे खिलाफतके संकटका सामना किया जा सके। स्वदेशीके कार्यको पूरा करनेकी मियाद दो मासकी रखी गई है। यह निस्सन्देह एक ऐसा तीव्र और प्रबल उपाय है जिसके द्वारा देशका सम्पूर्ण सत्त्व प्रकट हो सकेगा। और यदि भारतने सितम्बरतक पूरा बहिष्कार कर दिखाया और अक्तूबरमे वह अपने पॉवोपर खडा हो गया तो निश्चय ही इससे बड़े-बड़े तेज मिजाजवाले लोगो और मुझ जैसे अधीर तथा जोशीले खिलाफतियोकी आत्माको भी सन्तोष होगा।

पर बात यह है कि अभी हमारे काम करनेवाले सभी लोगोको न तो इस बातका यकीन हो पाया है कि बताई हुई मियादके भीतर स्वदेशीका कार्यक्रम पूरा हो जायेगा और जो करामात इसमें बताई जाती है न वे उसके कायल हो पाये है। ऐसे सशयात्मा लोगोको जबतक कि वे इससे बेहतर और जल्दी असर करनेवाला दूसरा उपाय नही बता सकते और उसे देशसे स्वीकृत नही करा सकते, इससे अलग ही रहना लाजिम है। अथवा शकालु होते हुए भी उन्हे शुद्ध हृदयसे स्वदेशीके काममे जुट जाना चाहिए और इस प्रयोगको सचाईके साथ आजमाना चाहिए। सन्देह करना ठीक हो तो भी क्या यह सन्देह करना कि भारत स्वदेशीके कार्यक्रमके अनुसार काम करनेमे समर्थ नही है, यह नही बतलाता कि खिलाफतके काममे भारतको वास्तवमे कोई अनुराग नही है और वह उसके लिए कुछ भी त्याग करना नही चाहता? क्या हर हिन्दू और मुसलमानके लिए विदेशी वस्त्र-मात्रको छोडकर सिर्फ खादी पहनना, कोई बडा भारी स्वार्थ-त्याग है? यदि भारतवर्ष ऐसी क्षमता प्राप्त नही करता तो क्या यह इस बातका सबूत नही होगा कि वह इससे अधिक स्वार्थ-त्यागके लायक नही है और इसलिए टर्कीकी सहायताके योग्य भी नही है? आइए, हम सब मिलकर विदेशी कपड़ोका पूरा बहिष्कार करे और जितनी जरूरत है उतनी खादी बनाये; इतना करनेपर हमे अपना लक्ष्य समीप आता दिखाई देने लगेगा।

लखनऊमे यह मसला बड़ी सजीदगीके साथ पेश किया गया था कि हम राली ब्रदर्सका जो कि एक यूनानी कम्पनी है, बहिष्कार करके यूनानियोसे बदला चुका ले

तथा उन मजदूरोसे जो बन्दरगाहोपर काम करते है, कहे कि वे विदेशी जहाजोपर माल न चढ़ाये। मै तो समझता हूँ कि ये दोनो सुझाव अस्वाभाविक है और उनको कार्यरूपमे परिणत करना भी असम्भव है। जरा देरके लिए मान लीजिए कि हम एक क्षणमे राली ब्रदर्सका कारोबार चौपट कर सकते है, पर इसका असर यूनानपर क्या पड़ सकता है? राली ब्रदर्स सारा या ज्यादातर माल यूनान नही भेजते। उनका व्यापार तो सारी दुनियामे फैला हुआ है। अतएव स्वदेशीका काम उठानेकी अपेक्षा उनके व्यापारके साथ झगडना ज्यादा कठिन होगा। ऐसा करना गलत है इस बातको जाने दे तो भी इस तरहके काम करके हम अपनी हँसी करायेगे, जो ठीक ही होगी। विदेश जानेवाले जहाजोपर काम करनेवाले मजदूरोके काममे बाधा डालना भी उतना ही असगत है। यदि जनतापर हमारा इतना पूर्ण नियन्त्रण होता तो हम इस समरमे अबतक कभीके जीत गये होते। मालका बाहर जाना बन्द कर देनेके लिए हमे आज काम करनेवाले सारे मजदूरोका काम हमेशाके लिए या एक अनिश्चित समयतक बन्द रखना होगा। यही नही बल्कि ऐसा करते समय यह पहले ही मान लिया जाता है कि जो मजदूर काम बन्द कर देगे उनकी जगह दूसरे मजदूरोको कामपर न आने देनेकी सामर्थ्य हममे है। मेरा तो खयाल है कि अभी हम इतने सगठित नही है। ऐसी कोशिशमे नाकामयाब होनेके सिवा और कुछ हासिल नही होगा। और भी बुरा नतीजा न निकले तो गनीमत समझिए।

इसका एक ही सम्भव उपाय है कि हम तुरन्त सविनय अवज्ञा शुरू कर दे। परन्तु मुझे इतमीनान हो गया है कि देश अभी बडे पैमानेपर इसे करनेके लिए तैयार नही है। पर यदि देश इस बातको दिखा दे कि उसमे सगठनकी इतनी काफी क्षमता है, उसके पास इतने विभिन्न साधन है और उसमे इतनी नियमबद्धता है जितनी कि स्वदेशी जैसे सर्वथा व्यवहार्य कार्यको पूर्णत सफल बनानेके लिए आवश्यक है, तो कानूनका सविनय भग बिना जोखिमके सफलतापूर्वक शुरू किया जा सकता है। आइए, हम यह आशा और प्रभुसे प्रार्थना करे कि देश ऐसा कर दिखाये।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-८-१९२१

२७०. द्वेषपूर्ण अभियोग

संयुक्त-प्रान्तके दौरेमे दमनकी अजीब कहानियाँ मेरे सुननेमे आईं। अभी तो मैं केवल उन दो अभियोगोकी चर्चा करना चाहता हूँ जिनको द्वेषपूर्ण कहनेमे मुझे कोई हिचक नही है। सीतापुरके जमीदार मोहनसिंह दरमल और भूतपूर्व तहसीलदार शम्भुनाथको सम्मन भेजे गये है और पूछा गया है कि उनसे जमानत क्यो न माँगी जाये। उनका अपराध सम्मनमे यह बताया गया है:

> चूँकि रामगढ़के पटवारीकी सूचनासे यह प्रकट होता है कि
>
> १. ठा० मोहनसिंह रामगढ़वाले
>
> २. बा० शम्भुनाथ, भूतपूर्व नायब तहसीलदार, जो अब भुवाली और भुन्याधरमें हैं, सरकारके विरुद्ध आन्दोलनमें भाग ले रहे हैं और तिलक स्वराज्य-कोषकी हुण्डियाँ बेच रहे हैं। चूँकि कानून द्वारा संस्थापित सरकारके विरुद्ध ऐसे आन्दोलनसे आम लोगोंके अमन चैनमें विघ्न पड़ने और शान्तिके भंग होनेका अन्देशा है, अतः इन लोगोंसे स्पष्टीकरण माँगा जाता है कि उनमें से हर एकसे एक साल तक शान्ति कायम रखनेके लिए १,००० रुपयेके मुचलके और ५००–५०० रुपयेकी दो जमानतें क्यों न ली जानी चाहिए।

ऊपरी तौरपर सम्मनसे कोई अपराध प्रकट नही होता। परन्तु पटवारीका बयान पढ़कर स्थितिकी दुःखजनक हास्यास्पदता बढ़ जाती है। इसमे कहा गया है कि अभियुक्तने पण्डित मोतीलाल नेहरूको चन्दा दिया है और उसे रामगढ-जैसी हवाखोरीकी जगहमे पण्डित (मोतीलाल) नेहरू-जैसे पक्के असहयोगीके साथ देखा गया है। यह सच है कि न्यायाधीशमे ऐसे प्रसगोचित तथ्यका जिक्र करनेका साहस नही है, परन्तु जैसा कि दूसरे अभियुक्तके बयानसे सुस्पष्ट हो जाता है, उसका एकमात्र अपराध पण्डितजीके साथ रहना और उनकी सेवा करना ही है। अभियुक्त अपने जिलेका एक प्रसिद्ध व्यक्ति है। यह भी सभी जानते हैं कि वह क्षयरोगसे पीडित है और अब उसका रोग चरम अवस्थामे है। उसका दाहिना फेफडा समाप्त-प्राय. है। उसका बायाँ फेफड़ा और उसकी आँतें भी बहुत खराब हैं। उसने महीनोसे किसी राजनैतिक काममें भाग नही लिया है। उसने भाषण भी नही दिये है। वह रामगढमे पण्डितजीकी तरह स्वास्थ्य सुधार रहा है। अत· न्यायाधीशके लिए उसे गिरफ्तार करनेका या गिरफ्तारीके बाद उसपर मुकदमा चालू रखनेका कोई कारण ही नही है। तथ्य यह है कि न्यायाधीश असहयोगसे तनिक भी सम्बद्ध लोगोको स्पष्टतः आतंकित करना चाहता है। इसमे वे लोग भी आ जाते है जो गाँवमे चन्दा इकट्ठा करते हैं या असहयोगियोकी सहायता करते हैं। कहा जा सकता है कि ऐसी घटनाएँ वास्तवमे अपवाद-स्वरूप है और उनके महत्त्वकी अतिरजनाकी कोई जरूरत नही। मैं इस सिद्धान्तको माननेमे असमर्थ हूँ। इस दृष्टान्तमे न्यायाधीशने सम्भवतः एक मौलिक तरीका अपनाया है, परन्तु

संयुक्त-प्रान्तमे मैंने जो-कुछ देखा उससे मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि वहाँ एक ऐसा परोक्ष आतकवाद चालू है जैसा शायद सिन्धको छोड़कर अन्यत्र कही नही है। इसका एकमात्र उद्देश्य असहयोगकी समस्त प्रवृत्तियोको कुचल डालना है, चाहे वे कितनी ही अहिंसात्मक और सब प्रकारसे निर्दोष क्यो न हो। अली भाइयोके क्षमा-याचनाके वक्तव्यका भी अत्यन्त बेईमानीभरा उपयोग किया जा रहा है। उसका उपयोग करनेवाले अली भाइयोकी क्षमा-याचनाकी रीति और विधिसे परिचित है। परन्तु अली भाइयोके इस वीरतापूर्ण कार्यको विकृत रूपमे प्रस्तुत करना इन लोगोकी उन धूर्तताओं-की तुलनामें कुछ नही है जिन्हे ये असहयोगियोको झुकाने और दूसरोको उनके मार्गसे हटानेके उद्देश्यसे प्रयोगमे लाते है। मुझे पक्का पता है कि असहयोगका झण्डा उठानेकी हिम्मत करनेवाले निर्धनोको इसलिए सताया जाता है कि वे काग्रेस कमेटीमे शामिल न हो और उनको वैसे ही आपत्तिजनक तरीकोसे उन शान्ति सभाओमे शामिल होनेके लिए बाध्य किया जाता है जो वस्तुतः गैरकानूनी है; क्योकि उनके बनाने और चलानेमे अवैध और अनैतिक विधियाँ अपनाई जाती है। सयुक्त-प्रान्तकी सरकार कूट और भीरु ढंगसे वही कर रही है जो सर माइकेल ओ'डायरकी सरकारने लट्ठमार तरीकेसे किया था। उन्होने अपनी नीतिके अनुरूप अमल किया और सब नेताओको गिरफ्तार कर खुलेआम जलियाँवालाका वातावरण बनानेका साहस दिखाया था। मैं इस तथ्यकी ओर दूसरे स्थानोपर पाठकोका ध्यान आकृष्ट कर चुका हूँ कि पजाबमे सैनिक भरतीके दिनोमे जलियाँवालासे भी भीषण घटनाएँ हो चुकी है, किन्तु उनकी ओर किसीका ध्यान नही गया, क्योंकि नेता गिरफ्तार नही किये गये थे। सयुक्त-प्रान्तकी सरकार श्री शेरवानीके जैसे इक्के-दुक्के उदाहरणोको छोड़कर बड़े नेताओंको गिरफ्तार नही करेगी। सरकारने श्री रगा अय्यरको गिरफ्तार किया है। उसने अभी तक पण्डित जवाहरलाल नेहरू या श्री जोजेफको हाथ भी नही लगाया है, हालाँकि चुनौती तीनोने साथ-ही-साथ दी थी। मैंने सयुक्त-प्रान्तके अपने निरीक्षणको लेखबद्ध करनेका झझट इसलिए उठाया है कि मैंने श्री चिन्तामणिका वह भाषण पढा है जिसमे उन्होने सरकारकी कार्रवाईका जोरदार समर्थन किया है और मुझपर यह जोर भी डाला गया है कि मैं पूर्ण उत्तरदायी सरकारकी तरह सुधारोको कार्यान्वित करनेवाले उन मन्त्रियोको प्रोत्साहन दूँ। मेरे तुच्छ विचारमे जहाँ भी सम्भव है वहाँ सुधारोको और सुधारोके अन्तर्गत बनाये गये मन्त्रियोका उपयोग चतुर परन्तु बेईमान नौकरशाहीको सहारा देनेके लिये किया जा रहा है। मत्री इस बातको नही जानते और वे अनचाहे उसके हाथोकी कठपुतली बन रहे है, किन्तु इससे नीतिकी सदोषतामे कोई कमी नही आती। हाँ, इस स्थितिमे मत्रियोका दोष कुछ हलका जरूर मालूम पड़ता है। मुझे यह विश्वास करनेमे हिचक है कि राजा साहब महमूदाबाद और श्री चिन्तामणि यह जानते है कि वे क्या कर रहे है। मेरा खयाल तो यही होता है कि वे नौकरशाहीके जालमे मजबूरन फँस गये है और उनके सम्मुख जो प्रत्यक्षत उचित दिखनेवाली दलीले रखी गई है उनके कारण वे उन बातोको क्षम्य मान लेते है जिन्हे वे अन्यथा बेहिचक निन्दित ठहराते। 'इडिपेडेट' ने लिखा है कि राजा महमूदाबादने उस जिला न्यायाधीशके कार्यका समर्थन किया है जिसने पूर्वी बदायूंके एक मुन्सरिमको अपने बेटेका,

जिसे दफा १४४ के अन्तर्गत नोटिस दिया गया था, राजभक्तिका शपथ-पत्र दाखिल न करनेपर मुअत्तिल कर दिया था। वह जबतक आवश्यक शपथ-पत्र दाखिल न करे तबतक के लिए १० मईको मुअत्तिल किया गया। यह बात सच है कि पुत्र पिताके साथ रहता था। फल यह हुआ कि मुन्सरिमने ६ जूनको अपने बेटेकी ओरसे अमन सभामे शामिल होनेकी अर्जी पेश कर दी और अपने बेटेकी इच्छानुसार काम करनेकी स्वतन्त्रताको बेचकर नौकरीपर अपनी बहाली हासिल कर ली। यदि हम पर्देके पीछे झाँककर देख सकते तो सम्भवत हमे बेचारे मुन्सरिमकी मुअत्तिलीके समर्थक गुप्त खरीते मिल जाते। खैर, जो भी हो यह दु खजनक तथ्य है कि सरकारी नौकरोपर यह दबाव डाला जा रहा है कि वे अपने लडकोको असहयोग आन्दोलनसे हटा ले। मुझे कोई शक नही कि तीन साल पहले राजा साहब स्वय सरकारी नौकरो और उनके परिवारोके ऐसे भयकर पतनके विरुद्ध मुझसे कही अधिक सशक्त रूपसे लिखते और भाषण देते थे। मन्त्रिगण बेईमान लोगोके हाथो कठपुतली बनाये जा रहे है इस सत्यकी ओर लोगोका ध्यान आकृष्ट करनेसे भी अधिक मतलबकी बात यह है कि असहयोगियो-को सरकारके यहाँ उल्लिखित अवैध और अनैतिक कार्योसे हतोत्साह न होना चाहिए प्रत्युत यह समझ लेना चाहिए कि हमे ऐसे और इससे भी कडे दमनकी आशा रखने और उसे यह मानकर कि विश्वके सब सुधारकोके भाग्यमे यही बदा है, प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करनेकी जरूरत है। आततायी सचमुच यही विश्वास रखते है कि हम गलती कर रहे है और देशको हानि पहुँचा रहे है और जिस आन्दोलनके हम समर्थक है वह कुचला जाता हो तो उसको कुचलनेमे कैसे साधन प्रयुक्त किये जाते है यह बात कोई महत्त्व नही रखती। अत हमे दमनको विजयकी प्रस्तावना समझना चाहिए, और इस कारण उसका स्वागत करना चाहिए और उससे अपने निश्चयको दृढ़तर बनाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-८-१९२१

२७१. मेरी भूल

परमात्मा ही जानता है कि मैने कितनी बार भूले की है। जो लोग यह समझते है कि मुझसे भूल नही होती वे मुझे नही पहचानते। मेरे निजी अनुभवोने तो मुझे नम्रतापूर्वक इस बातको जानना और मानना ही सिखाया है कि भूलोसे सग्राम करना ही जीवन है। १९१९मे जब मैंने बडी प्रसन्नतासे सत्याग्रह आरम्भ किया, मैंने देखा कि मैंने बड़ी भारी गलती की है। नडियादमे ज्यो ही मैंने दूरदेशीकी कमी देखी त्यों ही कहा कि यह तो 'हिमालय जैसी गलत-अन्दाजी' है। इसमे कोई अत्युक्ति नही थी। और यदि इससे भारतकी नैतिक उन्नतिकी क्षति नही हुई है तो इसका कारण यह है कि भूलको साफ और पूरे तौरपर कबूल कर लेनेकी बुद्धि मुझमे थी। अब अगले कुछ सप्ताहोमें एकाग्र होकर "स्वदेशी" का आन्दोलन करते समय

मैं एक और भूल स्वीकार कर लेना चाहता हूँ। अध्यापकों और विद्यार्थियोंके साथ बातचीतमें तो मैंने वह भूल पहले ही कबूल कर ली है। परन्तु अपने चित्तकी शान्ति और साथ ही वर्तमान स्वदेशी-प्रचारके कार्यके लिए उसे सब लोगोंके सामने अधिक निश्चित रूपसे स्वीकार कर लेना आवश्यक है। इन नौ महीनोंके अनुभवने यह बात पक्की कर दी है कि सरकारी शिक्षा-संस्थाओंका बहिष्कार करना ठीक ही था। परन्तु उस समय विद्यार्थियोंको जो मार्ग बताया गया उसमें मेरी कमजोरी थी। इसे मैं कमजोरी इसलिए कहता हूँ कि मुझे अपनी बातपर दूसरोंको विश्वास करा देनेकी अपनी क्षमतापर विश्वास नहीं था। मैंने इसके नतीजेको भगवान्‌पर छोड़नेकी बजाय उसकी चिन्ता खुद ही की। इससे मुझमें दुर्बलता आ गई और मैंने लड़कोंसे कहा, मदरसे छोड़ देनेपर, चाहे गलियोंमें घूमते फिरो, चाहे वैसी ही पढ़ाई पढ़ो या, सबसे बेहतर, स्वराज्य स्थापित होनेतक हाथ-कताईके काममें लग जाओ। परन्तु नागपुर कांग्रेसके प्रस्तावके वाद ही मैंने जान लिया कि लड़कोंको कई मार्ग बताकर मैंने गलती की है। परन्तु अनर्थ तो हो ही चुका था। वह पिछले सितम्बरमें शुरू हुआ और जनवरीसे मैं उसे सुधारने लगा। परन्तु मरम्मत तो हमेशा पैवन्दका काम देती है। और इसीलिए अधिकतर असहयोगी विद्यालयोंमें चरखा कातना एक अनावश्यक कार्य या कालक्षेपका साधन हो गया है। मुझे साहस करके सारी सच्ची बात कहनी थी और बताना था कि हाथसे कातना और बुनना शिक्षा-संस्थाओंके बहिष्कारके प्रस्तावका अभिन्न अंग है। हाँ, यह सच है कि इससे शायद कम लड़कोंने स्कूल छोड़े होते। परन्तु उन्होंने उन हजारों लड़कोंकी बनिस्बत, जिन्होंने इस मार्गके विषयमें निश्चित कल्पना किये बिना ही स्कूल और कालेज छोड़ दिये हैं, बहुत ज्यादा काम किया होता। अबतक तो वे हाथ-कताई और हाथ-बुनाईमें प्रवीण हो गये होते और हमारा स्वदेशीका काम ज्यादा आसान हो गया होता। मैं जानता हूँ कि असहयोगी विद्यालयोंके अध्यापक और विद्यार्थी अपनी पूरी शक्ति इसमें लगा रहे हैं। परन्तु यह मानना होगा कि वे उसे दिक्कतके साथ कर रहे हैं। वे सामान्य रूपसे स्वदेशी या हाथ-कताईके विषयमें कोई विश्वास लेकर नहीं आये हैं। उन्होंने इस प्रश्नपर सिर्फ शिक्षाकी दृष्टिसे ही विचार किया है और ऐसा करनेका उन्हें अधिकार भी था। उनके लिए तो बस इतना ही काफी था कि वे सरकारी शिक्षालयोंसे निकल आयें और इस तरह उन्होंने सरकारका मान घटा दिया। अब यह कहना उनको अखरेगा कि तुम्हारा बहिष्कार पूर्ण तभी हो सकता है जब तुम सूत कातो और खादी तैयार करो, और इस नई (स्वराजी) शिक्षा-विधिकी आरम्भिक पढ़ाई तो यही है कि संग्रामके समयमें हाथ-कताईका तथा कपड़ा तैयार करनेकी दूसरी क्रियाओंका ज्ञान प्राप्त किया जाये।

परन्तु अब जब कि गलती हो चुकी है, मुझे उसकी सजा भोगनी लाजिम है; और वह इस रूपमें कि मैं धीरजके साथ शंकालुओंको यह विश्वास करानेका प्रयत्न करूँ कि यदि मैंने हाथ-कताईको भी असहयोगके शिक्षा-सम्बन्धी कार्यक्रमका एक आवश्यक अंग बनानेपर जोर दिया होता तो अच्छा होता। अतएव मैं उन सब लोगोंका, जिनका मत मुझसे मिलता है, आह्वान करता हूँ कि वे अब इस भूलको सुधारनेमें जल्दी करें और जिन राष्ट्रीय शिक्षा-संस्थाओंपर उनका प्रभाव है उनमें सूत और

खादी तैयार करानेके काममे तत्परतापूर्वक लग जायें। वे शिक्षकोकी मांग मुझसे न करे। शिक्षक मेरे पास ही बहुत कम हैं। परन्तु उन्हे मैं यह बताये देता हूँ कि कपड़ा बनानेके लिए गांठकी रुईपर कौनसी क्रिया किस तरह करनी चाहिए। आज तो हमें आमतौर पर गाँठकी रुई ही मिलती है। सबसे पहले वह धुनी जानी चाहिए। हिन्दुस्तानका ऐसा कोई हिस्सा नही जहाँ धुनिये या पिंजारे न मिलते हो। ये रुई धुन दे सकते है और एक-दो दिन ध्यानसे देखनें-मात्रसे उस रीतिको समझा जा सकता है। छ: घंटा रोजके हिसाबसे एक हफ्ता अभ्यास करनेपर मामूली तौरपर अच्छा धुनना आ सकता है।

धुनी हुई रुईकी अब पूनियाँ बना ले। पूनी बनाना तो इतना सीधा और आसान काम है कि एकाएक कोई उसपर विश्वास भी नही करेगा।

अब रुई सूत कातने योग्य हो गई। सूत कातना किसी भी कातनेवाले से सीखा जा सकता है। वही सूत 'सूत' हो सकता है जिसमे गर्द न लगी हो, जो एकसार और अच्छा वटदार हो। यदि सूत एकसार और अच्छा वटदार न होगा तो वह बुना नही जा सकेगा।

इसके बाद माडी लगाई जाती है। इसका अभ्यास कुछ कठिन है। मुझे कोई वैज्ञानिक नियम नही मालूम जिससे यह बताया जा सके कि उसमे कौन-सी वस्तु कितनी होती है। यह काम किसी तजुर्बेकार जुलाहेसे जानना होगा।

सूत साँधनेकी क्रिया भी अलगसे सीखनी चाहिए। जिस तरह साइकिल चलानेमें कुछ तरकीबसे काम लेना पड़ता है उसी तरह इसमे भी है और वह आसानीसे आ सकता है।

अब रही बुनाई। यह केवल अभ्यासकी बात है। इसका तत्त्व तो एक ही दिनमें समझमे आ जाता है। मैं दावेसे कहता हूँ कि इसकी क्रिया बड़ी आसानीसे सीखी जा सकती है। पाठक इसपर आश्चर्य न करे। सारा आवश्यक और स्वाभाविक कार्य आसान होता है। बस, प्रवीणता प्राप्त करनेके लिए लगातार अभ्यास और कामके पीछे पड़नेकी जरूरत होती है। कामके पीछे पड़नेकी योग्यता ही स्वराज्य है। वही योग है। पाठकोको एक ही काम लगातार करते रहनेसे उकताना भी नही चाहिए। कामकी ऐसी एकरूपता — अर्थात् किसी कामका एक ही तरहसे किया जाना — तो प्रकृतिका नियम है। सूर्यको देखिए, किस तरह वह बार-बार उदित होता है। यदि सूर्य मौजमें आकर कही मनोरजन करनेमे अटक जाये तो खयाल कीजिए, दुनियापर आफतका कैसा पहाड़ टूट पडेगा। परन्तु एक प्रकारकी एकरूपतासे रक्षा होती है, और दूसरे प्रकारकी एकरूपतासे संहार होता है। आवश्यक कार्योंकी एकरूपतासे आह्लाद और जीवन मिलता है। कारीगर अपनी कारीगरीसे कभी नही उकताता। जो कातनेवाला सूत कातनेकी कलामे निपुण हो गया है वह निश्चय ही अथक लगातार काम करता रहेगा। सूत कातनेमें तकुवेसे जो सगीत निकलता है उससे अच्छा कातनेवाला तुरन्त ही आनन्द लाभ करने लगता है। और जब भारत सूत कातनेके बलपर स्वराज्य प्राप्त कर लेगा तब उसका यह कार्य एक सुन्दर कार्य होगा और वह सदा आनन्दका स्रोत होगा। परन्तु यह चरखेके

विना नही हो सकता। अतएव भारतके लिए सवसे श्रेष्ठ राष्ट्रीय शिक्षा यही है कि बुद्धिमत्तापूर्वक चरखा चलाया जाये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-८-१९२१

२७२. पत्र : देवदास गांधीको

असम

बृहस्पतिवार [१८ अगस्त, १९२१][1]

चि० देवदास,

मैं तो चाहता हूँ कि तुम वही रहो। तुम्हे वहाँ वहुत सारे अनुभव प्राप्त करने है — 'यग इडिया' में तथा 'नवजीवन' हिन्दी और गुजराती दोनोंमे। हिन्दी विभागमे तुम खूब काम कर सकते हो। और फिर वाको जो शान्ति दे सकते हो सो अलग। यदि तुम दिलचस्पी लो तो वहाँ कातना और पीजना भी है। छोटी-मोटी तकरारे हो जानेपर तुम वैद्यका काम कर सकते हो। इसलिए मेरा खयाल है कि इस महीने तो तुम्हारा वही रहना ठीक होगा। अव ब्रह्मपुत्रको पार करनेका समय आया है। डाक जानेसे पहले इस पत्रको पूरा करना होगा, इसलिए अधिक नही लिखता। हरिलालके साथ ठीक-ठीक वातचीत हुई है। उसने मुझे वताया कि उसने भी अगस्तसे खादीकी टोपी पहनना आरम्भ कर दिया है।

वापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ७६३१) की फोटो-नकलसे।

१. गाधीजी १७ अगस्तको कलकत्तामें तथा १९ को गोहाटीमें थे। सम्भवतः उन्होंने १८ अगस्तको जो कि बृहस्पतिवार था ब्रह्मपुत्र पार की थी।

२७३. 'हिन्दी नवजीवन'

यद्यपि मुझे मालूम है कि 'नवजीवन' को हिन्दीमे प्रकाशित करना कठिन काम है तथापि मित्रोके आग्रहवश होकर और साथियोके उत्साहसे 'नवजीवन' का हिन्दी अनुवाद निकालनेकी धृष्टता मै करता हूँ। मेरे विचारोपर मेरा प्रेम है। मेरा विश्वास है कि उनके अनुकरणसे जनताको लाभ है। इसलिए उनको हिन्दीमे प्रकट करनेकी इच्छा मुझे बहुत समयसे थी। परन्तु आजतक परमात्माने उसे सफल नही किया था। हिन्दुस्तानीको भारतवर्षकी राष्ट्रीय भाषा बनानेका प्रयत्न मै हमेशासे करता आया हूँ। हिन्दुस्तानीके सिवा दूसरी भाषा राष्ट्रभाषा नही हो सकती, इसमे कुछ भी शक नही। जिस भाषाको करोडो हिन्दू-मुस्लिम बोल सकते है, वही अखिल भारतवर्षकी सामान्य भाषा हो सकती है, और उसमे जबतक 'नवजीवन' न निकाला गया तबतक मुझे दुःख था।

हिन्दुस्तानी-भाषानुरागी 'हिन्दी नवजीवन' मे उत्तम प्रकारकी हिन्दीकी आशा न रखे। 'नवजीवन' और 'यग इडिया' का अनुवाद ही उसमे देना सम्भवनीय है। मुझे न तो इतना समय है कि हमेशा हिन्दुस्तानीमे लेख आदि लिखकर दे सकूँ और न बहुत हिन्दुस्तानी लिखनेकी शक्ति ही मुझमे है।

'हिन्दुस्तानी भाषाका प्रचार' इस साहसका मुख्य हेतु नही है। 'शान्तिमय असहयोगका प्रचार' ही इसका उद्देश्य समझना चाहिए। हिन्दुस्तानी भाषा जाननेवाले जबतक असहयोग और शान्तिके सिद्धान्त भलीभाँति न समझ लेगे, तबतक शान्तिमय असहयोगकी सफलता असम्भव-सी है। इसलिए 'हिन्दी नवजीवन' की आवश्यकता थी। परमात्मासे प्रार्थना है कि जो लोग केवल हिन्दुस्तानी ही समझते है, उन्हे 'हिन्दी नवजीवन' मददगार हो।

हिन्दी नवजीवन, १९-८-१९२१

२७४. मारवाड़ी भाइयों और बहनोंसे

प्रिय भाई-बहनो,

आपके प्रेमवश होकर मैने 'हिन्दी नवजीवन' निकालनेका साहस किया है। जबसे मै भारतवर्षमे आया हूँ, तबसे मेरा आपका सम्बन्ध निकट आता जा रहा है। आपने मेरी प्रवृत्तिको प्रेमभावसे देखा है और मुझे सहायता दी है। आपने हिन्दी-प्रचारमे खूब मदद की है। आपकी ही सहायतासे आज द्राविड प्रान्तोंमे हिन्दीका प्रचार अच्छी तरह हो रहा है। आप भाई और बहने असहयोगी है। आप राष्ट्रीय जीवनमे रस लेते है। आपने देख लिया है कि धनी पुरुष और स्त्रियाँ राष्ट्रीय जीवनसे पराड्मुख नही रह सकते।

आप धर्मप्रेमी हैं। धर्मके लिए आप लाखो रुपये देते हैं। आपमें साहस भी है। द्रव्योपार्जन आपका प्रधान क्षेत्र है। [तथापि] धनिकवर्गके अलग रहते हुए इस धर्म-युद्धमे, जो आज भारतवर्षमे छिड़ रहा है, सफलता मिलना मुझे बहुत ही कठिन दिखाई देता है।

अखिल भारतकी राष्ट्रीय समितिने स्वराज्य प्राप्तिके लिए अब जो कदम उठाया है, उसमे आप लोगोकी ओरसे सहायता मिलनेपर ही सम्पूर्ण सफलता मिल सकती है। उक्त समितिने निश्चय कर लिया है कि आगामी ३० सितम्बरतक विदेशी कपडोका पूरा बहिष्कार कर दिया जाये। मैंने आपके ही विश्वासपर सितम्बर मासकी अवधि रखनेकी सलाह दी। अतएव इस स्वदेशी आन्दोलनको प्रबल बनानेके समय 'हिन्दी नवजीवन' का प्रकाशित होना उचित ही है।

राष्ट्रीय जीवनमें आजकल दो ही वृत्तियाँ देखी जा रही हैं, व्यापार और नौकरी। ब्राह्मणवृत्ति और क्षात्रवृत्तिका अभाव मालूम होता है। अब हमारे व्यापारी-समाज तथा दास-वर्गको ज्ञान और शौर्य प्राप्त करनेकी आवश्यकता है। हमें इस बातका ज्ञान होना चाहिए कि विदेशी कपडेके व्यापारसे हमारा देश मटियामेट हो गया है। और उस व्यापारका त्याग करनेका शौर्य भी हममे होना चाहिए। यदि हममे इतना भी बलिदान करनेका शौर्य नही है जितना कि विदेशी कपड़ेके व्यापारके त्यागके लिए आवश्यक है, तो हम अपने धर्मका पालन नही कर सकते; अपने ही भाई-बहनोको नुकसान पहुँचाकर हमने करोडो रुपये इकट्ठा किये और उसमे से लाखोका दान किया, तो यह पुण्य नही है। इसलिए आप भाई और बहनोसे मेरी प्रार्थना है कि आप विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करनेमे और खादी तैयार करनेमे पूरा साहस दिखाकर अपनी पिछली देशसेवामे वृद्धि करे।

आपका,

मोहनदास करमचन्द गांधी

हिन्दी नवजीवन, १९-८-१९२१

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

'यंग इंडिया' के सम्पादकको पत्र

बरेली
१५ अप्रैल, [१९२१]

सम्पादक
'यग इडिया'
महोदय,

आपको ज्ञात है कि मौलाना मुहम्मद अलीने मद्रास अहातेमे होनेवाली एक सार्वजनिक सभामे खुले आम कहा है कि अगर अफगानिस्तानके अमीरने उन लोगोके विरुद्ध संग्राम करनेके लिए, जिन्होने इस्लामको पौरुषहीन बना डाला है और जो इस्लामके पवित्र स्थानोपर कब्जा किये बैठे है, भारतकी ओर कदम बढाया तो मैं उनकी सहायता करूँगा। मेरा खयाल है कि भारतमें इस प्रश्नके बारेमे भिन्न-भिन्न मत है। नरम दलवाले [नेतागण] इस प्रकारके किसी भी आन्दोलनको कुचल देने पर आमादा है। राष्ट्रीय दलवाले नेता भी, उदाहरणार्थ लाला लाजपतराय, श्री चित्तरजन दास और पण्डित मालवीय चुप्पी साधे हुए है। इतना ही नही, आपने भी श्री मुहम्मद अलीके उक्त महत्त्वपूर्ण भाषणके सम्बन्धमे कुछ नही कहा है। सम्राट्के दुश्मनके प्रति सहानुभूति दिखाना और खुले रूपमे उसकी सहायता करना बहुत बड़ी गद्दारी है, परन्तु आजकल जब सभा-मचोसे स्पष्ट बाते कहने और बेलाग होकर भाषण करनेका रिवाज-सा पड गया है, लोगोके मनमें नेताओका फैसला सुननेकी उत्सुकता स्वाभाविक है। यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। समाचारपत्रोमे सार्वजनिक विषयोपर लेख भेजनेवालो की — सौभाग्यसे मैं भी उनमे से एक हूँ — समझमे यह नही आ रहा है कि [मौलाना मुहम्मद अलीके भाषणके बारेमे] क्या राय कायम की जाये।

दूसरी बात जो मैं आपसे कहना चाहता हूँ वह यह है क्या आपका खयाल यह है कि ईश्वरसे डरनेवाले लोग या केवल वही व्यक्ति जो ईश्वरमे विश्वास रखते हैं, असहयोगी हो सकते है? मेरा एक मित्र बुद्धिवादी — खुदाका शुक्र है कि मैं तो एक पक्का मुसलमान हूँ — और पक्का राष्ट्रवादी [भारतीय] है। मेरा वह मित्र अपनी मातृभूमिकी वेदीपर तथा किसी अपेक्षाकृत निर्बल राष्ट्रको न्याय दिलानेकी खातिर अपना सब-कुछ कुर्बान करनेको तैयार है, परन्तु वह खुदाके नामपर कुछ भी करनेको तैयार नही है, क्योकि उसका खयाल है कि खुदा है ही नही। मेरा यह मित्र खद्दर पहननेको तैयार है, और उसने खद्दर पहनना शुरू भी कर दिया है।

वह तिलक महाराजका प्रशंसक है और तिलक स्वराज्य-कोषमें अकसर मुक्तहस्तसे चन्दा दिया करता है। परन्तु क्या वह 'असहयोगी' है? क्या आपकी सूचीमें उसका नाम है? अगर उसमें और कोई कमी न हो तो क्या वह आपके आश्रममें भरती हो सकता है?

तीसरी कठिनाई यह है कि आपके कथनानुसार इस — शैतानियतसे भरी हुई — सरकारका सदस्य बनना पापमय है, परन्तु फिर भी इस सरकारकी नौकरीमें अथवा सरकारी संस्थाओंमें अपने इतने अधिक देशवासियोंके बने रहनेको आप बरदाश्त करते हैं। आप उन्हें इस समय अपने दलमें शामिल होनेका निमन्त्रण नहीं दे रहे हैं। क्या यह उचित है? यदि इस सरकारकी नौकरी करना सामाजिक अथवा धार्मिक दृष्टिसे अपराध है — मेरे खयालसे ऐसा ही है — तो आप उन्हें वहाँ क्यों रहने दे रहे हैं? क्या धर्म, आत्मशुद्धि और स्वावलम्बनके क्षेत्रमें सामयिक लाभ उठानेकी नीतिकी गुंजाइश हुआ करती है?

अन्तमें आपसे एक बात और पूछना चाहता हूँ: "एक सालके अन्दर ही स्वराज्य प्राप्त करने" से आपका क्या मतलब है? क्या उस वाक्यका मतलब यह है कि कांग्रेसके आगामी अधिवेशनके अवसरपर देश ब्रिटिश साम्राज्यसे मुक्त और अलग हो जानेकी घोषणा कर देगा? अगर ऐसा नहीं हो तो क्या फकत आजादीका अहसास, स्वदेशीको अपनाना और अदालतों तथा स्कूलोंका अधूरा बहिष्कार — इन तीन बातोंसे यही समझा जायेगा कि भारतमें स्वराज्य स्थापित हो गया? और अगर खुदा न खास्ता हमारा बहिष्कार आन्दोलन असफल रहा तो क्या उसका मतलब यह होगा कि जिनसे एक सालके वास्ते वकालत करना और स्कूलोंमें पढ़ना-लिखना छोड़ देनेको कहा गया है वे उन निषिद्ध मानी जानेवाली संस्थाओंमें फिर जाने लगेंगे?

आपका,
अहमद हुसैन

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ४-५-१९२१

परिशिष्ट २

चरखा और अकाल-पीड़ितोंकी सहायता

अगस्त १९२० मे जब अकाल तीव्र रूपमे था, उस समय ऐसा सोचा गया कि दुर्भिक्ष-पीडितोकी सहायताके लिए सम्भ्रान्त मध्यम-वर्गके लोगोको चरखा चलाना चाहिए। इसकी शुरुआतके लिए कुमारी लेथमने कृपापूर्वक एक चरखा प्रदान किया। कोशिश इस वातकी की गई कि यह काम विशेषतया धाँगरो द्वारा, जो ऊन कातनेके अभ्यस्त थे, कराया जाये परन्तु वह प्रयत्न असफल रहा। रुईकी कताईसे जो विलकुल अनभिज्ञ हो ग्रामके ऐसे लोगोसे वारीक सूत कतवाना असम्भव था। इसके सम्वन्धमे शका उठाई गई कि आया इस कामसे — अगर यह शुरू किया गया — पैसे कमाये जा सकते है या नही अथवा थोडी-बहुत मदद मिल सकती है या नही। इस प्रकारकी भिन्न-भिन्न कठिनाइयो और आपत्तियोके वीच लगभग तीन मासतक चरखा विना चले ही पडा रहा और वडी कोशिशोके बावजूद चरखा चलानेके लिए कोई भी व्यक्ति राजी न दीख पडा। दिसम्बर १९२० मे कुमारी लेथमने श्रीमती जे० पेटिटकी मेहरबानी-के परिणामस्वरूप चार चरखे पुन भेजे। थोडी रुई भी भेजी। ये दोनो चीजे कुछ व्यक्तियोमे आजमाइशके तौरपर वितरित की गई। अब कुछ आशा जागी। अन्ततोगत्वा एक रमोशी स्त्री यह काम लगनके साथ करने पर राजी कर ली गई। यह वात २० जनवरी, १९२१ के लगभग की है। उस दिनसे कताईके काममे कुछ और ही छटा दीख पडने लगी। इस स्त्रीका अनुकरण दो अन्य स्त्रियोने किया, वे चरखा चलानेको राजी हो गईं। बडे अध्यवसायके फलस्वरूप इन तीन महिलाओ द्वारा ४ पौंड सूत तैयार किया गया और उसे विक्रीके वास्ते भेजा गया। इस वीच अनेक स्त्रियोने पूछताछ शुरू की और यह इच्छा व्यक्त की कि अगर इस कामसे उन्हे थोडा-बहुत भी आर्थिक लाभ हो तो वे कताई करना चाहेगी। इसलिए कताईकी दर ६ आना पौंड निर्धारित की गई। इससे अन्य कतैये भी इस काममे शामिल होने लगे।

अब दूसरी कठिनाई धनकी आ खडी हुई। पाँचो चरखे चलाये जा रहे थे। उसी गाँवमे जो पाँच चरखे बनवाये गये थे, वे भी चालू हो गये थे। उस केन्द्रमे रुईका जो भण्डार था वह चुक गया था। ऐसा लगने लगा था कि चरखे वनवाने, रुई खरीदने और मजदूरी देनेके लिए आवश्यक धनके अभावमे काम रुका रहेगा। राव वहादुर चितलेने यह कठिनाई स्वय आकर देखी-समझी और १००) प्रदान करके काममे सहायता की। कुमारी लेथमको जब इस कठिनाईका पता चला तो उन्होने भी एक सौ रुपये भेजे। ये दोनो दान ऐन मौकेपर प्राप्त हुए और उनकी वदौलत काम चल निकला। स्थानीय लोगोने अपने पाससे कपास देकर इस काममे सहायता दी।

चरखोकी माँग दिन-प्रतिदिन बढती गई। वहाँके लोग इतने गरीब थे कि अपना-अपना चरखा भी नही खरीद सकते थे। इसलिए यह आवश्यक हो गया कि उसी गाँवमे

चरखे बनवाये जाये और वे कतैयोको उधार दिये जायें। २७ और चरखे बने, जिसकी वजहसे अकालके कारण निठल्ले बैठे हुए स्थानीय बढ़इयोको काम मिल गया। इनमें से एक बढ़ईने चरखेमे कुछ सुधार करके उसे महीन सूत कातनेके लिए अपेक्षाकृत अधिक हलका और उपादेय बना दिया। चरखोकी कीमत उनकी अच्छाईके अनुसार ३ रु० से लेकर ४ रु० तक यानी तीन, साढे तीन और चार रुपये अदा की गई। ऐसे तीन चरखे साढे नौ रुपयेमे बिके। इन चरखोपर कुल मिलाकर १०३ रुपये ८ आने व्यय हुए। इस राशिमें चरखोंके निमित्त श्रीमती पेटिट द्वारा कृपापूर्वक भेजा गया रुपया भी शामिल है।

इस कामके लिए स्थानीय रुई मुहैया तो कर ली गई थी परन्तु वह नौसिखुओके लिए बिलकुल अनुपयुक्त सिद्ध हुई। इसलिए स्थानीय कपासकी किस्मको कुछ बढ़िया बनानेका एक नया तरीका काममे लाया गया। इसके परिणामस्वरूप न सिर्फ काममें मदद मिली बल्कि कुछ और कतैयोको काम भी मिलने लगा। कच्ची कपास ली गई और ओटाईसे पूर्व उसमें से पत्तियाँ और गर्द इत्यादि सावधानीसे अलग की जाने लगी। इस कामके लिए मजदूरीकी दर एक पैसा प्रति पौंड निश्चित की गई। कोई भी वृद्धा स्त्री प्रतिदिन ४ पौंड कपास साफ करके दिनमें एक आना कमा सकती थी। कपासकी सफाईके बाद उसे ओटा जाता था, और ओटाईकी दर प्रति दस पौंड एक आना तय हुई। इस प्रकार प्रत्येक स्त्री ढाई आने रोज कमा सकती थी। इस प्रकार ओटी हुई कपास धुनिये द्वारा १ आना प्रति पौंडकी दरसे साफ की जाती थी। वह लगभग आठ आने रोज कमा लेता था। अगर रुई मिलोसे खरीद ली जाती तो ज्यादा अच्छा होता और आसान भी। परन्तु चूंकि ऐसी स्थानीय कपासकी सफाईके कामसे कुछ लोगोको काम मिल जाता था, इसलिए इसे जारी रखना ठीक समझा गया। रुईकी सफाईके काममे जो उजरत दी जाती थी उसका अधिकांश ओटाईमे निकले बिनौलोकी बिक्रीसे वसूल हो जाता है। निम्नलिखित आँकडोसे विदित होगा कि ६० पौंड कपासको खरीदने व उसको अन्तिम रूपमे लानेके सम्बन्धमे कितना खर्चा पड़ता है।

	रु०आ०पा०
२० रुपये फी पटिया (२४० पौंड) की दरसे ६० पौंड कपासकी कीमत	५–०–०
रुईसे गर्द, सूखी पत्तियाँ आदिकी निकलवाई १ पैसा फी पौंडकी दरसे	०-१५-०
५२ पौंड साफ कपासकी ओटाई १ आना प्रति १० पौंडके हिसाबसे	०–५–३
धुनिये द्वारा लिंट (१७ पौंड) की साफ कराई एक आना प्रति पौंडकी दरसे	१–१–०
कुल	७–५–३
३५ पौंड बिनौलोकी कीमत २० पौंड प्रति रुपयेके हिसाबसे घटाई	१-१२-०
१७ पौंड साफ रुईकी वास्तविक कीमत	५–९–३

इस प्रकार एक पौंड रुईकी कीमत ५ आने ३ पाई बैठती है। ६० पौंड कपासमे ८ पौंड कचरा निकलना ज्यादा माना जायेगा और इसे अच्छी और बढिया किस्मकी कपासका इस्तेमाल करके कम किया जा सकता है।

फिलहाल २९ चरखे चल रहे है, फिर भी और चरखोकी बहुत माँग है, परन्तु चूंकि कोष सीमित है इसलिए और ज्यादा चरखे बनवाकर नही बाँटे जा सके। सूत ऐसे लोग कात रहे हैं जिन्हे इससे पहले इसका जरा भी ज्ञान न था। इसलिए सूत घटिया किस्मका आ रहा है। दिन-ब-दिन उसमे सुधार तो हो रहा है परन्तु यदि किसी योग्य शिक्षककी सेवाएँ सुलभ की जा सके तो सुधार बहुत जल्दी होने लगेगा। कातनेवालो मे कुछ तो पूरा समय कातनेवाले हैं और कुछ फुरसतके समय ही कातते हैं।

आजकल लगभग २ पौंड सूत नित्य तैयार किया जाता है। ज्यो-ज्यो कातनेवालो को अभ्यास होता जायेगा त्यो-त्यो अधिक सूत काता जाने लगेगा। कताई ६ आने प्रति पौंडके हिसाबसे दी जाती है। हाँ, यह जरूर है कि बहुतेरे कार्यकर्त्ता इस बातकी शिकायत करते हैं कि इतनी मजदूरी काफी नही है। चूंकि बिक्रीके लिए भेजे गये सूतसे १२ आने प्रति पौंड ही मिला इसलिए कातनेकी उजरत बढाना मुमकिन न था, वरना नुकसान उठाना पड़ता। १ पौंड सूतपर सवा ग्यारह आने खर्चा आता है अर्थात् सवा पाँच आने रुईके लगे और छः आने कताईके हुए। इस प्रकार हम देखते हैं कि १ पौंड कपासके पीछे सिर्फ ९ पाईका मुनाफा रहता है। इसमे दफ्तर-खर्च तथा अन्य खर्चे शामिल नही हैं। ६ आने प्रति पौंड कताईकी वर्तमान दरसे हर कतैयेको प्रतिदिन २० से २४ तोले सूत कात लेनेपर मजदूरीके रूपमे ३ आने रोज मिल जाते हैं। ज्यादातर लोग १५ तोले सूत कातकर २ आने रोज और शेष लोग १० तोले कातकर १$\frac{1}{2}$ आना कमा लेते हैं। नौसिखुओंको इसमे नही गिना गया है। ज्यो-ज्यो अभ्यास बढ़ता जायेगा त्यो-त्यो कमाई ज्यादा होने लगेगी।

[इस प्रकार] काते गये सूतसे कपडा बनवाया गया। एक बुनकरको साढे तीन पौंड सूत बुननेके लिए दिया गया। उसने बुनाई बहुत ऊँची दरसे ली। उस बुनकरने साढ़े नौ गज कपड़ा तैयार किया और तीन रुपये नौ आने मजदूरीके रूपमे लिये। ऐसा समझिए कि १ पौंडकी बुनवाई एक रुपया ली। उस कपड़ेकी लागत ६ रुपये ६ पाई बैठी और वह बिका ६ रुपये ३ आने मे। फकत ढाई आने मुनाफेमे आये। बुन-वानेकी इस कठिनाईसे बचनेके लिए यह निहायत जरूरी है कि एक करघा अलगसे लगाया जाये और बुनाई सिखानेके लिए एक शिक्षक रखा जाये जो स्थानीय लोगोको बुनाई सिखाये। बहुतसे स्थानीय लोग बुनाई सीखना चाहते हैं। एक अलग करघा होनेसे उसपर बुने गये कपड़ेका भाव मौजूदा बाजार भावसे कम होगा। अलग-अलग बुनकरोंको करीब ६ पौंड सूत इस उद्देश्यसे सौंपा गया है कि बुनाई ठीक-ठीक कितनी दी जानी चाहिए इसका पता चल जाये। परन्तु यह सब असुविधा तो तभी दूर हो सकती है जब हम अलगसे एक करघा बठा ले।

जब रुई कम उपलब्ध होती थी और काम करनेवाले काम माँगते थे तब ऊन चालू कर दिया जाता था और यह तबतक चालू रहता था जबतक रुई तैयार न हो। धाँगर लोग इस कामको बडी खुशीसे हाथमे ले लेते थे परन्तु उनसे कहा जाता था कि जितनी महीन ऊन अभीतक काती जा रही थी उससे अधिक महीन ऊन कातो।

इन लोगोको कामपर हाथ बैठानेमे कुछ समय लगा, और अब १० कतैये है जो महीन ऊन कातते है। उनको भी फी पौड ६ आनेके हिसाबसे मजदूरी दी जाती है। २ रुपये प्रति २ पौडके हिसाबसे ३१ रुपयेकी ऊन खरीदी गयी। यद्यपि रुई तैयार हो गई थी तो भी ऊनकी कताई जारी रखी गई। इस कामके लिए एक अलग विभाग खोल दिया गया। क्योकि धॉगर लोगोने यह काम शीघ्र ही सीख लिया था। ऊनकी सफाईकी कुल कार्रवाई धॉगर जातिकी स्त्रियो द्वारा ही की जा रही है जिससे उन्हे फी पौड १ आना और मिल जाया करता है।

ऊनके वर्गीकरणकी ओर विशेप रूपसे ध्यान दिया जाता है। ऊनकी कताई करनेवाले अधिकाश लोग अपने ही चरखे काममे लाते है। इनमेसे कुछ कतैये महीन ऊन कातनेके लिए वर्तमान चरखोकी अपेक्षा अधिक अच्छे चरखे माँग रहे है।

धॉगर बुनकर यहीके है। इसलिए यहाँके कते इस महीन ऊनसे पढरपुर और दावनगिरि नमूनेके कम्बल बनाये जा रहे है। बुनकरोको बुनाईके और नमूने भी सुझाये गये है। धॉगर कुछ जिद्दी किस्मके लोग होते है इसलिए वे नये और उन्नत तरीकोको शीघ्र नही अपनाते। परन्तु इस कामके चलते वे नये नमूनेके कम्बल बनाने लगे है और यह उनके अपने पेशेमे भी स्थायी रूपसे सहायक सिद्ध होगा। अब उन्हे ज्यादा चौडे तथा उन्नत ढगके करघोकी जरूरत है। वे ऊनको रँगनेकी विधि भी जानना चाहते है। पूरे दिन काम करनेवाले एक होशियार बुनकरको लगानेकी कोशिश की जा रही है। यह बुनकर बुनाईकी ज्यादा अच्छी विधि सिखायेगा। दो कम्बल तैयार किये गये और उनको लागत दामपर वेच दिया गया। उनमे से एकका दाम रु० ५–१३–६ था और दूसरेका रु० ६–६ था और अधिक कम्बलोकी माँग आई है परन्तु इस कामको चालू रखनेके लिए कुछ रकमकी जरूरत पडेगी।

इतने लोगोको कामपर लगाये रखना अकाल-पीडितोकी सहायताका एक आदर्श तरीका तो है ही, इसके अलावा ग्रामीण उद्योगोको बढावा देनेका साधन भी है। साथ ही बार-बार अकाल पडनेसे जो पस्तहिम्मती आ गई है वह भी इससे दूर होगी। लगभग एक महीनेमे इतना काम हो पाया है। अब हमे एक उन्नत ढगके करघेकी, एक अच्छे शिक्षककी, ऊनकी बुनाई करनेके लिए एक अच्छे करघेकी और अधिक चरखोकी (जिनकी माँग पडोसके गाँववाले कर रहे है) तथा अन्य बहुतसी चीजोकी जरूरत है। काम तेजीसे चल रहा है और आशा की जाती है कि धनके अभावके कारण काम रुके ऐसी नौबत न आने पायेगी।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११–५–१९२१

परिशिष्ट ३

भेंट तथा क्षमा-प्रार्थना

श्री शौकत अली तथा श्री मुहम्मद अलीके बारेमे वाइसराय महोदय और श्री गाधीके बीच जो वार्ताएँ हुई है, उनके सम्बन्धमे समाचारपत्रोमे अनेक वक्तव्य तथा कुछ निष्कर्ष भी प्रकाशित हुए है। लोगो, विशेषतया श्री गांधी, ने वाइसराय महोदयका ध्यान उन वक्तव्यो तथा प्रकाशित निष्कर्षोकी ओर आकर्षित करते हुए कहा है कि उनमे इन वार्त्ताओके बारेमे कुछ भ्रान्तियाँ दिखती है।

वाइसराय तथा श्री गाधीके बीच हुई मुलाकातोंकी जडमे वह वार्तालाप है जो भारतमे सामान्यतया फैली परिस्थितिके सम्बन्धमे वाइसराय और पण्डित मालवीयके बीच हो चुका था। वाइसरायने पण्डित मालवीयको बताया कि सरकारने फैसला किया है कि श्री शौकत अलीपर उनके द्वारा दिये गये हिंसाको प्रोत्साहन देनेवाले भाषणोके कारण मुकदमा चलाया जाये। बातचीत तब सम्भावित उपद्रवोके बारेमे होने लगी। पण्डित मालवीयने अपनी यह सम्मति व्यक्त की कि श्री गाधीसे मुलाकात करना वाइस-राय महोदयके लिए उपयोगी होगा। वाइसराय महोदयने उत्तरमे कहा कि यदि श्री गाधी मुलाकात चाहे तो उन्हे श्री गाधीसे मिलने तथा उनके विचार सुननेमे प्रसन्नता होगी। दूसरे दिन श्री एन्ड्रूयूज वाइसरायसे मिले और उन्हे श्री गाधीसे मिलनेका सुझाव दिया। यह कह देना उचित ही होगा कि इन वार्तालापोमे बहुतसे महत्त्वपूर्ण विषयोंपर विचार-विनिमय हुआ और यह तय हुआ कि वाइसराय तथा श्री गाधीके बीच होनेवाली प्रस्तावित भेटमे [भारतकी] परिस्थितिपर सामान्य रूपसे चर्चा की जायेगी। वाइसराय महोदय जानते है कि पण्डित मालवीयने श्री गाधीको शिमला बुलाते समय श्री शौकत अली तथा श्री मुहम्मद अलीके खिलाफ जो कानूनी कार्रवाई प्रारम्भ की जानेवाली है उसका अपने पत्रमे कोई जिक्र नही किया था।

पण्डित मालवीय तथा श्री एन्ड्रयूजके अनुरोधपर श्री गाधी यथासमय शिमला आये और उन्होने वाइसरायसे मुलाकातका समय माँगा। मुलाकातकी व्यवस्था तुरन्त कर दी गई। पहले दिनकी वार्त्तामे प्रस्तावित मुकदमोकी कोई भी बात नही उठाई गई। उस दिन तो भारतमे फैले हुए असन्तोषके कारणोपर ही बातचीत होती रही। दूसरी मुलाकातके अवसरपर वाइसराय महोदयने कहा कि सरकारी रिपोर्टोसे प्रकट हुआ है कि जिम्मेदार असहयोगियोने श्री गाधी द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तोके विरुद्ध हिंसा भड़कानेवाले व्याख्यान दिये है। श्री गाधीने किसी जिम्मेदार असहयोगी द्वारा हिंसा भड़कानेके आरोपका खण्डन करते हुए कहा अगर मुझे यह यकीन हो जाये कि किसी भी जिम्मेदार असहयोगीने हिंसाको प्रोत्साहन दिया है और अगर वह अपने उन भाषणोंपर जिनसे हिंसाको प्रोत्साहन देनेकी ध्वनि निकलती है, खेद प्रकट न करेगा, तो मै उसकी तथा उसके भाषणोकी सार्वजनिक रूपसे निन्दा करनेको तैयार हूँ। वाइ-

सरायने अली भाइयोके नाम लिये, और कहा कि मै आपको इन भाइयोके भाषणोमे से निकालकर वे वाक्य दिखाऊँगा जिनसे मेरे विचारमे हिंसाको प्रोत्साहन मिलता है। और जब वे वाक्य श्री गांधीको पढ़कर सुनाये गये तब उन्होने स्वीकार किया कि सचमुच इनसे तो वही अर्थ निकल सकता है जो वाइसराय महोदयने निकाला है। परन्तु उन्होने (श्री गाधीने) कहा कि मुझे विश्वास है कि श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अलीका इरादा श्रोताओको हिंसाकी ओर प्रवृत्त करनेका कदापि न था। श्री गाधीने कहा कि मै शिमलासे लौटते ही उनसे मिलूँगा और उन्हे सलाह दूँगा कि वे अपने भाषणोमे कहे गये हिंसाको प्रोत्साहन देनेवाले शब्दोके लिए — यद्यपि उनका इरादा ऐसा न था — सार्वजनिक रूपसे खेद प्रकट करें। वाइसरायने इसपर श्री गाधीसे पूछा कि आप श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अलीको जैसा वक्तव्य प्रकाशित करनेकी सलाह देनेका विचार कर रहे है, उसके महत्त्वको देखते हुए क्या आप मुझे उसका मसविदा दिखायेंगे?

इस जगह वाइसराय महोदयने श्री गाधीसे कहा कि उन वाक्योके कारण सरकार श्री शौकत अली तथा श्री मुहम्मद अलीपर मुकदमा चलानेका विचार कर रही है। उन्होने श्री गाधीसे कहा कि अगर आप मुझे उस वक्तव्यको दिखा देंगे और अगर अपनी सरकारके दृष्टिकोणसे मै उसे सन्तोषजनक पाऊँगा तो मै अली भाइयोपर मुकदमा न चलानेके लिए अपना जोर लगाऊँगा क्योंकि अगर भविष्यमे हिंसात्मक कृत्योको प्रोत्साहन देनेवाले भाषण देना बन्द कर दिया जायेगा तो सरकारका मतलब हल हो जायेगा। श्री गाधीने वक्तव्यको दिखाना खुशीसे स्वीकार कर लिया। वादेके अनुसार वक्तव्यका मसविदा वाइसरायके सामने प्रस्तुत किया गया। परमश्रेष्ठने [उसे पढ़कर] उनसे कहा कि इस वक्तव्यमे कुछ अनुच्छेद ऐसे डाल दिये गये है जिनसे यह वक्तव्य विज्ञप्तिका रूप ले लेता है, जिसमे श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अलीके धार्मिक सिद्धान्तोंका समावेश भी है। वाइसराय महोदयने कहा कि यह वक्तव्य इस हदतक अपूर्ण है कि इसमें भविष्यके लिए हिंसाको प्रोत्साहन देनेवाले भाषण न देनेका आश्वासन नही है। वाइसराय महोदयने यह भी कहा कि वक्तव्यके प्रकाशित हो जानेके पश्चात् श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अली इस बातका ध्यान रखते हुए कि वे कानूनका उल्लघन न करे, अपने भाषणो द्वारा जैसी चाहे वैसी सफाई पेश कर सकते है। जिन वाक्योके सम्बन्धमे आपत्ति उठाई गई थी श्री गांधी उनको हटा देनेको तथा भविष्यमे ऐसे भाषण न देनेके आश्वासनका अनुच्छेद जोड देनेको राजी हो गये। तदनन्तर वाइसरायने श्री गाधीको सूचित किया कि यदि श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अली श्री गांधी द्वारा सशोधित वक्तव्यपर हस्ताक्षर कर देंगे और भविष्यमे इस प्रकारके भाषण न देनेका वचन भी दे देंगे, तो उनपर मुकदमा न चलानेके लिए जरूरी कदम उठाया जायेगा, और जबतक उस वक्तव्यमे दिये गये वचनोका पालन होता रहेगा तबतक उनपर मुकदमा न चलाया जायेगा। परन्तु पिछले भाषणोके सम्बन्धमे उनपर मुकदमा चलानेके बारेमे सरकार मुक्त होगी। वाइसरायने यह भी लिखा कि यदि श्री शौकत अली तथा श्री मुहम्मद अलीका वक्तव्य प्रकाशित हो गया और उसके परिणामस्वरूप सरकारने उनपर मुकदमा न चलाया तो इस आशय-

की एक विज्ञप्तिका प्रकाशित किया जाना आवश्यक हो जायेगा कि इस सम्बन्धमे सरकारने क्या रुख अख्तियार किया है। परन्तु इस सब कार्यमे सौदेवाजीकी भावना नही है। श्री गाधीने यहाँतक कहा कि मुकदमा चलाया जाये चाहे न चलाया जाये, मेरा यह कर्त्तव्य हो जायेगा कि मैं [इस वक्तव्य] के कुछ अश उन्हे दिखाऊँ और उसके उपरान्त उन्हीकी आबरू तथा उद्देश्यकी खातिर उन दोनोसे यह कहूँ कि आप लोग सार्वजनिक रूपसे खेद प्रकट कीजिए।

वार्तालापके पूरे दौरमें वाइसराय महोदय तथा श्री गाधी, दोनो ही के दिलोमे यह इच्छा काम कर रही थी कि मुकदमा चलाये जानेपर गड़बड़ न मच पाये और उनकी यह भी ख्वाहिश थी कि भविष्यमे हिंसाको प्रोत्साहन देनेवाले भाषण न दिये जायें। वाइसरायने श्री गाधीको सूचित किया कि अगर वह वक्तव्य यथाशीघ्र प्रकाशित नही कर दिया जायेगा तो मै मुकदमा चलाया जाना रुकवा न सकूँगा। इन भाषणोकी बहुत चर्चा भारतमे ही नही बल्कि इग्लैडमे भी हुई थी। श्री गांधीने वक्तव्यको अविलम्ब प्रकाशित करना स्वीकार कर लिया।

इसके बाद श्री गांधी शिमलासे रवाना हो गये, और उन्होने कुछ दिनोके अन्दर वाइसरायको इस आशयका तार भेजा कि श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अलीने वक्तव्यपर हस्ताक्षर कर दिये है, और उसमे बहुत मामूलीसा रद्दोबदल किया गया है। वह समाचारपत्रोको प्रकाशनार्थ भेज दिया गया है। परिवर्तन निम्नलिखित था:

श्री गाधी द्वारा तैयार किये गये मसविदेमे जहाँ ये शब्द लिखे है "हम कहना चाहते है कि हमारा मशा हिंसाको प्रोत्साहित करना कदापि न था, परन्तु हम मानते हैं कि हमारे भाषणोमे कुछ वाक्य ऐसे जरूर हैं जिनका वही अर्थ निकल सकता है जो लगाया गया है", श्री शौकत अली तथा श्री मुहम्मद अलीने ये शब्द लिख दिये: "हम कहना चाहते हैं कि हमारा मशा हिंसाको उकसानेका कदापि न था, और हमने कभी यह सोचा भी न था कि हमारे भाषणोमे कोई वाक्य ऐसा भी हो सकता है जिनसे वह अर्थ निकलता हो जो किया गया है परन्तु हम अपने मित्रकी दलीलके जोरको और उनके द्वारा लगाये गये अर्थको तसलीम करते है।"

वक्तव्यके प्रकाशित हो जानेके पश्चात् सरकारी विज्ञप्ति प्रकाशित की गई। उस विज्ञप्तिमे क्या-क्या शर्तें होगी इसका निर्णय ठीक-ठीक तबतक न हो पाया जबतक वह प्रकाशनकी तिथिके समीप न पहुँच गई। श्री गाधी उसे नही देख पाये; हाँ, यह जरूर था कि उसका सार जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है श्री गाधीको बतला दिया गया था। वाइसराय और श्री गाधीके बीच हुई मुलाकातोका मुख्य भाग उस वार्तालापमे बीता जो भारतमे फैले असन्तोषसे सम्बन्धित था और जिसमे पजाबके उपद्रव, खिलाफत आन्दोलन, सेवरकी सन्धि तथा जनताकी आम हालत — ये चीजे शामिल थी। श्री गांधीने वाइसरायके सम्मुख स्वराज्यकी कोई योजना पेश नही की थी और न उक्त मुलाकातोमे ऐसी किसी योजनापर बातचीत ही हुई थी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-८-१९२१

परिशिष्ट ४

रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा असहयोगकी आलोचना

२ मार्च, १९२१

(१)

दुबले-पतले शरीरवाले तथा भौतिक साधनोसे विहीन महात्मा गाधीने दीन-दुर्बल लोगोकी महाशक्तिका — जो भारतके अपमानित तथा पद-दलित और निर्धन व्यक्तियोके हृदयोमे बैठी इन्तजार कर रही थी — आह्वान किया है। यह इस देशके लिए उपयुक्त ही है। भारतने अपने भाग्यके साथीके रूपमे नारायणी सेनाको नही बल्कि नारायणको . . .शरीर-बलको नही, आत्म-बलको चुना है। भारत मानव-समाजके इतिहासको शरीर-बलके युद्धरूपी दलदलसे ऊँचा उठाकर नैतिक स्तरपर लानेको कटिबद्ध हुआ है। स्वराज्य क्या है? वह माया है। वह उस कोहरेके समान है जो शाश्वत या अविनाशीके प्रखर तेजपर किसी प्रकारका धब्बा डाले विना विलीन हो जायेगा। हम लोग पश्चिमसे सीखे हुए कुछ वाक्योकी दुहाई देकर अपनेको कितना ही धोखा दे ले, लेकिन सचाई यह है कि स्वराज्य हमारा ध्येय नही है। हमारा संघर्ष आध्यात्मिक सघर्ष है। यह मानवताके लिए होनेवाला सघर्ष है। हमे मानवको राष्ट्र, देश, स्वतन्त्रता आदिके उस जटिल जालसे, जिसे उसके राष्ट्रीय अहम्ने अपने चारो ओर बुन लिया है, मुक्त करना है। तितलीको यह समझाना है कि रेशमके कोयेमे दबे पड़े रहनेकी अपेक्षा आकाशमे विचरनेकी स्वतन्त्रता अधिक मूल्यवान है। यदि हम, शक्तिशाली व्यक्ति या सस्थाको, शस्त्रसज्जित संगठन या धनाढ्य-वर्गको ललकार सकते है या उसके आदेशोंका तिरस्कार करनेका साहस रखते है और इस प्रकार संसारके सामने अनश्वर आत्माकी शक्तिका परिचय प्रस्तुत कर सकते है तो पशुबलका दिवाला ही निकल जायेगा। ऐसी स्थिति उत्पन्न होनेपर मानव स्वराज्य पा जायेगा। पूर्वके रहनेवाले हम नगे-भूखे और दरिद्र लोगोको समस्त मानव-समाजके लिए स्वतन्त्रता प्राप्त करनी है। 'राष्ट्र' जैसा शब्द हमारी भाषामें है ही नही। जब हम इस शब्दको अन्य लोगोसे उधार ले आते है तब हम देखते है कि वह हमारे लिए ठीक नही बैठता। इसका कारण यह है कि हमे नारायणका पल्ला पकड़ना है। हमारी विजय हमे विजयके अतिरिक्त — ईश्वरीय जगत्की विजय — कुछ नही दे सकती। मैंने पश्चिमका अवलोकन किया है, मुझे अपावन भोजोकी, जिनमे वह प्रतिक्षण मस्त रहता है, लालसा नही है। पश्चिम तो अपनी इस प्रवृत्तिके कारण दिनपर-दिन मोटा-ताजा, सुर्ख और भयावह रूपसे मदमस्त और वासना-प्रिय होता जा रहा है। मशालोकी रोशनीमें आधी राततक चालू रखी जानेवाली विलासितापूर्ण और विवेकहीन रंगरलियोकी चहल-पहल हमें नही चाहिए। हमारे लिए तो उषाकालके मन्द और मनोहर प्रकाशकी सजगता ही ठीक है।

(२)

५ मार्च, १९२१

असहयोगकी कल्पना राजनैतिक कार्योंके लिए अपनाई हुई फकीरी है। हमारे विद्यार्थी अपने त्यागकी श्रद्धाजलि अर्पित कर रहे है। उनका यह त्याग उन्हे कहाँ ले जा रहा है? पूर्णतर शिक्षाकी ओर नही, बल्कि अशिक्षाकी ओर। उस कल्पनाके पीछे विनाशका उत्कट सुख है और यह भावना अपने सबसे सुन्दर रूपमे फकीरी या सन्यास, तथा खराबसे-खराब रूपमे भयकरताका वह ताण्डव है जिसके चलते मानव-प्रकृति सामान्य जीवनकी मौलिक वास्तविकतामे विश्वास खो बैठती है और निरर्थक विनाशमे उदासीनतापूर्ण आनन्दका अनुभव करती है — जैसा कि गत महायुद्धके अवसर-पर तथा हमारे ही जीवनमें घटित होनेवाले ऐसे ही अन्य अवसरोपर प्रकट हो चुका है। यह भावना अपने अनाक्रामक नैतिक रूपमे सन्यास है, और सक्रिय नैतिक रूपमें हिंसा। मरुस्थल (उपेक्षा) भी उसी प्रकार हिंसाका रूप है जैसा कि तूफानके समय विक्षुब्ध सागर। ये दोनो ही जीवनके शत्रु है।

बगालमे स्वदेशी आन्दोलनके जमानेका वह दिन मुझे याद है जब तरुण विद्यार्थियो-का एक समूह मुझसे मिलने आया। मैं उस समय अपने 'विचित्रा' निवासकी पहली मंजिलके बड़े कमरेमे था। उन्होने मुझसे कहा कि यदि आप हमे अपने स्कूल और कालेज छोड़ देनेका आदेश देंगे तो हम लोग तुरन्त ही उसका पालन करेंगे। मैंने ऐसा करनेसे दृढ़तापूर्वक इनकार कर दिया। वे क्रोधित हुए और इस भावके साथ लौट गये कि कदाचित् मुझमे देश-प्रेम है ही नही। परन्तु जनताके इस अदम्य उत्साह-के प्रदर्शनसे बहुत पहले मैंने, उस समय जब मेरे पास अपना कहनेको ५ रुपये तक न थे, एक स्वदेशी स्टोर खोलनेके निमित्त एक हजार रुपये दिये थे और इस प्रकार मैं पैसे-पैसेको मुहताज हो गया था। उन विद्यार्थियोको पढाई छोड़नेकी सलाह देनेसे इनकार करनेका कारण यह था कि स्कूल छोड़ना एक नकारात्मक कदम है जिससे अराजकता फैलती है, और यह कदम अस्थायी रूपसे ही क्यो न उठाया गया हो, मुझे कभी पसन्द नही है। मुझे एक ऐसे काल्पनिक सिद्धान्तसे भय लगता है जो वास्तविकताकी ओरसे आँखे मूँदनेको तैयार है। . . . आप जानते है कि मैं पाश्चात्य देशोंकी अर्थ-प्रधान सभ्यतामे उसी प्रकार विश्वास नही करता जिस प्रकार मैं मानवमे उसके शरीरको ही सबसे बड़ा सत्य माननेसे इनकार करता हूँ। शरीरको नष्ट करने तथा जीवनकी भौतिक आवश्यकताओंकी उपेक्षा करनेमें तो मेरा और भी कम विश्वास है। जरूरत इस बातकी है कि मनुष्यकी शारीरिक और आध्यात्मिक प्रकृतिके बीच सामजस्य स्थापित किया जाये, बुनियाद और उसपर खड़े भवनके बीच सन्तुलन बनाये रखा जाये। मैं पूर्व और पश्चिमके वास्तविक मिलनमे विश्वास करता हूँ। प्रेम आत्मा-का अन्तिम सत्य है। हमे उस सत्यपर आघात करनेका नही, वरन् सब प्रकारके विरोधोके बीच भी उस सत्यकी ध्वजाको ऊँचा रखनेका भरसक प्रयत्न करना चाहिए। असहयोगका विचार उस सत्यको अनावश्यक रूपसे चोट पहुँचाता है। वह हमारे चूल्होंमे जलनेवाली अग्नि नही है बल्कि वह आग है जो हमारे घरोको भस्मीभूत कर देती है।

(३)

१३ मार्च, १९२१

आज विश्व-इतिहासके इस नाजुक मौकेपर क्या भारत अपनी सीमाओसे ऊपर उठकर ससारके सामने वह महान् आदर्श नही रखेगा जो पृथ्वीके भिन्न-भिन्न लोगोके सहयोगसे सब देशोमे समन्वय और प्रेम स्थापित करनेका प्रयास करे। विश्वासवादी लोग तो यही कहेगे कि समस्त ससारकी खातिर अपनी आवाज बुलन्द कर सके, इससे पहले भारतको शक्तिशाली और समृद्ध बननेकी आवश्यकता है। परन्तु मै इस बातमे विश्वास नही करता। यह धारणा कि मनुष्यके बड़प्पनका मापदण्ड उसके आर्थिक साधन है, एक बहुत बड़ी भ्रान्ति है जो आजके ससारपर अपनी काली छाया डाल रही है—यह मानवका अपमान है। आर्थिक दृष्टिसे जो लोग निर्बल है उनका फर्ज है कि वे ससारको इस भ्रान्तिसे बचाये। और भारत अपनी निर्धनता और गिरी हुई हालतके बावजूद मानव-समाजके त्राणके लिए आगे बढनेकी क्षमता रखता है। . . .

. . . भारतका आदर्श इसके पक्षमे नही है कि एक देशके लोग दूसरे देशके लोगोसे अपनेको अलग माने। यह भावना अन्तत अनवरत सघर्षोंको जन्म देती है। इसलिए मेरा निवेदन यह है कि भारतको ससार-भरके राष्ट्रोके बीच सहयोगका पक्ष लेना उचित है। इसकी अस्वीकृतिकी भावनाको पार्थक्यकी अनुभूति द्वारा समर्थन प्राप्त होता है, एकताकी अनुभूतिसे स्वीकृतिकी भावनाको बल मिलता है। भारतने सदा यही कहा है कि ऐक्य ही सत्य है और पार्थक्य माया है। यह ऐक्य शून्य नही है। यह वह शक्ति है जिसमे सबका समावेश हो जाता है; और इसीलिए अस्वीकृतिके मार्गसे उसतक पहुँचना कदापि सम्भव नही है। अपने हृदय और मस्तिष्कको पश्चिमके हृदय और मस्तिष्कसे पृथक करनेका हमारा वर्तमान सघर्ष आध्यात्मिक आत्मघातका एक प्रयत्न कहा जा सकता है। अगर हम मिथ्या राष्ट्रीय दर्पकी भावनासे प्रेरित होकर जोर-जोरसे यह कहते फिरे कि पश्चिमने मानवके असीम लाभकी कोई चीज उत्पन्न नही की है, तो पूर्वीय मस्तिष्कने कुछ महत्त्वपूर्ण चीज दी है, इसके बारेमे हम गहरी शकाको ही जन्म देते है। क्योकि पूर्व और पश्चिम दोनोके ही मानव-मस्तिष्क सत्यतक पहुँचनेके लिए उसके विभिन्न पहलुओको ध्यानमे रखते हुए अपने जुदा-जुदा दृष्टिकोणोसे सतत प्रयत्न कर रहे है। और यदि यह सच हो सकता है कि पश्चिमकी शक्तिने उसे बिलकुल गलत रास्तेपर ला छोडा है तब हम पूर्वके दृष्टिकोणके बारेमे निश्चयात्मक रूपसे कुछ भी नही कह सकते। हमे चाहिए कि हम मिथ्याभिमानको त्यागे और ससारके किसी भी भागमे यदि कोई दीपक जलाया जा रहा हो तो इस भावनाके साथ खुशियाँ मनायें कि यह आलोक हमारे सभी घरोके सामान्य प्रकाशका ही एक अंग है। . . .

पश्चिमने पूर्वको गलत समझा है और उन दोनोके बीच फैले हुए अनैक्यका कारण यही है। परन्तु यदि पूर्व भी अपनी तरफसे पश्चिमको गलत समझनेकी कोशिश करे तो क्या इससे बात सुधर जायेगी? वर्तमान युगमें पश्चिमका व्यापक और प्रबल

प्रभाव रहा है। यह इसीलिए सम्भव हो पाया है क्योंकि नियतिने पश्चिमको मानवके लिए बहुत बड़ा काम सौंपा है। हम पूर्वके निवासियोको पाश्चात्य देशोमे उसके निकट वह सीखनेके लिए जाना होगा जो उसके पास हमे सिखानेके लिए है। ऐसा करके हम इस युगको शीघ्र सफल बनानेमे सहायक होगे। हम जानते है कि पूर्वके पास भी सिखानेके लिए कुछ जरूर है और उसका अपना भी यह उत्तरदायित्व है कि वह प्रकाशको बुझने न दे। वह समय आनेवाला है जब पश्चिमको यह समझनेका अवकाश मिलेगा कि पूर्वमे उसके निवासके लिए स्थान है, भोजन है और अन्य आवश्यक वस्तुएँ भी प्रस्तुत है।

[अग्रेजीसे]

लैटर्स टु ए फ्रेंड

परिशिष्ट ५

संयुक्त-प्रान्तमें दमनपर नेहरूकी टिप्पणी

संयुक्त-प्रान्तमे सरकारी दमन — प्रमुख नेताओकी गिरफ्तारी इत्यादि — कुल मिलाकर दिखावटी ढंगका नही रहा है प्रत्युत वह दमन बहुत ही सुव्यवस्थित और जमकर किया गया है और थोड़े ही लोग होगे जो उसकी चपेटमे न आये हो। इसपर तीन भिन्न शीर्षकोके अन्तर्गत विचार किया जा सकता है:

१. किसान आन्दोलनसे सम्बन्धित दमन-कार्य।

२ नौजवान कार्यकर्त्ताओपर अभियोग और दण्ड।

३. सुरक्षात्मक धाराओ तथा धारा १४४का प्रयोग।

१. किसान आन्दोलन

सरकारने इस आन्दोलनको कुचल देनेका अत्यन्त दृढ और अविरत प्रयत्न किया है। फरवरीके प्रारम्भमे रामचन्द्र, केदारनाथ और देवनारायण गिरफ्तार किये गये। कही किसी प्रकारका उपद्रव नही हुआ जिससे सरकारका हौसला बढ गया और उसने किसानोको कुचलनेके लिए बहुत जोरदार कदम उठाये। घुडसवारोके दस्ते, तोपें और पैदल सेनाके दस्ते मुख्य-मुख्य जिलोमें घुमाये गये और सैनिकोके लिए रसद इत्यादि मुहय्या करनेको लोग मजबूर किये गये। एक स्थानपर स्कूली छात्रोसे गोरे सनिकोको जबरदस्ती सलाम करवाया गया।

रायबरेली और फैजाबादमे बहुत बडी सख्यामे किसान गिरफ्तार किये गये। उनकी गिरफ्तारीका कारण यही बताया गया कि उन्होने गत जनवरीमें की गई लूट-पाटमे भाग लिया था। इन गिरफ्तार किये गये किसानोमे से अधिकाश निर्दोष थे; उनका अपराध केवल इतना ही था कि वे [गाँवोके] पच थे। सैकड़ोको जेलमे डाल दिया गया और बादमे बिना मुकदमा चलाये उन्हे छोड़ दिया गया। सैकड़ो व्यक्ति

अब भी जेलोंमे है और मुकदमेकी प्रतीक्षा कर रहे है। कुछ सप्ताह पहले फैजाबाद जेलमे लगभग ७०० किसान थे। वे बिना किसी मुकदमेके पिछले तीन माहसे जेलमें थे। रिहा किये गये कैदियोका कथन है कि जो लोग जेलोमे है उनको इतने खराब किस्मका भोजन दिया जा रहा है कि उन जेलोमे हैजा फैल गया है और इस प्रकार पीड़ित कैदी बड़ी संख्यामे मौतके शिकार बन रहे है।

सुलतानपुर और प्रतापगढ जिलोमे किसी किस्मका उपद्रव नही हुआ था; परन्तु इन जिलोमे भी पचो और सरपचोको या तो जेल भेज दिया गया है या मुचलका देनेको विवश किया गया है। इन लोगोके खिलाफ सामान्यत यह आरोप लगाया जाता है कि "तुम सभाके सरगना हो और लोगोको सभामे शरीक होनेपर मजबूर करते हो।" कभी-कभी यह भी कह दिया जाता है कि [तुम्हारे कहनेसे] "नाई, धोबी बन्द कर दिये गये है।" इन आरोपोमे, जहाँतक गत दिसम्बर और जनवरीका सम्बन्ध है, बहुत-कुछ सचाई है परन्तु उसके बाद इन जिलोमे सामाजिक बहिष्कारका एक भी वाकया नही हुआ है। इन आरोपोकी आडमे झूठे मुकदमे चलाये जाते है और सजा हुए बिना नही रहती। इस तरहके मामलोमे से अधिकाश मामले स्थानीय पुलिस या जमीदारके उकसानेपर चलाये जाते है और इन मुकदमोको दायर करनेवाले उसी हलकेके कुछ लोग हुआ करते है।

राजद्रोहात्मक सभा अधिनियम फैजाबाद, प्रतापगढ, सुलतानपुर और रायबरेलीमें लागू किया गया है। इस अधिनियमको लागू करनेके पहले कुछ जिलोमें १४४ धाराके अन्तर्गत सभी प्रकारकी सभाओका बुलाया जाना निषिद्ध ठहरा दिया गया था। इस हुक्मकी बाकायदा तामील की गई और कोई सभा नही की गई। तिसपर भी राजद्रोहात्मक सभा अधिनियम लागू कर दिया गया।

इन जिलोमे काम करनेवाले हमारे कार्यकर्त्ताओको तरह-तरहसे परेशान किया जाता है। उनके पीछे खुफिया पुलिसके बहुतसे आदमी तथा वर्दीधारी पुलिसमैनोका एक गिरोह चला करता है और जहाँ वे कार्यकर्त्ता जानेवाले होते है वहाँ वे पहलेसे ही जा डटते है। गाँववालोंको धमकाया जाता है ताकि वे काग्रेसमे शरीक न हो और हमारी कोई सहायता न करें। उनसे जबानी तौरपर यह भी कहा गया है कि चरखा चलाना गैर-कानूनी है और "महात्मा गांधीकी जय"का नारा लगाना बहुत बडा अपराध है, कांग्रेसकी मेम्बरीके कागजपर दस्तखत करना अवैध है इत्यादि, इत्यादि। जिन लोगोने [काग्रेसके सदस्यता-पत्रपर] हस्ताक्षर कर दिये है उनको यह कहकर धमकाया जाता है कि तुमपर मुकदमा चलाया जायेगा, और मामलेको दबा देनेकी गरजसे रिश्वतें माँगी जाती है।

पर्चे बाँटनेके अपराधमे प्रतापगढ जिलेके छः नवयुवक विद्यार्थी-कार्यकर्त्ता जेल भेज दिये गये। उनसे जमानत जमा करनेको कहा गया, परन्तु उन्होने ऐसा करनेसे इनकार कर दिया। सुलतानपुर जिलेमे एक ऐसा ही मामला छ व्यक्तियोके विरुद्ध चलाया गया था, परन्तु अब वह वापस ले लिया गया है। राजद्रोहात्मक सभा अधिनियमको भग करनेके झूठे अपराधमें दो कार्यकर्त्ताओको छः महीनेकी सख्त कैदकी

सजा दी गई। इन दो कार्यकर्त्ताओमे से एकको पुलिसके एक सिपाही द्वारा ठोकरे लगाई गई और पीटा गया।

किसानोको कुचल देनेके लिये सरकारने जो सैकडो तरीके अपनाये है उसका अन्दाज लगाना कठिन है। जमींदार और कुछ स्थानीय लोग जो अपनेको 'माडरेट' कहते है, सरकारसे मिल गये है और उन लोगोने सामान्य किसानकी जिन्दगी भारी कर रखी है—इतनी भारी कि वह बेचारा पिसा जा रहा है।

संयुक्त-प्रान्तके अन्य जिलोमे भी किसान आन्दोलनको कुचलनेका ठीक ऐसा ही, यद्यपि छोटे पैमानेपर, ढग अख्तियार किया गया है।

२. कार्यकर्त्ताओंको सजा

बहुतसे काग्रेस व खिलाफत कार्यकर्त्ताओपर मुकदमे चलाये गये है और उन्हे सजा दे दी गई है। आन्दोलनके किसी नेताको अभीतक नही पकड़ा गया है, परन्तु इन नेताओके अनेक योग्य और कुशल सहायकोको जेल भेज दिया गया है। अपेक्षाकृत प्रख्यात व्यक्तियोंमे, जिनके खिलाफ राजद्रोहका मुकदमा चलाया गया है, देहरादूनके पण्डित देवरत्न शर्माका नाम उल्लेखनीय है।

इलाहाबादके एक खिलाफत कार्यकर्त्ताको जिनका नाम हमीद अहमद है अभी-अभी धारा १२१ क के अन्तर्गत आजीवन काले पानीकी सजा मिली है और उनकी सब जायदाद जब्त कर ली गई है। उनपर यह अभियोग लगाया गया था कि उन्होने अपने एक भाषणमें फिलहाल अहिंसाके पालनकी सलाह देते हुए कहा था कि यदि असहयोग आन्दोलन विफल हुआ तो मुसलमान लोग तलवार उठायेगे।

जिलोके अनेक काग्रेस अधिकारियोको धारा १०८ या १२४ क के अन्तर्गत सजा दी जा चुकी है।

कुछ स्वयसेवकोंको नशाबन्दी आन्दोलनके सिलसिलेमें जेल भेज दिया गया।

३. सुरक्षा धाराएँ तथा धारा १४४

धाराओंका असाधारण रूपसे बडे पैमानेपर प्रयोग किया गया है। ऐसा शायद ही कोई प्रख्यात कार्यकर्त्ता होगा जिसके नाम धारा १४४ का नोटिस न भेजा गया हो। मौलाना मुहम्मद अलीतक को ऐसा नोटिस भेजा गया है। जिन-जिनके नाम यह नोटिस भेजा गया है उनमे से सौसे ऊपरकी नामावली मेरे पास है, परन्तु यह सूची बहुत अधूरी है।

धारा १४४ को पूरे-पूरे जिलोंपर लागू करके उन जिलोंमे सभाएँ करना निषिद्ध कर दिया गया है। इस धारा १४४ से राजद्रोहात्मक सभा अधिनियमका काम निकाला गया है।

एक मामला ऐसा भी है जिसमे धारा १४४के अन्तर्गत जारी किये गये नोटिसका लिखित आदेश यह था कि खिलाफतकी रसीदे न बेची जाये और सम्बन्धित व्यक्तिको इस प्रकारके किसी भी संगठनका सदस्य नही होना चाहिए।

सुरक्षा कानूनके खण्ड प्रेस ऐक्टका काम दे रहे हैं। 'प्रताप' नामक समाचार-पत्रमें छापे गये कुछ लेखोंके कारण उस पत्रके सम्पादक और मुद्रकसे ३० हजार रुपये-की जमानत तलब की गई है। जमानतें जमा कर दी गई हैं।

४. विविध

बन्दूकके अनेक लाइसेंस जब्त कर लिये गये हैं। सरकारी नौकरोंको बर्खास्तगीकी धमकी दी गई है क्योंकि उनके रिश्तेदार असहयोग आन्दोलनमें शरीक थे। गांधी टोपियाँ पहनना निषिद्ध करार दिया गया है। स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा माँगनेवालों तथा चन्दा देनेवालोंके लिए धमकी-भरा नोटिस जारी किया गया है।

कांग्रेस और किसान सभाके दफ्तरोंपर पुलिसने छापे मारे हैं।

बनारसमें कुछ विद्यार्थी तथा अन्य लोगोंको भी भिन्न-भिन्न अवधिके कारावासकी सजा सुनाई गई है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-८-१९२१

सामग्रीके साधन-सूत्र

गाधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली: गाधी साहित्य और सम्बन्धित कागजातका केन्द्रीय सग्रहालय तथा पुस्तकालय; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

साबरमती सग्रहालय. पुस्तकालय तथा आलेख सग्रह: जिसमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी कालके और १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात सुरक्षित हैं, देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३६०।

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'आज': बनारससे प्रकाशित दैनिक।

'गुजराती': बम्बईसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'नवजीवन' (१९१९–१९३२): गाधीजी द्वारा सम्पादित अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक जो कभी-कभी सप्ताहमे दो बार भी निकलता था; यह 'नवजीवन अने सत्य' (१९१५–१९१९) नामक गुजराती मासिकके रूपको बदलकर निकाला गया था, जिसका पहला अक ७ सितम्बर, १९१९को निकला था। १९ अगस्त, १९२१ से उसका हिन्दी सस्करण भी प्रारम्भ हो गया था।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'यग इडिया' (१९१८–३२): अहमदाबादसे प्रकाशित अग्रेजी साप्ताहिक। सम्पादक: मो० क० गाधी; प्रकाशक: मोहनलाल मगनलाल भट्ट।

'लीडर': इलाहाबादसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'सर्चलाइट': पटनासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, स्वराज्य आश्रम, बारडोली।

'नरसिंहरावनी रोजनिशी' (गुजराती) नरसिंहराव भोलानाथ दिवेटिया; गुजरात विद्यासभा, अहमदाबाद।

'बापुना पत्रो: मणिबहेन पटेलने' (गुजराती): सम्पादक–मणिबहेन पटेल; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो: सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती): सम्पादक–मणिबहेन पटेल; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती): मथुरादास त्रिकमजी; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१५ अप्रैलसे १९ अगस्त, १९२१ तक)

अप्रैल १५. गांधीजीने रास और बोरसदकी सार्वजनिक सभाओंमें भाषण दिये। दोपहरको गोधरा पहुँचे।

अप्रैल १६ हालोलकी ताल्लुका परिषद्की अध्यक्षता की, गांधीजीको थैली भेंट की गई। सन्ध्याके समय किसानोंकी सभामें भाषण।

अप्रैल १७. कालोलके हरिजनोंकी सभामें भाषण।
गोधराके लिए रवाना हुए।

अप्रैल १९. सुबह सूरत पहुँचे।
सूरत नगरपालिका द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर देते हुए अधिक चरखे चालू करवाने और अस्पृश्यता दूर करनेकी आवश्यकतापर जोर दिया। पाटीदार विद्यार्थी आश्रममें भाषण दिया। दोपहरको महिलाओंकी एक सभामें भाषण दिया, जिसमें तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा प्राप्त हुआ।
ओरपाडके लिए रवाना हुए।

अप्रैल २०. सन्ध्याके समय सूरतकी सार्वजनिक सभामें भाषण।
वलसाड़की सभामें भाषण।

अप्रैल २१: वल्लभभाई पटेल और अन्य साथियोंके साथ सुबहके समय चिखली पहुँचे।
सीसोदराकी सभामें भाषण।

अप्रैल २२: सिन्धके दौरेके लिए रवाना हुए।

अप्रैल २४. हैदराबाद (सिन्ध) पहुँचे।

अप्रैल २६· सुबह कराची पहुँचे। सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। २५,००० रुपयेकी थैली भेंट की गई। कराची नगरपालिकाके सदस्योंसे अनुरोध किया कि शिक्षाका राष्ट्रीयकरण करें। यदि सरकारकी आर्थिक सहायताके बिना काम न चला सकें तो त्यागपत्र दे दें। कराचीके वकीलोंसे की गई एक भेंटके दौरान उन्हें सलाह दी कि वे पर्ची डालकर इस बातका निर्णय कर लें कि किन लोगोंको असहयोग आन्दोलनमें भाग लेना है और किन लोगोंको वकालत जारी रखनी है। वकालत करनेवाले वकील असहयोगी वकीलों और उनके परिवारोंकी धन आदिसे सहायता करते रहें।
मालेगाँव, नासिक जिलेमें दंगे।

मई १· रातके समय अहमदाबाद पहुँचे।

मई ४· सुबह कपड़वंज पहुँचे और वहाँ आयोजित एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। कठलालमें महिलाओंकी सभामें भाषण दिया। रातको नडियादके लिए रवाना हुए।

मई ७: सुबह बम्बई पहुँचे और महाराष्ट्र प्रान्तीय सम्मेलनमे भाषण दिया।

मई ८: इलाहाबादमे सरूपकुमारी नेहरू (श्रीमती विजयलक्ष्मी)के विवाहोत्सवमें शामिल हुए।

मई १०. इलाहाबाद जिला सम्मेलनमे भाषण दिया। सभामे पण्डित मोतीलाल नेहरूने नागरिकोकी ओरसे एक मानपत्र भेंट किया।

मई ११: इलाहाबादसे रवाना हुए।

मई १२: शिमला पहुँचे।

मई १३: दोपहरके समय वाइसरायसे भेंट की।

मई १४. प्रातःकाल वाइसरायसे पुन भेंट। गाधीजीके सम्मानमे जुलूस निकाला गया और स्वागत-समारोहका आयोजन किया गया।

सार्वजनिक सभामे भाषण।

महिलाओंकी सभामे स्वदेशी अपनाने और तिलक स्वराज्य-कोषके लिए खुले दिलसे चन्दा देनेका अनुरोध किया। सभामे उन्हे धन और आभूषण भेंट किये गये।

मई १५: ईदगाह मैदान, शिमलाकी सभामे भाषण।

मई २१: भुसावल जाते समय रास्तेमें रेलवे स्टेशनपर भाषण।

भुसावलकी सार्वजनिक सभामे भाषण।

मई २२: सगमनेरकी सभामे भाषण।

मई २३: रात्रिके समय येवला पहुँचे।

मई २४. बरसीकी सभामे जनतासे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए खुले दिलसे चन्दा देने और स्वदेशी अपनानेका अनुरोध किया।

मई २६· सुबह शोलापुर पहुँचे और रिपन हॉलमें नगरपालिका द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर दिया।

मई २७ शामके समय बागलकोटसे बीजापुर पहुँचे। महिलाओकी सभामे भाषण दिया। नगरपालिका तथा स्थानीय व्यापारी सघ द्वारा आयोजित सभाओमें दिये गये अभिनन्दनपत्रोके उत्तरमें भाषण दिये।

मई २८: बीजापुरसे रवाना हुए।

मई २९: बम्बईकी सार्वजनिक सभामे लोगोसे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए खुले दिलसे चन्दा देनेका अनुरोध किया।

मई ३०· बम्बईसे भड़ौचके लिए रवाना हुए।

जून १· भडौचमे गुजरात राजनीतिक परिषद्मे भाषण।

वेजलपुरकी अन्त्यज परिषद् द्वारा भेंट किये गये मानपत्रके उत्तरमे भाषण।

जून २· भड़ौचकी खिलाफत सभामें भाषण।

जून ५ गुजरात राजनीतिक परिषद्मे भाषण।

जून ८. सरखेज और सामोदकी सभाओमे भाषण। तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा किया। अहमदाबादके वकीलोके साथ बातचीत।

जून ९ : अहमदाबादसे बढवान पहुँचे।
लिम्बडीके महाराजके निवास-स्थानपर आयोजित सार्वजनिक सभामें भाषण।

जून १३ : अहमदाबादकी सार्वजनिक सभामें अध्यक्ष-पदसे भाषण।

जून १५ : घाटकोपर, बम्बईमें नागरिकोंकी सभामें भाषण। व्यापारी समुदायकी ओरसे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए ४०,००० रु० की थैली भेट की गई।

जून १८ : केन्द्रीय पारसी संघकी परिषद्में असहयोगपर भाषण।
मिलीटरी रिक्वायरमेंट कमेटीके सामने उपस्थित होनेसे इनकार किया।

जून १९ : विले पार्ले बम्बईकी सार्वजनिक सभामें भाषण। तिलक स्वराज्य-कोषके लिए थैली भेंट की गई।

जून २२ : बम्बईके प्रथम राष्ट्रीय कन्या विद्यालय — लोकमान्य राष्ट्रीय कन्या शाला-का उद्घाटन। गाधीजीका सन्देश महिलाओंकी सभामें पढकर सुनाया गया।

जून २५ : मांडवी, बम्बईकी प्राथमिक शालाओके विद्यार्थियों व शिक्षकोंके समक्ष भाषण। तिलक स्वराज्य-कोषके लिए थैली प्राप्त।

जून २६ : सान्ता क्रूजकी सार्वजनिक सभामें भाषण।
तिलक स्वराज्य-कोषके लिए थैली प्राप्त हुई।

जून ३० : विभिन्न संघों द्वारा आयोजित सभाओंमें भाषण।
तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा प्राप्त हुआ।
सूती कपडा व्यापारी सघ और पारसी सघ द्वारा थैलियाँ भेट की गईं।
बेजवाड़ा काग्रेसमें तिलक स्वराज्य-कोषके लिए १ करोड़ रुपये एकत्र करनेका लक्ष्य पूरा हुआ।

जुलाई १ : बाँदरा, बम्बईकी सभामें स्वदेशीपर भाषण।

जुलाई २ : बम्बई कमीशन एजेंट्स एसोसिएशन और लिंगायत कमीशन एजेंट्स एसो-सिएशन द्वारा आयोजित सभाओंमें भाषण।

जुलाई ६ : अलीगढमें साम्प्रदायिक दंगे।
कपड़ेके व्यापारियोंसे व्यापारको शुद्ध स्वार्थके बजाय राष्ट्रीय आधारपर चलाने तथा कीमतें न बढानेका अनुरोध किया।

जुलाई ७ : कपड़ेके व्यापारियोंसे विदेशी कपड़ेका आयात बन्द करनेका अनुरोध किया।

जुलाई १० : बम्बईके दवा-विक्रेताओंकी सभामें स्वदेशीपर भाषण।

जुलाई १२ : बम्बईमें पारसी राजकीय सभा द्वारा आयोजित सभामें शराबके विक्रेताओं-के समक्ष शराबबन्दीपर भाषण।

जुलाई १६ : परेल, बम्बईकी सभामें स्वदेशीपर भाषण।

जुलाई १७ : केन्द्रीय खिलाफत समितिकी असहयोग सम्बन्धी रिपोर्ट प्रकाशित। बम्बईमें बुनकरोंकी सभामें भाषण।

जुलाई १९ : दोपहरके समय बम्बईकी मुस्लिम महिलाओंकी सभामें भाषण।
पारसी राजकीय सभा द्वारा आयोजित शराबके ठेकेदारोंकी सभामें भाषण।

जुलाई २० : पूना नगरपालिका द्वारा मानपत्र भेट। तिलक महाविद्यालयके उद्घाटन-समारोहमें भाषण। तिलककी प्रतिमाका अनावरण। बादमें सार्वजनिक सभामें

भाषण दिया जिसमे एकमतसे विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करने और स्वदेशी अपनानेका प्रस्ताव पास किया गया।

जुलाई २२: बम्बईकी दो सार्वजनिक सभाओमे स्वदेशीपर भाषण।

जुलाई २३: बम्बईकी पारसी राजकीय सभाके तत्त्वावधानमें आयोजित सार्वजनिक सभामे भाषण।

जुलाई २४: सान्ता क्रूजकी सभामे स्वदेशीपर भाषण।

जुलाई २६: मारवाड़ी विद्यालय और भायखला, बम्बईकी सभाओमें विदेशी कपड़ेके बहिष्कारपर भाषण।

जुलाई २८: अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी बम्बईमे बैठक।

जुलाई ३०: पारसी राजकीय सभा द्वारा आयोजित पारसियोंकी बृहत् सभामें स्वदेशी-पर भाषण।

जुलाई ३१: अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी बैठकमे चुनाव सम्बन्धी प्रस्ताव प्रस्तुत किया।

बम्बईमे एल्फिस्टन मिलके समीप परेलकी ऐतिहासिक सभामें भाषण, जिसका आयोजन विदेशी कपड़े जलाकर स्वदेशी आन्दोलनका श्रीगणेश करनेके उद्देश्यसे किया गया था।

बम्बईकी राष्ट्रीय स्त्री-सभा द्वारा आयोजित खादी-प्रदर्शनीके उद्घाटनके अवसर-पर भाषण।

बम्बईकी अदालतमे बचाव पक्षकी ओरसे गवाही दी।

अगस्त १: लोकमान्य तिलककी बरसीके उपलक्ष्यमे आयोजित चौपाटी, बम्बईकी सार्वजनिक सभामें भाषण।

अगस्त ३: बम्बईमे खिलाफत भण्डारका उद्घाटन किया और यह आशा व्यक्त की कि बम्बईके धनी व्यापारी ऐसे भण्डारोकी स्थापना कर स्वदेशी आन्दोलनको प्रोत्साहन देगे।

अगस्त ५: अलीगढ पहुँचे।

अगस्त ६: मुरादाबाद पहुँचे। महिलाओकी सभा तथा एक सार्वजनिक सभामे भाषण।

अगस्त ७: अमीनुद्दौला पार्क, लखनऊकी बृहत् सार्वजनिक सभामे भाषण।

अगस्त ८: गाधीजी और केन्द्रीय खिलाफत समितिने मुसलमानोसे अपील की कि वे आगामी बकरीदपर गो-वध न करे।

अगस्त ९: गांधीजी कानपुर पहुँचे। महिलाओ और व्यापारियोकी सभाओमे भाषण। सार्वजनिक सभामे मानपत्र भेंट किया गया।

'आज' के प्रतिनिधिसे भेंट।

अगस्त १०: सुबह इलाहाबाद पहुँचे। महिलाओकी सभामे स्वदेशीपर भाषण। शामको मोतीलाल नेहरूकी अध्यक्षतामे आयोजित सार्वजनिक सभामे भाषण।

अगस्त ११: सहसरामकी सभामे भाषण।

अगस्त १२: गया पहुँचे। रातको सार्वजनिक सभामे भाषण।

अगस्त १३ : बिहार शरीफके बुनकरो द्वारा स्वागत-समारोहका आयोजन। सार्वजनिक सभामें भाषण, जिसमे नगरपालिका द्वारा अभिनन्दनपत्र भेंट किया गया था। रातको महिलाओकी सभामे भाषण।

अगस्त १५ : शिमला क्षेत्रके निवासियोसे अनुरोध किया कि ब्रिटिश सरकारके लिए बेगार न करे।

अगस्त १६ : पटनामे।

अगस्त १७ : शामको मिर्जापुर पार्क, कलकत्ताकी सभामे भाषण।
सियालदह स्टेशनपर सेवा समिति द्वारा मानपत्र भेंट।
असमके लिए रवाना।

अगस्त १९ : शामको असम प्रान्तीय काग्रेस कमेटीके मन्त्री गोपीनाथ बारदोलाईके निवासपर काग्रेस कार्यकर्त्ताओसे भेंट।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

ई

य

र

ल

व

श

ह